Volume I , Issue IV
Oct - Dec. 2013

Reg. No.- MPHIN/28519/12/1/2012- TC
ISSN 2320-8767

Naveen Shodh Sansar

(An International Multidisciplinary Refereed Journal)

नवीन शोध संसार

Editor - Ashish Sharma

Office Add. "Shree Shyam Bhawan", 795 - Vikas Nagar Extension 14/2 , NEEMUCH (M.P.) 458 441, (INDIA)
Mob. 09617239102 **Email** nssresearchjournal@gmail.com **Website** www.nssresearchjournal.com

सम्पादक की अभिव्यक्ति

सम्माननीय शोधार्थियों

सादर वन्दे,

नववर्ष (2014) की हार्दिक शुभकामनाएँ एवं 'नवीन शोध संसार' के सफलतम् एक वर्ष पूर्ण होने पर रिसर्च जर्नल परिवार की ओर से आप सभी को हार्दिक बधाई।

वर्ष 2013 में आप सभी के द्वारा समय-समय पर बहुमूल्य सुझावों के साथ अपार सहयोग, स्नेह, आशीर्वाद प्रदान किया गया है, जिसके लिये हम आपके कृतज्ञ है।

शोधार्थियों के अनुग्रह पर सकारात्मक सोच के साथ सकारात्मक परिवर्तन एवं उत्थान हेतु 'मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा के नये आयाम' 35 उपशीर्षकों सहित विशेषांक निकालने का निर्णय 'नवीन शोध संसार' द्वारा लिया गया है। इस विशेषांक में आपके शोध पत्रों के निष्कर्ष मध्यप्रदेश उच्च शिक्षा की प्रगति में मील के पत्थर साबित होंगे। साथ ही 'नवीन शोध संसार' का नियमित अंक जो अब मार्च में प्रकाशित होगा, उसके शोध पत्र /आलेख 10 फरवरी 2014 तक प्रेषित करें। जिससे कि मार्च अंक को समय से पूर्व आप तक पहुंचाया जा सके, जिसके API अंक का लाभ आपको इसी वित्तीय वर्ष में प्राप्त हो सकेगा।

इसी पूर्ण विश्वास के साथ यह आशा करता हूँ कि आपका स्नेह, सहयोग व आशीर्वाद विशेषांक को भी अवश्य ही प्राप्त होगा।

सधन्यवाद्।

आपका

Ashish Sharma

आशीष शर्मा

'नवीन शोध संसार' का छोटा-सा अनुरोध-

* पेड़-पानी, ऊर्जा और बेटी बचाएँ
* गुटखा, बीड़ी, सिगरेट एवं शराब को ना कहें, इनसे कैंसर होता है।

इस शोध पत्रिका को प्रकाशित करते हुए पूर्ण सावधानी बरती गई है, फिर भी किसी प्रकार की त्रुटी के लिये सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक जिम्मेदार नहीं होंगे। समस्त विचारों का न्यायक्षेत्र नीमच होगा।

'श्री गणेशाय नमः'

नवीन शोध संसार

Reg. No.- MPHIN/28519/12/1/2012- TC

ISSN 2320-8767

Volume I , Issue IV, Oct - Dec. 2013

संरक्षक एवं अध्यक्ष निर्णायक मण्डल

डॉ. एल.एन. शर्मा 09425974314

प्राध्यापक वाणिज्य

शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच

सम्पादक

आशीष शर्मा

मो. 09617239102

प्रबंध सम्पादक

अपूर्व शर्मा

मो. 08989670811

मार्गदर्शक

(1) **श्री जे.एन. कांसोटिया** प्रमुख सचिव
उच्च शिक्षा म.प्र. शासन, मंत्रालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

(2) **प्रो.डॉ. आई.वी. त्रिवेदी** (कुलपति)
मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

(3) **प्रो. डॉ. शिवनारायण यादव** (पूर्व कुलपति) प्राचार्य
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.) भारत

'नवीन शोध संसार' का अगला अंक
दि. 1 मार्च 2014 को प्रकाशित होगा।

सदस्यता शुल्क विवरण

* संस्थागत वार्षिक- ₹ 1200/-
* प्रति शोधार्थी वार्षिक - ₹ 700/-

शोधपत्र प्रकाशन राशि (सदस्यता अनिवार्य है)

* प्रति शोध पत्र - ₹ 800/-

(प्रति शोध पत्र अधिकतम 2000 शब्द)
अतिरिक्त प्रति 500 शब्द ₹ 200/-

(शोध पत्र प्रकाशन राशि में वार्षिक सदस्यता शुल्क सम्मिलित नहीं है)

प्रिन्ट- **मित्तल प्रिन्ट लाईन**
282 विकास नगर 14/4, नीमच ☎ 228654

अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 06

03. निर्णायक मण्डल 07

04. प्रवक्ता साथी 09

(Science / विज्ञान)

05. Difficulties with evidence based medicine (Dr. H. G. Varudkar, Dr. Namrata Dubey) 11

06. Comparative Study Of Catalysed And Uncatalysed Oscillatory Behavior Of Phenol And Its Carboxylic Derivatives (B. K. Dangarh) 14

07. Glimpses of Ancient Indian Mathematics (Akhilesh Jadhav) 18

08. Some Fixed point theorems for Expansion Mappings (Dr. D.K. Sagar, Dr. R.K.Gujetiya) 22

09. Seasonal Variation In Sirpur Talab Soil Of Indore (M.P.) (Johnson Malini, Dr. Billore D.K.) 24

10. Study Of Corrosion Resistance Properties Of Zinc Coated Metal In Different Chemical Media (Smt. Bindu Gandhi) 26

11. Waste Management Through Microbial Treatment (Avadhesh Pratap Singh Mandloi, Dr. Archana Pancholi) 30

12. Effect Of Time And Current On Nickle Electroforming (Sadhana Saxena) 34

(Home Science / गृह विज्ञान)

13. Development of products for interior enrichment using tarapur dabu printing for budding entrepreneurs (Dr. Rashmi Harit) 35

14. Adjustment difference among adolescent girls & boys in school (Dr. Abha Tiwari,Krishna Choudhary) 37

15. Significance And Vocational Scop Of Home Science (Dr. Rashmi verma) 39

16. Violence against women: A Curse to India (Dr. Rashmi Harit) 41

17. Parental Support in Extra-Curricular Activities (Manjula Sharma, Parul Sharma) 43

18. रोजगार में संलग्न आदिवासी ग्रामीण महिलाओं के लिए शासकीय व गैर शासकीय संस्थाओं द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के प्रति सजगता एवं जागरूता का अध्ययन (डॉ. मंजु शर्मा, ममता खपेड़िया) 45

19. छात्रावासी एवं परिवार में रहने वाली किशोरियों में स्वयं के साथ तथा साथी समूह के साथ समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन (कु. अलबाई डावर) 47

20. अभिभावकीय प्रोत्साहन का जनजाति बैगा किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन (डॉ. आभा तिवारी, रीना मेश्राम) 49

21. पूर्व किशोरावस्था (11 से 16 वर्ष) के किशोर तथा किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता का अध्ययन करना (कु. अनिता सोलंकी) 51

22. बालिका भ्रूण हत्या (डॉ. मीना सिसौदिया) 54
23. महाविद्यालय स्तर के किशोर–किशोरियों की पर्यावरणीय जागरूकता का तुलनात्मक अध्ययन (कु.शारदा भिण्डे) 56
24. शिक्षा के क्षेत्र मे महिलाओं की स्थिति (डॉ.रश्मि वर्मा) 57
25. भोजन की गुणवत्ता (श्रीमती प्रीति गुप्ता) 59
26. किशोरावस्था में एनिमिया (डॉ. मीना सिसोदिया) 61

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

27. Test Of Weak Formed & Semi Strong From of Efficiency In Nifty Stcok 62
Index Future Market (2005-2009) (Prof. Sumeet Khurana)
28. Investigation Of Demat & Online Trading Account (Dr. Sujata Parwani) 65
29. F-commerce: New Emerging Trend Of E-commerce (Dr. Anoop Vyas, Sandeep Raghuwanshi)..... 68
30. Basava Philosophy as an exemplary framework for pioneering 71
Social Entrepreneurs - A study (Pradeep N.E., Sathya Keerthy, Vinay Y.)
31. A Study on Association between Self Confidence & Academic Achievement 75
of Rural Adolescents(P. Nagda Dr. Suman Audichya)
32. Determinants of Working Capital in Cement Industry A case study of 78
Ultratech Cement Ltd. (Dr. N.K. Patidar, Smt. Nidhi Saxena)
33. An Exploratory Study Of Indian Foreign Trade (S. K. Maheshwari, Ankita Pipada) 80
34. स्वर्ण जयन्ति शहरी रोजगार योजनान्तर्गत कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम का विश्लेषण 82
(रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. लक्ष्मण परवाल, डॉ. सुनील सूर्यवंशी)
35. उज्जैन जिले में सिंचाई सुविधाओं के विकास व विस्तार का प्रमुख रबी फसलों के उत्पादन एवं 85
उत्पादकता पर प्रभाव –एक अध्ययन (डॉ. पी. एस. पटेल, अर्चना बसेर)
36. खादी एवं ग्रामोद्योग क्षेत्र में औद्योगिक नीति,प्रोत्साहन, विकास तथा रोजगार के बढ़ते अवसर 88
(डॉ. संजय पण्डित, श्रीमती मंजू शाक्य)
37. रतलाम जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों का तुलनात्मक विश्लेषण 90
(डॉ. लक्ष्मण परवाल, डॉ. सुनील सूर्यवंशी)
38. महिला उद्यमिता के विकास में निजी माइक्रो फाइनेंस कम्पनियों (BASIX) की भूमिका 94
(बी.एस.एफ.एल. इन्दौर म.प्र. के विशेष संदर्भ में) (डॉ. सतीश माहेश्वरी, मदनमोहन विश्वकर्मा)
39. पोषणीय विकास मॉडल के क्रियान्वयन की आवश्यकता – एक अध्ययन (डॉ.रश्मि शर्मा, डॉ.पी.एस.पटेल) 97
40. आदिवासी झाबुआ जिले के रोजगार कार्यालय में पंजीकृत बेरोजगारों का विश्लेषण 100
(डॉ. लक्ष्मण परवाल, प्रो. गेन्दालाल चौहान)
41. नीमच जिले में शहरीकरण का प्रभाव (एक तुलनात्मक अध्ययन 1971 से 2011 तक) (डॉ. एल.एन. शर्मा) 103
42. झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को 106
इकाईवार प्रदत्त वित्तीय सहायता का विश्लेषण (डॉ.लक्ष्मण परवाल, प्रो.गेन्दालाल चौहान)
43. लघु उद्योगों के विकास में सरकार की ऋण गारंटी फण्ड योजना पर प्रकाश (डॉ. सतीश माहेश्वरी, किशोर मोरे) 110

44. अल्पकालीन कृषि वित्त में किसान क्रेडिट कार्ड का योगदान (डॉ.पी.डी. ज्ञानानी) 111
45. Women Entrepreneurship In India Opportunities & Challenges (Article) (Dr. R.K. Mathur) 113
46. Agricultural Subsidies In India (Article) (Dr. R.K. Mathur) 115

(Economics / अर्थशास्त्र)

47. Holistic Economics : A Concept (Dr. Gyanchand Khimesara, Dr. Shivprakash Panwar) 116
48. Role Of Micro Finance In Women Empowerment 120
(An Empirical study in Ujjain district of rural SHG's) (Govind patidar)
49. An Empirical Analysis of the Impact of Foreign Direct Investment on 124
Economic Activity of India (Prof. Rajesh Jain)
50. Importance of Foreign Trade (S. K. Maheshwari, Ankita Pipada) 126
51. पंचवर्षीय योजनाओं में विनियोग की तुलनात्मक समीक्षा (डॉ. प्रकाशचन्द्र रांका) 127
52. अपशिष्ट राखड़ (फ्लाई एश) का पर्यावरण पर प्रभाव (डॉ. ईमराना सिद्दीकी, डॉ. फरहाना अली) 130
53. भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं का अर्थशास्त्र (स्वास्थ्य सुविधा बाजार के विशेष सन्दर्भ में) (शिवदास सिंह) 132
54. वर्तमान भारतीय आर्थिक चुनौतियाँ और एफ.डी.आई. (एक समीक्षात्मक अध्ययन) (डॉ. आभा दीक्षित) 135
55. कृषि विकास एवं पर्यावरणीय हांस एक अध्ययन (कु. अर्चना आर्य) 137
56. भारत की अर्थव्यवस्था का विश्लेषण एवं सम्भावनाएँ (सबलसिंह ओहरिया) 139

(Political Seience & History / राजनीति एवं इतिहास)

57. ग्रामीण भारत के विकास का कल और आज (डॉ. अनिल कुमार जैन) 141
58. सशक्तिकरण पर महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन 144
(ग्राम तिल्हौर खुर्द के विशेष संदर्भ में) (डॉ. हेमलता चौहान)
59. गाँधी के सपनों का भारत (डॉ. अनिल कुमार जैन) 147
60. भारत–चीन सम्बन्ध : एक नजर (डॉ. अनिल दीक्षित) 149
61. कार्यरत महिलाओं में घरेलू कार्य का दबाव कारण व उपाय (डॉ. रंजू गुप्ता) 152
62. भारत में पारदर्शी प्रशासन के लिये, लोकपाल की अपरिहार्यता (डॉ. अनिल कुमार जैन) 154
63. दक्षिण कोसल की वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मणों की स्थिति (डॉ. अनूप परसाई) 156
64. खोरपा से प्राप्त विष्णु प्रतिमा : एक अध्ययन (डॉ. अनूप परसाई) 158

(Sociology / समाजशास्त्र)

65. मध्यप्रदेश की ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाएँ एवं सामाजिक गतिशीलता के विभिन्न आयाम 160
(म.प्र. के नीमच जिले के विशेष संदर्भ में) (डॉ. संजय जोशी)
66. जनसंख्या वृद्धि और घटता लिंगानुपात (डॉ. रेणुका उपाध्याय) 163
67. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं की वर्तमान स्वास्थ्य स्थिति का अध्ययन (कु. रेखा रावत) 165
68. बालिका उत्थान में लाड़ली लक्ष्मी योजना की भूमिका (डॉ. मंजू राजोरिया) 167
69. बदलते मूल्य एवं भारतीय समाज (डॉ. राजश्री शाह) 169

70. रामायण का ऐतिहासिक, सामाजिक एवं साहित्यिक अनुशीलन (डॉ. आरती व्यास) 170

(Drawing/ चित्रकला)

71. उज्जैन की बातिक कला (निर्माण सामग्री एवं प्रविधि एक प्रयोगपरक शोध अध्ययन) (डॉ. नीता तोमर) 171

72. मेरी कला–एक अंर्तदृष्टि (डॉ. यतीन्द्र महोबे) 174

73. मेघदूत में उज्जयिनी की चित्रात्मकता (डॉ. नीता तोमर) 177

74. कुमारसम्भवम् में चित्रकला के सन्दर्भ (डॉ. नीता तोमर) 179

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

75. Upbringing Decides Future A Study of Mahesh Dattani's Select Plays (Niranjan Gangwal) 181

76. Revengeful and Rebellious woman Monsoon in Currimbhoys play (Dr. Priti Bhatt) 184

77. Mobile: A New Paradigm of Learning English Language 186
(Dr. Ajay Bhargava, Vijay Kumar Soniya)

78. The Concept of Nada in "A Clean Well Lighted Place" By Ernest Hemingway (Dr. Rajshree Sheth) 190

79. The Concept Of Resonance In The Strangers And Brothers Sequence By C.P. Snow 192
(Dr. Rajshree Sheth)

80. The neurological, cognitive, affective and linguistic differences between adults 194
and children learning English as second language. (Dr. Rajshree Sheth)

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

81. भूमंडलीकरण के दौर में हिन्दी का स्थान एवं संचार माध्यमों की भूमिका (डॉ. उषा श्रीवास्तव) 196

82. महर्षि अरविंद एवं समन्वित व्यक्तित्व (सोनाली पण्डित, डॉ. अर्चना श्रीवास्तव) 198

83. आवारा मसीहा : फूल मरे पे मरे न बासु (डॉ. संध्या गंगराडे) 200

84. बुन्देली कहावतें : कितने रंग कितने रूप (कु. रचना जैन, डॉ. वन्दना जैन) 202

85. पत्रकारिता एवं फोटो पत्रकारिता : महत्व एवं प्रयोग विधि (डॉ. पुष्पा शाक्य) 204

86. कथा साहित्य में इतिहास की प्रेरणा (डॉ. वन्दना अग्निहोत्री) 206

87. भारतीय साहित्य में नारी (दशार्क के विशेष संदर्भ में) (डॉ. चन्दा तलेरा जैन) 207

88. दलित–विमर्श (डॉ. शबनम खान) 208

89. रघुवीर सहाय के काव्य में सामाजिक जागरूकता (डॉ. रशीदा खान) 209

90. राष्ट्रीय चेतना में साहित्य का योगदान (डॉ. सरोज यादव) 210

(Sanskrit Literature / संस्कृत साहित्य)

91. भतृहरिकृत श्रृंगारशतकम् में छन्द विश्लेषण (डॉ. वेरसिंह बामनिया) 211

92. भवभूते: धर्माऽधर्मयोर्विषयक विवेचनम् (डॉ. बालकृष्ण प्रजापति) 214

(Marathi Literature / मराठी साहित्य)

93. संत साहित्याचे गहन चिंतन – वर्तमान काळाची गरज (डॉ. शैलजा साबले) 216

94. संत तुकाराम व संत कबीर यांच्या साहित्याचा, विचार वैभवांचा संशोधनात्मक अभ्यास (डॉ. शैलजा साबले) 218

(Phychology / मनोविज्ञान)

95. Promoting Wellbeing Through Colleges: A Think Tank (Dr. Ajay Kumar Chaudhary) 220

96. Effect Of Spirituality On Happiness And Mental Health (Dr. Saroj Kothari) 224

97. Impact Of Gender And Level Of Education On Environmental Attitude (कमलेश उपाध्याय) 227

(Geography / भूगोल)

98. Bagh Block Printing : A Study (Dr. B.L. Patidar,Prof. Sanjay Goyal, Dr. Sanjay Sohani) 229

99. मंदसौर जिले की कृषि उपज मण्डियों पर आधुनिकीकरण का प्रभाव (डॉ. आर.के. श्रीवास्तव, डॉ. देवीलाल बामनियाँ) 232

(Music / संगीत)

100. वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संगीत का व्यावसायिक स्वरूप (डॉ. बी. वर्षा) 235

101. दक्षिणात्य संगीत (कर्नाटक संगीत) में समय–सिद्धांत (डॉ. स्नेहा पण्डित) 237

(Other Arts / अन्य कला)

102. विकलांगता और शिक्षा (प्रमिला वास्केल) 238

103. लॉफ्टर (हास्य) योग एवं मानवीय स्वास्थ्य – एक विश्लेषण (प्रो. अलका जैन) 240

(Philosophy / दर्शन शास्त्र)

104. मानवेन्द्रनाथ रॉय की धर्म विरोधी संकल्पना (डॉ. पुष्पा कपूर) 243

(Education / शिक्षा)

105. A Comparative Study of Self Confidence and Social Intelligence In Single Child and Child with Brothers and Sisters (Dr. Manorama Mathur, Bindiya Lakhani, Preeti Agarwal) 244

106. Cooperative Learning: An Active Involvement Of Students In Teaching Of Mathematics (Mrs. Durgesh Kunwar, Dr. Anil Kumar Jain) 249

(Law / विधि)

107. The Right To Housing & The Right To Be Human (Dr. Archana Ranka) 253

108. सामूहिक सौदेबाजी बनाम न्याय निर्णय (Collective Bargaining Vs. Adjudication) (Article) (डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन) . 255

(Physical Education / शारीरिक शिक्षा)

109. High Altitude And Athletic Training (Ramneek Jain, Dr. Um Singh Rathore) 256

110. Parental motives for inspiring their girl child to opt for Physical Education as a subject at Senior Secondary level. (Dr. Akshay Kumar Shukla, Gajender Singh Saroha) 258

(Naveen Shod Sansar / नवीन शोध संसार)

111. Membership Cum Author's Bio-data Form 260

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अंर्तराष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(02) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(03) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव .... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(05) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(09) प्रो. डॉ. तपन चौरे ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, विक्रम विश्व विद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(11) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(12) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(16) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(18) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ. शिव कुमार दुबे ..... प्राध्यापक, भूगोल, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(20) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(22) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे .... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(24) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ... प्राध्यापक, वाणिज्य शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(02) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय .... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. बी.के. मेहता ..... अध्यक्ष, रसायन एवं जैविक रसायन अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. मंजु दुबे ..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(12) प्रो. डॉ. के.एल. जाट ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

**** विज्ञान संकाय ****

गणित:– ..... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एन.के. डबकरा**, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. बी.के. दानगढ़,** समन्वयक राष्ट्रीय इन्दिरा गाँधी मुक्त विश्वविद्यालय, केन्द्र नीमच (म.प्र.)

वनस्पति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:– ..... **(1) प्रो.डॉ. आर.के. भट्ट,** प्राचार्य, शासकीय कन्या महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा, एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:– ..... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. वी. कुलश्रेष्ठ,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:– ..... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** वाणिज्य संकाय ****

वाणिज्य :– ..... **(1) प्रो. डॉ. बी.एस. मक्कड़,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. प्रतापराव कदम, माखनलाल चतुर्वेदी शा.कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)

**** प्रबंध संकाय ****

प्रबंध :– ..... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

**** व्यवसाय प्रशासन संकाय ****

व्यवसाय प्रशासन:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा**, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

**** विधि संकाय ****

विधि:– ..... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

**** कला संकाय ****

अर्थशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. कमलेश श्रीवास्तव, विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय मुरार, ग्वालियर (म.प्र.)

राजनीति:– ..... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव, शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अजय भार्गव**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मदनलाल पंवार,** पूर्व प्राचार्य शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. देवेन्द्र कौर,** शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डी.डी. विश्वकर्मा, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)

✲✲✲ *गृह विज्ञान संकाय* ✲✲✲

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो.डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो.डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो.डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई कन्या शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो.डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

✲✲✲ *शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *शारीरिक शिक्षा संकाय* ✲✲✲

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

✲✲✲ *ग्रन्थालय विज्ञान संकाय* ✲✲✲

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲✲

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डी.एस. फिरोजिया ..... शासकीय महाविद्यालय, रामपुरा, जिला नीमच (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ.पी.डी. ज्ञानानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षीतिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ. राजेंद्र श्रीवास्तव..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ.सी.एम. मेहता ..... शासकीय महाविद्यालय, जावरा, जिला रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ.गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ. अरूणा दुबे ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. आभा दीक्षित..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(23) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(24) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. संजय अग्रवाल..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. लता जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. कहकशा खान ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) डॉ. सोनाली नरगुन्दे..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(29) डॉ. अदिति देसाई..... श्री अरविन्दो इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साईन्स, इन्दौर (म.प्र.)
(30) डॉ. एम.डी. सोमानी..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(31) डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(32) डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. डॉ.सुनीलकुमार सिकरवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला झाबुआ (म.प्र.)
(35) डॉ. अजय काले..... शासकीय कृ.प. स्नातकोत्तर महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) डॉ. मंजु राजोरिया..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(37) डॉ. शहजाद कुरैशी..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(38) डॉ. शैल वाला गाँधी..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(39) डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(40) डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)

(44) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगौन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. नटवरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ.रवींद्र कान्हेरे..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)
(48) प्रो. डॉ. मंजुला जोशी ..... शासकीय महाविद्यालय, अंजड़ जिला बड़वानी (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. मीरा जामोद ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(50) डॉ. मीरा जामोद ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. एन.एस. भाटी ..... शासकीय महाविद्यालय, अलीराजपुर (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(53) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(54) डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(55) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(56) डॉ. दिलीप गर्ग ..... शासकीय महाविद्यालय पचोर, जिला–राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(58) श्रीमती भारती खरे ..... एस.एस.एल. जैन स्नातकोत्तर महाविद्यालय, विदिशा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. के.एल. साहू ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(61) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. शशिप्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. विनीता रघुवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(65) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. अमरकुमार जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. आनंद तिवारी ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(68) डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(69) डॉ. संध्या टिकेकर..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(70) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(73) डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(74) प्रो.डॉ. विम्मी बहल..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(75) डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(76) डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, महूगंज, जिला– रीवा (म.प्र.)
(77) डॉ. एम.पी. शर्मा..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(78) डॉ. अमोल मांजेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) डॉ. सुनील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(80) डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. अनूप परसाई..... शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(82) डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(83) श्रीमती सुमन वशिष्ठ..... राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)
(84) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(85) डॉ. कल्पना पारीख..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(86) डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(87) प्रो. प्रदीप सिंग ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(88) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Difficulties with evidence based medicine

Dr. H. G. Varudkar * Dr. Namrata Dubey **

Evidence Based Medicine (EBM) has been defined as the optimal integration of the best research evidence with clinical expertise and patient values [1, 2, 3] Although this definition appears to be simple, it involves many complex processes. A clinician practicing EBM must identify correct patient's problem in his context; define the gap between knowledge and circumstances; dig out most relevant literature from the net; and apply the result prudently. Thus this process requires five steps

- Step 1- Framing a proper, pertinent, focused and answerable question.
- Step 2 - Searching the literature.
- Step 3 - Critical appraisal of the literature.
- Step 4 -Integrating the evidence with clinical expertise and patient values.
- Step 5 - Evaluating the process4.

R Agarwal, J Kalita, UK Misra[5] have discussed various barriers in applications of EBM in every step.

Table No. 1: Stepwise Barriers in applications of EBM

Sr No.	Step	Problems for a clinician
1	Step 1: Converting the need for information into an answerable questions	-Do not know where to start -Trouble in articulating a question -More questions than time
2	Step 2: Tracking down the best evidence with which to answer the question	-Where to find the best evidence? -Accessibility not only to computer but also database and computer knowledge -No relevant evidence available to every clinical situation encountered
3	Step 3: Critically appraising the evidence for its validity (closeness to truth), impact (size of effect), and applica -bility (usefulness in the clinical practice)	Avalanche of published articles -Articles are inconsistent, inconclusive
4	Step 4: Integrating the critical appraisal with the 5clinical expertise and with the patient's unique biology, values and circumstances	-Universal occurrence of biological variations hampers attempts to extrapolate evidence, to individual patients
5	Step 5: Evaluating the effectiveness and efficiency inexecuting steps 1-4 and seeking ways to improve the next time	-No regular feed back or data collection system at most of the health centers

A.M. Garber[6] has described the pros and cons of EBM as follows

1) **Flexibility of EBM guidelines:** Even well reputed guidelines leave grey areas in the patient's settings to the discretion of treating physician. Others are very complex, envisaging clinical variations and modifying considerations. Thus there is flexibility of guidelines which reduces their strength.
2) **Accountability:** Complexity of many patients' condition invites multidisciplinary approach. This clearly helps better management of patients, but accountability reduces. A decision taken by the treating team allows an individual to escape from accountability.
3) **Limits in the evidence base-** Many randomized trials are conducted on small number of unrepresentative samples of patients. More over patients conditions may be different from the criteria of trails. Sometimes only extrapolated the results may be applicable. Frequently pharmaceutical companies highlight only some misleading findings.
4) **Strong and weak evidence-** Many evidences are classified as strong or weak; but one may not know how to use this information. And such strong evidences may be applicable to a small and narrow range of clinical spectrum.
5) **Cost and quality standards-** Some guidelines consider efficacy, quality of interventions without giving any considerations to cost-effectiveness. Others consider this aspect as well. This is too, an important factor.

*** Professor and Head, Institution- Department of Pulmonary medicine ** Post Graduate student, Department of Pulmonary Medicine, R.D. Gardi Medical College, Ujjain (M.P.) INDIA**

6) **Deficits in state-of-art guidelines -** Many guidelines are giving explicit details about the management; but there can be wide gap between the guidelines and actual management.

Critic's observations, as pointed out by Stefan Timmermans and Aaron Mauck [7]

are worth mention. 'Medicine is both 'art 'and 'craft' in which individual's expertise and techniques are allowed to shine. EBM therefore threatens to bring about stagnation and bland uniformity, derogatorily characterized as "cookbook medicine.'" Ironically, EBM may also result in a lower standard of safety by deskilling practitioners. Instead of using clinical judgment, the practitioners will be encouraged to follow protocols treating all patients uniformly. Service providers therefore will be poorly equipped to deal with the variations in patients encountered in actual clinical settings. Even more problematic is that traditional health care professionals may be replaced by less expensive, less skilled workers, incapable of operating.

More worrisome facts are briefed by Yash Lokhandwala[8]. Along with profusion of information by electronic media, journals, conferences and CMEs, the aggressive marketing is proliferating. Many pharmaceutical companies surpass the limits of ethics and science cunningly. In short these firms are now doctors' informers, trend setters, opinion makers and guides as well.

The frauds done by pharmaceutical companies in drug trials have also been touched upon by him. Consequently whole picture becomes so intricate that an ordinary practitioner will not be able to discriminate between right and wrong.

Above discussion assumes that the evidences created in present literature are perfectly correct; at least the gravity is not obvious. I am describing two salient examples of graver implications in the present scientific literature.

Pyrazinamide is used in almost all anti- tubercular drug trials in the initial intensive phase. If you consider the pharmacology of this drug you will find a basic flaw in this regimen. This drug acts on intracellular mycobacteria in acidic medium [8,10,11,12,]. And in the course of therapy such bacteria are predominant at later stages.[13,14]. DA Mitchison[15] has aptly pointed out that, 'It is probably the only anti-tuberculosis drug that can kill truly non-metabolising bacteria'. In spite of this obvious well accepted fact a few studies have spaced Pyrazinamide in later stages of therapy[16,17,18,19,20].

In Hongkong trial(1979) pyrazinamide was the only drug in continuation phase; and the relapse rate was 5% in 205 patients after 2 yrs,[21]. In the other regimens it was 3%. In another Hongkong trial pyrazinamide was used twice weekly in continuation phase with control drug ethambutol. Here the relapse rates were 7% after 6 months and 3% after 8 months duration[22]. Another trail which will support the present contention is Singapore trail (1973). Here pyrazinamide, rifampicin and isoniazid were placed in continuation phases (CP). The relapse rates of this group were 11% for 4 and 0, for 6 months duration of CP. The corresponding observations for Isoniazid and rifampicin were 8% and 2%[23]. Though differences appear to be statistically insignificant conclusions were drawn against pyrazinamide in CP. The most important point remains to be stressed is that no trial was designed with special consideration of mechanism of anti tubercular action of pyrazinamide.

By spacing Pyrazinamide in the later stages we could have achieved probably better results with less adverse drug reactions. Even drug distribution in the regimen would ease out the financial burden of our patients. This is a major problem in our country.

Yet another situation I face hurdles is the allergic aspects of Allergic Rhinitis and Bronchial Asthma. These and many more diseases are unquestionably accepted as allergic diseases. It means that there are external substances entering and producing these diseases. Rational approach to such diseases should be identification and prevention of correct allergens. Now let us have salient glimpses of literature especially in the field of bronchial asthma.

Bronchial asthma is deemed to be an ideal disease for guidelines; because its major health problem beginning early and remaining life long. There are large numbers of asthma guidelines. U.S. National Asthma Education Program of the National Institutes of Health's (NIH's), National Heart, Lung, and Blood Institute (NHLBI) convened expert panel's first set of guidelines in 1991, a second set in 1997, and an update in 2002 (referred to, respectively, as EPR I, EPR II, and Update 2002), BTS, Australian, Canadian or even Indian one are in vogue. More popular in our country is GINA guidelines for asthma. Finally, G Flores has found more than 100 different pediatric asthma guidelines [24]. All these guide lines do not give emphasis on identification of allergens and their preventions. Thus basic principle finds its place as a foot note or as a casual advice.

All the concerned journals, faculty lectures, CMEs, Conferences including allergy conferences, have systematically side tracked this important aspects of disease management. Yash Lokhandwala has rightly pointed out the undesirable elements in the medical world.

We did allergy testing of our patients and evaluated systematically the effects of preventing allergens. At the end

of one year we have found that 36% of our patients had no symptoms; and other 38% had significant relief with only prevention of allergens. This finding is not substantiated by Evidence Based Medicine.

Referances

1 Sackett D. L., Straus S. E., Richardson W. S., Rosenberg W., Haynes, R. B.: Evidence- Based Medicine - How to Practice and Teach EBM 2nd Ed., Churchill. Livingstone,2000.

2 Sackelt DL, Rosenberg WMC, Gray JA, Haynes RB Richardson WS. Evidence based medicine: What it is and what it isn't Br.Med J 1996;312:71-72.

3. Gordon Guyatt etal (EBM working group), EBM-A New approach to Teaching the Practice of Medicine., JAMA1992(268)17,2420-25.9

4 H. B. Rajashekhar, B. S. Kodkany, V A. Naik, P. F. Kotur, S S.Goudar. Evidence based medicine and its impact on medical education Indian J. Anaesth. 2002; 46 (2) : 96-103 R

5 Agarwal MD, J Kalita DM, UK Misra. Barriers to evidence based medicine practice in SouthAsia and possible solutions. Neurology Asia; 2008; 13 : 87 - 946.

6 AM. Garber. Evidence-Based Guidelines- As a Foundation For Performance Incentives. Health Affairs;2005:24(1) : 174-179

7 Stefan Timmerman and Auron Mauck. Promises and pitfalls of evidence based medicine. Health affairs:2005;24(1):18-28

8 Yash Lokhandwala. Evidence' based medicine: the need for a close look at the evidence. Ind J Med Ethics; Oct -Dec 1997;5(4)

9 Raynauds C,Lanee'lle MA, Senaratne RH, Draper P, Lane'elle G, Daffe M. Mechanisms of pyrazinamide resistance in mycobacteria: Importance of lack of uptake in addition to prrazinamide activity. Microboilogy. 1999 Jun;145(Pt6):1359-67

10 Zang Y And Mitchison D.Curious characteristics of pyrazinamide: a review. Int J Tuber lung ; 2003 Jan ;7(1): 6-21

11 Ying Zhang, Sallie Parmar, Zhpnge sun. Conditions that may affect the susceptibility of Mycobacteruim tuberculosis to pyrazinamide. J Med Microbiol; 2002; 51:42-49

12 Chauhan DS,Mishra AK, Malonia SK, Chauhan DS, Sharma VD, Venkatesan K, Katoch VM .Paradox of pyrazinamide : an update on molecular mechanisms of resistance in mycobacteria. J Commun Dis; 2006;38(3): 288-298

13 S. Satyashree. Pathology of Tuberculosis in Tarx took of Pulmonary and Extra Pulmonary Tuberculosis. 4th revised Edit;Mehta Publishers ,New Delhi 2001; 51-54..

14 A Philips, E J Robin. Microbiology, virulence and Immunology of Mycobacterium in AP Fishman, JA Ilias, JP Fishman et al edit. Fishman's Pulmonary Diseases and Disorders 4th edit vol I; 2008: 2457-2465

15 DA Mitchison.The search for new sterilizing anti- tuberculosis drug. Frontiers in Bioscience;May 1,2004;9: 1059-1074

16 ML Mehrotra Agra study of short-course chemotherapy in pulmonary tuberculosis patients. Ind J of Tub; 24(1):29-39

17 A Singapore TB Service/British Medical Research Council controlled trial of six months and four months regimens of chemotherapy in the treatment of pulmonary tuberculosis, Am. Rev. Respir. Dis;1979; 119, 579-85.

18 Aluoch J.A.: Fourth East African/British Medical Research Council Short Course Chemotherapy Study. Bull. Int. Union. Tubrc. 1978; 53, 240-1.

19 British Thoracic and Tuberculosis Association. Short Course Chemotherapy in pulmonary tuberculosis; Lancet, 1976, 2, 1102-4.

20 Tripathy, S.P.: Madras study on short course chemotherapy in pulmonary tuberculosis. Bull. Int.Union Tuberc. 1979; 34, 28-30.

21 Hongkong Chest services / British Medical research Council. Controlled trial of 2,4,and 6 months pyrazinamide in 3x weekly regimens for smear positive pulmonary tuberculosis including assessment of combined preparations of isoniszid, rifampicin and pyrazinamide. Am Rev Respir dis 1991;143:700-06

22 Hong Kong Chest Services/British Medical Research Council controlled trial of 6 months and 8 months regimens in the treatment of pulmonary tuberculosis: results up to 24 months Tubercle:1979; 60:210-10.

23 Sophia Vijay Rationale for intensive and continuation phase in short course chemotherapy in VK Arora edit. Practical approach to Tuberculosis management Vol. II. Ist edit. Jaypee Brothers MedicalPublishers Pvt Ltd, New Delhi,2006;489-497

24 G. Flores et al., "Pediatricians' Attitudes, Beliefs, and Practice Regarding Clinical Practice Guidelines: A National Survey," Pediatrics 105, no. 3, Part 1 (2000): 496-501.

****

Comparative Study Of Catalysed And Uncatalysed Oscillatory Behavior Of Phenol And Its Carboxylic Derivatives

B. K. Dangarh *

Abstract - In the present study uncatalysed and catalysed oscillations in the redox potentials in the oxidation of phenol and its hydroxyl and carboxylic derivatives viz. 2-,3-,4-hydroxy benzoic acids in acidic bromate(H_2SO_4) are reported. Optimum and boundary conditions for each reactant exhibiting oscillatory behaviour with and without catalyst have been established and compared.

The relative position of carboxylic and hydroxyl group and their number in aromatic ring have been found to influence the induction time, frequency and number of oscillations and the total duration of oscillatory behaviour. All dihydroxy benzoic acids show a dampening of the oscillatory behaviour as compared to monohydroxy benzoic acids. A probable explanation of their relative oscillatory behaviour in accordance with the OKN and the modified OKN mechanism is suggested Ferroin has been found to be the most effective catalyst to exhibit the oscillatory behaviour in comparison to other B-Z catalyst, Mn(II) and Ce (IV) in the above system.

1.1 Introduction:

Life on earth is interplay of oscillatory phenomena, with every living system containing scores, perhaps hundreds, of chemical oscillators. These range from rhythmic activity of nerve impulse[1-3], circadian clocks[4-6], blinking of glow worms, ovarian cycles to coupled metabolic oscillations involved in protein syntheses. Oscillations are the rule rather than exception in living systems. These are the familiar phenomena in mechanical systems and electric circuits. Direction of motion of an object or an electric current may repeatedly reverse itself with or without damping of the amplitude of oscillations and repetitive standing or traveling waves may be generated in a continuous medium. Chemical systems are less prone to oscillations, and their evolution usually leads to a monotonic change of chemical parameters. However, it is well established that oscillations do occur in some purely chemical systems. The study of how complex structure arises, both in time and in space is a major focus of the field of nonlinear dynamics. Like many of the newest areas in science, nonlinear dynamics is highly interdisciplinary and is characterized by a cooperative interplay between theory and experiment. While most of the early work was purely a theoretical approach, but in the past decade many instances of new experimental breakthroughs inspiring new theoretical and computational approaches are reported. The phenomena involved are occasionally counterintuitive and often aesthetically pleasing.

1.2 The Belousov- Zhabotinsky reaction:

The Belousov-Zhabotinsky (BZ) reaction is a family of oscillating chemical reactions. During these reactions, transition-metal ions catalyze oxidation of various, usually organic, reductants by bromic acid in acidic water solution. Most BZ reactions are homogeneous. The BZ reaction makes it possible to observe development of complex patterns in time and space by naked eye on a very convenient human time scale of dozens of seconds and space scale of several millimeters. The BZ reaction can generate up to several thousand oscillatory cycles in a closed system, which permits studying chemical waves and patterns without constant replenishment of reactants. (Field and Burger, 1985; Epstein and Showalter, 1996; Epstein and Pojman, 1998; Taylor, 2002).

There are many recipes and variations of the BZ reaction. By eliminating spatial non homogeneities through continuous stirring, we only have to deal with changes of the concentrations with respect to time (i.e., a model involving ordinary differential equations) as opposed to including spatial variations and diffusion which would require partial differential equations.

1.3 Mechanism of the BZ reaction:

The mechanism of the BZ reaction is very complicated: a recent improved model for the Ce(IV)/Ce(III)-catalyzed reaction contains 80 elementary steps and 26 variable species concentrations. However, in a sequence of landmark papers, Field, Koros, and Noyes[7] formulated a model for the most important parts of the kinetic mechanism that gives rise to oscillations in the BZ reaction.

This is often referred to as the FKN mechanism and is summarized in our earlier report[8].

This mechanism was accepted universally and the same was confirmed by Edelson et al[9]. through computer simulations. According to this mechanism, there are reduced as well as

* Asst. Prof. of Chemistry, Govt. P. G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

oxidized states, depending on bromide ion concentration.

1.4 Modifications of BZ reaction

Many variants of BZ reaction have been studied using substitutions of the various reagents of BZ recipe. Bromate appears to be an essential component in any Belousov-Zhabotinsky system and there is no substitute for it. However, a number of experiments have been carried out in which substitutions were made for metal ion catalyst, inorganic acid, or organic substrate. These substitutions, especially in organic substrate, lead to very peculiar results. Some of these can be explained within the framework of FKN mechanism while others may fall in an entirely new class.

1.4.1 Substitution of Metal-ion Catalyst:

If a catalyst is to operate in a manner closely approximating the FKN mechanism, it must have two stable oxidation states separated by a single electron and have a reduction potential roughly between 1.0 and 1.5 V/equiv. Metal ions and metal ion complexes meeting these criteria include Ce(III), Mn(II), $Fe(phen)_3^{2}$-, $Fe(bpy)_3^{2}$-, $Ru(phen)_3^{2}$, $Ru(bpy)_3^{2}$ 10, and possibly Cr(bpy)**2**^{2} , $Co(phen)_3^{2}$, and $Co(bpy)_3^{2}$ [11,12]. There are differences in the behavior of metal ion and metal-ion-complex catalyzed BZ oscillators[13,14]. These apparently result from differences in the oxidation of organic substrate, but the details are not yet clear. Oscillations have been obtained in the systems containing complexes of Cu and Ni[15] as well as Os[12] and Ag[16]. The oscillations in these systems are of small amplitude and show other characteristics similar to NBC systems.

1.4.2 Substitution of Organic Substrate:

Many organic substrates have been used in place of malonic acid in of BZ reactions. Kasperek and Bruice16 listed a number of organic acids that did and did not generate oscillations in their hands, and the mechanism in these cases is apparently similar to that with malonic acid. Use of unsaturated dicarboxylic acids[18,19] as the organic substrates have the advantage that no CO_2 is generated, which hinders the oscillations. Most interesting results have been obtained with ketones and diketones. Ketones such as cyclohexanone, butanone, and 3- pentanone give oscillations in cerium catalyzed systems[20]. Nadeem et al[21] have used ketones as co-substrates with resorcinol as the main BZ substrate. Lone et al.[22] studied oscillatory behaviour of BZ reaction with the mixed substrate systems containing the gallic acid and different methyl ketones (acetone, butanone, pentanone) at different temperatures in sulphuric acid medium. An important aspect of the BZ organic substrates is the use of polyphenols and polyanilines. Although specific requirements are not entirely clear, a satisfactory organic substrate should be easily brominated, and the resulting bromo compound should react with the oxidized form of the catalyst with liberation of bromide ion.

1.4.3 Substitution of Inorganic Acid Medium:

The BZ reaction requires a strong acid medium, and H_2SO_4 has been widely used. Substitution of inorganic acid is easiest to deal with. Cerium ion catalyzed systems are most sensitive to such substitutions, as it is only in about 1M H_2SO_4 that bromate has the potential to oxidize Ce(III) to Ce(IV)[23]. The manganese containing system has been run in H_3PO_4[24], HNO_3[25] and $HClO_4$[26]. Koros[27] reported that nitric acid can be substituted for sulfuric acid and that the frequency of oscillations is thereby increased; nitrogen oxide may be involved with this enhanced behavior. Even the weaker acid H_3PO_4 can generate oscillations[28]. Of course HCl is also a strong acid, but it is unsatisfactory because chloride ion inhibits the oscillations; Jacobs and Epstein[29] have elucidated the mechanism of that inhibition.

1.5 Different Methods Used for B-Z Reaction:

The physical methods normally used to study the B-Z reaction are spectrophotometry, potentiometry and thermometry. B-Z is essentially the catalytic oxidation of an organic acid with potassium bromate in dilute sulfuric acid medium. This reaction is spontaneous and accompanied by evolution of heat. Owing to the oscillatory character of the reaction, it might be expected that the production of the heat with time could not be described by a monotonic function. The behavior of the temperature as a function of time in a chemical system containing malonic acid /potassium bromate/cerium sulphate/ sulfuric acid was also investigated[30]. Calometric techniques were also used by Rastogi et al.[31] to investigate this system.

Present Work:

The present study establishes and compare the boundary and optimum concentration ranges of Phenol, 2-hydroxy benzoic acid (2-HBA) , 3-hydroxy benzoic acid (3-HBA) , 4-hydroxy benzoic acid (4-HBA) for exhibiting temporal oscillations with and without catalyst in acid bromate. The catalysed system with 1,10 phenanthroline iron(III) sulphate (ferroin) have been studied in detail since it was found to be a better catalyst as compared to Ce(IV) and Mn(II) [32,33].

2.1 Experimental:

The chemicals used are Phenol, 4-hydroxybenzoic (4*HBA) acid (Spectrochem), 3-hydroxybenzoic acid (3-HBA) (Spectrochem), 2-hydroxybenzoic acid (2-HBA) (Qualigens), ferroin and potassium bromate (Merck). All the reagents used were analytical grade (AR) and the desired solutions were prepared in 1.0 M sulphuric acid (Merck) of 98% purity. The reaction was studied by the addition of the required amount

of bromate in to a mixture of sulphuric acid and the substrate in a reaction cell. The total volume was adjusted to 25 ml. in all cases by the addition of appropriate quantity of distilled water. The catalysed reaction was studied by introducing the desired quantity of the catalyst, before the addition of bromate. The oscillations of the potential during the reaction were measured at 303 K using **digital real time data logger YK 2005 WA Lutron** having pH as well as mV option was setup in order to record change in mV versus time for the reaction systems.

2.2 Results and Discussion-

The optimum conditions of Phenol, 2-HBA, 3-HBA and 4-HBA to exhibit oscillatory behaviour without and with catalyst (ferroin) are summarized in Table-1, along with a brief note on that particular system. Concentration ranges of the reactants in which I could observe temporal oscillations are indicated in brackets. Oscillations were recorded under the same experimental set up with a fair degree of reproducibility.

The temporal oscillations in the above uncatalysed system may be explained by the proposed OKN[34] mechanism applicable to dihydroxy benzenes and the modified OKN[35] mechanism applicable to monohydroxy benzenes. Here the role of the metal ion catalyst is taken over by the aromatics to reduce BrO_2- radical. The formation of aromatic radical due to hydrogen atom abstraction and subsequent formation of semiquinene and quinine may be responsible for temporal oscillations. However the stoichiometry of all these reacting system is complicated.

All mono-hydroxy benzoic acids except 2-HBA give more number of oscillations as compared to phenol[36] which may be attributed to the presence of an electron withdrawing carboxylic group forming a more resonance stabilized radical due to hydrogen atom abstraction from phenolic group[36]. However , in 2-HBA due to hydrogen bonding between phenolic and carboxylic group the hydrogen atom abstraction from the -OH group becomes more difficult resulting in less number of oscillations[37] , otherwise ,there is no reason why all the three isomers should not behave in a similar way.

All the catalysed systems with ferroin were found to exhibit higher frequency, larger amplitude and more number of oscillations compared to Ce(IV) and Mn(II) catalysed. This may again be attributed to the ability of ferroin to react with HOBr with one electron transfer process resulting in release of more Br- ions[37-,39]. Substitution labile catalysts such as Ce(IV) and Mn(II) fail to react in this way[37-,39].

However, in the aliphatic systems (B-Z reaction) , they are able to release Br- ions by the oxidation of bromo-derivatives[39], but in the aromatic systems studied so far, they can not librate Br- ions from the aromatic bromo -derivatives (i.e. from the aromatic ring) and the possible course for them is to react with HOBr which is not thermo-dynamically feasible. However, I got more oscillations in these systems as compared to uncatalysed ones, may be due to steps, kinetically more favorable making Ce(IV) and Mn(II) to react with HOBr[40].

The results presented and discussed in this report have a unique distinction.

ACKNOWLEDGEMENTS-

The author is highly thankful to University Grants Comission,CRO, Bhopal for providing financial support in the form of Minor Research Project (F.No. MS-31/107028/11-12/ CRO dt.17 DEC.2011) and also to the Principal, Govt. P.G. College, Neemuch(M.P.) for infrastructural facilities.

References-

1. Freeman, W. J; J. Neurophysiol., 31; 337; 1968.
2. Freeman, W. J; "Annual Review of Biophysics and Bioengineering", Vol. 1;Palo Alto; Calif; 1972.
3. Freeman, W. J; Progr. Theor. Bio; 2; 1971.
4. Pittendrigh, C. S; Proc. Nat. Acad. Sci. U. S; 40; 1018; 1954.
5. Pittendrigh, C. S; Bruce, V. and Kaus, P; Roc. Nat. Acad. Sci. U. S; 44; 965;1958.
6. Brown, F. A; Hastings, J. W. and Palmer, J. D; "The Biological Clock,";Academic Press; New York; 1970.
7. R. M. Noyes, R. J. Field, and E. Körös, J. Am. Chem. Soc. 94, 1394,1972
8. B.K.Dangarh, Deepika Jain, and Suresh Chandra Gehlot; Naveen Shodh Sansar; 1, 30,2013
9 D. Edelson, R. J. Field, and R. M. Noyes, Int. J. Chem. Kinet. 7, 417 1975
10. Koros, E; Burger, M; Friedrich, V; Ladanyi, L; Nagy, Zs; and Orban, M.Faraday Symp. Of the Chem . Soc; 9; 1974.
11. Hadlirova, M; and Tockstein, A; Coll. Czech. Chem. Commun; 45; 2621; 1980.
12. Kuhnert, L; and Pehl, K. W; Chem. Phys. Lett; 84; 159; 1981.
13. Smoes, M. L; J. Chem. Phys; 71; 4669; 1979.
14. Ganapathisubramanian, N; and Noyes, R. M; J. Phys. Chem; 86; 5158; 1982.
15. Handlirova, M; and Tockstein, A; Coll. Czech. Chem. Commun; 45; 2621;1980.
16. Kuhnert, L; and Pehl, K. W; Chem. Phys. Lett; 84; 155; 1981.
17. Kasperek, G. J; and Bruice, T. C; Inorg. Chem; 10; 382; 1971.
18. Beck, M. T; and Varads, Z. B; React. Kinet. Catal. Lett; 6; 275; 1977.
19. Showalter, K; J. Chem. Phys; 73; 3735; 1980.
20. Farage, V. J; Stroot, P. H; and Janjic. D; Helv. Chim. Acta; 60; 231; 1977.
21. Ganaie,N. B; Nath, M. A; Peerzada, G. M; J. Indust. Eng. Chem; 16; 634- 639; 2010.
22. Lone, M. A; Nath. M.A; Ganie, N. B; Peerzada, G. M; Ind. J. Chem. Sec. A; 47; 705; 2008.
23. Latimer, W. M; "Oxidation Potentials"; Prentice-Hall; Englewood

Cliffs; N.J; 2nd ed.
24. Prasad, K; Verma, G. S; Prasad, A; Dhar, V. B; Ind. J. Chem. Sect. A; 14; 786; 1976.
25. Mishra, H. C; and Singh, C. M; J, Chem. Educ; 54; 377; 1977.
26. Burger, M; and Koros, E; Ber. Bunsen Ges. Phys. Chem; 84; 363; 1980.
27. Koros, E; Private Communication.
28. Prasad, K; Rai, R. B; P. Restogi; Ph. D. Thesis; University of Gorakpur; 1976.
29. Jacobs, S. S; Epstein, I. R; J. Am. Chem. Soc; 98; 1721; 1976.
30. H.G.Busse.Nature, Phys.Sci., 233,137, 1971.
31. R. P. Rastogi, K. D.S. Yadava and A. Kumar, Indian J. Chem. 12,1280, 1974.
32. P.K.R. Nair, A. Mittal and K. Srinivaslu: React.Kinet. Catal. Lett. 16(4),399(1981)
33. P.K.R. Nair, A. Mittal and K. Srinivaslu Bull. Chem.Soc. Jap. 54, 317 (1981)
34. M.Orban , E.Koros and R. M. Noyes J. Phys. Chem; 83; 3056; 1979.
35. P. Herbine and R.J. Field J.Phys.Chem. 84, 1330, (1980)
36. E.Koros and M.Orban "Kinetics of physico- Chemical Oscillations" Discussion meeting Aachen Germany Vol.I pp.83 (1979).
37. V. K. Gupta and K. Srinivaslu;React.Kinet. Catal. Lett.19, 193 (1981).
38. V. K. Gupta, P.K.R. Nair, K. Srinivaslu; React.Kinet. Catal. Lett.18, 45 (1981)
39. R.M. Noyes, J.Am. Chem.Soc. 102, 4644, (1980)
40. C. Vidal, J.C.Roux and A. Rossi, J.Am. Chem.Soc. 102, 1241, (1980)

Summary table of optimum condition of uncatalysed and catalysed systems over which the oscillatory behavior was observed

A= Uncatalysed B= Catalysed Stirring rate = (50 r.p.m.) Temperature = 30 ± 0.1oC

S. No.	System	[Substrate] x 10^2M	[$KBrO_3$] x 10^2M	[H_2SO_4] M	[Ferroin] x 10^4 M	Pre-oscillatory Period (min)	Total Number of oscillations	Amplitude of oscillations	Remarks
1 A	Phenol	0.20 (0.20-1.0)	2.5 (1.80-3.0)	1.0 (1.0-2.0)	--------	10	7-9	140-190	Stirred
1B					2.0 (0.05-8.0)	16	32-35	170-220	Stirred
2A	2-HBA	0.80 (0.60-0.90)	2.0	2.0 (1.5-3.0)	---------	15	7	15-30	Stirred
2B					2.0 (0.04-10.0)	25	28	25-35	Stirred
3A	3-HBA	2.0 (1.40-2.20)	5.2 (4.6-5.6)	1.4 (0.8-2.2)	--------	50	38	40-5	Stirred
3B		1.2 (1.70-2.20)	4.6 (4.00-5.30)	1.4 (0.72-1.80)	2.0 (0.04-18.0)	85	110	25-15	Stirred
4A	4-HBA	0.80 (0.65-1.0)	2.0 (1.80-2.20)	2.5 (1.5-3.0)	----------	58	48	35-5	Stirred
4B		1.0 (0.65-1.20)	2.0 (1.50-2.40)	2.5 (1.5-3.5)	2.0 (0.04-18.0)	23	55	95-35	Stirred

****

Glimpses of Ancient Indian Mathematics

Akhilesh Jadhav *

Abstract: - History of Mathematics is as old as the Vedic Period and has continued till the modern age. In the development of culture and tradition in the India and Indian sub-continent, mathematics had played a significant role and mathematical ideas that originated in the Indian subcontinent have had a profound impact on the rest of the world. The aim of this article is to give a brief review of a few of the outstanding innovations introduced by Indian mathematics in ancient times within the Indian sub-continent.

Introduction:

India has a rich history in the field of mathematics and its contributions to the word of science are priceless. The earliest references to mathematics are found in the ***Rig Veda***, which is dated 2000 BC. Some references regarding astronomical phenomenon are available in the Vedas, and more details are available in the ***Puranas***. Indian astronomy and mathematician can be credited with interesting theories and discoveries. By 500 AD, ancient Indian astronomy and mathematics has emerged as an important part of Indian studies and its affect is also seen in several treatises of that period. We present some historic and archeological aspects regarding the development of mathematics in India and Indian sub-continent.

The Mathematics of the Vedic Times:

The ***Vedas*** are earliest texts of the world; it is assumed that Mathematics in India or the Vedic Mathematics had begun in the early Iron Age. The Vedic literature is to be found in several layers starting with the four Vedas ***(Rigveda, Yajurveda, Samaveda,*** and ***Atharvaveda)***, ***Brahmana*** texts, ***Aranyakas, Upanisads***, and ***Sutras***. The ***Shatpata Brahmana*** and the ***Sulabasutras*** included things like irrational numbers, prime numbers, rule of three, and square roots and also solved many of the complex problems.

Sulbasutras

The Vedic priests had developed a class of manuals that would assist them in the construction of altars (called ***Vedis***) used for performing ***sacrifices***. These texts called Sulbasutras primarily dealing with the geometry related to the design of the ***Vedis***, are considered to be a part of a larger class of texts known as ***Kalpasutras***, which in turn are considered to be one of the six ***Vedangas***. The word ***sulba*** stems from the root ***sulb*** which means 'to measure'. Since all the measurements were done using ropes or chords in the very early times traces of which can be found in practice even today it seems the word in due course was synonymously employed to refer to the chords themselves.

Mathematics, in its early stages, developed mainly along two broad overlapping traditions: (i) the geometric and (ii) the arithmetical and algebraic. Among the preGreek ancient civilizations, it is in India that we see a strong emphasis on both these great streams of mathematics. Other ancient civilizations like the Egyptian and the Babylonian had progressed essentially along the computational tradition. A Seidenberg, an eminent algebraist and historian of mathematics, traced the origin of sophisticated mathematics to the originators of the ***Rig Vedic*** rituals [3,4]

A famous verse from the ***Isa Upanisad*** speaks of "fullness" from which"fullness" arises and if "fullness" is subtracted from it "fullness" remains, which indicates that the ***Vedic*** authors had the intuition of the mathematical idea of infinity[2].

The ***Brahmanas*** and the ***Sulbasutras***[5] give account of early Vedic mathematics. Apart from concerns of geometry and astronomy the Satapatha Brahmana[5] deals with the question of all the divisors of a number. It also provides approximations to [6]. The Vedic Indians were also interested in meters and music and related mathematical problems [11-12]. The earliest codified Vedic astronomy is given in ***Lagadha's Vedanga Jyotis***. For general surveys of Indian mathematics, [7-10]

In the ***Bhishma Parva*** in ***Mahabharat*** the map of the earth is described as

सुदर्शनं प्रवक्ष्यामि द्वीपं तु कुरुनन्दन। परिमण्डलो महाराज द्वीपोऽसौ चक्रसंस्थितः।। यथा हि पुरुषः पश्येदादर्शे मुखमात्मनः। एवं सुदर्शनद्वीपो दृश्यते चन्द्रमण्डले।। द्विरंशे पिप्पलस्तत्र द्विरंशे च शशो महान्

– वेद व्यास, भीष्म पर्व, महाभारत

This island is circular like ***Sudarshan chakra***.The way your face in the mirror appears exactly as it appears in ***Chadramandal***. In this image a rabbit and two leaf of sacred fig (***Pipal***) is appears. Now if we turn this image upside down than it shows the actual map which is very similar to our Earth fig (1).

Figure: (1) Earth map in Mahabharat

*** Asst. Prof, Department of Physics, Govt. J. Yoganandam Chhattisgarh College Raipur (CG) INDIA**

Mathematics during the Indus Valley Civilisations:

The Indus valley civilization is considered to have existed around 3000 BCE. Many of the mathematical concepts we use today were developed by civilizations in the Indus valley and predate the number systems of virtually all other cultures by several centuries.

Two of its most famous cities, Harappa and Mohenjo-Daro, provide evidence that construction of buildings followed a standardized measurement which was decimal in nature. In this civilisation mathematical ideas developed for the purpose of construction and grid-pattern city planning, both of which require accurate weights and measures.

Figure (2): Urban centers of Mohenjo-Daro shows the use of mathematics in planning[13]

The Classical Era of Indian Mathematics (500 AD to 1200 AD):

The most famous era was the classical era of Indian Mathematics. The period was from 500 to 1200 AD. It was during this period that all the famous mathematicians had evolved like ***Aryabhata I*** (500 AD) ***Brahmagupta*** (700 AD), ***Bhaskara I*** (900 AD), ***Mahavira*** (900 AD), ***Aryabhatta II*** (1000 AD) and ***Bhaskarachrya*** or ***Bhaskara II*** (1200 AD) and a lot more had evolved during the classical era of Indian Mathematics.

Now we describe in brief the work of above mathematicians.

Aryabhatta I :-

In 476 ***Aryabhatta***, the author of one of the oldest mathematical texts, was born. His work, the ***Aryabhatiya***, was written in 499 in the form of verse. It contains rules for various calculations in mathematics and astronomy. ***Aryabhatta*** put down methods of finding the square and cube roots of numbers, correctly stated the area of a triangle as half the product of its base and altitude and that of a circle as the product of its circumference and half its diameter. The ***Aryabhatiya*** also gives an approximation for the value of pi as 62832/20000, which is 3.1416, or correct to four decimal places (pi = 3.1415926535 up to ten decimal places; it is an infinite decimal)[14].

Brahmagupta:-

Brahmagupta lived in Central India about a century after Aryabhatta and put forward various concepts in mensuration and algebra, such as a formula for the area of a cyclic quadrilateral. He established a general form for the solution of a quadratic equation, and recognised the presence of two roots. ***Brahmagupta's*** work is the first instance of operations involving negative numbers and zero ***Brahmagupta*** also recognised the irrational roots of numbers as numbers even though they seemed to be incommensurable. This lead was followed by mathematicians until the nineteenth century when the real number system was firmly established[14].

Brahmagupta also was the first to come out with a general solution for the indeterminate equation (one with no definite roots)

$ax + by = c$

He stated that the roots would be in the form :

$x = p + mb$,

And

$y = q - ma$

Where m is an arbitrary integer.

Bhaskara I:-

Bhaskara I was an Indian mathematician of the 7th century, who probably lived between c.600- c.680. He was most likely the first to use a circle for the zero in the Hindu-Arabic decimal system, and while commenting on ***Aryabhata's*** work, he evaluated an extraordinary rational approximation of the sine function. ***Bhaskara I*** wrote two treatises, the ***Mahabhaskariya*** and the ***Laghubhaskariya***. He also wrote commentaries on the work of ***Aryabhata I*** entitled ***Aryabhatiyabhasya***. The ***Mahabhaskariya*** comprises of eight chapters dealing with mathematical astronomy. The book deals with topics such as: the longitudes of the planets; association of the planets with each other and also with the bright stars; the lunar crescent; solar and lunar eclipses; and rising and setting of the planets. ***Bhaskara I*** suggested a formula which was astonishingly accurate value of Sine.

Bhaskara I wrote the ***Aryabhatiyabhasya*** in 629, which a commentary on the Aryabhatiya is written by ***Aryabhata I***. Bhaskara I commented only on the 33 verses of Aryabhatiya which is about mathematical astronomy and discusses the problems of the first degree of indeterminate equations and trigonometric formula. While discussing about **Aryabhatiya** he discussed about cyclic quadrilateral. He was the first mathematician to discuss about quadrilaterals whose four sides are not equal with none of the opposite sides parallel[16].

Mahavira :-

Mahavira (or ***Mahaviracharya***) was another great

mathematician of yore. He was born around 800 AD possibly in Mysore, South India. He was a Jain and was familiar with Jaina mathematics. He wrote the book ***Ganita Sara Samgraha***, in 850 AD, which was basically an updating of ***Brahmagupta's*** works The nine chapters of the ***Ganita Sara Samgraha*** are: 1. Terminology, 2. Arithmetical operations, 3. Operations involving fractions.,4. Miscellaneous operations., 5.Operations involving the rule of three. 6. Mixed operations., 7.Operations relating to the calculations of areas., 8.Operations relating to excavations.9. Operations relating to shadows .He died around the year 870 AD[17].

Aryabhata-II

Aryabhata-II (920-1000) was a great mathematician and astronomer and wrote the well-known book the ***Mahasiddhanta***. He is believed to be born in India during 920 AD and died at 1000 AD. ***Aryabhatta II's*** most eminent work was ***Mahasiddhanta***. The treatise consists of eighteen chapters and was written in the form of verse in Sanskrit. The initial twelve chapters deals with topics related to mathematical astronomy and covers the topics that Indian mathematicians of that period had already worked on. The various topics that have been included in these twelve chapters are: the longitudes of the planets, lunar and solar eclipses, the estimation of eclipses, the lunar crescent, the rising and setting of the planets, association of the planets with each other and with the stars. The next six chapters of the book include topics such as geometry, geography and algebra, which were applied to calculate the longitudes of the planets. In about twenty verses in the treatise, he gives elaborate rules to solve the indeterminate equation.

by = ax + c.

These rules have been applied to a number of different cases such as when c has a positive value, when c has a negative value, when the number of the quotients is an even number, when this number of quotients is an odd number, etc. ***Aryabhata II*** also deduced a method to calculate the cube root of a number, but his method was already given by ***Aryabhata I***, many years earlier[18].

Bhaskara II:-

Bhaskara II is a well-known mathematician of ancient India. He was born in 1114 AD in Vijayapura, India. Bhaskara II is also known as ***Bhaskaracharya***, ***Bhaskara II*** was the head of the astronomical observatory at Ujjain, the chief mathematical center of ancient India. It goes to the credit of ***Varahamihira*** and ***Brahmagupta***, the leading mathematicians who worked there and built up this school of mathematical astronomy. The subjects of his six works are arithmetic, algebra, trigonometry, calculus, geometry, and astronomy. The six works are: ***Lilavati*** on mathematics; ***Bijaganita*** on algebra; the Siddhantasiromani which is divided into two parts: mathematical astronomy and sphere; the ***Vasanabhasya*** of ***Mitaksara*** which is ***Bhaskaracharya's*** views on the ***Siddhantasiromani*** ; the ***Karanakutuhala*** or ***Brahmatulya*** in which he simplified the concepts of ***Siddhantasiromani*** ; and the ***Vivarana*** which comments on the S***hishyadhividdhidatantra*** of Lalla. From the mathematical point of view the first three of these works are the most interesting. ***Bhaskara II*** wrote ***Siddhantashiromani*** at the age of 36 in 1150 AD. This colossal work is divided into four parts ***Lilawati, Beejaganit, Ganitadhyaya*** and ***Goladhyaya*** and consists of about 1450 verses. Each part of the book consists of huge number of verses and can be considered as a separate book: ***Lilawati*** has 278, ***Beejaganit*** has 213, ***Ganitadhyaya*** has 451 and ***Goladhyaya*** has 501 verses. He formulated simple ways of calculations from Arithmetic to Astronomy in this book.

Few important contributions of ***BhaskarII*** to mathematics are as follows: Terms for numbers In English, the multiples of 1000 are termed as thousand, million, billion, trillion, quadrillion etc. These terms were named recently in English, but ***Bhaskaracharya*** gave the terms for numbers in multiples of ten which are as follows: ***eka***(1), ***dasha***(10), ***shata***(100), ***sahastra***(1000), ***ayuta***(10,000), ***laksha***(100,000), ***prayuta*** (1,000,000=million), ***koti***(107), ***arbuda***(108), abja(109=billion), ***kharva*** (1010), ***nikharva*** (1011), ***mahapadma*** (1012=trillion), ***shanku***(1013), ***jaladhi***(1014), ***antya*** (1015=quadrillion), ***Madhya*** (1016) and ***parardha*** (1017)[14].

No account of Indian mathematics would be complete without a discussion of Indian numerals, the place-value system, and the concept of zero. The numerals that we use even today can be traced to the ***Brahmi*** numerals that seem to have made their appearance in 300 BCE. But ***Brahmi*** numerals were not part of a place value system. They evolved into the Gupta numerals around 400 CE and subsequently into the ***Devnagari*** numerals, which developed slowly between 600 and 1000 CE.By 600 CE, a place-value decimal system was well in use in India. This means that when a number is written down, each symbol that is used has an absolute value, but also a value relative to its position[13].

Conclusion:

This paper has attempted to demonstrate that the indian mathematics in ancient time is very popular and developed The mathematical progress in India had stagnated from the 16th century till the 20th century due to political turmoil. After a period of stagnation a new phase emerged in the field of

Indian Mathematics. During this period the contributions of mathematicians like ***S. Ramanujan***, ***Harish-Chandra***, and ***Manjul Bhargava*** are worth mentioning. Thus it can be said that history of Indian Mathematics had begun right from the Iron Age and had continued till long. Moreover the history of Indian Mathematics is rich and largely varied.

References:

1. A Seidenberg, The Origin of Mathematics inArchive for History of Exact Sciences, 1978.
2. A Seidenberg, The Geometry of Vedic Rituals in Agni, The Vedic Ritual of the Fire Altar, Vol II, ed F Staal, Asian Humanities Press, Berkeley, 1983, reprinted Motilal Banarasidass, Delhi.
3. Subhash Kak arXiv:0904.1154v1 [math.HO] 7 Apr 2009.
4. 10. S.N. Sen and A.K. Bag, The Sulbasutras. Indian National Science Academy, New Delhi, 1983.
5. J. Eggeling (tr.), The Satapatha Brahmana. Charles Scribner's Sons, New York, 1900; http://www.sacred-texts.com/hin/sbr/index.htm
6. S. Kak, Three old Indian values of pi. Indian Journal of History of Science, 32, 307-314, 1997.
7. B. Datta and A.N. Singh, History of Hindu Mathematics. Asia Publishing House, Bombay, 1962.
8. C.N. Srinivasiengar, The History of Ancient Indian Mathematics. The World Press, Calcutta, 1967.
9. G.G. Joseph, The Crest of the Peacock, non-European roots of Mathematics. Princeton University Press, Princeton, 2000.
10. I.G. Pearce, Indian Mathematics: Redressing the balance. 2002. http://wwwgroups. dcs.st-and.ac.uk/ history/Projects/Pearce/index.html
11. S. Kak, The golden mean and the physics of aesthetics. Foarm Magazine, 5, 73-81, 2006; arXiv:physics/0411195
12. K.D. Dvivedi and S.L. Singh, The Prosody of Pingala. Vishwavidyalaya Prakashan, Varanasi, 2008.
13. http://ffh.films.com/id/15946/Culture_and_Math_The_Indus_Valley.htm
14. http://library.thinkquest.org/C0122667/maths.html
15. http://www.esamskriti.com/essay-chapters/A-brief-history-of-Indian-Mathematics-1.aspx
16. http://www.mapsofindia.com/who-is-who/science-technology/bhaskara-i.html
17. http://hubpages.com/hub/ANCIENT-INDIAN-MATHEMATICS
18. http://indianmathematicians.blogspot.com/2007/12/aryabhatta-ii.html

****

Some Fixed point theorems for Expansion Mappings

Dr. D.K. Sagar * Dr. R.K.Gujetiya **

ABSTRACT: In the present paper, we Consider three self maps f, g, h, on a complete metric space (X, d) such that f, g are continuous and his orbitally continuous and obtain fixed point theorem by using a generalized contraction.

2000 Mathematics subject classification: primary 55 M 20, Secondary 54 H 25

keywords: Fixed point, Expansion Mappings.

1. Introduction: Rawat and Sharma [2] consider 3 self continuous map f, g and h on a complete metric space (X,d) satisfying fh=hf, gh=hg and obtained a unique common fixed point. Jain and yadav [4] presented a common fixed point theorem for family of mapping by employing complete mappings in 2-matric space.

Let us define three surjcetive mapping f, g and h on a complete matric space (X,d) so that f,g are continuous and h is orbitally continuous satisfying.

1.1 $d(fhx, ghy) \geq \alpha \left[\frac{d(hx, fhx)\, d(hy, ghy) + d(hx, hy)^2 + d(hx, ghy)\, d(hy, fhx)}{2\, d(hx, fhx) + d(hx, hy) + (hy, ghy)}\right]$

Let $h(xo) \in X$ there exist a point $hx_1 \in f^{-1} hx_0$, $hx_2 \in g^{-1} hx_1$, continuing this procedure, we have sequence {hx} with

1.2 $hx_{2n+1} \in f^{-1} hx_{2n}$,
$hx_{2n+2} \in g^{-1} hx_{2n+1}$,

2. Main Results

Theorem :

2.1 If there exist three self maps f, g and h on a complete metric space (X, d) satisfying (1.1) and (1.2) such that fh = hf, gh = hg f, g are continuous and h is Orbitally continuous, then f, g have a unique common fixed point.

Proof Since we have

(2.1) $d(hx_{2n}, hx_{2n+1})$

$= d(fhx_{2n+1}, ghx_{2n-2})$

Which in view of (1.1) yields.

2.2 $$d(hx_{2n}, hx_{2n+1}) \geq \alpha \left[\frac{d(hx_{2n}, hx_{2n+1})\, d(hx_{2n-1}, hx_{2n+2}) + d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2})^2 + d(hx_{2n+1}, ghx_{2n+2})\, d(hx_{2n+2}, fhx_{2n+1})}{2\, d(hx_{2n+1}, fhx_{2n+1}) + d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2}) + d(hx_{2n+2}, ghx_{2n+2})}\right]$$

Using property of metric space we get.

$$d(hx_{2n}, hx_{2n+1}) \geq \frac{\alpha}{2} (hx_{2n+1}, hx_{2n+2})$$

Or

$$d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2}) \geq \frac{2}{\alpha} d(hx_{2n}, hx_{2n+1})$$

which reduce to

2.3 $$d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2}) \leq \lambda\, d(hx_{2n}, hx_{2n+2})$$
where $\lambda = \frac{2}{\alpha}$

Since

2.4 $$d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2}) = d(ghx_{2n+1}, fhx_{2n+3})$$

Therefore, from (2.1) and (2.4) we obtain

2.5 $$d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2}) \geq \alpha \left[\frac{d(hx_{2n+3}, fhx_{2n+3})\, d(hx_{2n+2}, ghx_{2n+2}) + d(hx_{2n+3}, hx_{2n+2})^2 + d(hx_{2n+3}, ghx_{2n+2})\, d(hx_{2n+2}, fhx_{2n+2})}{2\, d(hx_{2n+3}, fhx_{2n+3}) + d(hx_{2n+3}, hx_{2n+2}) + d(hx_{2n+2}, ghx_{2n+2})}\right]$$

Which with an appeal to properties on metric space, gives

2.6 $$d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2}) \geq \frac{\alpha}{3} (hx_{2n+2}, hx_{2n+3})$$

Therefore, we can write.

2.7 $$d(hx_{2n+2}, hx_{2n+3}) \leq \frac{3}{\alpha} d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2})$$

If λ is minimum $\left(\frac{2}{\alpha}, \frac{3}{\alpha}, \text{——}\right)$,

* Asst. Pro., Maths , Govt. Girls College, Neemuch ** Asst. Pro., Maths , Govt. PG College, Neemuch (M.P.) INDIA

We get

$d(hx_{2n+2}, hx_{2n+3}) \leq \lambda (hx_{2n+1}, hx_{2n+2})$

$\leq \lambda^2 d(hx_{2n}, hx_{2n+1})$

Repeating the procedure finally we obtain.

2.8 $d(hx_{2n+1}, hx_{2n+2}) \leq \lambda d(hx_{2n}, hx_{2n+1})$

$\leq \lambda^2 d(hx_{2n-1}, hx_{2n})$

$\leq \lambda^{2n+1} d(hx_0, hx_1)$

Thus we have.

2.9 $d(hx_n, hx_{2n+k}) \leq \frac{\lambda^n}{1-\lambda} d(hx_0, hx_1)$

Since $0 \leq \lambda < 1$ and $n \to \infty$

We get

2.10 $d(hx_n, hx_{n+k}) \to \infty$

Thus we have $\{hx_n\}$ a Cauchy sequence by completeness of X. there enists $u \in x$ such that $\{hx_n\} \to 0$.

We can say that $\{fx_{2n}\}$ and $\{hx_{2n+1}\}$ also converge to u.Using. Continuity of h, we say that

$f(hx_{2n}) = h(fx_{2n}) \to hu.$

2.11 $g(hx_{2n+1}) = h(gx_{2n+1}) \to hu.$

Thus $f(hx_{2n}) = fu.$

From which, we further obtain.

2.12 $fu = hu = hu.$

since h is orbitally continous mapping of a complete metric space (X, d) we have.

$u = \lim h^n u = \lim h(h^n u) = hu.$

$n \to \infty \quad n \to \infty$

Hence u is a common fixed point of f, g and h.

That is

2.13 $fu = gu = hu = u$

Further we assume that u, v are two common fixed point of f and g then from (2.13) and (1.1), we can write

$d(u, v) = d(fhu, ghv)$ and

2.14 $d(u, v) \geq \alpha [d(hu, fhu)\, d(hv, ghv) + d(hu, hv)^2 + d(hu, ghv)\, d(hv, fhu)]$

$\geq 2\, d(hu, fhu) + d(hu, hv) + d(hu, ghv)$

inview of (2.13) and (2.14) we can again write.

$d(u, v) \geq \alpha \frac{[2\, d(u, v)^2]}{[d(u, v)]}$

2.15 $d(u, v)(I - \alpha) \geq 0$

$d(u, v) \geq 0$

i ; e $u = v$

Thus f, g have a unique fixed point.

References:

[1] R.K. Jain and R.Jain, some common fixed point theorems for in expansion mapping. Acta, Ciencia, Indica, XXM, 217-220

[2] R.Jain and V. Yadav, A common fixed point theorem for compatible mapping in metric spase.The Mathematical Education (1194) 183-188.

[3] V.Pop, Fixed Point theorem for expansion mappings, Babes Bolyal University, Faculty of Mathematics and physics Research seminars reprint No.3 (1987) 25-30.

[4] P.Rawat and P.L. Pharma, Common fixed point theorem for three mappings, Acta, Ciencia, Indica, XVM, (1989) 351-355

****

Seasonal Variation In Sirpur Talab Soil Of Indore (M.P.)

Johnson Malini * Dr. Billore D.K. **

Abstract - "No life without soil and no soil without life ". Monitoring of soil is necessary because soil is the basis for biological production and an essential component of the ecosystem. Soil resource are critical to the environment as well as to food production .soil organic and in organic fertility may be recorded to avoid yield for reduction of pH and soil nutrients .The surrounding water and its physic - chemical characteristics are important factors affecting growth of the macrophytes .The aquatic vegetation are affected by the nature of substratum of the water bodies.

Keyword :- Soil Physico-Chemical characters.

Introduction

The productivity of any lake depends largely on the quality of bottom soil which is rich of nutrients. Soil is one of the most important ecological factor .soil is a mixture of various inorganic and organic chemical .The life in the soil both plant and animal is greatly influenced by chemical nature of the soil .Agriculture land in India facing twin problems of poor fertility and inadequate moisture availability .

This is they must to be establish a balance between environment and land resource .The opportunity to evaluate sustainabity of land .The capacity of a soil to produce is limited and the limits to production are set by intrinsic characteristics agro-ecological setting use and management (FAO 1993a).Land use pattern has also had a significant impact on the quality of the soil in a typical environment(Ogundele, Fatai Olakunle 2012).

Organic matter through forming a small part of mineral soil but it plays a initial role in the productivity and conditioning of soil .soil fertility is determined by the presence or absence of plant nutrient .Nitrogen plays an important role in carbohydrates utilization ,Phosphorus in energy transformation and Potash in enzyme activity, osmotic regulation and protein synthesis (Samuel 1985)Sulphur is involve in chlorophyll formation (Hegde and Sudhakara babu2007).Soil plays a very important role in the recycling of nutrients (Enviro facts 1999).Decomposition is a key process in the control of nutrient cycling and formation of soil organic matter (Berge and Claugherty(2002).

Area Of Study

Sirpur Talab is constructed in year 1868 during the regime of Holkar State. Talab is located west of Indore city on Indore-Ahmadabad Highway near Sirpur village situated.(22°40°N latitude and 75°45°E longitude) and MSL is 421 meter .Sirpur Talab is divided a pal chhota and bada talab .

Climate of Indore is monsionic. Years is clearly divisible in three season vie winter, summer, Rainy. Summers is the hottest season of the year. Mean maximum and mean minimum temperature ranges between 42.24 °C and 4.2°C respectively. Maximum and minimum depth 5m and 1m respectively. It covers 117000 ha and the water spread area with 4.5 km long shore line (Sharma and Belsara1997).Talab is surrounded by many tree plants (Table -1)

Material And Methods

Soil testing is an important diagnostic tool in crop production system to assess plant mineral availability .The analysis of soil will determine the current fertility status.

pH is determine by portable pH meter. Specific conductivity measured by conductivity meter. Total Alkalinity, Calcium and Magnesium were estimated by titrimetric method (APHA 1989). Nitrates, Sulphate, Phosphate were estimated by spectrophotometric method. Sodium and Potassium is estimated by flame photometer.

Result And Discussion

The soil extraction will give an indication about the amount of extractable micronutrients in soil .The texture of substratum is also known to affect the distribution of rooted vegetation. Macrophytes died their remains sink to the bottom. Macrophytes debris and the dead animals associated with it are only partially decomposed forming a mass of humus.

The soil pH ranged in the surface from 6.8 to 8.1 (table-2).The specific conductivity of the surface soil ranged from 0.38 µmho to 0.42 µmho (table-2) .

The specific conductivity value decrease in rain season and increase in summer season .the low specific conductivity value of surface layer soil as compared to lower depth is probably due to leaching of salts from surface to subsurface layer through irrigation and accumulation at the lower depth because of poor internal drainage (Katti and Rao,1979) .

During the present study the soil temperature varied between 23°C to 33°C. The colour of soil appeared black from rainy to winter season and brown summer season. In the present study the maximum calcium 0.054mg/g and minimum 0.041mg/g. The magnesium value of soil varied between 0.031 mg/g to 0.087 mg/g .the seasonal variation in these nutrients

***Asst. Prof. of Botany, Govt. P.G. College, Mhow ** Prof of Botany, Govt. College Mundi, Dist. Khandawa (M.P.) INDIA**

is mainly related with the influx of rain water and bio utilization and remain amount is unusable which ultimately deposite on the bed.

According to Wadia (1957)the soil of this region has been formed by prolonged weathering of basalt and aluminous rocks of Deccan trap as a result of continuous secondary climate changes and through impregnation with iron and human from the forest over growth for ages ,it has acquired its black colour .It is commonly called 'Black cotton soil'or Regur soil.

The black colour of soil is due to the high percentage of iron oxides and carbonates of calcium and magnesium. It also contains large amount of nitrogen0.294 mg/g and very low amount of phosphorus 0.0151mg/g. It has high water retaining capacity and highly productive. The surrounding water and its physico-chemical characteristics are important factors affecting growth of the macrophytes .The aquatic vegetation are affected by the nature of sub stratum of the water bodies .The texture of substratum is also known to affect the distribution of rooted vegetation (table-3). Potamogeton pectinatus is observed to occur in areas with a thick layer of silt while species of Vallisneria spiralis occur even in sandy or gravelly substrata. Hydrilla verticillata grow better on sandy and loamy soil (Mitra 1955, 1960). Ipomoea aquatica usually prefers loamy soil with pH values ranging from 5.0 to 7.0 (Datta and Biswas 1973).

Vegetation establishment is a suitable biological method of erosion control. Runoff of water carried large amount of soil particles which increase the turbidity and ultimately deteriorate the river bank lands, difficulties caused by sediments depositing in the downstream (Gholami and Khaleghi , 2013). The transfer of sediments from slopes by overland flow towards river system highly depends on the presence of plant. Degradation of fertile lands around pound .The water of pond causes turbidity and reduction of water quality.

Conclusion

Soil water is in reality a dilute solution of many different organic and inorganic compounds and forms the immediate source of mineral nutrients.

Table -1
List of shore line plants 2010-2011

S.No.	Common name	Botanical name
1	Neem	Azadirechta indica
2	Gulmohar	cisealpinna pulchirima
3	Aam	Mangifera indica
4	Babul	Acasia arabica
5	Imli	Tamarindus indica
6	Bottle brush	Callistemon lanceolatus

Table -2
Seasonal soil characters of chhota Sirpur Talab, Indore during 2010-2011

Character	Summer season	Rainy season	Winter season
Temperature °C	33°C	29°C	23°C
Soil pH	8.1	8	6.8
Specific conductivity (20µmho)	0.42	0.38	0.39
Total alkalinity (mg/g)	0.0385	0.0311	0.0542
Calcium (mg/g)	0.054	0.041	0.0421
Magnesium (mg/g)	0.087	0.031	0.0723
Sodium (mg/g)	0.273	0.192	0.211
Potassium (mg/g)	0.571	0.611	0.625
Nitrate (mg/g)	0.294	0.213	0.291
Phosphate (mg/g)	0.0151	0.0153	0.0191
Sulphate (mg/g)	0.0723	0.0641	0.0711

Table-3
List of Aquatic plants of Chhota Sirpur Talab 2010-2011

S. No	Name of plants
1	Trapa natans
2	Nellumbonucifera
3	Hydrilla verticillata
4	Potamogeton natans
5	Vallisneria spiralis
6	Ipomea aquatic

References

- American Public Health Association (APHA),(1989): Standard Method for the Examination of Water and West Water, APHA,AWWA,WPCF,Washington D.C.
- Berge, B., Mc.Claugherty, C.,(2002): Plant litter decomposition humus, Springer-verlag, New York.
- F.A.O.,(1993): A Frame work for land evaluation. Soil bulletin. 32 .Rome .
- Ogundele, Olakunle,F.,(2012): Variation in the physico-chemical properties of Badagry and Ikorodu soils lagos Nigeria, Inter. J. Of Humanities and Social Science Vol.2 No8-April 2012 pp.244-258
- Samuel, L.T.,Wernner and B.D.James .(1985): Soil fertility and fertilizers.4th Ed. Macmillan Public .co.inc.USA.pp.61-70.
- Wadia , D.N.(1957): Geology of India.
- Gholami, V.,Khaleghi, Mo. R.,(2013): The impact of vegetation on the bank erosion The haraz river.Soil and water res.,8,2013(4) pp.ss158-164.

Study Of Corrosion Resistance Properties Of Zinc Coated Metal In Different Chemical Media

Smt. Bindu Gandhi *

Introduction -

Corrosion is the gradual deterioration of metals by chemical, electrochemical or biochemical interaction with the environment. The compound so formed called corrosion products are usually either oxides or salts and the metal surface is spoken of as being corroded. The term corrosion is sometimes also applied to the degradation of plastics wood and concrete but generally refers to metal.

Most people have seen the end results of corrosion on a number of appliances vehicles and other items that included metal components. A new socket has to be purchased, because the electric bulb suddenly refuses to glow. Equipment stored on an ocean liner is suddenly found to be covered with rust when opened, for marketing a month later. Communications suddenly stop when an underground cable crumbles. A bridge suddenly collapses killing several people. The common thing about these otherwise everyday incidents is the suddenness with which they occur. But few know the phenomenon which brings about such breakdowns, is a slow and gradual one, like cancer and it often becomes perceptible when it is too late. This process is called corrosion, it occurs in all metals whether noble or otherwise. It is a necessary evil, man has to cope with, when he is wholly dependent upon metals, at home, in factories, for travel and entertainment. Every year a highly industrialized country like the United States loses millions of dollars due to corrosion. Much of this loss is due to the corrosion of iron and steel, although many other metals corrode as well.

Corrosion also causes unaccountable injuries and deaths in industries and homes and on roads. In fact every rupee spent to prevent corrosion saves not only several rupees which would be otherwise lost but also several lives.

In USA the loss due to corrosion is 4% of GDP. In India so far no scientific and structured study has been done related to corrosion loss to GDP. So, India being a developing country the loss due to corrosion seems to be much more than USA's corrosion losses. The corrosion loss will be around 1 lakh crore per annum in India.

Causes of corrosion

Metals occur in nature as their oxides, sulfides, carbonates etc. The chemically combined state is thermodynamically more stable. When we extract a metal from its ore, the metal is in a higher energy state, which is thermodynamically unstable. So it tries to go back to the stable state by chemical or electrochemical interaction with the environment.

Ore	Metal	Corrosion product
Thermodynamically	Thermodynamically	
Thermodynamically		
Stable	Unstable	Stable

Effect of Corrosion

Consequences of corrosion cause a great loss of economy and life. The following harmful effects are specific.

1. Corrosion reduces the thickness of the metal resulting in loss of mechanical strength and failure of the structure.
2. Corrosion causes structural failure as it is hazardous (e.g. car and aircraft).
3. Because of the deterioration of appearances, the cost of the machine is reduced.
4. Efficiency of the machine is reduced due to corrosion.
5. Because of corrosion, pipes are blocked and pumps are difficult to operate.
6. Because of corrosion, boilers are damaged.
7. Building and other historic monuments are damaged due to corrosion.
8. Valuable metallic properties such as conductivity, malleability, ductility, etc, are lost due to corrosion.

Theories of (or classification of) corrosion-

There are two theories of corrosion

(1) Dry or chemical corrosion

(2) Wet or electrochemical corrosion

Dry or chemical corrosion

It is due to attack on metal surface by atmospheric gases like O_2, SO_2, H_2S etc. for example, tarnishing of silver by H_2S.

There are three types of dry or chemical corrosion

(1) Oxidation corrosion

(2) Corrosion by Hydrogen

(3) Liquid metal corrosion

Oxidation corrosion

It is due to the direct attack of oxygen on metal surface in the absence of moisture. Alkali and alkaline earth metals

*** Asst. Professor Chemistry M.J.B.Govt.P.G.Girls College, Motitabela INDORE (M.P) INDIA**

are corroded at low temperatures. At high temperatures, most metals except Au, Pt and Ag are oxidized.

The metal surface is converted to a Monolayer of metal oxide, further corrosion occurs by diffusion of $M2^+$ ion through the metal oxide barrier. The growth of oxide film is perpendicular to the metal surface.

If diffusion of either oxygen or metal is across this layer further corrosion is possible. Thus the layer of metal oxide plays an important role in the process of corrosion. Oxides of Pb Al and Sn are stable and hence inhibit further corrosion. They form stable tightly adhering oxide film.

Different types of oxide films are formed

(I) Porous and Non-Porous Oxide Film

(a) If the volume of the oxide layer formed is less than the volume of the metal consumed, the oxide layer is porous. *For example:* in case of alkali and alkaline earth metal oxide layer is porous and non protective.

In case of porous oxide film atmospheric gases passes through the pores and react with the metal and the process of corrosion continues to occur till the entire metal is converted into oxide.

(b) If the volume of oxide layer formed is greater than the volume of metal consumed, the layer is non porous. As in case of Pb, Sn the layer is non porous and protective.

(II) Stable Oxide Layer

A stable oxide layer is firmly adsorbed on the metal surface. It prevents further corrosion and acts as a protective coatingFor example: oxide of Al, Cu etc.

(III) Unstable Oxide Layer

This is mainly produced on the surface of the noble metals such as Ag, Au etc. The unstable oxide decomposes to stable metal and oxygen.

(IV) Volatile Oxide

The oxide film volatilizes as soon as it is formed. It leaves fresh metal surface for further continuous attack.

For example: Molybdenum oxide MoO3

2. Corrosion by Hydrogen

(a) Hydrogen embrittlement

It is formation of cracks and blisters on the metal by hydrogen gas when the metal comes into contact with H_2S. Iron liberates atomic hydrogen by reacting with H_2S. Hydrogen atoms diffuse into the voids of metal, matrix. When the pressure of the gas increases, cracks and blisters develop on the metal.

(b) Carburization

It is the process of decrease in carbon content of steel. At high temperature molecular hydrogen decomposes to atomic hydrogen

When steel is exposed to this environment, carbon in the steel reacts with atomic hydrogen.Hence the carbon content in steel decreases. Collection of methane gas in the voids of steel develops high pressure and causes cracking.

3. Liquid Metal Corrosion

It is due to the chemical action of flowing liquid metal at high temperature. It involves

1. Dissolution of a solid metal by the liquid metal
2. Penetration of liquid metal into the solid metal

Wet (or) Electrochemical corrosion

It occurs under following conditions:

(1) When two dissimilar metals or alloys are in contact with each other in pressure of an aqueous solution or moisture.

(2) When the metal is exposed to an electrolyte with varying amount of oxygen.

Mechanism of wet corrosion

(1) Metal dissolution occurs at the anode

(2) Reduction reaction occurs at the cathode in different environments

(A) Acidic environment: Here hydrogen gas is evolved at the cathode.

(B) Neutral environment: In neutral or slightly alkaline medium, hydroxide ions are formed at the cathode

Hydrogen Evolution type corrosion (In acidic medium)

All metals above hydrogen in electrochemical series tend to get dissolved in acidic solution with simultaneous evolution of H_2 gas,e.g. when iron comes into contact with non oxidising acid like HCl, hydrogen evolution occurs.

At anode: Iron is oxidised to Fe^{2+}

At cathode hydrogen ions (H^+) are formed due to acidic environment

H^+ ion is reduced to H_2

Absorption of oxygen

This type of corrosion takes place in neutral or basic medium in presence of oxygen. (Formation of hydroxide ion type corrosion, in neutral or weakly alkaline medium).

The surface of iron is coated with a thin film of iron oxide. But if some cracks develop on the film, anodic areas are created on the surface. The rest of the metal part acts as cathode.

Types of corrosion

There are different types of corrosion based on the reactions and physical states, these are:

- Uniform Corrosion
- Galvanic Corrosion
- Pitting Corrosion

- Stress Corrosion
- Crevice Corrosion
- Erosion Corrosion
- Soil Corrosion
- Microbiological Corrosion
- Waterline Corrosion
- Differential aeration Corrosion
- Intergranular Corrosion

Factors Influencing Corrosion

Since corrosion is a process of destruction of metal surface by its environment, the two factors that govern the process are: (1) Metallic (2) Environmental

(1) Metallic - Different properties of a metal are responsible for corrosion. These are:

* *Position in emf series:* It decides the corrosion rate. A metal above hydrogen in the electrochemical series corrode easily because they have negative reduction potential. When two metals are in contact, the more active metal with a higher negative potential corrodes.

* *Relative areas of anode and cathode:* Corrosion will be severe if anodic area is smaller and cathodic area is larger. The larger cathodic area demands more electrons, so the anodic area corrodes faster.
* *Purity of metal:* Pure metal resists corrosion, while impurities in a metal form a local galvanic cell (metal as anode and impurity as cathode) and result in the corrosion of metal. Corrosion rate increases due to more exposure of impurities. For alloys the system is a homogeneous solid solution, hence no local action and no corrosion. For example zinc metal with iron or copper impurity forms an electrochemical cell. The base metal Zn acts as anode and corrodes.
* *Over Voltage:* Corrosion rate is inversely proportional to the over voltage of the metal in a corrosive surroundings.
* *Nature of oxide film:* An oxide film is formed by the reaction between metal and oxygen. If this oxide film is porous and oxygen can be diffused through it, more corrosion is expected. If the volume of metal oxide is more than the volume of metal, least corrosion or no further corrosion occurs.
* *Nature of corrosion product*: If the corrosion products are volatile and soluble, the corrosion will be faster. MnO3 and SnCl4 are volatile, so faster is corrosion of Sn in chlorine atmosphere. In case of soluble corrosion product, it will be enhanced by water and metal surface will be exposed for further corrosion.

(2) Effect of Environment

The role of environment in the corrosion of metal is very important Environmental parameters like temperature, humidity, pH etc. play important role.

(i) *Temperature*: Increase of temperature increases corrosion rate because the rate of diffusion of ions increases.

(ii) *Humidity:* Rate of corrosion is more, if humidity of environment is high. Moisture acts as solvent for O_2 CO_2 etc. to produce electrolyte necessary for formation of corrosion cell.

(iii) *Corrosive gases:* Acidic gases like CO_2, SO_2, H_2S etc. produce electrolytes and increase corrosion.

(iv) *Presence of suspended particles:* Presence of suspended particles like NaCl, $(NH_4)_2$ SO_4 along with moisture are powerful electrolytes and increase rate of corrosion.

(v) *pH value*: In acidic medium corrosion is faster. Some metals such as Pb, Zn, Al etc. form complexes and hence they corrode.

(vi) *Polarization of electrodes:* More the polarization of electrodes, less current will be passed and hence less corrosion.

Protection from corrosion

Corrosion control is based on preventing or slowing down the reaction of a metal with its environment. There are a number of means of controlling corrosion. The choice of means of corrosion control depends on safety requirements and a number of technical considerations, such as:

Material selection

Protective coating

Environmental alteration

Cathodic protection

Metal Coating

Protective coatings are the most commonly used method of corrosion control. Protective coatings can be metallic such as galvanized steel or they can be applied as liquid paint. Plated coatings (metallic coating) are extensively used to protect and to extend effective life. Plated coatings can protect the substrate either by providing a barrier layer of durable, more noble, decorative, single or multilayer of metal (s) such as copper nickel, chromium over steel or aluminum or by providing a coating of less noble (more reactive) metal which will sacrificially corrode, protecting the article even when penetrated. Correctly specified and applied coatings can ensure that many years of component service are imparted by the coating before corrosion.

Zinc metal is most commonly used as an anti corrosion agent.

Zinc is more reactive than iron or steel and attracts almost all local oxidation until it completely corrodes away. A protective surface layer of oxide and carbonate ($Zn_5 (OH)_6 (CO_3)_2$) forms as the zinc corrodes. This protection lasts after the zinc layer is scratched but degrades through the time as the zinc corrodes away. The majority of hardware parts are zinc plated.

Experimental Method

The corrosion resistance property was studied on zinc plated metal.Metal specimens were electrochemically plated.The mild steel was used as a base metal in all electroplating experiments.

Corrosion Testing:

The corrosion property of different coatings was evaluated qualitatively. The analysis was performed on coated and uncoated specimens. All the specimens were tested in various corrosive media and then compared. Two types of tests were performed to test the corrosion behaviour of specimens.

(1) Atmospheric exposure test.

(2) Immersion test.

Before performing tests specimens were immersed and agitated in isopropyl alcohol for 15 seconds dried at laboratory temperature for minimum of one hour, and then tests were performed.

(1) Atmospheric exposure test:

Uncoated and coated specimens were exposed to open atmosphere. The specimens were weighed before exposure. Exposed time was about three months. The exposed specimens were then physically examined, cleaned and weighed. The uncoated specimens show indication of corrosion where as coated samples appears to be unaffected by exposure to atmosphere. Table 19 summarizes weight of coated and uncoated specimens after exposure to atmosphere.

(2) Immersion test:

Immersion testing is the most frequently used for evaluating the corrosion of metals. The test was performed on coated and uncoated specimens. Corrosion resistance of different coatings was tested by immersing the specimens in .1 M NaOH, 3.5% NaCl, .1 M H_2SO_4, --tap water, distilled water, rain water, acetic acid, acetone, ethyl alcohol, aniline, carbon tetrachloride, phosphoric acid, aqueous ammonia, aqueous H_2S, CO_2 (wet), Cl_2 (wet), SO_2 (wet), Conc. HCl, Conc. H_2SO_4, and Phenol.

The solutions were prepared using standard grade chemicals, diluted in distill water to specified concentrations.

Immersion exposure was performed in sealed corrosion flasks containing 150 ml. of each solution. The flasks were maintained in static condition without agitation or aeration. The immersion time was about 170 Hrs. During the immersion period corrosion flasks were monitored. After the completion of immersion duration specimens were taken out from the flasks rinsed with water and observed visually for any rust on the specimens.

Result and Discussion

The results of corrosion study revealed that the unplated specimens showed indication of corrosion whereas coated samples appear to be unaffected by exposure to atmosphere because of the formation of thin protective film.

Results of corrosion in different corrosive media showed that distilled water is least corrosive. Corrosion rate is greater in acidic media and increases with increase in acid concentration. Corrosion in acidic solution is attributed to the presence of water, air and H^+ ion which accelerated corrosion process.

Zinc coated specimens showed little corrosion in 3.5% NaCl solution. Zinc coated specimens showed resistance to distilled & tap water but corroded in rainwater.

Organic liquids did not attack zinc. .1M HCl did not show corrosion but white rust is formed on the surface that covered the sample. NaOH solution is not corrosive. But sample gets tarnished in alkaline media

Significant increase in corrosion resistance was achieved for the plated samples compared with that of unplated. Some of the specimens did not make good performance in corrosion test. It might be due to coating imperfection. Some of the specimens showed little corrosion attack for longer duration of exposure in the corrosive media. The severity of attack decreases with increasing weight of deposited metal on specimens.

References-

1 Uhlig, H.H., "Corrosion and corrosion control" 2nd ed., John Wiley & Sons, Inc. New York (1971).

2. Tomashov, N.D., "Teory of Corrosion and Protection of Metals, The Mac Millan Co. New York, (1966).

3 Shrier, L.L., (ed.), "Corrosion", Halsted Press, John Wiley and Sons, New York (1963).

4. Evans, U.R., "Corrosion and oxidation of Metals", New York, (1960).

5 Laque, F.L. and Copson, H.R., "Corrosion resistance of Metals and Alloys", 2nd ed., New York (1963).

6 Burns, R.M. and Bradly, W.W., "Protective Coatings for metals" 3rd ed. Reinhold Publishing Corp., New York (1967).

7 Fitzerald, R.J., Must we live with corrosion? South West Water Works J., 43, 29 - 31 (1962).

8. Bosch, A., "Corrosion of Carbon Steel Key to Metals Steel, (2000).

****

Waste Management Through Microbial Treatment

Avadhesh Pratap Singh Mandloi * Dr. Archana Pancholi **

Abstract - Solid waste can be defined as all the waste arising from human and animal activities that are normally solid in nature and are discarded as useless unwanted materials. The waste productes due to urbanization & Industraialization not only in India, it is a major problem of all the countries in the world. All countries faces the threat towards biodiversity i.e. humans, animals and plants also. Today is necessary to use such a method which can convert waste into reusable by product. Solid waste management can be defined as the discipline associated with the control of generation, collection, storage, transfer and transport, processing and disposal of solid wastes in manner that is accord with the best principles of public health, economics, engineering, conservation, aesthetics and other environmental considerations. Microorganisms play pivot role in environment to show their beneficial effect. Many microorganism species (Bacteria and fungi) are responsible to degrade the percentage of solid waste and to assess the environmental pollution by using Aerobic and Anaerobic treatment.

Key words: Solid Waste, Microorganisms, Environmental Pollution, Municipal Waste. Aerobic Digestion, Anaerobic Digestion.

Introduction

The growth of the world population, increasing urbanization, rising standards of living, and rapid developments in technology have all contributed to an increase in both the amount and the variety of solid wastes generated by industrial, domestic and other activities (UNEP, 1991). The problems of dealing with greater volumes of - often more dangerous - waste materials are particularly acute in developing countries where changes have not been met by improvements in waste-management technologies (Wilson & Balkau, 1990). Even domestic solid waste has become a health hazard in many developing countries as a result of careless handling and a failure to organize appropriate solid waste collection schemes.

Wastes can be grouped based on the source of origin: i) Domestic, ii) Municipal, iii) Agricultural, and iv) Industrial. The quantum of these wastes varies from region to region and depends upon the cultural background of that area or country. The estimates of quantum of waste generation in India vary according to parameters and the surveying agency. Agriculture and municipal sectors are the main contributors to the waste produced. Since the waste production is increasing at the rate of 1.33%, we can anticipate higher expenditure on their disposal and management. In fact, Industrial sectors have not been able to handle and treat their wastes or control the emission of gases into the atmosphere. Various laws have been enacted in the field of air and water pollution control and hazardous waste management.

National standards and limits have also been set up for discharge of pollutants in the environment. The environmental impact analyses are mandatory for large and medium scale industries. However, the industrial firms are still not in a position to take up effective steps to fall in line with these statutory requirements primarily due to lack of awareness of pollution problems and their effects, awareness of and access to cost-effective technologies and services and finance at affordable cost, Microbial methods are certainly the best for treating organic wastes in particular.

Estimated quantities of waste generation in India

Waste	Quantity
Municipal Solid	27.4 mty
Pressmud	9 mty
Food and fruit processing	4.5 mty
willow dust	0.03 mty
Municipal liquid (121 class I and II cities)	12145 mld
Dairy industry (COD level 2 kg/m3)	50-60 mld
Distillery (243 nos)	8057 kld
Paper and pulp industry (300 mills)	1600 m³/ day
Tannery (2000 nos)	52500 m³/ day
mty :Million tones/year	mld : Million litres / day

kld : kilo litres / day COD : Chemical Oxygen Demand

Microorganisms have been known to be operational in natural ecosystems as a dynamic population. Microbes such as bacteria, fungi, protozoa and crustaceans play an important role in maintaining the rivers and streams as a clean source of potable water. Man has learned from natural systems and these microbes are now being employed as cleaning agents in manmade polluting sources: domestic and industrial waste.

* Ph.D. Research Scholar, Department of Biotechnology, Pacific Academy of Higher Education and Research University, Udaipur (Raj.) ** Assistant Professor, Department of Botany, Swami Vivekanand Government P.G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

Recent improvements in Microbial treatment systems have made them to be more advantageous over chemical or physical technologies in use for the last few decades

Source and states of waste generation :

Waste generated by certain industries, which release toxic wastes and organic pollutants through untreated effluents : agro-based industries, refineries, petrochemicals, fertilizers, and industrial chemicals. These industries in India are estimated to release about 3000 million litres per day (MLD) of industrial effluents. Disposal of untreated wastes in to the environment is the basic cause of environmental pollution including the release of greenhouse gases like methane and carbon dioxide. Consequently, it leads to health related problems. The generation and disposal of biodegradable wastes are issues of significant social and economic importance.

A large quantity of waste is generated by domestic and industrial sectors. According to sp estimate Made in 1999 from large number (120) of Indian cities, sewage generation rate was 12000 MLD. According to a more recent survey of 350 Indian cities and 10 industrial sectors it is likely to increase from 14000 MLD in 2007 to 19500 MLD by 2017. The quantities of different kinds of waste vary depending upon the industrial sector.

Within the industrial sector, chemical producers contribute towards 40 to 45% of the total pollutans, whereas the rest of the organic pollution is discharged largely by food and fruit processing units and agro-based industries. The average daily per capita sewage generation is estimated at about 150 litres. The total sewage generated in India is about 30 billion litres/ day. However, the total treatment capacity available is only about 10% of this quantum generated.

Microbial Treatment of Wastes

There is an urgent need for solving the enormous environmental pollution due to municipal and industrial wastes. The common practice of open dumping of solid wastes and release of untreated sewage in the cities and towns in the country should be stopped.

The approach to handle this situation is the use of micro-organisms via bio-deterioration or bio-degradation. Primarily we have two options to treat wastewaters: a) Aerobic and b) Anaerobic.

Treatment of waste streams by conventional means like aeration is energy intensive and expensive. In addition, it leads to the generation of significant quantities of sludge, which also demands effort for its disposal Anaerobic digestion (AD) produces energy in the form of biogas (methane) and offers many other advantages such as ability to tolerate wastewaters of high organic loads. Recycling and stabilization of waste through AD is a better approach for treatment than aerobic treatment or composting.

Comparison of Aerobic with Anaerobic Microbial Treatment System

Feature	System	
	Aerobic	Anaerobic
Effluent quality	Excellent	Moderate to poor
Sludge production	High	Low
Nutrient requirement	High	Low
Energy requirement	High	Low
Temperature sensitivity	Low	High
Methane production	No	Yes
Nutrient removal	Possible	Negligible

Aerobic Digestion-

Aerobic digestion is a biological process for treating organic prior to final disposal. The system involves, 12 to 25 days of aerating the waste sludge, where by microbes break down to organic material. As the process proceeds and the concentration of nutrient cell material and reduce the organic content even further. The process of aerobic digestion is accomplished m multi-stage system where of the digestion is accomplished in the first tank and the last stage is used for the solids. Supernatant produced during these steps is recycled. The major advantages in aerobic sludge digestion is the production of a more stable sludge, and fewer odour problem. Since no methane and carbon dioxide are produced the associated safety problems do not arise. The predominant aerobic bacteria are Streptococci neumoniae, Staphylococcus aureus, Escherichia coli, Klebsiella pnumoniae, Haemophilus influezae.

Secondary treatment options employed on-site in Effluent Treatment Plants (ETPs) include diverse biological reactors that are able to convert pollutant in the wastewater to carbon dioxide and water. The most common technologies involving these biological processes include trickling filters, rotating biological contactor (RBC), aerated lagoons and activated sludge process.

Anaerobic Digestion

As the name anaerobic refers, the anaerobic digestion is carried out by microorganisms that can only live in an oxygen free environment. The decomposition of biowaste occurs in four stages: hydrolysis, acidogenesis, acetogenesis and methanogenesis. Anaerobic digestion is a process for the stabilization of organic matter, present in the biological waster by anaerobes. Degradation of complex organic matter involves the breakdown of almost all kinds of biomass (waste) into soluble compounds. Methane and carbon dioxide are the principal products and minor quantity of nitrogen, hydrogen,

ammonia and hydrogen sulphide gets generated. Thus, this process consists of complex sequences of biological reactions, during which the product by one group of organisms serves as the substrate for the next and the methanogens are the terminal organism in the microbial food chain. The out standing feature of this decomposition process is that its successful operation depends on the interaction of metabolically different bacteria. Effective fermentation of organic matter to biogas is a result of combined and coordinated metabolic activity of the anaerobic bacterial population, in the absence of oxygen or other strong oidizing chemicals.

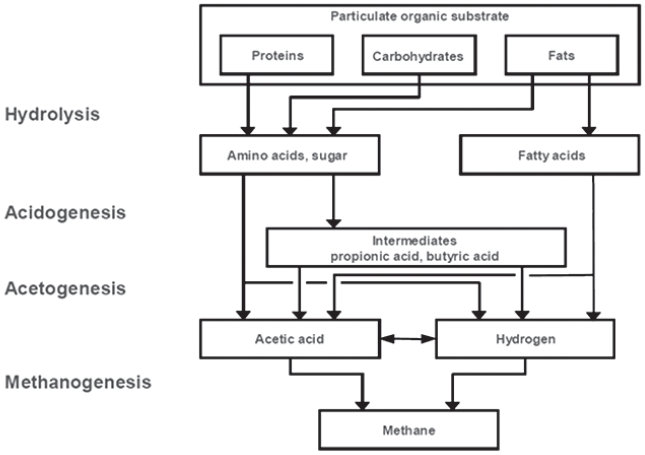

Degradation steps of anaerobic digestion process

1. Hydrolysis
2. Acidogenesis
3. Acetogenesis
4. Methanogenesis

Hydrolysis

During hydrolysis, the first stage, bacteria transform the particulate organic substrate into liquefied monomers and polymers i.e. proteins, carbohydrates and fats are transformed to amino acids, monosaccharides and fatty acids respectively. an example of a hydrolysis reaction where organic waste is broken down into a simple sugar, in this case, glucose (Ostrem, 2004).

Microbes involve in Hydrolysis: Cellulomonas, Bacillus, Mycobacterium.

Equation 1: $C_6H_{10}O_4 + 2H_2O \rightarrow C_6H_{12}O_6 + 2H_2$

Acidogenesis

In the second stage, acidogenic bacteria transform the products of the first reaction into short chain volatile acids, ketones, alcohols, hydrogen and carbon dioxide. The principal acidogenesis stage products are propionic acid (CH_3CH_2COOH), butyric acid ($CH_3CH_2CH_2COOH$), acetic acid (CH_3COOH), formic acid (HCOOH), lactic acid ($C_3H_6O_3$), ethanol (C_2H_5OH) and methanol (CH_3OH), among other. From these products, the hydrogen, carbon dioxide and acetic acid will skip the third stage, acetogenesis, and be utilized directly by the methanogenic bacteria in the final stage. Equations 2, 3 (Ostrem, 2004) and 4 (Bilitewski et al., 1997) represent three typical acidogenesis reactions where glucose is converted to ethanol, propionate and acetic acid, respectively. *Microbes Involve in Acidogenesis : Clostridium, Enterobacter, Lactobacillus, Escherichia, Propionibacterium.*

Equation 2: $C_6H_{12}O_6 \rightarrow 2CH_3CH_2OH + 2CO_2$

Equation 3: $C_6H_{12}O_6 + 2H_2 \rightarrow 2CH_3CH_2COOH + 2H_2O$

Equation 4: $C_6H_{12}O_6$? $3CH_3COOH$

Schematic representation of the course of anaerobic methane generation from complex organic substances showing scanning electron micrographs of individual microorganisms involved.

Acetogenesis

In the third stage, known as acetogenesis, the rest of the acidogenesis products, i.e. the propionic acid, butyric acid and alcohols are transformed by acetogenic bacteria into hydrogen, carbon dioxide and acetic acid. Hydrogen plays an important intermediary role in this process, as the reaction will only occur if the hydrogen partial pressure is low enough to thermodynamically allow the conversion of all the acids. Such lowering of the partial pressure is carried out by hydrogen scavenging bacteria, thus the hydrogen concentration of a digester is an indicator of its health (Mata-Alvarez, 2003). Equation 5 represents the conversion of propionate to acetate, only achievable at low hydrogen pressure. Glucose (Equation 6) and ethanol (Equation 7) among others are also converted to acetate during the third stage of anaerobic fermentation (Ostrem, 2004).

Microbes Involve in Acetogenesis : Enterobacter Spp., Citrobacter Spp., Serratia Spp. and Synthrobacter spp.

Equation 5: $CH_3CH_2COO^- + 3H_2O \longleftrightarrow CH_3COO^- + H^+ + HCO_3^- + 3H_2$

Equation 6: $C_6H_{12}O_6 + 2H_2O \rightarrow 2CH_3COOH + 2CO_2 + 4H_2$

Equation 7: $CH_3CH_2OH + 2H_2O \rightarrow CH_3COO^- + 2H_2 + H^+$

Methanogenesis

The fourth and final stage is called methanogenesis. During this stage, microorganisms convert the hydrogen and acetic acid formed by the acid formers to methane gas and carbon dioxide (Verma, 2002). The bacteria responsible for this conversion are called methanogens and are strict anaerobes. Waste stabilization is accomplished when methane gas and carbon dioxide are produced.

Microbes Involve in Methanogenesis : Methanosarcina Spp., Methanothrix Spp. Methanosaeta Spp., Methanomicrobium Spp., Methanobacterium Sp., Methanobrevibacter Spp., Methanococcus Spp., Methanogenium Spp. and Methanospirillum Spp.

Equation 8: $CO_2 + 4H_2$? $CH_4 + 2H_2O$

Equation 9: $2C_2H_5OH + CO_2 \rightarrow CH_4 + 2CH_3COOH$

Equation 10: $CH_3COOH \rightarrow CH_4 + CO_2$

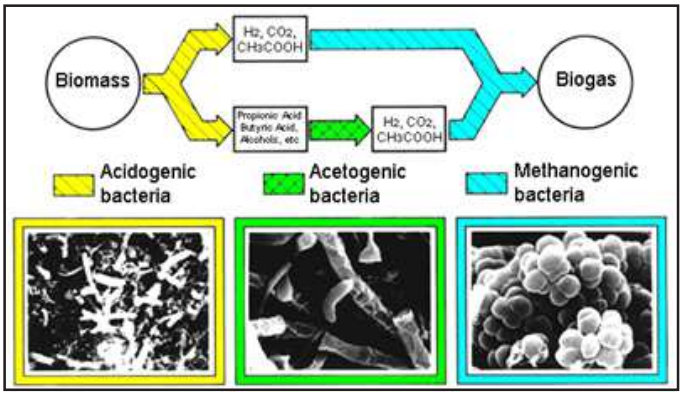

Conclusions

Though anaerobic digestion systems have been operational in certain industries like distilleries for sometime, there is still some apprehension regarding adopting this technology in other sectors. This stems from various factors like limited availability of experienced consultants to implement the technology, little full-scale experience, lack of operator training within the industries for process maintenance, and restricted interaction between research organizations and commercial developers/ vendor.

Apart from funding pilot studies, financial and fiscal incentives are also provided for establishing full-scale plants. Also, under the UNDP-GEF assistance programme, MNES is encouraging both national and international entrepreneurs to demonstrate proven anaerobic technologies in various industrial and domestic sectors. In addition, there is an urgent need for more intensive interaction between research organizations and suppliers of anaerobic systems. With increasing use of anaerobic technology for treating various process streams, it is expected that industries would become more economically competitive. The more judicious use of natural resources will ensure increased usage of anaerobic digestion technology in the future.

References:

- Bernd, Bilitewski. Georg, Härdtle and Klaus, Marek (1997) : Waste Management. Springer, Berlin, ISBN: 3-540-59210-5
- Cavinato, Dr. Clistina (2011) : Anaerobic Digestion fundamental I. Summer School on Biogas technology for sustainable Second Generation Bio fuel Production. pp. 15-22.
- Kalia, V.C. (2007) : Microbial Treatment of Domestic and Industrial Waste for Bioenergy Product. Applied Microbiology pp. 2-30.
- Lee, Yuan Kun (2006) :Microbial biotechnology principal and application (2nd Edition) pp. 657-658.
- Mata-Alvarez, J. (2003) : Biomethanization of the organic fraction of municipal solid wastes.
- Ostrem, K. (2004) : Greening Waste: Anaerobic Digestion For Treating The Organic Fraction Of Municipal Solid Wastes. Earth Engineering Center Columbia University.
- Soni, Vinod and Sharma, Vinay (2008) : Solid Waste : Source and Management. Text book of Biotechnology. pp.36-62.
- United Tech, I. (2003) : Anaerobic Digestion, UTI Web Design.
- Verma, S., (2002) : Anaerobic Digestion Of Biodegradable Organics In Municipal Solid Wastes. Department of Earth & Environmental Engineering (Henry Krumb School of Mines) Fu Foundation School of Engineering & Applied Science Columbia University.

****

Effect Of Time And Current On Nickle Electroforming

Sadhana Saxena *

Electroforming plays an important role in our daily lives. We have contact with it many times each day and it greatly enhances our lifestyle in a variety of ways. In addition, it is an extremely versatile process. For instance, it is used to produce micro components for the medical and electronics industries and huge components for the aircraft and aerospace industries. For many applications it has become indispensable and yet outside the electroforming community, little appears to be known about the process and its applications. Most metallurgists, engineers and designers are not well informed on the subject as it is rarely, if ever, included in technical courses presented at colleges or universities. Nevertheless it is a unique metal fabrication process and nickel is the dominant metal in this industry.

Electroforming is a unique metal fabrication process that is indispensable in producing many items with which we have daily contact. It is also sufficiently versatile that it is used successfully to produce huge components for the aerospace and automotive industries and yet is able to perfectly replicate surfaces with submission size features. It is used to produce many types of screen products and moulds of all sizes. It is the only practical method of producing many complex forms such as waveguides. bellows and the range of applications continuous to expand.

Electroforming is an electro deposition process in which nickel is the material of choice for most applications. Nickel can be deposited with a wide range of mechanical properties by controlling the deposition conditions, by the use of electrolyte additives or by alloying. Nickel electrolytes have the advantages of being easy to control and they are capable of fast deposition rates. Nickel and its alloys will continue to dominate this industry and by increasing the awareness of the electroforming process amongst designers, engineers and metallurgists, continued growth should be assured.

Electroforming is defined as the production or reproduction of articles by electro deposition upon a Mandrel or mold that is subsequently separated from the electro deposit. A mandrel is a form used as a cathode in electroforming Electroforming is based on the principles of electroplating techniques. The purpose of electroplating is to cover the surface of a substrate, but in Electroforming deposit must have considerable thickness, for example when the electroplated metal has a thickness in the range of 20 ?m to 50 ?m, that of Electroforming metal is in a range of 200 ?m to 2 cm. Nickel and Copper are mainly used in Electroforming. Electroforming is fabrication of simple and complicated components by means of electroplating. The basic fabrication steps are as follows:

- A suitable mandrel is fabricated and prepared for electroplating.
- The mandrel is placed in the appropriate electroplating solution and metal is deposited A suitable mandrel is fabricated and prepared for electroplating.
- The mandrel is placed in the appropriate electroplating solution and metal is deposited upon the mandrel by electrolysis.
- When the required thickness of metal has been applied the metal covered mandrel is removed from the solution.

The mandrel is separated from the electrodeposited metal. The electroform is a separate, free standing entity composed entirely of electrodeposited metal. The standard definition adopted by ASTM committee B8 is that "electroforming is the production or reproduction of articles by electrodeposition upon a mandrel or mold that is subsequently separated from the deposit." Electroforming is thus a metal fabrication process concerned with the production of articles, tools and component. Modern applications of Electroforming are diverse and today nickel is used in a great variety of different electroforming applications. The reasons for its popularity include the fact that electroplated nickel can be strong though and resistant to corrosion, erosion and wear resistance.

Watts solution used for deposition as an electrolyte. Mild steel specimens electroplated at different current and plating time. It was observed that increase in current ,the amount of deposited metal increases on the cathode ,because there is more energy available for ions to move the cathode from anode. Thickness is also increased with increase in current. Effect of time is also a very important factor for electrodepsition; it was observed that thickness and deposition weight increased with increasing time. The hardness of metal deposited specimens increased with time. Electroplated specimens showed corrosion resistance towards atmosphere and other chemicals because of the formation of thin protective film.Conclusion -Work showed influence of operating parameters on Nickel electroforming. Current and time of plating increases thickness ,quality of electroform and increase resistance to corrosion.

References:

1. Parkinson, Ron Electroformng - unique metal fabrication process. NiDI Publication No. 10084, Nickel Development Institute. (1998)
2. Watson, S. A.; Application of electroforming NiDI Publication No. 10054, Nickel Development Institute.
3. "Standard Definitions of Terms Relating to electroplating" ASTM B3 74-75 ASTM Philadelphia, Pennsylvania (1977).
4. The electroforming process, archived from the original on -02-02, retrieved 02-02 (2010)
5. Annual book of ASTM standards, volume 02. 05, American Society for testing and materials, waste Conshohocken, PA. (1996).
6. Parkinson, Ron Electroformng - unique metal fabrication process. NiDI Publication No. 10084, Nickel Development Institute. (1998)

*** Prof. of Chemistry Mata Jijabai Govt Girls P.G. College, Indore (M.P.) INDIA**

Development of products for interior enrichment using tarapur dabu printing for budding entrepreneurs

Dr. Rashmi Harit *

Abstract: -The study was conducted to develop products for interior enrichment using tarapur dabu printing. The traditional art of tarapur to evaluate the suitability of the developed products. A design portfolio comprising of twenty designs were developed by making alteration in the existing tarapur dabu printing designs. The designs were visually evaluated by taking different factors like balance of designs , colour scheme and colour combination , functionality of designs and overall appearance was using five point rating scale. Five products namely table cloth, photo frame, lampshades, tray covers and cushion covers were finalized for product development. These products were further evaluated for their suitability. The results revealed that the new designs were appreciable and were accepted as accessories for interior enrichment.

Key words: Entrepreneurs, interior furnishing textile, embroideries, dabu designs.

Introduction:

Block print in India is a historical and traditional art. From earlier time itself, the work of dying and printing is still continuing. Tarapur dabu block printing art has been traditionally being followed now and then. Nandna and dabu block printing work is done by some selected individuals only, who are named as CHIPPAS. Dabu printings are prepared from the natural vegetable dyes. Dabu is also called by the names Mud Printing, Indigo Printing & Resist Printing.

This printing in the rural areas of Madhya Pradesh provides some job opportunities to the people facing poverty. This also facilitates the handcraft men and artisans with some survival options in this modern world where industrialization has blown away the working atmosphere for them.Development of the dabu printed products was performed using stones, embroidery and different colour schemes and new enriched interior designing products were made.

Methodology

Design development

A design portfolio comprising of 20 new designs out of which five designs ech for various products like tray cover, cushion, photo frame, lamp shade and table cloth were developed by making alteration in the existing dabu printing designs.

Selection of panel of judges:

For design evaluation, a total of five judges having expertise in creative field especially in handicraft development, were purposively selected using purposive sampling technique. The panel included teachers from the department of home science, interior designers and fine arts personnel of Neemuch.

Evaluation of new designs:

A five point rating scale was used for evaluation of developed designs, which was then visually evaluated by the selected panel using the developed Performa for the following attributes like balance of design, colour scheme, embroidery, functionally of design and overall appearance.

The designs were analysed using statistical techniques like mean and percentages. The mean scores of each design were calculated and those having highest scores were identified for product development.

Product development:

Five products i.e. table cloth, photo frame, lamp shade, tray cover & cushion cover using identified designs were developed by various techniques such as drawing, colouring, finishing, etc.

Evaluation of developed products:

The same ranking Performa was used for this purpose. Scores 1,2,3,4, and 5 given to the products were ranked as poor, fair, good, very good and excellent respectively. Using the above developed rating scale, the same panel of five judges evaluated the developed products on the various criteria like balance of design, colour combination, functionality of design and overall appearance.

Findings and Discussion

THE RESULTS OBTAINED ARE PRESENTED IN TABLE NO. 1

Table given below indicates the percentage distribution of scores obtained for product designing as well as for developed products.

It is evident from the table that the percentage of scores obtained for all the developed products except cushion cover(90.0) were higher than the percentage of scores obtained for product designing.

The percentage of scores obtained for designing of table cloth, photo frame, lampshade, tray cover & cushion cover were 74.7, 73.3, 83.3, 86.1 & 88.8 respectively and developed

* Asst. Professor, Home Science , Govt. Girls College, Neemuch (M.P.) INDIA

products 80.5, 77.7, 87.7, 88.8 & 90.0 indicating that the developed product was even more acceptable that the design itself. In the case of cushion, the percentage obtained for product designing was higher than the percentage obtained for developed product.

Tarapur dabu printing in interiors have improved its significance. Accessories made by using tarapur dabu print have indeed helped in preserving the richness of Indian handicrafts and also enriched the modern interiors. Hence, use of innovative approaches by alteration and application of traditions designs can be the focus for the budding entrepreneurs.

References:

- Holly Brubach, 1999, A dedicated follower of fashion
- Indian crafts www.india-craft.com
- Kramrisch.S(1997)Handicraft: An overview
- www.orvis.com
- www.mytextilenotes.blogspot.com

TABLE NO. 1

Comparative analysis of products and obtained score & percentage					
S. No.	Name of Product	Product Designing		Developed Product	
		Score(max.180)	Percentage	Score(max.180)	Percentage
1.	Table Cloth	134	74.4	145	80.5
2.	Photo Frame	132	73.3	140	77.7
3.	Lamp shade	150	83.3	158	87.7
4.	Tray Cover	155	86.1	160	88.8
5.	Cushion	160	88.8	163	90.0

Fig1. Table Cloth

Fig4.Tray Cover

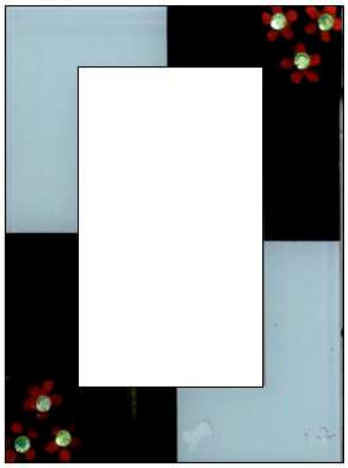

Fig2. Photo Frame

Fig3. Lamp shade

Fig5. Cushion Cover

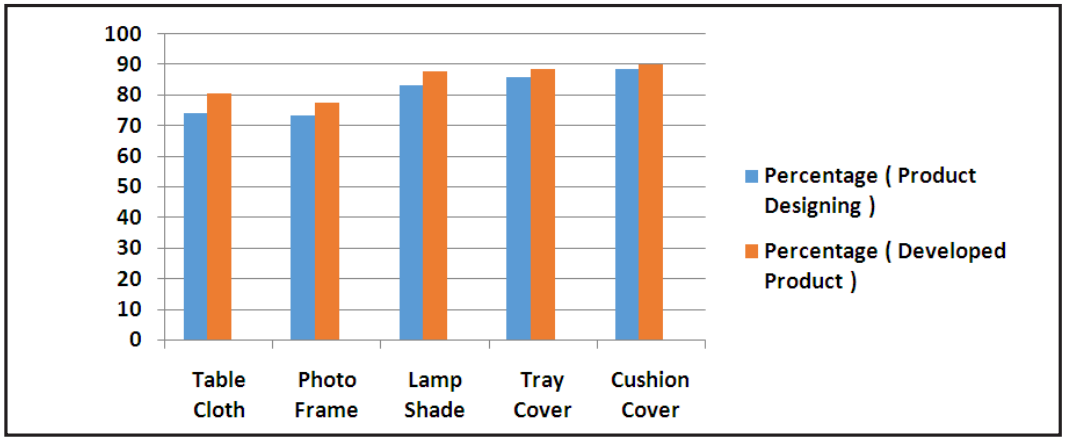

Adjustment difference among adolescent girls & boys in school

Dr. Abha Tiwari * Krishna Choudhary**

Abstract - The present study was conducted in Udaipur city of Rajasthan with the objective to study the difference between girls & boys in their emotional sphere in the age of 14 to 18 years. This study was carried out in randomly detected samples from schools of Udaipur City. A sample of 120 adolescent boys & girls from urban area was taken. The result revealed that girls are well settled in emotional adjustment. Girls are emotionally settled in the area of emotional adjustment. There was no significant difference between boys and girls in social area of adjustment, but in educational area girls are more adjusting then boys.

Introduction

Adolescence means 'to grow up', the period of transition from childhood to adulthood or dependence on adult direction and protection to self direction and self determination. The period of adolescence is most closely associated with the teenage years.

Adolescence is considered to be the period of great and exclusive 'storm & stress' and supposed to represent a complete and sudden rebirth of personality. The students of this stage met so many development processes that most of the time they fail to manage themselves. They are often irritable and become excited with small reasons. They show that individually they are unsure of themselves and they try to adjust in the new status.

The adjustment problems of adolescence are that boys and girls during this stage in school coming from poor living conditions have to deal with examination system; economic difficulties; personality, as they are worried about their beauty, studies, afraid of status. They want to compete with their mates and as a result they develop both jealousy and envy. When the students don't get motivation by the teachers as well as parents then they start loosing confidence and this creates manifold dissatisfaction and tension in their lives. An adolescent is very emotional but lacks experiences. A number of problems that arise before them are the result of the social and cultural factors.

If not rightly dealt with it, it may make them maladjusted person and in some cases even turn them delinquent. This problem also disturbs the peace and harmony of the academic institution as well as the home. Good school adjustment makes the student confident, self satisfied and motivates for future success, encourages adjusting in different situations as it is a positive aspect of the personality and results in maintaining a balance in life.

Objective

(1). To study the significant difference in adjustment among school going girls and boys.

(2). To study the significant difference between girls and boys in their emotional sphere.

Hypothesis

(1). There is no significant difference in adjustment among school going girls and boys.

(2). There is no significant difference between girls and boys in their emotional sphere.

Method

The study was conducted in the non co- educational govt. school of boys and girls within the municipal limits of Udaipur, city of Rajasthan.

A preliminary survey was conducted in Udaipur city to select eligible subjects for the study. For time purpose, the District education officer of girls & boys schools was contacted in order to get the list of govt. secondary schools. 'Adjustment inventory for school students' by Dr. A.K.P. Sinha (Patna) & Dr. R.P. Singh (Patna), were used for school students. The tool consisted of 60 questions with 20 questions in each of the three areas i.e. emotional, social and educational respectively, in Hindi. In emotional part of questionnaire fear, jealousy, criticizing, anger, laziness and unhappiness was tested.

For the purpose of scoring a key of adjustment, inventory was used in the Performa. These were open ended (yes and no) type of questions regarding the emotional, social and educational. Scores were allotted according to the key, for any answer that indicative non-adjustment, a score "Zero" was given otherwise a score of 'one' was awarded. These scores were further divided into five categories: A- Excellent; B- good; C- average; D- un-satisfactory; E- highly unsatisfactory.

Result and discussion

This part shows the emotional adjustment of girls & boys in school.

See Figure -1 Backside

In favor of this result Dutt (1983) provided a dissect evidence that in area of adjustment boys have no effect on the type of

*** Professor and Head of the Department of Human development, Govt. M.H. College of Home Science & Science, for Woman, Jabalpur (M.P.) INDIA ** (Lect.Home Science.) Ph.d Scholar.**

school but girls are more comfortable and adjusting in girls school as compared to co-educational school. The reason may be that the girls feel more secure and freedom of expression in girl's school.

Study was conducted in non-co-educational govt. school only, so it was found that girls don't have many problems regarding their studies and other factors that have been made on the problems of adolescent. But boys in school are worried about their studies and afraid of school, they are often diverted in other activity which seems to affect their educational and emotional life. This shows that girls were better in adjustment than boys.

The difference in emotional adjustment between boys and girls was calculated by applying the Z test between them.

Difference between boys and girls for Adjustment= 2.41* at the 0.05 Level of significance, Z value- n=60

Difference between boys and girls in at 0.05 level of significance Z value n=60 above value indicate that emotional area (2.41) was greater than that of tabulated at 0.5 level of significance so these are significant differences in emotional area of adjustment. Girls in non co- education school feel security and freedom of expression in girl's school specifically so girls were emotionally well settled in the area of emotional adjustment in school.

The finding of this study that girls were more adjusting than boys in emotional area of adjustment in school, there was the difference at 0.01 level of signification (2.41) at 0.01level of signification between boys and girls.

The study provided the information that boys in co educational are better adjusted in emotional area than non co-ed schools. And various other factors like social eco- status, family income, parent's qualification etc. may affect the adjustment among them in general. It will be helpful in planning the school curriculum on the basis of these problem areas of adolescent boys and girls. Studying in school, figuring out the solution to these problems will also be helpful for counselor and it will assist in planning the youth welfare services.

Conclusion

Adolescence is a period of transition from child hood to adulthood, thus it becomes difficult to adjust with emotional and other aspects of life. And emotional adjustment of girls & boys of this age also affect their academic, social as well as their personality. This study shows that teaching method curriculum, healthy teacher-student relationship, and healthy atmosphere in school can minimize the problems arising during this period.

References

- Ahluwalia S.P. and kalia A.(1987) achieving and low achieving adolescents journal of educational research and extension val.23 no. 3 jan pg 147-157
- Andurson J.P. A study of relationship between certain aspects of parental behavior and attitudes and the behavior of junior high school public edu. Teacher college Columbia university val-43 jan pg 160-166.
- Bhardwaj J.(1985) identify assizes among adolescent parents and children. Journal of educalion and psychology vol. 24 9. pg15-16
- Crow and crow adolescent development and adjustment USA MC grawfull book company new York pg .-423-425
- Culliman, douglass and it at (1993) patterns and correlation of learning behavior and emotional problems of adolescants disturbance, journal of child and family studies (2) pg.-159-175
- Mishra K.N. 1993 sole of sex and self concept of achievement motivation and echolalia achievement journal-education review pg 193-196.

Figure - 1. Percentage Distribution of 'emotional adjustment' among adolescent boys and girls.

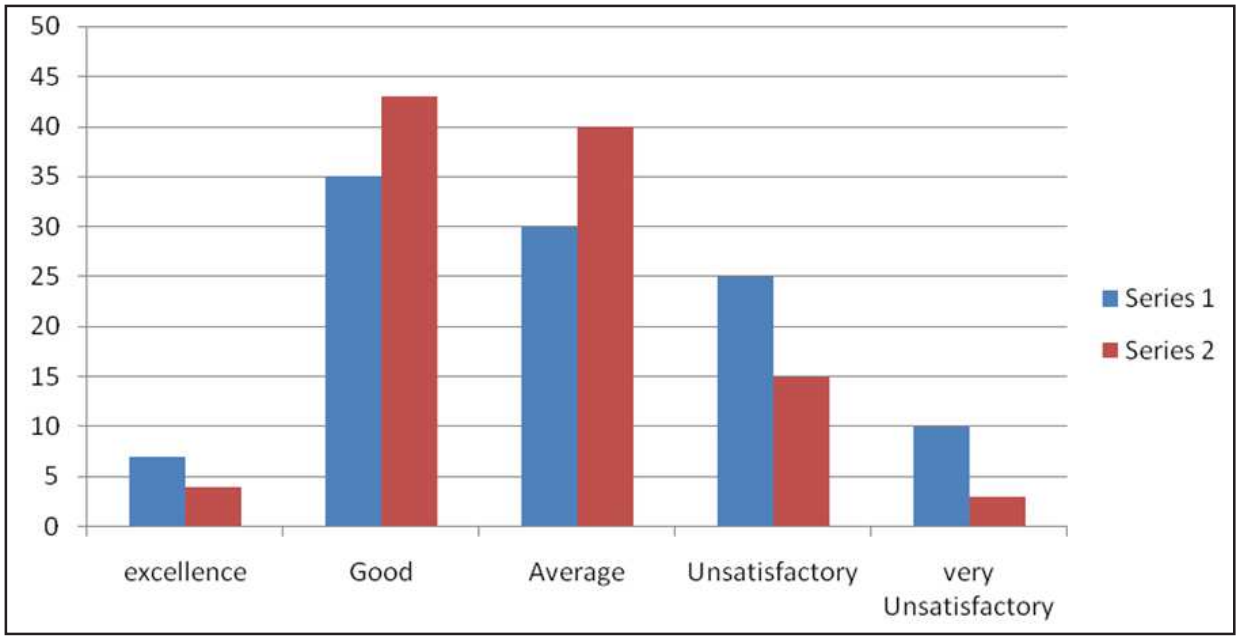

Figure shows that girls are better in adjustment then boys, but in 'excellence' category there was not much difference.

Significance And Vocational Scop Of Home Science

Dr. Rashmi verma*

Introduction : According to the layman , Home science is subject about household chores meant to be studied by girls only . Actually Home science is well developed discipline of study . it dose not limit itself to the mastery of home related skills of Cooking ,Laundry ,Decoration ,Stitching etc. Being fairly broad based a closer look will reveal that it prepares the students not just for taking care of their homes and family ,but also prepare them for a large variety careers and vocations both in wage employment and self employment . Home science is an interdisciplinary field of knowledge with focus on Food & Nutrition, Fabric & Apparel Designing , Human Development , Resource Development and Extension & Communication . A study of Home science open up a large numbers of employment opportunities and avenues both by the way of wage employment .

Home Science In Early 20th Century- Home science in early 20th century or even in late19th century was not offered as a discipline but was more a subject of study. It was offered in selected schools aiming at preparing future housewives for aristocratic families. It was then referred to as House Craft and Domestic Science. As Domestic Science, it had an eminent place even at the College Level for women. In Karve University which is now known as SNDT Women's University, Domestic Science was a poplar subject. Today Home Science is offered at various levels of education and in various programs of education, development and welfare.

What Is Home Science ? - Literally, the word Home Science can be interpreted as Systematic Education for home living. Making of a home for centuries, was an art in India. The art of home making had a significant place in the sixty four arts an individual had to master for successful living .A girl desirous of marrying and settling down as a housewife had to have good home making quality as one of the thirty two qualifies, she had to possess.

Recent Definition Of Home Science- Today Home Science is described as a multipurpose program of study which take care of individual's need and interests and develops need abilities and capacities for successful homemaking in a dynamic society. Training in Home Science is not meant to substitute the traditional training received at home. In fact with the changing social scene.

Recent Philosophy Of Home Science.- Today it takes one to home making education for better home making through gainful employment and worthy membership of the community. Philosophy of Home Science is linked with the Philosophy of home and family as emphasized traditionally through Indian culture it stands for material as well as emotional well being and security of its residents. It is a deep rooted philosophy .Slowly Home Science as a professional discipline is gaining a position in the Indian Society today with the changing roles of Home Maker from that of a wife and a mother to a wage earner and community worker, a need is being felt to vocationally program of Home Science Education. Home Science in a dynamic society like ours is ever changing phenomenon. Basic principles and objectives of Home Science are subject to change in social, professional as well as other related contexts with changing roles of women and the families in a society. The knowledge and information concerning Home Science is primarily derived from Physical Biological and Social Sciences and is applied to home for personal and professional growth.

Objectives - Objective is referred to as an implicit formulation of a statement regarding something one want to achieve. Home & family is a place where every individual spends most of the time of his life. As it used to be expressed earlier, every child was borne & brought up in the family but today through most of the children are born in institutions other than home, majority still belong to a family and they are brought up by the families . The family gives them a name status as well as security without which their life cannot be stable and worth living.

General Objectives Of Home Science In India

1) Educating individuals for family living.
2) Educating individuals to manage use of resources to attain values and goals of individual, family as well as society.
3) Achieving satisfactory and functional / philosophy of life with emphasis on personal & family living.
4) Developing wholesome personality .
5) Interpreting Home Science to students and public in the light of larger purpose of education and of basic social needs.
6) Preparing students for employment in Home Science and related fields.
7) Solving problems concerning home and family life through constructive thinking. 8) Helping students to develop a sense of beauty in every phase of daily living.

Goals Of Home Science - The study of Home Science offers three most Cherished goals namely :

1) Around development of the personalities of the members in home & family.
2) Preparation for career.
3) Ability to manage homes and families. Successful home making and family life demand the best education to meet the challenges resultant of dynamic social order. No other program of education offers opportunities to achieve all

*** Asst. Profesar of Home Science , Govt. Girls Collage, Neemuch (M.P.) INDIA**

these three objectives at the same time.

Scope Of Home Science- The scope of Home Science is as wide as the scope of living itself as it deals with the very art of living. Today Home Science Education is not limited to training good housewives or ideal mother only. It is more to train youngsters for improved quality or life. The scope of Home Science can be broadly classified into two aspects. The ***Educational scope*** of Home Science and the ***vocational scope*** of home science.

Role Of Home Science In National Development- Fulfillment of the objectives of general education namely; education for living, personality development and national service . Preparation of students for number of careers. Promotion of realization and national aspirations for developing planned family, applying nutrition for healthy living, working for child and family welfare for intelligent management of resources and utilization of family savings for national development and above all for promotion of national integration. Home scientists with their knowledge and concern and human life and happiness can work effectively since many of the national development programs are for women and children. Home scientists can successfully help the nation to achieve their targets. The role of Home Science as an educational discipline in developing the future citizen and inculcating in them citizenship qualities for their future role is significant.

Home Science In Higher Education :- Home Science at College level was offered as early as in 1932 at the Lady Irwin College at the initiative of All India Women's Conference. This college also offered a Post Graduate Diploma in Education and Teachers Training to produce teachers to take positions in schools as well as newly opening colleges of Home Science. Today Home Science is being offered by over 150 institutions of higher learning through private colleges as well as universities .Today Home Science has a place in Technical Institutes of Higher learning namely ; Home Science in Women's Polytechnic Bachelor of Arts Degree Program in Home Making Education. Master of Arts Degree in Home making Education. Bachelor of Science Program in Home Making Education. Master of Science Program in Home Making Education Bachelor of Education with Home Science. Honors Program in Home Science Master of Philosophy in Home Science. Doctor of Philosophy in Home Science. Home Science in Agricultural Universities. Diplomas in Home Science. U. G. Course in Early Childhood Education. P. G. Diploma in Preschool Education. P. G. Diploma in Dietetics. ?? P. G. Diploma in Institutional Management. ?? U. G. & P. G. Diplomas in Interior Decoration. ?? P. G. Diploma in Extension Education.

Vocational Scope Of Home Science - The term vocation refers to an impulse to perform a certain function or enter a certain Career. It is a functional or career towards which one believes her self to be called. Vocational Home Science thus can be defined as education or training intended to prepare one for occupation related to home making.

Recent Need Of Vocationalization Of Home Science- Vocationalizing the field of Home Science Education has become intense as well as almost imperative recent need of vocationalization of Home Science are:***1) National Investment*** : Expenditure on education is national investment, thus it is expected to have its returns in the form of services of the graduates for the welfare and progress of nation.***2) Potential Job Offerings :*** With the change in social composition of the students enrolling in colleges and institution s of higher learning offering Home Science, the percentage of students pursuing job is considerably increasing. They are looking for job potentials for gainful employment in this field too. ***3) Tremendous increase in student populations :*** There is a tremendous increase in student population coming for Home Science Education of these a large proportion of student look for gainful returns from gainful employment.***4) Varied Areas of Specialization :*** The field of Home Science till recently was restricted to a few areas of specialization with more and more expansion and broadening of this discipline various areas of specialization too are cropping up. This is a positive indication for development of Home Science as a vocational field. There is a clear indication about Home Science having excellent job potentials.

Job Oppurtunities For Home Scientists Classifed In Seven Major Areas Of Work :- (1) Teaching (2) Research (3) Institutional Management (4) Extension and Social Welfare (5) Business and Industrial Concern (6) Communication (7) Self Employment.

Conclusion- If some workable solution can be found to straighten up these problems vocationalization of Home Science Education as a vital field for promotion of gainful Employment of its ever increasing graduates will be within reach. It would thus be an asset not only to individuals but to organizations who need their expertise. This will result in richer and fuller home life which is an ultimate goal of Home Science education and also richness of society even today is measured in terms of richness of the homes and families in a given society. Home and family thus are the measuring Yardsticks of social progress even in the modern world and Home Science contributes to the fulfillment of well - being as well as security of the members of home and family, strengthening the family for the main purpose of development and gratification of human beings and their needs.

References :

1. Dr. Kalpana Paralikar (1999), What is Home Science ?, Ekvira Publication, 3rd Edi., 1-36
2. Dr. Dipti M. Desai (1996), Home Science Education & Extension, Parichay Pustika, 1,15,27,32
3. S. Sharma & V. Kaushik (1994), Principles of Home Science, Anmol Publication Pvt. Ltd., 1st Edi. 29.

Violence against women: A Curse to India

Dr. Rashmi Harit *

Introduction - The status of women in India has been subject to many great changes over the past few millennia. From equal status with men in ancient times through the low points of the medieval period, to the promotion of equal rights by many reformers, the history of women in India has been eventful. In modern India, women have held high offices in India including that of the President, Prime Minister, Speaker of the Lok Sabha and Leader of the Opposition. As of 2011, the Speaker of the Lok Sabha and the Leader in the Lok Sabha (Lower House of the parliament) were women. However, women in India continue to face atrocities such as rape, acid throwing, and dowry killings while young girls are forced into prostitution. According to a global poll conducted by Thomson Reuters, India is the "fourth most dangerous country" in the world for women, and the worst country for women among the G20 countries.

What does crime against women means - "The Semantic meaning of crime against women? is direct or indirect physical or mental cruelty to women. Crimes which are "directed specifically against women? and in which "only women are victims? are characterized as "Crime Against Women?.

It is equally important to clarify the concept of "Violence? against women. Violence is also known as abuse and include any sort of physical aggression

or misbehave. When violence is committed at home it becomes domestic violence and involves family members such as children, spouse, parents or servants. Domestic violence may involve different means such as hitting, kicking, biting, shoving, and restraining, throwing objects. In broad terms, it includes threats, sexual abuse, emotional abuse, controlling or domineering, intimidation, stalking, passive/ covert abuse and economic deprivation, rape, abduction, kidnapping, murder (all cases of criminal violence, dowry death, wife battering, sexual abuse, maltreatment of a widow and for an elderly women (all cases of domestic violence) and eve-teasing, forcing wife/daughter-in-law to go for foeticide, forcing a young widow to commit sati, etc (all cases of social violence), are issues which affect a large section of society.

Traditional Practices

● Sati ● Jauhar ● Pardah ● Devadasis

Today's Scenario

● Acid Throwing ● Child marriage

● Domestic violence ● Dowry

● Female infanticide and sex-selective abortion

● Rape ● Sexual harassment ● Trafficking

Legal Provisions- To uphold the Constitutional mandate, the State has enacted various legislative measures intended to ensure equal rights, to counter social discrimination and various forms of violence and atrocities and to provide support services especially to working women.

Although women may be victims of any of the crimes such as 'Murder', 'Robbery', 'Cheating' etc, the crimes, which are directed specifically against women, are characterized as 'Crime against Women'. These are broadly classified under two categories.

(1) The Crimes Identified Under the Indian Penal Code (IPC)
   * Rape (Sec. 376 IPC)
   * Kidnapping & Abduction for different purposes (Sec. 363-373)
   * Homicide for Dowry, Dowry Deaths or their attempts (Sec. 302/304-B IPC)
   * Torture, both mental and physical (Sec. 498-A IPC)
   * Molestation (Sec. 354 IPC)
   * Sexual Harassment (Sec. 509 IPC)
   * Importation of girls (up to 21 years of age)

(2) The Crimes identified under the Special Laws (SLL). Although all laws are not gender specific, the provisions of law affecting women significantly have been reviewed periodically and amendments carried out to keep pace with the emerging requirements. Some acts which have special provisions to safeguard women and their interests are:
   (i) The Employees State Insurance Act, 1948
   (ii) The Plantation Labour Act, 1951
   (iii) The Family Courts Act, 1954
   (iv) The Special Marriage Act, 1954
   (v) The Hindu Marriage Act, 1955
   (vi) The Hindu Succession Act, 1956 with amendment in 2005
   (vii) Immoral Traffic (Prevention) Act, 1956
   (viii) The Maternity Benefit Act, 1961 (Amended in 1995)
   (ix) Dowry Prohibition Act, 1961
   (x) The Medical Termination of Pregnancy Act, 1971
   (xi) The Contract Labour (Regulation and Abolition) Act, 1976
   (xii) The Equal Remuneration Act, 1976

*** Asst. Professor, Home Science , Govt. Girls College, Neemuch (M.P.) INDIA**

(xiii) The Prohibition of Child Marriage Act, 2006
(xiv) The Criminal Law (Amendment) Act, 1983
(xv) The Factories (Amendment) Act, 1986
(xvi) Indecent Representation of Women (Prohibition) Act, 1986
(xvii) Commission of Sati (Prevention) Act, 1987
(xviii) The Protection of Women from Domestic Violence Act, 2005.

Approach towards safety of women:

1. **To increase reporting of rape and assault cases:** To increase the reporting of such cases at first we need to empower the women and children. They must be educate on their rights and encourage them to come forward to register the cases. There are many violent cases but due to stigma in the society very few are reported.
2. **Law enforcement agencies:** Low enforces should be well trained to react swiftly and with sensitivity towards the women and children cases.
3. **Exemplary punishment:** Punishment of every culprit need to be exemplary. Campaigning of "Zero- tolerance" of sex offenders. More and more fast track court should establish.
4. **Proper planning of the city:** Every city should be planned in a very specific manner. According to Ranjana Kumari, director of Delhi 's Centre for Social Research, only 37% of the city was ever planned. "The rest is . . . slums, villages, with no proper lighting or development," she said last week. "There are many pockets of crime."
5. **Indian Police system:** Neither the Centre nor States have been proactive in improving the quality of Policing. Official records shows that only 14 states have either enacted the New Police Act or amended their existing laws to incorporate SC's suggestion.

References:

- www.wikipedia.com
- www.ncrb.govt.in
- www.nlrd.org
- women and legal protection-Parasdeewan
- www.data.gov.in

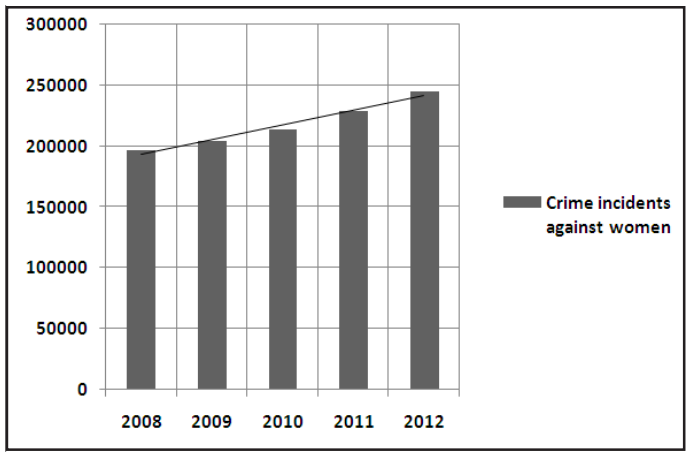

Crime head-wise incidents of crime against women during 2008-2012 and Percentage variation in 2012 over 2011

Sl. No.	Crime head	Year					Percentage variation in 2012 over 2011
		2008	2009	2010	2011	2012	
1	Rape (Sec. 376 IPC)	21,467	21,397	22,172	24,206	24,923	3.0
2	Kidnapping & abduction (Sec. 363 to 373 IPC)	22,939	25,741	29,795	35,565	38,262	7.6
3	Dowry death (Sec. 302 / 304 IPC)	8,172	8,383	8,391	8,618	8,233	-4.5
4	Cruelty by husband and relatives (Sec. 498-A IPC)	81,344	89,546	94,041	99,135	106,527	7.5
5	Assault on women with intent to outrage her modesty (Sec. 354 IPC)	40,413	38,711	40,613	42,968	45,351	5.5
6	Insult to the modesty of women (Sec. 509 IPC)	12,214	11,009	9,961	8,570	9,173	7.0
7	Importation of girl from foreign country (Sec. 366-B IPC)	67	48	36	80	59	-26.3
A	**Total IPC crime against Women**	**186,616**	**194,835**	**205,009**	**219,142**	**232,528**	**6.1**
8	Commission of Sati Prevention Act,1987	1	0	0	1	-	-100.0
9	Immoral Traffic (Prevention) Act, 1956	2,659	2,474	2,499	2,435	2,563	5.3
10	Indecent Representation of Women (Prohibition) Act, 1986	1,025	845	895	453	141	-68.9
11	Dowry Prohibition Act, 1961	5,555	5,650	5,182	6,619	9,038	36.5
B	**Total SLL crime against Women**	**9,240**	**8,969**	**8,576**	**9,508**	**11,742**	**23.5**
	Total(A+B)	**195,856**	**203,804**	**213,585**	**228,650**	**244,270**	**6.8**

Parental Support in Extra-Curricular Activities

Manjula Sharma * Parul Sharma **

Abstract - Extra-curricular activities are performed by students that most often fall outside the realm of the normal curriculum of a school or university education. It exists at all levels of education, from school to college education. It includes dance, music, sports, drama and so on. For better performance in the extra-curricular activities or special activities children need parental support. Parental support has a great deal of influence on their children in school activities.Parental support generallybenefits children's and adolescents' learning and their achievements.This paper can help their parents to gain better understanding of their wards which will result into a healthy relationship and also help to understand the parental attitude and perception towards children's school activities. Parents will learn and value their specific talent as well as raise the confidence of the students. Parents can help students to pursue their specific talents as a lifelong career.

Key words: Extra-curricular activities; parental support; parental attitude

Introduction- Extracurricular activities are those activities that students participate in that do not fall into the region of normal curriculum of schools. They are found in all levels of our schools. There are many forms of extracurricular activities such as sports, clubs, governance, student newspaper, music, art, and drama. Extracurricular activities are completely voluntary so students that do not want to participate in them do not have to. Lunnenburg stated that "Extracurricular activities serve the same goals and functions as the required and elective courses in the curriculum. However, they provide experiences that are not included in formal courses of study. They allow students to implement the knowledge that they have learned in other classes and acquire concepts of democratic life. The positive effects that extracurricular activities have on students are behavior, better grades, school completion, positive aspects to become successful adults, and a social aspect.

Participation in extracurricular activities provides students an opportunity to create a positive and voluntary connection to their school. In a study done by the USDE, "It was revealed that students who participate in extracurricular activities are three times more likely to have a grade point average of a 3.0 or higher. This is higher than students who did not participate in extracurricular activities. In recent years there has been a marked increment in children's extracurricular activities, such as organized sports activities, music and art classes. Children's extracurricular activities have been linked to academic achievement and social adjustment (Eccles et al. 2003; Larson and Verma 1999; Mahoney et al. 2005). Extracurricular activities offer important benefits for their children, at times parents also express some concerns regarding the commitment to such activities.

Parents' Attitude- All parents want the best for their children. "There is no evidence that today's parents are less committed or less caring. Parents have not changed, but the loss of community, the increased fragmentation of family life the competing and often conflicting pressures affect their ability to provide the supportive life that children so desperately need" Boyer (1991) cited in Berger (2000, p.). All parents would like their children to do better in school activity than they did." Parents do not consciously or unconsciously neglect their children.

Parent wants to be a supportive parent. Many parents want to be supportive but are not sure how to do so. Parents need to develop and gain experience, and need help in doing so. Some parents stay away from school, not because they do not want to be involved but because they may have had bad experiences with school or any school activity and are uncomfortable when they attend parent activities at school. Now a-days parent are becoming very supportive of their children's school activities. The mindset of the parents toward these activities is becoming very open. Parent wants that their child involve in school activities because it provides healthier and supportive life.

Parental Support in extra-curricular activities - The definition of parent support has gone through many changes both in name and focus over the years, however each is based upon a philosophy of child- adult and adult- adult interactions that assigns roles to both the parent and the educator. It is therefore a general consensus that irrespective of the term used to describe this process the end result is that parental support allows for the working of parents, educators and other individuals together in promoting the best school activity interest of the child. The concept of parental support is no longer a new one. Over the past decades it has gone through transition from parents helping children with school's extra activity at home to a partnership between school (teacher) and home (parent) to emerge as the collaborative effort of schools, families and communities to provide or improve the interest and achievement of children. The question' is no longer whether there is a need for collaborating or whether schools and parents should cooperate with each other, but, what is the most effective way of working together and how it should be accomplished (Berger, 2000).

Reasons to be uninvolved- It is unfortunate that many parents are not as involved or provide support in school activities as they should be in the education of their children. Some educators view this as unwillingness on the part of parents. But this is not true; they are not unwilling to provide

*** Research Scholar, Banasthali Vidyapith, Rajasthan ** Research Scholar, Banasthali Vidyapith, Rajasthan INDIA**

support for their children there is only a reason that they may face so many challenges. The parental challenges include lack of time, inflexible work hours, scheduling of activities that may be threatened by the competing demands of home and family, medical problems, stress related problems. Personal safety issues in some communities, securing adequate childcare, transportation, finance, intrapersonal or interpersonal difficulties, being overwhelmed by professional expectations real or imagined, and low self-confidence are also challenges for some families. Some parents may have had poor experiences with school and are reluctant to attend programs being held at school. These programs may make some parents feel uncomfortable as though they are still in the student role. Parents always view teachers as professional figures and therefore may be tended to keep a respectful outstrip. A study by Pena (2000) also found language barriers, parent cliques, parent education, and attitude of school staff, cultural influences and family issues as influencing factors in parent support. It is the duty of schools to enable parents to provide the skills and knowledge needed to help their children at all age levels (Epstein, 2001), and there is also the responsibility of the school to plan programs that will make parents want to be involved.

How parents can provide support to their children- There are so many ways to provide parental support to their children in extra-curricular activities some are as follows:

Be a role-model- Children follow their parents. If children see their parent enthusiastically practice an instrument (or learn for the first time), they will be very likely to follow.Similarly with sport and exercise, and even diet.

Create a supportive environment- If parent have sports-related items around the home, they're likely to be used! Same goes with a piano, keyboard, guitar, violin, or other instruments. Further to this idea, if parent want them to be used, reduce other distractions, such as the TV, internet, Wii, and so on. A child will not practice the piano while the television is blaring, or siblings are playing games online.

Encourage your child- Look for opportunities for your child to extend herself. Ask about sports opportunities and teams at school. See if he/she would like to be involved in the after-school dance class or choir. Social support- Individual sports and music require more effort because of the lack of "team". Conversely, being part of a team seems to increase motivation as children enjoy being with their friends, and don't like to let them down. If friends are involved in a particular activity and your child shows an interest, the joint participation is likely to motivate them to stay involved. Be involved yourself- This support provides an opportunity for parents to pass on positive attitudes about the activity.

Parents have the chance to provide encouragement and feedback, pass on their feelings about the value of the activity, and teach important skills. Researches showed that when parent participate in an activity with their children they'll be more motivated to continue the activity even when parent are not with them.Teachers and parents can and should work together to facilitate children's development. Supporting parents in school extracurricular activities is one of the ways. To carry out this, every parent should need to know parents' attitudes and perception of extracurricular activities.

Conclusion- Extracurricular activities are found in all levels of their schools in many different forms. Theycan be sports, clubs, debate, drama, school publications, student council, and other socialevents. A student's future can be determined in the things that they do in the hours afterschool and before their parents get home. Extracurricular activities are a part of students' everyday life, whereas parent should motivate and provide support to their children in school activities. Parent have positive effects on student's lives by improving behavior, schoolperformance, school completion, positive aspects to make successful adults, and social aspects. As parent, they need to be aware of the effects that extracurricular activities have on education.Parents are the only person whose support is very important to improve their abilities and capacities. In Indian context parents give more importance to academics as compared to other school activities such as dance, drama, sports, music etc. They believe that leaving studies, joining these hobby courses and pressuring them as lifelong careers may be risky and invaluable as compared to academics. Generally most of the parents have a mindset that academic orientation guarantees lifelong respectable careers which may not be guaranteed by the school activities as it involves a long struggling period with forming of many contacts and special abilities. It is still a question that, do parents really support their children in school activities?

References

- Berger, B. (2000). Parents as partners in education.Upper Saddle River, NJ: Prentice Hall, Inc.
- Chi-Chung Lam, Ngai-Ying Wong(1997). Parents' Attitude Towards Extracurricular Activities. Educational Journal.Volume 25(1).pp.133-148.
- Eccles, Jacquelynne S., Bonnie L. Barber, Margaret Stone, and James Hunt (2003).Extracurricular Activities and Adolescent Development. Journal of Social Issues 59(4):865-889.
- Epstein, J. L. (2001). School family and community partnership Boulder, CO:Rearview Press.
- Kremer-sadlik Tamar, Izquierdo Carolina, FatiganteMarilena. Making Meaning of Everyday Practices: Parents' Attitudes toward Children's Extracurricular Activities in the United States and in Italy. University of California, Los Angeles (UCLA); UCLA; and Università di Roma "La Sapienza"
- Larson, Reed, and SumanVerma (1999).How Children and Adolescents around the World Spend Time: Work, Play, and Developmental Opportunities.Psychological Bulletin. Volume 125(6):701-736.
- Mahoney, Joseph L., Reed W. Larson, Jacquelynne S. Eccles, and Heather Lord (2005).Organized Activities as Development Contexts for Children and Adolescents.In Organized Activities as Contexts for Development: Extracurricular Activities, After-School and Community Programs.
- Joseph L. Mahoney, Reed W. Larson, and Jacquelynne S. Eccles, eds. Pp. 3-22. New York: Routledge.
- Massoni Erin(2011). Positive Effects of Extra Curricular Activities on Students.ESSAI.Volume 9(27).
- Pena, D. (2000). Parent involvement: Influencing factors and implications. Journal of Educational Research, 1, 42-53.
- http://www.kidspot.com.au/schoolzone/General-Extra-curricular activities+4164+396+article.html

रोजगार में संलग्न आदिवासी ग्रामीण महिलाओं के लिए शासकीय व गैर शासकीय संस्थाओं द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के प्रति सजगता एवं जागरूता का अध्ययन

डॉ. मंजु शर्मा * ममता खपेड़िया **

शोध सरांश–आदिवासी ग्रामीण महिलाओ के रोजगार को दो रूपों में देखा जा सकता है, बाह्य रोजगार एवं आन्तरिक रोजगार। बाह्य रोजगार से तात्पर्य उन रोजगारियों से है जिससे महिलाएँ घर के बाहर जाकर व्यवसायिक कार्य करती हैं। इसके अन्तर्गत महिलाएँ कृषि, मजदूरी, राहत मजदूरी, भवन निर्माण, सडक निर्माण, लकडी, चारा–पाला लाना, फल सब्जियाँ बेचने जाना एवं अन्य मजदूरी के कार्य करती हैं। आन्तरिक रोजगार से तात्पर्य उन रोजगारियों से है, जिसमें महिलाएँ घरेलू व्यवसायिक कार्य करती हैं। इसके अन्तर्गत पशुपालन, कुक्कट पालन, खेती किसानी, पारिवारिक संसाधन प्रबन्ध, किराना दुकान में कार्य, सिलाई करना, स्वरोगार के कार्य के माध्यम से परिवार की आर्थिक रोजगार को मजबूती प्रदान करने में व्ययवसायिक सहभागिता देती हैं।

साहित्य पुनरावलोकन

1) प्रो.आ.डी. मोर्य 2007 ने अनुसूचित जाति व सामान्य जाति की महिलाओं द्वारा स्व सहायता समूह में भागीदारी एवं बालको की अभिभावको के प्रति अभिवृत्ति एक तुलनात्मक अध्ययन आदिवासी महिलाओं को समूह से संबंधित संस्थाओं के अधिकारियों से मिलने की व्यवस्था नहीं होती है। जिसके कारण उनका आत्मविश्वास कम होता है।

2) मिश्र इंदिरा 2000 (गरीब महिलाएँ एंव रोजगार) प्रस्तुत पुस्तक में महिलाओं को दी जाने वाली ऋण सुविधाओं को दर्शाया गया है तथा विभिन्न योजनाओं द्वारा सरकार महिलाओं के आर्थिक विकास को दिशा दे रही है और किन योजनाओं के माध्यम से महिलाओं के आर्थिक विकास में मदद हो रही हैं। महिलाएँ सरकारी नीतियों का किस तरह से सही उपयोग कर पा रही है। तथा अपने आप को आर्थिक सशक्त करने में कहाँ तक सफल हो पा रही हैं स्वालम्बी होने के साथ महिला अपना भविष्य सुदृढ़ कर पाने में सक्षमता का अनुभव कर रही है।

3) डॉ.अजीत रायजादा 2000 प्रथम संस्करण महिला उत्पीडन समस्या और समाधान इस पुस्तक के अध्ययन द्वारा यह पाया गया कि महिलाओं पर अत्याचार के लिए कौन जिम्मेदार है,महिलाओं के कानूनी अधिकार एवं उनके लिए बनाई गई महिला नीतियों के बारे में बताया गया है।

उद्देश्य–रोजगार में संलग्न महिलाओं के लिए शासकीय व गैर शासकीय संस्थाओं द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के प्रति सजगता एवं जागरूता का अध्ययन

उपकल्पना – रोजगार में संलग्न महिलाओं के लिए शासकीय व गैर शासकीय संस्थाओं द्वारा चलाई जा रही योजनाओं के प्रति सजगता एवं जागरूता में सार्थक अन्तर नहीं है। अध्ययन क्षेत्र का समग्र अध्ययन समग्र के रूप में मध्य प्रदेश के अलीराजपुर जिले की आदिवासी ग्रामीण महिलाओं को सम्मिलित किया गया है। अध्ययन की रोजगार अध्ययन की इकाई के रूप में मध्य प्रदेश के अलीराजपुर जिले की ऐसी आदिवासी ग्रामीण महिलाओं को सम्मिलित किया गया है। समंक संकलन के स्त्रोत प्रस्तुत शोध अध्ययन में प्राथमिक स्त्रोत के लिए स्वनिर्मित साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग किया गया। द्वितीयक स्त्रोत के लिए शोध अध्ययन से संबंधित शोध ग्रन्थों, पत्र–पत्रिकाओं तथा अन्य साधन माध्यमों से जानकारी एकत्रित की गयी।

प्रयुक्त सांख्यिकी विधि प्रस्तुत अध्ययन में हमने प्रतिशत, काई वर्ग व सहसम्बन्ध विधि का प्रयोग किया गया है।

अध्ययन की सीमाएँ शोध अध्ययन में अलीराजपुर जिले के ग्रामीण क्षेत्र में निवास करने वाली निम्न, मध्यम एवं उच्च आय वर्गीय परिवारों की आदिवासी महिलाओं जो व्यावसायिक सहभागिता में संलग्न हो का चयन शोध अध्ययन में किया गया है।

तथ्यों का प्रस्तुतीकरण एवं निष्कर्ष

तालिका न. 01

योजनाओं के प्रति सजगता व जागरूक है संबंधित विवरण

क्रं.	विकल्प	उच्च आय वर्ग प्रतिशत	मध्यम आय वर्ग प्रतिशत	निम्न आय वर्ग प्रतिशत	कुल योग प्रतिशत
1	हाँ	73	65	56	65
2	नहीं	27	35	44	35
	कुल	100	100	100	100
	योग	N= 150	N= 150	N= 150	N=450

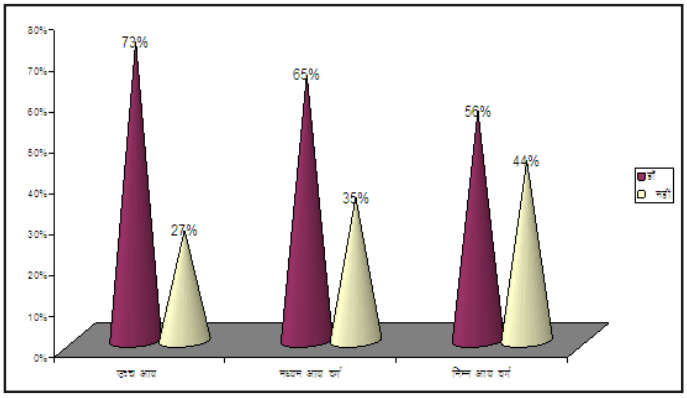

तालिका न. 02

सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाओं द्वारा संचालित योजनाओं की समस्याओं संबंधित विवरण

क्रं.	विकल्प	उच्च आय वर्ग प्रतिशत	मध्यम आय वर्ग प्रतिशत	निम्न आय वर्ग प्रतिशत	कुल योग प्रतिशत
1	समय की अधिकता	13	20	20	18
2	भ्रष्टाचार का सामना	25	51	15	30
3	अधिकारियों का असहयोग पूर्ण व्यवहार	19	16	48	28
4	कोई समस्या नहीं	43	13	17	24
	कुल योग	100 N= 150	100 N= 150	100 N= 150	100 N=450

* प्राध्यापक (गृह विज्ञान) ** शोधार्थी, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

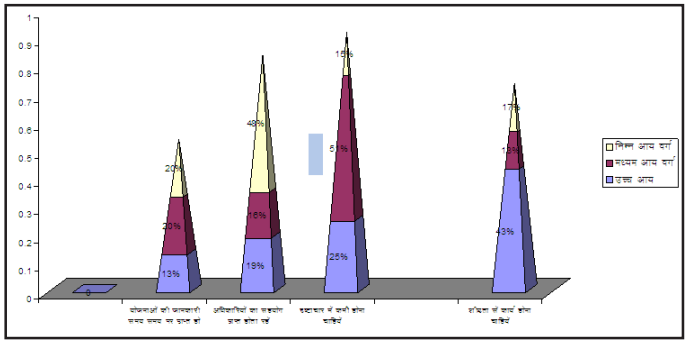

तालिका न. 03
सरकारी/गैर संस्थाओं द्वारा संचालित योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु आपके सुझाव से संबंधित विवरण

क्रं.	विकल्प	उच्च आय वर्ग प्रतिशत	मध्यम आय वर्ग प्रतिशत	निम्न आय वर्ग प्रतिशत	कुल योग प्रतिशत
1	समय की अधिकता	13	20	20	18
1	योजनाओं की जानकारी समय समय पर प्राप्त हो	13	20	20	18
2	अधिकारियों का सहयोग प्राप्त होता रहें	19	16	48	28
3	भ्रष्टाचार में कमी होना चाहियें	25	51	15	30
4	शीघ्रता सें कार्य होना चाहियें	43	13	17	24
	कुल योग	100 N= 150	100 N= 150	100 N= 150	100 N=450

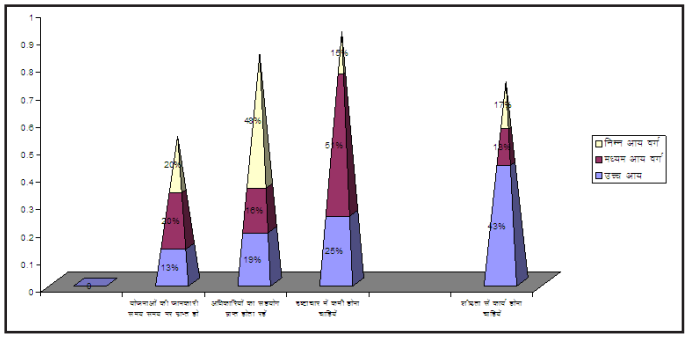

तालिका न. 04
आदिवासी ग्रामीण महिला शैक्षणिक योग्यता संबंधित विवरण

क्रं.	विकल्प	उच्च आय वर्ग प्रतिशत	मध्यम आय वर्ग प्रतिशत	निम्न आय वर्ग प्रतिशत	कुल योग प्रतिशत
1	समय की	13	20	20	18
1	अनपढ़	27	40	70	46
2	प्राथमिक हाईस्कुल/ हायसेकेडरी से	45	41	20	36
3	उच्च शिक्षा	13	7	3	8
4	अन्य तकनीकी	15	12	7	11
	कुल योग	100 N= 150	100 N= 150	100 N= 150	100 N=450

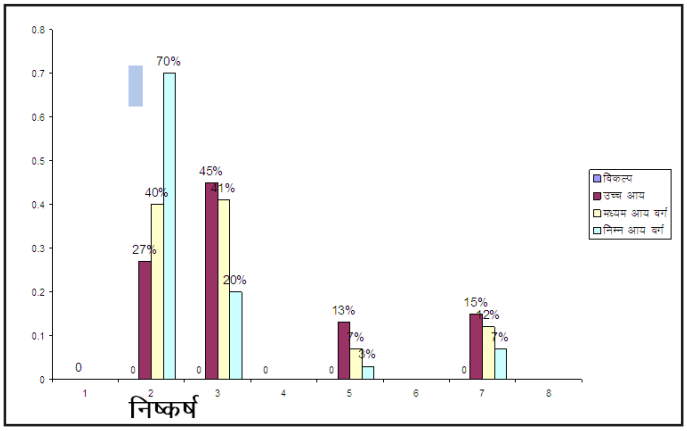

निष्कर्ष

- तालिका क्रमांक 01 के तथ्यों की गणना उपरान्त 6.98 का मान $\chi^2 tab$ 5.991से अधिक है अत: 02 स्वतन्त्र कोटी पर प्रस्तुत परिकल्पना को अस्वीकार की जाती हैं। अर्थात आदिवासी ग्रामीण (उच्च मध्य, निम्न) आय वर्गो के परिवारों की व्यवसायिक सहभागिता में संलग्न महिलाओं के रोजगार के लिए शासकीय व अन्य संस्थाओं द्वारा चलाई जा रही योजनाओं एवं उनके प्रति संलग्नता व जागरूता में सार्थक अन्तर पाया गया है।
- प्रस्तुत शोध अध्ययन आदिवासी ग्रामीण महिलाओं की शिक्षा एवं सरकारी /गैर संस्थाओं द्वारा संचालित योजनाओं के उचित क्रियान्वन हेतु आदिवासी ग्रामीण महिलाओं के सुझाव का सह सम्बन्ध गुणांक का मान r = -0.5853 है। उच्च स्तर का ऋणात्मक संह-सम्बन्ध गुणांक है। क्योंकि जैसे जैसे शिक्षा बढेगी, वैसे वैसे सरकारी /गैर संस्थाओ द्वारा संचालित योजनाओं के उचित क्रियान्वन प्रति सजगता एवं जागरूकता में कमी देखी गई जिसका मुख्य कारण उनके शैक्षणिक स्तर में कमी पाया जाना है।
- तालिका क्रमांक 04 के अनुसार उच्च एवं मध्य आय वर्ग की महिलाओं का शैक्षणिक स्तर निम्न आय वर्ग की महिलाओं के शैक्षणिक स्तर से अधिक पाया गया है। अत: उनमें सजगता व जागरूकता अधिक देखी गई।
- तालिका क्रमांक 03 के तथ्यों अनुसार 30 प्रतिशत महिलाओं का मत है कि शासकीय एवं गैर शासकीय संस्थाओं द्वारा संचालित योजनाओं के उचित क्रियान्वयन में व्याप्त भ्रष्टाचार योजनाओं की सफलता में बाधक है। जबकि 18 प्रतिशत महिलाओं का मत है कि योजनाओं से संबंधित जानकारी सही समय एवं सही माध्यम से प्रदान की जानी चाहिये।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. डॉ.रेखा अरोडा कामकाजी महिलाऐं डायनेमिक पब्लिकेशन (इंडिया) लि.मेरठ(उ.प्र) 2002
2. राजबाला सिंह एवं मधुबाला सिंह (भारत में महिलाऐं)आविष्कार पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स जयपुर (राजस्थान)
3. आर.सी अग्रवाल व्यवसायिक प्रबंध के सिद्धांत एवं उद्यमिता एस.बी.डी.पब्लिसिंग हाउस आगरा-2009
4. डॉ.शुक्ल एवं सहाय सांख्यिकी सिद्धांत साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा
5. सुधु जी.एस. व्यवसाय एवं सरकार रमेश बुक डिपो,जयपुर पृष्ठ संख्या 01-19 (1999)
6. कोठारी डॉ मिलिन्द व्यवसायिक संगठन रमेश बुक डिपो,जयपुर पृष्ठ संख्या 1.2-1.7(2009)

छात्रावासी एवं परिवार में रहने वाली किशोरियों में स्वयं के साथ तथा साथी समूह के साथ समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन

कु. अलबाई डावर*

शोध सांराश– परिवार में रहने एवं उसका लाभ उठाने का दृष्टिकोण प्रत्येक व्यक्ति के आपसी समायोजन पर निर्भर करता है। उचित समायोजन के अभाव में अनेक दुष्प्रभाव दृष्टिगत होते हैं। जो पारिवारिक कलह, मानसिक तनाव एवं असंतोष की भावना के रूप में सदस्यों में प्रतिलक्षित होते हैं। ऐसे कलुषित वातावरण में परिवार के सदस्य स्वयं को असुरक्षित समझते हैं एवं बच्चों का भविष्य भी संकट में पड़ जाता है, उनका विकास अवरूद्ध होकर वह अनेक अवांछनीय गतिविधियों की तरफ अग्रसर होकर समाज को भारी क्षति करते हैं। इसके ठीक विपरीत, परिवार में सदस्यों के बीच घनिष्ठता, आत्मीयता एवं स्नेह–सद्भाव के आधार पर सदस्यों के बीच, समायोजन होने पर घर में ही स्वर्ग बन जाता है। पारिवारिक जीवन में किशोरियों की अपनी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उन्हें घर की लक्ष्मी कहा जाता हैं वह दो परिवारों के बीच समायोजन कर अपनी महत्वपूर्ण सामाजिक भूमिका का निर्वाह करती है। विवाह उपरांत समर्पण, त्याग और उत्सर्ग के परिणामस्वरूप परिवार निर्माण होता है। यदि किशोरियों में स्वयं के प्रति उत्तम समायोजन की क्षमता हो तो निश्चित ही आदर्श परिवार निर्माण के स्वप्न को साकार होते हुए देखा जा सकेगा और पुन: रामायण काल सदृश्य पारिवारिक वातावरण का अवतरण होना कठिन नहीं होगा।

अध्ययन के उद्देश्य–

1. छात्रावास एवं परिवार में रहने वाले किशोर–किशोरियों का स्वयं के साथ समायोजन का अध्ययन करना।
2. छात्रावास एवं परिवार में रहने वाले किशोर–किशोरियों का साथी के साथ समायोजन का अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पना–

1. छात्रावास एवं परिवार में रहने वाले किशोर–किशोरियों का स्वयं के साथ समायोजन में कोई अंतर नहीं होगा।
2. छात्रावास में रहने वाले तथा परिवार में रहने वाले किशोर–किशोरियों का साथी के साथ समायोजन में कोई अंतर नहीं होगा।

शोध प्रविधि–

प्रस्तुत शोध हेतु यादृष्छिकी न्यादर्श का प्रयोग किया गया। प्रस्तुत शोध कार्य में निदर्शन का चयन इन्दौर शहर में अध्ययनरत् उच्चतर माध्यमिक स्तर के किशोर–किशोरियों पर किया गया। इस हेतु चार विद्यालयों में से 50 किशोर तथा 50 किशोरियों को चुना गया है। जिसमें परिवार एवं छात्रावास में रहने वाले किशोर–किशोरियों को समान रूप से सम्मिलित किया गया है।

विधि तथा उपकरण–

प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि तथा श्रीमती रागिनी दुबे द्वारा किशोर–किशोरियों समायोजन मापनी का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकीय प्रविधियाँ–

संकलित प्रदत्तों का विश्लेषण करने के लिए मध्यमान, मानक, विचलन, क्रांतिक अनुपात तथा काई वर्ग सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है।

परिणाम

तालिका क्र. 1

छात्रावास एवं परिवार में रहने वाले किशोर–किशोरियों का स्वयं के साथ समायोजन का अध्ययन करना।

श्रेणी	छात्रावास में स्व समायोजन		परीक्षण		परिवार में स्व समायोजन		परीक्षण	
	किशोर मध्यमान	किशोरियाँ मध्यमान	स्वतंत्र के अंश	टी परीक्षण	किशोर मध्यमान	किशोरियाँ मध्यमान	स्वतंत्र के अंश	टी परीक्षण
अत्यधिक उच्च	11.4	16.75	10	2.51	19.5	17	9	4.59
उच्च	14.5	18.33	8	29.4	15.75	14.33	8	0.74
साधारण	11.4	17.5	12	3.61	1.85	14.62	6	1.06
भिन्न	19.14	14.6	8	2.23	15.3	24.67	8	0.49
अत्यधिक निम्न	12	17	3	3.01	21	12.5	10	16.6

.01 सार्थकता स्तर

.05 सार्थकता स्तर

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि छात्रावास तथा परिवार में रहने वाले किशोर–किशोरियों का स्वयं के साथ समायोजन स्तर का अध्ययन करने पर पाया गया कि अत्यधिक उच्च स्तर का समायोजन करने वाले किशोर व किशोरियों के क्रमश: 11.4 व 16.75 पाया गया। इनका टी–परीक्षण का 4.59 प्राप्त हुआ जो स्वतंत्र के अंश पर 10 है, जो असार्थक है।

परिवार में रहने वाले किशोर व किशोरियों में स्वयं के साथ समायोजन के स्तर का अध्ययन करने पर पाया गया कि अत्यधिक उच्च स्तर का समायोजन करने वाले किशोर व किशोरियों के मध्यमान क्रमश: 19.5 व 17 प्राप्त हुआ। इनका टी–परीक्षण का मान 4.59 प्राप्त हुआ जो स्वतंत्रता के अंश पर 9 प्रतिशत है जो सार्थक है।

छात्रावास में रहने वाली किशोर–किशोरियों में स्वयं समायोजन स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करने पर पाया गया कि उच्च स्तर का समायोजन करने वाले किशोर व किशोरियों के मध्यमान क्रमश: 14.5 व 18.33 पाया गया। इनका टी–परीक्षण का मान 29.4 प्राप्त हुआ जो 8 स्वतंत्र के अंश पर सार्थक है।

परिवार में रहने वाले किशोर व किशोरियों में स्वयं समायोजन स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करने पर पाया कि उच्च स्तर का समायोजन करने वाले किशोर–किशोरियों के मध्यमान 15.75 व 14.33 पाया गया। इनका टी–परीक्षण का मान 0.74 प्राप्त हुआ जो 8 स्वतंत्र के अंश पर असार्थक है।

छात्रावास में रहने वाले किशोर–किशोरियों में स्वयं समायोजन स्तर का तुलनात्मक करने पर ज्ञात किया गया कि साधारण स्तर का समायोजन करने वाले किशोर–किशोरियों के मध्यमान क्रमश: 11.4 व 17.5 पाया गया। इनका टी–परीक्षण का मान 3.61 प्राप्त हुआ जो 12 स्वतंत्र के अंश पर 0.5

* पीएच.डी. शोधार्थी (गृह विज्ञान) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर, कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

स्तर के आवश्यक मान से कम है। अत: दोनों में अंतर असार्थक है।

परिवार में रहने वाले किशोर व किशोरियों के साधारण स्तर का अध्ययन करने पर उनका मध्यमन क्रमश: 1.85 व 14.62 पाया गया। इनका टी परीक्षण का मान 1.86 प्राप्त हुआ जो 6 स्वतंत्र के अंश पर .05 स्तर के आवश्यक मान से कम है। अत: दोनों में अंतर असार्थक है।

परिवार में रहने वाले किशोर व किशोरियों का निम्न स्तर के समायोजन का मध्यमान क्रमश: 15.3 व 24.67 पायागया। इनका टी-परीक्षण का मान 0.49 प्राप्त हुआ। जो 8 स्वतंत्र के अंश पर असार्थक है।

छात्रावास में रहने वाले किशोर व किशोरियों का अत्यधिक निम्न स्तर के समायोजन का मध्यमान क्रमश: 12 व 17 प्राप्त हुआ। इनका टी-परीक्षण का मान 3.01 प्राप्त हुआ जो 3 स्वतंत्र के अंश पर सार्थक है।

परिवार में रहने वाले किशोर-किशोरियों का अत्यधिक निम्न स्तर के समायोजन का मध्यमान क्रमश: 21 व 12.5 प्राप्त हुआ। इनका टी-परीक्षण का मान 16.6 प्राप्त हुआ। जो 10 स्वतंत्र के अंश पर सार्थक है।

इसमें पाया गया कि छात्रावास तथा परिवार में रहने वाले किशोर-किशोरियों का स्वयं के साथ समायोजन में अंतर तो पाया गया किन्तु परन्तु सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

(उपरोक्त उपकल्पना आंशिक सार्थक सिद्ध हुई।)

तालिका क्र. 2

छात्रावास एवं परिवार में रहने वाले किशोर-किशोरियों का साथी के साथ समायोजन का अध्ययन करना।

	छात्रावास में स्व समायोजन		परीक्षण		परिवार में स्व समायोजन		परीक्षण	
	किशोर मध्यमान	किशोरियाँ मध्यमान	स्वतंत्र के अंश	टी परीक्षण	किशोर मध्यमान	किशोरियाँ मध्यमान	स्वतंत्र के अंश	टी परीक्षण
अत्यधिक उच्च	16.2	15.5	3	1.11	11.6	12.5	5	0.40
उच्च	16.6	12.57	9	2.79	13.7	13.6	11	0.01
साधारण	14.4	14.6	14	1.43	13.2	14.6	12	0.12
भिन्न	20	13.5	3	2.88	17	15.4	7	0.56
अत्यधिक निम्न	18.5	15.2	3	0.20	14.6	17.25	5	0.39

.01 सार्थकता स्तर

.05 सार्थकता स्तर

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि छात्रावास में रहने वाले किशोर-किशोरियों के साथी समायोजन का मध्यमान क्रमश: 16.2व 15.5 प्राप्त हुआ। जिनका टी-परीक्षण का मान 1.11 प्राप्त हुआ जो स्वतंत्र के अंश पर असार्थक है।

परिवार में रहने वाले किशोर व किशोरियों के साथी समायोजन उच्च स्तर का मध्यमान क्रमश: 11.6 व 12.5 प्राप्त हुआ। जिनका टी-परीक्षण का 4.52 प्राप्त हुआ। जो स्वतंत्र के अंश पर असार्थक है।

छात्रावास में रहने वाली किशोर-किशोरियों का समायोजन जो उच्च स्तर का मध्यमान 16.6 व 12.57 पाया गया। जिनका टी-परीक्षण 2.79 प्राप्त हुआ। जो स्वतंत्र के अंश पर आंशिक रूप से सार्थक है।

परिवार में रहने वाले किशोर-किशोरियों का साथी समूह समायोजन उच्च समायोजन का मध्यमान क्रमश: 13.7 व 13.6 पाया गया। जिनका टी परीक्ष का मान 0.01 प्राप्त हुआ। जो स्वतंत्र के अंश पर सार्थक हैं।

छात्रावास में रहने वाले किशोर-किशोरियों का साथी समूह समायोजन जो साधारण समायोजन का मध्यमान क्रमश: 14.4 व 14.6 पाया गया जिनका टी परीक्षण का मान 1.43 प्राप्त हुआ जो स्वतंत्र के अंश पर असार्थक हैं। परिवार में रहने वाले किशोर-किशोरियों का साथी समूह समायोजन जो साधारण समायोजन का मध्यमान क्रमश: 13.2 व 14.6 पाया गया। जिनका टी परीक्षण का मान 0.12 प्राप्त हुआ। जो स्वतंत्र के अंश पर असार्थक हैं। छात्रावास में रहने वाले किशोर-किशोरियों का साथी समूह समायोजन जो भिन्न समायोजन का मध्यमान क्रमश: 20 व 13.5 पाया गया है जिनके टी-परीक्षण का मान 2.88 प्राप्त हुआ। जो स्वतंत्र के अंश पर आंशिक रूप से सार्थक है।

परिवार में रहने वाले किशोर-किशोरियों का साथी समूह समायोजन जो मिश्र समायोजन का मध्यमान क्रमश: 17 व 15.4 पाया गया। जिनका टी-परीक्षण का मान .56 प्राप्त हुआ जो स्वतंत्र के अंश पर असार्थक है।

छात्रावास में रहने वाले किशोर-किशोरियों का साथी समूह समायोजन जो अत्यधिक मिश्र समायोजन का मध्यमान क्रमश: 18.5 व 15.2 प्रतिशत पाया गया। जिनका टी-परीक्षण का मान 0.20 प्राप्त हुआ। जो स्वतंत्र के अंश पर असार्थक सिद्ध हुई।

परिवार में रहने वाले किशोर-किशोरियों में साथी समूह समायोजन अत्यधिक निम्न स्तर का मध्यमान 14.6 व 17.25 पाया गया। जिनका टी-परीक्षण का मान 0.39 प्राप्त हुआ जो स्वतंत्र के अंश पर साथक है।

उपकल्पना छात्रावास में रहने वाले तथा परिवार में रहने वाले किशोर-किशोरियों का साथी के साथ समायोजन में केाई अंतर नहीं होगा। अत: उपकल्पना आज असार्थक सिद्ध हुई अस्वीकृत की जाती है।

सुझाव-

1. किशोर व किशोरियों की अवस्था परिवर्तन की अवस्था होती है। अत: किशोर के माता-पिता का उनकी समस्याओं को समझकर समाधान करना चाहिए ताकि वे समाज से समायोजित कर सकें।
2. किशोर व किशोरियों को ऐसे मित्र बनाना चाहिए जिससे आपस में उनके विचार मिलते-जुलते हों और समायोजन सरलता पूर्वक हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. आहूजा राम (2000). समाजिक समस्याऐं, रावत पब्लिकेशंस, दिल्ली
2. शिवेन्द्रचन्द्र डॉ. सोनी (2000). भारत में सामाजिक समस्याऐं कविता पब्लिकेशंस, दिल्ली
3. कापड़िया, श्री के.एस. भारतवर्ष में विवाह एवं परिवार।
4. तोमर रामबिहारी सिंह (1960), पारिवारिक समाजशास्त्र दत्ता ब्रदर्स, अजमेर प्रकाश नारायण नालाणी।
5. शर्मा प्रजा (2000). भारत की सामाजिक समस्याऐं पोइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर,
6. अस्थाना विपिन (1975), मनोविज्ञान शोध विधियां, विनोद।
7. मुखर्जी रविन्द्र, भारतीय सामाजिक व्यवस्था।
8. जैन, डॉ. कैलाश प्राचीन भारतीय सामाजिक एवं आर्थिक संस्था म.प्र. हिन्दी ग्रंन्थ अकादमी, भोपाल
9. शर्मा कैलाशनाथ, भारतीय समाज और संस्कृति, किशोर पब्लिकेशन हाउस, कानपुर

****

अभिभावकीय प्रोत्साहन का जनजाति बैगा किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर प्रभाव का अध्ययन

डॉ. आभा तिवारी * रीना मेश्राम **

शोध सारांश:- प्रस्तुत शोध कार्य में जनजाति किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का अध्ययन किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य शासकीय/अशासकीय शालाओं में अध्ययनरत् किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर उच्च /निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन का अध्ययन है । न्यायदर्श में आदिवासी क्षेत्र परसवाडा विकासखण्ड के शासकीय शाला के 16 किशोर एवं किशोरियाँ तथा अशासकीय शाला के 16 किशोर एवं किशोरियों को लिया गया है । परिणामों से स्पष्ट होता है कि शासकीय/अशासकीय विद्यालयों के उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के जनजाति किशोरों को सामाजिक व्यवहार, निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन वाले किशोर/किशोरियों से अधिक है अर्थात् अभिभावकीय प्रोत्साहन का सामाजिक व्यवहार पर सकारात्मक प्रभाव पडता है ।

प्रस्तावना :- बालाघाट जिले की जनसंख्या 1,70,1,156 है एवं बालाघाट में साक्षरता की दर 78.3 प्रतिशत है । यहाँ जनजाति बैगा विशेष रूप से बैहर क्षेत्र में निवासरत् है । इस क्षेत्र के अंतर्गत तीन विकासखण्ड है । बैहर विकासखण्ड में बैगा जनजाति की कुल जनसंख्या 39 प्रतिशत, बिरसा विकासखण्ड में 44 प्रतिशत एवं परसवाडा के अंतर्गत 17 प्रतिशत बैगा जनजाति निवासरत् हैं । बैहर तहसील के अंतर्गत 89717 जनसंख्या है, जिसमें 60433 बैगा जनजाति निवासरत् हैं । उनमें से 8553 महिलाएँ एवं 8593 पुरूष है । (2001 की जनगणना एवं कार्यालय परियोजना प्रशासक बैगा विकास अभिकरण बैहर, जिला- बालाघाट के अभिलेखों के अनुसार) । अभिभावक शब्द का तात्पर्य माता- पिता से हैं एवं माता-पिता के अभाव में उनकी जिम्मेदारियों का निर्वाह करने वाले पालकों से है । अभिभावकों की जिम्मेदारियाँ उस समय बढ़ जाती है । जब बालक 12 से 19 वर्ष में हो इसे किशोरावस्था कहा जाता है । इसी आयु में अनेक शारीरिक, मानसिक एवं सामाजिक परिवर्तन होते है ।

किशोरों के व्यक्तित्व के निर्माण में वातावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है जिसके अंतर्गत घर, परिवार, पास-पडोस एवं विद्यालय का वातावरण आता है जो किशोरों के व्यक्तित्व विकास को प्रभावित करता है । किशोरों का अधिकांश समय अपने अभिभावकों के साथ व्यतीत होता है । अत: घर का वातावरण एवं अभिभावकों का व्यवहार किशोरों के विकास को प्रभावित करता है । जनजाति क्षेत्र के कुछ बैगा जनजातियाँ सुविधा का लाभ नहीं उठा पा रहे है। कुछ परिवार अपने आस- पास के वातावरण तथा सरकारी योजनाओं का लाभ उठाकर अपने स्थिति में सुधार ला रहें है । जिससे परिवार की स्थिति निम्न से सामान्य हो रही है ।

इसका प्रभाव घर के सदस्यो के साथ- साथ किशोरों पर भी पडता है । कुछ जनजाति अभिभावक बच्चों के सम्मुख झगडते हैं या एक दूसरे को नीचा दिखाते हैं तब उनके किशोरों का सामाजिक व्यवहार और आत्म-विश्वास दोनों ही कमजोर होता है । यदि परिवार के अभिभावक अशिक्षित हों तो उनके किशोरों का सामाजिक व्यवहार प्रभावित होता है । अभिभावकों का व्यवहार एक दूसरे के प्रति सकारात्मक एवं दृढ होना चाहिए जिसे देखकर किशोर कुछ प्रेरणा ले सकें । अभिभावकों के व्यवहार को देखकर तथा वातावरण के आसपास के व्यवहार से ही किशोर अभिप्रेरित होते हैं । कोगर एवं कैथरीन जेंबसब कोगर (1997) ने- किशोरावस्था में समायोजन पर तीन वर्ष की अवधि तक चलने वाले अध्ययन मे पाया कि यदि किशोर-किशोरियों पर माता- पिता कठोर नियंत्रण रखते हैं तो किशोरों की समायोजन सम्बन्धी समस्या बढ़ जाती है और उनमें आत्मविश्वास की कमी आ जाती है । आत्मविश्वास का सामाजिक समायोजन से निकट का सम्बन्ध हैं । अर्थात् किशोरों को कठोरता से नियंत्रण न करके मित्रवत् व्यवहार द्वारा उचित समायोजन बनाया जाये ।

बाकबिन तथा बाकबिन (1940) ने एक अध्ययन में पाया कि अभिभावकों के विकृत अथवा असंगत दृष्टिकोण जैसे स्नेह की सामान्य तथा असामान्य अभिवृत्ति, अत्यधिक स्नेह ,अत्यधिक संरक्षण, अत्यधिक प्रेम एवं सौग्यता ,अत्यधिक चिन्ता ,कम स्नेह ,अधिक अधिकारवादिता आदि बालक के व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं ।

उद्देश्य:-

1. किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन ।
2. शासकीय शालाओं में अध्ययनरत् किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन ।
3. अशासकीय शालाओं में अध्ययनरत् किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन के प्रभाव का अध्ययन ।

परिकल्पना:-

1. किशोरों के साामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है ।
2. शासकीय शालाओं में अध्ययनरत् किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पडता है ।
3. अशासकीय शालाओं में अध्ययनरत् किशोरों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का कोई सार्थक प्रभाव नहीं पडता है ।

न्यादर्श:-

न्यादर्श बैगा क्षेत्र के परसवाडा विकासखण्ड से लिया गया है जो निम्नानुसार है ।

शाला की प्रवृत्ति	अभिभावकीय प्रोत्साहन उच्च	अभिभावकीय प्रोत्साहन निम्न	योग
शासकीय	9	7	16
अशासकीय	5	11	16
योग	14	18	32

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (मानव विकास) शा.मो.ह. गृह विज्ञान एवं विज्ञान महिला महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
* शोध छात्रा , रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

उपकरण:- 1. अभिभावकीय प्रोत्साहन मापनी – डॉ. आर. आर. शर्मा (1986) 2. सामाजिक व्यवहार मापनी- डॉ. ए.श्रीवास्तव एवं, डॉ.ए.शर्मा (2000)

विधि:- शोध कार्य हेतु न्यादर्श में चुने गये किशोर/किशोरियों पर अभिभावकीय प्रोत्साहन मापनी का प्रशासन किया गया । फलांकन के उपरांत उच्च एवं निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन के समूहों पर सामाजिक व्यवहार मापनी का प्रशासन किया गया । फलांकन के उपरान्त परिणामों के सांख्किीय विधियों पर प्रदत्तों का विश्लेषण कर निष्कर्ष प्राप्त किये गयें ।

विवेचना:-अभिभावकीय प्रोत्साहन का बैगा जनजाति के किशोरों के सामाजिक व्यवहार का अध्ययन करने हेतु न्यादर्श से प्राप्त परिणामों का विश्लेषण निम्नानुसार हैं –

तालिका क्रमांक 1

उच्च एवं निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोरों के सामाजिक व्यवहार का तुलनात्मक परिणाम

शाला की प्रकृत्ति	अभिभावकीय प्रोत्साहन	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	टी मान	पी मान
शासकीय एवं अशासकीय शाला	उच्च निम्न	14 18	138.35 130.16	7.06 0.58	4.81	<0.01
शासकीय शाला	उच्च निम्न	9 7	135.66 124.85	3.87 1.38	6.67	<0.01
अशासकीय शाला	उच्च निम्न	5 11	145.45 133.54	9.59 4.36	3.18	<0.01

स्त्रोत: क्षेत्र निरीक्षण पर आधारित

उपरोक्त सारणी में आँकडो के परिणामों से प्रदर्शित होता है कि उच्च एवं निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन के विभिन्न समूहों मे सांख्यिकीय दृष्टिकोण से किशोरों के सामाजिक व्यवहार मे सार्थक अन्तर है क्योंकि प्राप्तांकी मान 0.01 के निर्धारित मान की अपेक्षा अधिक है ।

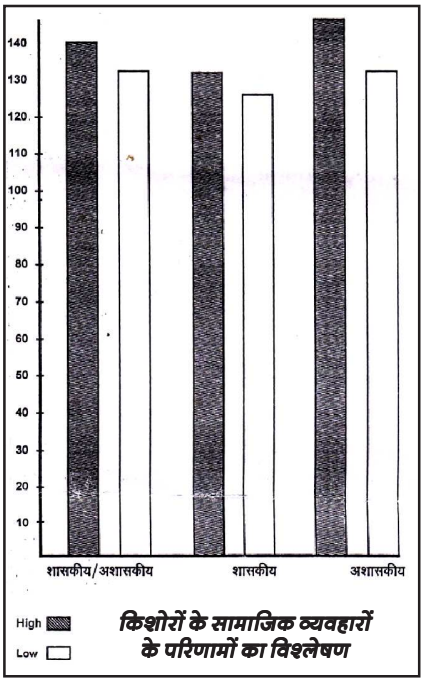

किशोरों के सामाजिक व्यवहारों के परिणामों का विश्लेषण

अभिभावकों का उच्च प्रोत्साहन किशोरों की बड़ी से बड़ी समस्याओं का निदान करने में सहायक होता है जिससे किशोर घर,परिवार,समाज एवं विद्यालय तथा मित्रों के बीच एक सामन्जस्य बना लेते हैं । जो उनके व्यवहार को आदर्श बनाता है । किशोर/किशोरियों को अभिभावकों का प्रोत्साहन ना मिलने पर वे समाज के नियमों से विचलित हो जाते है । साथ ही विद्यालय में भी स्थान प्राप्त नहीं कर पाते जिसके कारण वे घर, पडोसी एवं मित्रों से दूर होते हैं जिससे उनका सामाजिक व्यवहार प्रभावित होता हैं । यही कारण है कि जनजातीय क्षेत्रों में कुछ अभिभावक शिक्षित है एवं कुछ अभिभावक अपने आस- पास के वातावरण के अनुसार ढल गयें हैं । वे अपने किशोरों को प्रोत्साहित कर रहें हैं । जनजाति क्षेत्रों में शिक्षा की कमी का किशोर/किशोरियों के विकास पर प्रभाव पडता हैं । कुछ अभिभावक किशोरियों की अपेक्षा किशोरो पर अधिक ध्यान देते हैं । जिससें किशोरियों का व्यवहार किशोरों के प्रति घृणात्मक व्यवहार बनता जा रहा हैं ।

इस प्रकार उपरोक्त परिणामों से स्पष्ट हो जाता हैं कि किशोर/किशोरियों के सामाजिक व्यवहार को कुशल बनाने में अभिभावक के प्रोत्साहन की अहम् भूमिका होती है । जिससे वे घर, परिवार एवं मित्रों के बीच में एक पहचान बनाते है । अत: अभिभावकीय प्रोत्साहन का किशोर/किशोरियों के सामाजिक व्यवहार पर सार्थक प्रभाव पडता है ।

निष्कर्ष:-

1. किशोर/किशोरियों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का सकारात्मक प्रभाव पडता है । उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोर/किशोरियों का सामाजिक व्यवहार निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोर/किशोरियों की अपेक्षा अधिक अच्छा है ।
2. शासकीय शाला के किशोर/किशोरियों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का सकारात्मक प्रभाव पडता हैं । शासकीय शाला में उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोर/किशोरियों का सामाजिक व्यवहार निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोरों की अपेक्षा अधिक अच्छा है ।
3. अशासकीय शाला के किशोर/किशोरियों के सामाजिक व्यवहार पर अभिभावकीय प्रोत्साहन का सकारात्मक प्रभाव पडता हैं । अशासकीय शाला में उच्च अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोरों का सामाजिक व्यवहार निम्न अभिभावकीय प्रोत्साहन के किशोरों की अपेक्षा अधिक अच्छा है ।

सन्दर्भ ग्रन्थसूची:-

1. कुप्पुस्वामी, बी (1982) '' बाल व्यवहार और विकास '' विकास पब्लिशिगं हाउस, भारती प्रिंटर्स, आगरा, । पेज नं. 51.84
2. कुदेसिया, उमेशचन्द्र (1998) '' शिक्षा मनोविज्ञान '' प्रकाशन केन्द्र,न्यू बिल्डिंग,अमीनाबाद, लखनऊ, ।
3. जायसवाल ,.सीताराम(1975) '' शिक्षा मनोविज्ञान '' प्रकाशन केन्द्र न्यू बिल्डिंग, अमीनााद,लखनउ, ।
4. वर्मा, प्रीति श्रीवास्तव, डी.एम.(1986), '' बाल मनोविज्ञान एवं बाल विकास '' विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा ।
5- http:// www.google.com.in
6- http:// www.6 seconds. Org.
7. मप्र सांख्यिकीय संक्षेप 2010 आर्थिक एवं साख्यिकी संचालनालय, म.प्र. पेज नं. 15-16
8. सिंह वृन्दा(2007) '' बाल विकास एवं बाल मनोविज्ञान '' मूलचन्द गुप्ता पंचशील प्रकाशन फिल्म कॉलोनी , जयपुर पेज नं. 289 से 297
9. जैन, शशि प्रभा (2005) '' मानव विकास '' शिवा प्रकाशन श्री गणेश मार्केट खजूरी बाजार, इन्दौर पेज नं. 206 से 2009
10. मिश्रा महेन्द्र कुमार (2007) ''किशोर मनोविज्ञान'' युनिवर्सिटी बुक हाऊस प्रा.लि. 79 चौड़ा रास्ता, जयपुर पेज नं. 145 से 166
11. मिश्रा, महेन्द्र कुमार (2007) ''बाल विज्ञान की नूतन दिशाएँ'' ज्ञान प्रकाशन 12 शाहपुरा हाऊस, उनियारा रावजी का रास्ता चांदपोल बाजार, जयपुर पेज नं. 21 से 32

पूर्व किशोरावस्था (11 से 16 वर्ष) के किशोर तथा किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता का अध्ययन करना

कु. अनिता सोलंकी *

प्रस्तावना–

किशोर–किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता के स्तर को मापने के लिए डॉ. आर.के. टंडन ने सामूहिक मानसिक योग्यता का परीक्षण किया। इस शोध पत्र का उद्देश्य इन्दौर जिले के किशोर–किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता स्तर का अध्ययन किया गया। इसमें कुल 100 प्रतिदर्श चयन किया गया। जिसमें 50 किशोरों व 50 किशोरियों जिसमें शासकीय स्कूल व अर्द्धशासकीय स्कूल के किशोर व किशोरियों का अध्ययन किया गया। जिसमें तथ्यों का विश्लेषण तथा परिणाम निकालने के लिए प्रतिशत मध्यमान, प्रमाप, विचलन टी–परीक्षण, काई वर्ग परीक्षण आवश्यकतानुसार तकनीक परीक्षण जिसमें सार्थकता व असार्थकता पता लगाने के लिए किया गया है।

इस अध्ययन के निष्कर्ष बताते हैं कि शासकीय विद्यालय व अशासकीय विद्यालय के 10वीं व 12वीं शिक्षा प्राप्त किशोर व किशोरियों में सामूहिक मानसिक योग्यता स्तर में अधिक अंतर नहीं पाया गया। यह उपकल्पना अस्वीकृत हुई है। इसका कारण यह हो सकता है कि अधिकांश परिवारों में किशोरों व किशोरियों को स्वतंत्र वातावरण प्रदान नहीं किया जाता है। संवेगों पर नियंत्रण नहीं कर पाते हैं जबकि सामूहिक मानसिक योग्यता स्तर में संघर्षमय जीवन व्यतीत करते हुए भावानात्मक रूप से शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, रूप से मजबूत होने के बारे में सहमति व्यक्त की गई।

किशोरावस्था एक संक्रमण की अवस्था है। जिसमें बालक न ही बालक रहता है और न ही प्रौढ़। जैसे कि असुबेल ने कहा है कि हमारी संस्कृति में किशोरावस्था को व्यक्ति की जैव सामाजिक स्थिति का एक संक्रमण काल कहा जा सकता है। इस अवस्था में कर्तव्यों जिम्मेदारियों, विशेषाधिकारों और अन्य लोगों के साथ सम्बन्धों में बहुत परिवर्तन हो जाते हैं। ऐसी हालत में माता पिता, साथियों और दूसरों के प्रति अभिव्यक्तियों का बदल जाना स्वाभाविक प्रक्रिया है। हमारे आधुनिक समाज में किशोरों की स्थिति अस्पष्ट और उलझी हुई होती है। किशोरावस्था शारीरिक परिपक्वता के साथ–साथ मानसिक सांवेगिक और सामाजिक परिपक्वता की भी अवस्था है।

पूर्व किशोरावस्था तब शुरू होती है जब व्यक्ति लैंगिक दृष्टि से परिपक्व हो जाता है। पूर्व किशोरावस्था औसतन तेरह की आयु में और लड़के की लगभग एक वर्ष बाद शुरू होती है। पूर्व किशोरावस्था की विभाजक रेखा सोलहवें वर्ष के आसपास मानी जाती है।

किशोरावस्था बाल्यावस्था के बाद आने वाली अवस्था है। यह अवस्था बचपन की समाप्ति तथा वयस्कावस्था प्रारंभ होने तक रहती है। इस समय विकास की गति बहुत तीव्र होती है। इस अवस्था में किशोर न तो बालक रहता है न ही वयस्क वरन् वह दुविधाजनक स्थिति में रहता है। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में एक समय ऐसा आता है जबकि उसके शरीर में कुछ परिवर्तन होना शुरू होते हैं, बचपन से प्रौढ़ बनने की प्रक्रिया प्रारंभ होती है। यह वयसंधि का काल (समय) ही किशोरावस्था है। इसमें न केवल शारीरिक बल्कि बौद्धिक, भावनात्मक तथा सामाजिक आदि सभी प्रकार के परिवर्तन होते हैं।

किशोरावस्था को देखें तो लगता है कि उस काल में जीवन तरंग सर्वोच्च शिखर पर पहुंच जाती है। किशोर का जीवन नये अनुभवों के क्षेत्र में प्रवेश करने के नवीन संबंधों को ढूंढ निकालने के तथा आंतरिक शक्ति एवं योग्यता के नये साधनों की अनुभूति के उपजनें से भरा होता है।

यह अवस्था लड़कों में 14 से 17 वर्ष तथा लड़कियों में 13 से 16 वर्ष होती है। इस समय कुछ शारीरिक परिवर्तन भी होने लगते हैं। सामूहिक, मानसिक, योग्यता/बौद्धिक योग्यता, मानसिक विकास मानसिक आयु से जुड़ा हुआ है। मानसिक आयु की सहायता से बालक किशोरों की मानसिक परिपक्वता का संकेत मिलता है। किशोर इन्हीं मानसिक योग्यता के आधार पर मानसिक गतिविधियों में भाग लेते हैं। मानसिक गतिविधियों का संचालन प्रत्येक शैक्षणिक संस्था नियमित रूप से उनकी बुद्धि, तेजस्वी बने, स्मृति शक्ति बढ़े इस उद्देश्य हेतु महाविद्यालय में भाषण वाद–विवाद और निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है।

मानसिक योग्यताओं का विकास किशोरों में निरीक्षण, तुलना, निर्णय इत्यादि मानसिक शक्तियों का थोड़ा विकास देखा जा सकता है। भाषा संबंधी योग्यताओं का भी विकास होता है। किशोरों की ये मानसिक योग्यताऐं उनके खेलों में देखी जा सकती है। बालक के प्रत्येक विकास पर उसकी बौद्धिक योग्यता का भी पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। जिन बालकों की बौद्धिक योग्यता अधिक होती है। उनकी स्मरण शक्ति व तर्क शक्ति अधिक होती है।

पूर्व बाल्यावस्था में किशोरों की मानसिक योग्यताओं में निरंतर वृद्धि होती है। उसकी संवेदना एवं प्रत्यक्षीकरण की शक्तियों में वृद्धि होती है। किशोर विभिन्न बातों के बारे में अधिक देर तक अपने ध्यान को केन्द्रित कर सकता है। उसमें अपने पूर्व अनुभवों को स्मरण रखने की योग्यता उत्पन्न हो जाती है। शारीरिक मानसिक स्थिरता में पूर्व किशोरावस्था में न केवल किशोर का वजन एवं कद बढ़ता है। वरन् वह मानसिक रूप से भी परिपक्व होता है।

मनुष्य आज श्रेष्ठतम प्राणी बुद्धि के कारण ही समझा जाता है। कुछ किशोर जन्म से ही प्रखर बुद्धि वाले अथवा मूर्ख हुआ करते हैं। प्रखर बुद्धि वाले किशोर मूर्ख किशोरों की अपेक्षा शिक्षा से अधिक लाभ उठाते हैं। अत: कहा जा सकता है कि बुद्धि वंशानुक्रम पर आधारित होती है।

स्पीयरमैन (1904–1927) इनके अनुसार बुद्धि में दो–दो कारक हैं। प्रथम सामान्य मानसिक योग्यता द्वितीय विशिष्ट मानसिक योग्यता। बुद्धि परीक्षणों की सहायता से मन्द बुद्धि किशोरों का पता सरलता से लगाया जा सकता है। चाहे एक कक्षा में पढ़ने वाले किशोर हैं अथवा एक समूह विशेष के किशोर हों। बुद्धि परीक्षणों की सहायता से मन्द बुद्धि प्रखर बुद्धि और प्रतिभाशाली किशोरों को सरलता से अलग–अलग किया जा सकता है।

बुद्धि परीक्षणों के द्वारा बुद्धि का मापन कर यह ज्ञात किया जा सकता है

* पीएच.डी शोधार्थी,माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

कि एक विद्यार्थी विद्यालय में पढ़ने योग्य है। बुद्धि परीक्षणों के द्वारा बुद्धि का मापन कर कक्षा के क्षेत्र में बुद्धि परीक्षणों का एक उपयोग यह भी किया जाता है कि कक्षा में किशोरों के द्वारा प्राप्तांकों के आधार पर किसी भी विषय के पाठ्यक्रम का निर्धारण सरलता से किया जा सकता है।

उपर्युक्त क्षेत्र के अतिरिक्त बुद्धि परीक्षणों की उपयोगिता अन्य और क्षेत्रों में है। जैसे व्यावहारिक क्षेत्र में अपराधी किशोरों की समस्या के समाधान के क्षेत्र में निदान, उपचार और चिकित्सा के क्षेत्र में भी बुद्धि परीक्षणों का उपयोग बहुत अधिक है। इन सबके अतिरिक्त अनुसंधान के क्षेत्र में कई दशकों से बुद्धि परीक्षणों का उपयोग व्यापक स्तर पर किया जा रहा है।

बुद्धि-लब्धि और आयु- यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है कि क्या आयु और संवेगात्मकता को बुद्धि और विकास के साथ-साथ हमारी IQ का भी विकास होता है। प्रत्येक आयु स्तर के किशोर-किशोरियों की अपेक्षा बौद्धिक कौशलों के आगे होते हैं।

लड़के मैथेमेटिकल तथा मैकेनिकल में भी आगे होते हैं दूसरी ओर किशोरियां प्रत्यक्षात्मक कौशलों तथा भाषा विज्ञान में किशोरों की अपेक्षा किशोरियां श्रेष्ठ होती हैं। यदि शासकीय या अशासकीय स्कूलों में रेकार्ड देखा जाये तो लगभग सभी देशों में औसतन किशोरियों का स्कूल में रिकार्ड किशोरों की अपेक्षा बेहतर होता है।

$$\frac{\text{मानसिक आयु}}{\text{वास्तविक आयु}} \times 100$$

इस अध्ययन के दौरान किशोरों की मानसिक योग्यता का अध्ययन किया गया जिससे उनकी योग्यताओं का विकास हो सके और उनका सामाजिक समायोजन उत्तम बने और वे अपना सम्पूर्ण विकास कर सकें।

अध्ययन के उद्देश्य-

1. शासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता स्तर का अध्ययन।
2. अशासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता स्तर का अध्ययन करना।
3. शासकीय व अशासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता के स्तर का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की उपकल्पना-

1. शासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर होगा।
2. अशासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर होगा।
3. शासकीय व अशासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर होगा।

अध्ययन शोध प्रविधि-

प्रस्तुत शोध कार्य में निदर्शन के चयन इन्दौर शहर को लिया गया। जिसके लिए 100 निदर्शन का चयन किया गया। जिसमें 50 किशोरों तथा किशोरियों शासकीय विद्यालय के और 50 अशासकीय विद्यालय के किशोर तथा किशोरियों को लिया गया।

निदर्शन का चुनाव करने के लिए इन्दौर शहर के नक्शे को चार भागों में बांटा गया तथा दैव निदर्शन की लॉटरी विधि के द्वारा हर क्षेत्र से एक एक शासकीय तथा अशासकीय स्कूलों का चयन किया गया। इन स्कूलों का चयन लॉटरी विधि द्वारा गया।

विधि तथा उपकरण-

किशोर तथा किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता का अध्ययन करने के लिए डॉ आर.के. टंडन के द्वारा निर्मित सामूहिक मानसिक योग्यता मापनी का उपयोग किया गया। इस परीक्षण द्वारा किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में प्रखर बुद्धि, मूर्ख बुद्धि जड़ बुद्धि के अंतर्गत किया गया।

प्रस्तुत शोधकर्ता ने 50 किशोरों एवं 50 किशोरियों को लिया गया। जिसमें शासकीय तथा अशासकीय स्कूल के 10वीं कक्षा के किशोर एवं किशोरियों से जाकर प्रपत्र भरवाये थे।

सांख्यिकीय प्रविधियां-

तथ्यों को विश्लेषण तथा परिणाम निकालने के लिए सांख्यिकीय परीक्षण किया गया। जिसमें सार्थकता व असार्थकता का पता लगाया गया। इसके लिए प्रतिशत, मध्यमान, प्रमाप, विचलन, टी परीक्षण, काई वर्ग, परीक्षण का प्रयोग किया गया।

अशासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता से तालिका क्र. 1

क्रं.	श्रेणी	अशासकीय विद्यालय				स्वतंत्रता अंश	काई वर्ग ($\times^2$)	परिकल्पना सार्थकता स्तर
		किशोर		किशोरियाँ				
1	प्रतिभाशाली	0	0	0	0			
2	श्रेष्ठ	0	0	0	0			
3	सामान्य	0	0	0	0			
4	सीमावर्ती	3	12	2	8	6	0.819	असार्थक
5	मुर्ख बुद्धि	6	24	8	36			
6	मूढ़ बुद्धि	9	36	8	36			
7	जड़ बुद्धि	7	28	7	28			
		25	100	25	100			

उपरोक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि अशासकीय विद्यालय के किशोरों व किशोरियों की मानसिक योग्यता में प्रतिभाशाली श्रेष्ठ व सामान्य श्रेणी के किशोर तथा किशोरियों में 0 प्रतिशत पाया गया। सीमावर्ती श्रेणी में किशोरों में 12 प्रतिशत तथा किशोरियों में 8 प्रतिशत पाया गया।

मूर्ख बुद्धि श्रेणी में किशोरों में 24 प्रतिशत तथा किशोरियों में 36 प्रतिशत पाया गया। मूढ़ बुद्धि श्रेणी के किशोरों व किशोरियों में 36 प्रतिशत पाया गया। जड़ बुद्धि श्रेणी में किशोर व किशोरियों में 28 प्रतिशत पाया गया।

इनके X^2 का मान 0.819 पाया गया हो 6 स्वतंत्रता के अंश पर सार्थकता स्तर के आवश्यक मान से कम है। अत: दो में अंतर असार्थक है।

दूसरी उपकल्पना-अशासकीय विद्यालय के किशोर तथा किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर होगा। इसमें पाया गया कि अशासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर तो पाया गया किन्तु यह अंतर सार्थक नहीं पाया गया। अत: उपरोक्त उपकल्पना असार्थक सिद्ध हुई।

शासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर से संबंधित तालिका

तालिका क्र. 2

क्रं.	श्रेणी	शासकीय विद्यालय		स्वतंत्रता अंश	टी परीक्षण	परिकल्पना सार्थकता स्तर
		किशोर	किशोरियाँ			
1	प्रतिभाशाली	0	0	0	0	
2	श्रेष्ठ	0	0	0	0	
3	सामान्य	0	0	0	0	
4	सीमावर्ती	88.33	87.5	3	0.29	असार्थक
5	मुर्ख बुद्धि	6	24	8	36	असार्थक
6	मूढ़ बुद्धि	9	36	8	36	असार्थक
7	जड़ बुद्धि	7	28	7	28	असार्थक

.01 सार्थकता स्तर

.05 सार्थकता स्तर

उपरोक्त तालिका के अनुसार कि किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता का तुलनात्मक अध्ययन करने पर पाया गया कि सामूहिक मानसिक योग्यता में प्रतिभाशाली श्रेष्ठ व सामान्य का मध्यमान 0 पाया गया व इनके टी परीक्षण का मान 0 प्राप्त हुआ।

सीमावर्ती सामूहिक मानसिक योग्यता का मध्यमान क्रमश: 88.33 व 87.5 पाया गया। इनके टी परीक्षण का मान 0.29 प्राप्त हुआ जो 3 स्वतंत्रता के अंश पर .05 सार्थकता स्तर के आवश्यक मान से कम है।

मूर्ख बुद्धि में सामूहिक मानसिक योग्यता को मध्यमान क्रमश: 84.42 व 84.5 पाया गया। इनके टी पीरक्षण का मान 0.04 प्राप्त हुआ जो स्वतंत्रता के अंश पर .05 सार्थकता स्तर के आवश्यक मान से कम है।

अत: दोनों में सार्थक अंतर नहीं है। मूढ़ बुद्धि, सामूहिक, मानसिक योग्यता का मध्यमान क्रमश: 74.87 व 75.25 पाया गया। इनके टी परीक्षण का मान 0.22 प्राप्त हुआ जो 14 स्वतंत्रता के अंश पर .05 सार्थकता स्तर के आवश्यक मान से कम है।

अत: दोनों में अंतर सार्थक नहीं है। मूढ़ बुद्धि मानसिक योग्यता का मध्यमान 68.57 व 68 पाया गया। इनके टी परीक्षण का मान 0.48 प्राप्त हुआ जो 10 स्वतंत्रता के अंश पर .05 सार्थकता के आवश्यक मान से कम है।

अत: दोनों में अंतर सार्थक नहीं है।

तीसरी उपकल्पना– शासकीय विद्यालय के किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता पर प्रभाव पड़ेगा।

शासकीय विद्यालय के किशोर तथा किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर की जानकारी उक्त उपकल्पना की सार्थकता सिद्ध करने के लिए इसमें संबंधित प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किये गये तथा इनका टी परीक्षण का मान ज्ञान किया गया।

शासकीय विद्यालय के किशोरों तथा किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर तो पाया गया जो कि असार्थक हैं इसके अतिरिक्त यह भी पाया गया कि शासकीय विद्यालय के किशोर तथा किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में अंतर तो असार्थक पाया गया।

अत: उपरोक्त उपकल्पना असार्थक सिद्ध हुई।

निष्कर्ष–

1. शासकीय विद्यालय के किशोरों व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता परीक्षण में सर्वाधिक मूढ़ बुद्धि वाले किशोर व सबसे कम सीमावत्री बुद्धि वाले किशोर पाये गये। सर्वाधिक मूर्ख बुद्धि वाले किशोर व सबसे कम सीमावर्ती वाले किशोर पाये गये।
2. अशासकीय विद्यालय के किशोरों व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता परीक्षण में सर्वाधिक मूढ़ बुद्धि वाले किशोर व सबसे कम सीमावर्ती बुद्धि वाले किशोर पाये गये। सर्वाधिक मूर्ख बुद्धि वाले किशोर व सबसे कम सीमावर्ती वाले किशोर पाये गये।

सुझाव–

1. किशोर व किशोरियों को परिवार में अच्छा वातावरण दिया जाना चाहिए।
2. विद्यालय में किशोर व किशोरियों की योग्यता को बढ़ाने के लिए कार्यक्रम किये जाने चाहिए।
3. माता पिता द्वारा उन्हें प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

किशोर व किशोरियों की सामूहिक मानसिक योग्यता में कई मनोवैज्ञानिक परिवर्तन हो रहे हैं। इनके प्रभावों को जानने के लिए अध्ययन किया जा सकता है।

1. पूर्व शालायें बालकों पर अध्ययन किया जा सकता है।
2. अध्यापक के द्वारा किशोर व किशोरियों की मानसिक योग्यता के अनुसार पाठ्यक्रम बनाया जा सकता है।
3. कम मानसिक योग्यता वाले किशोर व किशोरियों को अलग से पढ़ाना चाहिए ताकि उनकी बुद्धि का विकास हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. दास भगवान, बाल विकास–2006, ओमेगा पब्लिकेषन, नई दिल्ली।
2. हलौक, एलिजाबेथ बी. विकास मनोविज्ञान प्रथम खण्ड, 1967, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय।
3. बर्मन श्रीमती गायत्री एवं जैन श्रीमती शशिप्रभा, किशोरावस्था विवाह एवं परिवार 2003, शिवा प्रकाशन, इन्दौर
4. शर्मा कमलेश, वर्मा माया, किशोरावस्था विवाह एवं पारिवारिक जीवन संस्करण, 1991–1992
5. मुखर्जी रवीन्द्रनाथ सामाजिक शोध व सांख्यिकीय 2007, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
6. कपिल एच.के. अनुसंधान विधिया, 2006, बारहवां संस्करण, एच.जी. भार्गव, बुक हाउस, कचहरी घाट आगरा।

****

बालिका भ्रूण हत्या

डॉ. मीना सिसौदिया *

भ्रूण हत्या का अर्थ है प्रसव पूर्व वैधानिक तकनीक द्वारा लिंग परीक्षणकर गर्भ का चिकित्सकीय समापन। गर्भस्थ कन्या शिशु भ्रूण हत्या के रूप में जीवन का अधिकार छीनना। कुछ अपराध ऐसे होते है जो सम्पूर्ण समाज, सभ्यता एवं संस्कृति को ही कलंकित कर देते है।

कन्या भ्रूण हत्या इसी तरह का एक घिनौना व अक्षम्य अपराध है पारंपरिक सोच व आधुनिक तकनीक साधनों के दुरूपयोग का सम्मिलित परिणाम अब हमारे सामने आने लगा है। जनगणना आंकड़ों के अनुसार लिंगानुपात में महिलाओं की संख्या निरन्तर घटती जा रही है। महिलाओं की संख्या में आ रही गिरावट के पीछे प्रमुख कारणों में प्रसव पूर्व निदान तकनीकों का दुरूपयोग है जिसके अंतर्गत गर्भस्थ शिशु का लिंग पता कर कन्या होने पर हत्या कर दी जाती है इस प्रकार भ्रूण लिंग परीक्षण के बढ़ते दुरूपयोग तथा निरन्तर होती कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए महाराष्ट्र की प्रदेश सरकार ने इस पर प्रतिबंध लगाया।

इसके बाद अन्य राज्यों और केन्द्र सरकार ने भी भ्रूण लिंग परीक्षण को प्रतिबंधित किया, किन्तु कानून बना देने से कोई बुराई मिट नहीं जाती है। इसके लिए महिलाओं को ही जागरूक होना पड़ेगा।

आज वर्तमान में राज्य सरकारें कन्याओं के जन्म पर कई योजनाएं उपहारस्वरूप दे रही है। माता-पिता को अब बालिका जन्म पर निराश होने की आवश्यकता नहीं है। वर्तमान में इतनी योजनाओं के बावजूद भी लिंगानुपात के बढ़ते आंकड़े एक गम्भीर समस्या बनकर उपस्थित है। आर्थिक विकास का परचम फहराने वाले, सभ्यता, संस्कृति और नैतिक मूल्यों की मिसाल बनें इस देश में प्रति वर्ष 20 लाख से अधिक बालिका भ्रूण हत्या कर दी जाती है। कारण कई है, फिर भी वंश वृद्धि हेतु पुत्र की इच्छा अहम् है। इसे अगर रोका नहीं जाएगा तो मानव जाति का अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा।

भारत में पिछले कई वर्षो से स्त्री-पुरूष अनुपात में लगातार गिरावट आई है। भारत वर्ष के समृद्ध राज्यों में बालिका भ्रूण हत्या के सबसे अधिक मामले सामने आए है और भ्रूण हत्या कराने में अधिकांश पढ़े-लिखे, सम्भ्रान्त कहे जाने वाले परिवारों की संख्या अधिक है।

कन्या भ्रूण हत्या के कारण :-

कन्या भ्रूण हत्या के अनेक कारण हो सकते है - लिंग भेदभाव, कुपोषण, गरीबी, अशिक्षा, अज्ञानता, माताओं के आहार में कमी, पर्याप्त चिकित्सा का अभाव, धार्मिक प्रथाएं, स्त्रियों को दिया जाने वाला दोयम दर्जा, सम्पत्ति का बंटवारा, पुत्र की चाह, स्त्रीजन्य रोग, आर्थिक स्वावलंबन, भ्रष्ट कानून, उन्नत सोनोग्राफी एव अन्य तकनीकी का गलत उपयोग, कठोर कानून का अभाव, संस्कार रीति-रिवाज में पुरूषों की प्रधानता, पति को भगवान का दर्जा देना, अपने अधिकार के लिए नहीं लड़ना, परिवार कल्याण की अवधारणाओं से अपरिचित होना, सामाजिक विघटन, व्यवसायिक क्षेत्रों में महिलाओं की नगण्यता, पुत्र को बुढ़ापे का सहारा मानना, मृत्यु के बाद पिण्डदान करने की प्रथा का होना भी पुत्र की चाह को बढ़ाते है। इसके अतिरिक्त अश्लील अनैतिक वातावरण में कन्या की सुरक्षा व जोखिम, महिलाओं के विरूद्ध होने वाले अपराध, पितृसत्तात्मक ढांचे में स्त्रियों को निर्बल, निम्न, हेय मानना भी बालिका हत्या के लिए उत्तरदायी है। और चिकित्सक भी दोषी है, जिनकी संवदेनशीलता अनैतिक और धन-लिप्सा असीमित हो गई है। भ्रूण का गर्भपात केवल उन परिस्थितियों में ही किया जाए जब गर्भस्थ शिशु के कारण माँ का जीवन खतरे में हो, मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य का खतरा हो, बच्चा गंभीर रूप से विकलांग हो, गर्भ बलात्कार के कारण हुआ हो, परिवार नियोजन असफल हुआ हो।

महिलाओं पर हिंसा :-

- **भ्रूण काल :-** लिंग जांच के लिए दबाव या ज्यादती, भ्रूण हत्या के लिए दबाव
- **शिशु काल-** शिशु हत्या की शिकार, कुपोषण एवं कम भोजन मिलना।
- **बाल्यावस्था :-** स्वास्थ्य, शिक्षा में भेदभाव, शारीरिक हिंसा
- **किशोरावस्था :-** कम उम्र में विवाह का बोझ, गर्भधारण में पति की मनमानी ओर घरेलू हिंसा
- **विधवा/वृद्धावस्था :-** परित्याग का सामना, भावनात्मक एवं सामाजिक उपेक्षा की शिकार

प्रसव पूर्व जाँव एवं तकनीकी अधिनियम एवं दण्डात्मक प्रावधान -

गर्भधारण पूर्व एवं प्रसव पूर्व निदान तकनीकी अधिनियम 1994 के अंतर्गत भ्रूण लिंग परीक्षण कराना कानूनन अपराध है यदि कोई चिकित्सक द्वारा इस तरह का परीक्षण पाया जाता है तो उसे 3-5 साल तक सजा एवं जुर्माना हो सकता है जो व्यक्ति गर्भवती महिला को लिंग परीक्षण के आधार पर गर्भ समापन के लिए जाती है तो वह भी दण्ड की भागीदार होगी।

राज्य में कानून को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए प्रदेश में संचालक, लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, राज्य स्तर पर तथा जिला मजिस्ट्रेट, जिला स्तर पर सक्षम अधिकारी है लिंग निर्धारण करने वाले डॉक्टरो एवं तकनीशियनों की सूचना अपने जिले के सक्षम प्राधिकारी जिला मजिस्ट्रेट को तत्काल दे। सक्षम अधिकारी शिकायत मिलने के उपरान्त जिसके खिलाफ शिकायत प्राप्त हुई है उसके विरूद्ध कार्यवाही कर सकते है।

कई स्थानों पर कानून बनाने के बावजूद भी भ्रूण परीक्षण किए जा रहे है, एवं कन्या भ्रूण हत्या में भी कमी नही आ रही है। चिकित्सक भी अपनी रिपोर्ट में भ्रूण की स्थिति व स्वास्थ्य का उल्लेख करते हे और लिंग की जानकारी मौखिक रूप से देते हें।

कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए कुछ प्रयास पारिवारिकता स्तर, ओर सामाजिक स्तर पर भी होना आवश्यक है।

* सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान), शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

अपने परिवार की कन्या की शिक्षा, भोजन, देखभाल पर पूरी तरह ध्यान दे। परिवार के निर्णय में महिलाओं को भी शामिल करे। घर में कन्याओं एवं महिलाओं पर हिंसा की घटनाओं को रोके। कन्या भ्रूण हत्या न होने दे, विधवा/परित्यक्ता महिलाओं का सम्मान करे उन्हे सामाजिक कार्यक्रमों में हिस्सा लेने के लिए प्रेरित करे।

कम उम्र में विवाह को रोके, हिंसा का एक कारण समाज में दहेज जैसी कुप्रथा का होना भी है, इसलिए दहेज प्रथा का विरोध करें। महिलाओं के लिए बने कानूनों की जानकारी ले और घर परिवार व समाज में लागू करने की पहल करें, तथा समाज को भी इसकी जानकारी से समृद्ध करें की लड़की बोझ नहीं है। लड़की को अवसर मिले तो माता-पिता, सास-ससुर व बच्चों की अच्छी देखभाल के साथ लड़के की तुलना में भी वह कुछ करके दिखा सकती है समाज को बताये कि लड़की के जन्म होने पर माँ को प्रताड़ित न किया जाये कि क्योंकि लड़का पैदा हो या लड़की इसका निर्धारण के पुरूष के गुण सुत्र करते है इसके लिए पिता ही जिम्मेदार होता है।

सरकारी प्रयास :-

दिनांक 27.12.2012 को समाचार पत्र-पत्रिका द्वारा बताया गया कि किसी भी सरकारी अस्पताल में हुए गर्भपात में अगर कन्या भ्रूण निकलता है तो उसकी जांच की जायेगी। गर्भपात से महिला की मेडिकल रिपोर्ट की जांच की जाये और दोनों जांच रिपोर्ट में अंतर मिलने पर संबंधित डॉ. व महिला के विरूद्ध मेडिकल टर्मिनेशन ऑफ प्रेगनेंसी एक्ट के उल्लंघन का मामला दर्ज किया जायेगा। राज्य सरकार ने घटते शिशु लिंगानुपात को नियंत्रित करने और कन्या भ्रूण हत्या को रोकने के लिए यह व्यवस्था की गयी है।

कन्या भ्रूण हत्या को रोकने हेतु सुझाव :-

- नेताओं, पत्रकारों, मीडिया और जनसाधारण को विभिन्न जन आंदोलनों एवं अभियानों के माध्यम से इस सामाजिक बुराई को खत्म करना चाहिए।
- कार्यशालाएं आयोजित की जानी चाहिए।
- भ्रूण हत्या और बालक-बालिका के भेदभाव को मिटाने का संकल्प लेना चाहिए।
- स्त्री शिक्षा पर जोर देना चाहिए।
- बालिकाओं के लिए मुफ्त शिक्षा, चिकित्सा होना चाहिए।
- स्त्रियों का शोषण करने वालों को कठोर दण्ड देना चाहिए।
- भ्रूण परीक्षण और हत्या पर रोक का संदेश मीडिया द्वारा जनसाधारण तक पंहुचाया जाना चाहिए।
- वंश वृद्धि अथवा पुत्र की चाह की मनोवृत्ति को बदलना चाहिए।
- धर्माचार्यो को इस दिशा में समाज से आह्वान करना चाहिए।
- स्त्रियों को हीन भावना छोड़कर अपनी क्षमताओं का विकास करना चाहिए।

सन्दर्भ :-

1. रविन्द्र नाथ मुखर्जी - भारतीय समाज व संस्कृति, विवेक प्रकाशन, दिल्ली।
2. डॉ. रमेंश चौबे - सामाजिक, संस्कृति, मानव विज्ञान, म.प्र. हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
3. ए.आर. देसाई - भारतीय राष्ट्रवाद 1995 की अधुनातक प्रवृत्तियां।
4. समाज कल्या (2004)
5. लड़की बोझ नही, उपहार है - समाज कल्याण (फरवरी 2004)
6. राज्य स्वास्थ्य सूचना शिक्षा संचार - लोक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग।
7. समाचार पत्र (27.12.2012 अंक)
8. समाज कल्याण अक्टूबर 2006

****

महाविद्यालय स्तर के किशोर-किशोरियों की पर्यावरणीय जागरूकता का तुलनात्मक अध्ययन

कु.शारदा भिण्डे *

मानव के चारों तरफ फैले हुए वातावरण को पर्यावरण की परिधि में माना जाता है। मानव जन्म लेने से मृत्यु तक पर्यावरण में ही रहता है। इसी में वह वैयक्तिक एवं सामाजिक क्षेत्रों में विकास करता है। यदि उसे अच्छा वातावरण नहीं दिया गया तो वह स्वस्थ मानव के रूप में स्वस्थ नागरिक नहीं बन सकता। व्यक्ति को चारों और से ढँकने वाला आवरण ही ''पर्यावरण'' है। मानव एक सामाजिक प्राणी है वह अपने समाज के सदस्यों की जिम्मेदारी के सामूहिक कर्तव्यों व दायित्वों का निर्वहन करता हैं। इसके लिए अपने अनुकूल क्षेत्रों का चुनाव करता है और सम्पूर्ण समाज की आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्यावरण पर प्रभाव डालता है और प्रकृति के साधनों का अपने अनुकूल उपयोग करता है। इस प्रकार प्रकृति और समाज की अन्तर्क्रिया सामाजिक पारिस्थिति की कहलाती है। मानव समाज की अन्तर्क्रिया में जनसंख्या, विकास का स्तर, सांस्कृतिक विरासत, रीति-रिवाज, धार्मिक-मनोवैज्ञानिक विचार, ज्ञान-विचार और तकनीकि उपलब्धियाँ आधारभूत कारक हैं। जिनके आधार पर मानव समाज के भौतिक परिवेश से अन्तर्क्रिया कर सांस्कृतिक प्रदेश की रचना करता है। क्षेत्रीय स्तर पर मानव समाज विकसित, विकासशील और अविकसित स्तरों में बँट जाने से सांस्कृतिक परिमण्डलों का निर्माण करता है। इन परिमण्डलों की विशिष्टताएँ मानव-पर्यावरण के प्रति काफी संवेदनशील हैं प्रकृति ने विपरीत पर्यावरणीय परिस्थितियों में कुछ सीमा तक समायोजन और अनुकूलन की क्षमता प्रदान की है। प्राकृतिक संसाधनों की उपलब्धताऔर उचित उपयोग वायु, जल, भूमि इनके प्रदूषण के कारण और निवारण ध्वनि प्रदूषण, बढ़ती जनसंख्या, शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, ग्रीन हाउस प्रभाव, ओजोन-परत का नम भूमि और बंजर भूमि की समस्याऐं,स्वचलित वाहनों से प्रदूषण, पर्यावरणीय कानून ऊर्जा और उसके वैकल्पिक-स्त्रोतों, राष्ट्रीय पर्यावरणनीति और पर्यावरणीय शिक्षा आदि से विचार बिन्दू हो सकते हैं, जिन पर हमें शान्ति से सोचना है तथा उन पर जन साधारण की जिम्मेदारी निश्चित करनी हैं। हमारा सुन्दर भविष्य हमारे अपने उत्तरदायित्व को निभाने में निहित है। पर्यावरण के क्षेत्र में अनेक समस्याएँ हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख हैं-

1. विश्व-तापन 2. अम्लीय वर्षा
3. ओजोनपरत की क्षीणता 4. स्पोग

उद्देश्य-

1. महाविद्यालय स्तर के किशोर-किशोरियों की पर्यावरणीय जागरूकता का अध्ययन करना।
2. महाविद्यालय स्तर के विज्ञान समूह और कला समूह के किशोर-किशोरियों में पर्यावरणीय जागरूकता का अध्ययन करना।
3. महाविद्यालय स्तर के किशोर-किशोरियों में पर्यावरण संरक्षण, पेड़-पौधों एवं जीव-जन्तुओं का महत्व एवं उपयोगिता के प्रति जागरूकता का अध्ययन करना।

उपकल्पना-

1. महाविद्यालय स्तर के विज्ञान समूह के किशोर एवं कला समूह के किशोरियों की पर्यावरणीय जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
2. महाविद्यालय स्तर के विज्ञान व कला समूह की किशोरियों की पर्यावरणीय जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।
3. महाविद्यालय स्तर के विज्ञान तथा कला समूह के किशोर किशोरियों की पर्यावरणीय जागरूकता में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया।

शोधप्रविधि-

प्रस्तुत शोध हेतु यादृच्छि की न्यादर्श (Random Sampling) का प्रयोग किया गया। प्रस्तुत शोध कार्य में निदर्शन का चयन इन्दौर शहर के महाविद्यालय स्तर के किशोर-किशोरियों पर किया गया है। इस हेतु 4 महाविद्यालय से 50 किशोर तथा 50 किशोरियों को चुना गया है। जिसमें कला तथा विज्ञान समूह के किशोर-किशोरियों को समान रूप से सम्मिलित किया गया है।

विधि तथा उपकरण-प्रस्तुत शोध अध्ययन हेतु सर्वेक्षण विधि तथा स्वनिर्मित प्रश्नावली उपकरण का प्रयोग किया गया है।

सांख्यिकीय प्रविधियाँ-संकलित प्रदत्तों का विश्लेषण करने के लिए मध्यमान, मानक विचलन, क्रांतिक अनुपात तथा काई वर्ग सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग किया गया है।

परिणाम - सर्वेक्षण के आधार पर कार्यों का विश्लेषण-

1. विज्ञान समूह के किशोर एवं कला समूह के किशोरियों के तुलनात्मक परीक्षण के बाद क्रांति जो कि 0.01 सार्थकता स्तर के मान 2.63 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के मान 1.98 दोनों से अधिक है। अत: दोनों सार्थकता स्तर पर प्रथम उपकल्पना अस्वीकृत हुई है।
2. विज्ञान समूह एवं कला समूह की किशोर-किशोरियों के तुलनात्मक परीक्षण के बाद क्रांतिक अनुपात (C.R.) कामान 9.80 प्राप्त हुआ है जो कि 0.01 सार्थकता स्तर के मान 2.63 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के मान 1.98 दोनों से अधिक हैं। अत: दोनों सार्थकता स्तर पर हमारी द्वितीय शून्य उपकल्पना अस्वीकृत हुई है।
3. विज्ञान समूह एवं कला समूह के तुलनात्मक परीक्षण के बाद क्रांतिक अनुपात (C.R.) मान 13.45 प्राप्त हुआ है जो कि 0.01 सार्थकता स्तर के मान 2.60 तथा 0.05 सार्थकता स्तर के मान 1.97 दोनों से अधिक है। अत: दोनों सार्थकता स्तर पर हमारी तृतीय शून्य उपकल्पना अस्वीकृत की जाती है।

निष्कर्ष-

1. प्रथम शून्य उपकल्पना अस्वीकृत होती है, अत: विज्ञान एवं कला समूह के किशोरों की पर्यावरणीय जागरूकता में सार्थकता अन्तर पाया जाता है।
2. द्वितीय शून्य उपकल्पना असत्य सिद्ध होती है, अत: इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विज्ञान समूह एवं कला समूह की किशोरियों की पर्यावरणीय जागरूकताओं में सार्थक अन्तर पाया जाता है।
3. तृतीय शून्य परिकल्पना भी अस्वीकृत होती है, इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि विज्ञान एवं कला समूह के किशोर-किशोरियों की पर्यावरणीय जागरूकता में सार्थक अन्तर पाया जाता है।

सुझाव-

1. प्रत्येककिशोर-किशोरियों को पर्यावरण क्लब का सदस्य बनना चाहिए।
2. किशोर-किशोरियों को पर्यावरण से संबंधित प्रतियोगिता में भाग लेना चाहिए।
3. किशोर-किशोरियों को अपने महाविद्यालय में उपस्थित जीव-जन्तु तथा पादप संरक्षण करना चाहिए।
4. किशोर-किशोरियों को अपने महाविद्यालय में वृक्षारोपण करना चाहिए।
5. विद्यार्थियों को वृक्षों एवं जीवों का महत्व समझाते हुए उन्हें पर्यावरण संरक्षण के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।
6. महाविद्यालयों में पर्यावरण से संबंधित प्रश्न मंच, भाषण, निबन्ध लेखन, चित्रकला इत्यादि प्रतियोगिता का आयोजन करना चाहिए।
7. वर्ष मे एक बार आवश्यक रूप से सभी छात्रों को शिक्षण भ्रमण पर ले जाने की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे विद्यार्थी पर्यावरण के प्रति जागरूक हो सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. शर्मा डॉ. टी.सी. : पर्यावरणशिक्षा, रजत प्रकाशन, नईदिल्ली, प्रथम संस्करण, 2008
2. सती विश्रम्भ प्रसाद: पर्यावरण और कानून, आविष्कार पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर (राजस्थान)
3. व्यास, हरिशचन्द्र : पर्यावरण शिक्षा, विद्याविहार, नईदिल्ली
4. गर्ग, राजीव: पर्यावरण शिक्षा, अभिराम प्रकाशन, नई दिल्ली-1
5. कपिल एच.के.: अनुसंधान विधियां, हरप्रसाद भार्गव, आगरा।
6. श्रीवास्तव डी.एन. : अनुसंधान विधियां, साहित्य प्रकाशन, आगरा।

* पी.एच.डी. शोधार्थी, (गृह विज्ञान) माताजीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

शिक्षा के क्षेत्र मे महिलाओं की स्थिति

डॉ.रश्मि वर्मा *

मानव के प्रारम्भिक इतिहास पर नजर डाले तो मानव जाति की दैनिक जीवन की क्रियाएं अत्यन्त कम होने के कारण जीवन सरल एवं सहज था । क्रमश: मानव जाति सभ्यता एवं विकास की ओर अग्रसर हुई तो मानवीय क्रियाओं मे वृद्धि होने लगी ओर शिक्षा के महत्व को समझा गया । जीवन की जटिलताओं ओर विज्ञान के विकास से मानव उन्नति के शिखर पर पहुंच गया। किंतु इस प्रक्रिया सम्पूर्ण घटनाक्रम मे अधिकांश महिलाएं प्रथम सीढ़ी पर ही रह गयी । शहर एवं ग्रामीण दोनो ही क्षेत्रों मे महिलाएं आर्थिक , सामाजिक ,सांस्कृतिक धरातल पर शोषण का शिकार हुई । इन समस्त शोषण का मूल आधार स्त्रियों मे शिक्षा की कमी पायी गयी । महिलाओं मे ज्ञान शिक्षा के अभाव के कारण आत्मविश्वास की कमी आयी और वे स्वयं की समस्याओं का समाधान स्वत: नही खोज पायी और पुरूष वर्ग के अधीनस्थ होती चली गयी ।

वर्तमान मे शिक्षा का महत्व बढ़ गया है । महिला एवं पुरूष दोनो की शिक्षा पर समाज एवं विधिक द्वारा जोर दिया जाता है परन्तु व्यवहारिक रूप मे पुरूष की शिक्षा को महिला से अधिक महत्व समाज द्वारा दिया जाता है । परिवारों में बेटे की पढ़ाई हेतु अधिक सुविधायें प्रदान की जाती हैं । बेटी की पढ़ाई असुविधाजनक होती है एवं अनेक परिवार इसे व्यर्थ ही मानते है । वे शिक्षा को नोकरी प्राप्त करने का जरिया मानते हैं जबकि महिला को पराया धन कहकर शिक्षा मे अवरोध पैदा किया जाता है । दहेज एवं विवाह संबंधी समस्याओं के डर से भी महिला शिक्षा मे व्यवधान उत्पन्न होता है । निर्धन वर्ग मे माता पिता दोनो ही मजदूरी कर परिवार का भरण पोषण करते है । अत: यदि घर पर बेटि है तो और वह शाला के सुख से वंचित रह जाती है ।

जनगणना वर्ष 1901 से 2001 तक साक्षरता दर मे निरन्तर वृद्धि हुई है । तथापि महिला एवं पुरूषों की साक्षरता दर का अन्तर बढ़ता गया है । वर्ष 1901 मे जहां अन्तर 9.23 था वहीं वर्ष 2001 मे यह बढ़कर 21.59 हो गया । इन आंकडों से पता लगता है कि साक्षरता दर मे भले ही वृद्धि हुई है, परन्तु महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति मे गिरावट आयी है । यह इस बात का प्रतिक है कि महिलाओं को देश मे उपलब्ध शैक्षणिक सुविधाओं को प्राप्त करने मे पुरूषों से पीछे रहना पड़ता है ।

भारत मे साक्षरता दर की स्थिति मे अत्यधिक असमानताएं दिखाई देती है । 2001 की जनगणना के आधार पर सर्वाधिक साक्षरता वाले प्रदेशों मे केरल ,लक्षद्विप एवं मिजोरंम क्रमश:94.24% ,92.53% एवं 90.72% पुरूष साक्षरता एवं महिला 87.72% ,80.47% एवं 86.75% के साथ क्रमश: प्रथम द्वितीय एवं तृतीय स्थान पर है ।

स्कूल में पर्जीकरण अनुपात :-

भारत मे अनेक आर्थिक एवं सामाजिक कारणों से प्राय: बच्चें प्राथमिक शिक्षा भी ग्रहण नही कर पाते है । प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करना तो दूर अधिकांश गांवो मे बच्चे विद्यालय मे अपना पंजीकरण ही नही करवा पाते है । आंकड़ों से पता चलता है कि स्वतंत्रता प्राप्ति के समय 6 से 11 वर्ष की आयु के 3 बच्चों मे से केवल एक बच्चा पंजीकृत होता था अर्थात कुल बच्चों की संख्या का 1/3 तथा 11 से 14 वर्ष की आयु मे 11 मे से केवल एक बच्चा अर्थात 1/11 भाग विद्यालय मे अपना पजींयन करवाता था। 2007-2008 मे प्राथमिक , माध्यमिक एवं हायर सेकेण्डरी स्तर पर 100 बालको के अनुपात मे बालिकाओं का पंजीकरण क्रमश: 80%,67% एवं 58% रहा जो यह दर्शाता है कि शैक्षणिक स्तर के बढ़ने साथ- साथ बालिकाओं का स्कूल मे पंजीकरण प्रतिशत क्रमश: कम हो रहा है । इसी प्रकार बीच मे पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चों की स्थिति से स्पष्ट होता है कि 2007-2008 मे प्राथमिक,माध्यमिक एवं हायर सेकेण्डरी स्तर पर बीच मे पढ़ाई छोडने वाले बालकों का प्रतिशत क्रमश: 25.7% , 43.7% एवं 56.6% रहा जबकि बालकों के अनुपात मे बालिकाओं का प्रतिशत क्रमश: 24.4%, 41.3% एवं 57.3% रहा जिससे स्पष्ट होता है कि जैस-जैसै शैक्षणिक स्तर बढता है बीच मे पढ़ाई छोडने वाले बालको की अपेक्षा बालिकाओं का प्रतिशत बढ़ रहा है ।

अध्ययन के उद्देश्य :-

प्रस्तुत शोध कार्य के निम्नलिखित उद्देश्य है ।

(1) स्कूल शिक्षा मे गुणवत्ता लाने के लिए केन्द्र एवं प्रदेश सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं की सफलता एवं असफलताओं का तुलनात्मक अध्ययन समय अन्तराल के सन्दर्भ मे करना ।

(2) स्कूल शिक्षा मे गुणवत्ता लाने के लिए केन्द्र एवं प्रदेश सरकार द्वारा चलाई जा रही विभिन्न योजनाओं की असफलताओं के कारणों का पता लगाना ।

(3) विभिन्न स्कूलों मे आधारभूत शैक्षणिक सुविधाओं का अवलोकन करना ।

(4) बालिकाओं की स्कूल शिक्षा मे बाधक विभिन्न कारकों का पता लगाना ।

(5) प्रदेश सरकार द्वारा बालिका शिक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से चलायी जा रही विभिन्न योजनाओं का मूल्यांकन करना ।

(6) बीच मे पढ़ाई छोड़ने वाले बच्चों का प्रतिशत एवं कारणों का पता लगाना ।

शोधविधि -

प्रस्तुत शोध कार्य मे तथ्य संकलन हेतु द्वितीयक स्त्रोत का उपयोग किया गया है जिसके अन्तर्गत विभिन्न अन्तरालों की जनगणना रिपोर्ट , मानव विकास सूचकांक एवं विभिन्न शोधकर्ताओं द्वारा किये गये शोध कार्यो के परिणामों को आधार बनाया गया है ।

निष्कर्ष एवं परिणाम :-

स्कूल शिक्षा मे बालिकाओं की वर्तमान स्थिति के लिए पारिवारीक ,सामाजिक ,आर्थिक सास्कृंतिक ,भौगोलिक एवं राजनेतिक कारक जिम्मेदार है । जो प्रत्यक्ष रूप से बालिकाओं की स्थिति को कमजोर बना रहे हे । यह कारक घर से लेकर स्कूल तक अलग-अलग रूपो मे अपना प्रभाव छोड़ते है । बालिकाओं की शिक्षा मे बाधक मुख्य कारक निम्नानुसार है ।परिवार की आय ,परिवार का आकार ,बच्चों की आयु ,परिवार के रहने का स्थान गाँव / शहर ,परिवार का प्रकार ,माता पिता का व्यवसाय ,बच्चों का लिंग , अभिभावकों की बच्चों से उच्च शैक्षणिक अपेक्षाएं ,परिवार का आर्थिक सामाजिक स्तर ,बच्चों की बौद्धिक क्षमता,परिवार की जाति,परिवार के

* सहायक प्राध्यापक (गृहविज्ञान) श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

सदस्यों का शैक्षणिक स्तर विशेषकर माता पिता की शिक्षा, परिवार प्रमुख की आयु ,परिवार के पास उपलब्ध साधन, भौगोलिक कारक, आधारभूत शैक्षणिक सुविधाओं का अभाव, अपने अधिकारों के प्रति जागरूकता मे कमी, सहन करनें की प्रवृति एवं महिलाओं पर बढते शारीरिक और मानसिक अत्याचार आदि ।

मानव विकास सूचकांक के अनुसार यदि हम गुणवत्ता पूर्ण जीवन की बात करते है तो उस स्थिति मे परिवार मे महिला का शिक्षित होना बहुत जरूरी है । क्योंकि शिक्षा हमारे सामने कई ऐसे विकल्प उपलब्ध कराती है जो हमारी जीवन की गुणवत्ता के लिए अत्यंत आवश्यक है, क्योंकि विभिन्न शोध के परिणामों से यह ज्ञात होता है कि यदि हम बालिका को शिक्षित करते है तो वह हमारे पूरे समाज को न सिर्फ शिक्षित करती है, इसके साथ वह अपने परिवार के जीवन स्तर मे बढलाव लाती है उसके स्वयं के निर्णय करने की क्षमता का विकास होता है। परिवार की आय, परिवार के आकार संरचना मे परिवर्तन आता है। वह स्वयं अपने व अपने परिवार के सदस्यों के स्वास्थ व पोषण के प्रति जागरूक होती है । घरेलू हिंसा मे कमी लाने का प्रयास करती है। शिक्षित महिला अपने बच्चों को पूर्ण रूप से विकसित होने के लिए सकारात्मक वातावरण प्रदान करती है ।

भौगोलिक दशा एवं उपलब्ध साधन विशेषकर आधारभुत शैक्षणिक सुविधाओं की कमी भी बालिकाओं की शिक्षा मे बाधा के साथ-साथ बालिकाओं के बीच मे हि पढ़ाई छोड़ने के मुख्य कारण है । वर्ष 2005 मे किये गये सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि भारत के लगभग 38 % स्कूल ऐसे है जिनके पास स्वयं का भवन नही है । 58% प्रतिशत स्कूलो मे पीने के पानी की पर्याप्त व्यवस्था नही है, 58% स्कूलों में कॉमन शौचालय है लड़कियों के लिए अलग शौचालय की व्यवस्था नही है । 13% स्कूल ऐसे है जहॉ कोई महिला शिक्षिका नही है। 11% ऐसे स्कूल है जहॉ केवल 01 कमरा उपलब्ध है उसी में सभी पढ़ने-पढ़ाने की गतिविधियां होती है। 50% स्कूल ऐसे है जहॉ प्रधान अध्यापक उपलब्ध नही है । 10% प्रतिशत स्कूल ऐसे है जहॉ शैक्षणिक कार्य हेतु ब्लेक बोर्ड उपलब्ध नही है ।

इसी प्रकार 70 छात्रों पर एक शिक्षक उपलब्ध है जो छात्र शिक्षक के असन्तुलित अनुपात को दर्शाता है जो कि शिक्षा के गुणात्मक स्तर मे कमी के लिए जिम्मेदार नकारात्मक कारक है। कुछ ऐसे कारक भी हैं जो शिक्षा के क्षेत्र मे बालिकाओं की स्थिति मे सकारात्मक परिवर्तन ला सकतें है जैसै अच्छा स्कूल प्रबंधन ,समुदाय का सहयोग एवं छात्र शिक्षक अनुपात मे सन्तुलन आदि। सरकार द्वारा बालिकाओं की शैक्षिक स्तर को बढाने के उद्देश्य से कई योजनाऐं लागू की गई है जिनका प्रत्यक्ष लाभ शिक्षक एवं अभिभावक की जागरूकता मे कमी के कारण बच्चों को नही मिल पाता। बालिकाओं की उच्च शिक्षा मे उपस्थिति बढाने के उद्देश्य से सरकार द्वारा विभिन्न योजनाए चलाई जा रही है जैसै प्रतिभा किरण , आवागमन सुविधा, गाँव की बेटी योजना एवं अन्य छात्रवृत्तियां जो जाति आधार पर दी जाती है । हम पूर्व मे चर्चा कर चुके हे कि शैक्षणिक स्तर के बढ़ने के साथ साथ बालकों की अपेक्षा बालिकाओं के पजींकरण का प्रतिशत कम होता जाता है जिसके परिणामस्वरूप महाविद्यालय तक पहुचने वाली बालिकाओं का प्रतिशत बहुत कम हो जाता है और इस कारण बहुत सारी बालिकाऐं उपरोक्त छात्रवृत्तियों एवं अन्य सुविधाओं से वंचित रह जाती हैं ।

परिवार का सामाजिक आर्थिक स्तर एवं अभिभावकों के शैक्षणिक स्तर ऐसे महत्वपूर्ण कारक है, जो बच्चों की शिक्षा को प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव डॉलते है। आधारिय संरचनात्मक ढांचे मे भी परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। स्कूल को बालिका तक पहुचाने का प्रयास किया जाना है। सरकार द्वारा लागू की गई विभिन्न योजनाओं के बारे मे सभी को जानकारी देने की आवश्यकता है। इसके साथ-साथ अधिक से बालिकाओ का स्कूल मे नामांकन कराने के प्रयास करना होगें।

संदर्भ:

* www.censusindia.gov.in/2001, 2011 census
* www.humandevelopmentreport.gov.in2010
* www.humandevelopmentreport.gov.in2011,2012,2013
* www.humandevelopmentreport.gov.in2010,2011,2012, 2013

****

भोजन की गुणवत्ता

श्रीमती प्रीति गुप्ता *

भोजन केवल भूख ''शान्त'' करने मात्र के लिए न होकर वरन् व्यक्ति की शारीरिक मानसिक सामाजिक स्वस्थता के लिए होता है। इस दृष्टि से हमारा ध्यान भोजन की पौष्टिकता की तरफ ही जाता है। परन्तु भोजन में मिले हानिकारक दूषित पदार्थ प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में भोजन की पौष्टिकता को कम या नष्ट कर रहे है, तो फिर उचित पोषक तत्वों से युक्त भोजन भी शरीर को कैसे स्वस्थ रख पायेगा ? भारतीय जनता अपनी आय का 50 प्रतिशत भाग भोजन पर व्यय करती है। अत: आवश्यक हो जाता है कि उन्हे बाजार से उचित गुणवत्ता वाले खाद्य पदार्थ प्राप्त हो सके ।

भोज्य पदार्थ विक्रेता स्व लाभ हेतु भोज्य पदार्थ का वजन बढ़ाने हेतु जानबूझकर निम्न कोटि के पदार्थ या अखाद्य वस्तुए मिला देता है। उदाहरण- काफी पाउच में भूनी हुई इमली के बीज का पाउडर या शक्कर, नमक आदि में सफेद बालू अथवा भोज्य पदार्थ को आकर्षक रूप देने के लिए हानिकारक विषैले रंगों का प्रयोग करता है। उदाहरण- खेसारी दाल में पीला रंग लगाकर अरहर की दाल में मिलावट या धनिया, मिर्च, हल्दी, मिठाई आदि में विभिन्न रंग मिलाकर उन्हे आकर्षक रंग प्रदान किया जाता है अथवा कुछ भोज्य पदार्थो का सारतत्व निकाल लेते है। उदाहरण- तेल निकली हुई लौंग व बादाम अथवा कुछ तत्व इन्जेक्शन के द्वारा डाल देते है। उदाहरण- फलों का रस व मिठास बढाने के लिए पानी व सेक्रीन का इन्जेक्शन ।

जानबूझकर की जाने वाली मिलावट के अलावा कई बार भोज्य पदार्थो में अपने आप आकस्मिक रूप से मिलावट हो जाती है। उदाहरण- फसल को कीटों से बचाने के लिए अथवा अधिक फसल उत्पादन के लिए जो रासायनिक पदार्थो का प्रयोग किया जाता है उनके अवशेष खाद्य पदार्थो में रह जाते है। जो स्वास्थ्य के लिए खतरनाक होते है, इसी प्रकार पॉलीइथलिन व पोलीविनाईल क्लोराइड आदि से निर्मित पेकिंग पदार्थ कुछ विशेष प्रकार के खाद्य पदार्थ से क्रिया कर स्वास्थ्य के लिए हानिकारक पदार्थ तैयार कर देते है। मिलावट किसी भी तरह से हुई हो, भोज्य वस्तु के मौलिक रूप व गुण में परिवर्तन लाती हो । निश्चित ही स्वास्थ्य के लिए खतरनाक है।

अपने दैनिक प्रयोग की वस्तुओं के शुद्धिकरण की जॉच छोटे सरल प्रयोगों द्वारा हम स्वयं भी कर सकते है। उदाहरण के लिए चाय पत्ती, धनिया, शहद, हींग, शक्कर, नमक को ठण्डे पानी से भरे हुए कांच के अलग अलग गिलास में डालेगें अगर चायपत्ती व धनिये में बुरादा मिला होगा तो वह उपर आ जायेगा और अगर रंग मिला होगा तो पानी रंगीन हो जायेगा । शहद की बूंद बिना घुले सीधे गिलास के तल में जम जाये तो शहद शुद्ध है अगर पानी में घुले तो अशुद्ध है। हींग पानी में आसानी से घुलकर दूधिया रंग दे तो शुद्ध और अगर देर से घुले या दूधिया के अतिरिक्त अन्य कोई रंग आये या कुछ पदार्थ गिलास में नीचे बैठ जाये तो गोन्द या राल मिली हो सकती है। शक्कर, नमक पानी में घुल जाते है कुछ अवशेष नही बचता है तो वह शुद्ध है। लाल मिर्च पाउडर को सफेद रंग के कागज पर रखे अगर तत्काल गहरा लाल रंग कागज पर आये तो वह मिलावटी है। हल्दी पर फर्श साफ करने का एसिड डाले तो हल्दी का रंग ज्यादा गहरा हो जाये मतलब हल्दी में उपर से रंग लगाया गया है। मावे को हाथ पर रगडे अगर चिपके तो मिलावटी होगा । इस प्रकार इन सरल परीक्षणों से खाद्य वस्तुओं में मिलावट का आभास होते ही स्वास्थ्य अधिकारी तथा आहार निरीक्षकों को सूचित किया जाना चाहिए उनके द्वारा इन खाद्य पदार्थो का प्रयोगशाला में परीक्षण करवाया जाता है। ये परीक्षण नगर निगम की अथवा राज्य सरकार द्वारा स्थापित फूड एण्ड ड्रग्स एडमिनिस्ट्रेशन लेबोरेटरीज अथवा भारत सरकार द्वारा स्थापित केन्द्रीय भोज्य पदार्थ परीक्षण प्रयोगशाला अथवा निर्यात निरीक्षरण परिषद द्वारा स्थापित प्रयोगशाला अथवा निजी प्रयोगशालाओं में करवाया जाता है।

मिलावट की रोकथाम के लिए भारत सरकार ने 1954 में '' भोज्य पदार्थो में मिलावट की रोकथाम की धारा '' (P.F.A. Act, Prevention of food adulteration) लागू की ।

इस धारा के अर्न्तगत मिलावट किये हुए भोज्य पदार्थ का न सिर्फ निर्माण और वितरण बल्कि विशाक्त पदार्थों से दूषित भोज्य पदार्थ और नकली भोज्य पदार्थ बेचना भी प्रतिबंधित है। इसके तहत खाद्य पदार्थो की गुणवत्ता को उचित बनाये रखने के लिए खाद्य मानक (Food Standards) तथा खाद्य पदार्थो में एन्टी आक्सीडेन्ट, इम्लीस फाइंग एजेन्ट, स्टेबलाईजिंग एजेन्ट रंग, संरक्षक पदार्थो की सीमा भी निर्धारित की गई है। जिनका पालन करना उत्पादकों व व्यापारियों दोनों के लिए अनिवार्य है। अगर कोई इस धारा का उल्लघंन करते पाया गया अर्थात मिलावट प्रमाणित होती है तो एक हजार रूपये जुर्माना तथा 2 माह से 2 साल तक की सजा होती है।

1954 के बाद 1955 में आवश्यक वस्तु अधिनियम के तहत केन्द्र सरकार ने '' फल उत्पाद आदेश '' (F.P.O. Friut Production order) जारी किया जो समस्त भारत के लिए लागू है। जिसके अर्न्तगत F.P.O. मानक तैयार किये गये है। जिनका उद्धेश्य किसी भी फल तथा वनस्पति संबंधी वस्तुओं की उस न्यूनतम गुणवत्ता और स्तर को बनाये रखना है जिसे खेती, निर्माण और विक्रय के लिए स्वीकार किया जा सकता है।

F.P.O. चिन्हित वस्तुओं में निम्न जानकारी युक्त लेबल लगाना आवश्यक है। वस्तु का नाम, निर्माता, फर्म का नाम व पता, उत्पाद के अवयव व उनकी मात्रा, निर्माण तिथि, वस्तु के खारिज होने की तिथि, (Date of expiry) मूल्य, प्रतीक चिन्ह (emblem or logo) उपयोग विधि, लाईसेन्स संख्या और चेतावनी । इनमें से कोई भी त्रुटिपूर्ण जानकारी हेतु शिकायत की जा सकती है।

उपरोक्त वर्णित वैधानिक स्तरों के अलावा बाजार में बिकने वाले भोज्य पदार्थो की विभिन्न श्रेणीयों के स्तर निश्चित करने के लिए दो अन्य संगठनों द्वारा कुछ मानक तैयार किये गये है ये मानक स्तर अनिवार्य नही है परन्तु ये भोज्य पदार्थ की उच्च गुणवत्ता को दशति है। इनमें से एक है भारतीय मानक संख्या (Indian Standard Institution I.S.I.) जिसे 1947 में स्थापित किया गया था । उत्पादन कर्ताओं और उपभोक्ताओं को राष्ट्रीय तथा अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर सही वस्तुओं के निर्माण और उपलब्धि को और वस्तुनिष्ठ तथा व्यापक बनाने की दिशा में और आगे बढ़ाने हेतु इस संस्था को ब्यूरो ऑफ इण्डियन स्टेन्डर्डस एक्ट 1982 के अर्न्तगत ले लिया गया तथा संस्था को नया नाम '' भारतीय मानक ब्यूरो '' (Bureau of Indian

* सहायक प्राध्यापक गृह विज्ञान, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

standards) दे दिया गया तभी से इसे संक्षिप्त रूप में B I S लिखते है। सामान्य व्यक्ति को इस परिवर्तित नाम से कोई परेशानी न हो अत: चिन्ह **ISI** ही रहने दिया । यह संस्थान विभिन्न खाद्य वस्तुओं जैसे अनाज व उनसे बने पदार्थ फल व सब्जियों व उससे बने पदार्थो मसाले, चाय, काफी, कोको, कार्बोनेटेड व मद्यकि युक्त पेय पदार्थो आदि के लिए मानक स्तर निश्चित करता है तथा स्तर के अनुरूप पाये जाने पर ISI का चिन्ह प्रदान करता है। **ISI** होने पर वह पदार्थ उच्च गुणवत्ता वाला माना जाता है, साथ साथ पदार्थ को निर्धारित समय तक उपयोग में लाने की निश्चिंतता और प्रमाणिकता मानो स्वयं आश्वस्त हो जाती है।

दूसरी संस्था है भारत सरकार का विपणन एवं निरीक्षण निदेशालय, जिसका केन्द्रीय कार्यालय फरीदाबाद हरियाणा में है। इस संस्था द्वारा अनाज तिलहन, तेल, मक्खन, घी, दलहन अण्डे आदि की गुणवत्ता दर्शाने के लिये उनके विभिन्न ग्रेड '' द ग्रेडिंग एण्ड मार्केटिंग आफ एग्रीकल्चरल प्राडक्टस एक्ट 1973 '' (कृषि उपज श्रेणी करण एवं विपणन अधिनियम 1973) के अर्न्तगत बनाये गये है ।

ये ग्रेड्स है–विशिष्ट श्रेणी (श्रेणी **I**), उत्तम श्रेणी (श्रेणी **II**), अच्छा श्रेणी (श्रेणी **III**), साधारण ग्रेड (श्रेणी **IV**)

जिन वस्तुओं को यह श्रेणी दी जाती है उन पर A.G.M.A.R.K. का चिन्ह लगाया जाता है। ये श्रेणी देने का कार्य ऐच्छिक संस्थाएँ, जिनके पास कृषि उपज विपणन सलाहकार का अधिकार प्रमाण पत्र होता है, कर रही है। श्रेणी करण के साथ साथ पैकिंग के भी विशिष्ट मानक निर्धारित किये गये है। जिन पदार्थो पर ''एगमार्क'' का चिन्ह अंकित होता है वे पदार्थ अच्छी गुणवत्ता वाले माने जाते है।

यदि ''एगमार्क'' चिन्हित वस्तुओं के पैकेज में सामान की गुणवत्ता निम्न स्तरीय हो तो उस पैकेज को निर्माता के पास भेजकर उसका मूल्य लौटाये जाने का प्रावधान है। यह कार्य अपने प्रदेश के स्वास्थ्य निदेशक कार्यालय से सम्पर्क कर किया जा सकता है।

उपभोक्ताओं को उत्तम गुणवत्ता के भोज्य पदार्थ प्राप्त हो इसलिये बम्बई में ''उपभोक्ता मार्गदर्शक संस्थान'' स्थापित किया गया है जो उपभोक्ताओं को मिलावट के प्रति जागरूक कर मिलावट पहचानने के परीक्षण सिखाकर मिलावट के विरूद्ध कार्यवाही करने के लिये प्रेरित करती है।

संदर्भ पुस्तकें –

1. राठौर राका डॉ. (2007) स्वास्थ्य विज्ञान एवं आरोग्य शास्त्र, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा पेज नम्बर 128–187
2. बख्शी बी.के. (2007) आहार एवं पोषण के मूल आधार, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा पेज नम्बर 335–339
3. वर्मा सरस्वती (1987) पारिवारिक वित्त एवं उपभोक्ता संरक्षण, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी पेज नम्बर 45 ।

****

किशोरावस्था में एनिमिया

डॉ. मीना सिसोदिया *

प्रस्तावना :- स्वाल्पता हमारे देश की एक प्रमुख पोषणहीनता की समस्या है। '' प्रमुख रूप से महिलाओं मे देखी जाती है, एनीमिया उस स्थिति को कहते है जब रक्त में हीमोग्लोबिन का स्तर सामान्य से कम रहता है, सामान्यत: किशोरवय लड़कियो व महिलाओं मे खून की कमी एनीमिया की स्थिति है। यह सभी वर्ग की किशोरियों मे देखी जाती है, एनीमिया एक सामान्य समस्या है, लौह लवण की कमी से एनीमिया होती है, देखा गया है कि सरकारी स्कूल मे 30 फीसदी ज्यादा छात्राओं में खून की कमी देखी गई स्वास्थ्य विभाग को स्कूल में स्वास्थ्य शिविरो के माध्यम से पता चला कि छात्राएँ कुपोषित है उनमे विटामिन ए की कमी पाई गई। खरगोन में 8 सितम्बर 2011 को कुपोषण के कारण दम तोड़ा। कुपोषित बच्चो में बालिकाओं की संख्या अधिक पाई गई। 21 सितम्बर 2011 मुरैना मे पाया गया कुपोषण से ग्रस्त 18 बच्चो में लड़कियों की संख्या ज्यादा थी और कुपोषण के कारण स्वल्पता देखी गई कई बार मलेरिया के संक्रमण भी रक्ताल्पता उत्पन्न कर सकता है। जैनेटिक भी एनीमिया का कारण हो सकता है। म.प्र. के रतलाम जिले के कुछ आदिवासी क्षैत्र के 40 प्रतिशत बच्चे अत्यधिक रक्ताल्पता के शिकार है। हमारे देश की कुल आबादी का 80 प्रतिशत रक्त अल्पता का शिकार है इसमे दो तिहाई महिला एवं बच्चे है, रतलाम के ही एक आंकड़े के अनुसार कुछ रक्तदाताओं मे से केवल 2.02% महिला थी। जबकि ब्लड का उपयोग लेने वालों में (ब्लड बैंक से) 80.2% महिला की संख्या रही औ म.प्र. में 55 प्रतिशत महिलाएँ एनीमिया से ग्रसित है। मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार आदिवासी महिलाएँ एक तिहाई एनीमिया से ग्रसित है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार -

* 12 ग्राम प्रतिशत से अधिक - सामान्य * 10 से 12 न्यु रक्ताल्पता, 8 से 10 मध्य रक्ताल्पता, 8 से कम गंभीर रक्ताल्पता

स्वयं के अनुसंधान के दौरान भी शराब कारखानो मे कार्यरत महिलाओं का मानवमिती परीक्षण कराया गया इसमे यह पाया गया कि महिला एवं किशोर के रक्त मे हिमोग्लोबिन का स्तर सामान्य से कम पाया गया। 90 प्रतिशत श्रमिक महिलाएँ दूध का सेवन नहीं करती, 78 प्रतिशत महिलाएँ खट्टे पदार्थो का सेवन एवं हरी सब्जी व फल का सेवन नहीं करती, 21 प्रतिशत महिला श्रमिक कारखाने मे कार्य के दौरान कुछ नहीं खाती, कुपोषण से एनीमिया देखा गया।

किशोरियो - महिलाओं मे मासिक धर्म मे रक्तस्त्राव हो जाने पर उसकी पूर्ति आहार मे अतिरिक्त लौह लवण से नहीं की जाती है।

गर्भावस्था, धात्रीवस्था मे आवश्यक पौष्टिक तत्व की कमी के कारण और अतिरिक्त लौह लवण की पूर्ति न होने से एनीमिया हो जाता है।

गरीबी, अशिक्षा, अज्ञानता के कारण पौष्टिक आहार की कमी हो जाती है हरी सब्जियाँ लौह लवणयुक्त आहार का सेवन नहीं करने से एनीमिया की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। बच्चो को जन्म देने व खान पान के प्रति लापरवाही के कारण एनीमिया हो सकता है। किशोरियो को इस आयु में लौह लवण की हानि के कारण शरीर मे रक्त परिवहन की मात्रा बढ़ जाने से लौह लवण की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है। 18-18 वर्ष की अवस्था मे किसी ना किसी प्रकार से कुपोषण की शिकार होती है और एनीमिया उत्पन्न हो जाता है। बालिका की कुपोषण की जड़े बचपन से उत्पन्न हो जाती है उसका लालन पालन उचित पोषण से नहीं होने एवं लिंग भेद के कारण कुपोषण एनीमिया होता है। माँ का दूध छुड़ाने पर अच्छे तंदुरूस्त बच्चे भी एकदम कमजोर हो जाते है कारण एनिनिया हैं।

लक्षण :- जब एनीमिया गंभीर अवस्था मे पहुँच जाता है तब जाकर लोगो को इसका पता चलता है भूख न लगना, थकावट होना, हाँफना, अनिद्रा, वजन घटना, किसी भी कार्य मे मन नहीं लगना, सीखने की क्षमता घटना, वृद्धि की दर घटना, विभिन्न बीमारियों का बढ़ना, खिलाड़ियो के प्रदर्शन मे कमी, नाखून चपटे होना, नाखून का अंदर की ओर धंसना, रोगप्रतिरोधक क्षमता घटना, जीभ पर पीलापन दिखाई देना, आँखो के पास कालापन।

सुझाव :- माँ को शिक्षित करना, पोषणिक जानकारी से अवगत कराना, स्वास्थ्य शिविरों का आयोजन करना एवं नि:शुल्क दवाओं का वितरण एवं उपचार, पालन पोषण मे लिंगभेद हटाने का प्रयास करना, कम कीमत वाले आयरन युक्त पोषक खाद्य पदार्थो का प्रचार करना, आयोडिन अल्पता विकास नियंत्रण कार्यक्रम को सर्वसुलभ बनाना, किशोर बालिकाओं के लिए स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम बनाना और लिंगभेद हटाने के लिए प्रयास करना।

निम्न आयवर्ग की बालिकाओं और महिलाओं की पोषणिक अल्परक्ता से बचाने के लिए आयरन एवं फौलिड एसिड की गोलियो का मुक्त वितरण करना। इन गोलियों का वितरण सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों एवं अस्पतालों से किया जाना चाहिए। कुपोषण से बचाव के अभियान चलाए जाए, ग्रामीण और पिछड़े इलाकों में जनजागरूकता बढ़ाई जाए। पत्र पत्रिकाओं, समाचार पत्रों द्वारा पोषण का प्रचार प्रसार कर जानकारी दी जाए और पोषण आहार को बदल बदल कर देने की व्यवस्था की जाए।

माँ को पुत्र-पुत्री मे भेदभाव ना करके दोनों को समान रूप से स्तनपान कराने की सलाह दी जाए। माँ के दूध में रोग प्रतिरोधक शक्ति होती है, कई बार एनीमिया जन्म से भी देखा जाता है। गर्भवती माताओं का परीक्षण आहार टॉनिक वितरण कार्यक्रम नियमित किए जाए।

ग्रामीण आदिवासी क्षैत्रों में हिमोग्लोबिन व स्वास्थ्य परीक्षण प्रोग्राम किए जाए व प्रसववाली माताओं व बच्चों को पोष्टिक आहार व आवश्यक टॉनिक एवं आयरन की गोलियाँ वितरित करना चाहिए। चिकित्सालयों में भी नियमित रूप से पौष्टिक आहार का वितरण किया जाए।

संदर्भ :-

1. स्वामीनाथन - फूड एण्ड न्युट्रिशियन-II
2. * पोषण एवं स्वास्थ्य निर्देशिका (पोषण एवं स्वास्थ्य पत्रिका) कुपोषण से बचाव व निदान एवं विटामिन ए अभियान मार्गनिर्देशिका महिला बाल विकास * महिलाओं के लिए पर्याप्त पोषण - म.प्र. महिला बाल विकास यूनिसेफ प्रमिला वर्मा आहार एवं पोषण * मंगला कानगो - सामान्य उपचारात्मक पोषण शास्त्र
3. दैनिक भास्कर- 8 अगस्त, 8 सितम्बर, 5 नवम्बर

* सहायक प्राध्यापक (गृह विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

Test Of Weak Formed & Semi Strong From of Efficiency In Nifty Stcok Index Future Market (2005-2009)

Prof. Sumeet Khurana *

Introduction and Rational of the Study

Fama (1970) summarizes the idea in his classic survey by writing "A market in which prices always fully reflect available information is called efficient."

In an efficient market, the expected value for gains is always zero. Arbitrage opportunities are ruled out in an efficient market. Market efficiency is described in three forms- weak, semi-strong and strong.

Most of the studies have been performed on analyzing the efficiency of the stock market but hardly any study has been done on Derivative market.

In order to analyze the weak form efficiency of futures market in India, daily closing prices of Nifty index futures have been collected from the period 2005-2009.

Literature Review

A study done on the time series of spot and future prices of S & P CNX NIFTY by Mall, Manmohan (2011) suggests that the integration of future and spot price are of order one and is co- integrated in the long-run. This is the Indication of relative efficiency of India's F & O market and in the event of high fluctuations in the market investors can rely upon the direction of the futures market because it would provide them significant information regarding the prospective move in the Spot market. Efficient price discovery in the futures market implies that traders can take significant hedging positions to minimize the risk exposure in the spot market.

And when we talk about efficiency of the market, we have to discuss about the flow of information and studies says that there is significant information flow from the futures to the spot market and futures prices/returns have predictive power for the spot prices

Various studies in different time spans have been done related to the random walk of the spot market as well as derivative market. Initially few studies during early 2000 were not showing random walk in the stock market as studied by Parmeswaran (2000). Later S.S. Deb(2003), Madhusudhan Karmarkar (2004) applied various different tests to find out the efficiency of the market and few of the tests were supporting the randomness of the market. Later studies of AshutoshVerma(2005), B. S. Bodla(2005), SuyashGoswami and Golaka C Nath (2005), Saket K Sathe, Rajendra K lagu and Uday B. Desai (2006) Rakesh Kumar and Raj S Dhankar (2008), Vigg, Nathani, Kaur and Holani (2008), P.K. Mishra (2009), indicated the existence of weak form efficiency in the Indian securities market.

Objective of the study

To test the weak and semi strong form of efficiency of Nifty Stock Index Future market from year 2005 to 2009.

Research methodology

To test the weak form of efficiency the Run test is used to examine the serial independence in stock return movements. This test has the advantage of ignoring the distribution of data and does not require normality of constant variance of data.

"A lower than expected number of runs indicate a market's overreaction to inform subsequently reversed, while a higher number of runs reflect a lagged response to information" (Poshokwale, 1996). Implicitly an abnormally high (or low) number of runs indicate evidence against the null hypothesis of random walk.

By examining how runs behave in a strictly random sequence of observations, one can derive a test of randomness of runs. If there are too many runs, it indicates negative serial correlation. Similarly, if there are too few runs, they may suggest positive autocorrelation.

Now let

N = total number of observations = N_1+N_2

N_1 = number of + symbols (i.e. + residuals)

N_2 = number of - symbols (i.e. - residuals)

R = number of runs

Then under the null hypothesis that the successive outcomes (here, residuals) are independent, and assuming that $N_1>10$ and $N_2>10$, the number of runs is (asymptotically) normally distributed with

Mean: $E(R) = (2N_1N_2 /N) +1$

Variance: $\sigma^2 = 2N_1N_2 (2N_1N_2-N) / (N)_2 (N-_1)$

Note: $N = N_1 + N_2$

If the null hypothesis of randomness is sustainable, following the properties of normal distribution, we should expect that

$$Prob [E(R) -1.96 \sigma_R ? R ? E(R) + 1.96 \sigma_R] =0.95$$

That is, the probability is 95% that the preceding interval will include R. Therefore we have this rule:

* Dean - Acropolis Technical Campus, Indore (M.P.) INDIA

Decision Rule:

Do not reject the null hypothesis of randomness with 95% confidence if R, the number of runs, lies in the preceding confidence interval; reject the null hypothesis if the estimated R lies outside these limits.

Hypothesis which are tested through run test are:

Null Hypothesis (Ho): The price movement in the share prices of Nifty index futures is random **Alternate Hypothesis (Ha):** The price movement in the share prices of Nifty index futures is not random.

To test these hypothesis two tests have been performed viz. Run test and Autocorrelation test.

Table 6.3: Results of Run Test

Particulars	One month contract	Two months contract	Three months contract
No. of observations	993	993	992
No. of + symbols= n1	537	546	544
No. of –symbols= n2	456	447	448
No. of runsr	490	484	474
Mean of the sampling distribution of the r statistic μr	494.1964	492.5649	492.3548
Standard error of the r statistic σr	15.6431	15.5913	15.5925
Z= r-u/std. error	-0.26826	-0.54934	-1.17716
Test at 5% level of significance	-/+ 1.28	-/+ 1.28	-/+ 1.28
Observation	Within the range	Within the range	Within the range

A two tailed test has been employed to test the randomness of prices at 5% level of significance for one month contract, two months contract and three months contract. For all the three contracts the number of observed runs falls within the limits. Therefore the null hypothesis i.e. the price movement in the share prices of Nifty index futures is random means the price movement in the share prices of Nifty index futures is not affected by past prices is accepted. It indicates that the price movements are random in futures market.

Results of runs test shows that the price movements in the Nifty stock index futures market are independent. Thus, the investors cannot reap abnormal profits by observing the historical data of stock prices as they follow a random path. Therefore, there is no benefit in examining the historical prices for predicting the future prices in Indian Futures market.

The study was further supported by Auto Correlation Test. test for semi-strong form efficiency through residual analysis:- To examine the semi-strong form efficiency of market, residual analysis is conducted. In this test, to estimate the value of realized or normal return of a stock, we regress the stock returns against the returns on market index. The normal return is given by the relation,

$$r_{it} = \sigma_i + \beta_i r_{mt} + e_{it} \quad \ldots(1)$$

Where,

r_{it} denotes the realized return on theith stock in the period 't'.

r_{mt} denotes the realized return on the index.

α_i denotes the regression constant.

e_{it} denotes the error or the residual term.

βi denotes the slope of the characteristic line.

α_i, the regression constant is calculated as follows:

$$\alpha i = (\Sigma\, r_{it}/N) - \beta_i\, (\Sigma\, r_{mt}/N)$$

β_i, the slope of the characteristic line is given as follows:

$$\beta_i = \frac{N \times \Sigma r_{mt} r_{it} - ? r_{mt} ? r_{it}}{N \times \Sigma r_{mt}^2 - (\Sigma r_{mt})^2}$$

Where, N represents the number of returns.

Due to the fact that the deviations in the stock's return from the estimating line cancel each other, on average, the error term should be zero.

Therefore, the normal return is given by:

$$r_{it} = \alpha_i + \beta_i r_{mt} \quad \ldots(2)$$

From the relation (1), if the normal returns (as given by (2)) are subtracted from the realized return r_{it}, we get the abnormal return as,

$$e_{it} = r_{it} - (\alpha_i + \beta_i r_{mt})$$

Where, ei t denotes the abnormal returns.

Since, we use the error or the residual term to calculate the abnormal return; this analysis is referred to as Residual Analysis.For the market to be the efficient in the semi-strong form, the sum of the residual returns (abnormal returns) should be close to zero and the results for the same are as Table No. 1

The results of autocorrelation indicates that the values of correlation coefficient 'r' for all the three contracts of Nifty index futures are close to zero and fall within low correlation limit. Therefore the autocorrelation test provides evidence in support of weak form efficiency of Nifty index futures market in India, i.e. the price movement of Nifty index futures are not affected by past prices.

Discussion

An important analysis one can easily make from the above given figures. We can say that looking onto the requirement of amount required as per mark to market system, future trading requires just 20% of exposure as initial margin. It means that in year 2007-08 total amount of Rs. 710207.6 crores (20% of capital market exposure) would have been enough to hedge the overall position of capital market through future index trading. But actually in future index the overall amount of turnover was Rs. 3820667 crores which is as previously quoted 107.5% of total turnover in capital market.

Further, the results of run test and auto correlation test suggests that the arbitrage opportunities in Indian future index market is almost negligible as the market is close to efficient. So the money being put in future index trading was not actually contributing for arbitrage gains.

So, the result clearly indicates that future market is highly dominated by speculators and the volume of Hedgers and Arbitragers is almost negligible. So index trading in India it seems that- Negligible/No Arbitrage, Less Hedging and Only Speculation.

Bibliography

- Bodla BS (2005). Foreign institutional investors and macroeconomic variables in India: a study of causal relation, Institute of Management Technology Audience, 2009 Jul-Dec;13(2).
- Deb SS (2003), Modeling Stock Market Volatility in India: A Comparison of Univariate Deterministic Models, ICFAI Journal of Applied Finance, pp. 19-33, October 2003.
- Eugene F. Fama. Random Walks in Stock Market Prices. Financial Analyst Journal, Oct 1965.
- Fama (1970). Efficient capital market- a review of theory and empherical work, the Journal of Finance, vol.25, no.2, papers and proceedings of the twenty eight annual meeting of the American finance association, New York, N.Y. Dec.28-30, 1969(may, 1970) 383-417.
- Mall, Manmohan (2011), Volatility of india's stock index futures market: An empirical analysis, -Journal of Arts, Science & Commerce E-ISSN 2229-4686.
- Saket K Sathe, Rajendra K lagu and Uday B. Desai (2006), Investigating Efficiency of the Indian Equities Market with Application to Risk Management, May'2006, The IUP Journal of Applied Finance.
- Vashishta, Ashutosh, Satish Kumar (2010), Development of Financial Derivatives Market in India- A Case Study, International Research Journal of Finance and Economics, ISSN 1450-2887 Issue 37 (2010), EuroJournals Publishing, Inc. 2010, http://www.eurojournals.com/finance.htm.
- Vigg S, Kaur S, Nathani N and Holani U. (2008), 'Efficient Market Hypothesis: A Case Study on Bombay Stock Exchange', Indian Journal of Finance, 2(6).

Table No.1
Auto correlation test:

Particulars		ΣX	ΣY	ΣX^2	ΣY^2	ΣXY	N	r
Futures index one month contract	t+1	1304	325.85	207906.1	1052217.678	-6674.92	248	-0.0182
	t+2	1342.7	1130.45	210279.4	2959514.62	13718.78	250	0.0099
	t+3	1181.05	-1757.7	202635	2302891.12	-38993.8	242	-0.0453
Futures index two months contract	t+1	1293.65	336.2	201787	1069363.93	-5298.81	248	-0.0154
	t+2	1337.45	1129.6	203475.9	2948434.96	12162.23	250	0.0081
	t+3	1175.05	-1756	196627.2	2302837.69	-36735.4	242	-0.0427
Futures index three months contract	t+1	1279.65	345	193593.6	1046778.705	-10083.3	248	-0.0268
	t+2	1327.75	1122.35	195420.2	2937102.283	11331.79	250	0.0072
	t+3	1167.4	-1742.75	188355	2265771.523	-29110.6	242	-0.0323

****

Investigation Of Demat & Online Trading Account

Dr. Sujata Parwani *

Introduction - Traditionally stock trading was done through stock brokers personally or through telephones. As number of people trading in stock market increased enormously in last few years, some issues like location constrains, busy phone lines, miss communication etc. started growing in stock broker offices. Then Information technology helped stock brokers to solve those problems by Online Stock Trading method ("Online stock brokers,").

Online stock trading is an internet based stock trading facility where Investor can trade shares through a website without any manual intervention from the broker. It also provides investors with rich, interactive information in real time including market updates, investment research and robust analysis. Still some people like offline stock trading where the customer calls the broker to enquire about the stock prices.

The commencement of E-Trading and Demat has transformed the capital market in India. With the help of Demat and Trading account, buying and selling of shares has become a much faster and even process than trading with the assistance of a physical broker. It provides for the assimilation of bank, broker, stock exchange and depository participants. This helps to get rid of the painstaking procedure of investing in stock exchange. Today, if one wants to invest in stock market, he has to contact a broker on phone or meet him personally to place order. A broker generally gives such importance and additional service only to high net worth customers. But the introduction of Internet trading, even a common or a small investor gets an opportunity to avail the service at an affordable price which is much lesser than what is charged by a physical broker over the phone. Online trading has given customer a real time access to account information, stock quotes elaborated market research and interactive trading.

Canara Bank tryst with excellence in customer relations began in 1996. With its unique retail-focused stock trading business model, CBSL is committed to providing 'Real Value for Money' to all its clients. The CBSL is a member of the Bombay Stock Exchange (BSE), National Stock Exchange (NSE) and the two leading Commodity Exchanges in the country: NCDEX & MCX. CBSL is also registered as a Depository Participant with CDSL.

FSWA is into FINANCIAL PLANNING which involves selling of financial products like D-mat account, Online Trading account, corporate FD's, mutual funds and insurance. Canara Bank securities ltd - Transacting and investing simplified. Get ready to change the way you transact and invest in financial products and services. Whether you wish to transact in equity, equity & commodity derivatives, prefer to invest in mutual funds, life & general insurance products or avail money transfer and money changing services.

Simply open a CBSL demat account and enjoy the convenience of handling all your key financial transactions through this one window. CBSL is one of the leading and professionally managed stock broking firm involved in quality services and research. CBSL is a corporate member of The Stock Exchange, Mumbai. CBSL is primarily into retail stock broking, with a customer base of retail investors, which has been increasing at a compounded growth rate of 100% every year. The company has huge network sub-brokers in Mumbai and other places outside Mumbai, registered with SEBI, who act as Chanel partners for the company..

Literature Review - Barber and Odean (2002) found that young men are more likely to use the Internet for investing, and that online investors tend to increase turnover and decrease their performance after switching to online trading.

Nidhi walia and Ravinder kumar (2007) examined the investor's preference for traditional trading and online trading. The major findings of the study were that Indian investors are more conservative, they do not change easily and Indian traditional traders still choose brokers for trading.

Sandeep Srivastava, Surendra S Yadav and P K Jain (2008) The survey also revealed investors are using these securities for risk management, profit enhancement, speculation and arbitrage. It also emphasized to popularize option instruments because they may prove to be a useful medium for enhancing retail participation.

Yingzi Xu, Robert Goedegebuure and Beatrice van der Heijden (2006) found service quality perceived by customers has a direct, significant effect on customer satisfaction. Also the relationship between perceived service value and customer loyalty is found to be determined by customer satisfaction.

Objective

1. To find the awareness of demate account among employed investors.
2. To determine the satisfaction level of consumers with CBSL.
3. Comparative study of CBSL Online share trading account with the big players in the Market i.e. ICICI, HDFC.
4. To find out the point of view of investors regarding services provided by CBSL.

*** Lecturer, IIPS, DAVV, Indore (M.P.) INDIA**

Research Methodology

This study is based on primary data and secondary data. The primary data are collected with a carefully prepared questionnaire.

The secondary data has been collected from the books, journals and websites which deal with online share trading. The sample size of this study is 100 people and the area of sample is Indore only. The data collected from 100 respondents, was analyzed with the help of percentage method.

Data Analysis And Interpretation

1.Are you aware of stock market ?

Table no. 1

Awareness	Percentage of respondent
Yes	78%
No	22%

This table shows that the 78% customers are aware about the stock market and only 22% customer are those who are not aware.

2.Are you aware of demat /online trading account?

Table no.2

Aware of demat a/c	Percentage of respondent
Yes	72%
No	28%

Form the above table it is clear that with the increase in cyber education, the awareness towards online share trading has increased. Majority of the people 72% are aware about demat /online trading.

3.Do you deal in shares?

Table no.3

Deal in shares	Percentage of respondent
Yes	55
No	45

55% respondent are deal in shares out of the 100 respondents.

4.In which of these financial instruments do you invest into?

Table no.4

Financial Instruments	Percentage of respondent
Mutual Funds	57%
Derivatives	22%
Shares	18%
Bonds	3%

The above table shows that maximum people 57% investing in the mutual funds, 22% are investing in derivatives, 18% respondents in the Share Market and only 3% people are investing in bonds.

5.With which company/bank do you have your demat account ?

Table no.5

Banks	Percentage of respondent
Canara Bank	58%
HDFC	28%
ICICI	14%

Table shows that maximum 58% respondent have demate account with CBSL, 28% respondent have demate account with HDFC, and 14% respondent have demate account with ICICI.

6.How satisfied are you with your present broking company/bank?

Table no.6

Present broking bank	Percentage of respondent
Dissatisfied	10%
Somewhat Dissatisfied	20%
Neutral	15%
Satisfied	55%

This table shows that 10% respondent are dissatisfied, 20% respondent somewhat dissatisfied, 15% are neutral & maximum respondents 55% are satisfied with present broking company / bank.

7.Heard about CBSL (Canara Bank Securities Ltd)?

Table no.7

Awareness of CBSL	Percentage of respondent
Yes	56%
No	44%

It is clear form the table that CBSL has a reasonable amount of Brand awareness in terms of a premier Retail stock broking company. This brand image should be further leveraged by the company to increase its market share over its competitors.

8.What your perception about CBSL in general?

Table no.8

Perception about CBSL	Percentage of respondent
Bad	6%
Average	40%
Good	54%

*This table is show that General perception about the CBSL in market. Majority 54% have good perceptions about the **CBSL.***

9.Which banking Demat account offered you a large no. of services?

Table no.9

No. of services offered	Percentage of respondent
Canara bank	37%
HDFC	31%
ICICI	32%

37% respondent shows that Canara bank offered large no. Of services and than ICICI, HDFC.

10.Which Bank provide you a better email facility?

Table no. 10

Better email facility	Percentage of respondent
Canara bank	48%
HDFC	30%
ICICI	22%

It is clear that 48% respondent shows that Canara bank provide better email facilities as compare to, HDFC, ICICI.

11.Which company provide a less BROKARAGE rate?

Table no. 11

Less brokerage rate	Percentage of respondent
Canara bank	44%
HDFC	22%
ICICI	34%

44% respondent shows that Canara bank provide a less BROKARAGE rate , 34% respondent of ICICI, and 22% respondent shows HDFC so, it is clear that Canara Bank provides less brokerage rate as compare to other banks.

12.According to you which is the best feature of online trading a/c?

Table no.12

Best Feature	Percentage of respondent
Cash & Carry (CNC)	2%
Intra Day Trading (IDT)	10%
Buy In Today Sell Out Tomorrow (BITSOT)	33%
Online Trading in Futures & Options (FNO)	55%

Majority of respondents 55%, shows that best feature of online trading a/c is Online Trading in FNO, 33% respondent shows BITSOT, 10% respondents shows IDT and minority respondents only 2% shows that least feature of online trading a/c in n CNC.

13.Are you satisfied with canara bank customer care service?

Table no. 13

Customer care service	Percentage of respondent
Yes	76%
No	24%

This table shows that 76% customers are satisfied with canara bank customer care service and only 24% customer are those who are not satisfied.

14.What your perception regarding Canara Bank Securities Ltd?

Table no.14

Perception regarding CBSL	Percentage of respondent
Bad	8%
Average	10%
Good	52%
Very good	30%

This table shows that the customers have a good perception about the canara bank securities ltd. that is 52%, 30% respondents have very good perception 10%, respondent have average perception regarding Canara Bank Securities Ltd. And only 8 % respondents show bad perceptions regarding Canara Bank Securities Ltd.

Conclusion

CBSL Demat Account is better than other Demat account. CBSL have good return of investment. At last all conclusion be concluded by that CBSL is still growing industry in India. CBSL account has less brokerage rate. It provides a security with the use of special type of key. In this research it is found that majority of Indian investors like to trade in equities than in Futures and Options. This shows there is a need to create awareness among investors regarding profitability of investment in futures and options. Indian people mainly invest their money in Share market followed by Mutual funds and Fixed deposits. Hence the broking companies should diversify their business into MF distribution as there is a large market opportunity.

Investors' main motive behind investment in share market is high returns. So the brokers should always suggest most profitable stocks to their customers. Maximum people favour online mode of share trading than offline trading. Investors generally prefer own research or broker's advice to decide whether to buy or sell shares. It means broker's need to be more reliable and authentic while giving their advice on selection of shares. Customers' choose broking firms based on their customer service and brand name. So it's high time for broking firms to concentrate more on customer service as well as position themselves as a reliable brand. CBSL are doing well in customer service since 88% people are satisfied with them. But still there is a scope to improve it further. Similarly, customers find their broker's trading portal to be user-friendly. And people are satisfied with the speed and accuracy of trading. Paperless Transaction - your share certificates get deposited in electronic from (DMAT) in your web trade account. Orders can be also placed offline during non - market hours. It is observed that banks normally levy a lower service charge compared to other depository participants.

Refeerences

* Mrs. Archana Sinha (July 2008) "Micro -Finance" Vol. 35 - No. 7, page No. 33 (Courtesy: Decan chronicle).
* IAN Giddy, Global Finance Market,(2007) AITBS, New Delhi
* Levy International Finance , (2003) TMH New Delhi.
* N. Mukudan & M. Hilaria Sundari, "Emerging Dimensions in Online trading ; Micro Finance in India", Dominant publishers and distributors New Delhi 110002.
* Dr. Ramesh Onkareppa Olekar, Chanabasappa Y Talawar, Online Trading and DEMAT Account in India-Some Issues International Journal of Management and Social Sciences Research (IJMSSR) ISSN: 2319-4421 Volume 2, No. 4, April 2013

****

F-commerce: New Emerging Trend Of E-commerce

Dr. Anoop Vyas * Sandeep Raghuwanshi **

"If I had to guess, social commerce is the next area to really blow up" **- Mark Zuckerberg**

Abstract - F-commerce platforms are quickly improving the online shopping process. Page designs are becoming more fluid and better integrated, making the shopping experience more convenient and better equipped for social utility. F-commerce is one of the fastest growing applications of social commerce, and it may just become bigger than any website. Face book controls more than half of the US traffic to social media sites with active users who spend over 700 billion minutes per month on the site, making it convenient for consumers since they're already there.

The emphasis of this paper is on putting the customer at the heart of planning and the tools and techniques that enable companies to more easily deliver the customer experience that people want and that generate profitable sales. Social media platforms by definition are people orientated, hence the emphasis on customer centric planning. Find out the various aspects of F-commerce shopping store like F-store, Levi's Friends Store, and Diesel's etc. Most of the user's of social networking website used face book for shopping as compare to other's social networking website like Twitter's, LinkedIn etc. in present status user's of face book is around 1 billion (12 oct.2012), so we can say that's for promoting the goods and services company used face books that is more Result oriented as compare to other's tools of sale promoting

Keywords : E-Commerce, F-Commerce, Social Networking, Online Shopping.

Introduction : Transacting or facilitating business on the Internet is called ecommerce. Ecommerce is short for "electronic commerce."Popular examples of ecommerce revolve around buying and selling online. But the ecommerce universe contains other types of activities as well. Any form of business transaction conducted electronically is ecommerce. F-Commerce, derived from e-commerce, is the use of Face book as a platform for facilitating and executing sales transactions - either on Face book itself or externally via the Face book Open Graph. F-commerce is a form of social commerce, the use of social media, online media that supports social interaction and user contributions, to assist in the online buying and selling of products and services. Those who analyze Face book commerce often distinguish between transactions that take place on a Face book page and those that use Face book Open Graph, a tool for fusing third-party websites with Face book's site. Some companies set up dedicated Face book stores to capture sales from Face book users, while others set up sophisticated promotional ads to direct Web users toward some other sales venue.

In this research paper, we refer to all the aspects of f-commerce like: Face book is suddenly emerging not only as a place to connect and share interesting stuff with people but also as a tool for commerce for brands and customers. The world's biggest brands are selling on Face book today. In fact, the top 3 brands on Face book - Coca Cola, Starbucks and Disney - sell directly on Face book. Face book is a social networking website or commercial website? Is it important in present scenario for the retailers to used social networking website for sale promotion?

Size Of F-commerce Markets

- The value of transactions completed within Face book is predicted to supersede those on Amazon over the next five years ($34 billion)
- User's of Face book nearly about 1 billion (12 oct.2012)

Objectives Of My Research Paper:

* How f-commerce is work with social networking website.
* Why f-commerce is used by the retailers for promoting the products.
* In present scenario f-commerce is more Result oriented as compare to other promoting tools.

Review Of Literature:

F-commerce is increasingly generating buzz in the social media and social technology market. Growing upon the people's social graph, Face book is suddenly emerging not only as a place to connect and share interesting stuff with people but also as a tool for commerce for brands and customers. The world's biggest brands are selling on Face book today. In fact, the top 3 brands on Face book - Coca Cola, Starbucks and Disney - sell directly on Face book. E-commerce leaders are predicting that within the next 5 years more sales will be happening on Face book than on Amazon. Hence we thought it would be a good idea to research some

*** Professor and Head-Commerce, GACC; Dean, Faculty of Commerce, DAVV Indore (M.P.) INDIA**
**** ILVA Commerce & Sci., College Indore (M.P.) INDIA**

interesting F-commerce strategies and see what different things are being done by brands in F-Commerce

- 2004: Beginnings of Face book
- 2006: Face book opens to anyone 13 years of age and up
- 2007: Face book virtual goods, Marketplace and apps platform launched; Face book Pages launches giving brands a potential shopping play
- 2008: Face book Connected announced, allowing users to connect their FB identity to any website
- 2009: Like button gets a thumbs up; first transaction on Face book- an order of flowers from is placed
- 2010: Delta Airlines offers ability to purchase tickets directly from Face book; Face book adds "Places" as a competitor to Foursquare; Target is the first retailer to sell Face book gift cards; Places adds "Deals" so when users check-in they can use Face book Credits to buy stuff
- 2011: More Brands offer social commerce….

Having surpassed 750 million users earlier this year Face book has the potential to become all the best things about online shopping; a suggestion engine from trusted friends, social search powered by Bing, and the chance to offer discounts and rewards to people for liking the brand or checking into a physical location. Why aren't more brands taking advantage of it? The bar graph in the info graphic goes some way to explain this. 44% of UK users said that they are not interested in buying anything from social networks yet, and only 17% said that they would buy from a social network only if it is easier than a traditional e-commerce experience.

F-commerce Strategies:

- **Face book Stores:** Face book stores (also known as F-Stores) are the typical stores on Face book. The idea behind having such stores is to bring the store where the consumer is (i.e. on Face book). Consumers can decide upon the product, make selections and transactions without leaving Face book. Moreover, such stores get the viral advantages of Face book 'likes' and 'Face book shares'. Many brands such as Tide, Gillette, Coca-Cola, and many more.
- **Group buying:** Face book might have jumped into the 'group buying' waters with Face book deals, but some brands are already using group buying to pump up sales in their stores. Certain brands like W Hotels activate heavily discounted deals when a set number of people bid on it. Skoda, ran the 'More you like... less you pay campaign' on their Face book store, which was an online auction where each 'like' reduced the cost of the car by 1 Euro until somebody bought it. Similarly Sears is using the same mechanism on its Face book store where deals go live when they have received enough likes. This ensures each product on the store generates buzz from its fans
- **Exclusive offers:** Since your fans and your Face book store both are on your Face book page, there are high chances that it will be your fans who will be shopping from your Face book page. So why not use your store to reward them with exclusive offers to generate buzz along with sales. Many brands are using this strategy to give exclusive offers on their Face book stores. Pantene did this some time back when they were giving early access to their new products on their F-stores. Ketchup brand Heinz and Women shoes and Handbag brand Nine West are also using F-stores to give limited edition products to their fans
- **Shop and tell:** You will find this as the emerging trend among onsite Face book stores. With Shop and tell plug-in brands can integrate referral features to their shopping carts so that whenever someone makes a purchase on the store, they can recommend the product to people in their network. In return they can avail rewards such as discounts, free shipping etc. Many companies like flaunt it, Tip from me and Fin .it provide such type of plug-in. Another interesting shop and tell tool is which integrates with your card information to notify people in your network about your purchases. It also shows what is happening at the places you shop as a shopping feed. Certain brands tweaked this model to generate recommendations and word of mouth. They are selling consumers content (books, papers, research reports, music) and products (beers, gifts) in exchange of a Tweet or a Face book wall update about your brand.

Examples Of F-commerce:

- 1-800-Flowers f-store: The first ever store in Face book that supported transactions Within the network itself (The first ever transaction took place at 11:50 am EST on July 8, 2009 for bouquet of flowers 'A Slice of Life' bouquet)
- Levi's Friends Store: One of the first e-commerce sites to use Face book social plug-in to Offer instant personalization. Friends logging into the site using their Face book Credentials can view items popular among their friends and other Face book users, as well As post directly to their Face book wall
- Diesel's Diesel Cam: An early example of an in-store f-commerce, the Diesel Cam was a Fitting-room mirror connected to face book that allowed Diesel store shoppers in Spain to Shop with their social graph by sharing tryouts with friends and soliciting feedback

Type of F-Commerce:

There are two basic types of f-commerce

"On-Face book" f-commerce

- **Face book stores (f-stores) -** e-commerce enabled Face book pages, such as that of Coca-cola, used to sell Coke merchandise
- **Face book Credits payments -** allows customer to make "frictionless" in-game payments and buy directly from their newsfeed (with Face book Credits)

Retailer's Readiness

F-commerce transactional capabilities:

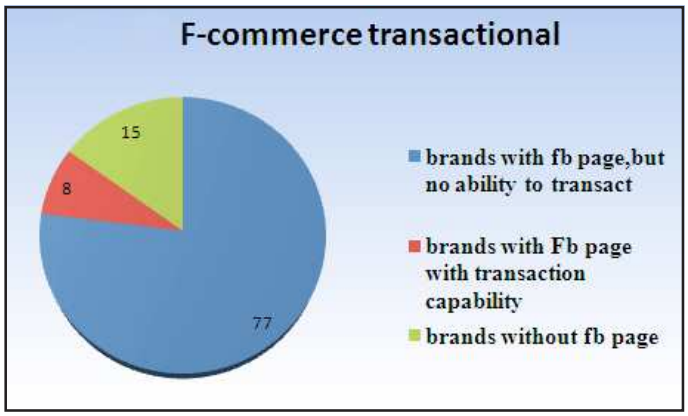

Predicted Social Commerce Growth (Billions of $)

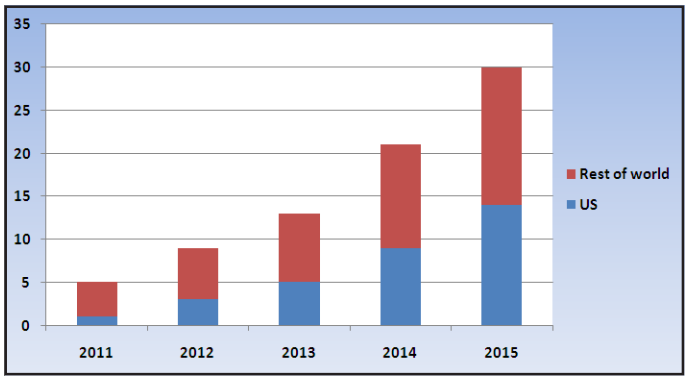

Customers' Willingness

Users Asked About FB Shopping Habits:

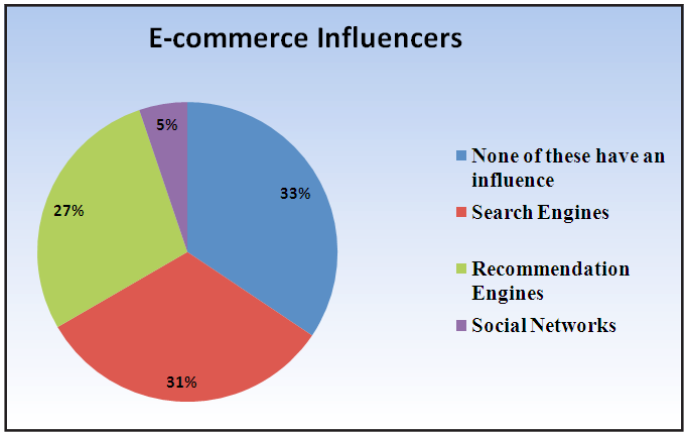

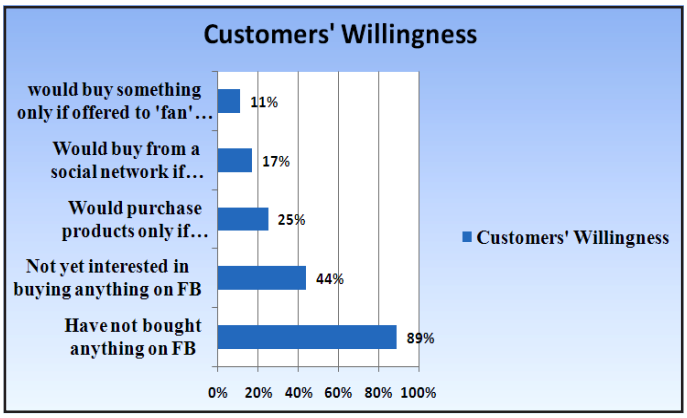

Conclusion:

Brands have been hawking product on their Face book fan pages for no more than two years now and yet the promise of F-commerce has the retail world buzzing. One prediction says social commerce will top $30 billion globally by 2015, with Face book-generated sales one of the primary drivers. Certainly brands like Gap, coca cola, Starbucks and Disney etc. Find out the various aspects of F-commerce shopping store like F-store, Levi's Friends Store, and Diesel's Diesel Cam etc. Most of the user's of social networking website used face book for shopping as compare to other's social networking website like Twitter's, Linkedin etc. in present status user's of face book is around 1 billion (12 oct.2012), so we can say that's for promoting the goods and services company used face books that is more Result oriented as compare to other's tools of sale promoting.

Reference: (Journals & website:)

1. Anckar, B., and D. D'Incau, "Value Creation in Mobile Commerce: Findings from a Consumer Survey", the Journal of Information Technology Theory and Application (JITTA), 4:1, 2002, 43-64.
2. Amit, R., and C. Zott, "Value Creation in E-Business," Strategic Management Journal, 2001, 22, 493-520.
3. Clarke, R., "Appropriate Research Methods for Electronic Commerce," Working paper, version of April 19, 2000.
4. Daitch, J., R. Kamath, R. Kapoor, A. Nemiccolo, J. Sahni, and S. Varma, "Wireless Applications for Business: Business Anytime, Anywhere," Kellogg TechVenture 2000 Anthology, 2000.
5. Forrester Research, "Mobile and ditz Commerce won't Meet Expectations," Press release, September 6, 2000.
6. Gimein, M., "M (For Misguided?)-Commerce," Fortune, October 11, 2000.
7. Guerley W."Making Sense of the Wireless Web," Fortune, Aug.15, 2000.
8. Alectus Personnel (2000) Press Release.
9. Andersen Consulting (2000) "Wireless Data".
10. Barnett, Nick, Stephen Hodges and Michael J. Wilshire (2000) "M-commerce: An
11. "Operator's Manual", The McKinsey Quarterly, 3.
12. www.en.wikipedia.org/wiki/social commerce
13. www.ecommercetimes.com
14. www.socialcommercetoday.com
15. www.facebook.com/
16. Starting an eBay Business for Dummies by Marsha Collier
17. E-Commerce: An Indian Perspective 3Rd Ed. Author, Joseph. Publisher

Basava Philosophy as an exemplary framework for pioneering Social Entrepreneurs - A study

Pradeep N.E. * Sathya Keerthy ** Vinay Y. ***

ABSTRACT - The social environment has been highly prejudiced by distended global business scenarios, by which the geographical boundaries have been shrinking. As a result there has been a competitive world emerged for creating such business needs through liberalization and globalization of economies. In the world of competitiveness and to be the market leaders, some of the organizations may have compromised on the wellness of society by perilous organizational practices. Aside a group of benevolent individuals are thriving to facilitate the society with reliable business practices and efforts. There has been an enormous effort by many scholars and social entrepreneurs to identify alternative arrangements to match the needs and deliverables of the society. As a result the world is witnessed with budding entrepreneurs who have the attitude and acumen for creating a business along with the interest to care for the society they exist. It's learnt that all the existing efforts in social entrepreneurship are made to find innovative solutions to overcome and address the societal disorder and synchronize the business needs with social interest. This study does not limit to understand the social entrepreneurship process, but extends to find the root of the ailment and develop a best matching framework based on Basava Philosophy. The study will include reviewing the work of selected philanthropists who have contributed towards social entrepreneurship and relate it with Basava Philosophical framework.

Keywords:

Basava Philosophy, Social Entrepreneurs, Social Entrepreneurship, Social Enterprises.

Introduction:

Social entrepreneurship is an effort made to find innovative solutions to overcome and address the societal imbalances and synchronize the business needs with social interest. The study has revealed that researcher's extensive effort to understand and derive a common definition for the term 'Social Entrepreneurship' and 'Social Entrepreneur' has been partial. Peter F. Drucker defines an entrepreneur as one who always searches for change, responds to it and exploits it as an opportunity. Innovation is the basic tool of entrepreneurs, the means by which they exploit change as an opportunity for a different business or service.[1] Social Entrepreneur may be defined as an individual or organization who seeks out opportunities to improve society by using practical, innovative, and sustainable approaches. "What business entrepreneurs are to the economy, social entrepreneurs are to social change", Social entrepreneurs want to make the world a better place and have a driving passion to make that happen.[2] Social entrepreneurship is the recognition of a social problem and the use of entrepreneurial principles to organize, create and manage a social venture to achieve a desired social change. While a business entrepreneur typically measures performance in profit and return, a social entrepreneur also measures positive returns to society. Thus the main aim of social entrepreneurship is to further broaden social, cultural and environmental goals. Social entrepreneurs are commonly associated with the voluntary and not-for-profit sectors.[3]

The term social entrepreneurship may be a contemporary idiom however the process of social entrepreneurship as referred in diverse definitions existed since ages. The earliest reference of social entrepreneurship can be witnessed in the Indian history during 12th century, when Basaveshwara who also was known as Basavanna was the then prime minister in Bijjala's rule. This period had prevalent practices like caste based discrimination, untouchability, varna system, blind beliefs, gender discrimination and other similar anomalies in the society, due to which social disorder was created and the society was bewildered. Basavanna had then the interest to eradicate all these anomalies by building a welfare state.

*** Research Scholar & Faculty, Acharya Institute of Graduate Studies, Bangalore ** Research Scholar , CBSMS, Bangalore University, Bangalore *** Faculty, Acharya Institute of Graduate Studies, Bangalore (INDIA)**

In this effort he originated an exemplary framework of 'Basava Philosophy' which oriented to layout the best practices to establish the intended welfare state.

Basava philosophy focused on equality, fraternity and brotherhood. Thus he upheld the human values in the society. This philosophy is very relevant in the society, as well as to the corporate world. The essence of Basaveshwara's principles of 'Kayaka' and 'Dasoha' is that it is not merely an occupation to earn one's livelihood but it should also be utilized for the promotion of the well being of society. This idea is most essential for the present day civilization.[9] By this it's understood that Basava Philosophy emphasised on micro level social entrepreneurship which if being followed by the universe the outcome would be the accomplishment of social wellbeing.

Frame Work of Basava Philosophy

Basava philosophy is a model based on egalitarian approach which brings out the essence of social entrepreneurship. The key components of Basava Philosophy are:

a. Kayaka

b. Dasoha

Kayaka (Work) - A doctrine which explains the dignity of labor, that there is no difference in the kind of work one performs but every work is equal and therefore one-self should perform it with total dedication and divinity. Basava expressed through this philosophy about the importance of work as "Kayakave Kailasa", where he denote that 'Work is Worship'. The philosophy also preaches that one has to work just not to earn a living for self rather should the means of work should be ethical in nature.

Dasoha (Sharing) - This principle emphasizes that the earning which is in excess than required to satisfy the physiological needs of individual should be shared through distribution to the wellness of society. By this amassing of wealth will not be an aspect of the society otherwise every member of the society will serve to care for each others voluntarily.

This philosophical framework will facilitate social entrepreneurs to raise the funds for the activities through the means of generous donations from philanthropists or earning by ethical way by performing various businesses and serve the societal cause by sharing the excess profits as investment in social enterprises. This phenomenon will result as universal process and a cyclic in nature resulting in efficient utilization of available resources.

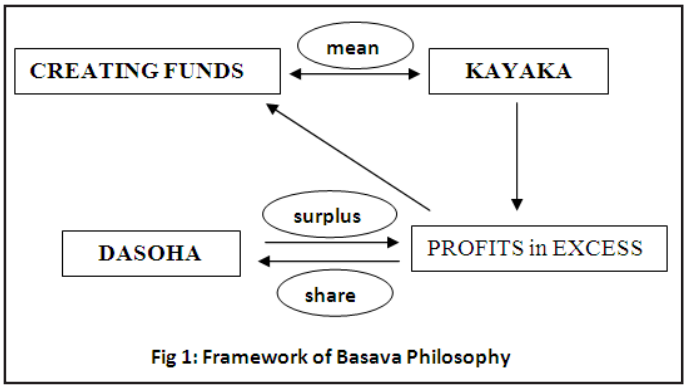

Fig 1: Framework of Basava Philosophy

Applicability of Basava Philosophy based framework in Indian Social Enterprises: A Review

In the past, social and ethical businesses have tended to be set up and owned by a charity or NGO as a way of raising money to supplement grants and donations. However, in recent years a growing number of them have been set up by individuals or groups of social entrepreneurs whose personal ethics have led them to use their business expertise to do something positive for their community or society in general.4 Selected enterprises of similar interests have been reviewed and detailed as below:

Case 1: Sri Sathya Sai Central Trust:

"For health, the heart is important;
For knowledge, the head is important;
For the body, water is essential;
All these three - Healthcare,
Education and Water should be provided for free.
They should not be commercialized,
for all these are gifts from God".

- Bhagawan Sri Sathya Sai Baba

Sri Sathya Sai Central Trust was founded by Bhagawan Sri Sathya Sai Baba on 2nd September, 1972. Under the Bhagawan's guidance, the trust has been undertaking a number of welfare activities such as providing free education at school and university levels, delivering quality medical care at primary, secondary and tertiary levels completely free of charge, supply of pure drinking water in various regions of the state of Andhra Pradesh and the metropolitan city of Chennai. Thus, it has been His instrument, translating into action His message of selfless love, touching the lives of

millions. It has actively initiated the economic, moral and spiritual regeneration of society and today stands as a paragon of service worthy of emulation.

Sri Sathya Sai Central Trust as a Public Charitable Trust is carrying out activities in the areas of:

1. Relief to the Poor
2. Medical Relief
3. Education
4. Other objects of General Public Utility

In the process of providing the above services the Trust is running the given below projects:

1. Running and Maintenance of Sri Sathya Sai Institute of Higher Medical Sciences at Prasanthigram (Andhra Pradesh) and at Whitefield, Bangalore (Karnataka)
2. Running and Maintenance of Sri Sathya Sai Mobile Hospital
3. Building a Corpus Fund for the Trust [5]

The Trust has been able to transform the vision of Bhagawan Sri Sathya Sai Baba into reality, thus helping the society to satisfy their physiological needs. The key objective of the Trust lies in being benevolent in approach and in the order all the facilities and services are oriented towards these concerns. The funds to manage the above activities are raised majorly through donations from domestic and international philanthropists.

The above case denotes the objective of Bhagawan Sri Sathya Sai Baba bearing an interest and love towards the society which can be related to the qualities of social entrepreneur and the services to social entrepreneurship.

Sri Sathya Sai Central Trust (SSSCT) & Framework of Basava Philosophy:

The entrepreneurial aspects of SSSCT can be related with the framework of Basava Philosophy:

Creating Funds - SSSCT generates its funds majorly through donations from philanthropists.

Kayaka - The Trust engages its resources through providing the divine services with complete dedication and commitment.

Dasoha - In line with the vision of the Trust, the services are rendered to the people without any expectations for the actions and work. By this, Trust contributes in immensely towards the societal benefits and economical growth. Aside Trust employs huge number of labors to manage the execution of desired activities by which employment is offered to the needy and service oriented people.

Profits in Excess - The total funds raised through various sources are utilized efficiently in executing the duties (Kayaka) and thus offering the services by sharing to the needy people in the society (Dasoha).

Case 2: Sree Siddaganga Mutt:

Sree Siddaganga Mutt was established during 15th Century A.D. According to history the mutt was established by 'Sri Gosala Siddeshwara Swamiji', who belongs to 'Shunya Simhasana' - A spiritual academy at fame during the days of social reformer Basaveshwara. The "Siddaganga' is the name came when one of the saints exercised his spiritual power and made the pond let in one of the caves of the overhanging hillock adjoining the mutt.[6]

Holiness Sree Sree Shivakumara Swamiji is currently holding the role as Head of the Mutt, who assumed full responsibility in 1941 by Sree Uddana Swamiji. Sri Shivakumara Swamiji of Siddaganga Mutt has no faith in any religion other than the religion of humanity. He has opened the doors of knowledge to the poor and the oppressed, and provided them with food and shelter.[7] Dr. Abdul Kalam hails Siddaganga seer's contribution to the society on his 100th Birthday celebrations by a message of 'Giving':

'Radiating message on Giving'
"O my fellow citizens,
In giving, you receive happiness,
In Body and Soul
You have everything to give.
If you have knowledge, share it
If you have resources, share them with the needy.
Use your mind and heart,
To remove the pain of the suffering,
And, cheer the sad hearts.
In giving, you receive happiness
Almighty will bless all your actions."[8]

Vision of Sree Siddaganga Mutt:

The vision of Sree Siddaganga Mutt is based on Basava Philosophy with the saying - 'Kayakave Kailasa' which means 'Work is Worship'. The mutt emphasizes on:

1. Equality in society
2. Education

3. Societal harmony

It's been learnt that the Mutt feeds for more than 10000 people who comprises students, devotees and visitors to the math, thrice a day. This great achievement could not be possible for any organization without the determination to provide the honorable service to enhance the societal status. The Mutt has been successful in conveying the philosophical thoughts through philanthropist activities and thus uplifting the people to greater standards. In Karnataka there are numerous organizations who work to promote the rights of people, however Sree Siddaganga Mutt has been able to demonstrate the vision efficiently by creating egalitarian society and providing education to the needy children. Source of funds are mainly by generous donations from the public and some contributions from the government in the form of partial financial support in the maintenance of few destitute children.

Sree Siddaganga Mutt & Framework of Basava Philosophy:

Creating Funds - Source of funds rely on generous donations from general public, philanthropists, government aid and surplus funds from its affiliated organizations.

Kayaka - Siddaganga Gurukula at Sree Siddaganga Mutt where more than 9000 children are provided with free food, shelter and education without any discrimination of caste, creed or sex which also includes a school for the blind and a school for the spastic children. Sree Siddaganga Education Society has established more than 130 schools and colleges mostly in rural areas providing education to nearly 45000 students.

Dasoha -At Sree Siddaganga Mutt on an average 10000 people are provided food thrice a day that includes students, devotees and visitors. Free education including food and shelter for more than 9000 children is provided at Siddaganga Gurukula. The Mutt believes that every effort is made to achieve the societal synchronization and in this regard the wealth gained is shared to the society in return.

Profits in Excess - Apart from the funds rose through donations, the Mutt has associated organizations where the surplus funds are re-utilized in the service of Sree Siddaganga Mutt.

Conclusion

The societal tribulations are present across geographies; however the enterprises having utmost humane desires would volunteer to contribute to the development of society in whole. The above reviewed cases reveal the facts and philosophies, where the pioneering social entrepreneurs should departmentalize their activities by prioritizing the needs of society in changing environments. Basava Philosophy may be considered as an exemplary framework to manage social entrepreneurial process as it has strong emphasize towards the core principles of society and humane approach in deliverables. The philosophy also accentuates on the micro-level entrepreneurial efforts as the referred framework suits to entrepreneurs across levels in society. To conclude 'Framework of Basava Philosophy' is more relative to the contemporary societies and the pioneering social entrepreneurs.

References

1. Veerabhadrappa Havinal, 2009, Management and Entrepreneurship, New Age International (p) Ltd, p.97
2. Stephen P. Robbins & Mary Coulter, 2012, Management 11e, Pearson Education Inc.(Prentice Hall), p.141
3. Thompson, J.L, 2002, The World of the Social Entrepreneur, The International Journal of Public Sector Management, 15 (4/5), p.413
4. Social Enterprise London, Social enterprise in the 3rd sector
5. URL - http://srisathyasai.org.in/Pages/Service_Projects/Introduction.htm
6. http://www.sreesiddagangamutt.org/
7. http://archive.deccanherald.com/Deccanherald/Oct242006/spectrum14282320061023.asp
8. http://www.abdulkalam.com/kalam/jsp/display_sear chco ntent.jsp?content=739&columnno=0&starts=0&search_for=pura&sublink_id=68
9. S A Palekar, 2002, Basaveshwara and Human Rights, ABD Publishers, p 73

****

A Study on Association between Self Confidence & Academic Achievement of Rural Adolescents

P. Nagda * Dr. Suman Audichya **

Abstract - The present study was an attempt to study the association between self confidence and academic achievement of rural adolescent boys and girls of 16 to 18 years old. 60 boys and 60 girls in the age group of 16-18 years were randomly drawn from 4 non co- educational government senior secondary schools in rural areas of Udaipur district. Academic Achievement was assessed by the overall percentage of marks of students in the last year examination. Chi-square test was applied to study the association between self confidence and academic achievement of adolescents. None of the first divisioner boys and girls were observed in low level of self confidence. Statistically there was no association observed between self confidence and academic achievement in case of boys and girls both.

Intorduction

Adolescence is the developmental period of transition between childhood and adulthood. It is considered to be most stressful period of life. During adolescence, young people establish their emotional and psychological independence, learn to understand and manage their sexuality and consider their future role in society.

Today the adolescents are very much concerned about their academic achievement. The academic achievement is an important factor in enhancing their self confidence. Many students are capable of producing higher academic achievement because of their higher self confidence

In this period, adolescents take initial decision about occupation and career selection. Adolescents begin to thinks about their abilities and interests to experiment with work role, and to make vocational plans.

Government school influences identify development through the academic demands of formal curricula and through exposure to teaches who emphasize academic achievement, motivation and attitudes to shoulder responsibility and leadership with authority.

Rural adolescents are involve in career selection and vocational aspiration and destiny of adolescents depends upon their academic achievement. Good academic achievement support and ensure a better and prosperous future for adolescents.

Thus academic achievement play a vital role in wholesome development of and enhance the self confidence of adolescents. Now a days various educational programmes are running for the rural adolescents.

The government also putting efforts by various schemes and benefits specially in rural area. When they achieve higher grades they get recognition from school and home which enhances their self confidence. Academic success gives the adolescent satisfaction and inspiration for future planning. Thus therefore the research conducted to study the association between self confidence and academic achievement of rural adolescents with following objective:

1.To study the association between self confidence and academic achievement of adolescents.

Methods

Sample -

The total sample for the present study consisted of 60 boys and 60 girls between the age range of 16 to 18 years sample were purposively selected on the basis of

- Unmarried adolescent boys and girls.
- Studying is non co-educational government senior secondary schools.
- Not suffering from any disability and regularly passing in each class.

Tools -

Background Information Performa - Background Information of the respondents was taken through the Performa made by the investigator to elicite information regarding name, age, class, stream, academic achievement, participation in extracurricular activities, prize winner, ordinal position, no of siblings, educational and occupational level of parents, monthly income, type of family, type of home and total family members.

Self Confidence Inventory -

Self Confidence Inventory developed by Agnihotri (1985) was modified by the investigator. After modification, the inventory was given to four subject matter specialists for evaluation. In the light of suggestion received, further modifications were made and inventory was finalized. Self confidence inventory

*** Research Scholar M.Sc. ** Professor and Head, Department of Human Developments and Family Studies, College of Home Science MPUAT Maharana Pratap University of Agriculture and Technology, Udaipur (Raj.)**

has 100 items under the four components i.e. personal, emotional, social and educational.

Academic Achievement - Academic achievement was assessed by the overall percentage of marks of students in the last year examination.

Data Analysis -

Chi-Square test was used to study the association between self confidence and academic achievement of adolescent boys and girls.

Results and Discussions

Academic achievement was assessed by the overall percentage of makes of students in the last year examination. It was obtained from the official records of the school. Then percentage distribution on self confidence were categorized into three categories according to their academic achievement.

Table 1-

Percentage distribution on academic achievement and self confidence level of adolescent boys

N=60

Level of self confidence	Academic Achievement Level		
	I DIVISIONERS 3 (5)	II DIVISIONERS 36 (60)	III DIVISIONERS 21 (35)
High	1 (1.66)	7 (11.66)	3 (5)
Average	2 (3.33)	19 (31.66)	16 (26.66)
low	-	10 (16.66)	2 (3.33)

Table 2-

Percentage distribution on academic achievement and self confidence level of adolescent girls

N=60

Level Of self confidence	Academic Achievement Level		
	I DIVISIONERS 4 (6.66)	II DIVISIONERS 36 (60)	III DIVISIONERS 20 (33.33)
High	1 (1.66)	4 (6.66)	4 (6.66)
Average	3 (5.1)	23 (38.33)	15 (25)
low	-	9 (15)	1 (1.66)

Table- 1 and 2 represents the percentage distribution on academic achievement and self confidence of boys and girls. It is revealed from the table that most of the boys and girls were II divisioners and had average level of self confidence 5 percent boys were I divisioners, among them 1.66 percent were having high self confidence and 3.33 percent were having average self confidence.

Among the 60 percent second divisioner boys, 11.66 percent were observed in high, 31.66 percent in average and 16.66 percent boys were observed in low level of self confidence. Among the 35 percent third divisions boys. 5 percent were observed in high 26.66 percent in average and 3.33 percent were observed in low level of self confidence.

In case of girls, among the 6.66 percent first divisioner girls, 1.66 percent were having high self confidence and 5.1 percent were having average self confidence.

Among the 60 percent second divisioner girls, 6.66 percent were observed in high, 38.33 percent in average and 15 percent girls were observed in low level of self confidence.

Among the 33.33 percent III divisioner girls, 6.66 percent were observed in high, 25 percent in average and 1.66 percent were observed in low level of self confidence.

None of the first divisioner boys and girls were observed in low level of self confidence.

Most of the adolescents are participating in extracurricular activities and getting rewards. The parental support and encouragement, positive home environment and educational level of parents helps the adolescent boys and girls to succeed in academic achievement and enhances their self confidence.

Table - 2 Association between self confidence and academic achievement of adolescent boys and girls.

N = 120

S. No.	Group	X^2
1	Boys	4.976
2	Girls	3.646

** Significant at 0.05 percent level*

** Significant at 0.01 percent level*

Table 2 reveals that in case of boys and girls the Chi-Square values i.e. (calculated X2=4.976 and 3.646) 4 degree of freedom is greater than 0.005 (5% level of significance). It means that there is no association between self confidence and academic achievement. Thus it can be stated that academic achievement is not only the predictor of self confidence.

As table indicated that there is no association between self confidence and academic achievement of adolescent boys and girls of 16-18 years of age. Thus it can be stated that high academic achievement is not only the predictor of high self confidence, especially in rural adolescents. Along with academic achievement certain other factors play an important role in enhancing self confidence of rural adolescents. As parental interaction, attitude of teachers, aptitude (ability, development and motivation), instruction (amount and quality),

environment (home, classroom, peers, television), intelligence. Feeling of security and adjustment are the other important factors which are closely related to self confidence and academic achievement of adolescents. (Dhingira and Manhas 2009)

Self confidence is also governed by many other factors like participation in extracurricular activities, parental support, culture, age, socio economic status, their body weight, height, self image, gender presentation , upbringing, background variable and type of family which influence their level of self confidence. Some researches also showed that adolescents coming from nuclear family have better self concept than adolescents who are coming from joint family. Most of the adolescent boys and girls have average self confidence because they were regularly participating in extracurricular activities also wining prizes, though academically they are not average, but developing other skills, that are helpful in raising their self confidence.

Conclusion

1) Most of the boys and girls were II divisioners and have average self confidence.
2) None of the first divisioner boys and girls were observed in low level of self confidence.
3) There was no association between self confidence and academic achievement of adolescent boys and girls.

References

1. Begum, S. T and Phukan. M 2000, Academic achievement and intelligence. A co relational study in boys and girls, Indian Psychological Review, 56, 103-106.
2. Kaur, K 2012 Influence of self concept on Academic Achievement of Adolescents, International Indexed and Refused Research Journal,. 2250-2599
3. R. 1995. Rural female adolescence. Indian scenario, Social change, 25,177-188
4. Nuthana, G 2007, Gender analysis of Academic achievement among high school students. Thesis submitted to University of Agriculture Sciences, Dharwad.

****

Determinants of Working Capital in Cement Industry A case study of Ultratech Cement Ltd.

Dr. N.K. Patidar * Smt. Nidhi Saxena **

Abstract- Working capital is considered to be the life force of an economic entity and its efficient management decides the trade off between liquidity and profitability. There are several factors that determine the working capital requirement in a firm for ex. growth in sales, performance of the firm, size of the firm etc. This paper tries to identify the factors which determine the working capital requirement in Indian cement industry. A case study is performed on Ultratech cements, a company listed on both NSE (National Stock Exchange) and BSE (Bombay Stock Exchange) of India. 12 years data (2000-2012) was considered for this study. A regression analysis was performed using WCR (working capital requirement) as dependent variable and growth in sales, size of the firm, performance, operating cash flow, operating efficiency, debt equity ratio, business indicator, price of raw materials as independent variables. It was found that only debt to equity ratio plays a significant role in determining working capital requirement of the firm.

Introduction- The cement sector notably plays a critical role in the economic growth of the country and its journey towards conclusive growth. Cement is vital to the construction sector and all infrastructural projects. The construction sector alone constitutes 7 per cent of the country's gross domestic product (GDP). The industry occupies an important place in the Indian economy because of its strong linkages to other sectors such as construction, transportation, coal and power.

India is the second largest producer of quality cement in the world. The cement industry in India comprises 183 large cement plants and over 365 mini cement plants. Currently there are 40 players in the industry across the country. The cement industry in India is experiencing a boom on account of overall growth in the economy. The demand for cement, being a derived one, depends mainly on the industrial activities, real estate business, construction activities and investment in the infrastructure sector.

The Indian cement industry is involved in production of several types of cement such as Ordinary Portland Cement (OPC), Portland Pozzolana Cement (PPC), Portland Blast Furnace Slag Cement (PBFS), Oil Well Cement, Rapid Hardening Portland Cement, Sulphate Resisting Portland Cement, White Cement, etc. They are produced strictly as per the Bureau of Indian Standards (BIS) specifications and their quality is comparable with the best in the world.

Indian cement majors-ACC Ltd, Shree Cement Ltd and Ultratech-have signed a cooperation pact to support low carbon investments in India. The pact was signed in Geneva with member companies of the World Business Council (WBC) for Sustainable Development's Cement Sustainability Initiative and International Finance Corporation (IFC). Under the pact, a Low Carbon Technology Roadmap for the Indian cement industry is to be launched this year-end. The roadmap will outline a possible transition path for the cement industry to reduce its direct emissions by 18 per cent by 2050. The cement industry of India is expected to add 30-40 million tonnes per annum (MTPA) of capacity in 2013. The developing economies are generally faced with inefficient deployment of resources available to them. Capital is the scare productive resource in such economies and proper utilization of resource promotes the rate of growth, cuts down the cost of production, and above all beefs up the efficiency of the productive system. Hence, the purposeful harnessing of capital is of paramount importance in any development policy of economies. The total capital of a company comprises of fixed capital and working capital. The emphasis has ever been on the growth and efficiency of fixed capital. Cement industry, which is being investigated in the present study, is indeed the backbone of economic growth in any country. A thick relationship has been found between the level of economic growth and the quantum of cement consumption in developed as well developing countries. Cement industry, through its forward linkages provides the maximum stimulus to growth in other industry also. One employee in cement manufacturing activity supports eight to ten persons in related activities. In India, since independence, great emphasis has been laid on the development of cement industry. It is one of the key basic industries in India. It plays dominant role in the national economy. Cement industry ranks second after the Iron and steel industry. Cement is indispensable in building and construction works. The production and consumption of cement, to a large extent, indicates a country's progress.

*** Prof. of Com., Govt. College Pipliya Mandi, Dist. Mandsaur ** Research Scholar, Vikram University, Ujjain (MP) INDIA**

The development of transport, infrastructure, irrigation and power projects etc. depends to a very large extent on the availability of the cement.

Conceptual Framework :- Working capital of a firm refers to the firm's capital which is used to finance short term or current assets like cash, inventory, receivables, debtors etc. It is the amount of money which is required to cover the cost of operating the enterprise. Current assets are considered to be one of the important components of the total assets of the firm. The amount blocked in the current assets has an opportunity cost. As the amount of current assets increase, the cost associated with it also increases and the profitability of the firm decreases. The factors that influence the working capital requirement of a firm can be broadly classified into two categories depending on their relationship with the firm. These categories are:

1. Endogenous factors: factors which are internal to the firm and can be controlled to some extent. These factors include:

a. Size of the firm.
b. Debt equity ratio.
c. Operating cash flow.
d. Operating efficiency.
e. Performance of the firm.

2. Exogenous factors: these are the factors which are external to the firm and cannot be controlled. These factors include:

a. Business environment.
b. Prices of raw materials.
c. Growth in sales of the firm.

Several studies have been conducted on the working capital management of the firms, but, very few of them concentrate on the determinants of working capital requirements of a firm. The aim of this study is to identify factors that influence the working capital requirement of firms in the Indian cement industry. Ultratech Cement Ltd., a listed company, has been chosen for the purpose of this study. It is the Second largest firm in the Indian cement industry (by Market Capitalisation) and has averaged a sales growth of approximately 9% per annum over the past 12 years.

Literature review :- In his paper Liquidity-Profitability Tradeoff: An Empirical Investigation in an Emerging Market. international Journal of Commerce and Management, Eljelly (2004) mentioned that the type of business the company is in and the history of the company play a vital role in determining the working capital requirement of the company. The cash gaps of the company and the working capital required by the company also differ from industry to industry. It also depends on the ability of the company to obtain credit form the suppliers. Some companies which are able to obtain large amount of credit from the suppliers maintain negative cash gaps or short term working capital.

Methodology- *Sample and data* - ACC limited, a company listed on both NSE (National stock Exchange) and BSE (Bombay stock exchange) was chosen for study. Study was performed on data of 12 years (2000- 2012). The data was collected from CMIE database.

Variables :- *Independent variable*: Shulman and Cox (1985) proposed that working capital requirement represents the spontaneous uses and sources of funds over a firm's operating cycle, which are computed as follows: WCR (Working Capital requirement) = Accounts receivables + Inventory - Accounts payable - other payables.

Dependent variables: all the variables except debt to equity ratio are used as their first order differences.

1. Performance of the firm: measured as ratio of profit after tax to total assets.
2. Size of the firm: measured as total assets of the firm.
3. Operating cash flow.
4. Debt equity ratio.
5. Business indicator: the IIP indicator of cement industry is used as the business indicator.
6. Price of raw materials: the yearly WPI index of metallic minerals is used to measure the change in price of raw materials.
7. Operating efficiency of the firm: measured as the ratio if PBDITA (profit before depreciation interest & tax) to sales.
8. Growth in sales of the firm (percentage).

Conclusion :-From the findings, it can be concluded that not all the factors play a significant role in determining the working capital requirement of the firm. The coefficients of all the exogenous factors are insignificant. Therefore Prices of raw materials, growth in sales of the firm and business environment do not play any significant role. Of all the endogenous variables, performance of the firm, size, operating efficiency and operating cash flow do not play a significant role. Only debt equity ratio plays a significant role in determining the working capital requirement of the firm.

References :-

01. Factors determining working capital management in cement industry: south Asian journal of management.
02. The determinants of working capital requirements in Palestinian Industrial corporations : International Journal of Economics and Finance; Vol. 5, No. 1; 2013.
03. An Analysis of Working Capital Management Results Across Industries.Mid American Journal of Business, 2(2), 12-18. Yadav, R., Kamath, V., & Manjreka, P. (2009).
04. Working Capital Management: A study of Maharashtra's bulk drugs listed companies. Chemical Business, 27-34. Ranjith, B. A. (2008).
05. The Impact of Firms' Capital Expenditure on Working Capital Management: An Empirical Study across Industries in Thailand. International Management View, 4(1), 11-24. Singh, P. (2008).

An Exploratory Study Of Indian Foreign Trade

S. K. Maheshwari * Ankita Pipada **

Indian economy and foreign trade are on a growth trajectory. Indian exports have come a long way in value terms from the time of gaining independence in 1947. The total value of India's merchandise exports increased from US $ 1.3 billion in 1950-51 to US $ 63.8 billion in 2003-04 - a compound rate of 7.6 per cent. Trade growth has picked up post liberalization of 1991. The composition of trade is now dominated by manufactured goods and services. India services exports share in global exports is more than double of that of Indian manufacturing exports. East Asian countries, particularly China have become a major trading block. There is huge untapped potential for Indian foreign trade in years to come. Indian exports have come a long way from the time of independence in terms of value. The total value of India's merchandise exports increased from US $ 1.3 billion in 1950-51 to US $ 63.8 billion in 2003-04 - a compound rate of 7.6 per cent [Malik, (2005)].Indian economy and foreign trade has shown progress post liberalization. In contrast to the pre-reform period (1950-90), the actual growth of exports in the post-reform period has been above the potential offered by the growth of world demand.

The gap between the actual and potential is mainly explained by an improvement in the overall competitiveness of India's exports [Virmani, (2003), Veeramani, (2007)].

Over the last few years, the growth rates has picked up. The current account has followed an inverted "U" shaped pattern during the period from 2001-02 to 2006-07, rising to a surplus of over 2 per cent of GDP in 2003-04. Thereafter it has returned close to its post-1990s reform average, with a current account deficit of 1.2 per cent in 2005-06 and 1.1 per cent of GDP in 2006-07. Capital inflows, as a proportion of GDP, have been on a clear uptrend during the six years (2001-02 to 2006-07) of this decade. They reached a high of 5.1 per cent of GDP in 2006-07 after a somewhat modest growth rate of 3.1 per cent in 2005-06. The net result of these two trends has been a gradual rise in reserve increase to reach 4 per cent of GDP in 2006-07. With capital inflows exceeding financing requirements, foreign exchange reserve increase was of the order of US$ 15.1 billion in 2005-06 and US$ 36.6 billion in 2006-07. As a proportion of GDP, external debt was 17.2 per cent and 17.9 per cent in 2005-06 and 2006-07 respectively [Ministry of Finance, (2008)]. This research paper studies Indian foreign trade since 1949. It consists of three sections including this introduction part. The second section studies various aspects of Indian foreign trade and the last section is conclusion part.

Indian foreign trade has grown in absolute numbers as compared to 1950-51, but its share in world trade has gown down from around 2.5 percent to 0.67 percent in 1991 and increased to more than one percent in 2007. For the purpose of study, foreign trade can be divided into three periods namely 1950-1970, 1971-1991 and post 1991.

During the first phase, 1950-1970, exports have grown at a very slow rate. During 1950s the exports growth rate was 3.6 percent in dollar terms and 3.5 percent in 1960s. Due to rising imports and stagnant exports, policy of import substitution was started in 1960s to cut down on imports. Five primary commodities constituted a major portion of Indian exports and the prevailing belief was that the country had nothing much to export. Government had adopted a policy of export pessimism and import substitution during this period. Exports were largely neglected during the first and the second five-year plans, which was justified on the ground that demand for Indian exports was

Volume III_Issue3 (5)_Fall2008 282 inelastic. Whilst the world merchandise export was growing at 6.3 per cent per annum during the 1950s, exports from India stagnated. As the world merchandise exports expanded relatively faster during the 1960s at 8.8 per cent per annum, the growth rate of India's exports improved somewhat to 3.6 per cent per annum. Clearly, the country failed to make the best use of the trade possibilities

available during the 1950s and 1960s [Singh, (1964); Bhagwati and Srinivasan, (1975); Nayyar, (1976); Veeramani, (2007)]. Several studies have argued that the import substitution policies had created a bias against exports in India. In spite of the various export promotion schemes adopted in the 1970s and 1980s, profitability in the heavily protected domestic market remained significantly higher than that in the export market [Kathuria (1996), Veeramani, (2007)].

Trend analysis was used to project the export and import growth and trade deficit/ surplus up to 2020. For this, time series data, ranging from 1950-2007 on export, import and trade deficit/surplus was used. The analysis shows that export

*** Prof. Of Commerce , Govt. College Ratlam ** Reseach Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P) INDIA**

trade will grow up to US$ 61 billion. On the other hand import will continue to grow and cross US $ 79 billion. The trade deficit will keep increasing and reach USD 18 billion by 2020.
Indian foreign trade has undergone a change in its composition over the years. In 1948-49, tea, jute manufacturers, cotton manufactures, oilseeds, hides and skins, and metals and ores constituted 71 per cent of total Indian exports. This dependence on a few commodities not only introduced an element of instability in export prospects but was bound to weaken the country's position in regard to larger questions of policy [Planning Commission, (1950)]. Import consisted of manufactured goods and food grains. On the eve of independence in 1947 ,exports consisted chiefly of raw materials and plantation crops while imports composed of light consumer goods and other manufactures [Mathur, (2006)]. The composition of trade has changed considerably. Today the manufactured goods and services dominate the export basket.
The composition of exports shows a perceptible shift in this decade i.e. 2000s from light
manufactures to heavy manufactures and petroleum crude and products as shown in Table 6. The share of textiles and ready-made garments (RMG) has fallen dramatically by 11.1 percentage points in 2006-07 over 2000-01 followed by gems and jewellery, leather and leather manufactures and handicrafts. Share of engineering goods and petro products has increased by 7.6 percentage points and 10.7 percentage points, respectively. The share of primary products has declined somewhat with the decline in share of exports from agricultural and allied sector being partly offset by a rise in the share of ores and minerals by 2.8 percentage points. The share of chemicals, including petrochemicals, has increased marginally. The share of petroleum crude and products has risen further to 18 per cent in the first half of 2007-08 from 15 per cent in 2006-07. Engineering goods' share also maintained a rising trend in 2007-08. Export growth in 2006-07 was driven mainly by petroleum products with 59.3 per cent growth and engineering goods with 38.1 per cent growth. The perceptible increase in the share of petroleum products in total exports reflected not only the rise in POL prices but also India's enhanced refining capacity. The rising share of engineering goods reflected India's revival of heavy manufactures. Induced by strong international minerals, after growing at a compound annual growthrate (CAGR) of 50 per cent in the first half of this decade, moderated to 12.6 per cent in 2006-07 [Finance Ministry, (2008)].
Indian foreign trade has progressed a lot over the last sixty years since Independence. The period can be divided into three sub-periods of 1950-1970, 1971-1991 and post-1991.The trade has stagnated and India lost its market share to other countries in 1950s and 1960s.The government Volume III_Issue3 (5)_Fall2008 292 policies and dominant views of import substitution and export pessimism has a negative impact. The
situation improved in 1970s and exports has finally picked up in post liberalization era in general and after 2002 in particular. In terms of composition, now it is dominated by manufactured goods and services. Services exports contribution has grown rapidly in recent past. India services exports share in global exports is more than double of that of Indian manufacturing exports In terms of direction, it is now more distributed around the world and the share of East Asian countries his on rise in overall trade. Looking at the large size of the economy, the high growth rates and small share in world trade; with the help of economic theories, we can safely conclude that there is huge untapped potential for Indian foreign trade in years to come.

References

[1] Bhagwati, J.; Srinivasan, T.N., (1975), Foreign Trade Regimes and Economic Development: India, New York: Columbia University Press.
[2] Commerce Ministry, (2008), India Trade Data Bank, Ministry website. http://commerce.nic.in/eidb/default.asp (Accessed on 18th March, 2008)
[3] IBEF, (2005), Why service exports could overtake merchandise trade by 2007,IBEF website. http://ibef.org/artdisplay.aspx?cat_id=391&art_id=7340 (Accessed on Dec 18, 2007)
[4] Indiastat Database (2008), Foreign Trade, Indiastat Database website. http://www.indiastat.com/india/ShowData.asp?secid=331671&ptid=107&level=3 (Accessed on 18th March, 2008)
[5] Joshi, V.; Little, I.M.D., (1994), India: Macroeconomics and Political Economy, 1964-1991, Washington DC: World Bank and Oxford University Press.
[6] Kathuria, S., (1996), Export Incentives: The Impact of Recent Policy Changes in India, Indian Economic Review, Vol 31, No.1, pp. 109 - 26.
[7] Malik, J.K., (2005), India's Exports- Policy defeating Exchange Rate Arithmetic, Economic and Political Weekly, Dec 24-31.pp 5486 - 5496.
[8] Mathur, V., (2006), Foreign Trade of India 1947-2007 : Trends

****

स्वर्ण जयन्ति शहरी रोजगार योजनान्तर्गत कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम का विश्लेषण (रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. लक्ष्मण परवाल * डॉ. सुनील सूर्यवंशी **

प्रस्तावना :-

देश के युवा बेरोजगारों को स्वरोजगार के लिए प्रोत्साहित करने हेतु केन्द्र व राज्य सरकारों द्वारा अनेक योजनाएँ संचालित की जा रही है। इन योजनाओं से जहाँ एक ओर शिक्षित बेरोजगारी का निराकरण होता है, वहीं दूसरी ओर देश के औद्योगिक व आर्थिक विकास में भी तीव्र गति से वृद्धि होती है।

प्रस्तुत शोध कार्य ''बेरोजगारी की समस्या का समाधान स्वरोजगार से ही संभव है'' इस तथ्य को ध्यान में रखकर शासन के द्वारा संचालित ''स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना'' से संबंधित है। इस योजना का शुभारंभ 1 दिसम्बर 1997 को किया गया है। जिसका मुख्य उद्देश्य देश के बेरोजगारों को स्वरोजगार हेतु प्रेरित करना है। इस योजना में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले शहरी गरीब व्यक्तियों को, जो बेरोजगार है या अल्प रोजगार है, स्वरोजगार के माध्यम से या मजदूरी रोजगार उपलब्ध कराकर लाभप्रद रोजगार प्रदान करने की व्यवस्था है।

इस योजना के 5 घटक है :- शहरी स्वरोजगार कार्यक्रम, शहरी महिला स्वसहायता कार्यक्रम, शहरी गरीबों के बीच रोजगार बढ़ाने हेतु कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रम, शहरी मजदूरी रोजगार कार्यक्रम, शहरी समुदाय विकास कार्यक्रम। इस योजना में शहरी गरीब बेरोजगारों या अल्प रोजगारों को स्वरोजगार उद्यम स्थापित करने तथा मजदूरी रोजगार शुरू करने के लिए उन्हें प्रोत्साहित कर लाभप्रद रोजगार के माध्यम से शहरी गरीबी के उपशमन का प्रयास किया जाता है। इसमें रोजगार अवसर प्राप्त करने तथा स्वरोगजार शुरू करने हेतु कौशल विकास और प्रशिक्षण कार्यक्रम द्वारा कौशल उन्नयन का कार्य किया जाता है। नोड्ल एजेन्सी जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम के द्वारा हितग्राहियों को आवश्यक प्रशिक्षण देकर बैंकों के माध्यम से ऋण उपलब्ध कराया जाता है। प्रशिक्षण अवधि 6 माह की होती है। इसके लिए प्रति प्रशिक्षणार्थी 10,000 रूपये का प्रावधान है, जिसमें सामग्री, प्रशिक्षण शुल्क, टूल कीट, प्रशिक्षणार्थियों को दिया जाने वाला मासिक भत्ता व अन्य व्यय शामिल है।

अध्ययन के उद्देश्य :-

प्रस्तुत शोध पत्र में इस बात का अध्ययन किया गया है कि रतलाम जिले में संचालित स्वर्ण जयंति शहरी रोजगार योजनान्तर्गत कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम हेतु किये गये प्रयास कितने सार्थक सिद्ध हुए हैं। वस्तुत: यह अध्ययन निम्न उद्देश्यों पर आधारित है :-

1. अध्ययन अवधि में कितने हितग्राहियों को प्रशिक्षित करने का भौतिक लक्ष्य रखा गया था ?
2. अध्ययन अवधि में कितने हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया ?
3. अध्ययन अवधि में कितनी वित्तीय राशि प्रशिक्षणार्थियों पर व्यय करने का लक्ष्य रखा गया था ?
4. अध्ययन अवधि में कितनी वित्तीय राशि प्रशिक्षणार्थियों पर व्यय की गई ?
5. जाति संवर्ग के आधार पर कितने प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षित किया गया ?

अध्ययन प्रणाली :-

यह अध्ययन रतलाम जिले में संचालित स्वर्ण जयन्ति शहरी रोजगार योजनान्तर्गत शहरी गरीबों में रोजगार बढ़ाने के लिए कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम पर आधारित है। जिसमें इस शोध पत्र में द्वितीय समंकों का प्रयोग किया गया है, जिन्हें जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम से संग्रहित किया गया है। अध्ययन के लिए संकलित समंकों की अवधि वर्ष 2005-06 से 2010-11 तक है। उपरोक्त संकलित समंकों के आधार पर औसत, प्रतिशत, अनुपात जैसी संख्यिकीय एवं गणितीय विधियों का प्रयोग कर अपेक्षित परिणाम ज्ञात किये गये हैं।

विश्लेषणात्मक विवेचन एवं परिणाम :-

रतलाम जिले में शहरी गरीबों में रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिये वर्ष 2005-06 से 2010-11 की अवधि में नोड्ल एजेन्सी द्वारा सम्पन्न की गई कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम की भौतिक एवं वित्तीय उपलब्धियों को शोधार्थी ने तालिका क्रमांक 1 द्वारा प्रदर्शित किया है *(देखिए तालिका 1)*

तालिका 1 से स्पष्ट है कि रतलाम जिले में गत छ: वर्षों में कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रमों में कुल 7,394 हितग्राहियों को प्रशिक्षित करने का भौतिक लक्ष्य रखा गया था, जिसकी तुलना में 5,030 हितग्राहियों को ही प्रशिक्षित किया गया है, जो कि 68.03 प्रतिशत के बराबर है। इसमें वर्ष 2008-09 में सबसे अधिक 2,000 हितग्राहियों को प्रशिक्षित करने का भौतिक लक्ष्य रखा गया था, जिसकी तुलना में 1,361 हितग्राहियों को ही प्रशिक्षित किया गया है। यह यह लक्ष्य की तुलना में 68.05 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2010-11 में सबसे कम 730 हितग्राहियों को प्रशिक्षित करने का भौतिक लक्ष्य रखा गया था, जिसकी तुलना में उस वर्ष 977 हितग्राहियों को ही प्रशिक्षित किया गया है।

यह इस वर्ष निर्धारित लक्ष्य से 33.84 प्रतिशत अधिक है। वर्ष 2007-08 एवं 2010-11 को छोड़कर शेष सभी वर्षों में हितग्राहियों के प्रशिक्षण की भौतिक उपलब्धि लक्ष्य की तुलना में कम रही है। वर्ष 2007-08 में 02 हितग्राही एवं वर्ष 2010-11 में 247 हितग्राहियों की यह संख्या लक्ष्य की तुलना में अधिक रही। औसत रूप से गत छ: वर्षों में प्रतिवर्ष 1,232 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया जाना था, जिसकी तुलना में प्रतिवर्ष 838 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है।

रतलाम जिले में गत छ: वर्षों में कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम में हितग्राहियों के प्रशिक्षण पर कुल 2 करोड़ 18 लाख 68 हजार रूपये व्यय करने का वित्तीय लक्ष्य रखा गया था, जिसकी तुलना में 1 करोड़ 21 लाख 58 हजार रूपये ही हितग्राहियों के कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम पर व्यय किये गये हैं। यह नोड्ल एजेन्सी द्वारा निर्धारित वित्तीय लक्ष्य के 55.60 प्रतिशत के बराबर है। इसमें वर्ष 2009-10 में सबसे अधिक 59 लाख 88

* प्राध्यापक ** सहायक प्राध्यापक वाणिज्य संकाय, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

हजार रूपये हितग्राहियों के कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम पर व्यय करने का वित्तीय लक्ष्य रखा गया था, जिसकी तुलना में उस वर्ष 30 लाख 69 हजार रूपये ही हितग्राहियों के कौशल प्रशिक्षण कार्यक्रम पर व्यय किये गये हैं। यह इस वर्ष लक्ष्य की तुलना में 51.25 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2005-06 में सबसे कम 18 लाख 13 हजार रूपये हितग्राहियों के कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम पर व्यय किये जाने का लक्ष्य रखा गया था, जिसकी तुलना में उस वर्ष 8 लाख 29 हजार रूपये हितग्राहियों के प्रशिक्षण कार्यक्रम पर व्यय किये गये हैं।

यह इस वर्ष लक्ष्य की तुलना में 45.73 प्रतिशत के बराबर है। इस प्रकार वित्तीय उपलब्धि गत छ: वर्षों में लक्ष्य की तुलना में प्रतिवर्ष कम ही रही है। औसत रूप से गत छ: वर्षों में प्रतिवर्ष कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम पर 36 लाख 45 हजार रूपये व्यय किये जाने थे, जिसकी तुलना में प्रतिवर्ष 20 लाख 26 हजार रूपये ही व्यय किये गये हैं।

जाति संवर्ग के आधार पर प्रशिक्षित हितग्राहियों का विश्लेषण:-

रतलाम जिले में शहरी गरीबों में रोजगार के अवसर बढ़ाने के लिये नोड्ल एजेन्सी, जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम द्वारा कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम में गत छ: वर्षों में विभिन्न जाति संवर्ग के हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जिसका विस्तृत विश्लेषण शोधार्थी ने तालिका क्रमांक 2 द्वारा किया है। *(देखिए तालिका 2)*

तालिका क्रमांक 2 से स्पष्ट है कि रतलाम जिले में गत छ: वर्षों में कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रमों में विभिन्न जाति वर्ग के कुल 5,030 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है। इसमें सबसे अधिक 1,501 हितग्राही अल्पसंख्यक वर्ग हैं, जो कि कुल प्रशिक्षित हितग्राहियों के 29.84 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार सबसे कम 192 हितग्राही अनुसूचित जनजाति वर्ग के हैं, जो कि कुल प्रशिक्षित हितग्राहियों के 3.82 प्रतिशत के बराबर है। औसत रूप से गत् छ: वर्षों में प्रतिवर्ष 838 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है।

गत् छ: वर्षों में सामान्य जाति वर्ग के कुल 532 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि कुल प्रशिक्षित हितग्राहियों के 10.58 प्रतिशत के बराबर है। इसमें वर्ष 2008-09 में सबसे अधिक 142 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 10.43 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2005-06 में सबसे कम 26 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 14.52 प्रतिशत के बराबर है। औसत रूप से गत छ: वर्षों में प्रतिवर्ष सामान्य वर्ग के 89 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है।

रतलाम जिले में गत छ: वर्षों में अनुसूचित जाति वर्ग के कुल 1,323 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि कुल प्रशिक्षित हितग्राहियों के 26.30 प्रतिशत के बराबर है। इसमें वर्ष 2007-08 में सबसे अधिक कुल 504 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 31.76 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2005-06 में सबसे कम 59 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 32.96 प्रतिशत के बराबर है। औसत रूप से गत् छ: वर्षों में अनुसूचित जाति वर्ग के 220 हितग्राहियों को प्रतिवर्ष प्रशिक्षित किया गया है।

इसी प्रकार गत् छ: वर्षों में अनुसूचित जनजाति वर्ग के कुल 192 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि कुल प्रशिक्षित हितग्राहियों के 3.82 प्रतिशत के बराबर है। इसमें वर्ष 2007-08 में सबसे अधिक 59 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 3.72 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2005-06 में सबसे कम 09 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 5.03 प्रतिशत के बराबर है। औसत रूप से प्रतिवर्ष अनुसूचित जनजाति वर्ग के 32 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है।

इसी क्रम में अन्य पिछड़ा वर्ग के कुल 1480 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि कुल प्रशिक्षित हितग्राहियों के 29.42 प्रतिशत के बराबर है। इसमें वर्ष 2007-08 में सबसे अधिक कुल 415 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 26.15 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2005-06 में सबसे कम कुल 62 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 34.64 प्रतिशत के बराबर है। औसत रूप से प्रतिवर्ष अन्य पिछड़ा वर्ग के 247 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है।

रतलाम जिले में गत छ: वर्षों में अल्पसंख्यक वर्ग के कुल 1,501 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि कुल प्रशिक्षित हितग्राहियों के 29.84 प्रतिशत के बराबर है। इसमें वर्ष 2008-09 में सबसे अधिक कुल 512 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 37.62 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2005-06 में सबसे कम कुल 22 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इस वर्ष प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 12.29 प्रतिशत के बराबर है। औसत रूप से प्रतिवर्ष अल्पसंख्यक वर्ग के 250 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है।

इसी प्रकार गत् छ: वर्षों में विकलांग वर्ग के कुल 02 हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है, जो कि कुल प्रशिक्षित हितग्राहियों के 0.04 प्रतिशत के बराबर है। इसमें से 01 हितग्राही वर्ष 2005-06 में व 01 हितग्राही वर्ष 2008-09 में प्रशिक्षित किया गया है, जो कि इन वर्षों में क्रमश: प्रशिक्षित कुल हितग्राहियों के 0.56 प्रतिशत व 0.07 प्रतिशत के बराबर है।

निष्कर्ष :-

प्रस्तुत शोध पत्र ''स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना अंतर्गत कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम का विश्लेषण'' रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार रहे हैं :-

- रतलाम जिले में नोड्ल एजेन्सी द्वारा वर्ष 2005-06 से वर्ष 2010-11 की अवधि में कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम में कुल 7,394 हितग्राहियों को प्रशिक्षित करने का लक्ष्य रखा गया था, जिसकी तुलना में मात्र 5,030 हितग्राहियों को ही प्रशिक्षित किया जा सका। अर्थात् नोड्ल एजेन्सी द्वारा प्रत्येक 100 प्रशिक्षणार्थियों के लक्ष्य में से मात्र 68 प्रशिक्षणार्थियों को ही निर्धारित प्रशिक्षण दिया गया।
- अध्ययन अवधि में प्रशिक्षण हेतु व्यय की जाने वाली निर्धारित राशि में से नोड्ल एजेन्सी द्वारा मात्र 55.60 प्रतिशत भाग ही व्यय किया गया।
- अध्ययन अवधि में जाति संवर्ग के आधार पर नोड्ल एजेन्सी द्वारा कुल 100 प्रशिक्षणार्थियों में से 30 अल्पसंख्यक वर्ग के, 29 अन्य पिछड़ा वर्ग के, 26. अनुसूचित जाति वर्ग के, 11 सामान्य वर्ग के एवं 04 अनुसूचित जनजाति वर्ग के हितग्राहियों को प्रशिक्षित किया गया है।

संदर्भ सूची :-

शोध पत्र की सम्पूर्ण सामग्री शोधकर्ता डॉ.सुनील सूर्यवंशी, सहायक प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम के शोध प्रबंध ''स्वर्ण जयंती

शहरी रोजगार योजना का हितग्राहियों के आर्थिक उन्नयन में योगदान'' (रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में) से ली गई है। यह शोध प्रबंध डॉ.लक्ष्मण परवाल, प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम के निर्देशन में पूर्ण किया गया है, जिस पर वर्ष 2013 में विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन ने पीएच. डी की उपाधि प्रदान की है।

तालिका क्र.1
कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम की भौतिक एवं वित्तीय उपलब्धियों का विश्लेषण

(राशि लाख रूपए में)

वर्ष	भौतिक उपलब्धि			वित्तीय उपलब्धि		
	लक्ष्य	उपलब्धि	प्रतिशत	लक्ष्य	उपलब्धि	प्रतिशत
2005-06	822	179	21.78	18.13	8.29	45.73
2006-07	1,259	509	40.43	25.17	11.27	44.77
2007-08	1,585	1,587	100.13	31.70	28.32	89.34
2008-09	2,000	1,361	68.05	39.99	8.49	21.23
2009-10	998	417	41.78	59.88	30.69	51.25
2010-11	730	977	133.84	43.81	34.52	78.79
योग	7,394	5,030	68.03	218.68	121.58	55.60
औसत	1,232	838	-	36.45	20.26	-

स्त्रोत : जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम

तालिका क्र.02
कौशल विकास प्रशिक्षण कार्यक्रम के अंतर्गत प्रशिक्षित हितग्राहियों का विश्लेषण
(जाति संवर्ग के अनुसार)

वर्ष	सामान्य जाति		अ.जा.		अ.ज.जा.		अन्य पिछड़ा		अल्पसंख्यक		विकलांग		कुल योग	
	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%	संख्या	%
2005-06	26	14.52	59	32.96	09	05.03	62	34.64	22	12.29	01	0.56	179	100.00
2006-07	55	10.80	181	36.15	18	03.54	133	26.13	119	23.38	-	-	509	100.00
2007-08	137	08.63	504	31.76	59	03.72	415	26.15	472	29.74	-	-	1,587	100.00
2008-09	142	10.43	260	19.10	47	03.46	399	29.32	512	37.62	01	0.07	1,361	100.00
2009-10	40	05.59	134	32.13	21	05.04	163	39.09	59	14.15	-	-	417	100.00
2010-11	132	13.51	182	18.63	38	03.89	308	31.53	317	33.44	-	-	977	100.00
योग	532	10.58	1323	26.30	192	03.82	1480	29.42	1501	29.84	02	0.63	5,030	100.00
औसत	89		220		32		247		250		-		838	

स्त्रोत : जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम

उज्जैन जिले में सिंचाई सुविधाओं के विकास व विस्तार का प्रमुख रबी फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता पर प्रभाव -एक अध्ययन

डॉ. पी. एस. पटेल * अर्चना बसेर **

सारांश :- भारतीय कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है। इसलिए कृषि की जोखिम कम करने हेतु सिंचाई सुविधाओं का विकास एवं विस्तार आवश्यक है। सिंचाई सुविधाओं से रबी फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। उज्जैन जिले में भी सिंचाई साधनों के संवर्धन हेतु प्रयास किये गये है। सतही जल स्रोतों के बजाय भूमिगत सिंचाई साधनों में अधिक वृद्धि हुई है जबकि सिंचाई के लिए स्थायी एवं पर्याप्त जल सुविधा के लिए सतही जल संग्रहण स्रोतों का विकास एवं विस्तार आवश्यक है। जिससे कृषि का समुचित विकास हो सके तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था के उन्नयन एवं भारत के समग्र समावेशी विकास के लिए एक महत्वपूर्ण अधोसंरचना भी संवृद्धित हो सके।

शब्द कुंजी :- सिंचाई सुविधा, रबी फसलें, कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता।

प्रस्तावना :- मानव स्वभावत: विकासशील प्राणी हैं। सृष्टि के प्रारंभ से ही मानव प्रकृति के रहस्यों का अन्वेषण व आकंलन करता रहा है जिससे जीवन सरल-सुगम व सुखी बन सके।

इसी क्रम में नित नये-नये साधनों का विकास व आविष्कार भी होता रहा है, पर मानव जीवन के क्रमिक विकास में यह सत्य भी स्पष्ट हुआ कि मानव अकेला नहीं रह सकता, वह मात्र स्वयं के सुख साधनों से संतृप्त नहीं होता बल्कि दूसरों के लिए भी साधनों को उपलब्ध करवाने में उसे सुखानुभूति होती है; यहीं से प्रारंभ होती है विकास की आधारभूत संकल्पना।

भारत गाँवों का देश है और भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है अर्थात् गाँवों का विकास कृषि पर आधारित है। देश को विकास के पथ पर आगे ले जाने में प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से कृषि का उल्लेखनीय योगदान है। कृषि उत्पादन को बढ़ाने में सिंचाई महत्वपूर्ण होने के साथ सर्वोपरि कारक की भूमिका का निर्वहन करती है। कृषि के विकास हेतु सिंचाई के साधनों का विकास आवश्यक है। सिंचाई से कृषि उत्पादकता में क्षेत्रीय असमानता को दूर किया जा सकता है। भारत में कृषि के कुछ क्षेत्र सम्पन्न है जबकि कुछ क्षेत्र पिछडे एवं अविकसित है इस क्षेत्रीय पिछडेपन का सबसे महत्वपूर्ण कारण कृषि की उत्पादकता में असमानता होना है। भारतीय कृषि को मानसून का जुआ कहा जाता है। अच्छी भूमि सबल पशु, तथा उत्तम बीज, खाद एवं आधुनिकतम औजार के रहने पर भी पानी के अभाव में कृषि कार्य अनिश्चित हो जाता है इस कारण कृषि के लिए आवश्यक साधनों में सिंचाई का स्थान सर्वोपरि होता है; कुछ विद्धानों ने इसे भूमि से अधिक महत्व दिया है।

उनके अनुसार भूमि में सिंचाई की सहायता से कुछ उपज ली जा सकती है, इसके बिना भूमि स्वयं कुछ भी उत्पन्न नहीं कर सकती, इसीलिए सिंचाई को कृषि की रीढ़ माना जाता है क्योंकि जब भूमि का जल से सिंचन होता है तो उसकी उर्वरता से खेतों में फसले लहलहाने लगती है। सिंचाई से देश में 17 प्रतिशत बंजर भूमि भी कृषि हेतु उपयोग की जा सकती है। कुल कृषि क्षेत्र के 40 प्रतिशत भाग हेतु ही सिंचाई सुविधा उपलब्ध है।

कृषि की उन्नति के लिए एवं इसे लाभप्रद व्यवसाय बनाने के लिए यह आवश्यक है कि प्रकृति पर कम निर्भर रहा जाये तथा मानव द्धारा निर्मित जल-संग्रहण-स्रोतों से खेती हेतु सामयिक जल आपूर्ति की जाये साथ ही पानी से खेतों की सिंचाई हेतु आधुनिकतम तकनीक जैसे स्प्रींकल, ड्रीपऐरिगेशन आदि प्रयुक्त कि जाये और नमी संरक्षण हेतु मल्चिंग पद्धति भी आवश्यकतानुसार अपनायी जाये।भारत में कृषि के पिछड़े रहने एवं कृषकों के निर्धन बने रहने का सबसे बड़ा कारण भारतीय कृषि की मानसून पर निर्भरता है जिसे सिंचाई सुविधाऐ उपलब्ध करवाकर कम किया जा सकता है। देश के अन्य क्षेत्रों की भांति मध्यप्रदेश की कृषि भी मानसून पर निर्भर है। वर्षा ऋतु में पर्याप्त पानी बरसने पर खरीफ की फसलों का उत्पादन किया जा रहा है एवं ठंड के महीनों में रबी फसलें - गेहूँ, चना, जौ आदि ली जा रही है।

सिंचाई के लिये जितना भी पानी मिलता है वह सब वर्षा जल के संग्रह पर ही निर्भर करता है। वर्षा होने पर कुछ पानी जमीन में रिसाव होकर भूमिगत जल स्त्रोंतो (कुंआ एवं ट्युबवेल) का भूजल स्तर बढ़ाता है तथा शेष पानी या तो व्यर्थ बह जाता है या निजी स्रोतों यथा - तालाब, डबरी आदि तथा शासकीय स्रोतों जैसे - सूक्ष्म, लघु, मध्यम व वृहद् बांधो के माध्यम से कृषि हेतु रोक लिया जाता है इनसे रबी की फसल में सिंचाई किया जाना संभव हुआ है। इस संग्रहित पानी से खेतों में पर्याप्त एवं समसामयिक सिंचाई से उपज भी समुचित मात्रा में बढ़ती है जबकि वर्षा न होने पर कृषि उत्पादन भी पर्याप्त मात्रा में नहीं हो पाता। यही देखते हुए सिंचाई के साधनों में निरंतर विकास एवं विस्तार किया जा रहा है और अनेक लघु, मध्यम एवं वृहद् योजनाएँ विभिन्न प्रदेश में निर्मित की गयी है। इन योजनाओं में नदी व नालों पर बांध बनाकर एवं तालाब को निर्मित करके नहरों के माध्यम से कृषि के लिए सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराई गई है साथ ही निजी सिंचाई साधनों में भी वृद्धि हुई हैं एवं भूजल स्तर भी बढ़ा है जिसके परिणाम स्वरूप मध्यप्रदेश में उपलब्ध सिंचाई सुविधाओं से सिंचित प्रमुख रबी फसलों का क्षेत्रफल एवं उत्पादन बढ़ा है।

इस कथन की पुष्टि हेतु निम्न तालिका अवलोकनार्थ प्रस्तुत है :-

म.प्र.की प्रमुख रबी फसलों का उत्पादन एवं क्षेत्रफल की तुलनात्मक स्थिति (उत्पादन हजार मेट्रिक टन एवं क्षेत्रफल हजार हैक्टेयर में)

तालिका क्रमांक 1

वर्ष	गेहूं		चना	
	क्षेत्रफल	उत्पादन	क्षेत्रफल	उत्पादन
2005-06	3784-70	6199-74	2540-71	2377-94
2010-11	4571-08	9046-07	3110-01	2636-06

स्रोत - *(1. म.प्र. का आर्थिक सर्वेक्षण वर्ष 2011-12, आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय म.प्र. पृष्ठ 38 व 39) (2. सिद्दीकी, शादाब एहमद, म.प्र. सम्पूर्ण अध्ययन, ISBN No. 978-81-7482-738-8 उपकार प्रकाशन पृष्ठ 41 व 42)*

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक - शास. महा. महिदपुर जिला-उज्जैन ** पीएच.डी. शोधार्थी-शास. माधव कला एवं वाणिज्य महा. उज्जैन (म.प्र.) भारत

उपर्युक्त तालिका के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 2005-06 की अपेक्षा सन् 2010-11 में आकर गेंहू की फसल का क्षेत्रफल एवं उत्पादन बढ़ा है साथ ही चने का क्षेत्रफल एवं उत्पादन भी बढ़ा है जोकि सिंचाई हेतु सुविधाओं के विकास एवं विस्तार से खेतों को पानी मिलने का परिणाम है।

उपर्युक्त भूमिका के आधार पर यहां शोध हेतु **''उज्जैन जिले में सिंचाई सुविधाओं के विकास एवं विस्तार का प्रमुख रबी फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता पर प्रभाव - एक अध्ययन''** विषय का चयन किया गया है तथा निम्नानुसार शोध अभिकल्पित एवं प्रस्तुत है।

अध्ययन क्षेत्र एवं अवधि :- प्रस्तावित शोध पत्र के अध्ययन का क्षेत्र सम्पूर्ण उज्जैन जिला है। प्रस्तुत शोध जिले में निर्मित सिंचाई साधनों के विकास एवं विस्तार के परिणाम स्वरूप प्रमुख रबी फसलों गेहूँ व चने के उत्पादन व उत्पादकता पर प्रभाव ज्ञात करने तक सीमित है यह अध्ययन वर्ष 2005-06 से वर्ष 2010-11 तक की अवधि के तथ्यों पर आधारित है।

अध्ययन के उद्देश्य:- सिंचाई योजनाओं के क्रियान्वयन से कृषि उत्पादन एवं उत्पादकता में आए परिवर्तन का पता लगाना ही प्रस्तुत शोध का उद्देश्य है।

परिकल्पना :- यहाँ परिकल्पित है कि उज्जैन जिले में सिंचाई परियोजनाओं के विकास एवं विस्तार से प्रमुख रबी फसलों के उत्पादन एवं उत्पादकता पर अनुकूल प्रभाव पड़ा है।

शोध उपकरण :- सिंचाई के निजी एवं शासकीय साधनों से सिंचित क्षेत्र तथा कृषि उत्पादन व उत्पादकता से संबंधित द्वितीयक समंको का प्रयोग किया गया है।

वर्तमान में जिले में एक मध्यम योजना जिससे सिंचित क्षेत्र 2268 हेक्टेयर तथा 43 लघु योजनाएँ जिनसे सिंचित क्षेत्र 12276 हेक्टेयर है साथ ही 22 बैराज है जिनसे सिंचित क्षेत्र 1497 हेक्टेयर है। इन योजनाओं के निर्माण में कुल 4075.67 लाख रूपये पूँजी विनियोजित की गई है। यहां 9 योजनाएँ निर्माणधीन अवस्था में है जिन पर 3998.44 लाख रूपये विनियोजित कर 3098 हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई क्षमता निर्मित होने का प्राक्कलन है। **तालिका क्रमांक 2 में देखिए उज्जैन जिले में सिंचाई के साधन एवं उनसे सिंचित क्षेत्र (सिंचित क्षेत्र-हेक्टेयर में)**

तालिका क्रमांक 2 के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि जिले में सिंचाई साधनों में निरन्तर वृद्धि हो रही है तथा सिंचित क्षेत्र से शुद्ध बोये गये क्षेत्र के प्रतिशत में भी वृद्धि हुई है। वर्ष 2005-06 से वर्ष 2010-11 तक देखा जाये तो जिले में सिंचाई साधनों की संख्या में जहाँ वृद्धि हुई। वहा सिंचित क्षेत्र में भी वृद्धि हुई वहीं शुद्ध सिंचित क्षेत्र का शुद्ध बोये गये क्षेत्र से प्रतिशत वर्ष 2005-06 में 29.49 प्रतिशत से बढ़कर वर्ष 2010-11 में 55.18 प्रतिशत तक हो गया है किन्तु वर्ष 2008-09 में सिंचित क्षेत्र में गिरावट आयी जो कम वर्षा व तालाबों में कम पानी संग्रहण के कारण दर्ज हुई है।

इस प्रकार सिंचाई साधनों में वृद्धि तथा वर्षा के स्तर में वृद्धि के साथ ही शुद्ध बोये गये क्षेत्र में बढ़ोतरी होती है तथा विपरीत परिस्थिति में उत्पादन भी कम होता है। **तालिका क्रमांक 3 में देखिए उज्जैन जिले की प्रमुख सिंचित रबी फसलों का उत्पादन, उत्पादकता एवं क्षेत्रफल** (उत्पादन :-हजार मेट्रिक टन क्षेत्रफल हेक्टेयर में, उत्पादकता :-कि.ग्रा./हेक्टेयर)

तालिका क्रमांक 3 के विश्लेषण से स्पष्ट हैं कि जिले में गेंहू का क्षेत्रफल वर्ष 2005-06 में 69776 हेक्टेयर था जो बढकर वर्ष 2010-11 में 135129 हेक्टयर हो गया है। वहीं वर्ष 2005-06 में गेंहू का उत्पादन 122.43 हजार-मेट्रिक टन था। वह बढ़कर वर्ष 2010-11 में 225.4 हजार मेट्रिकटन हो गया। वर्ष 2006-07 में गेंहूँ का सर्वाधिक उत्पादन 548.85 हजार मेट्रिक टन रहा अर्थात गेहूँ के क्षेत्रफल उत्पादन व उत्पादकता में सिंचाई के लिये पानी की उपलब्धता के आधार पर उच्चावचन की स्थिति रही है।

जिले में चने का क्षेत्रफल-वर्ष 2005-06 में 82460 हेक्टेयर था जो निरन्तर बढ़कर वर्ष 2010-11 में 212713 हेक्टेयर हो गया तथा चने का उत्पादन वर्ष 2005-06 में 62.75 हजार मेट्रिक टन था जो वर्ष 2010-11 में 104.79 हजार मेट्रिक टन हो गया। जिले में सर्वाधिक-सकल उत्पादन वर्ष 2006-07 में 687.6 हजार मेट्रिक टन रहा, जिसमें रबी फसलों के उत्पादन में सर्वाधिक वृद्धि 277.31 प्रतिशत रही। **तालिका क्रमांक - 4 में देखिए सकल सिंचित क्षेत्र एवं सकल उत्पादन में सह सम्बन्ध :- एक सांख्यिकीय विश्लेषण** (इकाई:- उत्पादन-हजार मेट्रिकटन, क्षेत्रफल-हजार हेक्टेयर में)

तालिका क्रमांक 4 में सकल सिंचित क्षेत्र व सकल उत्पादन के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक द्वारा सांख्यिकीय विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि सिंचित क्षेत्र व उत्पादन के बीच मध्यम श्रेणी का धनात्मक (+) 0.59 सहसम्बन्ध है। अर्थात् सिंचित क्षेत्र में वृद्धि से उत्पादन में भी वृद्धि हुई है तथा प्रति हेक्टेयर उत्पादकता पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ा है।

प्राकल्पना की पुष्टि :-

प्रस्तुत शोध हेतु किये गये अध्ययन से यहां शोध परिकल्पना की पुष्टि होती है कि उज्जैन जिले में सिंचाई परियोजनाओं के विकास एवं विस्तार से प्रमुख रबी फसलों के उत्पादन व उत्पादकता पर अनुकूल प्रभाव पड़ा है क्योंकि सिंचाई परियोजना के अन्तर्गत जिले में स्टापडेम, बैराज व तालाबों के बनने और इसके अतिरिक्त निजी साधनों जैसे नलकूप व कुओं के निर्माण (दृष्टव्य तालिका क्र.-2) से सिंचित क्षेत्र में वृद्धि हुई है। सिंचाई साधनों के निर्माण से जिले में प्रमुख फसलो के क्षेत्रफल व उत्पादन में वृद्धि के साथ-साथ उत्पादकता (दृष्टव्य तालिका क्र.-3) में भी वृद्धि हुई है।

गेहूँ व चने के उत्पादन में क्रमश: 258.57 प्रतिशत व 89.46 प्रतिशत वृद्धि हुई है तथा उत्पादकता में क्रमश: 7.84 प्रतिशत व 93.66 प्रतिशत की वृद्धि ज्ञात हुई है। इसके अतिरिक्त सकल सिंचित क्षेत्र एवं सकल उत्पादन के मध्य सहसम्बन्ध गुणांक द्वारा सांख्यिकीय विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ है कि सिंचित क्षेत्र व उत्पादन के बीच मध्यम श्रेणी का धनात्मक ;+0.59 सहसम्बन्ध (दृष्टव्य तालिका क्र.-4) से यह स्पष्ट होता है कि सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि से उत्पादन में भी वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष :-

यहां निष्कर्ष के रुप में यह कहा जा सकता है कि सिंचाई सुविधाओं के विकास से अर्थव्यवस्था में प्रगति होती है। देश के आर्थिक विकास को अग्र गति देने हेतु कृषि के लिए सिंचाई सुविधाओं का तीव्रतर विस्तार एवं विकास आवश्यक है तथा सुप्रबंधीत जल संग्रहण एवं वितरण प्रणाली भी वांछित है। सिंचाई सुविधाओं के विकास से केवल किसानों के खेतों में उत्पादन वृद्धि ही नहीं होती अपितु: उनके परिवार एवं गाँव की सर्वांगीण प्रगति भी होती है।

यह कहा जा सकता है कि भारतीय कृषि मानसून पर अवलंबित रही है किन्तु वर्तमान समय में इस स्थिति में सुधार हेतु सिंचाई सुविधाऐं बढ़ रही है। सिंचाई सुविधाओं के निर्माण में होती प्रगति ने कृषि की मानसून पर निर्भरता को कुछ हद तक कम किया है परन्तु वृहत् क्षेत्र में यह सुविधा निर्मित कर उपलब्ध करवाना अपेक्षित है।

सिंचाई सुविधा ग्रामीण जीवन में आमूल-चूल परिवर्तन ला रही है। इसलिए यदि सिंचाई के प्रभावों के बारे में यह कहा जाय तो अतिश्योक्ति न होगी कि सिंचाई सुविधाओं के विकास एवं विस्तार से ग्रामीण अर्थव्यवस्था में समृद्धि आती है जिससे समग्र विकास की दिशा में अग्रगामी कदम बढ़ाने के लिए एक महत्वपूर्ण अधोसंरचना उपलब्ध होती है इसलिए ग्रामीण अर्थव्यवस्था के उन्नयन एवं भारत के समग्र समावेशी विकास के लिए कृषि हेतु सिंचाई की सुविधाओं का निर्माण एवं विस्तार आवश्यक है।

यहां उल्लेखनीय है कि बांध-बंधान, स्टाप-डेम, बैराज, डबरी, तालाब आदि सतही भूजल संग्रहण स्रोतों का निर्माण किये जाने पर एक ओर रबी के मौसम में खेतों की सिंचाई तों होती है साथ ही भूजल स्तर बढ़ने से कुओं एवं नलकूपों से भी अधिक पानी ज्यादा अवधि के लिए खेती हेतु उपलब्ध होता है और पेयजल संकट का भी निवारण होता है। इसलिए सतही जल संग्रहण संसाधनों के संवर्धन, विकास, विस्तार एवं गहरीकरण हेतु शासकीय एवं निजी दोनों स्तर पर शीघ्र एवं पर्याप्त प्रयास किये जाना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

(1) रिसर्च मैथडोलॉजी- त्रिवेदी डॉ.आर.एन. शुक्ला 1999 कॉलेज बुक डिपो जयपूर

(2) गुप्त, डॉ. शिवभूषण, ''कृषि अर्थशास्त्र'', 2007 एस. बी. पी. सी. डी., पब्लिशिंग हाउस, आगरा

(3) ओझा बी.एल. ''भारतीय अर्थव्यस्था'', वर्ष 2010, रमेश बुक डिपो, जयपुर।

(4) जिला सांख्यिकी पुस्तक, उज्जैन 2005, 2011

****

तालिका क्रमांक-2

उज्जैन जिले में सिंचाई के साधन एवं उनसे सिंचित क्षेत्र (हेक्टेयर में)

वर्षा	नहरे		नलकूप		कुएं		तालाब		अन्य स्त्रोतों से सिंचित क्षेत्र	समस्त स्त्रोतो से शुद्ध सिंचित क्षैत्र	समस्त स्त्रोतों सें सकल सिंचित क्षैत्र	शुद्ध सिंचित क्षैत्र का शुद्ध बोये गये क्षैत्र से प्रतिशत
	संख्या	सिंचित क्षैत्र	संख्या	सिंचित क्षैत्र	संख्या	सिंचित क्षैत्र						
2005.06	34	716	45758	90176	31892	33506	55	3229	16712	143897	144339	29.49
2006.07	34	2164	45242	172956	32454	66212	55	6598	30949	278762	278879	56.71
2007.08	34	3534	46877	197438	33303	68574	43	4088	50404	324038	324069	66.14
2008.09	34	3570	47753	131272	33390	44267	43	926	19773	199808	199811	40.84
2009.10	34	5591	47992	156602	35795	66913	41	1685	27579	258370	258379	52.08
2010.11	34	4866	49985	166523	36039	67816	59	1951	32848	274004	274153	55.18

स्त्रोत- जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, जिला सांख्यिकीय कार्यालय, उज्जैन वर्ष 2005 एवं 2011, पृ.क्रं. 36 व 37

तालिका क्रमांक-3

उज्जैन जिले की प्रमुख सिंचित रबी फसलों का उत्पादन, उत्पादकता एवं क्षेत्रफल

(उत्पादन :-हजार मेट्रिक टन क्षेत्रफल हेक्टेयर में, उत्पादकता :-कि.ग्रा./हेक्टेयर)

वर्ष	गेहूँ			चना			सकल		सकल उत्पादनों में गतवर्ष से % वृद्धि या कमी
	क्षैत्रफल	उत्पादन	उत्पादकता	क्षैत्रफल	उत्पादन	उत्पादकता	क्षैत्रफल	उत्पादन	
2005–06	69766	122.43	3160	82460	62.75	761	152226	185.18	–
2006–07	183168	548.85	4706	119514	138.75	1161	302682	687.6	+277.31
2007–08	190976	341.11	2883	133724	91.33	683	324700	432.44	–37.11
2008–09	98796	184.32	3350	163321	127.22	683	262117	311.54	–27.96
2009–10	128916	318.57	3989	202956	192.19	947	331872	510.76	+63.95
2010–11	135129	225.4	2270	212713	104.79	947	347842	330.19	–35.35

स्त्रोत- जिला सांख्यिकीय पुस्तिका, जिला सांख्यिकीय कार्यालय, उज्जैन वर्ष 2005 एवं 2011, पृ.क्रं. 30

तालिका क्रमांक-4

सकल सिंचित क्षेत्र एवं सकल उत्पादन में सह सम्बन्ध :- एक सांख्यिकीय विश्लेषण

(इकाई:- उत्पादन-हजार मेट्रिकटन, क्षेत्रफल-हजार हेक्टेयर में)

	x	y	dx	dy	d^2x	d^2y	dxdy
वर्ष	सकल सिंचित क्षेत्र	सकल उत्पादन					
2005-06	152.206	185.180	-134.680	-224.438	18138.70	50372.42	30227.31
2006-07	302.682	687.600	+15.776	+277.982	248.88	77273.99	4385.44
2007-08	324.700	432.400	+37.794	+22.822	1428.39	520.84	862.53
2008-09	262.117	311.540	-24.789	-98.078	614.49	9619.29	2431.25
2009-10	331.872	510.760	+44.966	+101.142	2021.94	10229.70	4547.95
2010-11	347.842	330.190	+60.936	-79.428	3713.20	6308.8	-4840.02
योग	1721.439	2457.710			26165.6	154325.05	37614.46

कार्ल पियर्सन:- *सहसम्बन्ध गुणांक सूत्र द्वारा परिणाम r =+0.59*

खादी एवं ग्रामोद्योग क्षेत्र में औद्योगिक नीति, प्रोत्साहन, विकास तथा रोजगार के बढ़ते अवसर

डॉ. संजय पण्डित * श्रीमती मंजू शाक्य **

भारत में ग्रामीण बेरोजगारी की समस्या भी अत्यन्त जटिल है। एक अनुमान के अनुसार कुल बेरोजगारी का 20 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों से सम्बन्धित होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारों की क्षेणी में भूमिहीन किसानों, छोटे कृषकों एवं लघु दस्तकारों के साथ-साथ पढ़े-लिखे युवक भी शामिल है। गॉवों में 40 लाख से अधिक ऐसे युवक है, जिन्होंने माध्यामिक स्तर तक शिक्षा प्राप्त की हुई है। दूसरी और हमारे देश में शिक्षित बारोजगारों की बढ़ती हुई जनसंख्या भी चौकने वाली है।

वर्ष 1923 में कांगेस पार्टी में एक प्रस्ताव द्वारा श्री जमनालाल जी बजाज की अध्यक्षता में अखिल भारतीय खादी मंडल की स्थापना की। इसके पश्चात् गांधी जी ने वर्ष 1925 में चरखा संघ और वर्ष 1935 में ग्रामोद्योग संघ को जन्म दिया।विनोबा जी और पंडित जवाहरलाल नेहरू के सम्बन्ध मित्रवत् थे। जब पंचवर्षीय योजना का निर्माण चल रहा था तब पण्डित जी ने विनोबा जी से इस बारे में विचार किया था।

उनके तथा योजना आयोग के साथ हुई चर्चाओं के आधार पर भारत सरकार ने देश के गरीबों को राजगार देने के लिए एवं अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग की मदद के लिए वर्ष 1953 में अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग आयोग स्थापना की गई। केन्द्र सरकार द्वारा चरखा संघ की विकेन्द्रीयकृत इकाईयों को आर्थिक सहायता देना प्रारम्भ किया जिसके फलस्वरूप वर्ष 1952 में संसद ने खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड बनाया।

खादी और ग्रामोद्योग आयोग जहाँ केन्द्रिय स्तर पर योजनाओं के क्रियान्वयन हेतु नीति निर्धारण का कार्य करता है। वहीं सभी राज्यों में योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड का निर्माण किया गया है।

खादी का अर्थ– खादी से आशय है, कपास, रेशम या ऊन के हाथ कते सूत अथवा उनमें से दो या सभी प्रकार के सूतों के मिश्रण से भारत में हथकरघा पर बुना गया कोई भी वस्त्र।

ग्रामोद्योग का अर्थ – ग्रामोद्योग का आशय ऐसे किसी भी उद्योग से हैं जो ग्रामीण क्षेत्र (जिसकी आबादी 20,000 से अधिक न हो) में स्थित हो तथा जो विद्युत के उपयोग या बिना उपयोग के कोई माल तैयार करता हो या कोई सेवा प्रदान करता हो तथा जिसमें (संयंत्र तथा मशीनरी एवं भूमि भवन में) निवेशित स्थायी पूँजी प्रति कारीगर या कर्मी 50,000 रू से अधिक न हों।

ग्रामोद्योग क्षेत्र के अनतर्गत आने वाले उद्योग :-

1. खनिज आधारित उद्योग
2. वनाधारित उद्योग
3. कृषि आधारित और खाद्य आधारित उद्योग
4. बुलक और रसायन आधारित उद्योग
5. इंजीनियरिंग एवं परम्परागत ऊर्जा
2. वस्त्रोद्योग (खादी को छोड़कर)
7. सेवा उद्योग

म.प्र खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा संचालित योजनाएं-

परिवारमूलक इकाई स्थापना योजना- ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले हितग्राहियों को स्वयं का रोजगार स्थापित करने हेतु वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों से शहर की ओर पलायन रोका जा सके। इस योजना के लिए बैंक द्वारा स्वीकृत अनुदान की सीमा इकाई लागत राशि का 50 प्रतिशत है जिसकी अधिकतम सीमा रूपये 25000/- है।

हितग्राही का चयन – हितग्राही म.प्र के ग्राम पंचायत/नगर पंचायत क्षेत्र का निवासी हो। उसकी उम्र 18 वर्ष से 50 वर्ष के मध्य हो एवं वह बी.पी.एल. सूची में सम्मिलित हो योजना के पात्र हितग्राही का चयन जिले में पदस्थ उपसंचालक/प्रबंधक/सहायक प्रबन्धक के माध्यम से क्षमता के आधार पर किया जावेगा।

परिवार मूलक ईकाई स्थापना योजना की प्रगति

मांग संख्या	वर्ष	लक्ष्य		पूर्ति	
		ई.सं.	राशि	ई.सं.	राशि
41, 24, 52,	2010-11	2349	429.80	2253	447.22
41, 24, 52	2011-12	2597	342.25	2373	521.822
41, 24, 52	2012-13	2780	597.22	2597	597.22

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 2010-11 से वर्ष 2012-13 के दौरान पूर्ति में वृद्धि हुई है वर्ष 2010-11 में पूर्ति 447.22 लाख रूपये थी जो बढ़कर वर्ष 2012-13 में 597.22 लाख रूपये हो गई।

कारीगर प्रशिक्षण योजना – ग्रामीण क्षेत्रों में निवासरत युवाओं को स्वरोजगार एंव रोजगार प्राप्ति हेतु तकनीकी रूप से सक्षम बनाने एवं परम्परागत कारीगरों का उन्नत तकनीक से अवगत कराने के उद्देश्य से यह योजना लागू की गई है।

कारीगर प्रशिक्षण योजना की प्रगति

मांग संख्या	वर्ष	लक्ष्य		पूर्ति	
		ई.सं.	राशि	ई.सं.	राशि
41, 24, 52,	2010-11	0	40.02	1728	40.02
41, 24, 52	2011-12	1091	25.52	1147	25.52
41, 24, 52	2012-13	1122	22.48	1513	22.48

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 2010-11 से वर्ष 2012-13 के दौरान पूर्ति में वृद्धि हुई है वर्ष 2010-11 में पूर्ति 40.02 लाख रूपये थी जो बढ़कर वर्ष 2012-13 में 22.48 लाख रूपये हो गई।

प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम बोर्ड द्वारा संचालित प्रधानमत्री

* विभागाध्यक्ष वाणिज्य माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तलेबा, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, वाणिज्य संकाय, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रोजगार सृजन कार्यक्रम भारत शासन लघु सूक्ष्म एवं मध्यम उद्यम मंत्रालय की योजना है एवं इसकी राष्ट्रीय स्तर पर नोडल एजेन्सी खादी एवं ग्रामोद्योग आयोग है। प्रदेश में इसका संचालन तीन एजेन्सियों द्वारा किया जाता है-

1. जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र , 2. म.प्र खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड एवं 3. खादी तथा ग्रामोद्योग आयोग।

प्रधानमंत्री रोजगार सृजन कार्यक्रम की प्रगति

वर्ष	लक्ष्य		पूर्ति	
	ई.सं.	राशि	ई.सं.	राशि
2010-11	1122	1232.40	524	1211.44
2011-12	1109	1551.92	232	1550.23
2012-13	1282	2949.52	1127	7455.17

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि वर्ष 2010-11 से वर्ष 2012-13 के दौरान पूर्ति में वृद्धि हुई है वर्ष 2010-11 में पूर्ति 1211.44 लाख रूपये थी जो बढ़कर वर्ष 2012-13 में 7455.17 लाख रूपये हो गई।

खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड द्वारा अनेक योजनाएं खादी एवं ग्रामोद्योग के विकास के लिए संचालित की जा रही है जिससे खादी एवं ग्रामोद्योग के क्षेत्र में औद्योगिक नीति, प्रोत्साहन, विकास तथा रोजगार के अवसरों में वृद्धि हुई है।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

- भारतीय अर्थव्यवस्था - मिश्र व पुरी, हिमालया पब्लिसिंग हाऊस
- भारतीय अर्थव्यवस्था - डॉ. अग्रवाल अनुपम, साहित्य भवन पब्लिकेशन्स
- व्यावसायिक उद्यमिता - जी.एस सुधा, रमेश बुक डिपो, जयपुर
- वार्षिक प्रतिवेदन - म.प्र. खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड, भोपाल
- कुटीर एवं ग्रामोद्योग विभाग की योजनाएं - म.प्र. खादी तथा ग्रामोद्योग बोर्ड, भोपाल
- दैनिक भास्कर, नई दुनियां रोजगार निर्माण प्रतियोगिता दर्पण।

****

रतलाम जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों का तुलनात्मक विश्लेषण

डॉ. लक्ष्मण परवाल * डॉ. सुनील सूर्यवंशी **

प्रस्तावना :-

वर्तमान समय में अधिकांश पिछड़े एवं विकासशील देशों में न्यूनतम आय स्तर के कारण जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग निम्न जीवन स्तर पर जीवन गुजारने को मजबूर है। इस वर्ग को दो समय का भोजन व अन्य आवश्यक वस्तुएँ भी प्राप्त नहीं हो पाती है। ''गरीबी से आशय मनुष्य की आधारभूत आवश्यकताओं जैसे भोजन, कपड़ा, स्वास्थ्य आदि की पूर्ति हेतु पर्याप्त वस्तुओं एवं सेवाओं को जुटा पाने में असमर्थता से है।''

दूसरे शब्दों में ''गरीबी से अर्थ उस न्यूनतम आय से है, जिसकी एक परिवार के लिए आधारभूत न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आवश्यकता होती है तथा जिसे वह परिवार जुटा पाने में असमर्थ होता है।'' इस गरीबी को निरपेक्ष गरीबी कहते है। जो परिवार उस न्यूनतम आय को जुटा पाने में असमर्थ रहते है, ऐसे परिवारों को गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार कहा जाता है। गरीबी पर एक सापेक्ष विचार यह भी है, जिसमें उच्च वर्गीय व्यक्तियों के व्यय की तुलना निम्न वर्ग के व्यक्तियों के व्यय से की जाती है। इससे इनके जीवन स्तर की असमानता का अनुमान लगाया जाता है। भारत में गरीबी के निरपेक्ष विचार को ही अपनाया जाता है। भारत में गरीबी को 'केलोरी के उपभोग' से भी जोड़ा गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में 2400 केलोरी प्रतिदिन तथा शहरी क्षेत्रों में 2100 कलोरी से कम उपभोग करने वाले व्यक्ति को गरीब माना जाता है।

योजना आयोग द्वारा गठित ''न्यनूतम आवश्यकता व प्रभावपूर्ण उपभोक्ता माँग'' पर कार्यकारी दल (1979) ने उपभोग के इन न्यूनतम स्तरों के लिए ग्रामीण क्षेत्रों के लिए प्रति व्यक्ति प्रति माह व्यय की राशि 1973-74 के मूल्य पर लगभग 49/- रू. तथा शहरी क्षेत्र के लिए 56.60/- आँकी थी। इसे गरीबी की रेखा कहा गया था। इससे कम राशि व्यय करने वाले गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले व्यक्ति माने गये थे। बाद के वर्षो में कीमतों मे बढ़ोत्तारी के कारण सन् 1979-80 में यह राशि ग्रामीण क्षेत्रों के लिए प्रति व्यक्ति प्रति माह 76 रू. तथा शहरी क्षेत्रों के लिए 88/- रू. प्रति व्यक्ति प्रति माह निर्धारित की गई थी।

तत्पश्चात् बाद के वर्षो में कीमतों में परिवर्तन के कारण गरीबी का मापदण्ड भी परिवर्तित होता रहा। सातवीं योजना में इसमें संशोधन कर व्यय की जाने वाली राशि ग्रामीण क्षेत्रों में 11,060/- व शहरी क्षेत्रों में 11,850/- प्रति गृह वार्षिक उपभोग व्यय का मानदण्ड तय किया गया था।

अध्ययन के उद्देश्य :-

गरीबी की पीढ़ा से जहाँ पूरा विश्व, पूरा देश पीड़ित हैं वहीं मध्यप्रदेश का रतलाम जिला भी इससे अछूता नहीं रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में यह जानने का प्रयास किया गया है कि मध्यप्रदेश के रतलाम जिले में कितने शहरी गरीब परिवार निवासरत है। यह अध्ययन निम्न उद्देश्यों पर आधारित है :-

1. जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों की संख्या कितनी है ?
2. जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले कुल सर्वेक्षित परिवारों में जाति-संवर्ग के आधार पर क्या भिन्नताएं हैं ?
3. वर्ष 1997-98 के बी.पी.एल. सर्वे की तुलना में वर्ष 2002-03 के बी.पी.एल. सर्वे में कुल कितने परिवार तुलनात्मक रूप से गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करते हुए रेखांकित किये गये हैं, तथा जाति-संवर्ग के आधार पर उनमें क्या भिन्नताएं हैं ?
4. यह पता लगाना कि जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार किस निकाय में अधिक हैं तथा किस निकाय में कम हैं ?

अध्ययन विधि :-

प्रस्तुत शोध पत्र मध्यप्रदेश के रतलाम जिले पर आधारित है। यह शोध द्वितीय समंकों के आधार पर किया गया है जिन्हें जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय रतलाम से संग्रहित किया गया है। समंक वर्ष 1997-98 एवं 2002-03 में किये गये बी.पी.एल. सर्वे से प्राप्त आंकड़ों पर आधारित हैं। जिन्हें औसत, प्रतिशत व अनुपात जैसी सांख्यिकी एवं गणितीय विधियों से विश्लेषित कर अपेक्षित परिणाम प्राप्त किये गये हैं।

समंकों का विश्लेषण एवं शोध परिणाम :-

गरीबी रेखा के नीचे कौन-सा परिवार निवास करता है इसका निर्धारण आर्थिक एवं गैर आर्थिक मापदण्डों के आधार पर किया जाता है। मध्यप्रदेश के रतलाम जिले में इन्हीं निर्धारित मापदण्डों के आधार पर दो बार वर्ष 1997-98 एवं 2002-03 में बी.पी.एल. सर्वे कार्य किये गये हैं, जिसका विश्लेषण शोधार्थी द्वारा अग्र तालिकाओं में किया गया है (देखिए तालिका क्रमांक 1) तालिका 1 से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1997-98 में किये गये बी.पी.एल.सर्वे के अनुसार रतलाम जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले कुल 27,277 परिवार पाये गये हैं। इसमें से नगर निगम, रतलाम क्षेत्र में सबसे अधिक 56.97 प्रतिशत परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले रेखांकित किये गये हैं। इसके पश्चात नगर पालिका, जावरा क्षेत्र में लगभग 19.28 प्रतिशत परिवार तथा 06 नगर परिषदों में सबसे अधिक आलोट नगर परिषद में तथा सबसे कम नामली नगर परिषद में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार रेखांकित किये गये हैं।

जातिगत आधार पर रतलाम जिले में वर्ष 1997-98 के बी.पी.एल. सर्वे में कुल सर्वेक्षित 27,277 परिवारों में सबसे अधिक अन्य पिछड़ा वर्ग के 9,743 परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले रेखांकित किये गये है, जो कुल सर्वेक्षित परिवारों का लगभग 35.72 प्रतिशत भाग है। इसके पश्चात अल्पसंख्यक वर्ग, सामान्य वर्ग, अनुसूचित जाति वर्ग एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग का क्रम आता है, जहाँ क्रमश: 7510, 4264, 3969 एवं 1791 परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले रेखांकित किये गये हैं। प्रतिशत के आधार पर 27.53 प्रतिशत परिवार अल्पसंख्यक वर्ग के, 15.63 प्रतिशत परिवार सामान्य वर्ग के, 14.55 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जाति वर्ग के एवं मात्र 06.57 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जनजाति वर्ग के पाये गये हैं। (देखिए तालिका क्रमांक 2)

तालिका क्रमांक 2 से स्पष्ट होता है कि वर्ष 2002-03 में किये गये

* प्राध्यापक ** सहायक प्राध्यापक वाणिज्य संकाय, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

बी.पी.एल.सर्वे के अनुसार रतलाम जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले कुल 37,669 परिवार पाये गये हैं। इसमें से नगर निगम, रतलाम क्षेत्र में सबसे अधिक 61.21 प्रतिशत परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले रेखांकित किये गये हैं। इसके पश्चात नगर पालिका, जावरा क्षेत्र में लगभग 14.11 प्रतिशत परिवार तथा 06 नगर परिषदों में सबसे अधिक ताल नगर परिषद में तथा सबसे कम नामली नगर परिषद में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवार रेखांकित किये गये हैं।

जातिगत आधार पर रतलाम जिले में वर्ष 2002-03 के बी.पी.एल. सर्वे में कुल सर्वेक्षित 37,669 परिवारों में सबसे अधिक अन्य पिछड़ा वर्ग के 14,933 परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले रेखांकित किये गये है, जो कुल सर्वेक्षित परिवारों का लगभग 39.64 प्रतिशत भाग है। इसके पश्चात अल्पसंख्यक वर्ग, सामान्य वर्ग, अनुसूचित जाति वर्ग एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग का क्रम आता है, जहाँ क्रमश: 9613, 5881, 5074 एवं 2168 परिवार गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले रेखांकित किये गये हैं। प्रतिशत के आधार पर 25.52 प्रतिशत परिवार अल्पसंख्यक वर्ग के, 15.61 प्रतिशत परिवार सामान्य वर्ग के, 13.47 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जाति वर्ग के एवं मात्र 05.76 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जनजाति वर्ग के पाये गये हैं। (देखिए तालिका क्रमांक 3)

तालिका क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि रतलाम जिले में गत् दो बी.पी.एल. सर्वे की तुलना करने पर वर्ष 1997-98 की तुलना में वर्ष 2002-03 में कुल सर्वेक्षित परिवारों में 38.10 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है, जिसमें सबसे अधिक वृद्धि नगर परिषद-ताल में 125.02 प्रतिशत हुई है। इसके पश्चात् नगर निगम, रतलाम में 48.38 प्रतिशत, नगर परिषद-आलोट में 46.87 प्रतिशत, नगर परिषद-बड़ावदा में 41.29 प्रतिशत, नगर परिषद-सैलाना में 23.48 प्रतिशत, नगर परिषद-पिपलौदा में 14.74 प्रतिशत व नगर पालिका-जावरा में 1.06 प्रतिशत वृद्धि दर्ज हुई है। केवल नगर परिषद-नामली में 29.34 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई है।

जाति संवर्ग के आधार पर सामान्य वर्ग के परिवारों की संख्या में गत् दो बी.पी.एल. सर्वे की तुलना करने पर वर्ष 1997-98 की तुलना मे वर्ष 2002-03 में कुल 37.92 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है, जिसमें सबसे अधिक वृद्धि नगर परिषद-ताल में 528.72 प्रतिशत व सबसे कम नगर निगम-रतलाम में

20.20 प्रतिशत वृद्धि हुई है। नगर परिषद-नामली, नगर परिषद-पिपलौदा व सैलाना में सर्वेक्षित परिवारों में क्रमश: 55.17 प्रतिशत, 19.07 प्रतिशत व 4.35 प्रतिशत कमी दर्ज हुई है। नगर परिषद-बड़ावदा में कोई परिवर्तन नहीं पाया गया है।

अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों की संख्या में कुल सर्वेक्षित परिवारों में 27.84 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है, जिसमें सबसे अधिक नगर परिषद-नामली में 83.08 प्रतिशत, इसके पश्चात् 58.41 प्रतिशत, नगर परिषद-बड़ावदा में, 44.70 प्रतिशत, नगर पालिका-जावरा में, 34.44 प्रतिशत, नगर परिषद-पिपलौदा में, 26.03 प्रतिशत, नगर निगम-रतलाम में, 11.46 प्रतिशत, नगर परिषद-सैलाना में व 10.17 प्रतिशत, नगर परिषद-ताल में वृद्धि दर्ज हुई है। केवल आलोट नगर परिषद में 1.24 प्रतिशत कमी दर्ज हुई है।

अनुसूचित जनजाति वर्ग के परिवारों की संख्या में गत् दो बी.पी.एल. सर्वे की तुलना करने पर वर्ष 1997-98 की तुलना में वर्ष 2002-03 में 21.05 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है, जिसमें सबसे अधिक वृद्धि नगर परिषद-सैलाना में 515.79 प्रतिशत दर्ज हुई है। इसके पश्चात् 96.97 प्रतिशत नगर पालिका-जावरा में, 68.92 प्रतिशत नगर परिषद-बड़ावदा में, 12.44 प्रतिशत नगर निगम-रतलाम में वृद्धि हुई है। नामली नगर परिषद-में 88.44 प्रतिशत व पिपलौदा नगर परिषद-में 26.67 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई है।

अन्य पिछड़ा वर्ग के परिवारों की संख्याओं में गत् दो बी.पी.एल. सर्वे की तुलना करने पर वर्ष 1997-98 की तुलना में वर्ष 2002-03 में 53.27 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है, जिसमें सबसे अधिक 119.25 प्रतिशत वृद्धि नगर परिषद-ताल में, इसके पश्चात् 79.28 प्रतिशत नगर निगम-रतलाम में, 50.08 प्रतिशत नगर परिषद-आलोट में, 37.91 प्रतिशत नगर परिषद-बड़ावदा में व 7.74 प्रतिशत नगर परिषद-सैलाना में वृद्धि दर्ज हुई है। जबकि नगर पालिका-जावरा, नगर परिषद-नामली व नगर परिषद-पिपलौदा में क्रमश: 32.19 प्रतिशत, 9.09 प्रतिशत व 8.38 प्रतिशत की कमी दर्ज हुई है।

अल्पसंख्यक वर्ग के परिवारों की संख्या में गत् दो बी.पी.एल. सर्वे की तुलना करने पर वर्ष 1997-98 की तुलना में वर्ष 2002-03 में 28 प्रतिशत की वृद्धि दर्ज हुई है, जिसमें सबसे अधिक 486.67 प्रतिशत नगर परिषद-पिपलौदा में वृद्धि दर्ज हुई है। इसके पश्चात् 85.40 प्रतिशत नगर परिषद-ताल में, 69.03 प्रतिशत नगर परिषद-आलोट में, 55.83 प्रतिशत नगर परिषद-बड़ावदा में, 52.83 प्रतिशत नगर निगम-रतलाम में वृद्धि दर्ज हुई है, जबकि नामली, जावरा व सैलाना नगर परिषद व नगर पालिका में क्रमश: 60.61 प्रतिशत, 10.69 प्रतिशत व 9.26 प्रतिशत कमी दर्ज हुई है।

निष्कर्ष :-

प्रस्तुत शोध पत्र ' रतलाम जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों का तुलनात्मक विश्लेषण' के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं :-

- वर्ष 1997-98 के बी.पी.एल. सर्वे में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले 100 परिवारों में लगभग 57परिवार नगर निगम रतलाम क्षेत्र में, 19 परिवार नगर पालिका जावरा क्षेत्र में, 10परिवार नगर परिषद आलोट व ताल क्षेत्र में, 04 परिवार नगर परिषद बडावदा क्षेत्र में, 07 परिवार नगर परिषद सैलाना व पिपलौदा क्षेत्र में तथा 03 परिवार नगर परिषद नामली क्षेत्र में निवासरत पाये गये हैं।
- वर्ष 1997-98 के बी.पी.एल. सर्वे में जातिगत आधार पर गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले 100 परिवारों में से लगभग 36 परिवार अन्य पिछड़ा वर्ग के, लगभग 28 परिवार अल्पसंख्यक वर्ग के, लगभग 16 परिवार सामान्य वर्ग के, लगभग 14 परिवार अनुसूचित जाति वर्ग के तथा मात्र 06 परिवार अनुसूचित जनजाति वर्ग के पाये गये हैं।
- वर्ष 2002-03 के बी.पी.एल. सर्वे में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले 100 परिवारों में लगभग 61 परिवार नगर निगम रतलाम क्षेत्र में, 14 परिवार नगर पालिका जावरा क्षेत्र में, 13 परिवार नगर परिषद ताल व आलोट क्षेत्र में, 04 परिवार नगर परिषद बडावदा क्षेत्र में, 06 परिवार नगर परिषद सैलाना व पिपलौदा क्षेत्र में तथा 02 परिवार नगर परिषद नामली क्षेत्र में निवासरत पाये गये हैं।
- वर्ष 2002-03 के बी.पी.एल. सर्वे में जातिगत आधार पर गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले 100 परिवारों में से लगभग 40 परिवार अन्य पिछड़ा वर्ग के, लगभग 25 परिवार अल्पसंख्यक वर्ग के, लगभग 16 परिवार सामान्य वर्ग के, लगभग 13 परिवार अनुसूचित जाति वर्ग के तथा मात्र 06 परिवार अनुसूचित जनजाति वर्ग के पाये गये हैं।

- दोनों बी.पी.एल सर्वे का निकायवार तुलनात्मक विश्लेषण करने पर यह ज्ञात हुआ कि वर्ष 1997-98 की तुलना में वर्ष 2002-03 के बी.पी.एल. सर्वे में नगर निगम रतलाम, नगर परिषद ताल व आलोट में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों में वृद्धि हुई है, जबकि नगर पालिका जावरा व नगर परिषदें सैलाना, पिपलौदा व नामली में कमी दर्ज हुई है।
- दोनों बी.पी.एल.सर्वे का जातिगत आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण करने पर यह ज्ञात हुआ कि वर्ष 1997-98 की तुलना में वर्ष 2002-03 के बी.पी.एल. सर्वे मे अन्य पिछड़ा वर्ग के गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों में वृद्धि हुई है, जबकि अल्पसंख्यक वर्ग व अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों में कमी दर्ज हुई है।

संदर्भ सूची :-

शोध पत्र की सम्पूर्ण सामग्री शोधकर्ता डॉ.सुनील सूर्यवंशी, सहायक प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम के शोध प्रबंध ''स्वर्ण जयंती शहरी रोजगार योजना का हितग्राहियों के आर्थिक उन्नयन में योगदान'' (रतलाम जिले के विशेष संदर्भ में) से ली गई है। यह शोध प्रबंध डॉ.लक्ष्मण परवाल, प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम के निर्देशन में पूर्ण किया गया है, जिस पर वर्ष 2013 में विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन ने पीएच. डी की उपाधि प्रदान की है।

तालिका क्र.01 रतलाम जिले मेंगरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों का जाति संवर्ग के आधार पर विश्लेषण (बी.पी.एल. सर्वे वर्ष 1997-98 के अनुसार)

क्रं.	निकाय का नाम	कुल सर्वेशित परिवार		सामान्य वर्ग के परिवार		अनुसूचित जाति वर्ग के परिवार		अनुसूचित जनजाति वर्ग के परिवार		अन्य पिछड़ा वर्ग के परिवार		अल्पसंख्यक वर्ग के परिवार	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत		
1	नगर निगम रतलाम	15,539	56.97	3,060	71.76	2,274	57.29	1,358	75.82	5,540	56.86	3,307	44.03
2	नगरपालिका जावरा	5,260	19.28	222	05.21	443	11.16	99	05.53	1,258	12.91	3,238	43.12
3	नगर परिषद नामली	760	02.79	174	04.08	65	01.64	147	08.21	341	03.50	33	00.44
4	नगर परिषद सैलाना	1,013	03.71	184	04.32	192	04.84	38	02.12	491	05.04	108	01.44
5	नगर परिषद पिपलौदा	984	03.61	215	05.04	270	06.80	75	04.19	394	04.04	30	00.40
6	नगर परिषद ताल	1,247	04.57	94	02.21	177	04.46	-	-	613	06.29	363	04.83
7	नगर परिषद आलोट	1,389	05.09	152	03.56	322	08.12	-	-	647	06.64	268	03.57
8	नगर परिषद बड़ावदा	1,085	03.98	163	03.82	226	05.69	74	04.13	459	04.72	163	02.17
	योग	27,277	100.00	4,264	100.00	3,969	100.00	1,791	100.00	9,743	100.00	7,510	100.00
विभिन्न जाति संवर्ग का योग से प्रतिशत		100.00		15.63		14.55		06.57		35.72		27.53	

स्त्रोत :. जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम (म.प्र.)

तालिका क्र.02 रतलाम जिले मेंगरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों का जाति संवर्ग के आधार पर विश्लेषण (बी.पी.एल. सर्वे वर्ष 2002-03 के अनुसार)

क्रं.	निकाय का नाम	कुल सर्वेशित परिवार		सामान्य वर्ग के परिवार		अनुसूचित जाति वर्ग के परिवार		अनुसूचित जनजाति वर्ग के परिवार		अन्य पिछड़ा वर्ग के परिवार		अल्पसंख्यक वर्ग के परिवार	
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत		
1	नगर निगम रतलाम	23,057	61.21	3,678	62.54	2,866	56.48	1,527	70.43	9,932	66.51	5,054	52.57
2	नगरपालिका जावरा	5,316	14.11	735	12.50	641	12.63	195	08.99	853	05.71	2,892	30.08
3	नगर परिषद नामली	537	01.42	78	01.33	119	02.35	17	00.78	310	02.08	13	00.15
4	नगर परिषद सैलाना	1,251	03.32	176	02.99	214	04.22	234	10.79	529	03.54	98	01.02
5	नगर परिषद पिपलौदा	1,129	03.00	174	02.96	363	07.15	55	02.54	361	02.42	176	01.83
6	नगर परिषद ताल	2,806	07.45	591	10.04	195	03.84	03	00.15	1,344	09.00	673	07.00
7	नगर परिषद आलोट	2,040	05.42	286	04.86	318	06.27	12	00.55	971	06.50	453	04.71
8	नगर परिषद बड़ावदा	1,533	04.07	163	02.78	358	07.06	125	05.77	633	04.24	254	02.64
	योग	37,669	100.00	5,881	100.00	5,074	100.00	2,168	100.00	14,933	100.00	9,613	100.00
विभिन्न जाति संवर्ग का योग से प्रतिशत		100.00		15.61		13.47		05.76		39.64		25.52	

स्त्रोत :. जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम (म.प्र.)

तालिका क्र. 03 रतलाम जिले में गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने वाले परिवारों का जाति संवर्ग के आधार पर तुलनात्मक विश्लेषण (वर्ष 1997-98 एवं 2002-03 के अनुसार)

क्रं.	निकाय का नाम	सर्वेशित परिवारों की संख्या			सामान्य जाति वर्ग के परिवारों की संख्या			अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों की संख्या		
		97-98	02-03	प्रतिशत वृद्धि या कमी	97-98	02-03	प्रतिशत वृद्धि या कमी	97-98	02-03	प्रतिशत वृद्धि या कमी
1	नगर निगम रतलाम	15,539	23,057	+ 48.38	3,060	3,678	+20.20	2,274	2,866	+26.03
2	नगरपालिका जावरा	5,260	5,316	+1.06	222	735	+231.08	443	641	+44.70
3	नगर परिषद नामली	760	537	-29.34	174	78	-55.17	65	119	+83.08
4	नगर परिषद सैलाना	1,013	1,251	+ 23.49	184	176	-4.35	192	214	+11.46
5	नगर परिषद पिपलौदा	984	1,129	+14.74	215	174	-19.07	270	363	+34.44
6	नगर परिषद ताल	1,247	2,806	+125.02	94	591	+528.72	177	195	+10.17
7	नगर परिषद आलोट	1,389	2,040	+46.87	152	286	+88.16	322	318	-1.24
8	नगर परिषद बड़ावदा	1,085	1,533	+41.29	163	163	-	226	358	+58.41
	योग	27,277	37,669	+38.10	4,264	5,881	+37.92	3,969	5,074	+27.84

स्त्रोत :. जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम (म.प्र.)

क्रं.	निकाय का नाम	सर्वेशित परिवारों की संख्या			सामान्य जाति वर्ग के परिवारों की संख्या			अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों की संख्या		
		97-98	02-03	प्रतिशत वृद्धि या कमी	97-98	02-03	प्रतिशत वृद्धि या कमी	97-98	02-03	प्रतिशत वृद्धि या कमी
1	नगर निगम रतलाम	1,358	1,527	+12.44	5540	9932	+ 79.28	3307	5054	+ 52.83
2	नगर परिषद जावरा	99	195	+96.97	1258	853	-32.19	3238	2892	-10.69
3	नगर परिषद नामली	147	17	-88.44	341	310	-9.09	33	13	-60.61
4	नगर परिषद सैलाना	38	234	+ 515.79	491	529	+ 7.74	108	98	-9.26
5	नगर परिषद पिपलौदा	75	55	-26.67	394	361	-8.38	30	176	+486.67
6	नगर परिषद ताल	-	03	-	613	1344	+119.25	363	673	+85.40
7	नगर परिषद आलोट	-	12	-	647	971	+50.08	268	453	+69.03
8	नगर परिषद बड़ावदा	74	125	+68.92	459	633	+37.91	163	254	+55.83
	योग	1,791	2,168	+ 21.05	9,743	14,933	+53.27	7,510	9,613	+28.00

स्त्रोत :. जिला शहरी विकास अभिकरण कार्यालय, रतलाम (म.प्र.)

****

महिला उद्यमिता के विकास में निजी माइक्रो फाइनेंस कम्पनियों (BASIX) की भूमिका (बी.एस.एफ.एल. इन्दौर म.प्र. के विशेष संदर्भ में)

डॉ. सतीश माहेश्वरी * मदनमोहन विश्वकर्मा **

प्रस्तावना :-

उद्यम: साहसं धैर्य विद्या बुध्दि पराक्रम:।
षडेते यत्र वर्तन्ते तत्र दैव: सहायकृत।।

अर्थात् जहाँ उद्यम, साहस, धैर्य, विद्या, बुध्दि और पराक्रम ये छ: गुण होते है; वहा देव भी सहायता करते है। महान् दार्शनिक खलील जिब्रान ने कहा है कि ''उद्यम करो ताकि तुम जगत और जगदात्मा की गति के साथ रह सको''। सच में उद्यमिता जीवन में सर्वोत्कृष्ट क्रिया है क्योंकि यह जीवन के प्रति एक सृजनशील दृष्टिकोण है।

संतुलित आर्थिक विकास, कृषि विकास, तीव्र औद्योगिकीकरण, स्वरोजगार, गरीबी उन्मूलन, ग्रामीण उत्थान, आर्थिक समानता, नवाचार, मानव संसाधन विकास, नवीन टेक्नालॉजी का प्रयोग एवं उद्यमिता विकास ही हमारे राष्ट्र को विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में स्थान दिला सकते हैं। इसलिए आज हमारे देश में योजनाकारों व सरकारों के समक्ष मुख्य व्यावहारिक समस्या मानव संसाधनों का प्रभावपूर्ण उपयोग एवं उसका विकास हैं। आर्थिक क्रिया का मुख्य पात्र पुरूष वर्ग को ही समझा जाता है अर्थात् उद्यमी पुरूषों को ही माना जाता है। परंतु हमारे देश की लगभग आधी (48.50 प्रतिशत) आबादी महिलाओं की हैं।

अत: महिला उद्यमियों के विकास के द्वारा ही हम अपने उपरोक्त उद्देश्यों एवं लक्ष्यों को प्राप्त कर सकते हैं। वैसे तो उद्यमिता के क्षेत्र में पुरूष वर्ग का वर्चस्व रहा है, लेकिन विगत तीन दशकों में हुए सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिवर्तनों के फलस्वरूप उद्यमिता के क्षेत्र में महिलाओं का आगमन हुआ है तथा उदारीकरण, निजीकरण तथा शिक्षा के प्रचार ने इस आगमन का स्वागत किया है और अब महिला उद्यमियों की संख्या लगातार बढ़ रही है।

साहित्य का अवलोकन :-

बैंकिंग चिंतन-अनुचिंतन-2008, अंशुप्रिया अग्रवाल, हमारे देश में लघु वित्त 1992 से ही नाबार्ड द्वारा सुनियोजित कार्यक्रम के रूप में चलाया जा रहा हैं। वह बैंको के माध्यम से स्वयं सहायता समूहों की मदद करता रहा हैं। नाबार्ड ने प्रतिव्यक्ति ऋण आवश्यकता ग्रामीण क्षेत्रों मे 6 हजार एवं शहरी क्षेत्रों में 9 हजार आंकी है।

गरीबी के आधार पर लघु वित्त प्रदान करना जिसे बांग्लादेश के ग्रामीण बैंक ने अपनाया है जो नोबल पुरस्कार विजेता मुहम्मद युनूस की देन है। बांग्लादेश का ग्रामीण बैंक गरीब संपत्तिहीनों को ऋण प्रदान करता हैं। जो प्रत्यक्ष रूप से प्रतिभूतियाँ या जमानत देने की स्थिति में नहीं होते हैं, लेकिन सामाजिक प्रतिभूति या जमानत देने की स्थिति में जरूर होते है। लेखक लिसेंडर स्पूनर ने गरीबी उन्मूलन के एक उपाय के रूप में गरीबों को उद्यम संबंधी गतिविधियों के लिए छोटे ऋण दिये जाने के संबंध मे खूब लिखा है।

19 वीं सदी में महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर ने बंगाल में सहकारी संस्थाओं की उन्नति के लिए काम किया और सहकारी ऋण व वित्त पर अनेक निबंध लिखें। 1971 में वित्तीय उद्यमियों ए.विटकर और डेविड बसाऊ ने वंचित लोगों को उनका जीवन बदलने के लिए ऋण प्रदान करने हेतु ऑपर्च्यूनिटी इंटरनेशनल नामक संस्था का गठन किया।

2009, डॉ. सुनिता बोहरा, गरीबी के चक्रव्यूह से निकलने के लिए सूदखोर व्यवस्था से बाहर निकलने को जरूरी मानते हुए यह दावा किया कि लघुऋण तक पहुँच से गरीब परिवारों की साहुकारों पर निर्भरता कम हुई हैं। किसी हद तक यह दावा सही भी है। लेकिन साथ ही यह भी सच है कि इसके जितने बड़े दावे किए जाते हैं। वास्तविकता में इसे उतनी सफलता नहीं मिली है। अभी तक 30 प्रतिशत समूह की महिलाएं समूहगत स्त्रोतों के अलावा अन्य स्त्रोतों से भी ऋण ले रही थी।

लेखक मयंक श्रीवास्तव, कुरूक्षेत्र, ग्रामीण विकास को समर्पित (अप्रैल 2008) प्रत्रिका में ग्रामीणों को दिल खोलकर ऋण देने की बात की गई थी।

शोध कार्य के उद्देश्य:-

महिला उद्यमिता विकास में सरकारी तंत्र एवं योजनाओं के साथ-साथ निजी फायनेंस कम्पनियाँ भी सकारात्मक भूमिका निभा रही है या नहीं इसके लिए निम्न उद्देश्य निर्धारित किए जाने होगें ।

1. उद्यमिता विकास में निजी फाइनेंस कम्पनियों की क्रियाविधि व कार्यप्रणाली का अध्ययन ।
2. उद्यमिता विकास में प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन की योजनाओं की स्थिति का अध्ययन ।
3. प्रशिक्षण उपरांत कितनी महिलायें उद्यमी बनने का स्वप्न साकार कर पाई है।
4. उपरोक्त विकास कार्यक्रम की सफलता/असफलता की विवेचना ।

परिकल्पना:-

प्रस्तुत शोध पत्र द्वारा शोधार्थी निम्न परिकल्पनाओं की सत्यता का परीक्षण करना चाहेगा।

1. 'महिला उद्यमिता विकास में निजी क्षेत्र भी आसानी से ऋण उपलब्ध करवा रहा है'।
2. 'महिला उद्यमिता विकास में रूचि अनुसार प्रशिक्षण कार्यक्रम उपलब्ध नहीं हो पा रहे हैं'।

अध्ययन का क्षेत्र एवं प्रविधि:-

प्रस्तुत शोध पत्र प्रत्यक्ष रूप से इन्दौर जिले में कार्यरत बेसिक्स की सहायक माइक्रो फांइनेस कंपनी (बी.एस.एफ.एल.) के विशेष संदर्भ में प्रस्तुत किया गया है। शोध में प्राथमिक समंकों का संकलन संस्थान के कार्यालय इन्दौर से किया गया है।

अत: संस्थान के क्रियाकलापों के मूल्यांकन हेतु कार्यरत कर्मचारियों एवं अधिकारियों के साक्षात्कार शोधार्थी द्वारा लिये गये है। साथ ही महिला उद्यमियों की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति को जानने के लिए इन्दौर जिले की सभी तहसीलों की 50-50 महिला उद्यमियों का सर्वेक्षण व साक्षात्कार कर बी.एस.एफ.एल. की भूमिका एवं स्वरोजगार की स्थिति का पता लगाया

* प्राध्यापक वाणिज्य ** पीएच.डी. शोधार्थी, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत

गया है। द्वितीयक् समंकों के संग्रहण हेतु विविध पुस्तकों, संस्थान के प्रकाशन, पत्र-पत्रिकाओं और संबंधित इन्टरनेट साइट्स को प्रयोग में लाया गया है। इस प्रकार उपरोक्त शोध मुख्य रूप से प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों पर आधारित है।

महिला उद्यमिता का विकास:-

1. महिला उद्यमी:-

'भारत सरकार के अनुसार महिला उद्यमी से आशय ऐसी उद्यमी से है, जो एक ऐसे उपक्रम की स्वामी एवं नियंत्रणकर्ता है, जिसमें न्यूनतम 51 प्रतिशत पूंजी पर वित्तीय हित है और जो उपक्रम द्वारा सृजित है और रोजगार का 51 प्रतिशत भाग महिलाओं को प्रदान करती है।

2. लघु वित्त:-

लघु वित्त शब्दावली वित्तीय सेवाओं की उस विशेष उप शाखा की ओर संकेत करती है, जो अति गरीब लोगों को छोटे-छोटे ऋण मुहैया कराती है। प्राय: बिना कोई वस्तु गिरवी रखे यह ऋण व्यक्तिगत उपयोग, उत्पादन, गतिविधियों या फिर छोटे-छोटे व्यापार के लिए भी हो सकता है। लघु वित्त की विशेषता यह है कि वित्तीय सेवा का आकार बहुत छोटा होता है। अर्थात् कर्ज की रकम छोटी होती है।

3.उद्यमिता का विकास:-

उद्यमिता के विकास को प्रमुखत: सहायता प्रणाली प्रभावित करती है। वर्तमान में महिला उद्यमियों को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार एवं निजी संस्थान विशेष रूप से प्रयत्नशील हैं। उद्यमिता विकास कार्यक्रम को संगठित एवं विकसित करने के लिए केन्द्र सरकार और राज्य सरकारों के द्वारा अनेक संस्थानों की स्थापना की गई है।

इन संस्थाओं द्वारा उद्यमियों की सहायता करने हेतु प्रशिक्षण, परामर्श, तकनीकी ज्ञान, अनुसंधान एवं नवाचार के साथ ऋण उपलब्ध करवाने का महत्वपूर्ण कार्य किया जाता है। कुछ प्रमुख संस्थान इस प्रकार है- भारतीय उद्यमिता विकास संस्थान, लघु उद्योग विकास संगठन (SIDO) अब सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यम विकास संगठन (MSME-DI), लघु उद्योग सेवा संस्थान, भारतीय उद्यमिता विकास संस्थान अहमदाबाद, अखिल भारतीय लघु उद्योग बोर्ड, N.S.I.C, SIDBI इत्यादि।

इसी दिशा में म.प्र. में 25 अक्टोबर, 1988 में म.प्र. महिला वित्त एवं विकास निगम की स्थापना की गई। इसके अलावा म.प्र. में डबकारा योजना, ग्राम्या योजना, समर्थ योजना, जावाली योजना, फोटो कॉपियर योजना, स्वयंसिद्धा योजना, BOI की प्रियदर्शनी योजना व सैन्ट्रल बैंक ऑफ इण्डिया की सेंट कल्याणी योजना एवं सिडबी की महिला उद्यमिता योजनाएँ प्रमुख है। इसके अलावा महिला उद्यमिता विकास में सरकारी तंत्र एवं योजनाओं के साथ-साथ निजी फायनेंस कम्पनियाँ भी सकारात्मक भूमिका निभा रही है।

4. उद्यमिता विकास के उद्देश्य:-

उद्यमिता के विकास द्वारा ही समाजवादी समाज एवं कल्याणकारी राज्य की स्थापना की जा सकती है। इसके प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार है।

(अ) मानव संसाधन का पूर्ण एवं सर्वोत्तम उपयोग करना।
(ब) आर्थिक विकास एवं औद्योगीकरण हेतु पृष्ठभूमि तैयार करना।
(स) उद्यमियों के मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन हेतु गोष्ठियाँ आयोजित करना।
(द) महिला उद्यमियों को समान अवसर उपलब्ध कराना।

5. महिला उद्यमियों की समस्यायें:-

आदिकाल से ही उद्यमिता पर पुरुषों का वर्चस्व रहा है व हमारे देश की सामाजिक संरचना में महिलाओं को दूसरा दर्जा प्राप्त हुआ है। अत: उनमें आत्मविश्वास और पारिवारिक दायित्वों के निर्वहन के बोझ के कारण पुरुषों से प्रतिस्पर्धा करना कठिन होता है। साथ ही महिलाओं में गतिशीलता और स्वयं निर्णय लेने कि क्षमता का अभाव पाया जाता है। अत: महिला उद्यमी को कई सामाजिक और आर्थिक समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

6. उद्यमिता का महत्व:-

प्रत्येक राष्ट्र के नियोजित एवं तीव्र आर्थिक विकास के लिए उद्यमिता विकास आवश्यक है। इसके द्वारा ही हम गरीबी, बेरोजगारी व निम्न जीवन स्तर आदि समस्याओं से छुटकारा पा सकते है। पीटर एफ ड्रकर लिखते है कि ''तीव्र परिवर्तनों एवं नवप्रवर्तन के इस युग में साहसिक योग्यता को प्राप्त किए बिना आज के व्यवसायों का जीवित रहना असंभव है।''

तीव्र आर्थिक विकास, नवाचार को प्रोत्साहन, संतुलित विकास, साधनों का सर्वोत्तम उपयोग, अवसरों में वृद्धि, पूंजी निर्माण में वृद्धि, ये सभी उद्यमिता विकास के द्वारा ही संभव है।

बी.एस.एफ.एल. और उसकी कार्यप्रणाली:-

बी.एस.एफ.एल.:-

"Bhartiya Samruddhi Investments and Consulting Service Limited" (BASIX) एक निजी स्वामित्व वाली कम्पनी इसकी स्थापना सन् 1984 में हुई थी। यह RBI एवं MFIN (Micro Finance Institution Network) के नियमों व प्रावधानों के अनुसार कार्य कर रही है। भारत वर्ष में इसकी लगभग 200 Units (शाखाएँ) एवं मध्यप्रदेश में 22 जिलों के माध्यम से BASIX अपना कार्य कर रही है।

इन्दौर स्थित शाखा BSFL "Bhartiya Samruddhi Finance Limited" की स्थापना सन् 2006 में की गई है। जो अब तक 50,000 हजार महिलाओं को लघु एवं कुटीर उद्योग हेतु ऋण प्रदान कर चुकी है।

ऋण प्रदान करना :-

बी.एस.एफ.एल. द्वारा ऋण प्रदान करने की प्रक्रिया कागजी कार्यवाही और विविध अमानतों के बोझ से पूर्णत: मुक्त है। उद्यमियों की व्यक्तिगत पहचान एवं निवास स्थान के साक्ष्य के अलावा अन्य कोई दस्तावेज संस्थान द्वारा नहीं मांगा जाता है। संस्थान के एल.एस.आर.livelihood Service Representatives स्वयं उद्यमियों से व्यक्तिगत सम्पर्क कर उन्हें विविध स्वरोजगार अवसरों से परिचित करवाते है। उद्यमियों की सहमति के पश्चात् उन्हें सामान्यत: 4-6 की संख्या में समूहीकृत कर एक सप्ताह के भीतर 5000-50,000 रूपये तक का ऋण प्रदान कर दिया जाता है। संस्था द्वारा लघु ऋण आसान ब्याज दरों पर प्रमुखत: निम्न व्यवसाय हेतु उपलब्ध कराया जाता है। जैसे-

1. सिलाई, बुनाई, कढ़ाई, कताई, रंगाई कार्य आदि।
2. खिलौने, चटाई, कारपेट, शो पीस आदि तैयार करना।
3. ब्यूटीपार्लर, हैल्थक्लब, पेंटिंग क्लास, कुकींग क्लास, बालवाड़ी व झूलाघर संचालित करना आदि।
4. मसाला बनाना, लाख एवं जूट कि सामग्री बनाना, मोमबत्ती, व अगरबत्ती बनाना आदि।
5. किराना, डेयरी, पशुपालन, मुर्गीपालन आदि व्यवसाय चलाना।
6. रेडिमेड वस्त्र, होजयरी, स्टेशनरी आदि।
7. अचार, पापड़, चटनी ज्यूस, जैम, एवं जैली जैसी खाद्य सामग्री तैयार करना आदि।

विगत पांच वर्षो में संस्था द्वारा निम्नानुसार ऋण प्रदान किया गया है।

वर्ष	महिला (संख्या)	वितरित राशि (करोड़ में)
2007	1500	1.50
2008	2500	2.50
2009	4000	4.00
2010	15000	15.00
2011	22000	22.00

इस प्रकार BSFL महिला उद्यमिता विकास विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

व्यवसाय विकास सेवा कार्यक्रम :-

बी.डी.एस.- इस सेवा के अन्तर्गत संस्थान द्वारा महिला उद्यमियों द्वारा चयनित लघु एवं कुटीर उद्योग से संबंधित पर्याप्त तकनीकी प्रशिक्षण और विशेषज्ञों की सेवा हेतु विविध प्रशिक्षण शिविर आयोजित किये जाते है। साथ ही कच्चे माल की आपूर्ति से लेकर निर्मित माल को बाजार में बेचने हेतु लिंकेज की व्यवस्था भी की जा रही है। ताकि उद्यमी अपने व्यवसाय का उतरोत्तर विकास कर अपने जीवन स्तर में और अधिक सुधार ला सके।

एजी.बी.डी.एस.-कृषि उत्पादों एवं डेयरी से जुड़े उद्यमों के लिए भी संस्थान समस्त उपरोक्त कार्यक्रम संचालित कर रहा है। जिसमें उन्नत कृषि की विधियों एवं डेरी व्यवसाय की आधुनिक प्रविधियों से महिला उद्यमियों को परिचित करना मुख्य कार्य है।

अन्य गतिविधियाँ :-

अन्य गतिविधियों के अंतर्गत संस्थान द्वारा शासन की विभिन्न उद्यमिता विकास योजनाओं एवं स्वरोजगार योजनाओं के प्रति जागरूक करने का कार्य किया जा रहा है। साथ ही उन्हे भविष्य हेतु विविध बचत योजनाओं के माध्यम से बचत करने हेतु प्रोत्साहित किया जा रहा है।

निष्कर्ष:-

महिलाओं की सृजनात्मक ऊर्जा समाज की दशा बदलने में पर्याप्त समर्थ हैं, बशर्ते उन्हें अनुकूल पर्यावरण और पर्याप्त प्रोत्साहन मिले। कल्पनाशीलता और रचनात्मकता का तत्व महिलाओं में भी प्रचुर है, आवश्यकता है उसे सहेजने, संवारने और बढ़ाने की।

उपरोक्त शोध अध्ययन के द्वारा शोधार्थी ने यह पाया की इन्दौर जिले की महिला उद्यमी BSFL द्वारा ऋण वितरण कार्यक्रम को सरकारी क्षेत्र की अपेक्षा अधिक सरल व सुगम समझती हैं। अत: शोधार्थी की प्रथम परिकल्पना सार्थक सिद्ध होती है। जब महिलाओं के साक्षात्कार एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों का प्रत्यक्ष अवलोकन किया तब यह पाया गया की BSFLमहिला उद्यमियों की रूचिअनुसार प्रशिक्षण कार्यक्रम संचालित कर रहा है। अत: द्धितीय परिकल्पना की सार्थकता सिद्ध नहीं होती हैं। निष्कर्षत: महिला उद्यमियों को पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराने में सरकारी एवं निजी क्षेत्रों को ''संयुक्त क्षेत्र'' की अवधारणा पर बल देना चाहिए।

संदर्भ सूची:-

- डॉ. बी.एस.राव एवं कोडावार-म.प्र.का आर्थिक विकास
- ख़ाँको एस. एस.-लघु उद्योगों मे उद्यमिता
- टी. एन. कृष्णा-लघु उद्योग की वित्तिय मार्गदर्षिका मुंबई
- देसाई बसंत-मेनेजमेण्ट ऑफ स्माल स्केल इण्डस्ट्रीज
- डॉ.यू.सी.गुप्ता-उद्यमिता विकास
- श्री एच.के. भारती-उद्यमिता विकास
- श्री एस. सुधा-व्यावसायिक उद्यमिता का विकास
- डॉ. आर.एच. कुलश्रेष्ठ-औद्योगिक अर्थशास्त्र
- **पत्र-पत्रिकाएँ:-** कुरूक्षेत्र (मासिक) भारत सरकार नई दिल्ली, टाइम्स ऑफ इण्डिया, दि इकोनोमिक टाइम मुंबई, कृषक जगत (साप्ताहिक) भोपाल, दैनिक भास्कर, नईदुनिया, प्रतियोगिता दर्पण, रोजगार निर्माण

वेबसाइट्स:-

- www.basixindia.com,www.ebookbrowse.com,
- www.india.gov.in, www.mpindustry.org,
- www.indiabudget.nic.in, www.mpnricentre.nic.in,
- www.demo.mpinfo.org, www.msmeindore.nic.in,
- www.drd.nic.in, www.rural.nic.in,
- www.mpprd.gov.in, www.edii.com
- www.dcmsme.gov.in

****

पोषणीय विकास मॉडल के क्रियान्वयन की आवश्यकता - एक अध्ययन

डॉ. रश्मि शर्मा * डॉ. पी.एस.पटेल **

शोध सारांश – पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी को संरक्षित रखते हुए जो विकास किया जाये वही पोषणीय विकास है। विकास के कारण उत्पन्न प्रदूषण की मात्रा हमारे पारिस्थितिकी तंत्र की वहन-क्षमता से अधिक नहीं होना चाहिए। जबकि वर्तमान में प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकीकृत व अंधाधुन्ध-दोहन होने के कारण विकास उपरान्त विनाश की भूमिका बना रहा है ऐसे में पर्यावरण व विकास के मध्य संतुलन स्थापना के लिए 'पोषणीय विकास मॉडल' को अपनाने की महती आवश्यकता है। न्यायपालिका के साथ देश की जागरूक जनता का भी यही अभिमत है। अब पर्यावरण को संरक्षित रखते हुए एक सुनियोजित, सतत् व टिकाऊ विकास व्यवस्था को लागू करना वांछित है।

शब्द कुंजी – पोषणीय विकास, पारिस्थितिकी तंत्र, पर्यावरण-संरक्षण, प्रदूषण।

प्रस्तावना :– आज के विकासशील युग में पर्यावरण प्रदूषण अपरिहार्य है। आवश्यकता इस बात की है कि तकनीकी विकास तथा पर्यावरण प्रदूषण के मध्य संतुलन स्थापित किया जाय। जहॉ औद्योगिक विकास देश की अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है परंतु उसी समय पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी तंत्र को सुरक्षित रखना भी आवश्यक है। विकास के परिणामस्वरूप उत्पन्न प्रदूषण हमारे पारिस्थितिकी तंत्र की सहन करने की क्षमता के समतुल्य होना चाहिए आज की दुनिया विकास की दुहाई देते हुए विध्वंस की ओर उत्तरोत्तर बढ़ रही है-

''धुआँ उगलती चिमनियाँ, कुआँ निगलते खेत।
शहर-गांव दोनों हुए, भुखे नंगे प्रेत।।
पेड़ कटे, जंगल जले, गांव हुए बरबाद।
शहरों बीच सीमेन्ट के, जंगल है आबाद।।''[1]

मानव ने अपनी भोगवादी एवं लालची प्रवृत्ति के कारण प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन किया, इसका परिणाम पर्यावरणीय असंतुलन के रूप में अब सामने आने लगा है। यह सत्य है कि हमारी विकास संबंधी प्रत्येक गतिविधि किसी न किसी रूपमें प्रकृति को कुछ न कुछ क्षति अवश्य पहुंचाती है। 1970 के दशक में एक नई विकास की अवधारणा को स्वीकार किया गया, जिसे 'पोषणीय विकास' का नाम दिया गया।

पोषणीय विकास की जिस अवधारणा को आज सम्पूर्ण विश्व में काफी महत्व दिया जा रहा है, वस्तुत: वह 'बंटलैण्ड आयोग' की देन है। पोषणीय विकास, सतत् विकास या टिकाऊ विकास अंग्रेजी शब्द 'Sustainable Development' के पर्यायवाची है। बंटलैण्ड के अनुसार ''पोषणीय विकास वह विकास प्रक्रिया है जिसमें वर्तमान पीढ़ी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति आने वाली पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति को बिना नुकसान पहुंचाए करती है।'' अर्थात् पर्यावरण व पारिस्थितिकी को संरक्षित रखते हुए जो विकास किया जाए वही पोषणीय विकास है।

शोध का उद्देश्य :– यहाँ पर्यावरण एवं विकास के बीच संतुलन हेतु 'पोषणीय विकास' की अवधारणा को क्रियान्वित करने की आवश्यकता का पता लगाना ही शोध का उद्देश्य है।

शोध का अपेक्षित परिणाम :- पुष्टि की प्रत्याशा में प्राकल्पना की जाती है कि - वर्तमान में पर्यावरण एवं विकास के मध्य संतुलन हेतु पोषणीय विकास मॉडल का क्रियान्वयन आवश्यक है।

शोध हेतु प्रयुक्त प्रविधि :– प्रस्तुत शोध के लिए पर्यावरण संरक्षण हेतु निर्मित कानून से सम्बन्धित पुस्तकों का अध्ययन किया गया है साथ ही पर्यावरण को सरंक्षित रखते हुए आर्थिक विकास किये जाने के सम्बन्ध में प्राथमिक जानकारी प्राप्त करने हेतु विभिन्न श्रेणी के 300 उत्तरदाताओं से सम्पर्क किया गया तथा उनका अभिमत लिया गया है। यहां पर्यावरण प्रदूषण नियंत्रण व सरंक्षण के साथ विकास सम्बंधी पूर्व में अभिव्यक्त विचारों व दृष्टिकोणों का भी शोध हेतु अध्ययन किया गया है। साथ ही विभिन्न समाचार पत्र-पत्रिकाओं में पूर्व-प्रकाशित विषय सामग्री का भी अध्ययन किया गया।

विषय विस्तार एवं पल्लवन:– पोषणीय विकास प्रकृति के साथ मानव सहयोग एवं साहचर्य की भावना पर आधारित है। भारतीय मनीषि परम्परा में पोषणीय विकास की अवधारणा सदैव रही है, जो सुख-शांति, समृद्धि, सौहार्द, संतोष जैसे मानवीय भावों के साथ प्रकृति की समीपता और नैसर्गिक चिंतन पर आधारित थी। भौतिक, औद्योगिक व उपभोक्तावादी संस्कृति के कारण विकास अब विनाश का पर्याय बन गया है और इसके लिए प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन पारिस्थितिकीय संतुलन बिगाड़ रहा है और पर्यावरणीय समस्याएँ जैसे ' जलवायु परिवर्तन' से आज पूरी दुनिया त्रस्त है। अत: आज पोषणीय विकास की अत्यधिक आवश्यकता है जो पर्यावरण और पारिस्थितिकी को बिना क्षति पहुंचाये जीवन स्तर को उच्चता प्रदान कर सके। पोषणीय विकास इसलिए भी आवश्यक है कि आज से दो-तीन दशक पूर्व दुनिया इस भ्रम में थी कि आर्थिक विकास ही मानव विकास का द्योतक सूचकांक है। इस सोच के चलते जहां विकसित देशों ने तीव्र आर्थिक विकास के लिए अतिवाद की सीमा तक प्राकृतिक संसाधनो का दोहन किया, वहीं ऐसा करते हुए विकासशील देशों के प्राकृतिक संसाधनों का भी भरपूर दोहन किया। इससे आर्थिक समृद्धि तो आई, किंतु इससे पर्यावरण प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुआ। यह स्थिति सामने आने पर विकसित और विकासशील देशों को तथा उनके विकास विशेषज्ञों को यह बात समझ में आने लगी कि यदि पर्यावरण की दशा में सुधार न लाया गया तो सिर्फ आर्थिक प्रगति से मानव विकास संभव नहीं है।

पोषणीय विकास के सिद्धांत का मुख्य लक्ष्य विकास को प्रोत्साहित करते हुए पर्यावरण को प्रदूषण से दूर रखना है। पोषणीय विकास की अवधारणा के संबंध में यहां कुछ मान्यताऐं प्रस्तुत है -

1. पोषणीय विकास आवश्यक रूप से पर्यावरण एवं परिस्थितिकी-मित्र एक वैकल्पिक विकास मॉडल है।
2. पोषणीय विकास अवधारणा की मान्यता है कि मानव प्रजाति एवं प्राकृतिक उत्पादन तंत्र में एक सहयोगी संबंध है।
3. पोषणीय विकास केवल वृद्धि नहीं है, यह तो सामाजिक परिवर्तन के व्यापक उद्देश्यों पर आधारित विकास है।
4. पोषणीय विकास की मान्यता है कि वर्तमान पीढ़ी को अपनी आज की

* 18, राजेन्द्र मार्ग महिदपुर, जिला - उज्जैन ** प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, शासकीय महाविद्यालय महिदपुर, जिला - उज्जैन (मप्र) भारत

आवश्यकताओं को पूरा करते समय भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं और परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए ताकि उनकी स्वाभाविक प्राकृतिक प्राप्तियों का अनुचित पूर्वदोहन न हो।

5. इसकी मान्यता है कि आज जो कोई भी आर्थिक विकास का फल प्राप्त कर रहे है उन्हे ध्यान रखना चाहिए कि वे पृथ्वी के परिस्थितिकी तंत्र एवं पर्यावरण को अनाश्यक रूप से दूषित तो नहीं कर रहे है।

6- Sustainable शब्द में एक ऐसा अर्थ निहित है जिससे एक प्राकृतिक संतुलित पोषक तंत्र का आभास होता है।

भारत में इसे प्रदूषक भुगतान करे का सिद्धान्त (Polluter pays Principle) के रूप में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मान्यता दी गयी है। सर्वोच्च न्यायालय ने इण्डियन कौंसिल फार इन्वायरो लीगल ऐक्शन बनाम भारत संघ[1] के मामले में अभिनिर्धारित किया है कि प्रदूषक को प्रदूषण से प्रभावित व्यक्तियों की क्षतिपूर्ति के साथ ही साथ पर्यावरण क्षति को पुर्नस्थापित करने की लागत को वहन करना चाहिये।

वेल्लोर सिटीजन्स वेलफेयर फोरम बनाम भारत संघ[2] के मामले में न्यायमूर्ति कुलदीप सिंह ने कहां कि ''प्रदूषक भुगतान करे का सिद्धान्त'' का तात्पर्य है कि पर्यावरण को क्षति के लिए अत्यधिक दायित्व का विस्तार न केवल प्रदूषण के पीड़ित की क्षतिपूर्ति करने तक बल्कि पर्यावरण संबंधी अपक्षय को प्रत्यावर्तित करने की कीमत तक भी है। क्षतिग्रस्त पर्यावरण का उपचार निरंतर विकास की प्रक्रिया का भाग है और इस प्रकार प्रदूषक व्यक्तिगत क्षतिग्रस्त को क्षतिपूर्ति तथा क्षतिग्रस्त पारिस्थितिकी को परिवर्तित करने के व्यय का भुगतान करने का दायी है।

वर्तमान में विकास, बुनियादी ढाँचे और रोजगार की जरूरत तो है, लेकिन यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यदि हमने पारिस्थितिकी से छेड़खानी की तो इन आर्थिक हितों की भी लंबे समय तक रक्षा नहीं की जा सकेगी। देश के किसी भी क्षेत्र में पर्यावरण की कीमत पर विकास नहीं होना चाहिए। इसका वर्तमान उदाहरण **'उत्तराखण्ड की त्रासदी'** है। उत्तराखण्ड में हमें एक प्रकार से प्रलय की झलक देखने को मिली है। प्रकृति का गुस्सा, जल की शक्ति, मानव की नासमझी एवं स्थानीय शासन की कमजोरी के कारण गढ़वाल हिमालय क्षेत्र में तबाही मची। ऐसी स्थिति में यह सवाल पूछा जाना भी प्रासंगिक है कि क्या यह महज एक प्राकृतिक आपदा है या इस त्रासदी के लिए हम मनुष्यों के क्रियाकलाप भी समान रूप से जिम्मेदार है?

हिमालय जैसे क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण है जैविक ईधनों की खपत और उससे होने वाला उत्सर्जन, जोकि आर्थिक विकास की देन है। इसी तरह से पारिस्थितिक रूप से संवेदनशील क्षेत्रों में किए गए 'विकास कार्यो' से भी उत्तराखण्ड त्रासदी का सीधा संबंध है जैसे इस क्षेत्र में जल, जंगल और खनिज जैसे प्राकृतिक संसाधनों का दोहन बढ़ा है। उदाहरण के लिये बांध परियोजनाओं से नदियों के प्राकृतिक बहाव पर प्रतिकूल असर पड़ा है। बांधों के निर्माण के लिए किए जाने वाले विस्फोटों और सुरंगों-बैराजों के निर्माण से भी पर्वतीय क्षेत्र पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है। इससे भू-स्खलन का खतरा भी रहता है। ऐसा नहीं है कि राज्य को बिजली की जरूरत नहीं है या बांधों का निर्माण बिलकुल नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन ये निर्माण क्षेत्र की पारिस्थितिकी के अनुकूल संख्या में होना चाहिए। सड़कों-भवनों के निर्माण और खनिजों के खनन पर भी यही बात लागू होती है। हर तरफ नियम -कायदों और औचित्य को ताक पर रखकर निर्माण किए जा रहे है। आज आवश्यकता इस बात की है कि हमारे इंजीनियर ऐसी योजनाएं बनाएं, जिनसे जलविद्युत उत्पादन हो, नदी पर बुनियादी ढांचा बने, लेकिन पर्यावरण को कोई नुकसान न हो। इस प्रकार प्रकृति एवं मनुष्य में आपसी विरोध की स्थिति नहीं बनी रहना चाहिए।

प्राथमिक शोध प्रक्रियाकरण एवं विश्लेषण -

यहां 300 उत्तरदाताओं से प्रश्न के माध्यम से अभिमत ज्ञात किया गया है जो प्रस्तुत है -प्रश्न - ''विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण भी आवश्यक है इसलिए आर्थिक विकास हेतु पोषणीय विकास मॉडल क्रियान्वित किया जाना चाहिए।'' क्या आप इस अभिमत से सहमत ?

(अ) हाँ। (ब) नहीं। (स) ज्ञात नहीं।

सारणी - 1

पोषणीय विकास मॉडल लागू करने के सम्बन्ध में सर्वेक्षित उत्तरदाताओं का अभिमत

क्रमांक	सर्वेक्षित वर्ग की श्रेणी अभिमत हेतु सर्वेक्षित वर्ग	सर्वेक्षित वर्ग का अभिमत						समग्र	
		हाँ		नहीं		ज्ञात नहीं			
		संख्या	प्रतिशत (%)	संख्या	प्रतिशत (%)	संख्या	प्रतिशत (%)	योग	प्रतिशत (%)
1	उद्यमी	01	0.33	09	3.00	00	00	10	3.33
2	अर्थ एवं वाणिज्यविद्	10	3.33	05	1.67	00	00	15	5.00
3	विधिवेत्ता	13	4.33	11	3.67	00	00	24	8.00
4	सामाजिक कार्यकर्ता	50	16.67	08	2.66	00	00	58	19.33
5	कृषक	50	16.67	05	1.67	10	3.33	65	21.67
6	विस्थापित	70	23.34	00	00	02	0.67	72	24.00
7	अन्य	06	2.00	03	1.00	47	15.66	56	18.67
	योग	200	66.67	41	13.67	59	19.66	300	100

स्रोत - सर्वेक्षण से प्राप्त जानकारी के आधार पर

उपर्युक्त प्रश्न के उत्तरदाताओं से प्राप्त अभिमत की सारणीकृत प्रस्तुति। निम्नलिखित है- सारणी में प्रदत्त पृष्ठभूमि के आधार पर ज्ञात होता है कि पोषणीय विकास मॉडल लागू करने के पक्ष में सर्वाधिक 6667 प्रतिशत उत्तरदाता है जबकि मात्र 1367 प्रतिशत उत्तरदाता ने विपक्ष में अभिमत दिया है साथ ही 1967 प्रतिशत व्यक्तियों ने पक्ष या विपक्ष में कोई मत नहीं दिया है।

इस प्रकार यहां यह स्पष्ट होता है कि 6667 प्रतिशत सर्वाधिक अभिमत पोषणीय विकास मॉडल व्यवस्था क्रियान्वित करने के पक्ष में है साथ ही शिक्षा एवं पर्यावरण जागरूकता के अभाव में 1967 प्रतिशत व्यक्तियों ने कोई रूचि न लेते हुए अभिमत नहीं दिया है जबकि सबसे कम 13.67 प्रतिशत उत्तरदाता पर्यावरण संरक्षण के स्थान पर तीव्र विकास गतिविधियों को निरंतर जारी रखने के पक्ष में है जिनमें सर्वाधिक उद्यमी सम्मिलित है उनके अभिमत निहित निजी हित के कारण पोषणीय विकास के विरूद्ध माने जा सकते है।

पर्यावरण संरक्षण एवं पोषणीय विकास में न्यायालयों की भूमिका-

पर्यावरण संरक्षण एवं पोषणीय विकास में न्यायपालिका का महत्वपूर्ण योगदान है। हमारी न्यायपालिका विशेषत: सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों ने अपने निर्णयों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण के कई उपाय तथा निर्देश निर्गत करते समय विभिन्न महत्वपूर्ण सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है। सर्वोच्च न्यायालय ने यह सिद्धांत प्रतिपादित किया कि उद्योगों की स्थापना को अनुमति तभी दी जाये जब यह सुनिश्चित हो जाय कि प्रस्तावित उद्योग पर्यावरण संरक्षण के प्रभावकारी उपायों की स्थापना करेगा। सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरण प्रदूषण के लिए उत्तरदायी उद्योगों, संयंत्रों तथा उपक्रमों के स्वामियों पर क्षतिपूर्ति की आवश्यकता तथा बाध्यता पर बल दिया है। सर्वोच्च न्यायालय ने औद्योगिक विकास के साथ-साथ मानव स्वास्थ्य का भी ध्यान रखने हेतु और तकनीकी विकास तथा पर्यावरण प्रदूषण के मध्य संतुलन स्थापित किये जाने हेतु निर्देष दिये साथ ही निर्देशित किया कि विकास के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण के उपाय की स्थापना की आवश्यकता को ध्यान में रखा जाऐ तथा इस संबंध में आर्थिक अक्षमता या

असमर्थता को एक आधार न माना जाय। सर्वोच्च न्यायालय ने संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न सम्मेलनों में पारित सिद्धांतों और अनुशंसाओं का भी पूरा ध्यान रखा है। इनमें पर्यावरण, पोषणीय विकास, पानी, बंजर भूमि, जैव विविधता, जलवायु परिवर्तन, तापमान में वृद्धि जैसे महत्वपूर्ण विषय शामिल है। इन सिद्धांतों और निर्देशों के आलोक में ही सर्वोच्च न्यायालय ने पर्यावरण से संबंधित अनेक मामलों पर अपना दृष्टिकोण रखा।

सर्वोच्च न्यायालय ने मानव स्वास्थ्य को संकट में डालने वाली दिल्ली की परिवहन यातायात को CNG (Compressed Natural Gas) के अभाव में संचालन पर प्रतिबन्ध[1] लगाने के साथ-साथ ताजमहल पर पड़ने वाले कुप्रभाव[2] को ध्यान में रखते हुए आगरा की 292 औद्योगिक इकाइयों को शहर से बाहर सुरक्षित स्थानो पर स्थानान्तरित करने का आदेश दिया है। इसी प्रकार पर्यावरण की सुरक्षा के मद्देनजर दिल्ली-हरियाणा सीमा पर खनन और स्टोन क्रशर पर रोक लगाने का सर्वोच्च न्यायालय का आदेश भी इस क्षेत्र के निवासियों के लिए लाभदायक है। इससे पहले दक्षिण भारत के पएिमी घाटों में खनन गतिविधियों पर रोक लगाने के लिए भी सर्वोच्च न्यायालको ही दखल देना पड़ा था। सर्वोच्च न्यायालय के आदेश पर ही कार्बेट नेशनल पार्क के बीच सड़क बनाने की उत्तराखण्ड सरकार की योजना को खारिज किया गया। गोवा में समुद्र के संबंध में पिछले दो दशकों के दौरान सर्वोच्च न्यायालय ने दर्जनो निर्देश दिए है।

सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य को प्राकृतिक स्त्रोतो का न्यासी (Trustee) तथा सामान्य जन को इसका हितग्राही (Beneficiary) माना है तथा व्यक्तिगत आमोद-प्रमोद एवं स्वार्थ के लिए प्राकृतिक स्त्रोतों के शोषण पर प्रतिबंध लगाया है (लोक न्यास का सिध्दांत) तथा राज्यों पर प्राकृतिक स्त्रोतों के संरक्षण करने का दायित्व सौंपा है। सर्वोच्च न्यायालय की निश्चित दायित्व की परिकल्पना के आधार पर ही संसद ने लोकदायित्व बीमा अधिनियम, 1991 पारित कर निश्चित दायित्व के सिध्दांत को सांविधिक (Statutory) मान्यता दी। इस अधिनियम के अंतर्गत परिसंकटमय पदार्थो के कारण होने वाली दुर्घटना में प्रभावित व्यक्ति के प्रति परिसंकटमय उद्योगों या उपक्रम चलाने वाले उद्योगपतियो के द्वारा निश्चित क्षतिपूर्ति देने का प्रावधान है। देश के पर्यावरणीय कानून के अंतर्गत पर्यावरण नियंत्रण एवं निवारण का दायित्व केन्द्र एवं राज्य सरकारों या उनके द्वारा गठित अभिकरणों का है। राज्य अथवा केन्द्र सरकार या उनके अभिकरण जब अपनी सकारात्मक भूमिका निभाने में विफल होते है तब मामले न्यायालय के समक्ष जाते है। रिट क्षेत्राधिकार के अंतर्गत और लोकहितवाद के माध्यम से कतिपय मामलों में न्यायालयों ने ज्यादा प्रगतिशील एवं प्रांसगिक निर्देश निर्धारित कर सकारात्मक रुख अपनाया है। वर्तमान में न्यायपालिका '' न्यायिक सक्रियता '' के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण व प्रदूषण निवारण और नियंत्रण की दिशा में प्रभावकारी कार्य कर रही है।

आजकल कारखानों द्वारा उत्सर्जित ग्रीन हाउस गैसों से ग्लोबल वार्मिंग की स्थिति बनी है जिससे पूरी दुनिया का जलवायु परिवर्तित हो रहा है। इस समस्या के निराकरण हेतु कार्बन ट्रेडिंग की संकल्पना प्रचलन में आयी है अब कार्बन ट्रेडिंग के अन्तर्गत एक केन्द्रीय प्राधिकरण प्रदूषक की कार्बन उत्सर्जन की अधिकतम मात्रा की सीमा को निर्धारित करता है इसे परमिट कहते है। परमिट के माध्यम से कम्पनियों को पर्यावरण में प्रदूषण की एक निश्चित मात्रा उत्सर्जित करने का लाईसेंस मिल जाता है। सीमित प्रदूषण के बदले कम्पनियों को आर्थिक लाभ दिये जाते है। इस प्रकार पर्यावरण प्रदूषण की समस्या के निवारण हेतु एक ट्रेडिंग मेकैनिज्म भी अस्तित्व में आ रहा है जिसे कार्बन ट्रेडिंग कहा जाता है।

शोध के अपेक्षित परिणाम की पुष्टि :-पुष्टि की प्रत्याशा में प्राकल्पना की गयी थी कि - वर्तमान में पर्यावरण एवं विकास के मध्य संतुलन हेतु पोषणीय विकास मॉडल का क्रियान्वयन आवश्यक है। जिसकी पुष्टि हो रहीं है (दृष्टव्य-सारणी-1)। क्योंकि वर्तमान में विकास के साथ विनाश भी हो रहा है तथा पर्यावरणीय समस्याओं से पूरा विश्व त्रस्त है।[9, 10]

अत: आज 'पोषणीय विकास' की अवधारणा के क्रियान्वयन की अत्यधिक आवश्यकता है इससे पर्यावरण और पारिस्थितिकी की कम से कम क्षति के साथ आर्थिक विकास संभव हो सकेगा तथा क्षतिग्रस्त पर्यावरण को पुन: संतुलित करने के लिए अपेक्षित उपचार के प्रयास भी किये जा सकेंगे।

निष्कर्ष :- पोषणीय विकास मॉडल को लागू करना कोई कठिन कार्य नहीं है, बशर्ते इसके लिए हम स्वयं को प्रकृति का हिस्सा मानें और 'पारिस्थितिकी-मित्र' का दृष्टिकोण अपनाएं। कुछ छोटे-छोटे उपायों पर अमल करके पोषणीय विकास को प्रोत्साहित किया जा सकता है जैसे प्राकृतिक व्यवस्था में अनुचित छेड़-छाड़ के बजाय उसके साथ सहजीवन जीना सुनिश्चित हो और उसके संरक्षण व संवर्ध्दन में सहयोगी दिया जाऐ। इसके लिए सबसे पहले हमें पर्यावरण के अनुकुल प्रौद्योगिकी को विकसित करना पड़ेगा, तभी भावी पीढ़ियों का भविष्य सुखद और सुरक्षित रह पाएगा। जैसा कि जॉन वी.लिण्डसे ने ठीक ही कहा है - " Technology produced the crisis and technology can end it ." राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी का भी स्पष्ट विचार था कि "Mother nature has enough to fullfill everyones need but not enough to satisfy anyone's greed." गाँधीजी के मतानुसार अगर गांवों में उत्पादित कच्चे माल को गांवों में ही उपभोक्ता वस्तुओ में परिवर्तित करने की व्यवस्था की जाती तो बेरोजगारी शहरीकरण और व्यापक संदर्भ में पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को हम समाप्त नहीं तो एक स्तर से अधिक बढ़ने से रोक पाने में सफल होते तथा पोषणीय विकास भी होता। पोषणीय विकास के लिए शिक्षा और जागरुकता भी आवश्यक है। पर्यावरण क्षति को रोकने के लिए राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आवश्यक कानून बनाए जाएं और इनका क्रियान्वयन पूरी पारदर्शिता और सख्ती के साथ कियजाए। जल-जंगल तथा जमीन के संरक्षण के लिए अधिकाधिक पारम्परिक वनों का विकास व विस्तार जरुरी है तथा प्राकृतिक जल स्त्रोतों का उचित संरक्षण-संवर्ध्दन व प्रबंधन भी आवश्यक है अर्थात् 'पोषणीय विकास' की विचारधारा के अन्तर्गत हमें अपने आर्थिक विकास के लिए आवश्यक प्राकृतिक संपदाओं-वन, जल एवं मृदा के दुरूपयोग को बचाना होगा। सरकार को चाहिए कि वह पर्यावरण संरक्षण के लिए आवश्यक नीतियाँ बनाकर क्रियान्वित करे जिससे पर्यावएवं वन मंत्रालय, आपदा-प्रबंधन-विभाग, मौसम विज्ञान विभाग, कृषि मंत्रालय व कृषि विभाग तथा अन्य सभी संस्थाएं परस्पर समन्वय ,सहयोग तथा सहभागिता के साथ सुनियोजित पोषणीय विकास कर सके।

सन्दर्भ सूची - 1.दुबे अरविन्द कुमार : पर्यावरण विधियां, सेन्ट्रल लॉ पब्लिकेशन्स, इलाहबाद। 2.उपाध्याय डॉ, जेज़े.आर.: पर्यावरण विधि, सेन्ट्रल लॉ एजेन्सी, इलाहबाद। 3. योजना पत्रिका, आंधियों के पेड़, पृष्ठ - 35 4. रचना, मप्र.हिन्दी ग्रन्थ अकादमी। 5.कुरूक्षेत्र 6. इंडिया टुडे 7. दैनिक भास्कर समाचार-पत्र 8. नई दुनिया समाचार-पत्र 9. A.I.R. (2001) S.C. 1948 10. A.I.R. (1997) S.C. 734

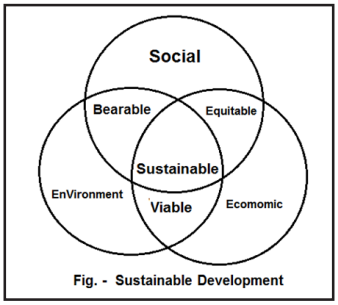

Fig. - Sustainable Development

आदिवासी झाबुआ जिले के रोजगार कार्यालय में पंजीकृत बेरोजगारों का विश्लेषण

डॉ. लक्ष्मण परवाल * प्रो. गेन्दालाल चौहान **

प्रस्तावना : राष्ट्रीय रोजगार सेवा देश में बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध कराने में सहायता करती है। भारत में दिसम्बर 2010 तक राष्ट्रीय रोजगार सेवा के 969 रोजगार कार्यालयों का नेटवर्क था। ये रोजगार कार्यालय नियोक्ता द्वारा जारी अधिसूचना के आधार पर विशेष समूह अर्थात विकलांग, पूर्व सेवा कर्मी, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, महिलाओं इत्यादि सहित सभी बेरोजगारों को रोजगार दिलाने में सहायता करते हैं। इसके अतिरिक्त व्यावसायिक परामर्श, रोजगार सलाह, रोजगार की सूचनाओं का प्रसार एवं समन्वय आदि कार्य भी रोजगार कार्यालयों के माध्यम से किये जाते हैं। रोजगार हेतु नीतियां बनाने के लिये आंकड़े उपलब्ध करवाने के लिये भी राष्ट्रीय रोजगार सेवा रोजगार एवं व्यावसायिक अनुसंधान के क्षेत्र में अध्ययन भी करवाती है। भारत में वर्तमान में रोजगार कार्यालयों में पंजीयन कराना ऐच्छिक है, एवं अन्य किसी स्त्रोत के अभाव में रोजगार कार्यालयों में उपलब्ध आकड़ों से ही बेरोजगारों की स्थिति का सांकेतिक ज्ञान उपलब्ध हो पाता है। झाबुआ जिले के एक मात्र रोजगार कार्यालय में कुल पंजीकृत बेरोजगारों में से आदिवासी वर्ग के महिला एवं पुरूषों के पंजीयन की स्पष्ट व्याख्या की गई है। आदिवासी वर्ग के बेरोजगारों के पंजीयन को शैक्षणिक स्तर के आधार पर भी वर्गीकरण किया गया है। वर्ष 2003 से लेकर जून, 2010 तक पंजीयन की स्थिति की जानकारी को जिला झाबुआ के रोजगार कार्यालय से प्राप्त कर शोधार्थी ने उसे विभिन्न तालिकाओं में विभक्त कर स्पष्ट एवं विश्लेषणात्मक ढंग से व्याख्या की है ।

अध्ययन का उद्देश्य :-

प्रस्तुत अध्ययन झाबुआ जिले के रोजगार कार्यालय में पंजीकृत बेरोजगारों का विश्लेषण निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया गया है :-

- रोजगार कार्यालय में पंजीयत कुल बेरोजगारों की स्थिति का पता लगाना।
- रोजगार कार्यालय में विभिन्न श्रेणियों के पंजीयत व रोजगार प्राप्त बेरोजगारों की स्थिति का अध्ययन करना।
- जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों की स्थिति का पता लगाना।
- रोजगार कार्यालय में पंजीयत एवं रोजगार प्राप्त बेरोजगारों में पुरूषों व महिलाओं की तुलनात्मक स्थिति ज्ञात करना।

समंकों का संकलन :-

यह अध्ययन मध्यप्रदेश के आदिवासी बाहुल्य झाबुआ जिले पर किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में द्वितीयक समंकों का उपयोग किया गया है, जो झाबुआ जिले के रोजगार कार्यालय से प्राप्त किये गये हैं। ये समंक वर्ष 2003 से लेकर जून 2010 तक के संग्रह किये गये हैं। उपर्युक्त समंकों के आधार पर शोधार्थी द्वारा विभिन्न तालिकाओं एवं रेखाचित्रों के माध्यम से रोजगार कार्यालय झाबुआ में पंजीकृत बेरोजगारों का विस्तृत रूप से विश्लेषण करके औसत, प्रतिशत तथा अनुपात जैसी सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियों का प्रयोग कर अपेक्षित परिणाम ज्ञात किये गये हैं।

विश्लेषणात्मक विवेचन :-

(1) रोजगार कार्यालय में पंजीयत कुल बेरोजगारों की स्थिति :-

आदिवासी झाबुआ जिले के रोजगार कार्यालय में पंजीकृत कुल बेरोजगारों की स्थिति को शोधार्थी ने गत 8 वर्षों के आंकड़ों के आधार पर वर्गीकरण करके यह भी ज्ञात किया है कि कुल पंजीयत बेरोजगारों में आदिवासी वर्ग एवं अन्य श्रेणियों (सामान्य, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति, अल्पसंख्यक) के बेरोजगारों का अनुपात कितना है? इसे अग्र तालिका के द्वारा विश्लेषित किया गया है।

वर्ष 31	कुल पंजीयत	आदिवासी वर्ग का पंजीयन		अन्य श्रेणियों का पंजीयन		अनुपात
दिसंबर	संख्या	संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत	
2003	5,675	3,919	69.06	1,756	30.94	2.23:1
2004	6,427	4,513	70.22	1,914	29.78	2.36:1
2005	7,805	5,444	69.75	2,361	30.25	2.31:1
2006	7,207	5,593	77.61	1,614	22.39	3.47:1
2007	7,333	5,597	76.33	1,736	23.67	3.22:1
2008	8,221	6,408	77.95	1,813	22.05	3.53:1
2009	7,257	5,516	76.01	1,741	23.99	3.17:1
2010	3,595	2,392	66.54	1,203	33.46	1.99:1
योग	53,520	39,382	73.58	14,138	26.42	2.79:1
औसत	7,136		5,251	1,885		

स्त्रोत: जिला रोजगार कार्यालय, झाबुआ * 30 जून, तक की स्थिति में

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि आदिवासी झाबुआ जिले में प्रतिवर्ष औसत रूप से 7,136 बेरोजगारों द्वारा रोजगार प्राप्त करने के लिए पंजीयन कराया जा रहा है। इसमें सभी श्रेणियों के महिला एवं पुरूष बेरोजगार शामिल हैं। इसमें आदिवासी वर्ग के पुरूष एवं महिला बेरोजगारों का औसत रूप से वार्षिक पंजीयन 5,251 है, जो लगभग कुल औसत पंजीयन का 73.58 प्रतिशत के बराबर है। गत 8 वर्षों के आंकड़ों के आधार पर आदिवासी झाबुआ जिले में सभी श्रेणियों के कुल 53,520 पुरूष एवं महिला बेरोजगारों ने अपना पंजीयन कराया है।

इसमें से आदिवासी वर्ग के 39,382 पुरूष एवं महिला बेरोजगारों ने पंजीयन कराया है, शेष 14,138 अन्य श्रेणियों के पुरूष एवं महिला बेरोजगार हैं। वर्ष 2006 से वर्ष 2009 तक पंजीयन कराने वाले बेरोजगारों में आदिवासी वर्ग के बेरोजगारों का हिस्सा लगभग तीन चौथाई से भी अधिक रहा है।

2) रोजगार कार्यालय में विभिन्न श्रेणियों के पंजीयत व रोजगार प्राप्त बेरोजगारों की स्थिति :-

जिले के रोजगार कार्यालय में गत 8 वर्षों के आंकड़ों के आधार पर आदिवासी वर्ग एवं अन्य श्रेणियों के पुरूष एवं महिला बेरोजगारों के पंजीयन व रोजगार प्राप्त की स्थिति को शोधार्थी द्वारा तुलनात्मक रूप से निम्न तालिका में प्रदर्शित किया है। जिससे यह ज्ञात हो सके की रोजगार कार्यालय

* प्राध्यापक वाणिज्य संकाय, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक वाणिज्य संकाय, शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद-जिला उज्जैन (म.प्र.) भारत

में पंजीयन कराने तथा रोजगार प्राप्त होने में आदिवासी वर्ग एवं अन्य श्रेणियों के बेरोजगारों का अनुपात क्या है? अन्य श्रेणियों में सामान्य श्रेणी, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति वर्ग व अल्पसंख्यक वर्ग के पुरूष एवं महिला बेरोजगारों को शामिल किया गया है, जबकि आदिवासी वर्ग में केवल अनुसूचित जनजाति वर्ग के पुरूष एवं महिला बेरोजगारों को शामिल किया गया है। (देखिए तालिका क्रमांक 2)

तालिका क्रमांक 02 से स्पष्ट है कि आदिवासी झाबुआ जिले में बेरोजगारी से मुक्ति दिलाने के लिए कार्यरत रोजगार कार्यालय मात्र पंजीयन करने तक सीमित रह गया है। गत 8 वर्षों के आंकड़ों के आधार पर जिला रोजगार कार्यालय में कुल 53,520 बेरोजगारों ने रोजगार पाने के लिए पंजीयन कराया था, जिसमें से मात्र 2,253 बेरोजगारों को ही रोजगार कार्यालय, झाबुआ रोजगार उपलब्ध कराने में सफल रहा है। प्रतिशत के आधार पर मात्र 4.21 प्रतिशत बेरोजगारों को रोजगार प्राप्त हुआ है। इसमें भी काफी हद तक निजी कम्पनियों ने रोजगार कार्यालय को सहयोग प्रदान किया है। रोजगार कार्यालय द्वारा उपलब्ध कराये गये कुल रोजगार में आदिवासी वर्ग के पुरूष एवं महिला बेरोजगारों का प्रतिशत 86.82 है, शेष 13.18 प्रतिशत रोजगार अन्य श्रेणियों के पुरूष एवं महिला बेरोजगारों को मिला हैं। स्पष्ट है कि रोजगार प्राप्त करने में आदिवासी वर्ग के बेरोजगारों का बाहुल्य है।

3) जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों की स्थिति :-

जिले के रोजगार कार्यालय में जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों से आशय यह है कि वर्ष के अंत में (अर्थात् 31 दिसम्बर को) रोजगार कार्यालय के पंजीयन रजिस्टर में जितने बेरोजगारों की संख्या पंजीकृत रहती है, उन्हें जीवित पंजी पर दर्ज संख्या कहते हैं।

इसमें उन बेरोजगारों की संख्या घटा दी जाती है जो किसी अन्य जिले में स्थाई रूप से रहने के लिए चले गये हों या जिन्होंने नवीनीकरण नहीं कराया हो या जिन्हें नौकरी प्राप्त हो गई हो। इस प्रकार जीवित पंजी में उन बेरोजगारों की संख्या भी जोड़ दी जाती है जो किसी अन्य जिले से इस जिले में आये हों। आदिवासी झाबुआ जिले में जीवित पंजी पर दर्ज बेरोजगारों की स्थिति को शोधार्थी ने अग्र तालिका में विश्लेषण किया है।

वर्ष 31 दिसंबर	जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों की संख्या	जीवित पंजी पर दर्ज कुल आदिवासी वर्ग के बेरोजगारों की संख्या	कुल संख्या से आदिवासी वर्ग का प्रतिशत	जीवित पंजी पर दर्ज अन्य श्रेणियों के कुल बेरोजगारों की संख्या	कुल संख्या से अन्य श्रेणियों का प्रतिशत
2003	26,624	16,690	67.77	7,934	32.23
2004	24,304	17,184	70.70	7,120	29.30
2005	24,627	17,174	69.70	7,463	30.30
2006	24,879	17,807	71.57	7,072	28.43
2007	24,846	17,784	71.58	7,062	28.42
2008	26,622	19,473	73.14	7,149	26.86
2009	28,528	20,945	73.41	7,583	26.59
2010	28,450	20,910	73.49	7,540	26.51
जीवित पंजी पर दर्ज आदिवासी वर्ग एवं अन्य श्रेणियों के बेरोजगारों का अनुपात (वर्ष 2010 के आधार पर)					2.77:1
जीवित पंजी पर दर्ज प्रत्येक 100 बेरोजगारों में आदिवासी वर्ग एवं अन्य श्रेणियों का अनुपात (संख्या में)					73:27

स्त्रोत: जिला रोजगार कार्यालय, झाबुआ * 30 जून, तक की स्थिति में

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि झाबुआ जिले के रोजगार कार्यालय में जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों की संख्या में गत 8 वर्षो में लगातार वृद्धि दिखाई दे रही है। वर्ष 2003 में जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों की संख्या 24,624 थी, जो बढ़कर दिसम्बर, 2009 में 28,528 हो गयी। अर्थात् इन 7 वर्षो में कुल बेरोजगारों की संख्या में 15.85 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जिले के रोजगार कार्यालय में जीवित पंजी पर दर्ज आदिवासी वर्ग के बेरोजगारों की संख्या में भी गत 8 वर्षो में वृद्धि दिखाई दे रही है। वर्ष 2003 में आदिवासी वर्ग के कुल बेरोजगारों की संख्या 16,690 थी, जो बढ़कर दिसम्बर 2009 में 20,945 हो गई है। अर्थात्इन 7 वर्षो में इसमें 25.49 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। अन्य श्रेणियों के बेरोजगारों की संख्या में गत 8 वर्षो में मामूली सी कमी दर्ज हुई है।

4) रोजगार कार्यालय में पंजीयत एवं रोजगार प्राप्त बेरोजगारों में पुरूषों व महिलाओं की तुलनात्मक स्थिति :-

जिले में वर्ष 2003 से वर्ष 2010 तक गत 8 वर्षों में रोजगार कार्यालय में पंजीयत कुल पुरूष व कुल महिला बेरोजगारों की स्थिति तथा रोजगार कार्यालय द्वारा उन्हें उपलब्ध कराये गये रोजगार की स्थिति को शोधार्थी ने अग्र तालिका द्वारा विश्लेषित किया है। इस विश्लेषण से यह ज्ञात हो सकेगा कि रोजगार कार्यालय में पंजीयन कराने वाले बेरोजगारों में महिलाओं एवं पुरूषों का कितना अंशदान है, तथा रोजगार प्राप्त करने में भी महिलाओं व पुरूषों का क्या अनुपात है? चूँकि रोजगार कार्यालय द्वारा सभी श्रेणियों की महिलाओं के पंजीयन की जानकारी एक साथ संधारित कि जाती है, इसलिये शोधार्थी ने सभी श्रेणियों के पुरूषों एवं महिलाओं का तुलनात्मक विश्लेषण रोजगार कार्यालय से प्राप्त आंकड़ों के आधार पर स्वविवेक से किया है।

तालिका क्रमांक 04 से स्पष्ट है कि जिले के रोजगार कार्यालय में गत 08 वर्षों में पंजीयत संख्या 53,520 में से सभी श्रेणियों के पुरूष बेरोजगारों की संख्या 39,795 तथा सभी श्रेणियों की महिला बेरोजगारों की संख्या 13,725 है। प्रतिशत के आधार पर पंजीयन में गत 08 वर्षो में पुरूषों का प्रतिशत 74.35 तथा महिलाओं का प्रतिशत 25.65 रहा है।

रोजगार कार्यालय द्वारा वर्ष 2003 से जून, 2010 तक बेरोजगारों को जो रोजगार उपलब्ध कराया गया है उसमें पुरूषों में 2,210 एवं महिलाओं में 43 बेरोजगारों को रोजगार प्राप्त हुआ है। यह पुरूषों के पंजीयन के अनुपात में 5.55 प्रतिशत व महिलाओं के पंजीयन के अनुपात में 0.31 प्रतिशत है। अर्थात् रोजगार कार्यालय द्वारा 18 पंजीयत पुरूषों में से 01 पुरूष को तथा 319 पंजीयत महिलाओं में से 01 महिला को रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है।

निष्कर्ष :-

प्रस्तुत शोध पत्र ''आदिवासी झाबुआ जिले के रोजगार कार्यालय में पंजीकृत बेरोजगारों का विश्लेषण'' के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं :-

- झाबुआ जिले में प्रतिवर्ष पंजीयन कराने वाले 100 बेरोजगारों में से लगभग 74 बेरोजगार आदिवासी वर्ग के होते हैं, शेष 26 बेरोजगार अन्य श्रेणियों (सामान्य, पिछड़ा वर्ग, अनुसूचित जाति वर्ग, अल्पसंख्यक) के होते हैं।
- आदिवासी झाबुआ जिले में रोजगार कार्यालय द्वारा उपलब्ध कराये गये प्रत्येक 100 रोजगारों में से 87 रोजगार आदिवासी वर्ग के पुरूषों व महिलाओं को तथा शेष 13 रोजगार अन्य श्रेणियों के पुरूषों व महिलाओं को प्राप्त हो रहा है। आनुपातिक दृष्टि से रोजगार कार्यालय द्वारा उपलब्ध कराये गये रोजगार में आदिवासी वर्ग के पुरूष एवं महिला बेरोजगारों तथा अन्य श्रेणियों के पुरूष एवं महिला बेरोजगारों में

अनुपात 6.59:1 है। अर्थात् रोजगार कार्यालय द्वारा उपलब्ध 8 व्यक्तियों के रोजगार में से 7 व्यक्ति आदिवासी वर्ग के एवं 1 व्यक्ति अन्य वर्ग का होता है।

- झाबुआ जिले में जीवित पंजी पर दर्ज कुल बेरोजगारों की संख्या में आदिवासी वर्ग व अन्य श्रेणियों के बेरोजगारों का अनुपात 2.77:1 है। अर्थात् जीवित पंजी पर दर्ज 04 बेरोजगारों में से लगभग 03 बेरोजगार आदिवासी वर्ग के होते हैं, तथा 01 बेरोजगार अन्य श्रेणियों का होता है। प्रतिशत के आधार पर यह कहा जा सकता है कि आदिवासी झाबुआ जिले में प्रत्येक 100 बेरोजगारों के जीवित पंजी में आदिवासी वर्ग के बेरोजगारों की संख्या लगभग 73 तथा अन्य श्रेणियों के बेरोजगारों की संख्या लगभग 27 रहती है।
- पंजीयन कराने वाले कुल व्यक्तियों में पुरूषों व महिलाओं का अनुपात 2.89:1 रहा है। अर्थात् प्रत्येक 04 बेरोजगारों के पंजीयन में 03 पुरूष व 01 महिला होती है।
- रोजगार प्राप्त कुल व्यक्तियों में पुरूषों व महिलाओं का अनुपात 51.40:1 रहा है, अर्थात् कुल 100 बेरोजगारों में से 98 पुरूष व 02 महिलाऐं ही रोजगार प्राप्त कर रहीं हैं।

संदर्भ सूची :-

शोध पत्र की सम्पूर्ण सामग्री शोधार्थी प्रो.गेंदालाल चौहान, सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद-जिला उज्जैन के शोध प्रबंध ''प्रधानमंत्री रोजगार योजना का झाबुआ जिले के आदिवासियों के आर्थिक विकास में योगदान'' विषय से ली गई है। यह शोध प्रबंध डॉ.लक्ष्मण परवाल, प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम के निर्देशन में पूर्ण किया गया है, तथा विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु वर्ष 2012-13 में प्रस्तुत किया गया है।

(तालिका क्रमांक 02) रोजगार कार्यालय में पंजीयन व रोजगार प्राप्त विभिन्न श्रेणियों के बेरोजगारों का विश्लेषण

वर्ष	कु ल रोजगार			आदिवासी वर्ग के			अन्य श्रेणियों के		
	पंजीयन	रोजगार प्राप्त	प्रतिशत	पंजीयन	रोजगार प्राप्त	प्रतिशत	पंजीयन	रोजगार प्राप्त	प्रतिशत
2003	5,675	26	0.45	3,919	19	0.48	1,756	07	0.40
2004	6,427	144	2.24	4,513	139	3.07	1,914	05	0.26
2005	7,805	348	4.46	5,444	331	6.08	2,361	17	0.72
2006	7,207	514	7.13	5,593	494	8.83	1,614	20	1.24
2007	7,333	526	6.80	5,597	477	8.52	1,736	49	2.82
2008	8,221	164	1.99	6,408	137	2.13	1,813	27	1.49
2009	7,257	369	5.08	5,516	253	4.59	1,741	116	6.66
2010	3,595	162	4.50	2,392	106	4.43	1,203	56	4.66
योग	53,520	2,253	4.21	39,382	1,956	4.97	14,138	297	2.10
प्रतिशत		100.00			86.82			13.18	
अनुपात				6.59:1					

स्त्रोत: जिला रोजगार कार्यालय, झाबुआ

* 30 जून, तक की स्थिति में

(तालिका क्रमांक 04) रोजगार कार्यालय में पंजीयन व रोजगार प्राप्त विभिन्न श्रेणियों के बेरोजगारों का विश्लेषण

वर्ष	सभी श्रेणियों के पुरुष			सभी श्रेणियों की महिलाएँ			महायोग			अनुपात पुरुष व महिला	
31 दिसंबर	पंजीयन	रोजगार प्राप्त	प्रतिशत	पंजीयन	रोजगार प्राप्त	प्रतिशत	पंजीयन	रोजगार प्राप्त	प्रतिशत	पंजीयन	रोजगार प्राप्त
2003	4,369	17	0.38	1,306	09	0.68	5,675	26	0.46	3.34%1	1.89%1
2004	4,842	144	2.97	1,585	-	-	6,427	144	2.24	3.05%1	144.00%1
2005	5,850	348	5.94	1,955	-	-	7,805	348	4.46	2.99%1	348.00%1
2006	5,351	512	9.56	1,856	02	0.10	7,207	514	7.13	2.88%1	256.00%1
2007	5,348	509	9.51	1,985	17	0.85	7,333	526	7.17	2.69%1	29.94%1
2008	6,040	161	2.66	2,181	03	0.13	8,221	164	1.99	2.76%1	53.67%1
2009	5,282	362	6.85	1,975	07	0.35	7,257	369	5.08	2.67%1	51.71%1
2010*	2,713	157	5.79	882	05	0.57	3,595	162	4.51	3.07%1	31.40%1
योग	39,795	2,210	5.55	13,725	43	0.31	53,520	2,253	4.21	2.89%1	51.40%1
महायोग सेप्रतिशत	74.35	98.09	-	25.65	01.19	-	100.00	100.00	-	-	-

स्त्रोत: जिला रोजगार कार्यालय, झाबुआ

* 30 जून, तक की स्थिति में

नीमच जिले में शहरीकरण का प्रभाव
(एक तुलनात्मक अध्ययन 1971 से 2011 तक)

डॉ. एल.एन. शर्मा *

प्रस्तावना– किसी भी देश में, जनसंख्या का शहर की ओर आकर्षित होने वाले घटकों में (A) आकर्षण प्रभाव में– औद्योगिकीकरण, व्यापार, यातायात, संचार, बैंकिंग, बीमा, शिक्षा आदि रोजगार के अवसर है। प्रो. किंग्सले डेविस के अनुसार नगरों में नवागन्तुकों की संख्या में वृद्धि औद्योगिक विकास से अत्यन्त घनिष्ठ रूप से सम्बन्ध है।[1]

प्रो. जी.सी. घुरिये के अनुसार नगररूपी शरीर, शक्तिशाली पैर यातायात के साधन और अन्य साधनों पर आश्रित हैं।[2] (B) निष्कासन प्रभाव में, ग्रामीण क्षेत्र में अनिश्चितता, कृषि में अनार्थिक जोत का आकार जाति प्रथा, धार्मिक भेदभाव। (C) अन्य प्रभाव में, राजनैतिक, धार्मिक, सैन्य कारण, भौगोलिक पर्यावरण, मनोवैज्ञानिक कारण, पर्यटक स्थल, सांस्कृतिक कारण है।[3] जो लोगों की आय, जीवन स्तर, सभ्यता, संस्कृति आदि में परिवर्तन लाते हैं। विगत् 50 वर्षों में देश–प्रदेश सहित जिले में भी ग्रामीण जनसंख्या का शहरी क्षेत्र में आव्रजन हुआ है।

उक्त सभी सुविधाओं के कारण शहरों में अधिक जनसंख्या का दबाव अनेकों समस्याओं को भी जन्म देता है, जैसे – आवास समस्या, जल समस्या, प्रदूषण समस्या, महंगाई, संयुक्त परिवार का विघटन, आपराधिक प्रवृत्तियों में वृद्धि, भ्रष्टाचार आदि। नीमच जिले में शहरीकरण का प्रभाव के अध्ययन का उद्देश्य उक्त सभी कारणों को ज्ञात करना है।

शोध के अध्ययन का क्षेत्र एवं प्रविधि :– उक्त शोध में नीमच जिले में शहरीकरण के प्रभाव का प्रदेश व देश के शहरीकरण से तुलनात्मक अध्ययन किया गया है साथ ही जिले की तीनों तहसीलों का भी तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। उक्त अध्ययन में 1971 से 2011 तक की जनगणना के प्रकाशित द्वितीयक समंकों का प्रयोग किया गया है।

किसी स्थान या क्षेत्र में जो एक निर्धारित संख्या का भाग निवास करने पर शहर कहलाता है तथा उस शहर की जनसंख्या में प्रतिवर्ष वृद्धि को शहरीकरण कहा जाता है।[4] शहरीकरण एक क्रिया है जिसके द्वारा देश की जनसंख्या का एक भाग शहरों में निवास करने के लिए आता है। प्रो. डब्ल्यू. एस. थम्पसन के अनुसार शहरीकरण उस गतिशीलता से है जिसमें लोग कृषिवादी समुदायों से हटकर ऐसे स्थानों पर चले जाते हैं जहाँ लोग व्यापार करते हैं तथा सरकारी कार्यों में लगे हैं।

शहरीकरण की गति, समय व देश के अनुसार बदलती रहती है।[5] प्रो. एण्डरसन ने शहरीकरण को वृहत् रूप में माना है कि जनसंख्या का केवल गाँवों से शहरों की ओर बढ़ना अथवा कृषि छोड़कर व्यापार या नौकरी करना ही नहीं वरन् इस प्रक्रिया में विचारों, व्यवहारों, मनोवृत्तियों और मूल्यों में होने वाले परिवर्तन भी सम्मिलित है।[6]

अत: नगरीकरण की प्रक्रिया समग्र रूप से न कि संख्यात्मक रूप से, कुल जनसंख्या में नगरीय जनसंख्या की वृद्धि से सम्बन्धित है बल्कि यह एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है, जिसमें केवल औद्योगिकरण ही नहीं बल्कि सभी तत्वों को महत्वपूर्ण माना जाता है जो आर्थिक क्रिया तथा सामाजिक परिवर्तन के लिये उत्तरदायी होते हैं।[7]

1971 की जनगणना में शहरीकरण की परिभाषा में निम्न को सम्मिलित किया गया है–

(अ) सभी स्थान जहाँ नगरपालिका, नगर निगम, छावनी या अनुसूचित नगर क्षेत्र है।

(ब) (I) 5000 निम्नतम जनसंख्या। (II)पुरूष कर्मचारी का कम से कम 75 प्रतिशत गैर कृषि व्यवसायों में कार्यरत होना। (III) कम से कम 400 प्रति वर्ग किलोमीटर जनसंख्या घनत्व होना।[8]

उक्त जनगणना में प्रमाप नगरीय क्षेत्र की नवीन विचारधारा को विकसित किया गया में (A) मुख्य नगर की जनसंख्या कम से कम 50000 होना चाहिए (B) अन्य नगरों और ग्रामीण प्रशासनिक इकाईयों में लगातार क्षेत्र का मुख्य नगर से घनिष्ठ सामाजिक एवं आर्थिक सम्बन्ध होना चाहिए (C) सम्भावना ऐसी हो कि दो या तीन दशकों में यह सम्पूर्ण क्षेत्र पूर्ण रूप से नगरीय हो जायेगा।[9] 1981 की जनगणना में शहरीकरण में जो पुरूष मछली पकड़ने और लकड़ी काटने के कार्यों में लगे है, उन्हें गैर कृषि कार्यों में संलग्न माना है।[10] 1991 की जनगणना में शहरीकरण की परिभाषा 1981 की जनगणना के समान ही रखी गई।[11] विभिन्न जनगणनाओं में शहरों को आकार की दृष्टि से छ: भागों में विभक्त किया गया, जो इस प्रकार हैं :–

Class-I - 1,00,000 and above Class-II - 50,000 to 99,999 Class-III - 20,000 to 49,999 Class-IV - 10,000 to 19,999 Class-V- 5,000 to 9,999 Class-VI - Less than 5,000 *(देखिए तालिका क्रं. 1 व 2)*

तालिका क्र. 01 के अध्ययन से यह निष्कर्ष निकलता है कि 1971 की जनगणना में जिले में शहरी जनसंख्या का प्रतिशत प्रदेश व देश की तुलना में अधिक है जिसका कारण शिक्षा, स्वास्थ्य, नियोजित शहरीकरण से नीमच नगर में जनसंख्या आकर्षित हुई। परन्तु 1981 में जिले में शहरी जनसंख्या का प्रतिशत प्रदेश की तुलना में अधिक व देश की तुलना में कम रहा है। लगभग यही स्थिति 1991, 2001 एवं 2011 की है।

अत: कारणों में कोई अतिरिक्त परिवर्तन नहीं हुआ है। जहाँ तक शहरी जनसंख्या के वृद्धि दर का प्रश्न है, उसमें नीमच जिला विगत् 50 वर्षों में प्रदेश व देश की तुलना में पीछे ही रहा है क्योंकि प्रदेश व देश में शहरीकरण का प्रभाव, जिले की तुलना में अधिक रहा है तथा जिले की जनंसख्या का भी झुकाव प्रदेश के विकसित शहरों की ओर होकर स्थायी प्रवास हुआ है।

यदि जिले की तीन प्रमुख तहसीलों नीमच, जावद व मनासा का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो यह निष्कर्ष निकलता है कि विगत् 50 वर्षों में नीमच तहसील में शहरी जनसंख्या का प्रतिशत जावद तहसील व मनासा तहसील की तुलना में सर्वाधिक है जो प्रदेश व देश की तुलना में भी सर्वाधिक है जबकि जावद तहसील व मनासा तहसील की शहरी जनसंख्या का प्रतिशत जिले की औसत शहरी जनसंख्या की तुलना में कम है और प्रदेश व देश की तुलना में भी पीछे ही है। जहाँ तक जिले की तहसीलों में शहरी जनसंख्या वृद्धि दर का प्रश्न है नीमच तहसील में प्रथम तीन दशक में शहरी

* प्राध्यापक– वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

जनसंख्या की वृद्धि दर बढ़ते क्रम में है और 2001 व 2011 में इस वृद्धि दर में काफी गिरावट आयी है।

जावद तहसील में 1991 के जनगणना में सिंगोली व रतनगढ़, शहरी जनसंख्या की परिभाषा में आने के कारण 164 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जबकि विगत् 50 वर्षों में कम से कम वृद्धि दर 2001 से 2011 के मध्य रही है। मनासा तहसील में 40 वर्षों में जनसंख्या वृद्धि दर 15 प्रतिशत से 22 प्रतिशत के मध्य ही रही है। परन्तु 2011 में यह वृद्धि दर जिले में सर्वाधिक 40.84 प्रतिशत हो गई जिसका प्रमुख कारण रामपुरा शहर को शहरी परिभाषा के अन्तर्गत सम्मिलित किया गया है।

जिले में शहरी जनसंख्या का प्रभाव :-

(अ) नीमच जिले में शहरी जनसंख्या को प्रभावित करने वाले निम्न घटक हैं- शिक्षा विशेषकर उच्च शिक्षा, स्वास्थ्य सुविधाऐं, नियोजित नीमच शहर, यातायात, संचार, बैंकिंग, बीमा, मनोरंजन की सुविधाऐं तथा रोजगार के अवसर, विशेषकर राज्य एवं केन्द्र सरकार के उपक्रम व कार्यालय आदि में रोजगार के कारण जनसंख्या का आव्रजन हुआ है। जिसमें जिले में व्यापार, व्यवसाय व सेवा क्षेत्र में वृद्धि हुई है तथा लोगों की प्रतिव्यक्ति आय व जीवन स्तर में भी वृद्धि हुई है।

(ब) जिलें में शहरी जनसंख्या में वृद्धि के कारण जो समस्याऐं भी उत्पन्न हुई है। उसमें -

(1) **आवास समस्या :-** विगत् 50 वर्षों में नीमच शहर की आवासीय भूमि के मूल्यों में लगभग 200% की वृद्धि हुई है।[12] जिसका कारण नीमच में नगर सुधार न्यास के समाप्त होने के पश्चात् नगरपालिका परिषद् ने कोई भी नई कॉलोनी विकसित नहीं की है।[13] अत: निजी भूमि मालिकों द्वारा व कॉलोनाईजर द्वारा जो कॉलोनी विकसित की है उनके मूल्य महानगरों से कम नहीं है तथा कई निजी भूमि स्वामियों ने अवैध कॉलोनी बना डाली है। जिसने आवासीय समस्या को और बढ़ा दिया तथा इस कार्य में, नीमच शहर में बंगला-बगीचा समस्या (स्वामित्व को लेकर) ने आवास समस्या ने गम्भीर रूप ले लिया है।[14]

(2) **जल समस्या :-** नीमच शहर में 30 वर्ष पूर्व जल प्रदाय एक दिन में दो बार (सुबह व शाम) किया जाता था जो वर्तमान में प्रत्येक चौथे दिन जल प्रदाय किया जाता है और यह अवस्था वर्षा व शीत ऋतु में भी रहती है तथा ग्रीष्म ऋतु में कभी-कभी पाँचवे दिन जल प्रदाय होता है। शहर को जल प्रदाय करने का एक मात्र साधन श्री सीताराम जाजू सागर बाँध है और जनसंख्या में विगत् 50 वर्षों में पाँच गुना वृद्धि हो चुकी है। अत: नीमच शहर सहित मनासा व जावद शहर में भी जल समस्या गम्भीर है।

(3) **प्रदूषण :-** सड़कों की खस्ता हालात ने शहर में भयंकर प्रदूषण समस्या उत्पन्न की है। किन्तु 50 वर्षों में चार पहिया वाहनों में 50 गुना वृद्धि होने के कारण[15] प्रदूषण के स्तर में जिले के शहर महानगरों से कम नहीं है। अनियमित प्लास्टिक थैलियों के प्रयोग ने शहर के नालियों व नालों में भारी रूकावटें पैदा की है तथा पशुओं को भी हानि पहुंचाई है। विगत् 50 वर्षों में गांधी वाटिका को छोड़कर कोई भी ग्रीन पार्क विकसित नहीं किया गया है। शहर में सुलभ कॉम्पलेक्स का भारी अभाव है। विशेषकर दुकानदारों व महिलाओं को भारी परेशानी का सामना करना पड़ रहा है। शहर में ओपियम फैक्ट्री का पानी नाले में डालने के कारण व शहर की सभी नालियां शहर के दोनों ओर बहते नालों से जोड़ने के कारण नाले भयंकर रूप से प्रदूषित हो गये हैं।

(4) **भ्रष्टाचार :-** भ्रष्टाचार चरम सीमा पर है। लोकायुक्त की टीम ने नीमच जिले के कई भ्रष्ट कर्मचारियों को रंगे हाथों पकड़ा है। कई विभागों में भ्रष्टाचार के बिना कार्य नहीं हो रहा है। जो सड़क बनाई जाती है वह वर्षा ऋतु मे बह जाती है एवं सड़कें गडढों में तबदील हो जाती है।

(5) **महंगाई :-** महंगाई की दृष्टि से प्रदेश के अन्य शहरों की तुलना में नीमच शहर भी महंगा है। केन्द्रीय रिजर्व पुलिस फोर्स के कारण सब्जी तक के भाव महानगरों के समान है। मकानों का किराया आदि भी अन्य शहरों की तुलना में अधिक है।

(6) **आपराधिक प्रवृत्तियॉ:-** आपराधिक प्रवृत्तियों में भी नीमच जिला भी अग्रणी है। ओपियम उत्पादन अधिक होने से तस्करी के कई मामले पकड़े जाते हैं। हत्या, चोरी, बलात्कार, पारिवारिक हिंसा में कई गुना वृद्धि हुई है।[16] जगदीश अग्रवाल हत्याकाण्ड के अज्ञात हत्यारे की पहचान नहीं होने तथा पकड़े न जाने के कारण व भय से परिजनों ने नीमच से पलायन कर दिया है। 'गुर्जर फर्जी मुठभेड़' जिले का चर्चित काण्ड रहा है। यह बात इससे भी सिद्ध हो रही है कि विधानसभा निर्वाचन 2013 में आपराधिक गतिविधियों से लिप्त कई अपराधियों को जिला कलेक्टर ने जिला बदर किया है।[17] तथा बनरेबल मेपिंग के दौरान भी यह बात सामने आई है कि जिले में आपराधिक घटनाओं के कारण मतदाता प्रभावित हो सकते हैं।[18] इन आपराधिक घटनाओं को रोकने हेतु पुलिस बल आनुपातिक रूप से कम है और पुलिस बल पर कार्यभार भी अधिक है।

सुझाव :-

1. जिले की आवास समस्या के निदान हेतु नगरपालिका परिषदों द्वारा नई कॉलोनी विकसित की जाना चाहिए एवं गरीब वर्ग को सस्ते भूखण्ड उपलब्ध कराना चाहिए।
2. नीमच शहर में बंगला-बगीचा समस्या (स्वामित्व) को जनहित में शीघ्रातिशीघ्र (प्राथमिकता से) हल किया जाना चाहिए।
3. नगरों की साफ-सफाई पर विशेष ध्यान रखते हुए प्लास्टिक की थैलियों के प्रयोग पर पूर्णत: प्रतिबन्ध लगाया जाना चाहिए।
4. जल समस्या के निदान हेतु नई पाईप लाईन डालने एवं शहर में अवैध नल कनेक्शनों को वैध किया जाना चाहिए।
5. शहर की कॉलोनियों में गार्डन हेतु जो भूमि निर्धारित है। उसे जनभागीदारी से, बगीचों में विकसित किया जाना चाहिए।
6. शहरों में अवैध गुमटियों को हटाने एवं विकल्प के रूप में बेरोजगारों हेतु शासकीय दुकानों का निर्माण कराया जाना चाहिए।
7. शहरों में उचित स्थानों पर पर्याप्त सुलभ कॉम्पलेक्सों का भी निर्माण होना चाहिए।
8. आपराधिक गतिविधियों पर नियन्त्रण हेतु आधुनिक साज-सज्जा के साथ पुलिस बल की पर्याप्त मात्रा में संख्यात्मक वृद्धि करना चाहिए।
9. नगर की सड़को को पक्की सीमेन्टेड बनाई जाना चाहिए ताकि धूल उड़नें से होने वाले प्रदूषण को रोका जा सके।
10. भ्रष्ट आचरण की शिकायत होने पर तुरन्त विभागीय जाँच करके दोषी कर्मचारी को शीघ्र दण्डित किया जाना चाहिए।

सन्दर्भ सूची

1- Davis Kingsley : The Population of India & Pakistan, 1961, P.-10
2- Sinha & Dwivedi : Principle of Demography 1989, P.-169
3. डॉ. एल.एन. शर्मा : मन्दसौर जिले का जनांकिकीय अध्ययन 1971 से 1991 अप्रकाशित पीएच.डी. थीसिस, 1995, पृष्ठ 220-222
4. वही पृष्ठ-216
5- W.S.Thompson : Population Problem 1965, P.-123
6. डॉ. आर.के. श्रीवास्तव : उज्जैन जिले में नगरीय अधिवासों का विकास अप्रकाशित पीएच.डी. थीसिस, 1987, पृष्ठ-53
7. डॉ.जी.बी. सक्सैना : Indian Population in Transition 1971, P.-64
8. जनगणना रिपोर्ट : 1971 वाल्यूम-10, पृष्ठ-40
9. जनगणना 1971 पुस्तकमाला क्र0 10 (अ) और (आ), पृष्ठ-41
10. जनगणना 1981 भाग तेरह बी, सीरिज II, पृष्ठ-12
11. जनगणना 1991 भाग तेरह, सीरिज II, पृष्ठ-11
12. जिला उप पंजीयक कार्यालय, नीमच
13. कार्यालय, नगर पालिका परिषद्, नीमच
14. वही
15. कार्यालय, सड़क यातायात, नीमच
16. www.mppolice.gov.in/static/district/-infox.aspx
17. कार्यालय, जिला कलेक्टर, नीमच
18. कार्यालय, नगर निरीक्षक, नीमच
19. जनगणना 1971, 1981, 1991, 2001, 2011

तालिका - 01

नीमच जिला म.प्र. व भारत में शहरी जनसंख्या की वृद्धि दर एवं शहरी जनसंख्या का प्रतिशत

वर्ष	शहरी जनसंख्या में वृद्धि			शहरी जनसंख्या का प्रतिशत		
	नीमच जिला	म.प्र.	भारत	नीमच जिला	म.प्र.	भारत
1971	27.85	46.63	38.23	22.98	16.29	19.91
1981	30.09	56.03	46.14	22.55	20.29	23.34
1991	23.90	44.98	36.19	22.81	23.21	25.72
2001	21.40	30.10	31.50	27.95	26.67	28.60
2011	11.00	25.60	31.80	29.00	27.63	31.16

स्त्रोत :- भारत की जनगणना 1971, 81, 91, 2001, 2011

तालिका - 02

नीमच जिले की तहसीलों में शहरी जनसंख्या की वृद्धि दर एवं शहरी जनसंख्या का प्रतिशत

वर्ष	शहरी जनसंख्या में वृद्धि			शहरी जनसंख्या का प्रतिशत		
	नीमच तहसील	जावद तहसील	मनासा तहसील	नीमच तहसील	जावद तहसील	मनासा तहसील
1971	34.81	17.34	16.12	37.41	9.34	19.67
1981	38.40	19.88	21.61	38.13	8.44	18.51
1991	45.14	164.14	16.77	44.90	18.03	17.93
2001	23.64	20.94	15.80	45.38	17.92	17.15
2011	13.54	8.62	40.84	44.84	17.30	21.25

स्त्रोत :- भारत की जनगणना 1971, 81, 91, 2001, 2011

****

झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को इकाईवार प्रदत्त वित्तीय सहायता का विश्लेषण

डॉ.लक्ष्मण परवाल * प्रो.गेन्दालाल चौहान **

प्रस्तावना :-

आधुनिक युग में किसी भी व्यवसाय एवं उद्योग की स्थापना, संचालन एवं विकास हेतु वित्त की आवश्यकता होती है। आज के प्रतिस्पर्धात्मक युग में वित्त समस्त व्यावसायिक एवं औद्योगिक क्रियाओं का मूल आधार है।

केमरोन एवं पैट्रिक के शब्दों में ''वित्त आर्थिक विकास की प्रक्रिया की चिकनाई है।''' वित्त से ही औद्योगिक विकास प्रारंभ होता है तथा विनियोग के नये अवसर उत्पन्न होते हैं। हूघ टी.पैट्रिक अविकसित देशों में उपलब्ध वित्तीय विकास एवं आर्थिक प्रगति की चर्चा करते हुए लिखते हैं कि ''देश में उपलब्ध वित्तीय वातावरण ही सृजनात्मक साहसिक प्रत्युत्तरों को उत्प्रेरित करता है।''

वित्त उद्यमियों को साहसिक एवं जोखिमपूर्ण क्रियाएं करने में सहायक होता है। यह उद्यमियों की आय में वृद्धि करके उन्हें अधिक जोखिमपूर्ण क्रियाओं को संचालित करने के लिए प्रेरित करता है। वित्तीय सहायता देश के भौतिक एवं मानवीय संसाधनों को गतिशील बनाती है तथा औद्योगिक क्रियाओं को प्रोत्साहित करती है। किसी भी देश के वित्तीय संस्थान उस देश में रोजगार व विनियोजन के अवसरों का सृजन करके औद्योगिक परिदृश्य को रूपांतरित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह संभावित उद्यमियों को उद्यम हेतु एक नई ऊर्जा प्रदान करते हैं।

प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्राप्त करने हेतु उद्योग/सेवा /व्यवसाय की किसी भी इकाई की स्थापना के चयन का निर्णय हितग्राही स्वयं करता है, या अपने परिवार व मित्रों से परामर्श लेकर करता है । साथ ही उस क्षेत्र की स्थानीय मांग व उपभोक्ताओं की रूचि के अनुसार ही किसी भी इकाई को स्थापित करने का चयन आदिवासी वर्ग के हितग्राही अपने स्वविवेक के आधार पर करते है।

अध्ययन का उद्देश्य :-

प्रस्तुत शोध पत्र में झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को इकाईवार (व्यवसाय/सेवा/उद्योग क्षेत्र की चयनित इकाईयों की स्थापना हेतु) प्रदत्त वित्तीय सहायता का विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन निम्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया गया है:-

- प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत अध्ययन अवधि में आदिवासी हितग्राहियों को इकाईवार व्यवसाय/सेवा/उद्योग क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु कितने ऋण प्रकरण स्वीकृत एवं वितरित किये गये ?
- प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत अध्ययन अवधि में आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल ऋण प्रकरणों में इकाईवार (व्यवसाय/ सेवा/ उद्योग) वितरित ऋण प्रकरणों का अनुपात क्या रहा ?
- प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत बैंकों द्वारा आदिवासी हितग्राहियों को वितरित की गई ऋण राशियों का इकाईवार नियोजन कितना रहा ?
- प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत बैंकों द्वारा आदिवासी हितग्राहियों को इकाईवार किन-किन क्रियाकलापों की स्थापना हेतु प्रमुख रूप से ऋण स्वीकृत एवं वितरित किये गये ?

समंक संकलन :-

यह अध्ययन मध्यप्रदेश राज्य के आदिवासी झाबुआ जिले में किया गया है। अध्ययन में संग्रहित किये गये द्वितीयक समंक झाबुआ जिले के व्यापार एवं उद्योग केन्द्र से प्राप्त किये गये हैं। वर्ष 2003-04 से वर्ष 2007-08 तक कुल 05 वर्षो के ही आंकडे संग्रहित कर विश्लेषण किया गया है। प्रस्तुत अध्ययन में उपलब्ध समंकों के आधार पर औसत, अनुपात एव प्रतिशत जैसी सांख्यिकीय एवं गणितीय विधियों का उपयोग कर विभिन्न सारणियों एवं चित्रों के माध्यम से शोधार्थी द्वारा सार्थक परिणाम प्राप्त किये गये हैं।

शोधार्थी ने शोध के दौरान झाबुआ जिले में वर्ष 2002-03 से लेकर वर्ष 2007-08 तक प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्राप्त करके अपना स्वयं का रोजगार (उद्योग /सेवा /व्यवसाय इकाई के रूप में) स्थापित करने वाले 153 आदिवासी हितग्राहियों से प्रत्यक्ष साक्षात्कार व प्रश्नावलियों/अनुसूचियों के द्वारा प्राथमिक समंक एकत्रित किये । इन 153 आदिवासी हितग्राहियों में से उद्योग/सेवा/व्यवसाय इकाई के हितग्राहियों की स्थिति इस प्रकार है -

- व्यवसाय इकाई के 77 आदिवासी हितग्राही ।
- सेवा इकाई के 45 आदिवासी हितग्राही ।
- उद्योग इकाई के 31 आदिवासी हितग्राही ।

प्राथमिक समंकों के अंतर्गत प्रश्नावलियों/अनुसूचियों से प्राप्त अभिमत के अनुसार ही आदिवासी हितग्राहियों द्वारा चयनित क्रियाकलापों की व्याख्या की गई है ।

विश्लेषणात्मक विवेचन :-

झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वर्ष 2003-04 से वर्ष 2007-08 तक आदिवासी वर्ग के बेरोजगार हितग्राहियों (महिला व पुरूष) को बैंकों द्वारा व्यवसाय/सेवा/उद्योग क्षेत्र के विभिन्न क्रियाकलापों के अंतर्गत इकाईयों की स्थापना करने हेतु वितरित की गई आर्थिक सहायता/ ऋण राशि को शोधार्थी द्वारा अग्र विभिन्न तालिकों में दर्शाया गया है।

(अ) बैंकों द्वारा व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा आदिवासी हितग्राहियों को व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु जिन प्रमुख क्रियाकलापों का चुनाव कर ऋण राशि/वित्तीय सहायता वितरित की गई है, वे इस प्रकार हैं :-

- किराना/जनरल स्टोर्स/प्रोविजनल स्टोर्स/अनाज व्यापारी
- ऑटो पार्ट्स/इलेक्ट्रीक सामान/सायकल का विक्रय/कृषि उपकरण
- किराना/जनरल स्टोर्स/प्रोविजनल स्टोर्स/अनाज व्यापारी
- कृषि दवाईयां/खाद बीज विक्रय/फर्नीचर व्यवसाय

* प्राध्यापक वाणिज्य संकाय, स्वामी विवेकानन्द शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य संकाय शासकीय विक्रम विश्वविद्यालय, खाचरौद, जिला-उज्जैन (म.प्र.) भारत

- वस्त्र व्यवसाय/रेडिमेड वस्त्र/कटलरी स्टोर्स/चूड़ी व्यवसाय
- सीमेंट व्यवसाय/महुँआ व्यापार व अन्य व्यवसाय

प्राथमिक समंकों के अनुसार लगभग 60 से 80 प्रतिशत आदिवासी हितग्राहियों ने उपर्युक्त व्यवसायों का चयन करके बैंकों से वित्तीय सहायता प्राप्त कर अपना स्वरोजगार स्थापित किया है। शोधार्थी ने गत 05 वर्षो में व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों के अंतर्गत नियोजित राशि का उल्लेख तालिका क्रमांक 1 में किया है। साथ ही व्यवसाय इकाई के रूप में स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों का प्रतिशत एवं आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल ऋण प्रकरणों की संख्या से व्यवसाय इकाई के रूप में वितरित ऋण प्रकरणों का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है। (देखिए तालिका क्रमांक 1)

तालिका क्रमांक 1 एवं चित्र से स्पष्ट होता है कि जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा वर्ष 2003-04 से वर्ष 2007-08 तक गत 05 वर्षो में कुल 765 आदिवासी हितग्राहियों को अपना स्वयं का स्वरोजगार स्थापित करने हेतु आर्थिक सहायता प्रदान की गई है। इसमें से व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना के लिये 385 आदिवासी हितग्राहियों को वित्तीय सहायता प्रदान की गई है जो कि आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल प्रकरणों की संख्या का लगभग 50 प्रतिशत के बराबर है। झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत स्थापित की गई व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों की संख्या, उद्योग क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या के अनुपात में लगभग ढाई गुना अधिक है तथा सेवा क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या के अनुपात में लगभग डेढ़ गुना अधिक है।

आदिवासी हितग्राहियों को व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों के रूप में गत 05 वर्षो में कुल 542 प्रकरणों में स्वीकृति प्रदान करते हुए जिले की वाणिज्यिक बैंकों द्वारा कुल 385 प्रकरणों में ही ऋण राशि/वित्तीय सहायता प्रदान की गई है जो कि लगभग 71 प्रतिशत के बराबर है। यह उद्योग व सेवा क्षेत्र की इकाईयों की तुलना में अधिक है। जिले में वर्ष 2007-08, 2003-04 एवं 2005-06 में औसत से अधिक प्रकरणों में बैंकों द्वारा ऋण वितरित किया गया है, जो कि स्वीकृत प्रकरणों का क्रमश: 89.19 प्रतिशत, 87.62 प्रतिशत व 77.55 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2004-05 व 2006-07 में औसत से कम प्रकरणों में बैंकों द्वारा ऋण वितरित किया गया है, जो कि स्वीकृत प्रकरणों का क्रमश: 57.76 प्रतिशत व 56.38 प्रतिशत के बराबर है।

जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों में गत 05 वर्षो में कुल 01 करोड़, 95 लाख, 42 हजार रूपये की पूंजी विनियोजित की गई है जो कि उद्योग क्षेत्र एवं सेवा क्षेत्र में विनियोजित पूंजी से अधिक है। जिले में औसत रूप से प्रतिवर्ष आदिवासी हितग्राहियों द्वारा अधिग्रहित व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा लगभग 108 ऋण प्रकरणों में स्वीकृति प्रदान करते हुए लगभग 77 इकाईयों की स्थापना हेतु 39 लाख, 08 हजार रूपये की राशि वितरित की गई है, जो उद्योग एवं सेवा क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या एवं विनियोजित राशि से अधिक है।

(ब) बैंकों द्वारा सेवा क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत गत 05 वर्षो में आदिवासी वर्ग के बेरोजगार हितग्राहियों (महिला व पुरूष) को वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं द्वारा सेवा क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु जिन प्रमुख क्रियाकलापों का चयन कर वित्तीय सहायता/ऋण राशि वितरित की गई है, वे इस प्रकार हैं:-

- सेंटिंग कार्य/मोटर वाईडिंग/सायकल सर्विस/टू व्हीलर सर्विस
- लाईट डेकोरेशन/ऑटो रिक्शा/सिलाई मशीन सर्विस/वेल्डिंग कार्य
- होटल/रेस्टोरेंट/एस.टी.डी., पी.सी.ओ., फोटो कॉपी
- लोडिंग टेम्पो/फर्नीचर मरम्मत/ज्ञानदूत सूचना केन्द्र
- टेन्ट हाउस/इलेक्ट्रीक सर्विस/कम्प्यूटर जॉब वर्क/फोटो स्टूडियो
- ब्यूटी पार्लर/थ्रेशर मशीन/मोबाईल रिपेयरिंग आदि

प्राथमिक समंकों के आधार पर हितग्राहियों से भरवाई गई अनुसूचियों से ज्ञात हुआ है कि लगभग 70 से 90 प्रतिशत आदिवासी हितग्राहियों ने उपर्युक्त सेवा क्षेत्र की इकाईयों का चयन करके बैंकों से वित्तीय सहायता प्राप्त कर अपना स्वरोजगार स्थापित किया है। शोधार्थी ने सेवा क्षेत्र की इकाईयों के अंतर्गत नियोजित राशि का उल्लेख तालिका क्रमांक 2 में किया है। साथ ही सेवा क्षेत्र की इकाईयों के अंतर्गत स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों का प्रतिशत एवं आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल ऋण प्रकरणों की संख्या से सेवा क्षेत्र की इकाईयों के रूप में वितरित ऋण प्रकरणों का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है। (देखिए तालिका क्रमांक 2)

तालिका क्रमांक 2 एवं चित्र से स्पष्ट होता है कि जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा गत 05 वर्षो (2003-04 से 2007-08) में कुल 765 आदिवासी हितग्राहियों को अपना स्वयं का स्वरोजगार स्थापित करने हेतु वित्तीय सहायता/ ऋण राशि प्रदान की गई है। इसमें से सेवा क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना के लिये 225 आदिवासी हितग्राहियों को वित्तीय सहायता प्रदान की गई है, जो कि आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल प्रकरणों की संख्या का लगभग 30 प्रतिशत के बराबर है। सेवा क्षेत्र के अंतर्गत स्थापित की गई इकाईयां, उद्योग क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या के अनुपात में लगभग डेढ़ गुना अधिक है, तथा व्यवसाय क्षेत्र के अंतर्गत स्थापित की गई इकाईयों से लगभग डेढ़ गुना कम है।

आदिवासी हितग्राहियों को सेवा क्षेत्र की इकाईयों के अंतर्गत गत 05 वर्षो में कुल 502 प्रकरणों में स्वीकृति प्रदान करते हुए जिले की वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं द्वारा कुल 225 प्रकरणों में ही ऋण राशि/ वित्तीय सहायता प्रदान की गई है, जो कि लगभग 45 प्रतिशत के बराबर है। यह उद्योग एवं व्यवसाय दोनों क्षेत्र की इकाईयों की तुलना में कम हैं। जिले में वर्ष 2003-04, 2005-06 एवं 2007-08 में औसत से अधिक प्रकरणों में बैंकों द्वारा ऋण वितरित किया गया है, जो कि स्वीकृत प्रकरणों का क्रमश: 47.31 प्रतिशत, 50.00 प्रतिशत व 47.06 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2004-05 एवं 2006-07 में औसत से कम प्रकरणों में बैंकों द्वारा ऋण वितरित किया गया है, जो कि स्वीकृत प्रकरणों का क्रमश: 40.82 प्रतिशत व 40.46 प्रतिशत के बराबर है।

जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को सेवा क्षेत्र की इकाईयों में गत 05 वर्षो में कुल 01 करोड़, 43 लाख, 04 हजार रूपये की पूंजी विनियोजित की गई है, जो कि उद्योग क्षेत्र में विनियोजित की गई पूंजी से अधिक किन्तु व्यवसाय क्षेत्र में विनियोजित की गई पूंजी से कम हैं। जिले में औसत रूप से प्रतिवर्ष आदिवासी हितग्राहियों द्वारा अधिगृहित सेवा क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा लगभग 100 ऋण प्रकरणों में स्वीकृति प्रदान करते

हुए मात्र 45 इकाईयों की स्थापना हेतु लगभग 28 लाख, 61 हजार रूपये की राशि वितरित की गई, जो कि उद्योग क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या एवं विनियोजित राशि से अधिक है, किन्तु व्यवसाय क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या एवं विनियोजित राशि से कम है।

(स) बैंकों द्वारा उद्योग क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु वितरित वित्तीय सहायता का विवरण

जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं द्वारा आदिवासी हितग्राहियों को उद्योग क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु जिन प्रमुख क्रियाकलापों का चुनाव कर ऋण राशि/वित्तीय सहायता वितरित की गई है, वे इस प्रकार हैं :-

- रेडिमेड वस्त्र निर्माण/आटा चक्की/कवेलू उद्योग
- मुर्गी पालन/डेरी फार्म/पशुपालन/ईंट भट्टा आदि

प्राथमिक समंकों के आधार पर हितग्राहियों से भरवाई गई अनुसूचियों से ज्ञात हुआ है कि लगभग 65 से 85 प्रतिशत आदिवासी हितग्राहियों ने उपर्युक्त उद्योग क्षेत्र की इकाईयों का चयन करके बैंकों से वित्तीय सहायता प्राप्त कर अपना स्वरोजगार स्थापित किया है। शोधार्थी ने उद्योग क्षेत्र की इकाईयों के अंतर्गत नियोजित राशि का उल्लेख तालिका क्रमांक 3 में किया है। साथ ही उद्योग क्षेत्र की इकाईयों के अंतर्गत स्वीकृत व वितरित ऋण प्रकरणों का प्रतिशत एवं आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल ऋण प्रकरणों की संख्या से उद्योग क्षेत्र की इकाईयों के रूप में वितरित ऋण प्रकरणों का औसत एवं प्रतिशत भी ज्ञात किया गया है। (देखिए तालिका क्रमांक 3)

तालिका क्रमांक 3 एवं चित्र से स्पष्ट होता है कि जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा गत 05 वर्षों (2003-04 से 2007-08) में कुल 765 आदिवासी हितग्राहियों को अपना स्वयं का स्वरोजगार स्थापित करने हेतु वित्तीय सहायता/ ऋण राशि प्रदान की गई है। इसमें से उद्योग क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना के लिये 155 आदिवासी हितग्राहियों को वित्तीय सहायता प्रदान की गई है, जो कि आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल प्रकरणों की संख्या का लगभग 20 प्रतिशत के बराबर है। झाबुआ जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत स्थापित की गई उद्योग क्षेत्र की इकाईयों की संख्या, सेवा क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या के अनुपात में लगभग डेढ़ गुना कम है, तथा व्यवसाय क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या के अनुपात में लगभग ढाई गुना कम है।

आदिवासी हितग्राहियों को उद्योग क्षेत्र की इकाईयों के अंतर्गत गत 05 वर्षों में कुल 235 प्रकरणों में स्वीकृति प्रदान करते हुए जिले की वाणिज्यिक बैंकों की शाखाओं द्वारा कुल 155 प्रकरणों में ही ऋण राशि/ वित्तीय सहायता प्रदान की गई है, जो कि लगभग 66 प्रतिशत के बराबर है।

यह सेवा क्षेत्र की इकाईयों की तुलना में तो अधिक हैं, किन्तु व्यवसाय क्षेत्र की इकाईयों की तुलना में कम हैं। जिले में वर्ष 2006-07 एवं 2007-08 में औसत से अधिक प्रकरणों में बैंकों द्वारा ऋण वितरित किया गया है, जो कि स्वीकृत प्रकरणों का क्रमश: 70.15 प्रतिशत व 88.46 प्रतिशत के बराबर है। इसी प्रकार वर्ष 2003-04, 2004-05 एवं 2005-06 में औसत से कम प्रकरणों में बैंकों द्वारा ऋण वितरित किया गया है, जो कि स्वीकृत प्रकरणों का क्रमश: 59.57 प्रतिशत, 53.49 प्रतिशत व 65.38 प्रतिशत के बराबर है।

जिले में प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को उद्योग क्षेत्र की इकाईयों में गत 05 वर्षों में कुल 84 लाख, 09 हजार रूपये की पूंजी विनियोजित की गई है, जो कि सेवा एवं व्यवसाय क्षेत्र में विनियोजित की गई पूंजी से कम है। जिले में औसत रूप से प्रतिवर्ष आदिवासी हितग्राहियों द्वारा अधिगृहित उद्योग क्षेत्र की इकाईयों की स्थापना हेतु वाणिज्यिक बैंकों की विभिन्न शाखाओं द्वारा लगभग 47 ऋण प्रकरणों में स्वीकृति प्रदान करते हुए मात्र 31 इकाईयों की स्थापना हेतु लगभग 16 लाख, 82 हजार रूपये की राशि वितरित की गई, जो सेवा एवं व्यवसाय क्षेत्र में स्थापित की गई इकाईयों की संख्या एवं विनियोजित राशि से तुलनात्मक रूप से कम है।

निष्कर्ष :-

मध्यप्रदेश के झाबुआ जिले में वर्ष 2003-04 से लेकर वर्ष 2007-08 तक प्रधानमंत्री रोजगार योजना के अंतर्गत आदिवासी हितग्राहियों को इकाईवार प्रदान की गई वित्तीय सहायता के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार रहे हैं:-

- आदिवासी हितग्राहियों को इकाईवार जो वित्तीय सहायता प्रदान की गई है उसमें व्यवसाय क्षेत्र के क्रियाकलापों में सबसे अधिक लगभग 50 प्रतिशत, इसके पश्चात सेवा क्षेत्र के क्रियाकलापों में 30 प्रतिशत एवं उद्योग क्षेत्र के क्रियाकलापों में 20 प्रतिशत वित्तीय सहायता प्रदान की गई है।
- बैंकों द्वारा आदिवासी हितग्राहियों के स्वीकृत ऋण प्रकरणों में वितरित की गई ऋण राशि व्यवसाय क्षेत्र के क्रियाकलापों में सबसे अधिक 71 प्रतिशत, इसके पश्चात उद्योग क्षेत्र के क्रियाकलापों में 66 प्रतिशत तथा सबसे कम सेवा क्षेत्र के क्रियाकलापों में लगभग 45 प्रतिशत राशि वितरित की गई है।
- इकाईवार विनियोजित पूंजी की दृष्टि से सबसे अधिक पूंजी व्यवसाय क्षेत्र के क्रियाकलापों में लगभग 46 प्रतिशत, इसके पश्चात सेवा क्षेत्र के क्रियाकलापों में लगभग 34 प्रतिशत तथा उद्योग क्षेत्र के क्रियाकलापों में सबसे कम 20 प्रतिशत राशि विनियोजित की गई है।

संदर्भ सूची :-

शोध पत्र की सम्पूर्ण सामग्री शोधार्थी प्रो.गेंदालाल चौहान, सहायक प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद-जिला उज्जैन के शोध प्रबंध ''प्रधानमंत्री रोजगार योजना का झाबुआ जिले के आदिवासियों के आर्थिक विकास में योगदान'' विषय से ली गई है। यह शोध प्रबंध डॉ.लक्ष्मण परवाल, प्राध्यापक वाणिज्य, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम के निर्देशन में पूर्ण किया गया है, तथा विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी की उपाधि हेतु वर्ष 2012-13 में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका 1. (बैंकों द्वारा आदिवासी हितग्राहियों को व्यवसाय इकाई के रूप में स्वीकृत एवं वितरित ऋणों/वित्तीय सहायता का विवरण)

वर्ष	आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल प्रकरणों की संख्या	व्यवसाय इकाई के रूप में			व्यवसाय इकाई के रूप में वितरित प्रकरणों का कुल वितरित प्रकरणों से प्रतिशत	नियोजित राशि (लाख रू. में)
		स्वीकृत प्रकरण	वितरित प्रकरण	प्रतिशत		
2003–04	164	105	92	87.62	56.10	43.41
2004–05	130	116	67	57.76	51.54	36.16
2005–06	166	98	76	77.55	45.78	40.28
2006–07	184	149	84	56.38	45.65	44.15
2007–08	121	74	66	89.19	54.54	31.42
योग	765	542	385	71.03	50.33	195.42
औसत	153	108	77	71	50	39.08

स्त्रोत:– *जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, झाबुआ*

तालिका 2. (बैंकों द्वारा आदिवासी हितग्राहियों को सेवा इकाई के रूप में स्वीकृत एवं वितरित ऋणों/वित्तीय सहायता का विवरण)

वर्ष	आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल प्रकरणों की संख्या	सेवा इकाई के रूप में			सेवा इकाई के रूप में वितरित प्रकरणों का कुल वितरित प्रकरणों से प्रतिशत	नियोजित राशि (लाख रू. में)
		स्वीकृत प्रकरण	वितरित प्रकरण	प्रतिशत		
2003–04	164	93	44	47.31	26.83	31.15
2004–05	130	98	40	40.82	30.77	28.50
2005–06	166	112	56	50.00	33.73	32.26
2006–07	184	131	53	40.46	28.80	27.95
2007–08	121	68	32	47.06	26.45	23.18
योग	765	502	225	44.82	29.41	143.04
औसत	153	100	45	45	30	28.61

स्त्रोत:– *जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, झाबुआ*

तालिका 3. (बैंकों द्वारा आदिवासी हितग्राहियों को उद्योग इकाई के रूप में स्वीकृत एवं वितरित ऋणों/वित्तीय सहायता का विवरण)

वर्ष	आदिवासी हितग्राहियों को वितरित कुल प्रकरणों की संख्या	उद्योग इकाई के रूप में			उद्योग इकाई के रूप में वितरित प्रकरणों का कुल वितरित प्रकरणों से प्रतिशत	नियोजित राशि (लाख रू. में)
		स्वीकृत प्रकरण	वितरित प्रकरण	प्रतिशत		
2003–04	164	47	28	59.57	17.07	15.86
2004–05	130	43	23	53.49	17.69	13.47
2005–06	166	52	34	65.38	20.49	18.09
2006–07	184	67	47	70.15	25.55	24.42
2007–08	121	26	23	88.46	19.01	12.25
योग	765	235	155	65.96	20.26	84.09
औसत	153	47	31	66	20	16.82

स्त्रोत:– *जिला व्यापार एवं उद्योग केन्द्र, झाबुआ*

लघु उद्योगों के विकास में सरकार की ऋण गारंटी फण्ड योजना पर प्रकाश

डॉ. सतीश माहेश्वरी * किशोर मोरे **

पृष्ठभूमि :- औद्योगिक नीति-1991 के अंतर्गत अति लघु औद्योगिक इकाईयों में पूँजी-निवेश सीमा 2 लाख रूपये से बढ़ाकर 5 लाख रूपये कर दिया गया, जिसे पुन: आबिद हुसैन समिति की सिफारिशों पर सरकार ने इसे बढ़ाकर 25 लाख रूपये कर दी है। इसी औद्योगिक नीति के अनुसार लघु उद्यमों से आशय ऐसे उद्यमों से हैं जिनमें संयंत्र एवं मशीनरी में पूँजी निवेश 60 लाख रू. है, जिसे 7 फरवरी 1997 की घोषणा के अनुसार लघु उद्यमों की निवेश सीमा बढ़ाकर 3 करोड़ कर दी गई थी जिसे 17 फरवरी 1999 को केन्द्रीय मंत्रीमंडल ने लघु उद्योगों की मांग पर इस सीमा को पुन: घटाकर 1 करोड़ रूपये कर दी है। वर्ष 2002-2003 में देश की ऐसी कुल 109.49 लाख इकाईयाँ विद्यमान थी इनमें 260.21 लाख लोगों को रोजगार प्राप्त हो रहा था। इन्हीं उद्यमों का उत्पादन 3,14,850 करोड़ रू. का रहा है। इसी प्रकार वर्ष 2006-07 में 261.01 लाख इकाईयाँ हो गई, जिनमें 594.61 लाख लोगों को रोजगार में संलग्न थे और इस वर्ष इनसे कुल उत्पादन 5,87,196 करोड़ रू. का उत्पादन हुआ है।

लघु उद्यमों का भारतीय अर्थव्यवस्था में महत्व :- भारतीय अर्थव्यवस्था में लघु उद्यमों का महत्वपूर्ण स्थान है। भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था में जहाँ पूँजी का अभाव, गरीबी और बेरोजगारी का साम्राज्य हैं, वहाँ लघु उद्यम आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक सभी पहलुओं से औद्योगिक विकास की आधारशिला है। उद्यमों के महत्व के बारे में कहा जाता है कि लघु उद्यम भारत की क्षमताओं और उसके भावी विकास की पूँजी है। जिनके द्वारा उनके विशाल साधनों के विदोहन तथा लाखों व्यक्तियों की उत्पादन क्षमता का प्रयोग किया जा सकता है। लघु उद्यमों से ही आज की अनेक ज्वलंत समस्याओं का समाधान संभव हो रहा हैं।

लघु उद्यमों की समस्या :- लघु उद्यमों के विकास हेतु सरकार द्वारा पंचवर्षीय योजनाओं के दौरान् अनेक महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं फिर भी उद्यम कुछ आधारभूत समस्याओं से ग्रसित हैं, जिनके कारण वांछित प्रगति नहीं कर पा रहे हैं। इन उद्यमों की प्रमुख समस्याएँ निम्नलिखित हैं :-

1. वित्त की मुख्य समस्या :- स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् यद्यपि सरकारी प्रयासों के कारण लघु उद्यमों की वित्तीय संबंधी समस्याएँ कुछ कम हुई है, लेकिन उन्हें अपने छोटे आकार के कारण अभी भी वित्तीय कठिनाईयों का सामना करना पड़ता हैं।

2. अन्य समस्या :- कच्चे माल की समस्या, तकनीक की समस्या, विपणन की कठिनाई, बड़े उद्यमों से प्रतियोगिता, प्रमाणीकरण का अभाव, सूचना एवं परामर्श का अभाव, प्रबंध योग्यता में कमी।

लघु उद्योगों के विकास हेतु सरकारी प्रयास/नीतियाँ :- स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् लघु उद्यमों के महत्व को स्वीकार करते हुए सरकार ने इन उद्यमों के विकास हेतु विशेष बल दिया। यह महसूस किया गया है, ये उद्यम बेरोजगारी और गरीबी को दूर करने एवं असमानताओं को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं। इसे दृष्टिगत रखते हुए सरकार ने इस उद्यमों के विकास हेतु तरह-तरह के राजकीय नीति, मौद्रिक एवं प्रशासनिक उपाय किए हैं, जिनमें से यहाँ पर ''ऋण गारंटी फण्ड योजना'' का विवेचन किया गया है। जो कि सरकार की एक उत्कृष्ट योजना है। भारत में लघु उद्योगों को बढ़ावा प्रदान करने के उद्देश्य से सरकार ने भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (सिडबी) द्वारा अगस्त, 2000 में सूक्ष्म और लघु उद्यमों हेतु ऋण गारंटी फंड ट्रस्ट की स्थापना की हैं, जो ''ऋण गारंटी फण्ड योजना'' का संचालन करता है जो सदस्य ऋणदात्री संस्थाओं द्वारा सूक्ष्म और लघु उद्यमों को प्रदान की जाने वाली (1 करोड़ रू.) तक की ऋण सुविधा को गारंटी प्रदान करता है। इस योजना की वजह से पिछले कुछ वर्षों में गारंटी कवरेज में काफी तेजी आई है। वित्तीय वर्ष 2012 के दौरान् कुल 2,43,981 गारंटियों पर 13,783.98 करोड़ रू. अनुमोदित किए गए हैं। गारंटी कवर की सुविधा लेने वाली ऋणदात्री सदस्य संस्थाओं की संख्या बढ़कर 128 हो गई। सूक्ष्म और लघु उद्यमों को प्रदान की जाने वाली संपार्श्विक-मुक्त ऋण सुविधा को प्रोत्साहित करने में ऋण गारंटी फंड योजना काफी हद तक सफल रही है।

अनुसूचित वाणिज्य बैंकों की ओर से सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम क्षेत्र (एमएसएमई) को ऋण प्रवाह :- भारतीय रिजर्व बैंक के अनुसार अनुसूचित वाणिज्य बैंकों द्वारा सूक्ष्म एवं लघु उद्यम क्षेत्र को दिए गए बकाया क्रेडिट में वित्तीय वर्ष 2011-2012 के दौरान् 14.1 प्रतिशत की बढ़ोत्तरी हो गई अर्थात् मार्च 2011 के रू. 4,550 बिलियन से मार्च 2012 के अंत में रू.5,190 बिलियन हो गई। बैंक क्रेडिट के परिनियोजन के बारे में भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा जारी क्षेत्रकीय आंकड़ों से ज्ञात होता है कि एमएसएमई के तहत् विनिर्माण इकाईयों को बकाया क्रेडिट में वित्तीय वर्ष 2011-2012 के दौरान् 13 प्रतिशत की बढ़ोतरी रही (वित्तीय वर्ष 2010-2011 में 11 प्रतिशत)। इसी दौरान् एमएसएमई क्षेत्र की सेवा यूनिटों में 15 प्रतिशत की न्यून संवृद्धि दर्ज हुई (वित्तीय वर्ष 2010-2011 में 35.2 प्रतिशत)।

ऋण गारंटी फंड योजना के तहत् परिचालन- वित्तीय वर्ष 2000-01 में गारंटी कवर लेने वाली केवल 9 सक्रिय सदस्य ऋणदात्री संस्थाएँ थी जो कि 31 मार्च 2012 तक बढ़कर 109 सदस्य ऋणदात्री संस्थाएँ हो गई जबकि विगत वित्तीय वर्ष के दौरान् ऐसी 106 सदस्य ऋणदाता संस्थाएँ थीं। वर्ष 1999-2000 में 97.15 लाख उद्यमों में 229.10 लाख कर्मचारी कार्य करते थे, वहीं इसके लागू होने के बाद निरंतर उद्यमों एवं कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि होकर वर्ष 2010-11 में 311.52 लाख उद्यमों में 732.17 लाख कर्मचारियों की संख्या हो गई है। वित्तीय वर्ष 2011-2012 के दौरान कुल रू. 13,783.98 करोड़ की धनराशि का अनुमोदन कुल 2,43,981 गारंटियों के लिए किया गया। संचयी रूप से 31 मार्च, 2012 को कुल 7,92,229 खातों के लिए रू. 37,139.31 करोड़ की गारंटी की स्वीकृति दी जा चुकी हैं। वित्तीय वर्ष 2012 के दौरान् 3.94 प्रतिशत की मामूली गिरावट को छोड़कर, संख्या की दृष्टि से ऋण गारंटी फंड योजना के परिचालन में बढ़ोतरी जारी रही।

निष्कर्षत: यह कहा जायेगा कि सरकार (सिडबी) द्वारा संचालित इस योजना को लागू करने से जहाँ वर्ष 1999-2000 में 97.15 लाख उद्यमों में 229.10 लाख कर्मचारी कार्य करते थे, वहीं इसके लागू होने के बाद निरंतर उद्यमों एवं कर्मचारियों की संख्या में वृद्धि होकर वर्ष 2010-11 में 311.52 लाख उद्यमों में 732.17 लाख कर्मचारियों की संख्या हो गई है। इसी प्रकार इनको वित्त प्रदान करने वाली सक्रिय संस्थाएँ जहाँ वर्ष 2000-2001 में मात्र 9 थी जो 31 मार्च 2012 तक 128 हो गई। अत: ऋण गारंटी फंड योजना लागू होने से लघु उद्यमों को बढ़ावा मिला है।

संदर्भ सूची :- 1. डॉ. यू.सी. गुप्ता (उद्यमिता विकास) 2. श्री एच.के. भारती (उद्यमिता विकास) 3. श्री एस. सुधा (व्यावसायिक उद्यमिता का विकास) **पत्र-पत्रिकाएँ-** दैनिक भास्कर, नईदुनिया, प्रतियोगिता दर्पण, रोजगार निर्माण, **वेबसाइट्स-** *www.dcmsme.gov.in * www.ijecbs.com * www.edii.com

* प्राध्यापक ** पीएचडी शोधार्थी, स्वामी विवेकानंद शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत

अल्पकालीन कृषि वित्त में किसान क्रेडिट कार्ड का योगदान

डॉ.पी.डी. ज्ञानानी *

कृषि भारतीय अर्थ व्यवस्था का मुख्य आधार है। देश की लगभग 67 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर अवलम्बित है। अर्थव्यवस्था में कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका को देखते हुए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा इस क्षेत्र में साख के पर्याप्त प्रवाह को बनाये रखने के लिए अनेक उपाय किये है, रिजर्व बैंक द्वारा किए गए कई उपायों के बाद भी किसानों विशेषकर छोटे एवं सीमांत कृषक बैंकिंग क्षेत्र के लिए एक चुनौति बने हुए है। कृषि को वित्त प्रदान करने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक तथा नाबार्ड द्वारा ऋण प्रक्रिया एवं प्रणाली को सरल तथा दुरूस्त करने के लिए अनेक उपाय किए है। यद्यपि बैंकों द्वारा परम्परागत पद्धति के अनुसार ही कृषकों को ऋण स्वीकृत किए जाते है।

बैंकों द्वारा ऋण स्वीकृति किए जाने की परम्परागत पद्धति, जटिल एवं अधिक समय लेने वाली है। अधिकांश कृषक इस कारण ऋण प्राप्त करने से हतोत्साहित होते है। ऋण देने की परम्परागत बैंकिंग प्रक्रिया के दोषों को दूर करने के लिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा 1998-99 में कृषकों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के लिए एक नवीन योजना प्रारंभ की गई। इस योजना का नाम किसान क्रेडिट कार्ड योजना है।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना, कृषकों की अल्पकालीन वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति करने के उद्देश्य से तैयार की गई। यह साख निर्गमन की एक विशिष्ट योजना है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य कृषि कार्यो में प्रयुक्त किए जाने वाले विभिन्न आदानों जैसे बीज, उर्वरक, दवाईयां, चालू कार्य हेतु नकदी तथा उत्पादन से सम्बंधित अन्य व्ययों की आपूर्ति हेतु आवश्यक वित्त की व्यवस्था करना है।

कृषि वित्त व्यवस्था की पूर्व में प्रचलित विधियों के अंतर्गत अधिकांश पद्धतियों में मांग ऋण (डिमाण्ड लोन) के माध्यम से कृषकों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती रही। कुछ बैंकों द्वारा नगद साख पद्धति के अनुसार भी ऋण स्वीकृत किए गए। इन दोनों ही पद्धतियों के मुख्य दोष यह थे कि इनके अंतर्गत ऋण स्वीकृत करने की अवधि प्राय: एक वर्ष से कम अवधि की रहनी थी। इस कारण कृषकों को प्रत्येक सीजन में मांग ऋण खाते की नवीनीकरण के लिए पुन: कागजी कार्यवाही करना पड़ती थी।

इसके अतिरिक्त परम्परागत अल्पकालीन कृषि साख निर्गमन में निम्न दोष भी व्याप्त थे:-

1. प्रत्येक सीजन में ऋण प्राप्त करने हेतु नए सिरे से आवेदन करना और कठिन कागजी कार्यवाही करना।
2. परम्परागत विधि में यह सुविधा ऋण के रूप में थी। कृषक जब चाहे तब अपने ऋण का आवश्यकतानुसार उपयोग नहीं कर पाता था।
3. बैंकों द्वारा खाद, बीज, उर्वरक इत्यादि के आपूर्तिकर्ताओं को कृषकों की ओर से सीधे भुगतान किया जाता था। इससे कृषकों को उच्च गुणवत्ता वाले इनपुट उपलब्ध नहीं हो पाते थे।

उपयुक्त दोषों को दूर करने के लिए ही रिजर्व बैंक द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना प्रारंभ की गई। इस योजना के प्रमुख लाभ निम्नानुसार है:-

1. किसान क्रेडिट कार्ड का उपयोग कृषक द्वारा सामान्य क्रेडिट की तरह किया जा सकता है। जिसमें कृषक सदैव यह महसूस करता है कि जैसे ही वह पुराना ऋण को चुकता करेगा उसे निश्चित रूप से नया ऋण प्राप्त हो जावेगा।
2. क्रेडिट कार्ड सुविधा उसे 5 वर्षो के लिए दी जाती है। अत: प्रतिवर्ष अपनाई जाने वाली ऋण स्वीकृति करने संबंधित कठिनाईयों से स्वयं ही मुक्ति प्राप्त हो गई है।
3. प्राकृतिक आपदाओं के समय कृषकों को अपने ऋण के पुर्नभुगतान एवं ऋण प्राप्त करने की अवधि में परिवर्तन कर सकता है।
4. ऋण के साथ-साथ इस योजना में कुछ और विशेषताएं है, जैसे कि कृषक की अस्थाई असमर्थता का बीमा, फसल बीमा इत्यादि।

किसान क्रेडिट कार्ड योजना की मुख्य विशेषताएं

1. सार्वजनिक क्षेत्र की 27 वाणिज्यिक बैंकों द्वारा यह योजना ज्यों की त्यों अगस्त 1998 में अपना ली गई दो शेष बैंकों द्वारा इस योजना में कुछ परिवर्तन कर अपनाया गया। दिसम्बर 98 तक किसान क्रेडिट कार्ड योजना सम्पूर्ण देश में लागू हो गई है।

2. किसान क्रेडिट कार्ड प्राप्त करने के लिए पात्र कृषक:- ऐसे किसान जिनको बैंक के साथ पिछले 2-3 वर्षो का ट्रेक रिकार्ड अच्छा था, केवल उन्हीं कृषकों को ये कार्ड जारी किए गए थे। लेकिन उसके पश्चात बैंकों द्वारा अपनी नीति में परिवर्तन किया और योजना को गति प्रदान करने के लिए सभी कृषकों को ये कार्ड इश्यु किए गए। इस उद्देश्य से विभिन्न बैंकों द्वारा प्रथम नीति अपनाई गई। सिंडिकेट बैंक द्वारा सभी प्रकार के ग्राहकों को कवर करने के लिए अपनी सभी शाखाओं को निर्देशित किया गया कि वे अपने सभी किसान ग्राहकों को अनिवार्यत: 5000 रूपये की क्रेडिट कार्ड जारी करें। इसी प्रकार इलाहाबाद बैंक, पंजाब तथा सिंध बैंक, पंजाब नेशनल बैंक ने क्रेडिट कार्ड जारी करने के न्यूनतम अनिवार्यता एक एकड़ सिंचित भूमि को रखी गई। किसान क्रेडिट कार्ड की संख्या में तेजी से वृद्धि करने के लिए कुछ बैंकों द्वारा ट्रेक्टर ऋण प्राप्त करने वाले कृषकों को अनिवार्यत: किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए गए।

3. न्यूनतम साख सीमा (Minimum Credit Limit):- भारतीय रिजर्व बैंक तथा नाबार्ड द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना का प्रारूप तैयार करते समय उन कृषकों के आवश्यकता 5000 रू. या इससे अधिक थी। यद्यपि न्यूनतम ऋण सीमा की इस सीमा को जारी कर बाद में परिवर्तित कर दिया गया। अधिकांश बैंकों द्वारा यह भी निश्चित किया गया कि वे स्वयं कृषकों को स्थिति एवं उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर उन्हें स्वीकृत किए जाने वाले ऋण की सीमा का निर्धारण करेंगे। सार्वजनिक क्षेत्र की बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड के विरूद्ध स्वीकृति राशि का अवलोकन करने से यह भी स्पष्ट हुआ कि बैंकों द्वारा न्यूनतम ऋण सीमा राशि को 5000 से घटाकर 3000 रू. कर दिया गया है और कुछ बैंकों द्वारा कृषकों में भूस्वामित्व की स्थिति, सिंचित भूमि क्षेत्रफल आदि बातों को ध्यान में रखकर कृषकों को स्वीकृत की जाने वाली ऋण सीमा का निर्धारण किया गया है।

4. साख सीमा निश्चित करने के आधार:- भारतीय रिजर्व बैंक तथा

* प्राध्यापक वाणिज्य, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

नाबार्ड द्वारा अनुशासित किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत कृषकों को साख सीमा स्वीकृत करने में मुख्यत: तीन आधार सुझाये गये थे:-

अ. कृषकों द्वारा धारित कृषि योग्य भूमि

ब. फसल चक्र से जिला स्तरीय तकनीकी समिति अथवा राज्य स्तरीय तकनीकि समिति द्वारा अनुशासित वित्तीय सीमा।

उन मामलों में जहां पर जिला स्तरीय अथवा राज्य स्तरीय तकनीकि समिति द्वारा कोई अनुशंसा नहीं की गई है वहां पर सम्बंधित बैंकों को ऋण सीमा निश्चित करने हेतु अधिकृत किया गया है। देश की अधिकांश बैंकों ने भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित प्रारूप के अनुसार ही ऋण स्वीकृत किए गए किंतु कुछ बैंकों द्वारा उपुर्यक्त निर्धारित मॉडल में आवश्यक फेरबदल किए। इलाहबाद बैंक और पंजाब नेशनल बैंक द्वारा कृषि को समस्त साधनों से प्राप्त कुल आय के 50 प्रतिशत तक कार्ड सीमा निर्धारित की गई।

5. अधिकतम राशि पर प्रतिबंध:- सार्वजनिक क्षेत्र की अधिकांश बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत साख की अधिकतम सीमा का निर्धारण नहीं किया गया किंतु इलाहाबाद बैंक तथा पंजाब नेशनल बैंक द्वारा, कृषकों द्वारा धारित कृषि भूमि के आधार पर साख सीमा का निम्नानुसार निर्धारण किया गया है:-

तालिका क्रं. 1

अधिकतम साख सीमा का निर्धारण क्रं.	कृषक द्वारा धारित भूमि का रकबा	अधिकतम साख सीमा	
		इलाहबाद बैंक	पंजाब नेशनल बैंक
1	1 से 2 एकड़	25000	30000
2	2 से 7 एकड़	40000	20000
3	7 से 9 एकड़	60000	300000
4	9 एकड़ से अधिक	100000	300000 से अधिक

6. मौसमी साख सीमा का निर्धारण:- भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड योजना का प्रारूप तैयार करते समय यह अनुशंसा भी की थी कि किसान क्रेडिट कार्ड सीमा का निर्धारण करते समय बैंक कृषक की सम्पूर्ण वर्ष की कृषि एवं गैर कृषि गत गतिविधियों को सम्मिलित किया जाता है, रिजर्व बैंक द्वारा बैंकों को यह भी परामर्श दिया गया था कि उनके द्वारा कुल साख सीमा का निर्धारण करते समय मौसमी साख आवश्यकता का निर्धारण भी किया जाना चाहिए। इस प्रकार रिजर्व बैंक द्वारा निर्धारित योजना को अनुपालना एवं क्रियान्वयन हेतु देश की सभी बैंकों को जारी किया गया।

7. चालु कार्यशील पूंजी आवश्यकता हेतु साख सीमा:- रिजर्व बैंक द्वारा कृषि से समयबद्ध गतिविधियों को संचालित करने के लिए बैंकों को यह निर्देशित किया गया कि डेयरी उद्योग, मुर्गीपालन, कृषि मशीनरी उद्योग आदि की अल्पकालीन वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भी बैंकों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए जावे।

यद्यपि विभिन्न बैंकों द्वारा इस प्रकार के ऋण हेतु भिन्न-भिन्न प्रकार की शर्त निर्धारित की गई। बैंकों द्वारा कृषकों को पूर्व में स्वीकृत फसल ऋण सीमा 10 से 30 प्रतिशत तक अलग-अलग ऋण सीमा निश्चित की गई। जबकि कुछ बैंकों द्वारा इन उद्योगों के संचालन के लिए एक निश्चित साख सीमा बनाई गई। कुछ बैंकों द्वारा यह भी तय किया गया कि किसान क्रेडिट कार्ड की मुख्य सीमा के अंतर्गत ही चालू कार्यशील पूंजी हेतु निर्धारण न किया जावे। देश की कुछ ऐसी बैंक भी है जिन्होंने न तो प्रतिशत के आधार पर और न ही स्थित आधार पर चालू कार्यशील पूंजी के लिए साख सीमा का निर्धारण किया अपितु अपनी शाखाओं को निर्देश दिए कि कृषकों को वास्तविक आवश्यकताओं के अनुसार आवश्यक सहायता ऋण के रूप में स्वीकृत की जावे। इस प्रकार इस शीर्षक के अंतर्गत बैंकों द्वारा भिन्न-भिन्न आधार अपनाये गये।

8. वित्तीय सीमा एवं प्रतिभूति मापदण्ड:- किसान क्रेडिट कार्ड जारी करने के सम्बंध में सभी बैंकों द्वारा अपनी अपनी शाखाओं को प्रतिभूति एवं मार्जिन के संबंध में प्रथम निर्देश जारी किए। बैंकों द्वारा स्पष्ट निर्देश दिए गए कि कृषि अग्रिम के सम्बंध में पूर्व में जारी मापदण्डों के अनुसार ही किसान क्रेडिट कार्ड जारी किए जावे।

9. अन्य शाखाओं से आहरण करने की सुविधा:- किसान क्रेडिट कार्ड योजना के मुख्य उद्देश्य कृषकों को आवश्यक कृषि आदानो जैसे खाद, बीज, उर्वरक दवाईयां इत्यादि क्रय करने हेतु तुरंत वित्तीय सहायता उपलब्ध कराना है इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु कार्ड जारी करने वाली बैंक द्वारा अन्य बैंकों से तुरंत आवश्यक रकम आहरित करने की सुविधा प्रदान कर की गई है। साथ ही इस सुविधा के बदले कृषकों को बैंक चार्जेस का भुगतान भी करना होता है। बैंक चार्जेस की सीमा आहरित की गई धनराशि के 2 से 3 प्रतिशत तक रखी जाती है।

10. पुनर्भुगतान निर्देश:- किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत स्वीकृति नगद साख रिवाल्विंग प्रकृति की होती है। इस योजना के अंतर्गत आहरित प्रत्येक 12 माह की समयावधि में ही लौटाना होती है, किंतु सभी बैंकों द्वारा अपनी शाखाओं को निर्देशित किया गया है कि, किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत साख सीमा का निर्धारण करते समय ही पुनर्भुगतान अवधि एवं अन्य नियम निर्धारित कर दिए जावे।

प्रत्येक बैंक द्वारा इस योजना के अंतर्गत ऋण की उप सीमा (Sub Limits) तय कर दी गई है। जब तक कृषक द्वारा उप सीमा के अंतर्गत पूर्व में प्राप्त ऋण को नहीं चुका दिया जाता तब तक उसे दूसरी उपसीमा के अंतर्गत ऋण प्रदान नहीं किया जाता है अन्य शब्दों में कृषकों को किसान क्रेडिट कार्ड योजना के अंतर्गत दो उपसीमाएं प्रथम खरीफ फसल हेतु तथा दूसरी रबी फसल हेतु निर्धारित की जाती है।

संदर्भ सूची

1. व्यावसायिक अर्थशास्त्र-ले.पी.सी. अग्रवाल, एम.डी. अग्रवाल, रमेश बुक डिपो जयपुर।
2. भारतीय अधिकोषण पद्धति-डॉ.डी.सी.गुप्ता-म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल।
3. भारतीय अर्थव्यवस्था-डॉ. अनुपम गोयल-शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, इंदौर।
4. मुद्रा एवं वित्तीय प्रणालियां- जे.पी. मिश्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
5. बैंकिंग विधि एवं व्यवहार- हरिशचंद्र शर्मा- साहित्य भवन, आगरा।
6. साख नीति निर्देशिका- इलाहबाद बैंक।
7. वार्षिक साख योजना- स्टेट बैंक ऑफ इंडिया, जिला-नीमच।
8. National Book for Agriculture & Rural Development.
9. Kisan Credit Card Scheme-A dynamic intervention for reduction in rural poverty- B.B. Barik
10. www.wikipedia.com

****

Women Entrepreneurship In India Opportunities & Challenges (Article)

Dr. R.K. Mathur *

Social and Economic development of women is necessary for overall economic development of any society as well as country. Entrepreneurship is the state of mind which every women has in her but has not been capitalized in India in way in which it should be.

Women as Entrepreneur - A women entrepreneur is a woman, who establishes and operates her own enterprise. In other words, women entrepreneurs are the self - employed individuals, who are involved in economic activities. Earlier, women were confined in the four walls of houses and their activities were mainly related to household works, without any socio-economic independence. The practices of child marriage, sati pratha , and prohibition of widow marriage were prevalent in earlier times. In those days, literacy rate was very low, especially of women. Today, women are not only generating employment for themselves, but also providing employment to others. With the spread of education and new awareness among women, they have proved that no field is inaccessible to them if adequate facilities and opportunities are made available to them. Historically, entrepreneurship was considered a male-dominated pursuit, but today women are the most memorable and inspirational entrepreneurs.

In recent times, women are capable of achieving self-economic, independence, procure and manage resources, and bring innovation by their creativity. In this way, they contribute in the economic development of the nation. India needs to promote women entrepreneurship programs not only to utilize its human resource effectively, but also to improve the economic status of women in the society. These programs should be focused toward raising the economic and social status of women, which, in turn, bring them into the mainstream of nation's development. This is possible if the role and contribution of women in social, cultural, political, and economical area is acknowledged. There are several factors or motives that influence women to involve in entrepreneurial activities. Some of these factors are as follows.

* Earning livelihood for themselves and their family.
* Striving to acquire self-economic independence.
* Establishing own creativity and identity.
* Acquiring excellence.
* Building self confidence.
* Developing risk - taking ability.
* Acquiring equal status in the society.
* Gaining freedom and mobility.

According to a survey, Women's primary entrepreneurial activity is focused on small and medium - scale enterprises. Around 60% women entrepreneurs are involved in small-scale enterprises, 15% are large - scale manufacturers, and remaining are cottage and micro entrepreneurs. Women entrepreneurs are active in a wide range of sectors from trade to services, tailoring to beauty parlors, and printing to writing.

Barriers To Women Entrepreneurs :-

* Financial Problem
* Production Problem
* Marketing Problem
* Socio - Cultural Barriers
* Lack of Confidence

Our increasing dependency on service sector has created many entrepreneurial especially for women where they can excel their sills with maintaining balance in their life. The women have achieved immense development in their state of mind. With increase in dependency on service sector, many entrepreneurial opportunities especially for women have been created where they can excel their skills with maintaining balance in their life. Accordingly, during the last tow decades, increasing numbers of Indian women have entered the field of entrepreneurship and also they are gradually changing the face of business of today.

Structural association and group of people also promote women entrepreneurship. A vital link to economic decision-making processes, the business associations has made their members' visions and the role of women entrepreneurs in the process of economic development has been recognize form nineties in various parts of the world. Today, in the world of business, women entrepreneurship has become an essential movement in many countries and has been accepted in all areas of working.

*** Prof. of Commerce, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA**

Self determination, expectation for recognition, self esteem and career goal are the key drivers for taking up entrepreneurship by women. Sometimes, women chose such career path for discovering their inner potential, caliber in order to achieve self satisfaction. It can also provide a mean to make best use of their leisure hours.

Objectives :-

* To identify the reasons for women for involving themselves in entrepreneurial activities.
* To identify the factors of hindrance for women entrepreneurship
* To determine the possible success factors for women in such entrepreneurial activities.
* To make an evaluation of people's opinion about women entrepreneurship.

Women entrepreneurship has been recognized as an important on taped source of economic growth during the last decade. With the spread of education and awareness, Indian women have shifted from extended kitchen, handicrafts, and traditional cottage industries to non traditional, higher level of activities. In the new industrial policy, the government has laid special emphasis on the need of conducting special entrepreneurial trading programmes for women to enable them to start their own ventures. Financial Banks and Institutions have also set up special cells to assist women entrepreneurs. This has helped the women a lot in taking up the entrepreneurial activity in India. Women entrepreneurs not only creates new jobs for themselves but also provide jobs to others. However the participation of women entrepreneurs is less then male entrepreneurs.

Despite these all barriers woman Entrepreneurs have proved them selves in all the walks of Industrial activities. They are successfully performing and managing their roles at work and home. They have made a great level of adjustment and tuning between two roles of a woman. They are equally talented as men and need a congenial environment to grow themselves. Entrepreneurships does not depend on man or woman it is an attitude of mind. Therefore woman entrepreneurs need to be supported by congenial environment to developed the risk taking and decision making qualities

The Key Policy Recommendation For Woman Entrepreneur -

- Promoting the development of women entrepreneur network.
- Improving the factual and analytical supporting of our understanding of the role of women entrepreneurs in the growth of our economy.
- Improving the position of women in society and promoting entrepreneurship by making easy access of woman to finance.
- Creating government offices for woman business ownership.
- Evaluating periodically the impact of SME-related policy on the success of woman owned business.

****

Agricultural Subsidies In India (Article)

Dr. R.K. Mathur *

A progressive agriculture serves as a powerful engine of economic growth of any country. It helps in initiating and sustaining the development of other sectors of the economy. In view of this, after independence the Government of India adopted a positive approach and specific programmes like new agriculture technology were introduced. Indian farmers being poor were not in a position to buy these expensive inputs. Then the Indian Government started the scheme of subsidies on the purchase of various agriculture inputs to facilitate the farmers. Subsidies are often criticized for their financial burden on the other hand there is a fear that agriculture production and income of farmers would decline if subsidies are curtailed.

After independence tremendous efforts are made to boost the economy through agriculture as one of the tools for development. The Government of India adopted a more positive approach and hence a well defined policy of integrated production programmes with defined targets and a proper distribution programme is adopted along with other measures for the overall economic development of the country. Specific programme like new agriculture technology are introduced to convert Agriculture into a successful and prosperous business, to bring more land under cultivation and raise agriculture production. In India, the adoption of new agricultural technique is costly than that of traditional method of cultivation. In traditional method, inputs are least expensive, on the other hand, inputs in modern technology like high yielding varieties of seeds, fertilizers, farm mechanization and irrigation are very costly and Indian farmers being poor are not in a position to buy these expensive inputs. Then on the recommendations of food grain price committee the Government of India started the scheme of subsidies on purchase of various agriculture inputs to facilitate the farmers. Agricultural subsidies can play an important role in early phases of agricultural development by addressing market failures and promoting new technologies. Subsidies by reducing the prices of the inputs, served in the initial stages of green revolution, as incentives to the farmers, for adopting the newly introduced seed - cum - fertilizer technology. These helped in raising the agricultural output, after some time, the amount paid on these subsidies began to rise.

In India, at present centre as well as state government are providing subsidies on fertilizers, irrigation (canal Water), electricity and other subsidies to marginal farmers and farmers' cooperative societies in the form of seeds, development of oil, seeds, pulses, cotton, rice, maize and crop insurance schemes and price support schemes etc. Out of these subsidies, the Central Government of India provides, indirect subsidies to farmers on the purchase of fertilizers from 1977, whereas state governments are providing subsidies on irrigation as well as on electricity. During the last decade subsidies provided by government of India have growth at a very rapid rate. Substantial additional growth in agricultural production needed to meet the basic necessities of large and growing population. It is also needed to generate agricultural surplus require to economic development with emphasis on employment equity. The bulk of growth is agricultural production will have to come from continuous increase in the productivity of land, yield based growth cannot sustain without removing soil fertility constraints and promote technological change. Among the various subsidies, fertilizer subsidy is the next largest food subsidy. Fertilizer subsidy is a development subsidy, which accelerate the fertilizer use and thus promote agricultural production.

The percentage share of fertilizers subsidies in total subsidies has declined from 38.41 in 1980-81 to 35.20 in 1990-91 and further declined to 24.80 in 2000-2001 and increased to 87.26 in 2008-09 and increased to 89% in 2011-12. Whereas the percentage share of electricity subsidy has increased from 29.10 in 1980-81 to 35.07 in 1990-91 and further increased to 48.62 in 2000-01 and declined to 12.74 in 2008-09. and in 2011-12 to 10.08%. On the other hand, the percentage share of irrigation subsidy is 32.49, 34.76 and 26.58 in 1980-81, 1985-86 and 2000-01 respectively and in 2011-12 to 28.2%. The central government should adopt some criteria to give away subsidies to states either on the basis of gross cropped area or productivity. It has been noted that subsidies which have direct relationship on productivity and income like seeds, fertilizers should be given to farmers.

In view of drought / deficit rainfall in certain regions it was decided by central government to implement a diesel subsidy during Kharrif to save standing crops in the field, same pattern should be followed in states where this problem occurs.

Subsidies should be given to those who actually need, like small and medium size category farmers, Subsidies, which they do not need should be withdrawn but in a phased manner. The subsidies should be replaced with constructive schemes that empower people and give them that one push they need to get out of poverty.

*** Prof. of Commerce, Govt. Commerce College, Ratlam (M.P.) INDIA**

Holistic Economics : A Concept

Dr. Gyanchand Khimesara * Dr. Shivprakash Panwar **

Introduction

Holistic economics is an upcoming stream of economic science, having strong ethical foundations. We have evolved and adopted a specific model of economic growth which is not holistic in its nature. An economic system cannot achieve the desired results without considering the social, moral and ethical fiber of the human beings. Modern economic theories look for a solution to the economic problems within the existing framework of economics instead of looking at the meta - economic factors or exploring its basic philosophical foundations. As a result, we have made tremendous progress in the name of economic indicators albeit man gets placed against man, society and nature. **E.F. Schumacher** rightly states, "economic growth, which viewed from the point of view of economics, physics, chemistry and technology, has no discernible limit, must necessarily run into decisive bottlenecks when viewed from the point of view of the environmental sciences. An attitude of life which seeks fulfillment in the single - minded pursuit of wealth in short, materialism does not fit into this world, because it contains within itself no limiting principle, while the environment in which it is placed is strictly limited"[1]. The environmental pollution not only creates the problem of externalities for the economist but also poses the question of the very survival of human race. There are inherent contradictions in the pursuit of materialism. It leads to depletion of natural resources and thereby causes ecological imbalances, poverty, hunger, inequalities of income, unemployment, inflation, monetary and economic instability, social and political tension and alienation and dehumanization. As a matter of fact, these all are interacting factors. We have collective responsibility and there is a need to introspect in respect of development methodology and objectives.

Korten (1990) defines development as transformation towards justice, inclusiveness and sustainability. He redefines development as: Development is a process by which the members of a society increase their personal and institutional capacities to mobilize and manage resources to produce sustainable and justly distributed improvements in their quality of life consistent with their own aspirations. The absence of human face in the development process provoked **Gandhi** to state, 'that economics is untrue which ignores or disregards moral values'[2].

In the 1980s, **Amartya Sen** began to elaborate his capability theory of human welfare. This culminated in a book (1999) '**Development as Freedom'.** The capability approach has grown into a major focus in development ethics, including thorough research programs in the United Nations World Institute for Development Economic, Research and the UNDP's annual Human Development Reports. More importantly, the 1990s saw a growing explicit ethical thrust in forums for development policy and practice.

The model of holistic economics focuses on conflict resolution and ecological balances. The conflict in modern society emerges due to mal development process. The unequal distribution of income and wealth generates conflicting situations in the society. Inequality and poverty in a society attack the very fabric of society.

We have become an acquisitive society. Materialism has crossed its limit. The high mass consumption society has extended harm to our ecological system. This resulted into catastrophes, natural and man-made disasters. For the last 40 years, many conventions have been made to reduce green house gases and carbon emissions but yet to reach unanimous global decisions. Thus, there is an imperative need to adopt and experiment new methods of industrialism, change in life style, the thinking process to create a universe based on the foundations of fellowship, compassion and morality.

The late 1980s saw the phase of neo - liberalism based on the premises of high rate of economic growth, structural reform, deregulation, liberalization and privatization of an economy. Growth alone is not enough, if it does not produce a flow of benefits that is sufficiently widespread and so, there is need for growth process that is much more inclusive, that raises income of the poor to bring about a much faster reduction in poverty, a growth process which also ensures access to essential services such as health and education for all sections of the society. Inclusiveness is an integral part of the growth strategy and the structure of growth sought to be achieved is likely to be one which is most likely to achieve inclusiveness. The inclusive growth can only be achieved by combining rapid growth with equality promoting growth and it is widely recognized that gender discrimination

*** Principal ** Associated with the P.G. department of economics at Govt. PG College, Mandsaur (M.P.) INDIA**

is an obstacle to inclusive growth.

After pursuing a consistent policy of vigorous growth ever since the economic reforms of 1990s in our country, it was felt that there are vast inequalities and disparities at interpersonal, inter - regional and gender level. **The World Bank (2006)** has pointed out that inclusive growth is "the only sermons for converting the deeply ingrained regional imbalances, inequities and for consolidation economic gains as inclusive growth is the growth with emphasis not only on the distribution of income and economic gains but also on the security, vulnerability, empowerment and sense of full participation that people may enjoy in social life".

The 11th plan states that planning for growth has to be designed in favor of vulnerable segment of population. Under the title " Towards faster and more inclusive growth" suggests a strategy that aims at creating physical assets, human capital and capabilities and opportunities for productive employment, especially for the lower - middle class and the poor, will help in achieving sustainable and inclusive growth.

J.K. Galbraith who talked about private affluence and public poverty as the central crisis of the developed capitalist system.

"Although economists have debated, though without definite conclusions, the problem of linkages between economic theory, economic behavior and policy prescription, they have refused to bring in to the questions of values explicitly. If economic theory stated that government expenditure could lead to reduction of unemployment, it also became a policy prescription. But when the same theory are proved that public investment could generate inflation and inefficiency the policy prescription broken down. The moral question left out were: that employment is a fundamental right as well as duty, that the state is an institution of violence, and that corporate system is an institution of exploitation. Once economics begins with these questions of values, which are not falsified by scientific hypotheses, the result will be a very different kind of economic theory, different from the mercantilist, or liberal or Marxist or any other theory known so far."[3]

The strategy for inclusive growth is based on the factors which enables the people to become an active partner in the generation as well as sharing of the national income and these factors may be categorized as opportunities, capability, access and security.

Over the last 250 years, economic systems have been evolved on the basis of economic philosophies. Development thinkers have put forward theories and models on the basis of which short and long - term objectives and targets have been determined by economies of the world. Consumption and production patterns have changed perceptibly over the years as an economy passes through developmental stages.

As a result of demographic transition in countries, demand and supply schedules of communities have changed tremendously. A substantial increase in population, per capita income, agricultural and industrial outputs, expansion and diversification of services rendered by agencies,exploitative tendency of some developed countries- all factors have been responsible in depleting natural resources. The positive approach to economic thinking have replaced innovative thinking based on human values, ethics, morality , compassion and fellowship. The concept of non - possession of Jain philosophy is no more in practice these days. The culture of mass production so as to reap maximum benefits, has promoted monopoly tendencies in economies over the world. The present modes of consumption and production have generated negative externalities in the society. The materialistic approach to life has extended insurmountable harm to ecology and environment as a whole. The area under forest, the stock of fossil fuel, availability of drinking water - all have decreased to a level threatening to the very survival of human existence on this planet. The economic models were expected to alleviate poverty, reduce inequality, increase employment level, etc, have failed in achieving objectives and targets. The growing menace of poverty, inequality and other malices create structural violence in the society. To create environmental consciousness, pollution awareness, preservation of natural resources, to imbibe human values, ethics, morality, compassion and fellowship, to inculcate the consciousness of limiting desires and limited consumption, an alternative model of economic development/thinking need to be evolved.

The alternative model of economic thinking and development can be termed as inclusive or holistic or relative economics, should emphasize the following components which could evolve a system free from exploitation, violence and disparity.

i. Freedom

Sen.'s freedom - centered view captures the constructive role of free human agency as an engine of change. It differs radically from seeing problems as passive beneficiaries of cunning development programs. The need to overcome that misleading image of development is as strong today as it has ever been. A freedom centered view of development has several advantages over more conventional views. First, it provides a deeper basis of evaluation of development, allowing us to concentrate on the objectives of individual freedom rather than merely on proximate means such as the growth of GNP or industrialization or technological progress. The

enhancement of lives and liberties has intrinsic relevance that distinguishes it from , say, the enlargement of commodity production or of other material of convenience.

Second, since freedoms of different kinds contribute to enhancing freedom of other kinds, a freedom - centered view also offers instrumental insights. By focusing on the interconnect ions between freedoms of different types, it takes us well beyond the narrow perspective of seeing each freedoms in isolation. We live in a world of many institutions (involving the market, the government, the judiciary, the political parties, the media, and so on), and we have to see how they can supplement and strengthen each other, rather than getting in each others way. Third, this broad perspective also allows us to distinguish between (i) repressive interventions of the state in stifling liberty, initiative and enterprise, and in crippling the working of individual agency and cooperative action, and (ii) the supportive role of the state in enhancing the effective freedoms of individuals (for example , in providing public education, health care, social safety nets, good macroeconomic policies, and in safeguarding industrial competition and epidemiological and ecological sustainability).

Finally, the freedom - centered view captures the constructive role of free human agency as an engine of change. It differs radically from seeing people as passive beneficiaries of development4.

ii. Equality

As **Rousseau** observed, the very attempt to grow rich is to find profit in the misfortune of others. In a world full of inequalities of possession in income, property, talents and capabilities, the pursuit of self - interest resulting in completion among the unequals leads only to disorder, disharmony and exploitation. There is an imperative need for effective implementation of developmental policies vis -a - vis the reform of institutions, are the key to ensuring that economic growth become more equitable.

iii. Non - violence

In the literature of world religions, we find that non - violence as a way of life has a very ancient history. The hindu tradition defines it as ahimsa, the refusal to do harm to life. Ahimsa is the ideal for Jainism. Gautama Buddha developed this intense sense of reverence for all life into a feeling of compassion for human life. The first contribution of non - violence is justice all around in every department of life. Over the centuries, man has been steadily progressing towards ahimsa. Non violence necessarily includes truth and fearlessness. **Gandhi** used non-violence as a political weapon in a world sick of violence. The partial success of his early passive resistance, civil disobedience and non-cooperation campaigns- all these were something completely new in politics, something unheard of. Thus, non violence was both a tactic and a principle,

Now it becomes pertinent to apply nonviolence in our system. **Lionel Robbins** states that economics has no relationship with value judgment. Ruskin and Gandhi say that economics does not guide but misleads. According to **Gandhi**, "an economics that inculcates mammon worship, and enables the strong to amass wealth at the expense of the weak, is a false and dismal science. It spells death"[5].

An economic system needs to be evolved in a manner which follows the principles of trusteeship, (non violent ownership); Non- possession (Non- violent consumption); Bread labor (Non- violent work) ; Cooperation (Non- violent allocation); Equality (Non- violent distribution); and use Appropriate technology in production process (Non- violent production).

The holistic approach to economic development, depends on sarvodaya philosophy. "The Sarvodaya Philosophy is but merely a particular method of production, distribution and consumption of wealth. It is a whole view of life, correlated with philosophy, religion, ethics, education and amity both at home and abroad"[6].

Thus, sarvodaya refers to all - sided progress and development of the whole humanity and it advocates social ownership of the means of production, equitable distribution of income, elimination of discrimination of all kinds, universal brotherhood, peace and progress.

iv.Respect for Nature

The nature provides us resources for our livelihood. It is used both as a source and as a sink for enhancing human consumption (Ayres and Kneese, 1969). As the process of economic development gained momentum, over consumption of natural resources started taking place all over the world. As a consequence of diversified consumption basket, depletion rate of natural resources increased manifold. **Meadows et al** in 'Limits to Growth' (1972) cautioned us to limit the use of fossil fuels so as to attain sustainability. The process of industrialism extended harm to our ozone layer. Many studies have been conducted in the 20th century to put a question on the pattern of industrialization taking place specially in high income countries. Since 1972, systematic approach to protect environment and establish ecological balance, have come up. A number of summits and conferences have been organized to discuss conservation of natural resource and their management and environmental crisis. **Meadows et al**. 1972 rightly said, " resource crisis and environmental crisis are now real life threats for the

sustainability of the development process, is indicative of conflicting paradigms of ecological principles and conventional economic principles of development".

Human impact on biodiversity is a major point of conflict between economy and ecosystem. The ecosystem has given rise to new limiting factors like pollution and wastes which are inorganic and non - biodegradable and are flowing into the ecosystem. Sewage and industrial wastes pouring into a stream or chronic overdose of insecticides in agriculture or forest affects the species composition of the ecosystem. The new limiting factors might be destroying the conditions of existence of many a species, and the diversity will decrease accompanied with population boom of the surviving species in the ecosystem. The biodiversity index, is in fact a measure of level of pollution due to the impact of economic activities on the ecosystem.

Large areas of the earth's surface are subject to extreme weather such as tropical cyclones, hurricanes, or typhoons that dominate life in those areas. "From 1980 - 2000, these events caused an average of 11,800 deaths per year."7. Many places are subject to earth quacks, landslides, tsunamis, volcanic eruptions, tornadoes, floods, droughts, wildfires and other calamities and disasters.

Many localized areas are subject to human - made pollution of the air and water, acid rain and toxic substances, less of vegetation (overgrazing , deforestation, desertification), loss of wildlife, species extinction, soil degradation, soil depletion, erosion and introduction of invasive species.

Robert M. Solow reminds us that most environmental protection can be regarded as an act of investment. If we were to think that our obligation to the future is in principle discharged by seeing that the return to non - renewable resources is funneled into capital formation, any kind of capital formation - plant and equipment, research and development, physical oceanography, economic or environmental investments - we could have some feeling that we were about on the right track. **According to the United Nations**, a scientific consensus exists linking human activities to global warming due to industrial carbon dioxide emissions. This is predicted to produce changes such as the melting of glaciers and ice sheets, more extreme temperature ranges, significant changes in weather and a global rise in average sea levels.

It is therefore the interaction of the ecological and the economic forces which would characterize the adoption of policy measures in a given content which would ensure the sustainability of development.

v. Shared Responsibility

We are shaping into a form of global village. Wide - spread poverty, hunger, unemployment of human resources, disasters, communal riots, violence, corruption, business armament- all stand in the way of building an integrated and harmonious model of development of human race. Harmonious growth imbibed with values of equity and justice can be a reality if ethical thrust is put in forums for development policy and practice; in the debates on aid, trade and development cooperation, for example on ethical trading, child labour, debt relief, intellectual property rights, environmental sustainability and humanitarian relief, and in growing attempts to establish and apply norms and codes of practice in relief and development work.

Conclusion

In the last two centuries, we have evolved and applied economic models focused on to alleviate poverty, increase employability, protect natural resources, increase food grain production, enhance and diversify industrial capability and expansion of social and community services. We have been successful in achieving pre - determined social and economic targets. Despite all efforts, we do experience widespread poverty, unemployment, disparity and soon. This suggests for a model of economic development which includes the excluded section of society in the growth process and be holistic by nature. Ensuring freedom, equality in allocating resources, applying nonviolent modes of production, consumption, allocation, environment protection and ecological biodiversity-all are an shared responsibility and thus justify our efforts to evolve an alternative model having holistic attributes which could only establish a just international economic order.

References -

1. E.F. Schumacher, Small is Beautiful. P. 25
2. Young India, Dec. 26, 1924
3. lutz & Diwan; introduction, Gandhian Economics
4. Sen, A.,Development as Freedom : An approach, OUP. New York, 1999.
5. Gandhi, collected works 1968, VI 321-22
6. K.G. Mashruwala: Towards Sarvodaya Order, Navjivan Publishing House, Ahmedabad 1971. p. 65
7. Our planet, Wikipedia

****

Role Of Micro Finance In Women Empowerment
(An Empirical study in Ujjain district of rural SHG's)

Govind patidar *

Introduction:

It is widely believed that micro finance is a powerful tool to alleviate poverty and empowerment of rural women and it is effective in bringing social and economic changes in the rural areas with improved managerial abilities of women. Self Help Groups (SHG) and micro finance are found to be successful in promoting empowerment of women leading to development. It has been accepted that microfinance plays a vital role in reducing poverty since it paves way for employment and empowerment which leads to economic development. Poverty can be eradicated only by employment opportunities and the employment seeker and worker should become a job provider and it is possible through micro finance coupled with micro enterprises. Empowerment of women through Micro Finance benefits individual women, her family and the community as a whole through collective action for development. Group formation, provision of collateral free credit, participatory efforts for income generating self-employment, knowledge and awareness, skill development have improved the socio economic conditions of rural poor.

Microfinance is the provision of financial services to low-income clients, including consumers and the self-employed, who traditionally lack access to banking and related services. Microcredit, or microfinance, is banking the unbankables, bringing credit, savings and other essential financial services within the reach of millions of people who are too poor to be served by regular banks, in most cases because they are unable to offer sufficient collateral. In general, banks are for people with money, not for people without." (Gert van Maanen, Microcredit: Sound Business or Development Instrument, Oikocredit, 2004) is based on the premise that the poor have skills which remain unutilized or underutilized. Microcredit fits best to those with entrepreneurial capability and possibility. Ultimately, the goal of microfinance is to give low income people an opportunity to become self-sufficient by providing a means of saving money, borrowing money and insurance. The main aim of microfinance is to empower women. Women make up a large proportion of microfinance beneficiaries. Traditionally, women (especially those in underdeveloped countries) have been unable to readily participate in economic activity. Microfinance provides women with the financial backing they need to start business ventures and actively participate in the economy. It gives them confidence, improves their status and makes them more active in decision-making, thus encouraging gender equality. According to CGAP, long-standing MFIs even report a decline in violence towards women since the inception of microfinance.

NABARD (2005) explains that the Self Help Group is a group with "an average size of about 15 people from a homogenous class. They come together for addressing their common problems. They are encouraged to make voluntary thrift on a regular basis. They use this pooled resource to make small interest bearing loans to their members. The process helps them imbibe the essentials of financial intermediation including prioritization of needs, setting terms and conditions and accounts keeping. This gradually builds financial discipline in all of them. They also learn to handle resources of a size that is much beyond the individual capacities of any of them. The SHG

members begin to appreciate that resources are limited and have a cost. Once the groups show this mature financial behavior, banks are encouraged to make loans to the SHG in certain multiples of the accumulated savings of the SHG. The bank loans are given without any collateral and at market interest rates. The groups continue to decide the terms of loans to their own members. Since the groups' own accumulated savings are part and parcel of the aggregate loans made by the groups to their members, peer pressure ensures timely repayments." In this paper the role played by Microfinance in women's empowerment are considered into three dimensions namely psychological, social and economical.

Concept of microfinance:

Microfinance has evolved over the past quarter century across India into various operating forms and to a varying degree of success. One such form of microfinance has been the development of the self-help movement (Reddy & Manak, 2005). Micro finance is a programme for the poor and by the poor to mobilize the savings and use them to meet their financial needs (Rao, 2010). The Task Force on Supportive Policy and Regulatory Framework for Micro Finance has defined Micro Finance as "the provision of thrift, credit and other financial services to the poor in rural, semi-urban and urban areas to help raise their income levels and improve their living standards" (NABARD,1999). Micro Finance is a participative model that can address the needs of the poor especially the women. The most common microfinance

* Research Scholar (ICSSR Doctoral Fellow) School of studies in Economics Vikram University Ujjain (M.P.) INDIA

product is a micro credit or Loan. These tiny loans are enough for hard working micro-entrepreneurs particularly the rural women to start or expand their small business such as weaving, handloom & handicrafts, embroidery & tailoring etc. and sell the products in the markets for generating their income.

Review of Literature- Impacts of micro finance on women were addressed by researchers and some important studies are presented here

Microfinance and Women Empowerment: A majority of microfinance programs target women with the explicit goal of empowering them. There are varying underlying motivations for pursuing women empowerment. Malhotra et.Al, (2002) constructed a list of the most commonly used dimensions of women's empowerment, drawing from the frameworks developed by various authors in different fields of social sciences. Allowing for overlap, these frameworks suggest that women's empowerment needs to occur along multiple dimensions including: economic, socio-cultural, familial/ interpersonal, legal, political, and psychological, Lalitha and Nagarajan(2004) Self Help Groups has laid the seeds for economic and social empowerment of women. Participation in group activities leads to changed self-image, enhanced access to information and skills broadened their knowledge about resource, Silvia (2004) Positive changes in income and women actively participated in community activities. Suguna (2006) Improved social empowerment and capacity building of rural women. Radhakrishna M.(2012) Microfinance revolution in India as a powerful tool for poverty alleviation and women empowerment. Ranjula Bali Swain (2007) Can Microfinance Empower Women? Self-Help Groups in India" concluded many strides have been made in the right direction and women are in the process of empowering themselves and NGOs that provide support in financial services and specialized training, have a greater ability to make a positive impact on women empowerment.

Objectives of the Study

1. To study the performance of SHGs in Ujjain district of rural area.
2. To study the problems women members face in SHG.
3. To analyze the freedom women members get in SHG.
4. To analyze the empowerment of the women psychologically, economically and sociologically.
5. To offer suggestions for the betterment of women's empowerment in SHG.
6. To study the role of SHGs in the rural development

Hypothesis: Ho: There is no difference in mean income of respondents before and after joining SHG

Methodology:

The study is undertaken in rural areas of Ujjain district. Both primary and secondary data's are used. Primary data is enumerated from a field survey in the study area. Secondary data is collected from Nabard reports, Jila panchayat and other published, unpublished documents and web site. Areas covered under the study 5 blocks in Ujjain are:

1. Ghatia
2. Badnagar
3. Khachrod
4. Mahidpur
5. Tarana

Sampling Method: purposive sampling and systematic random sampling is followed. Sample Size 150 samples have been collected for the research from 50 SHGs on five blocks in 50 villages of Ujjain district.

Method of Data Collection: A structured interview schedule was prepared by the researcher and used for collecting data from the rural SHG women members who are engaged in Micro enterprises through microfinance.

Data Analysis and Interpretation:

Table 1. Percentage of Respondents Empowered Socially

Expressing opinions freely			
SL.no	Option	Frequency	Percent
1	Yes	105	70
2	No	45	30
	Total	150	100

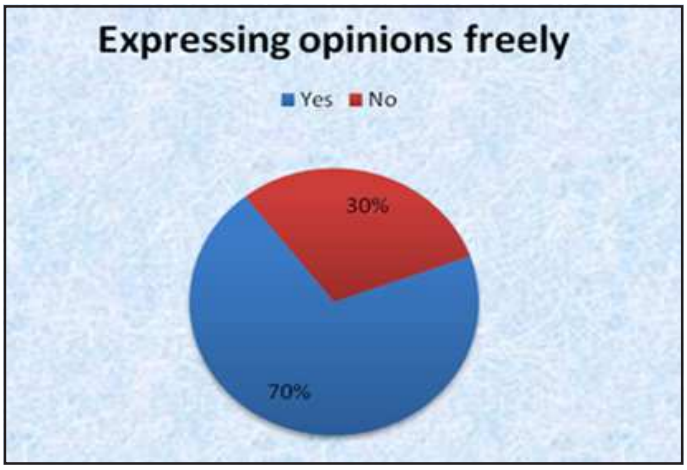

105 out of 181 respondents agreed they can able to express their opinions freely both in group and in family.

Table no.2

Moving independently			
SL.no	Option	Frequency	Percent
1	Yes	117	78
2	No	33	22
	Total	150	100

117 respondents are moving independently without the help of family members to banks, government offices and other places which indicate the social mobility.

Table no.3

Role of decision making in family			
SL.no	Option	Frequency	Percent
1	Yes	109	72.66
2	No	41	27.34
	Total	150	100

Most of the respondents (72.66 %) agreed they play a vital role in decision making in their houses.

Table no.4

Purpose of getting microfinance by respondents			
SL.no	Option	Frequency	Percent
1	Household purpose	05	3.33
2	To start business	95	63.33
3	To promote existing business	25	16.67
4	Education purpose	10	6.66
5	Low rate of interest	15	10
	Total	150	100

Respondents got microfinance to start new income generating business followed by to promote their existing business.

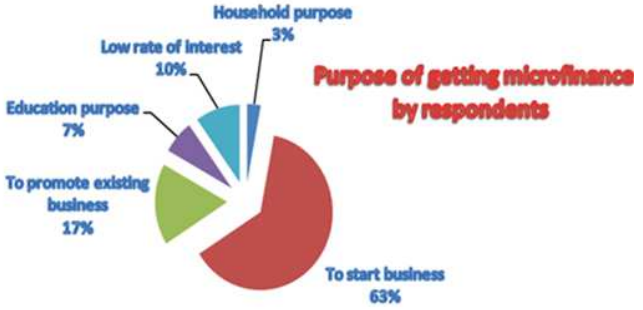

Table no.5

Reduce in poverty level

SL.no	Option	Frequency	Percent
1	to greater extent	95	63.33
2	to some extent	31	20.66
3	to low extent	24	16
	Total	150	100

64% of the women stated that microfinance has reduced their poverty level to a greater extent.

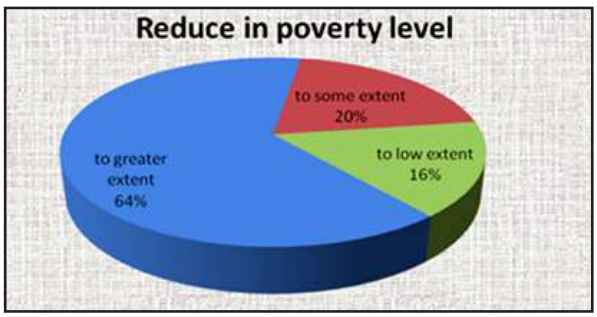

Table 6: Correlation between reduce in poverty level and improvement in standard of living

Variables		Reduce in poverty level	Improvement in standard of living
Reduce in poverty level	Pearson Correlation	1	.373**
	Sig. (2-tailed)		.000
	N	150	150
Improvement in standard of living	Pearson Correlation	.373**	1
	Sig. (2-tailed)		.000
	N	150	150

The correlation between reduce in poverty level and improvement in standard of living of respondents are positively correlated. But reduction in poverty level doesn't leads to higher standard of living.

Table 7: Cross tabulation of psychological variables with different age groups

variable		Age of respondents								
		20-30		31-40		41-50		51-60		Total
		yes	no	yes	no	yes	no	yes	no	
	Self confidence	80	0	40	0	18	0	12	0	150
	Improvement in courage	85	0	35	0	15	0	15	0	150
	Improvement in skill	91	0	31	0	12	2	10	4	150
	Improvement in literacy level	70	12	20	18	9	11	2	8	150
	Awareness in children education	78	7	33	7	11	4	7	3	150
	Awareness about the environment	82	2	36	3	17	0	8	2	150
	Happiness and peace in family	81	3	37	1	16	1	9	2	150

It is evidenced from the table microfinance brought psychological well-being among rural women. Micro finance has made a very good impact on the age group of 20 - 30. Age plays a vital role in psychological well-being of rural women.

Testing of Hypothesis

Ho: There is no difference in mean income of respondents before and after joining SHG

H_1: difference between mean income of respondents before and after joining SHG

PAIRED t - TEST

Table 8: Paired t test table

Income	Mean	N	Std. Deviation	Std. Error mean
Income of respondents before joining SHG's	1114.20	150	730.507	54.601
Income of respondents after joining SHG's	1612.54	150	898.626	67.494

Mean	SD	Std. Error Mean	t	df	Sig. value
-496.648	690.579	51.616	-9.622	150	0

Since the probability value is 0.000 ($p<0.01$), we reject the null hypothesis and conclude that mean income after joining SHG is significantly higher than the mean Income before joining SHG. Thus the microfinance is significantly increasing the salary of the respondents.

Findings:

- It is noticed that all the respondents agreed that micro finance brought courage and self-confidence and improved their skill and self-worthiness.
- Majority of the respondents expressed that their awareness about environment improved after taking part in micro finance programs actively. Maximum number of respondents accepted that microfinance has brought economic development directly and indirectly happiness and peace in the family.
- It is found that microfinance improved the literacy level of rural women improved awareness on children education to high level of respondents.
- Women are economically and socially empowered after joining SHG and getting micro finance as 92 percent reported that poverty level reduced by participating micro finance program.
- As far as the self-help group is concerned they don't face any type of problems or compulsions from leaders or from other members in the group. Women are given full freedom to express their opinions.
- There is appreciable development in coordination between groups and within group leaders and decision making among respondents. There is a significance improvement in the income of the respondents after joining SHG.
- There is a definite improvement in psychological well-being and social empowerment among rural women as a result of participating in micro finance through SHG program.

Suggestions: Based on the present study, the following suggestions are made:

- Proper emphasis should be given to group lending and SHGs formulation for alleviate poverty.
- Periodical training programme at regular intervals to group members may be organized By the NGOs and other Government officials to aware about bank loan, proper accounts keeping, self-management, decision making etc.
- Attendance at meeting and workshops should be made mandatory so that the members Can enhance their group cohesiveness.

Conclusion: The study concludes that microfinance brought psychological and social empowerment than economic empowerment. The rural area Self Help Groups are performing well. Impact of micro finance is appreciable in bringing confidence, courage, skill development and empowerment. The SHG members feel free to move with their groups and leaders. It leads them to participate on various social welfare activities with good cooperation. But there is no positive impact in sustainable rural development especially, creation of employment opportunities and creation of assets in rural areas. There is appreciable development in planning, coordination, decision making and financial skills among the leader respondents. But the effect of micro finance on communication, organizing, competency and technical, marketing skills and entrepreneurial skills is moderate only. There is a definite improvement of managerial skills, psychological well-being and social empowerment among rural women as a result of participating in micro Finance through SHG programme.

Further Research Directions: The study paves way for further research on capacity building of rural women, impact of micro finance on the development of micro enterprises, effectiveness of training programmes on the development of managerial skills and the emergence of women entrepreneurs in rural areas.

References

- Kothari, C.R.(2007), Research Methodology Methods & Techniques, Second Edition, New age International publishers, New Delhi.
- Malhotra, A. Schuler S.R. and Boender, Carol. (2002),Measuring Women's Empowerment as a Variable in International Development, Background Paper for World Bank Workshop on Poverty and Gender, New Perspectives.
- Lalitha,B. & Nagarajan, B.S. (2004), Empowerment of Rural Women through Self Help Groups: A study in Tamil Nadu.In R.Venkata Ravi, N.Narayana Reddy and M.Venkataramana (Eds.) Empowerment of People, Kaniska Publishers &Distributors, New Delhi, pp 73-85
- Suguna,B.(2006),Empowerment of rural women through Self Hep Groups, New Delhi, Discovery Publishing House. pp. 37
- Radhakrishna, M. (2012), Performance of Microfinance Institutions in India, IRACST-International journal of computer science and information technology & security, ISSN: 2249-9555, Vol. 2, No. 4, (Aug. 2012), pp.809-814
- Rajendran, K. and Raya, R.P. (2010), Impact of Micro Finance - An empirical Study on the Attitude of SHG Leaders in Vellore District (Tamil Nadu, India), Global Journal of Finance and Management, ISSN: 0975-6477 Volume 2, Number 1 ,pp. 59-68, http://www.ripublication.com/gjfm/gjfmv2n1_5.pdf.
- Tapan Neeta.(2010), Micro credit, Self-help groups(SHGs) and Women empowerment, New Century publications, New Delhi, ISBN: 978-81-7708-249-4

An Empirical Analysis of the Impact of Foreign Direct Investment on Economic Activity of India

Prof. Rajesh Jain *

Abstract - Foreign direct investment (FDI) is always contributing in the positive growth toward the economy of one country due to the investment by another country or country's personnel's. The effectiveness and efficiency of Global economy depends upon the investor's perception. The total stock of FDI increased from 14.28% of world GDP in 2002 to 36.71% in 2013. The total FDI equity inflow into India in 2012-13 stood at 176,288 crore, a growth of 28.49% in rupee terms over the previous period. India has also been suggested to participate in FDI initiative globally to promote and facilitate the policies related to FDI for capital gain and more attraction toward Indian economy by which increase the efficiency and effectiveness in term of FDI.

Introduction

FDI or Foreign Direct Investment, is Fund flow between the countries in the form of Inflow or outflow by which one can able to gain some benefit from their investment, whereas another can exploit the opportunity to enhance the productivity and find out better position through performance. During the past 10 years, the importance of FDI in the world economy has increased rapidly. The total stock of FDI increased from 14.28% of world GDP in 2002 to 36.71% in 2013. The share of non-OECD countries in the global stock of inward FDI has risen from 32.16% in 2002 to 45.24% in 2013. Since 1980, foreign direct investment in the United States has grown at a much faster rate than was typical for the preceding 50 years. Foreign investors have become much more visible throughout this country. However, foreign investment in the United States plays virtually the same role that it has since the founding of the Republic. Higher inflows of FDI to a country, largely generates employment in the nation. FDI in manufacturing sector creates more employment opportunities than to any other sectors.

Literature Review

Feenstra and Markusen, 1994, FDI is an important vehicle for the transfer of technology and knowledge and it demonstrates that it can have a long run effect on growth by generating increasing return in production via positive externalities and productive spillovers. Thus, FDI can lead to a higher growth by incorporating new inputs and techniques. Kumar and Pardhan, 2001, Foreign Direct Investment (FDI) has emerged as the most important source of external financial resource for developing countries and has become a significant part of economy in the developing.

WDI indicators 2008, The amount of foreign direct investment increased significantly for developing economies during 1985 to 2000. The share of developing countries in world FDI inflows and outflows has risen from 17.4% in 1985-90 to 26.1% during 1995-2000. For India the amount of FDI inflows increased from $ 0.24 billion in 1990 to $ 55 billion in 2007.

Methodology

The study is descriptive in nature and therefore the information presented is based on secondary data. Secondary information has been collected from various documents such as books, newsletters, reports, magazines, journals, daily newspaper, WWW related to foreign direct Investment (FDI).

Objective

To study 12 years (2002-2013) FDI initiative in Indian context based on secondary data.

Discussion

Global Scenario of FDI

Global flows of foreign direct investment (FDI) have halved in the last two years, Emerging markets have edged ahead of developed markets as the major destination. As higher-growth economies, emerging markets have proven better than developed markets at attracting FDI during the global downturn.

Structural shift in global FDI

The decline in global FDI flows in 2009 was accompanied by a distinct shift in the pattern of FDI. Economic theory tells us that capital should flow from capital-abundant rich countries to capital-scarce poor countries. In practice, that has not been the case as developed countries have consistently attracted the bulk of global FDI flows. High risk in many emerging markets, the benefits of advanced institutions and infrastructure and a superior overall business environment in developed countries have tended to outweigh the attractions

* Assistant Professor, College of Commerce, IPS Academy, Indore (M.P.) INDIA

of greater market dynamism and lower costs in emerging markets.

Indian Scenario of FDI

India's economy is mostly dependent on its large internal market with external trade accounting for just 24% of the country's GDP. Until the liberalization of 1991, India was largely and intentionally isolated from the world markets, to protect its economy and to achieve self-reliance. Foreign trade was subject to import tariffs, export taxes and quantitative restrictions, while foreign direct investment (FDI) was restricted by upper-limit equity participation, restrictions on technology transfer, export obligations and government approvals; these approvals were needed for nearly 62.74% of new FDI in the industrial sector.

Since liberalization, the value of India's international trade has increased sharply. The exports during Mar. 2013 were $ 16.11 billion up by 19.25% and import were $ 21.35 billion with an increase of 23.81% over the previous year. In 2012-13, major export commodities included engineering goods, petroleum products, chemicals and pharmaceuticals, gems and jewellery, textiles and garments, agricultural products, iron ore and other minerals. Major import commodities included crude oil and related products, machinery, electronic goods, gold and silver.

Findings

As the fourth-largest economy in the world in PPP terms, India is preferred destination for foreign direct investments (FDI). Till 2012-13, services sector attracted 57.44 per cent of India's total FDI as cumulative basis. Despite a surge in foreign investments, rigid FDI policies resulted in a significant hindrance. However, due to some positive economic reforms aimed at deregulating the economy and stimulating foreign investment, India has positioned itself as one of the front-runners of the rapidly growing Asia Pacific Region. During 2012-13, the country attracted $208 billion as FDI. The inordinately high investment from Mauritius is due to routing of international funds through the country given significant tax advantages; double taxation is avoided due to a tax treaty between India and Mauritius, and Mauritius is a capital gains tax haven, effectively creating a zero-taxation FDI channel.

Conclusions

The positive effects of inward FDI for workers in host economies suggest that FDI-friendly policies could be a useful component of an integrated policy framework for development. When designing policies to promote FDI, policy-makers should take into account that these may not only affect the volume of inward FDI, but also its composition and, as a result, its corresponding benefits. The OECD Policy Framework for Investment provides a useful starting point. For a start, removing specific regulatory obstacles to inward FDI could be important. There are two types of implications i.e. positive and negative as per following:

Positive Implications

1. FDI provides capital which is usually missing in the target country-Long term capital is suitable for economic development.
2. Foreign investors are able to finance their investments projects better and often cheaper
3. Foreign corporations create new workplaces

Negative Implications

1. Foreign corporations may buy a local company in order to shut it down (and gain monopoly for example)
2. "Crowding out" effect- We can see this effect if the foreign corporations target the domestic market and domestic corporations are not able to compete with these corporations
3. Foreign corporations have a tendency to use their usual suppliers which can lead to increased imports (no problem if the production is export driven)

A number of changes were approved on the FDI policy to remove the caps in most sectors. The total FDI equity inflow into India in 2012-13 stood at 176,288 crore, a growth of 28.49% in rupee terms over the previous period. India has also been suggested to participate in FDI initiative globally to promote and facilitate the policies related to FDI for capital gain and more attraction toward Indian economy, by which increase the efficiency and effectiveness in term of FDI.

References and Bibliography

1. Annual Survey of Industries, CD Rom (2010): Economic and Political Weekly Research Foundation, Mumbai.
2. Chakraborty, C. and P. Basu (2002) Foreign Direct Investment and growth in India: A Cointegration Approach. Applied Economics, 34, No. 9, pp. 1061-1073
3. Falki, N. (2007) Impact of foreign direct investment on Economic growth in Pakistan www.wbiconpro.com/14-Nuzhat.pdf
4. Pailwar, V. (2001) Foreign Direct Investment Flows to India & Export Competitiveness. Productivity, 42, No. 1, pp. 115-122

****

Importance of Foreign Trade

S. K. Maheshwari * Ankita Pipada **

Trade is an exchange or dealing in goods and services. If the trading is taking place internally within the political boundaries of a country, it is a domestic trade. If it takes place externally with other countries beyond the boundaries of a country, then, it is a foreign trade. Foreign trade of a country includes the imports and exports or merchandise and services.

Foreign trade has got an important place in the economic development of a country. What is the importance of foreign trade for economic development of country is stated below:

Firstly, foreign trade helps to produce those commodities which have a comparative cheaper cost than others. It results in less cost of production in producting a commodity. If all the countries adopt this procedure to produce these goods in. which they have less comparative cost, it will lead to availability of goods at a lower price.

Secondly, foreign trade increases the scope of market because of domestic demand and foreign demand for the product. So there is mass production. If the production of goods increases, average cost declines and price of goods declines.

Thirdly, foreign trade helps the people to get different varieties of goods both in quantities terms and qualitative terms.

Fourthly, foreign trade helps a developing country like India in its economic development. Iron and steel industry, has been established due to stored iron-ore and coal. But for the establishment of this type industry, we have to import technical knowledge from foreign countries. Had there been no foreign trade, then it would not have been only difficult but also too expensive.

Without foreign trade, it is not possible to fulfill the demand for petroleum products and it will retard the economic development of our country. There is also scarcity of consumer goods due to natural calamities or due to any other reason. During the time scarcity of consumer goods, we import these goods from foreign countries and keep prices stable which help people to get their commodities.

Due to all these above reasons, foreign trade has got an important place in every country.

Exports also help businesses and the economy. Companies that can sell their products overseas can earn greater profits by virtue of having a larger demographic. The economy benefits by having more money circulated. A country's gross domestic product also increases when its companies produce more goods and services. Economists use GDP as an indicator of a country's wealth: the higher the GDP, the wealthier the country.

Importing goods and services has several advantages to businesses and the overall economy. Companies save money by importing items which are cheaper in foreign countries than in their own country. For instance, an American clothing company might choose to buy silk for its ties from Thailand than from a textile business in the U.S. When the company in a competitive industry can produce items at a lower cost, the savings typically gets transferred to the consumer and goods become cheaper. The overall economy benefits because companies can focus and improve their core competencies instead of allocating scarce resources to other business operations.

Comparison of Data for Import & Export for the year 2010-2011 and 2011-2012 in India

Sr.	Import/Export No.	April-2010-March-2011	April-2011-March-2012	YOY Growth % in INR
1	India's Total Export	5,385,417.66	5,540,595.57	2.88%
2	India's Total Import	168,346,695.57	234,546,324.45	39.32 %

Maintaining a balance between the amount of goods imported and exported is important to governments. Too many imports results in a trade deficit and can lead to high levels of national debt. Too many exports result in a high trade surplus that can come at the expense of the population's well-being. Though China enjoys a trade surplus, many of its citizens live in poverty and poor health in part because of the work performed in factories at low wages.

References

1) http://www.jaes.reprograph.ro/articles/9_AnExploratoryStudyofIndianForeignTrade.pdf
2) http://commerce.nic.in/eidb/default.asp
3) http://www.ehow.com/info_7748126_importance-foreign-trade.html
4) http://classof1.com/homework_answers/international_finance/importance_of_foreign_trade/

*** Prof. Of Commerce , Govt. College Ratlam ** Reseach Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P) INDIA**

पंचवर्षीय योजनाओं में विनियोग की तुलनात्मक समीक्षा

डॉ. प्रकाश चन्द्र रांका *

भारत में आर्थिक नियोजन 01 अप्रेल 1951 से प्रारम्भ हुआ। तब से अब तक ग्यारह पंचवर्षीय योजनाऐं, तीन वार्षिक योजनाऐं, तीन वर्ष के अन्तराल के साथ पूर्ण हो चुकी है। बारहवीं पंचवर्षीय योजना के भी दो वर्ष पूर्ण होने को आए हैं। इस प्रकार भारत में आर्थिक नियोजन के 62 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं। इन 62 वर्षो में देश ने नि:संदेह प्रगति की है। कृषि का उत्पादन बढ़ा है। उद्योगों का विकास हुआ है। परिवहन व संचार सुविधाओं में वृद्धि हुई है।

शिक्षा एवं संचार के साथ सूचना प्रौद्योगिकी में भारत ने अभूतपूर्व प्रगति की है। विदेशी व्यापार के आकार का विस्तार हुआ है। राष्ट्रीय आय, घरेलू बचत व विनियोग दरों में भी वृद्धि हुई है। आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर होने के बावजूद अभी भी निर्धनता एवं बेरोजगारी दूर करने में वांछित सफलता प्राप्त नहीं हुई है।

प्रस्तुत पत्र में भारत की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में किए गए विनियोग का तुलनात्मक विश्लेषण करने के साथ योजनाओं के वास्तविक लक्ष्य एवं वास्तविक प्राप्तियों का मूल्यांकन करने का प्रयास किया गया है।

भारत की **प्रथम पंचवर्षीय योजना** हेरोड डॉमर मॉडल के सरल संप्रयोग पर आधारित थी। इस योजना में अर्थव्यवस्था के पुनर्निर्माण तथा आधारिक संरचना का निर्माण करके कृषि का विकास करने की बात कही गई। अत: इस योजना में कृषि व सिंचाई को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए कुल योजना विकास परिव्यय का (1960 करोड़ रू.) 31 प्रतिशत व्यय करने का प्रावधान रखा गया।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना महालनोबिस के चतुर्थ क्षेत्रीय मॉडल पर आधारित थी, जिसमें कृषि के स्थान पर उद्योगों को, श्रम प्रधान परियोजना के स्थान पर पूंजी प्रधान परियोजनाओं को, सन्तुलित विकास के स्थान पर असंतुलित विकास को, उपभोग के स्थान पर उत्पादन एवं रोजगार सृजन को प्राथमिकता दी गई तथा उद्योग व खनिज पर तथा कृषि व सिंचाई पर कुल परिव्यय (4,600 करोड़ रू.) का क्रमश: 20-20प्रतिशत व्यय करने का लक्ष्य रखा गया।

तीसरी योजना का मुख्य लक्ष्य आत्म-स्फूर्ति की अवस्था को प्राप्त करना रखा गया था। अत: इसके निर्माण में अन्त: उद्योग सामन्जस्य पर अधिक बल दिया गया। इस योजना में औद्योगिक विकास तथा कृषि व सिंचाई विकास के लिए योजना के कुल परिव्यय (8,576 करोड़ रू.) का क्रमश: 21% तथा 20.5% व्यय का लक्ष्य था। तीसरी योजना तीव्र औद्योगीकरण के लक्ष्य सहित कृषि विकास व समाजवादी समाज की स्थापना का संकल्प लिए हुए थी। अत: विकास नियोजन के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर करने हेतु आधारिक संरचना के विकास को आवश्यक मानते हुए इस योजना मे परिवहन एवं संचार को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई, जिस पर कुल परिव्यय के 24.6% व्यय का लक्ष्य रखा गया।

चौथी पंचवर्षीय योजना की व्यूह रचना के उद्देश्यों में स्थिरतापूर्वक विकास की गति को तेज करना तथा कृषि उत्पादन में उच्चावचनों को कम करना मुख्य रूप से थे। अत: इस योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के कुल परिव्यय (15,779 करोड़ रू.) में से कृषि व सिंचाई पर 23% परिवहन व संचार पर 20% तथा सामाजिक सेवाओं पर 19%: व्यय करने के लक्ष्य प्राथमिकता पर थे।

पाँचवी पंचवर्षीय योजना का मॉडल देश से गरीबी हटाने तथा आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के उद्देश्य से तैयार किया गया था। इस योजना में विकास योजनाओं को पूरा करने, उद्योगों में पूर्व निर्मित क्षमताओं के पूर्ण उपयोग तथा कमजोर वर्गो के लिये न्यूनतम स्तर को बनाये रखना प्रमुख था। अत: उद्योग व खनिजों को सर्वाधिक प्राथमिकता प्रदान करते हुए इस मद पर कुल परिव्यय (39,426 करोड़ रू.) का 24% व्यय करने का प्रावधान रखा गया।

छठवीं पंचवर्षीय योजना की व्यूह रचना इस प्रकार की गई थी कि कृषि व उद्योग दोनों क्षेत्रों की संरचना सुदृढ़ हो ताकि पूंजी निवेश, उत्पादन व निर्यात बढ़ाने के लिये उपयुक्त वातावरण तैयार हो सके। इस योजना में ऊर्जा विकास एवं कृषि व सिंचाई, परिवहन को मुख्य प्राथमिकता देते हुए सार्वजनिक क्षेत्र के कुल परिव्यय (97,500 करोड़ रू.) का क्रमश: 27% तथा 25% व्यय का लक्ष्य रख गया।

सातवीं योजना की व्यूह रचना का मुख्य तत्व उत्पादक रोजगार का सृजन करना था। अत: इस योजना में खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने, रोजगार अवसरों में वृद्धि तथा उत्पादकता बढ़ाने वाले कार्यक्रमों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। इस योजना में पुन: कृषि व सिंचाई तथा ग्रामीण विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई, जिस पर कुल परिव्यय का 21.7% व्यय करने का प्राथमिक लक्ष्य रखा गया था। इस योजना में एक क्षेत्र आधारिक संरचना का निर्माण करके उत्पादकता में वृद्धि करने के लक्ष्य के साथ सामाजिक सेवाओं एवं मानवीय संसाधन का विकास करके सामाजिक न्याय के साथ विकास का लक्ष्य प्राप्त करना रखा गया।

आठवीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य 5.6% की वार्षिक विकास दर प्राप्त करना निश्चित किया गया था। अत: इस योजना ने सार्वजनिक क्षेत्र के कुल परिव्यय में से कृषि पर 5.2%, ग्रामीण विकास पर 5.93% तथा सर्वाधिक 26.62% ऊर्जा विकास पर व्यय करने का लक्ष्य निर्धारित किया गया। आठवीं योजना में 1991-92 की कीमतों पर 7,98,000 करोड़ रूपए विनियोग का प्रावधान था, जिसमें से सार्वजनिक क्षेत्र का भाग 4,34,100 करोड़ रू. था, जो कुल विनियोग का 54.4% था।

नौवीं योजना में न्यायपूर्ण एवं समानता के साथ आर्थिक विकास की बात कही गई तथा उत्पादक रोजगार का सृजन करने के लिये कृषि एवं ग्रामीण विकास पर विशेष बल दिया गया। कृषि क्षेत्र में 4% तथा उद्योग क्षेत्र में 10% वार्षिक वृद्धि दर का लक्ष्य निर्धारित किया गया। इस योजना में कुल सार्वजनिक परिव्यय में से 25.9% ऊर्जा पर तथा 13.9% परिवहन पर व्यय किये जाने का प्रावधान मुख्य रूप से रखा गया।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) में निजी क्षेत्र को प्राथमिकता देते हुए सार्वजनिक क्षेत्र में उपनिवेश की नीति जारी रखने का उद्देश्य रखा गया। इस योजना की विकास युक्ति में आधारिक संरचना के तीव्र विकास को आवश्यक माना गया। अत: ग्रामीण क्षेत्रों में सिंचाई, सड़कों

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष- अर्थशास्त्र, श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

तालिका क्र. – 01
भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में मदवार वास्तविक व्यय (प्रतिशत में)

मद योजनाएँ	कृषि एवं ग्रामीण विकास	सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण	ऊर्जा	ग्रामीण एवं लघु उद्योग	उद्योग एवं खनिज	परिवहन एवं संचार	शिक्षा एवं अनुंसधान	सामाजिक कल्याण एवं स्वास्थ्य
प्रथम योजना	14.8	22.2	7.6	2.1	2.8	26.4	7.6	16.5
द्वितीय योजना	11.7	9.2	9.7	4.0	20.1	27	5.8	12.5
तृतीय योजना	12.7	7.8	14.6	2.8	20.1	24.6	7.7	9.7
चतुर्थ योजना	14.7	8.6	18.6	1.5	18.2	19.5	5.7	13.2
पांचवी योजना	12.3	9.8	18.8	1.5	22.8	17.4	4.3	13.1
छठवीं योजना	13.9	10	28.1	1.8	13.7	16.2	3.6	12.7
साँतवी योजना	14.4	7.6	28.2	1.5	11.9	17.4	4.5	14.5
आठवीं योजना	14.4	6.5	26.6	1.5	8.4	20.9	21.7	–
नौवी योजना	12.1	7.7	22.3	1.0	4	24.8	28	–
दसवीं योजना	15.8	8.6	13.9	3.3	3.3	18.2	40	–
ग्यारहवीं योजना	12.7	5.8	23.4	4.2	4.2	18.3	35.5	–

स्त्रोत ***: Economy Survey 2010-11***

तालिका क्र0 – 02
पंचवर्षीय योजना में विकास दर (प्रतिशत प्रतिवर्ष)
(लक्ष्य एवं प्राप्तियाँ)

योजनाएँ	लक्ष्य	वास्तविक प्राप्ति
प्रथम योजना (1951–1956)	2.1	3.5
द्वितीय योजना (1956–1961)	4.5	4.21
तृतीय योजना (1961–1966)	5.6	2.72
चतुर्थ योजना (1969–1974)	5.7	3.2
पांचवी योजना (1974–1979)	4.4	4.7
छठवीं योजना (1980–1985)	5.2	5.54
साँतवी योजना (1985–1990)	5.0	5.6
आठवीं योजना (1992–1997)	5.6	6.54
नौवी योजना (1997–2002)	6.5	5.52
दसवीं योजना (2002–2007)	7.9	7.74
ग्यारहवीं योजना (2007–2012)	9.0	उपलब्ध नहीं

स्त्रोत : Economy Survey 2009-10, 2010-11, 2011-12

इत्यादि के साथ संगठित ग्रामीण बाजारों को विकसित करने का उद्देश्य रखा गया। इस योजना में 2001-02 की कीमतों पर कुल सार्वजनिक क्षेत्र के परिव्यय (15,25,639 करोड़ रू0) में से 26.5% ऊर्जा पर, 14.8% परिवहन पर व्यय करने का मुख्य प्रावधान था। इन सभी युक्तियों से दसवीं योजना में 8% की औसत वार्षिक दर को प्राप्त करना सम्भव माना गया।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-12) पूर्ण हो चूकी है। इस योजना में शिक्षा, स्वास्थ्य, गरीबी उन्मूलन, बुनियादी ढांचे के विकास को प्राथमिकता दी गयी है। इस योजना के मुख्य लक्ष्यों में 6-7 करोड़ नये लोगों हेतु रोजगार सृजन करना तथा शिक्षित बेरोजगारी दर को घटाकर 5% से कम करना रखा गया। कृषि क्षेत्र की विकास दर को बढ़ाकर 4%, औद्योगिक क्षेत्र की विकास दर बढ़ाकर 10.5% तथा सेवा क्षेत्र की विकास दर बढ़ाकर 9.9% करने का लक्ष्य रखा गया। इस योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के कुल परिव्यय (36,44,718 करोड़ रू0) में से ऊर्जा को सर्वोच्च प्राथमिकता देते हुए इस मद पर 23.4% तथा परिवहन पर कुल परिव्यय का 15.7% व्यय करने का प्रावधान रखा गया। इसी योजना में कुल व्यय का 30.2% शिक्षा, चिकित्सा, परिवार कल्याण, भवन निर्माण व शहरी विकास जैसी सामाजिक सेवाओं पर व्यय करने का प्रावधान रखकर इन मदों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-2017) में सार्वजनिक क्षेत्र का परिव्यय 76,69,807 करोड़ रू. का निर्धारित करके ऊर्जा क्षेत्र को सर्वोच्च प्राथमिकता (18.8%) दी गई। परिवहन, ग्रामीण विकास, सिंचाई, कृषि एवं उद्योग का भाग क्रमश: 15.7%, 6.00%, 5.5%, 4.7% तथा 4.9% निर्धारित करके योजना का मुख्य उद्देश्य तीव्र सतत् एवं अन्तर्युक्त आर्थिक विकास करना रखा गया तथा योजना में वार्षिक विकास दर का लक्ष्य 9% निर्धारित किया गया है। तालिका क्र. 01 के समंकों के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि अभी तक की पंचवर्षीय योजनाओं में से प्रथम, सातवीं, आठवीं एवं दसवीं योजना में कृषि एवं ग्रामीण विकास पर सर्वाधिक प्रतिशत राशि व्यय की गई है, जो भारतीय अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक स्वरूप के अनुकूल ही है। ऊर्जा क्षेत्र को सुदृढ़ बनाने हेतु इस क्षेत्र को केवल छठी एवं सातवीं योजना में ही सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। कृषि एवं ग्रामीण विकास पर किए गए वास्तविक व्यय में बहुत ज्यादा उच्चावचन नहीं हुआ है।

यह सुखद पहलू ज्ञात हुआ है कि शिक्षा, स्वास्थ्य एवं सामाजिक सेवाओं पर ही किये जा रहे वास्तविक प्रतिशत व्यय में आठवीं पंचवर्षीय योजना से ही काफी तीव्र गति से वृद्धि की गई है। सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर वास्तविक व्यय का प्रतिशत प्रथम योजना में 22.2% था, जो ग्यारहवीं योजना में घटकर 5.8% ही रह गया, जबकि कृषि विकास हेतु सिंचाई सुविधाओं पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। पंचवर्षीय योजनाओं में वास्तविक विकास दर को देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि मात्र 05 योजनाओं में ही वास्तविक विकास दर लक्ष्य से अधिक प्राप्त हुई है। मात्र तृतीय एवं चतुर्थ योजनाओं में ही वास्तविक विकास दर प्रस्तावित लक्ष्य से काफी कम प्राप्त की जा सकी। निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि पिछले 62 वर्षो के योजनाकाल में सफलता की दर उत्कृष्ट नहीं तो भी नि:संदेह अच्छी प्राप्त हुई कही जा सकती है तथा देश को विकास के संदर्भ में बहुत कुछ मिला है।

निष्कर्ष: आधारभूत उद्योगों की स्थापना से देश का औद्योगिक विकास हुआ है। कृषि में उत्पादन के साथ परिवहन एवं संचार सुविधाओं में वृद्धि हुई है। शिक्षा के प्रसार के साथ सामाजिक सेवाओं में भी सराहनीय प्रगति दर्ज की गई। राष्ट्रीय आय एवं प्रतिव्यक्ति आय में बढ़ोतरी के साथ विदेशी व्यापार के आकार में भी वृद्धि हुई है। इन सभी उपलब्धियों के बावजूद निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त नहीं किया जा सका। **डॉ. के.एन. राज के शब्दों में ''नियोजन काल में देश में आय की सम्पत्ति की असमानता बढ़ी है तथा भारत की अर्थव्यवस्था में समाजवादी तत्वों की अपेक्षा पूंजीवादी तत्वों का बाहुल्य बना हुआ है।''** फिर भी भारतीयों के जीवन स्तर को ऊपर उठाने, बेरोजगारी को कम करने, प्राकृतिक साधनों का विदोहन करने, आर्थिक विषमता को कम करने एवं वैश्वीकरण के दौर में विकसित देशों की पंक्ति में देश को खड़ा करने का एक ही रास्ता है और वह है नियोजन को आगे बढ़ाना। यदि नियोजन की विफलताओं को ध्यान में रखकर कुछ और सार्थक प्रयास ईमानदारी से किए जाए तो नियोजन के माध्यम से आर्थिक विकास की सराहनीय दर को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है।

सन्दर्भ :-

1. Economic Survey 2009-10, 2010-11, 2012-13
2. India 2010, 2011
3. योजना आयोग, दसवीं पंचवर्षीय योजना
4. योजना आयोग, ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना
5. आर्थिक विकास के सिद्धान्त एवं भारत में आर्थिक नियोजन
6. Indian Economy- K.P.M. Sundaram, 2012

पंचवर्षीय योजना में विकास दर (प्रतिशत प्रतिवर्ष)

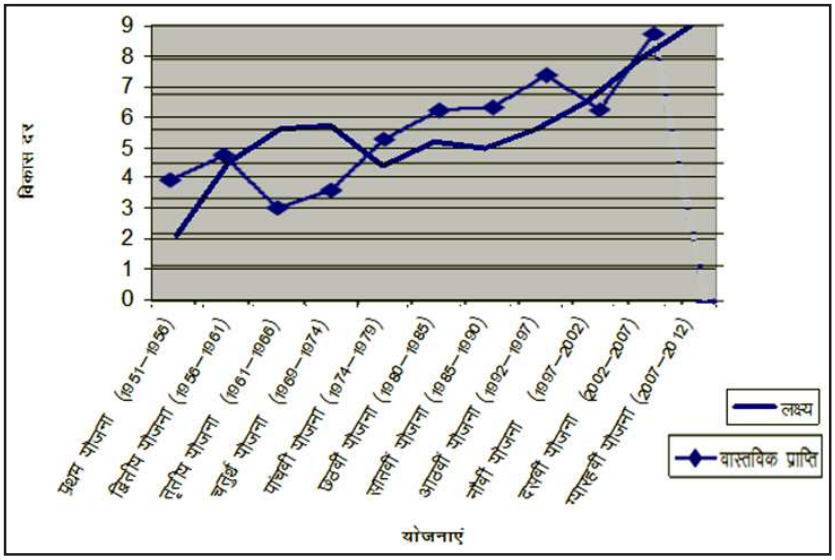

अपशिष्ट राखड़ (फ्लाई एश) का पर्यावरण पर प्रभाव

डॉ. ईमराना सिद्दीकी * डॉ. फरहाना अली **

शोध सारांश– आज वायु तथा जल प्रदूषणों के अतिरिक्त उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थ एवं उनका निस्तारण सम्पूर्ण विश्व के सामने एक गंभीर समस्या बन गई है। राख का निस्तारण भारत में ठोस अपशिष्ट निस्तारण की सबसे प्रमुख समस्या में से एक है। हमारे देश में लगभग 60 % विद्युत उत्पादन कोल से होता है। जिससे 80 से 100 करोड़ टन राख प्रति वर्ष उत्पन्न होती है। वर्तमान में उत्पादन राख का 90% तालाब में या डेम में फेंक दिया जाता है। जिसके लिए अधिक मात्रा में भूमि एवं जल की जरूरत होती है इस कारण भूमि अनुपयोगी बन जाती है। धातुओं व पानी में घुलनशील लवणों का रिसाव समीप स्थित खेतों, खलिहानों एवं जल संसाधनों में पहुँच जाता है। राख के अधिक संग्रहण के कारण डेम फूटने की स्थिति निर्मित होती है साथ ही हवा के द्वारा आस-पास के क्षेत्रों में तेजी से फैलने के कारण वहाँ के पर्यावरण पर गहरा प्रभाव पड़ता है। राखड का पर्यावरण पर प्रभाव संबंधित अध्ययन में सर्वेक्षण से ज्ञात हुआ है, संग्रहण क्षेत्र में राख के अधिक भंडारण की वजह से डेम फूटने के कारण वहां के पारिस्थितिकी तंत्र काफी क्षतिग्रस्त है। साथ ही उड़ने वाली राख (हवा के द्वारा) का लोगों के स्वास्थ्य, फसल, सब्जियों एवं वनोपज पर प्रमुख प्रभाव पड़ा है। हमारे सर्वेक्षण के आधार पर 15% लोगों ने वनोपज के चार लाख, महुआ के उत्पादन पर प्रभाव, 85% लोगों ने मनुष्यों एवं जानवरों के स्वास्थ्य पर असर, 85% लोगों के अनुसार संग्रहण क्षेत्र में पहले की तुलना में वर्तमान में पेड़-पौधों एवं जानवरों की आवृत्ति में कभी को उल्लेखित किया है क्षेत्र में 80% लोग रासायनिक खाद एवं कीट नाशक प्रयुक्त करते है। 5% लोगों को ही जैविक कल्चर की जानकारी है।

(1) प्रस्तुत परियोजना का मुख्य उद्देश्य तापीय विद्युत गृहों से निकलने वाली राखड़ के निपटान की क्रियाविधि समझाना है। राखड़ के कारण होने वाली पर्यावरण प्रदूषण से उत्पन्न समस्याओं का अध्ययन करना एवं जन-जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों को प्रत्यक्ष रूप से देखना है।

(2) समस्याओं को कम करने के उपाय जैसे सरकारी स्तर पर योजनाएं बनाना, राखड़ ईंट कारखाना को बढ़ावा, उर्वरक गुण होने के कारण कृषि एवं उद्यानिकी विभाग में खपत, एस.ई.सी.एल. क्षेत्र होने के कारण ''ओपन कास्ट माइंस एरिया'' में राखड़ की खपत, संग्रहित राखड़ की सतह पर पानी का छिड़काव, वृक्षा रोपड़ आदि ताकि वहां की जैव-विविधता एवं पर्यावरण संतुलन बना रहें।

परिचय

किसी देश की समृद्धि उसके उद्योगों द्वारा परिलक्षित होती है जहां एक ओर विकासशील देश औद्योगिकरण में निरंतर विकास कर रहे है। वहीं दूसरी ओर उद्योगों द्वारा निष्कासित विषैले पदार्थो से प्रदूषित होता पर्यावरण विकराल रूप लेता जा रहा है। पिछले दशकों में छ.ग. राज्य में कोरबा जिला ओद्यौगिक नगरी के रूप में विकसित हुआ है। प्राकृतिक संपदाओं से परिपूर्ण इस जिले में नये-नये उद्योग प्रतिवर्ष स्थापित हो रहे है। इन प्राकृतिक संपदाओं से जीवाश्म ईधन प्रमुख है। कोयले का अपार भंडार होने के कारण यहाँ राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम एवं छत्तीसगढ राज्य विद्युत मंडल के तापीय विद्युत गृहों में इसकी आपूर्ति पूरी की जाती है।

प्रतिदिन हजारों टन कोयलें के दहन से निकलने वाली राख कोरबावासियों के लिए गंभीर समस्या बन गयी है। इन प्लांट से प्रतिदिन लगभग 25 हजार टन राख निकलती है। जिसका निस्तारण दिनों-दिन कठिन होता जा रहा है। राष्ट्रीय ताप विद्युत संयंत्र से निकलने वाली राख के निपटारे हेतु ग्राम धनरास में राखड़ डेम बनाया गया है। ग्राम धनराज कोरबा मुख्यालय से लगभग 20 घ.च. दूर ग्राम छुरी के पास स्थित है। चूंकि ग्राम धनरास के लोग मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर है। अत: इस राखड़ डेम के कारण उनके इस पुश्तैनी धंधे पर प्रभाव पड़ा है।

3 मई 2006 को इस राखड़ डेम के फूटने से धनरास डेम के समीप स्थित ग्राम घमोटा का अस्तित्व पूर्ण रूप से मिट गया। संग्राहित राखड़ में से 5 लाख मिट्रिक टन बहकर 3 कि.मी. तक फैल गई। जिसकी परत 10 फीट कहीं-कहीं 25 फीट के करीब थी। और संग्रहित राखड़ युक्त पानी निकट हसदेव नदी तक जा पहुँचा। जिसका पर्यावरण पर प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता, पर्यावरण को काफी क्षति पहुँची है। साथ ही उड़ने वाली राख के कारण भी वहां की मिट्टी, फसल, जल एवं जीवों पर गहरा असर देखा गया है। इस समस्या के समाधान हेतु अपशिष्ट के उचित प्रबंधन के साथ-साथ पर्यावरण का संरक्षण एवं सवर्धन सजकता पूर्ण हो यह उचित आवश्यक है। इस बात को ध्यान में रखते हुये यह परियोजना प्रस्तुत है।

फ्लाई एश का रासायनिक संयोजन – फ्लाई एश बिटुमनी या लिग्नाइट कोयले के जलने से बनती है। इसमें भारी मात्रा में सिलिका (SiO_2), एलुमिना (Al_2O_3) और फैरिक ऑक्साइड (Fe_2O_3) होता है और कुछ मात्रा में अन्य ऑक्साइड, क्षार और बिना जला कार्बन होता है। इसके अलावा लिग्नाइट कोयले के जलने से बनी एश में भारी मात्रा में चूना भी रहता है। इस परियोजना के कार्यक्षेत्र **N.T.P.C.** कोरबा में बिटुमनी कोयले का उपयोग विद्युत उत्पादन हेतु किया जाता है।

कार्य प्रणाली

राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम कोरबा के राखड़ बांध का ग्राम धनरास के जन-जीवन तथा पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन करने के लिए शा. कन्या उच्च. माध्य. शाला कटघोरा की कक्षा 11वीं के 5 छात्राओं की टीम बनाई गई।

प्रस्तुत प्रकल्प में राखड़ से प्रभावित क्षेत्र जो कटघोरा विकास खण्ड में स्थित है- ग्राम घमोटा, धनरास, सलिहाभाठा, छुरी खुर्द, लोतलोता एवं धनगांव ग्रामों को चयनित किया गया। पर्यावरण पर प्रभाव के बिन्दु को चिन्हांकित कर प्रश्नावली का एक सेट तैयार किया गया और 100 प्रपत्रों के माध्यम से क्षेत्र में जन संपर्क द्वारा आंकड़े एकत्र किये गये।

समस्या की प्रकृति

ग्राम धनरास में स्थित एन.टी.पी.सी. के राखड़ डेम का ग्रामवासियों पर प्रभाव का अध्ययन करने के बाद सर्वे रिपोर्ट ने निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला।

* सहा. प्राध्यापक,शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर **प्राचार्य, शासकीय उच्चतर मा. विद्यालय, स्याहीमुड़ी, कोरबा (छ.ग.) भारत

1. कृषि पर प्रभाव –

(i) पहले खेत में प्रति हेक्टेयर 18–20 क्विंटल अनाज की पैदावार हो रही थी किन्तु आज खेत में 7–8 क्विंटल अनाज पाना मुश्किल हो गया है।

(ii) खेतों की उर्वरा क्षमता का ह्रास हो रहा है।

(iii) फसल में कई प्रकार की बीमारियाँ लग रही है।

2. भूमि पर प्रभाव –

(i) राखड़ युक्त पानी के बहाव से जान–माल की क्षति पेड़–पौधें, जीव–जन्तु, कृषि भूमि पर राख की मोटी परत जम जाना एवं इससे दब जाने के कारण प्रकृति का विनाश

(ii) जमीन बंजर होना

3. नदी के जल पर प्रभाव –

(i) नदी के पानी का प्रदूषित होना।

(ii) भारी तत्वों के सान्द्रता में वृद्धि।

(iii) प्रकाश संश्लेषण क्रिया प्रभावित होना।

(iv) जैविक आक्सीजन पूर्ति (B.O.D) में कमी होने से जलीय जीव जन्तु के विकास पर प्रभाव

वायु प्रदूषण –

राखड़ डेम से उड़ने वाले राखड़ वातावरण के वायु से मिलकर वायु को प्रदूषित करते है। प्रदूषित वायु श्वसन द्वारा हमारे शरीर में प्रवेश करती है। जो हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते है।

वनोंपज पर प्रमुख प्रभाव

लाख, चार, महुआ, तेंदू आदि महत्वपूर्ण वनोपज के उत्पादन पर प्रभाव।

समस्या का समाधान :–

1. **जैविक उपचार –** फसल उत्पादन में वृद्धि के लिए प्रयुक्त रासायनिक विषैले कीटनाशक एवं रासायनिक खाद के ज्यादा इस्तेमाल को रोकने के लिए लोगों को जैविक खाद, कल्चर एवं जैविक कीटनाशकों के बारे में शिक्षित करना जरूरी है।
2. **जैविक कीटनाशक –** नीम का तेल, गौ मूत्र, करंज, सीताफल की पत्ती आदि। बनस्पति जन्य उत्पाद का छिड़काव कर हम रासायनिक कीट नाशकों द्वारा वायु, मृदा, जल, खाद्यानों का प्रदूषण रोक सकते है। जो जैव विविधता में कमी लाते है। अत: इसके विकल्प के रूप में जैविक कीटनाशक कारगर है जो चूसने काटने वाले इल्ली पर प्रभावी होते है।
3. **जैविक खाद एवं कल्चर –** मिट्टी में नाइट्रोजन एवं फास्फोरस को सक्रिय कर पौधों को अवशोषण के लिए उपलब्ध कराने में कल्चर की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जिससे उत्पादन एवं गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है।

समस्या कम करने के उपाय :–

1. राखड़ डेम गांव अथवा शहर की आबादी से 10 से 15 किलो मीटर दूर होना चाहिए।
2. पर्यावरण की सुरक्षा संबंधी नियमों का पूर्णत: पालन करते हुए राखड़ डेम के भरे जाने के पश्चात् इसके ऊपर कम से कम 5 से 10 फीट मिट्टी की मोटी परत बिछाई जानी चाहिए।
3. मोटी परत के ऊपर गोबर खाद आदि की व्यवस्था कर नीम, पीपल, बरगद के पेड़ तुलसी व अन्य वनोषधि, वाले पौधें लगाए जाने अत्यन्त आवश्यक है।

सरकारी स्तर पर योजनाएँ बनाना

फ्लाई एश मूल्यवर्धक उपोत्पाद है। जैसे– सीमेंट, क्रांकीट, ईंट निर्माण के लिए एक अच्छा कच्चा माल है। इस हेतु योजनाएं बनाकर आम लोगों के बीच प्रचार–प्रसार कर खपत को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

राखड़ ईंट कारखाना को बढ़ावा

जिले के ग्रामीण एवं शहरी शिक्षित बेरोजगारों को परियोजना मद से रोजगार उपलब्ध कराने की योजना से जोड़कर सरकारी गैर, सरकारी भवनों एवं चार दीवारी निर्माण में एश ब्रिक्स का प्रयोग कर एश की खपत की जा सकती है।

कृषि एवं उद्यानिकी विभाग की भूमिका

फ्लाई एश उचित मात्रा में उर्वरक की तरह कार्य करती है। इसमें **Ca, N, P** पोटाश आदि पोषक तत्व पाए जाते है। अत: उर्वरक की तरह प्रयुक्त की जा सकती है।

ओपन कास्ट माइन्स एरिया

S.E.C.L. में निस्तारण ओपन कास्ट माइन्स एरिया जो गहरी खाई रूप में मौजूद है और ये जमीन बेकार है उसमें अपशिष्ट राखड़ का भराव कर राखड़ खपत में वृद्धि की जा सकती है।

निष्कर्ष

सर्वे रिपोर्ट से यह निष्कर्ष निकाला कि **N.T.P.C.** द्वारा राखड़ के उड़ने से बचाने के लिए कुछ उपाय किए जा रहे है। राखड़ डेम पर से क्रम व दूब घास का रोपड़ किया जा रहा है। वृक्षारोपण किया जा रहा है। चूंकि राखड़ डेम का क्षेत्रफल बहुत अधिक है इसलिए किए जाने वाले उपाय पर्याप्त नहीं है। राखड़ डेम से पानी निकासी के लिए नालियों की व्यवस्था होती है।

हमारी सर्वे रिर्पोट से यह भी निष्कर्ष निकलता कि इन नालियों की देख–रेख पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता। इसकी परिणति है कि 3 मई 2006 को ग्राम घमोटा का अस्तित्व राखड़ डेम फूटने से पूरी तरह समाप्त हो गया। क्षेत्र में प्रमुख समस्या का स्त्रोत अपशिष्ट राखड़ का अधिक भण्डारण है। राखड़ की खपत के उपायों से समस्या में निश्चित रूप से कमी आएगी।

संदर्भ :–

1. समाचार पत्रों की कतरनें 4 मई 2006, दैनिक भास्कर, 25 जून 2006 हरिभूमि।
2. गाँव के लोगों से प्राप्त सर्वे रिपोर्ट के आधार पर।

****

भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं का अर्थशास्त्र (स्वास्थ्य सुविधा बाजार के विशेष सन्दर्भ में)

शिवदास सिंह *

भारत मानवीय सम्पदा से सम्पन्न और नवीन प्रौद्योगिकी शक्ति के साथ विकासशील अर्थव्यवस्था वाला राष्ट्र है। वर्ल्ड डवलपमेंट रिपोर्ट 2013 के अनुसार भारत 2020 तक विश्व का सबसे युवा देश होगा। आर्थिक, सामाजिक और युवा उन्नति की प्रक्रिया में स्वास्थ्य के महत्व को स्वीकार करते हुए भारत सरकार ने, देश के नागरिकों के जीवन स्तर को गुणवत्तापूर्ण करने के लिए बुनियादी स्वास्थ्य सुविधा प्रदानगी प्रणाली में अपेक्षित संरचनात्मक परिवर्तन किया है। देश के प्रत्येक ब्लॉक में सामुदायिक, प्राथमिक और ग्राम स्तर पर स्वास्थ्य केन्द्रों को बेहतर स्वास्थ्य सेवा प्रदानगी लायक बनाकर, विकास को नयी दिशा प्रदान की जा रही है।

भारतीय स्वास्थ्य प्रणाली पर वैश्वीकरण के प्रभावों को स्पष्ट देखा जा रहा है। दो दशक पहले व्यक्ति आवास, भोजन और यातायात पर विशेषत: ध्यान देता था परन्तु वर्तमान में वह स्वास्थ्य, शिक्षा एवं आय पर मुख्यत: ध्यान दे रहा है। ''रिपोर्ट 2009 के अनुसार भारत में शहरी क्षेत्र के व्यक्तियों द्वारा अपनी आय का 23 फीसदी स्वास्थ्य पर, 18 फीसदी शिक्षा, 24 फीसदी आवास तथा 27 फीसदी सामाजिक कार्यों पर खर्च किया जाता हैं।'' सरकार स्वास्थ्य सुविधाओं पर जी.डी.पी. का मात्र 1.5 फीसदी ही खर्च कर रही है जो अन्य देशों के मुकाबले बहुत कम है परन्तु सरकार ने राष्ट्रीय ग्रामीण मिशन जैसी योजनाओं के तहत पूरे देश में स्वास्थ्य सेवाओं का जाल बिछा दिया है। स्वास्थ्य के प्रति बढ़ती जागरूता ने स्वास्थ्य बाजार को नयी दिशा प्रदान की है। ''वैश्विक दवा उत्पादन का 10 प्रतिशत से भी अधिक उत्पादन करने वाला भारतीय दवा बाजार आने वाले समय (2030) में 55 अरब डॉलर से भी अधिक होने की सम्भावना है।''[1]

स्वास्थ्य मानव जीवन की अनमोल सम्पत्ति है, स्वस्थ्य शरीर कुशलता, सम्पन्नता एवं प्रसन्नता का प्रतीक है। ''मनुष्य के जीवन में स्वास्थ्य से अधिक महत्वपूर्ण किसी अन्य वस्तु की कल्पना करना कठिन है। स्वास्थ्य किसी भी समाज की प्रगति के लिए अनिवार्य है जो भी समाज अथवा व्यक्ति स्वास्थ्य की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है वह न केवल सम्पन्नता, बल्कि वह जीवन के मूल्यों की स्थापना करने में भी पिछड़ा होगा।''[2] किसी देश, राज्य एवं जिले के विकास में स्वास्थ्य सुविधाओं की महत्वपूर्ण भूमिका होती है जिस प्रकार उत्पादन के लिए श्रेष्ठ उत्पादन के साधनों से रोजगार, आय एवं माँग में वृद्धि के साथ कीमतों में वृद्धि तथा बचतों एवं विनियोग में वृद्धि से आर्थिक विकास होता है। ठीक उसी प्रकार समुचित स्वास्थ्य सुविधाऐं स्वस्थ शरीर एवं श्रेष्ठ श्रम उत्पादन में वृद्धि करके रोजगार, आय एवं माँग में वृद्धि के साथ बचत एवं विनियोग में वृद्धि करके आर्थिक विकास के चक्र को गति प्रदान करतीं है। इस प्रकार आय में वृद्धि और स्वास्थ्य सेवाओं में वृद्धि एक दूसरे के पूरक हैं।

सुप्रसिद्ध विशेषज्ञ चरक के अनुसार-''जीवन के चारों उद्देश्यों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिए स्वास्थ्य बहुत आवश्यक है।''[3]

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने स्वास्थ्य की परिभाषा देते हुए स्पष्ट किया- ''केवल रोग या दुर्बलता से छुटकारा नहीं वरन् पूर्ण शारीरिक एवं मानसिक क्षमता का विकास और सामाजिक सुस्थापना ही स्वास्थ्य है।''[4]

स्वास्थ्य एवं शिक्षा की महत्ता पर बल प्रदान करते हुए- प्रो. अर्मत्य सेन का मत है कि ''भारत जैसे विकासशील राष्ट्रों को विकास के लिए गरीब जनता को सुखी करने हेतु शिक्षा व स्वास्थ्य पर समान मात्रा में ध्यान देना आवश्यक है।''[5] और डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम एवं राजन बाई सुन्दर का मत है कि '' देश के विकास में स्वास्थ्य सुविधाओं पर विशेष महत्व दिया जाना चाहिए, क्योंकि देश का विकास तभी संभव है जब देश का हर नागरिक स्वस्थ हो और भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं की अपार सम्भावनाऐं हैं, यहाँ विश्व के अन्य देशों के मुकाबले बहुत सस्ती स्वास्थ्य सेवाऐं प्राप्त हो जाती है। यदि भारतीय स्वास्थ्य प्रणाली में प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाये तो यह देश दुनिया का सबसे उन्नतशील स्वास्थ्य सुविधाऐं प्रदान करने वाला राष्ट्र होगा''[6]।

अध्ययन के उद्देश्य-

- हमारे शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य, भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं के बाजार की वर्तमान स्थिति का अध्ययन करना है।
- शोध पत्र का द्वितीय उद्देश्य यह जानना है कि आधुनिक स्वास्थ्य सेवाओं में वृद्धि, आर्थिक विकास और रोजगार में क्या सम्बन्ध है।

शोध प्रविधि- शोध पत्र में मुख्य रूप से भारत के स्वास्थ्य सुविधा बाजार में हो रहे परिवर्तन से रोजगार के अवसरों, आधुनिक स्वास्थ्य प्रदानगी प्रणाली में हो रहे परिवर्तन का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना है। शोध पत्र को चार भागों में मुख्यत: विभक्त किया गया है प्रथम भाग में स्वास्थ्य सुविधाओं का विकास, वैश्वीकरण और स्वास्थ्य बाजार, द्वितीय भाग में उद्देश्य एवं प्रविधि तथा तृतीय भाग में आधुनिक स्वास्थ्य सुविधा विकास, बाजार की वर्तमान स्थिति और आर्थिक विकास में स्वास्थ्य सुविधाओं का महत्व और अन्तिम भाग में स्वास्थ्य सेवाओं पर किये गये योजनागत व्यय का विश्लेषण किया गया है।
प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक समंकों पर आधारित है। इसके अन्तर्गत हमने स्वास्थ्य सुविधाओं पर योजनागत व्यय के द्वितीयक समंक एकत्रित किये गये है, और एवं अन्य सर्वेक्षण द्वारा प्रकाशित लेखों, विचारों और इंटरनेट के माध्यम से सूचनाओं को एकत्रित कर उनका विवेकपूर्ण विश्लेषण किया है।

साहित्य समीक्षा-हमारे शोध पत्र के अध्ययन करने से पूर्व बहुत से शोध कार्य संपन्न हो चुके है, जिसमें से कुछ महत्तवपूर्ण विद्धानों के कार्यो की समीक्षा की जा रही है, जो निम्नवत है। कलाम ए.पी.जे. अब्दुल एवं राजन बाई सुन्दर (2009)[7] ने अपने अध्ययन में पाया कि भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं की अपार सम्भावनाऐं है। यहाँ विश्व के अन्य देशों के मुकाबले बहुत सस्ती स्वास्थ्य सेवाऐं प्राप्त हो जाती है। यदि भारतीय स्वास्थ्य प्रणाली में प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाये तो यह देश दुनिया का सबसे उन्नतशील स्वास्थ्य सुविधाऐं प्रदान करने वाला राष्ट्र होगा। दत्ता दमयंती (2010)[8] ने 'स्वास्थ्य सेवा का तंदुरूस्त कारोबार' में स्पष्ट किया कि भारत में स्वास्थ्य सुविधाएँ जितनी तेजी से बढ़ रही हैं। उससे कई गुना अधिक स्वास्थ्य व्यवस्थाओं का कारोबार बढ़ रहा है। अध्ययन के अनुसार भारतीय स्वास्थ्य सेवाओं का बजट प्रतिवर्ष 16 फीसदी की वृद्धि से बढ़ता हुआ सन् 2005 में जो 102,600 करोड़ रू. था वह 2010 में 2 लाख करोड़ रू. और 2012 तक 3 लाख करोड़ होने की संभावना है। दुबे अरविन्द (2010)[9] ने अध्ययन

* शोधार्थी (मार्गदर्शक-प्रो. तपन चौरे, आचार्य एव अध्यक्ष) अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

कर स्पष्ट किया कि शहरों की चका-चौंध और समुचित स्वास्थ्य सुविधाओं ने ग्रामीण व्यक्तियों को अपनी ओर आकर्षित किया है। छोटे शहर, बड़े शहरों में तब्दील हो रहे हैं। शहरों का बुनियादी ढाँचा बदल रहा है जिससे स्वास्थ्य सुविधाऐं और उन्नतशील हो रही है। विश्व स्वास्थ्य संगठन रिपोर्ट के अनुसार सन् 1975 तक विश्व की मात्र 27 फीसदी आबादी शहरों में निवास करती थी जो 2030 तक विकासशील देशों की 56 फीसदी आबादी शहरों में होगी, जिससे हमारी स्वास्थ्य सुविधाओं को बढ़ाने की आवश्यकता होगी।

यादव विनोद (2010)[10] ने स्वास्थ्य सुविधाओं में हो रहे उल्लेखनीय परिवर्तनों के बारे में स्पष्ट किया कि यह दशक भारतीय स्वास्थ्य सुविधाओं का दशक होगा और कहा शायद यह बात काल्पनिक लगे कि सन् 2020 में देश के बेहद पिछड़े क्षेत्रों में बीमारी से ग्रसित व्यक्ति अपने ही गाँव के पंचायत भवन में रखे कम्प्यूटर के स्कैनर में अपना जेनेटिक प्रोफाइल वाले कार्ड को डालने के चंद क्षणों में डॉक्टर की पर्ची का प्रिन्ट मिल जायेगा, जिसमें कुछ दवाऐं लेने की सलाह होगी और गाँव के कैमिस्ट से बेहद सस्ती दवाऐं प्राप्त हो जायेगी। अरूण ए.के. (2011)[11] ने अपने अध्ययन में स्पष्ट किया कि भारत सरकार जन स्वास्थ्य सुविधाओं को सुविधा जनक बनाने के दृष्टिगत पिछले वित्तीय वर्ष 2010-11 के बजट 22300 करोड़ रू. के मुकाबले वित्तीय वर्ष 2011-12 के बजट में 20 फीसदी वृद्धि के साथ 26760 करोड़ रू. का प्रावधान किया एवं राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के आवंटन को 2100 करोड़ रू. से बढ़ाकर 2356 करोड़ रू. किया गया, जो भारतीय स्वास्थ्य प्रणाली को और सुविधा जनक प्रदान करेगा। उपर्युक्त साहित्य विश्लेषण से स्पष्ट है कि-भारत की स्वास्थ्य सुविधाओं में उत्तरोतर वृद्धि से स्वास्थ्य बाजार में वृद्धि हो रही है।

स्वास्थ्य सुविधाओं का विकास-

आज से ढ़ाई हजार वर्ष पूर्व आयुर्वेद के सुप्रसिद्ध विशेषज्ञ चरक ने कहा था-''जीवन के चारों उद्देश्यों धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति के लिए स्वास्थ्य बहुत आवश्यक है।'' हजारों वर्ष पूर्व भगवान महात्मा बुद्ध ने ''आरोग्य परम लाभ'' का सिद्धान्त प्रतिपादित किया था। स्वास्थ्य की अवधारणा एक स्थिर अवधारणा न होकर एक गतिशील अवधारणा है। इसी गतिशीलता को ध्यान में रखकर विश्व स्वास्थ्य संगठन, भारत सरकार स्वास्थ्य सेवाओं में आवश्यक सुधार कर रही है। भारत में ग्रामीण स्वास्थ्य सेवाओं का विकास 1946 के स्वास्थ्य सर्वेक्षण, विकास समिति द्वारा दिये गये निर्देशन के आधार पर किया गया है। और 2 अक्टूबर 1952 से आरम्भ सामुदायिक विकास कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वोतन्मुखी विकास में सर्वप्रथम संगठित ग्रामीण विकास रणनीति है।

भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं का बाजार-

भारत में स्वास्थ्य सुविधाओं का बाजार नियोजन के उपरान्त बहुत तेजी से बढ़ रहा है। ''भारत विश्व में स्वास्थ्य सेवाऐं उपलब्ध कराने वाले देशों में सबसे बड़े बाजारों में शुमार हो गया है। यहाँ स्वास्थ्य सुविधाओं का कारोबार 16 फीसदी प्रतिवर्ष की रफ्तार से बढ़ रहा है। सन् 2005 में यहॉ स्वास्थ्य सुविधाओं का बाजार 102600 करोड़ रू. था, जो 2009 में 2 लाख करोड़ और 2012 तक इसके 3 लाख करोड़ रू. होने की सम्भावना है। यह उद्योग देश के 40 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्रदान कर रहा है।''[12] देश में दवा का बाजार 67000 करोड़ रू. का है।

भारतीय ''क्लीनिकल रिसर्च उद्योग जो सन् 2001 में 20 करोड़ रू. था वह 2010 में 5000 करोड़ रू. के आंकड़ों को पार कर जायेगा वहीं भारत का स्वास्थ्य सुविधाओं के देखभाल का उद्योग जो सन् 2009 में 35 अरब डॉलर का है सन् 2012 तक 75 अरब डॉलर और 2017 तक 150 अरब डालर होने की सम्भावना है।''13 परन्तु अभी हम (जी.डी.पी.) का मात्र 1-2 फीसदी खर्च कर रहें हैं। केन्द्रीय सचिव फार्मास्युस्टिकल्स व कैमिकल्स अशोक कुमार ने अपने रिसर्च में स्पष्ट किया-''सन् 2009 में विश्व दवाओं का बाजार 770 अरब डॉलर था जो 2020 तक 1300 अरब डॉलर होगा, वहीं भारतीय दवा बाजार जो 20 अरब डॉलर का है वह 2020 में 100 अरब डॉलर होने की सम्भावना है। जो 20 फीसदी सालाना वृद्धि की दर से बढ़ रहा है।''[14]

आधुनिक स्वास्थ्य सुविधा बाजार की वर्तमान स्थिति-

भारतीय स्वास्थ्य प्रणाली पर वैश्वीकरण के प्रभावों को स्पष्ट देखा जा रहा है। दो दशक पहले व्यक्ति आवास, भोजन और यातायात पर विशेषत: ध्यान देता था, परन्तु वर्तमान में वह स्वास्थ्य, शिक्षा एवं आय पर मुख्यत: ध्यान दे रहा है। आधुनिक चिकित्सा प्रणाली में नवीन प्रौद्योगिकी ने भारतीय चिकित्सा की मॉग में और वृद्धि कर दी है, परन्तु बाजारी करण ने एक तबके के लोगों को ही ध्यान में रखा है। जिससे एक स्वास्थ्य सुविधाओं का बाजार तो बढ़ रहा है वहीं दूसरी स्वास्थ्य का समाजशास्त्र बिगड़ता जा रहा है। भारतीय चिकित्या बाजार '4पी' यानी प्रोडक्ट, प्लस, प्रमोशन, और प्राइस पर गतिशील है। ''वैश्विक दवा उत्पादन का 10 प्रतिशत से भी अधिक उत्पादन करने वाला भारत का दवा बाजार भविष्य में (2030) में 55 अरब डॉलर से भी अधिक होगा। कैम्ब्रिज कंसल्टेंट फार्मा के अनुसार भारत का वर्तमान दवा बाजार 22 अरब डॉलर से भी अधिक मुनाफा कमा रहा है। 20 हजार कंपनियों और 3 लाख 40 हजार से भी अधिक लोगों को रोजगार देने वाले इस बाजार के कदम 25 अरब डॉलर का ऑकड़ा 2014 में ही पार कर लेगा।

स्वस्थ्य शरीर और सौंदर्य का होना भाग्य माना जाता था, लेकिन आज बाजार ने यह काम भी अपने हाथ में ले लिया है। एंटी एजिंग प्रोडक्ट एण्ड सर्विसेज : दा ग्लोबल मार्केट के अनुसार-2008 में उम्र को पीछे छोड़ने वाले उत्पाद एवं सेवा का वैश्विक बाजार 162.2 बिलियन डॉलर था, जो 2013 में बढ़कर 274.5 बिलियन डॉलर हो गया है।''[15]

भारतीय चिकित्सा बाजार में लगातार वृद्धि हो रही है। जिसमें स्वास्थ्य बीमा, मेडिकल एजुकेशन, योगा, हेल्दी फूड और डाइट, स्किन ट्रीटमेंट, प्लास्टिक सर्जरी, जर्म फ्री प्रोडक्ट, कॉस्मेटोलॉजी, नेचुरोपैथी, एंटी एजिंग सॉल्यूशन, परमानेंट मेकअप, हर्बल ट्रीटमेंट, इको फ्रेंडली प्रोडक्ट्स, फिटनिस ट्रीटमेंट, और हेल्थ प्लान इत्यादि की मॉग में वृद्धि हो रही है।

तालिका क्रमांक-01
स्वास्थ्य सुविधाओं के विभिन्न क्षेत्रों में वृद्धि

क्षेत्र	2006	2010	वृद्धि
अस्पताल	19.20	33.00	13.80
निदान	0.83	1.70	0.87
मेडिकल पर्यटन	0.35	0.70	0.35
चिकित्सा उपकरण	0.18	4.80	4.41
बीमा	0.49	1.90	1.41

स्रोत-इण्डिया टुडे 14 अप्रेल 2010 पेज क्रमांक 28

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 2006 से 2010 तक भारतीय अस्पतालों 13.80 प्रतिशत की वृद्धि हुई तथा मेडिकल पर्यटन में इस दौरान 0.35 फीसदी की वृद्धि दर्ज की गयी है। ''भारत विश्व में स्वास्थ्य सेवाऐं उपलब्ध कराने वाले देशों में सबसे बड़े बाजारों में शुमार हो गया है। यहाँ स्वास्थ्य सुविधाओं का कारोबार 16 फीसदी प्रतिवर्ष की रफ्तार से बढ़ रहा है। सन्

2005 में यह 102600 करोड़ रू. था जो 2009 में 2 लाख करोड़ और 2012 तक इसके 3 लाख करोड़ रू. होने की सम्भावना है। यह उद्योग देश के 40 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्रदान कर रहा है।''[16] हालॉकि स्वास्थ्य सुविधाओं में बहुत परिवर्तन हुआ है, परन्तु अभी इस दिशा में बहुत कुछ किया जाना बाकी है।

आज चिंता का विषय केवल स्वास्थ्य सुविधाओं की अनुपलब्धता नहीं है, बल्कि हर दिन पनप रहे नए-नए रोग हैं। आज जरूरत इस बात की है कि हम सभी अपने स्वास्थ्य के प्रति स्वयं जागरूक हों, बाहरी बीमारियों से बचाव की ढांचागत सुविधाओं का उचित प्रयोग तथा रख-रखाव हर नागरिक का परम् कर्तव्य है, निरन्तर स्वस्थ्य रहने के लिए एक मजबूत प्रतिरक्षा प्रणाली का होना जरूरी है जिसके लिए हमें अपनी जीवन शैली में सुधार कर नियमित सृजनात्मक सक्रियता को ध्यान में रखकर जीवन को स्वस्थ, सुखद बना सकते हैं।

तालिका क्रमांक-02

पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य पर किया गया व्यय (करोड़ रू. में)

योजना	कुल योजना परिव्यय	स्वास्थ्य पर व्यय	कुल प्रतिशत	स्वास्थ्य व्यय का प्रतिशत परिवर्तन
प्रथम योजना	1960	98	5	-
द्वितीय योजना	4672	216	4.62	120.40
तृतीय योजना	8577	251	2.93	16.20
चतुर्थ योजना	15779	613	3.88	144.22
पाँचवी योजना	39426	1253	3.17	104.40
छठवीं योजना	109292	3412	3.12	172.30
साँतवी योजना	218730	6809	3.12	99.56
आँठवी योजना	434100	15809	3.64	132.18
नौवीं योजना	859200	28847	3.35	82.47
दसवीं योजना	1592300	N.A.	-	-

स्त्रोत : भारतीय अर्थव्यवस्था एस.के. मिश्र एवं व्ही.के. पुरी 2008, 252-260, हिमालया पब्लिशिंग हाउस। भारत 2009, 514-575

उपर्युक्त तालिका विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि वैश्वीकरण के उपरान्त स्वास्थ्य के क्षेत्र में जो योजनागत व्यय किया जा रहा है। वह लगातार कम होता जा रहा है। यह मानव संसाधन विकास की दृष्टि से उपयुक्त नहीं है। विकासवादी अर्थशास्त्रियों की मान्यता है कि राष्ट्रीय आय का 30 से 40 प्रतिशत मानव संसाधन विकास पर आवश्यक रूप से व्यय किया जाना चाहिये।

तालिका क्रमांक-03 (वित्तीय वर्षो में राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के लिए आवांटित बजट (करोड़ रू.))

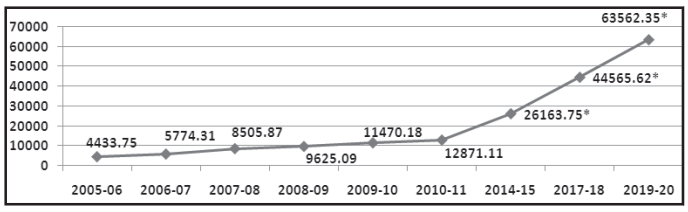

स्त्रोत -राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन पत्रिका जुलाई-अगस्त, 2012 पृष्ट क्र. 02,

* *estimated value*

उपरोक्त ग्रॉफ से स्पष्ट है कि वित्तीय वर्ष 2005-06 में स्वास्थ्य के कुल 4633.39 करोड़ रू. बजट में से 4433.75 करोड़ का आवांटन राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन के लिए किया गया था। वह 2008-09 में 9625.09 करोड़ रू. और 2010-11 में 12871.11 करोड़ रू. का किया गया है।

इस प्रकार 2014-15 में 26163.75* करोड़, 2017-18 44565.62* करोड़ और 2019-20 में 63562.35* करोड़ रू. का आवांटन किये जाने की सम्भावना है।

निष्कर्ष-भारत में आधुनिक स्वास्थ्य व्यवस्था जहॉ असाध्य बीमारियों से निजात दिला रही है, वहीं चिकित्सा बाजार क बढ़ते कदमों ने रोजगार बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। चिकित्सा बाजार ने एक ओर जहॉ आधुनिक चिकित्सा सुविधाओं को बढ़ाया है, वहीं दूसरी ओर स्वास्थ्य के समाजशास्त्र को बिगाड़ दिया है। आज भारतीय चिकित्सा बाजार में आधुनिकीकरण को स्पष्ट देखा जा सकता है। वैश्विक दवा उत्पादन का 10 प्रतिशत से भी अधिक उत्पादन करने वाला भारत का दवा बाजार भविष्य में (2030) में 55 अरब डॉलर से भी अधिक होने की सम्भावना है। वर्तमान में हमारे देश का दवा बाजार जो 22 अरब डॉलर से भी अधिक मुनाफा के साथ 20 हजार कंपनियों में 3 लाख 40 हजार से भी अधिक लोगों को रोजगार प्रदान करा रह है। वह 2014 तक 25 अरब डॉलर का ऑकड़ा पार कर लेगा। किसी के जीवन को स्वस्थ्य और सौंदर्य का होना भाग्य माना जाता था, परन्तु आज स्वास्थ्य सुविधा बाजार ने यह काम भी अपने हाथ में ले लिया है। अब बाजार ने शरीर के प्रत्येक अंग को आकर्षक बनाने की सुविधा प्रदान कर दी है। 2008 में उम्र को पीछे छोड़ने वाले उत्पाद एवं सेवा का वैश्विक बाजार 162.2 बिलियन डॉलर था, जो 2013 में बढ़कर 274.5 बिलियन डॉलर हो गया है। और हमें विश्वास है कि आने वाला समय हमारी स्वास्थ्य व्यवस्था को और उन्नतशील बना कर जीवन में प्रसन्नता भरने वाला और सभी की पहुंच वाला होगा।

संदर्भ-

1. उपमा ऋचा (2013), ''स्वास्थ्य बाजार का वैश्विक विस्तार'' अहा जिंदगी संपूर्ण स्वास्थ्य महाविशेषांक अगस्त 2013, भास्कर परिसर जयपुर, पेज 13.
2. प्रसाद नीता (2010), ''स्वस्थ गाँव खुशहाल देश'' (संपादकी) कुरूक्षेत्र फरवरी 2010, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय नई दिल्ली, पेज 2.
3. सिंह वीणापाणी (1998), ''ग्रामीण स्वास्थ्य संरक्षण'', क्लासिकल पब्लिशिंग कम्पनी नई दिल्ली, पेज 2.
4. मिश्र शिवगोपाल (2010), ''भारत की स्वास्थ्य एवं चिकित्सा परम्परा'' आविष्कार मासिक विज्ञान पत्रिका अप्रैल 2010 नेशनल रिसर्च डेवलपमेंट कारपोरेशन, विज्ञान एवं प्रौद्योगिक मंत्रालय, नई दिल्ली, पेज 20.
5. सेन अमर्त्य (1973) आन इकानामिक इनइक्वेटी, ऑक्सफोर्ड केलेरेण्डन प्रेस इग्लैंण्ड, पेज 14-16.
6. कलाम ए.पी.जे. एवं राजन बाई सुन्दर (2009), ''महाशक्ति भारत'' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पेज 97-105
7. कलाम ए.पी.जे. एवं राजन बाई सुन्दर (2009), ''महाशक्ति भारत'' प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, पेज 97-105.
8. दत्ता दमयंती (2010), ''स्वास्थ्य सेवा का तंदुरूस्त कारोबार'' इण्डिया टुडे, अप्रेल 2010, लिविंग मीडिया, इण्डिया, लि, नयी दिल्ली पेज .28.
9. दुबे अरविन्द (2010), ''शहरीकरण और स्वास्थ्य'' आविष्कार विज्ञान पत्रिका, अप्रैल 2010, नेशनल रिसर्च डेवलपमेंट कारपोरेशन, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय नई दिल्ली, पेज 3-10.
10. यादव विनोद (2010), ''डायबिटीज के दर्द से मिलेगा छुटकारा'' दैनिक भास्कर, 3 जनवरी 2010 प्रकाशन इन्दौर, पेज 16.
11. अरूण ए.के (2011), ''बजट में स्वास्थ्य'' योजना मार्च 2011, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय नयी दिल्ली पेज 23.
12. दत्ता दमयंती (2009), ''स्वास्थ्य सेवा का तंदुरूस्त करोबार'' इण्डिया टुडे अप्रैल 2009, लिविंग मीडिम इंडिया लि. नई दिल्ली, पेज 29.
13. दत्ता दमयंती (2009), ''स्वास्थ्य कारोबार'' इण्डिया टुडे अगस्त 2009, लिविंग मीडिम इंडिया लि. नई दिल्ली, पेज 16.
14. कुमार अशोक (2010), ''विश्व दवा बाजार'' दैनिक भास्कर 3 जनवरी 2010, प्रकाशन इन्दौर, पेज 16.
15. उपमा ऋचा (2013), ''स्वास्थ्य बाजार का वैश्विक विस्तार'' अहा जिंदगी संपूर्ण स्वास्थ्य महाविशेषांक अगस्त 2013, भास्कर परिसर जयपुर, पेज 13.
16. दत्ता दमयंती (2009), ''स्वास्थ्य सेवा का तंदुरूस्त करोबार'' इण्डिया टुडे अप्रैल 2009, लिविंग मीडिम इंडिया लि. नई दिल्ली, पेज 29.

वर्तमान भारतीय आर्थिक चुनौतियाँ और एफ.डी.आई. (एक समीक्षात्मक अध्ययन)

डॉ. आभा दीक्षित *

विश्व बैंक तथा आई.एम.एफ. द्वारा भारत के विकास अनुमान को घटाकर क्रमश: 3.8 प्रतिशत था 4.7 प्रतिशत कर दिया गया है। यह आश्चर्यजनक परंतु वास्तविकता है कि भारत में 1991 में आर्थिक सुधार की प्रक्रिया शुरु होने से 10 वर्ष से भी कम समय पहले यानी 1982 तक भारत की प्रति व्यक्ति आय चीन की तुलना में 30 प्रतिशत अधिक थी। विश्व बैंक के आंकड़ों के अुनसार, औसत भारतीयों की वार्षिक आय 1982 में 279 डॉलर थी, जबकि एक औसत चीनी नागरिक साल में सिर्फ 201 डॉलर कमाता था जो भारतीय तुलना में 28 प्रतिशत कम थी, आज चीन की प्रति व्यक्ति आय भारत की तुलना में 309 प्रतिशत अधिक है। इसी तरह आजादी के समय भारत और दक्षिण कोरिया का आमदनी स्तर एक समान था आज दक्षिण कोरिया की आमदनी से 1,400 प्रतिशत अधिक है। 1970 तक इण्डोनेशिया का जीडीपी भारत से कम था, लेकिन आज 39 प्रतिशत अधिक है। दुनिया में ऐसी अर्थव्यवस्थाओं की भरमार है जो कभी भारत से पीछे थी और आज आगे है। जाहिर है कि इन देशों में एफडीआई का प्रबंधन सही ढंग से किया और भारत सरकार उसका प्रबंधन तथा नियमन सही ढंग से नहीं कर पायी। क्योंकि, एफडीआई विकास में सहयोग दे सकता है क्योंकि नई कम्पनियों से कड़ी प्रतिस्पर्धा के कारण उत्पादन और क्षमता को बढ़ावा मिलता है, प्रशासन में सुधार होता है तथा नई तकनीक के कारण अनुसंधान और विकास के स्त्रोतों में वृद्धि होती है।

भारत में एफडीआई की वर्तमान स्थिति :-

वैश्विक आर्थिक सुस्ती का असर देश में एफडीआई की आवक पर भारी पड़ रहा है। फरवरी 2013 में देश में 1.79 अरब डॉलर का एफडीआई आया जो गत वर्ष के मुकाबले 19 प्रतिशत कम है। गत वर्ष फरवरी में यह 2.2 प्रतिशत अरब डॉलर था, जनवरी 2013 में एफडीआई 2.15 लाख डॉलर रहा था। वित्त वर्ष 2012-13 के अप्रैल-फरवरी के दौरान 20.89 अरब डॉलर एफडीआई देश में आया जो गत वर्ष के मुकाबले 38 प्रतिशत कम है। गत वित्त वर्ष में इस दौरान 33.49 अरब डॉलर एफडीआई हासिल हुआ था।

यद्यपि, जुलाई 2011 में जारी UNCTAD की विश्व विकास रिपोर्ट में बताया गया है कि वर्ष 2009 में भारत में एफडीआई का अन्तर प्रवाह 36 अरब डॉलर था जो घटकर 2010 में 25 अरब डॉलर ही रहा है इससे एफडीआई प्राप्तकर्ता देशों में भारत का स्थान जो 2009 में आठवाँ था 2010 में 14वाँ रहा है। तथापि, UNCTAD के वर्तमान सर्वेक्षण में अभी भी भारत दुनियाँ की निवेश के लिए तीसरी पसंदीदा जगह है। 'इण्डिया इंक' के अनुसार साल-दर-साल के आधार पर 25 प्रतिशत की एफडीआई में वृद्धि हुई। अप्रैल 2013 में एफडीआई 2.32 बिलियन डॉलर रहा। निम्न तालिकाओं से एफडीआई की वर्तमान स्थिति का पता चलता है :-

1. भारत में विदेशी प्रत्यक्ष निवेश :-

वर्ष	विदेश प्रत्यक्ष निवेश की वृद्धिदर
2011-12	34 प्रतिशत
2012-13	25 प्रतिशत

2. भारत में स्त्रोतवार विदेशी निवेश अन्तर प्रवाह :-

देश	कुल अन्तर प्रवाह (अरब डॉलर में)
सिंगापुर	1.29
मॉरीशस	355
नीदरलैण्ड	173
अमेरिका	149

स्त्रोत - विकीपीडिया

किन्तु एफडीआई का प्रवाह कुछ ही राज्यों में ज्यादा रहा जिसे निम्न तालिका द्वारा समझा जा सकता है -

3. राज्यवार एफडीआई:-

राज्य	कुल एफडीआई का प्रतिशत
महाराष्ट्र	38 प्रतिशत
दिल्ली	19 प्रतिशत
कर्नाटक	6 प्रतिशत
गुजरात	5 प्रतिशत
तमिलनाडु	5 प्रतिशत

स्त्रोत - विकीपीडिया

एफडीआई की चुनौतियाँ :-

अभी भारतीय अर्थव्यवस्था की सबसे बड़ी दो समस्याएँ हैं- 1. बढ़ता घाटा और 2. रू. में गिरावट। रूपये की कीमत गिरने का सीधा अर्थ यह है कि भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी निवेशकों का भरोसा टूट रहा है फारेक्स डीलरों के अनुसार शेयर बाजार में विदेशी पूँजी को बड़ी मात्रा में निकाले जाने के चलते रूपये में गिरावट को बल मिला। विदेशी संस्थागत निवेशकों ने मई माह के आखिर से जून 2013 तक तकरीबन 5 अरब डॉलर मूल्य के ब्राण्ड बेचे हैं। मॉर्गन स्टेनती के सर्वे के मुताबिक अधिकांश संस्थागत निवेशक मौजूदा समय में भारतीय बाजारों को इक्वल वेट कैटेगरी में रखकर चल रहे हैं इसका अर्थ यह है कि, उन्हें भारतीय बाजारों में निकट भविष्य में किसी बड़ी तेजी की उम्मीद नहीं है। कुल 95 संस्थागत निवेशकों में से सिर्फ 21 प्रतिशत ने भारतीय शेयर बाजारों को ओवरवेट की कैटेगरी में रखा है। फरवरी 2013 में किए गए इसी तरह के सर्वे में शामिल संस्थागत निवेशकों में से 39 प्रतिशत ने भारतीय शेयरों को ओवर वेट कैटेगरी में रखा था। सिर्फ एक तिहाई संस्थागत निवेशक मानते हैं कि भारतीय बाजार अन्य उभरते हुए बाजारों की तुलना में ज्यादा रिटर्न दे सकते हैं। जाहिर है कि, कई रेटिंग एजेंसियों ने भारत में निवेश का भरोसा घटाया है तथा बाहर के निवेशक, घरेलू निवेशक दोनों ही चुनाव के बाद का इंतजार कर रहे है। बचत की कमी है ब्याज दर में कमी की कोई उम्मीद नहीं नजर आ रही।

इन्फ्रास्ट्रक्चर का विकास भी एफडीआई के अन्तर प्रवाह में रूकावट है, दुनिया की प्रमुख रेटिंग एजेन्सी 'स्टेण्डर्ड एण्ड पुअर्स का कहना है कि अगर भारत को अपनी वृद्धि दर को बढ़ाना है तो इन्फ्रास्ट्रक्चर कार्यक्रमों में तेजी

* सहायक प्राध्यापक अर्थशास्त्र, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर माहविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

आनी होगी। जिस हिसाब से देश में शहरीकरण बढ़ रहा है उससे सड़क और रेल की कनेक्टिविटी बढ़ाने की जरूरत है। बिजली की भी जरूरत है। लेकिन धीमी रफ्तार और लंबी अवधि की फण्डिंग की कमी के कारण अपेक्षित विकास इस क्षेत्र में नहीं हो पा रहा है। आईएमएफ के आँकड़ों के मुताबिक अगले 5 वर्षो के दौरान भारत की इस क्षेत्र में 1 खरब डॉलर से ज्यादा राशि की जरूरत पड़ेगी। विदेशी निवेश को तथा निजी निवेश को बढ़ावा देने की जरूरत है। परन्तु इस क्षेत्र में भ्रष्टाचार तथा कानूनों के कारण कई राज्यों में लगने वाली बिजली परियोजनाएँ अटकी पड़ी हैं।

राज्यों में अटकी हुई परियोजनाओं की संख्या :-

राज्य	अटके प्रोजेक्ट
छत्तीसगढ़	02
पंजाब	37
मध्यप्रदेश	07
हिमाचल प्रदेश	07
महाराष्ट्र	12
हरियाणा	46

स्त्रोत - पर्यावरण मंत्रालय

''मँहगाई के दौर में सरकारी खर्च में कमी लाने की जरूरत है। खाद्य सुरक्षा बिल के लागू होने से खाद्य सब्सिडी 10 प्रतिशत स्तर का पार कर लेगा। इसके काफी मात्रा में पूँजी की जरूरत होगी परन्तु IME तथा World Bank जैसी अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों के विकास अनुमान घटाने से भी निवेशकों में निराशा फैलती है अत: एफडीआई को बढ़ाने की चुनौतियों से निपटना कठिन जान पड़ रहा है।

एफडीआई को बढ़ाने के लिए सरकारी प्रयास :-

वर्तमान नीति के तहत अधिकतर लोगों में स्वचलित रीति-नीति के जरिये 100 प्रतिशत तक एफडीआई की इजाजत है। इसमें न तो सरकार की ओर से न RBI की पूर्व मंजूरी लेना जरूरी है निवेशकों के लिए बस इतना जरूरी है कि वे भेजी गयी रकम के मिलने के बाद 30 दिन के अंदर RBI के क्षेत्रीय कार्यालय को सूचित करें और विदेशी निवेशकों को शेयर जारी करने के बाद 30 दिन के अंदर इस कार्यालय में आवश्यक दस्तावेज जमा कर दें।

विदेशी निवेश सीमा को बढ़ाने के लिए कदम उठाने के अतिरिक्त ब्रिक्स सम्मेलन (26 एवं 27 मार्च 2010) में जिसका उद्देश्य ढ़ाँचागत क्षेत्र में निवेश बढ़ाना और सतत् विकास के जरिये अंतर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था की सेहत सुधारने वृहद् आर्थिक स्थिरता सुनिश्चित करने के उपायों पर विचार-विमर्श करना था। एक डेवलपमेंट बैंक का ऐलान किया गया है। जिससे ब्रिक्स देशों के बीच व्यापार बड़े तथा बुनियादी संरचना का विकास है।

इसी तरह आसियान सम्मेलन में भाग लेकर, चीन, रूस की राजकीय यात्राओं के जरिये एफडीआई को आकर्षित करने की कोशिश की गयी थी।

एफडीआई पर निर्भरता :-

यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि एफडीआई से प्राप्त राशि का या तो मनरेगा, खाद्य सुरक्षा जैसी योजनाओं पर या फिर वेतन वृद्धि के लिए ज्यादातर उपयोग किया गया है जबकि, इसका सदुपयोग हाइवे तथा इंटरनेट के लिए किया जाना चाहिये। तभी, इसका लाभ होगा क्योंकि, लाभांश प्रेषण का भार बढ़ता रहा है। 2011 में 8 अरब डॉलर और 2012 में 2 अरब डॉलर लाभांश प्रेषण हुआ। इसके अलावा फेडरल रिजर्व या डॉलर पर इतनी अधिक निर्भरता ठीक नहीं है यह जरूरी है कि समय रहते हम अपनी नीतियों को दुरुस्त कर ले तथा अमेरिका पर निर्भरता कम करने के उपायों के बारे में सोचें। एक तरफ बहुत कोशिशों से USA आगे बढ़ा है। सोवियत यूनियन को नष्ट कर दिया गया, दुनियाभर में पूँजीवाद का प्रचार किया और अपने नागरिकों का जीवनस्तर व आय को बहुत अधिक ऊपर उठा दिया। पिछले 60 वर्षो में अमेरिका ने यूनिवर्सिटी व हाइवे बनाये, साइंस व स्पेस, रिसर्च को फंड दिया और इन सबके साथ दुनिया में मशहूर सबसे अधिक उत्पादन और शक्तिशाली प्राइवेट सेक्टर के विकास को बढ़ावा दिया। दूसरी ओर कई पंचवर्षीय योजनाओं के बाद भी यह अत्यंत शर्म का विषय है कि ग्लोबल स्लेवरी इंडेक्स, की रिपोर्ट के मुताबिक दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश भारत में दुनिया के सबसे ज्यादा 14 मिलियन लोग दास के रूप में हैं, 46 प्रतिशत कुपोषित बच्चे हैं, 26 करोड़ 90 लाख गरीब हैं।

एफडीआई के साथ-साथ हमें अपनी घरेलू अर्थव्यवस्था पर भी ध्यान देना होगा, हमें अपनी प्रतिस्पर्धा की क्षमता बढ़ानी होगी। आईएम.डी. वर्ल्ड कंपीटिवनेस रैंकिंग 2013 में भारत की रैंकिंग गिरी है, सन् 2009 से ही यह गिरावट है। 2009 में जहाँ हम 30वें स्थान पर थे 2013 में 40वें पायदान पर आ गए हैं। विदेशी निवेश का प्रवाह कमजोर रहने बढ़ते व्यापार घाटे कारोबार से जुड़े नियमों के कोई खास अनुकूल नहीं रहने तथा अस्थिर मुद्रा के चलते ही भारत की प्रतिस्पर्धा क्षमता उम्मीदों के अनुरूप नहीं सुधर पा रही है।

इसके अलावा रिसर्च के क्षेत्र में भी हम काफी पीछे हैं आर्थिक सर्वेक्षण 2013 के मुताबिक वर्तमान में भारतीय कंपनियाँ देश के कुल GDP का सिर्फ 0.7 प्रतिशत हिस्सा R & D पर खर्च कर रही है। यह आँकड़ा चीन के मुकाबले आधा है। हालांकि भारत में वैज्ञानिक शोध के बेहतरीन केन्द्र में संस्थाएँ मौजूद हैं इसके बावजूद क्रिक्स देशों के मुकाबले भारत की शोध क्षमता कम है।

इसके अलावा, निर्माण खनन की कमियों को सुधारने की जरूरत है। सरकार को निजी निवेश बढ़ाने के सकारात्मक माहौल बनाने की जरूरत है। प्रोजेक्ट क्लीयरेंस के अलावा ओर भी कई उपाय करने होंगे। जिससे सार्वजनिक निवेश को बढ़ावा मिले।निष्कर्ष के रूप में हम यह कह सकते हैं कि सरकार को अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिए निवेश की अत्यंत आवश्यकता है चाहे वह आंतरिक निवेश हो या फिर विदेशी निवेश। मंहगाई कम करने, घाटे को कम करने, इन्फ्रास्ट्रक्चर तथा औद्योगिक व मैन्युफैक्चरिंग उत्पादन बढ़ाने रिसर्च, शिक्षा-प्रशिक्षण के हालात सुधारने होंगे जिससे आमदनी हो तथा विदेशी निवेशक का भरोसा भी भारतीय अर्थव्यवस्था पर हो तथा जब एफडीआई आये तो उसे अनुत्पादक कार्यों में न लगाकर देश के विकास में लगाना होगा। एफडीआई का प्रबंधन और नियमन सही ढंग से करके ही देश की अर्थव्यवस्था को विकास पथ पर अग्रसर किया जा सकता है तथा तभी शायद हम विकसित अर्थव्यवस्थाओं में शुमार हो पायेंगे।

संदर्भ:-

1. वैश्विक आर्थिक मंदी चिंता एवं विकल्प'' - रविकांत दुबे प्रकाशक, राजभाषा पुस्तक प्रतिष्ठान दिल्ली।
2. उदारीकरण की तानाशाही (राजनीति पर भूमण्डलीकरण के प्रभाव का विश्लेषण) प्रेमसिंह, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली।
3. विकीपीडिया।
4. योजना - अप्रैल 2012
5. Southern Economist volume 50 July 15, 2011
6. इण्डिया टूडे 14 अगस्त 2013
7. बिजनेस भास्कर दि. 23 अप्रैल, 19 जून, 13 जून, 18 अक्टूबर 2013
8. नई दुनिया 13 जून 2013
9. 'लोकमंच' कार्यक्रम लोकसभा चैनल 9 अक्टूबर 2013।
10. 'Policy watch programme rajya Sabha Channel 20 Oct. 2013.

कृषि विकास एवं पर्यावरणीय ह्रांस एक अध्ययन

कु. अर्चना आर्य *

प्रस्तावना – प्राकृतिक पर्यावरण की संरचना अजैविक तथा जैविक दो संगठकों द्वारा होती है। अजैविक संगठकों में पैड़-पौधे मानव सहित जीव जन्तु तथा सूक्ष्म जीवों को शामिल किया जाता है। इन पर्यावरण तंत्र की क्रियाशीलता एवं नियंत्रण इन्हीं दो भौतिक एवं जैविक प्रक्रमों द्वारा होता है। ये प्रक्रम इस तरह कार्य करते हैं कि यदि पर्यावरण के किसी क्षेत्र में किसी संघटक या संघटकों में कोई परिवर्तन होता है तो उनकी अन्य परिवर्तनों द्वारा समुचित भरपाई हो जाती है, वास्तव में किसी भी पर्यावरण तंत्र की क्रियाशीलता तथा सन्तुलन उसके ऊर्जा प्रवाह एवं जैव-भू-रासायनिक चक्र द्वारा संभव होता हे। वर्तमान शताब्दी में जनसंख्या में आशातीत वृद्धि के कारण प्राकृतिक संसाधनों पर अधिक दबाव पड़ा है।

1860 के बाद आधुनिक प्रौद्योगिक में तीव्र गति से प्रगति तथा मनुष्य की आर्थिक क्रियाकलापों में वृद्धि के कारण प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन में और तीव्रता आयी है। इन सबका परिणाम यह हुआ है कि पर्यावरण के कुछ संघटकों में इतना अधिक परिवर्तन हो गया है कि उनकी क्षतिपूर्ति पर्यावरण के अन्तर्निमित स्वत: नियामक क्रियाविधि द्वारा संभव नहीं रह गया है। भौतिक पर्यावरण ह्रास या अवनयन कहते हैं। पर्यावरण में ह्रास के लिए उत्तरदायी मानव के अनेक कार्यो में एक ''कृषि विकास'' है।

'हरित क्रान्ति' के नारे को चरितार्थ करने के लिए कृषि उत्पादन में अधिकाधिक विकास का प्रयास किया जा रहा है तथा गति से बढ़ती जनसंख्या की उदरपूर्ति के लिए यह आवश्यक भी है। परन्तु इस कृषि विकास का पर्यावरण से समस्थैतिक क्रियाविधि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। हरित क्रान्ति या उन्नत पैदावार के लिए अपनाई गई 'रासायनिक कृषि' मिट्टी की उर्वरा को बढ़ाने की बजाए उसे स्थाई रूप से बर्बाद कर रही है। हमारे पारिस्थिकी तंत्र में मिट्टी एक महत्वपूर्ण और जीवंत इकाई है। एक ग्राम उपजाऊ मिट्टी में लगभग 10 करोड़ जीवाणु और 500 मीटर के बराबर कवक के धागे होते हैं। इसके अतिरिक्त मृदा तंत्र हजारों प्रकार की शैवाल कोशिकाएँ, विषाणु, आर्थोपोड एवं केंचुआ जैसे अन्य जीवों की शरणस्थली भी है। मिट्टी के पोषक शक्ति को बढ़ाने के लिए रसायनों, कीटनाशकों एवं जहरीले तत्वों का होने वाला प्रयोग आधार चक्र के माध्यम से जानवरों एवं मनुष्य के स्वास्थ्य को प्रभावित करती है। उपजाऊ भूमि पर हो रहे नित्य नये निर्माण तथा वनों की कटाई से बाढ़ तथा मृदा संरक्षण की प्रक्रिया में तेजी आई है। जनसंख्या वृद्धि के साथ बढ़ी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए 1960 के दशक में कृषि भूमि पर जापान में 7.3 प्रतिशत से लेकर नार्वे 1.5 प्रतिशत की दर नई आधारभूत संरचनाओं का निर्माण किया गया। भारत में जहां एशिया की कुल आबादी का लगभग 27 प्रतिशत लोग निवास करते हैं वहीं कृषि योग्य भूमि की स्थाई संरचनाओं से ढका जाना तथा मृदा क्षरण दोनों की तेज दर है। भूक्षरण स्वयं की भूमि प्रदूषण के लिए जिम्मेदार है। 10 सेंटीमीटर ऊपरी मृदा के बनने में 100 से 400 वर्ष का समय लगता है इसलिए मिट्टी का नष्ट होना एक प्रकार से सीमित और अनवीनीकरण सम्पदा का नुकसान है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. कृषि क्षेत्र में विस्तार से वनों एवं पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।
2. कीटनाशक रासायनिक के प्रयोग से खाद्यानों के पोषक तत्वों की कमी व पर्यावरण ह्रास पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन।

शोध विधि –प्रस्तुत शोध में द्वितीयक समंकों के द्वारा विषय से संबंधी जानकारी एकत्र की गई है प्रस्तुत शोध में द्वितीयक समंकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

(1) कृषि क्षेत्र में विस्तार से पर्यावरण में ह्रास कृषि क्षेत्र में भावी विस्तार वनों का सफाया द्वारा ही सम्भव हो सकता है, वनों के विनाश होने से दो तरह के परिणाम सामने आ रहे हैं। एक तो प्रत्यक्ष परिणाम वह है जिसका प्रभाव तत्काल मनुष्य के सामने उपस्थित हो गया है। जैसे वनों के व्यापक स्तर पर व्यापारिक कटाई किये जाने से इमारती लकड़ी के साथ-साथ जलाऊ लकड़ी के अभाव का सर्वाधीक प्रभाव निर्धन लोगों पर पड़ता है। खाद्य एवं कृषि संगठन (FAO) के अनुमान के अनुसार विश्व के 1.3 करोड़ लोग लकड़ी की कमी वाले क्षेत्रों में निवास करते हैं यदि जनसंख्या वृद्धि से प्रेरित लकड़ी काटने की स्थिति इस प्रकार बनी रही तो 2020 ई. तक 4.8 अरब लोग ऐसे क्षेत्रों में रहेंगे जहां लकड़ी दुर्लभ होगी तथा अन्यत्र से आयात (मंगानी) करनी पड़ेगी। वनों के तीव्र गति से कटते जाने से इमारती लकड़ी तथा फर्निचर की लकड़ी की कीमत अत्यधिक ऊँची हो गयी है वनों के नष्ट होने से जो प्रत्यक्ष क्षति होती है उससे बहुत अधिक क्षति अप्रत्यक्ष रूप में होती है। यह कुप्रभाव स्थानीय न हो कर विस्तृत क्षेत्रों तक फैल जाता है एक तो वन विनाश के कारण 'जल चक्र' प्रभावित होता है क्योंकि वन वर्षा के जल को नियन्त्रित करता है। वनों के कट जाने के कारण जल शीघ्र ही प्रवाहित होकर सागर में पहुँच जाता है और मानव इसका समुचित लाभ नहीं उठा पाता।

आज मानव विभिन्न माध्यमों से अधिकाधिक मात्रा में कार्बन डाई आक्साइड वायुमण्डल में फैलाते जा रहा है जबकि इसको अवशोषित करने वाला उपकरण वन समाप्त होते जा रहे हैं परिणाम स्वरूप वायुमण्डल के निचले स्तर में कार्बन डाई आक्साइड का स्तर (सान्द्रढ़) बढ़ता जा रहा है जिससे हरित ग्रह प्रभाव बढ़ता जा रहा है।

फलत: विगत सौ वर्षो में वायुमण्डल के निचले स्तर का औसत तापमान 1 से.ग्रे. तक बढ़ गया है। वर्तमान दर से वायुमण्डल में कार्बन के प्रभाव से 2030 तक यह 2 से 4.5 से.ग्रे. तक बढ़ जाने की सम्भावना है। ताप की इस वृद्धि के कारण जल-चक्र प्रभावित होगा, हिमानियाँ पिघल जायेगी जिससे सागर के जल स्तर में वृद्धि होगी तथा तटवर्ती स्थल का निम्न भाग जलमग्न हो सकता है। ताप वृद्धि का प्रभाव कृषि पर भी व्यापक रूप से पड़ेगा तथा फसलों की उपज 3 से 17: तक घट जायेगी।

दूसरी तरफ रूस के 'स्टेफी' संयुक्त राज्य अमेरीका व कनाडा के 'प्रेयरी' दक्षिणी अमेरिका के 'पम्पाज' दक्षिण अमेरिका के 'वेल्ड' तथा न्यूजीलैण्ड के 'डाउन्स' जैसे शीतोष्ण घास क्षेत्रों को व्यापक स्तर पर साफ करके कृषि क्षेत्रों में बदल गया है इस प्रक्रिया द्वारा मानव समाज का यद्यपि पर्याप्त कल्याण हुआ है, परन्तु साथ ही साथ उन क्षेत्रों की पर्यावरणीय सन्तुलन में अव्यवस्था भी उत्पन्न हुई है। इन क्षेत्रों में एक ध्यान कृषि के कारण जन्तुओं का भारी संख्या में अन्यत्र विसरण हुआ है इस तरह उष्ण एवं उपोष्ण प्रदेशों

* पीएच.डी. शोधार्थी अर्थशास्त्र, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

के कई देशों मे स्थानानतरणीशील के कारण लाखों वर्ग कि,मी वन क्षेत्र नष्ट हो चुके है। एक मात्र भारत मे झूर्मिंग कृषि के कारण प्रतिवर्ष 10 हजार वर्ग कि.मी वन क्षेत्र का विनाश होता है। आसाम तथा मेघालय के पहाड़ी क्षेत्र पर वनों के साफ करके बड़े पैमाने पर आलू की कृषि का विकास किया गया है जिससे मृदा अपधटन में कई गुना वध्दि हुई है और मौसम तथा जलवायु सम्बधी दशाओं में भारी परिवर्तन हुए है। इस प्रकार हिमाचल प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश के पहाड़ी जिलों मे वनों को साफ करके सेब की कृषि अपनाये जाने के कारण हिमालय के पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। सेब की कृषि में व्यापक स्तर पर विस्तार होने तथा सेब की पैकिंग के लिये पर्याप्त लकड़ी जुटाने में प्राकृतिक वनो का अन्धाधुन्ध विदोहन किया गया है।

तालिका - 1
वन क्षेत्र की दृष्टि से विश्व के शीर्ष दस देश

क्र.सं.	देश	वन-क्षेत्र (लाख हेक्टेयर में)
1	रूस	809
2	ब्राजील	519
3	कनाडा	310
4	अमेरिका	304
5	चीन	206
6	कांगो (प्रजातांत्रिक गणराज्य)	154
7	ऑस्ट्रेलिया	149
8	इन्डोनेशिया	94
9	सूडान (अविभाजित)	96
10	भारत	68

स्त्रोत : खाद्य एवं कृषि संगठन की वैश्विक वन संसाधन आँकलन (GFRA) 2012

(2) कृषि भूमि की उत्पादकता में वृध्दि से पर्यावरण में ह्रास बढ़ती जनसंख्या के भरण पोषण हेतु दूसरा विकल्प है। कृषि योग्य भूमि का अधिक गहन उपयोग जिससे प्रति हेक्टेयर अधिक उत्पादन हो सके इसके लिए गहरी सिंचाई उन्नतशील बीजों रासायनिक खादों एवं कीट-नाशक दवाओं की आवश्यकता पड़ती है।

भारत में हरित क्रान्ति के अन्तर्गत कृषि के प्रत्येक पक्ष में प्रगति हुई है, गहरी सिंचाई के लिए नहरों का विकास किया गया है, सिंचाई एवं विद्युत उत्पादन हेतु नदियों पर बनने वाले विशाल बाँधों एवं जलाशयों से चाहे जितना भी तत्कालीक उपयोग प्राप्त हो पर वह भविष्य में आंशकित पर्यावरण ह्रास से होने वाली क्षति को कभी नहीं भर पायेगा। प्रति हेक्टेयर अत्यधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए दूसरा महत्वपूर्ण कदम रासायनिक उर्वरकों तथा कीट-नाशक दवाओं का प्रयोग है।

इनका भारी मात्रा में उपयोग किया जा रहा है। फसलें समस्त रासायनिक पोषक तत्वों का उपयोग नहीं कर पाती है इस तरह उपर्युक्त रसायनों का मिट्टीयों में लगा तार संचय होता है जिससे उनका प्रदूषण प्रारंभ हो जाता है। इन रसायनों का कुछ भाग वर्षा के जल के साथ बहकर तालाबों, झीलों तथा नदियों में पहुँच जाता है जिससे जल प्रदूषित होता है।

भूमि का कुछ रसायन रिसकर भूमि में चले जाता है जो भूमिगत जल को भी प्रदूषित करता है। इस प्रकार खरपतवार एवं फसलों के रोगों को दूर करने के लिए प्रयोग किए जाने वाले कीटनाशी कृत्रिम रसायनों के कारण मिट्टियों एवं विभिन्न स्त्रोतों के जल का भारी प्रदूषण होता है। उदाहरण के लिए अमोनिया सल्फेट के अधिक प्रयोग के कारण मिट्टियों में अम्लता बढ़ जाती है पोटेशियम एवं सोडियम नाइट्रेट के अधिक प्रयोग के कारण मिट्टियों में इनकी मात्रा अधिक हो जाती है।

सब्जियों, फलों तथा खाद्यानों के माध्यम से मानव शरीरों में पहुँचते हैं तथा रासायनिक अभिक्रिया द्वारा कई प्रकार की भयंकर रोग उत्पन्न करते हैं। सब्जियों तथा फलों पर कीटनाशक दवाओं के छिड़काव के कारण ये जहरिले पदार्थ वायु एवं जल प्रदूषण के साथ-साथ कुछ भाग मानव शरीर में पहुँच कर पेट संबंधी अनेक रोगों को जन्म देते हैं।

अधिकांश विकासशील देश जो गहन कृषि के लिए भारी मात्रा में उर्वरकों का उत्पादन नहीं कर सकते वे औद्योगिक विकसित देशों से आयात करते हैं। इस उर्वरक आयात के भुगतान हेतु विदेशी मुद्रा की आवश्यकता पड़ती है। विदेशी मुद्रा अर्जन करने के लिए या तो विदेशों से कर्ज लेना पड़ता है या कच्चे माल अथवा कृषिगत नगद फसलों का निर्यात करना पड़ता है।

दोनों ही स्थिति में देश और निर्धन होता चला जाता है और ऋण जाल में उलझ जाता है। 2012 स्टॉक होम में हुए मानवीय पर्यावरण पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन की 40वीं वर्षगाँठ (1972) और **रियो द जनेरो** में सम्पन्न पर्यावरण एवं विकास पर संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन की 20वीं वर्षगाँठ (1992) का वर्ष है। स्टॉक होम में स्व.इंदिरा गाँधी ने निम्नलिखित शब्दों में बिना पर्यावरण को कोई क्षति पहुँचाए आर्थिक विकास के मापन में सामाजिक संतोषणीयता का आयाम जोड़ दिया था।

निष्कर्ष -

वर्तमान समय में बढ़ती मानव जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए कृषि के विस्तार एवं विकास की रफ्तार को निश्चित ही कायम रखना है। परन्तु साथ ही साथ यह भी देखना होगा कि कृषि के विकास की बढ़ती गति के फलस्वरूप पर्यावरण ह्रास की समस्या कहीं भयावह रूप न धारण कर ले।

वर्ष 2010-11 में हुए सर्वे मुताबिक पिछले चार वर्षों में दिल्ली में 61 हजार 3 सौ 50 पेड़ काटे गये यही हाल लगभग देश के दूसरे स्थानों का भी है। पेड़ काटने से जंगल खत्म होते जा रहे है लेकिन पेड़ लगने की स्थिति ना के बराबर है जिसका प्रभाव पर्यावरण पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ रहा है जो कि एक चिन्ता जनक विर्षय है।

अत: कृषि विकास के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

संदर्भ सूची -

1. एस.के.स्वामीनाथन मठ (2012) पर्यावरण और विकास'' योजना नई दिल्ली।
2. शर्मा एस.सी. एवं त्रिपाठी डी.एन. (1989) आदर्श कृषि विकास'' (गोरखपुर)
3. करण महेश्वर प्रसाद (1994) भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था।
4. प्रभात कुमार (2012) पर्यावरण प्रदूषण एवं आकस्मिक संकट पर्यावरण एवं विकास (इंदौर म.प्र.)

****

भारत की अर्थव्यवस्था का विश्लेषण एवं सम्भावनाएँ

सबलसिंह ओहरिया *

आर्थिक मंदी के परिणाम स्वरूप बैंकों की संपत्तियों की गुणवत्ता में गिरावट आई, इसका प्रभाव सरकारी क्षेत्र के बैंकों पर अधिक पड़ा। सन् 2010-2011 के अन्त तक सरकारी क्षेत्र के बैंकों की सम्पत्तियाँ 3.4 प्रतिशत से बढ़कर 2011-2012 के अन्त में 4.5 प्रतिशत हो गयी थी। चालू खाता घाटे तथा राजकोषिय घाटों में गिरावट के कारण वैश्विक निवेशकों में कमी आई है, लगातार आर्थिक अस्थिरता के परिणामस्वरूप विदेशी रेंटिग ऐजेन्सियों ने भारत को अर्थव्यवस्था में विदेशी निवेश प्रभावित हो रहा है। इन कमियों को दूर करने के लिए सब्सिडी तथा कर सुधार की आवश्यकता हैं। और इस प्रकार की सतर्कता के कारण ही देश में आर्थिक मंदी को रोका जा सकता है। भारत की अर्थव्यवस्था एक निम्न आय वाली विकासशील अर्थव्यवस्था है। आय के असमान वितरण के कारण भारत की जनसंख्या का एक बड़ा भाग गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करता है।

वर्तमान वैश्विक अर्थव्यवस्था में भारतीय अर्थव्यवस्था का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। वैश्विक मन्दी का प्रभाव भारतीय अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा है। इसके बाद भी भारतीय अर्थव्यवस्था में व्यापक सम्भावनाएँ विद्यमान है। वैश्विकरण नीति अपनाने के बाद भारतीय अर्थव्यवस्था को नई दिशा प्राप्त हुई। वैश्विकरण का मूख्य उद्देश्य वस्तुओं एवं सेवाओं के व्यापार का विस्तार करना था किन्तु इसका विस्तार सभी देशों में समान रूप से नहीं हुआ इसका लाभ का अधिकतर भाग औद्योगिकृत देशों और 12 विकासशील देशों के समूह को प्राप्त हुआ।

सबसे कम विकसित देशों के समूह को प्राप्त हुआ। सबसे कम विकसित देशों के समूह के विश्व व्यापार के भाग में गिरावट आई इसके बाद भी इन देशों ने व्यापार में उदारीकरण की नीति को कार्यान्वित किया हैं। वर्ष 1990 से 2005 की 15 वर्ष की अवधि में भारत में विश्व वस्तु निर्यात में 12.7 प्रतिशत औसत प्रतिवर्ष वृद्धि हुई किन्तु विश्व व्यापार में भारत की हिस्सेदारी में विशेष वृद्धि नहीं हुई और यह 1950 में 0.52 प्रतिशत से बढ़कर 2005 में 0.990 प्रतिशत हो गया। सेवा क्षेत्र निर्यात में भारत निष्पादन सापेक्षता बेहतर था, सेवा क्षेत्र निर्यात जो 1990 में 4.6 अरब डालर था, जो बढ़कर 2005 में 56.1 अरब डालर हो गया अर्थात् इस अवधि में औसत वार्षिक वृद्धि दर 18.1 प्रतिशत थी। गत दो वर्ष में भारतीय अर्थव्यवस्था का मूल्यांकन प्रतिकूल परिणाम को प्रदर्शित करती है, वर्ष 2011-2012 में भारतीय अर्थव्यवस्था के कार्य निष्पादन क्षमता में कमी आई तथा यह देश की अर्थव्यवस्था के औसत कार्य निष्पादन क्षमता से नीचे गिर गयी।

भारतीय अर्थव्यवस्था की नकारात्मक प्रदर्शन में घरेलू तथा वैश्विक गतिविधियों का परिणाम था। वैश्विक समष्टि आर्थिक एवं वित्तीय अनिश्चितता कमजोर बाह्य मांग बढ़ी हुई कीमतें निवेश में कमी आदि कारणो से भारतीय अर्थव्यवस्था के निष्पादन क्षमता में कमी आई संरचनात्म बाधाओं नीतिगत अनिश्चिता मुद्रा स्फीति में वृद्धि तथा ब्याज दरों में वृद्धि के कारण देश में निवेश प्रभावित हुआ है। व्यापक राजकोषीय एवं चालु खाता घाटे तथा उच्च मुद्रा स्फीति के कारण लोक कल्याण पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। इसका बचत, निवेश तथा वित्तीय सम्पत्तियों पर तथा घरेलू बचतो पर विपरीत प्रभाव पड़ा तथा बचत कर्ताओं की वास्तविक बचतों एवं वित्तीय उत्पादों के वास्तविक मूल्यों में कमी आई है।

उच्च मुद्रा का विपरीत प्रभाव रोजगार एवं आय पर पड़ा, तथा वास्तविक आय एवं रोजगार की मात्रा में कमी आई। मुद्रा स्फीति की वृद्धि दर को नियन्त्रित करने के लिए रिजर्व बैंक द्वारा मौद्रिक नीति पर नियंत्रण की नीति अपनाई गयी जिसके परीणामस्वरूप मुद्रा स्फीति की दर में गिरावट तो आई किन्तु इसका विपरीत प्रभाव उत्पादन क्षेत्रों पर पड़ा, जिसके आर्थिक प्रबन्धन के क्षेत्र में अनेक कठिनाईयाँ उत्पन्न हुई हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था का कार्य निष्पादन भारत जैसे अर्थव्यवस्था वाले अधिकांश देशों से बेहतर रहा लेकिन इसकी क्षमता और वास्तविक वृद्धि में कमी आई साथ ही वैश्विक मंदी का देश की अर्थव्यवस्था पर भी प्रभाव पड़ा।

राजकोषीय घाटा के कारण ब्याज दरों में गिरावट आई जिसका विपरीत प्रभाव निवेश के क्षेत्र में पड़ा तथा निजी निवेशकों ने निवेश वापस ले लिए सरकारी व्ययों की अधिकता के प्रभाव से चालू खाता घाटा में वृद्धि हुई, इस प्रकार मुद्रा स्फीति में कमी ने विभिन्न आर्थिक क्षेत्रों में विपरीत प्रभाव डाले। कठोर मौद्रिक नीति के कारण रिजर्व बैंक ने बैंक दरों में वृद्धि रोक दि, जिसका विपरीत प्रभाव चल निधि की उपलब्धता पर पड़ा। रिजर्व बैंक ने बैंकिंग प्रणाली में मुद्रा और चलनिधि में वृद्धि करने का काम शुरू किया। वर्ष 2009-2010 और 2010-2011 में जहाँ आर्थिक वृद्धि दर 8.4 प्रतिशत दर्ज की गयी थी । वही 2011-12 में वृद्धि दर गिरकर 6.5 प्रतिशत तथा वर्ष 2011-2012 की चौथी तिमाही में घटकर 5.3 प्रतिशत वृद्धि दर रही जो अन्तिम 29 तिमाहियो में सबसे कम थी। प्रारंभिक संकेतो के अनुसार वर्ष 2012-2013 की पहली तिमाही में आर्थिक गतिविधियों का स्तर धीमा रहा, परिणामस्वरूप औद्योगिक वृद्धि में कमी आई तथा निवेश संबंधित गतिविधियों में विपरीत प्रभाव पड़ा। मौद्रिक नीति को कठोर बनाने के परिणाम स्वरूप प्रभावी उधार दर में वृद्धि हुई।

आर्थिक मंदी के परिणामस्वरूप बैंक की सम्पत्तियों की गुणवत्ता में भी गिरावट आई इसका प्रभाव सरकारी बैंकों पर अधिक पड़ा। 2010-2011 के अंत तक सरकारी क्षेत्र के बैंकों की अनार्जक सम्पत्तियाँ 2.3 प्रतिशत से बढ़कर 2011-2012 के अंत तक बढ़कर कुल अग्रिमों का 3.2 प्रतिशत हो गया। चालु खाता घाटे तथा राजकोषिय घाटो में गिरावट के कारण वैश्विक निवेशकों में कमी आई रेंटिग एजेन्सियों ने भारत को सतर्कता सूची में रखा है जिसके कारण भारतीय अर्थव्यवस्था में विदेशी निवेश प्रभावित हो रहा है। इन कमियों को दूर करने के लिए सब्सिडी तथा कर नीतियों में सुधार की आवश्यकता है वर्ष 2012-2013 के लिए वृद्धि तथा विकास की सम्भावना कमजोर बनी हुई है। क्योंकि 2011-2012 के आर्थिक कारणों तथा वैश्विक स्थितियों के विशेष परिवर्तन नही हुआ है तथा आर्थिक समस्याओं के समाधान के विशेष प्रयास दिखाई नहीं पड़ रहे हैं। वैश्विक स्तर पर अग्रिमों में अस्थिरता के कारण वित्तीय बाजारो में दबाव की स्थिति बनी हुई है वैश्विक व्यापार में भी गिरावट की सम्भावना विद्यमान है क्योंकि नये बाजारों की वृद्धि में कमी यूरोपीय बाजार बढ़ती हुई मंदी तथा अमेरीका में मंदी से वैश्विक,

* शोधार्थी, राजीव गांधी शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय मन्दसौर, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन (म. प्र.) भारत

बाजार का विस्तार तीव्रता से प्रभावित हो रहा है। भारतीय अर्थव्यवस्था में सुधार की संभावना कम ही है क्योंकि नीतिगत अवरोध संरचनात्मक तथा चक्रिय समस्याओं ने संयुक्त रूप से अर्थव्यवस्था में मंदी की स्थिति निर्मित किया है। वर्तमान स्थिति में मुद्रा स्फीति अभिष्ट स्तर से अधिक है। सरकार द्वारा उक्त आर्थिक मंदी की स्थिति को दूर करने के लिए अनेक उपाय किये जाने का आश्वासन दिया गया है जिनमें राजकोषिय सुदृढ़ीकरण उपाय स्पष्ट और स्थिर कर व्यवस्था लागू करना विदेशी निवेश सहित आन्तरिक निवेश तथा बचतो को प्रोत्साहित करना मुद्रा स्फीति को नियंत्रित करने के लिए आपूर्ति पक्षीय उपाय करने की दिशा में कार्य करना।

राजकोषीय सुदृढ़ीकरण के अनेक प्रमुख निर्णय जैसे ईधन के मूल्यों में नियंत्रित वृद्धि अन्य सब्सिडियों को समाप्त करना माल तथा सेवाकर शुरू करना आदि प्रावधान किये जा रहे है। समस्याओं के बढ़ने के पूर्व उक्त प्रावधानों को लागू करने में थी अनेक नीतिगत समस्याएँ विद्यमान है यदि उक्त प्रावधानों को प्रभावशाली ढंग से लागू किया गया तो इस वर्ष के उत्तरार्ध में वृद्धि क्रमिक रूप से बढ़ सकती है। वर्ष 2012-2013 में राजकोषिय घाटा में गिरावट रहने तथा चालू घाटा अभिष्ट स्तर से अधिक रहने की सम्भावना हैं। वैश्विक अर्थव्यवस्था में अस्थिरता की स्थिति के कारण दोहरे घाटे से सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था में जोखिमों की मात्रा अधिक है। वर्ष 2012-2013 में विकास को बाधा डालने वाले कारकों में आधर भूत ढ़ाँचों से संबंधित समस्याएँ भी प्रमुख है। विनियामक एवं पर्यावरण ढ़ाँचे में संशोधन के अभाव में अनेक उद्योगों एवं खनन उद्योगों पर विपरीत प्रभाव पड़ा है।

इसी तरह की कुछ समस्याएँ दूरसंचार के क्षेत्र में भी बना हुआ है ऊर्जा के क्षेत्र में नये निवेशकों में कमी आ रही है। क्योंकि कोल लिक्रज तथा कीमत निर्धारण सम्बन्धित समस्याओं का उचित समाधान अभी तक नहीं निकाला जा सका है। सड़क परियोजनाओं को भी अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। अब तक मानसून की असंतोष जनक प्रगति के कारण वर्ष 2012-13 में वृद्धि के लिए नई अनिश्चिताएँ उत्पन्न हो गई है। वर्षा के स्थान मूलक अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ है कि मोटे अनाजों तथा दलहनों के कारण उत्पादनों में कमी आ सकती है। वर्ष 2012-13 के लिए मुद्रा स्फीति संबंधित सम्भावना पिछलों वर्षो की तुलना में बेहतर है गत वर्ष में लगातार वृद्धि गत मुद्रा स्फीति में कमी आने की संभावना हैं। पिछले दस वर्षो में भारत के आधारभूत क्षेत्रों में मुख्यत: निवेश हुए है जिसमें प्रत्यक्ष विदेशी निवेश भी शामिल थे यही कारण है कि भारत को चीन के बाद दूसरे स्थान पर विकासशील अर्थव्यवस्था का स्थान दिया गया।

वर्तमान परिदृश्य में नये निवेशकों में गिरावट आई है निवेशकों में कमी के कारण परियोजनाओं की सम्भावनाएँ प्रभावित हुएँ है। बैंक तथा वित्तीय संस्थानों के माध्यम से यह ज्ञात हुआ है कि वर्ष 2012-13 में बड़ी फर्मो द्वारा नये परियोजनाओं में किए गए कुल निवेशों में 48 प्रतिशत की कमी आई है। दूरसंचार सड़क परियोजनाओं तथा विमान क्षेत्रों में किए गए निवेशों में विशेष रूप से कमी आई है।

परिणामस्वरूप पूँजीगत उत्पादन क्षेत्रों में आदेशों के अभाव में विभिन्न उत्पादन क्षेत्रों में विपरीत प्रभाव पड़ा है, समष्टि आर्थिक दृष्टि से भारत इस समय ऊर्जा की कमी के कारण उत्पादन क्षैत्रों में अनेक समस्याएँ उत्पन्न हो रही है तथा ऊर्जा उत्पादन में वृद्धि के मार्ग भी अवरूद्ध है। 12वीं पंचवर्षीय योजना के क्रियान्वयन में लगभग 40 प्रतिशत ऊर्जा संबंधित आवश्यकताओं की पूर्ति आयात द्वारा पूरा करना होगा अत: आवश्यक है कि ऊर्जा संबंधित उप क्षेत्रों जैसे पेट्रोलियम प्राकृतिक गैस कोयला आदि के घरेलू उत्पादन बढ़ाने की आवश्यकता है। उपायो के अतिरिक्त देश में बैंकिंग तथा वित्ता संबंधित सेवाओं के भी विस्तार की आवश्यकता है, जिससे विकास एवं उत्पादन संबंधित कार्यो के लिए वित्तीय सुविधाएँ त्वरित उपलब्ध कराया जा सके।

संदर्भ सूची

1. एस.पी. सिंग, आर्थिक विकास का नियोजन।
2. रूद्र दत्त एवं सुन्दरम्, भारतीय अर्थव्यवस्था।
3. वार्षिक रिपोर्ट - भारतीय रिजर्व बैंक परिशिष्ट सितम्बर 2012
4. मनोरमा ईयर बुक 2012।
5. Jha N. K. Indion Economy "Dhankar Publications Pvt. Ltd." 259Prabhat NagarMeerut -250001(U.P.)
6. भारत में बैंकिंग की प्रवृति एवं प्रगति संबंधी रिपोर्ट भारतीय रिजर्व बैंक परिशिष्ट नवम्बर 2012।
7. दैनिक समाचार पत्र द इकानॉमिक टाईम्स।
8. रोजगार निर्माण नवम्बर-2012।

****

ग्रामीण भारत के विकास का कल और आज

डॉ. अनिल कुमार जैन *

नगरों का निर्माण मनुष्य ने किया है, तथा ग्राम ईश्वर द्वारा बनाए गये है। इस प्राचीन उक्ति से ग्राम जीवन की प्राचीनता और महत्व प्रतिपादित होता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारी सभ्यता और संस्कृति का स्वाभाविक पूर्ण विकास ग्रामों के अंचल में ही हुआ है। आर्य संस्कृति के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद में जिस सभ्यता के संकेत मिलते है, उसका पल्लवन ग्रामों में ही हुआ था। हमारा भारत ग्रामों का देश है 'सुजला, सुफला, मलयज शीतलां, शस्य श्यामलां मातरम' कहकर हमारे राष्ट्रगान में जिस मातृभूमि का चित्रण किया गया है, वह हमारे देश के ग्राम प्रधान स्वरूप को ही प्रदर्शित करता है।

भारत की तीन चौथाई आबादी गांवों में निवास करती है। इसका कारण ही भारत को गांवों का देश कहा जाता है। भूमि, जन और जनकी संस्कृति से राष्ट्र बनता है, अत: भारत के समग्र विकास का मूल्याकंन का आधार ग्रामीण विकास ही हो सकता है। इस सच्चाई को भारत में लोकतंत्र की स्थापना के बाद ही, गंभीरता से महसूस किया गया और ग्रामीण विकास को, संपूर्ण नियोजन प्रक्रिया में अहम् महत्व दिया हैं।[1]

ऐतिहासिक दृष्टि से ग्रामीण विकास कार्य का प्रारंभ ब्रिटिश शासन से माना जा सकता है। सन् 1866 तथा 1880 में आये भीषण अकाल के प्रभाव को कम करने के लिये भूमि, सुधार, सिंचाई कार्य, यातायात विस्तार आदि के कार्य शासन ने प्रारंभ किये थे। ग्रामीण विकास के लिये कुछ व्यक्तिगत किये गये प्रयास भी उल्लेखनीय महत्व के है, यथा-रविन्द्रनाथ टैगोर द्वारा 1921 में श्री निकेतन ग्रामीण पुन: निर्माण परियोजना, इसी वर्ष में डॉ. स्पैंसर हैच द्वारा मातीडम परियोजना सन् 1927 में एफ.एल.ब्रायन द्वारा गुडगांव परियोजना तथा सन् 1936 में महात्मा गांधी द्वारा प्रारंभ सेवा ग्राम परियोजना आदि मुख्य है।[2]

ग्रामीण विकास वस्तुत: एक बहु विविध संकल्पना है। इसका क्रियान्वयन शासन, स्वशासन, ऐच्छिक सामाजिक संगठन तथा ग्रामवासियों के सामूहिक तथा व्यक्तिगत सम्मिलित सहयोग से ही संभव है। ग्रामीण विकास से तात्पर्य है, हमारे कृषि प्रधान देश में ग्रामों में निवास करने वाले ग्रामीण लोगों के जीवन स्तर एवं परिवेश में सुधार के साथ विकास के सभी आर्थिक, सामाजिक तथा राजनीतिक क्षेत्र में उन्हें समता तथा न्याय के अधिकार सम्पन्न बनाना।

इस उद्देश्य से ग्रामीण विकास की कार्य योजना में, कृषि तथा इससे सहायक गतिविधियाँ, ग्रामीण और कुटीर उद्योग, शिल्पकारी, सामाजिक आर्थिक अधोसंरचना, सामुदायिक सेवाऐं - शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात आदि ग्रामीण क्षेत्र के मानव संसाधन विकास के सभी कार्य सम्मिलित है। इन सभी घटकों का उन्नयन ही ग्रामीण विकास है। इसकी उपलब्धि यह होगी कि ग्रामवासी एवं ग्रामीण जन जो अभी तक सत्ता व समाज द्वारा उपेक्षित विविध अभाव एवं कठिनाईयों से भरा जीवन जी रहे है। वे मुक्त होकर आत्म निर्भर बने एवं देश के समग्र विकास में बराबरी का अपना भाग प्राप्त कर सके। इसके लिये भारत सरकार, राज्य सरकार, स्वशासन तथा समाज द्वारा किये गये प्रयास दृश्यव्य हैं -

इनमें भारत सरकार द्वारा पंचवर्षीय योजनाओं द्वारा ग्रामीण विकास का दीर्घकालीन कार्यक्रम तैयार किया गया। प्रथम पंचवर्षीय योजना सन् 1951-1956 में कृषि विकास को लक्ष्य में रखकर सिंचाई और बिजली के विकास पर केन्द्रित थी, किन्तु इसके अतिरिक्त 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम (1952) तथा 'राष्ट्रीय विस्तार सेवा कार्यक्रम (1953)' भी ग्रामीणों को दिशा दर्शन करने एवं दीर्घकालीन विकास को सुनिश्चित करने के उद्देश्य से प्रारंभ किये गये थे।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण उद्योगों को प्राथमिकता दी गई। इस योजना के अंतर्गत ''खादी एवं ग्रामीण उद्योग कार्यक्रम (1957), विशेष पैकेज कार्यक्रम (1960), ग्रामीण आवासीय परियोजना (1957), बहुउद्देशीय अनुसूचित जाति विकासखण्ड कार्यक्रम (1957) गहन जिला कृषि कार्यक्रम (1960) आदि क्रियान्वित किये गये। इसी प्रकार तीसरी पंचवर्षीय योजना भी ग्रामीण विकास पर केन्द्रित रही। इसमें ग्रामीण उद्योग परियोजना (1962), गहन क्षेत्र कार्यक्रम (1964) तथा कृषक प्रशिक्षण और शिक्षा कार्यक्रम (1966) कुआ निर्माण कार्यक्रम (1966) आलित किये गये।

उपर्युक्त तीनों योजनाओं में पर्याप्त धनराशि व्यय करने के पश्चात् भी अपेक्षित परिणाम नहीं मिले। शिव की जटा में ही ग्रामीण कल्याण की गंगा उलझकर रह गई। इन योजनाओं के लिये शासन ने लक्ष्य, समय-सीमा तथा व्यय धनराशि निश्चित की थी, अत: ये अधिकारियों के फर्जी आंकड़ों और कार्यो का विवरण मात्र बनकर रह गई।

आम कृषक तक इनके कार्य, कार्य प्रणाली व लाभ की गूंज नहीं पहुँची, क्योंकि इसके लिये पर्याप्त साधन, सुविधा, प्रशिक्षण और मैदानी कार्यकर्ताओं का अभाव था। योजनाओं को मूर्तरूप देने के लिये सद्इच्छा और नियंत्रण का अभाव होने से इसका लाभ ग्रामीणों को नहीं मिला। कतिपय साधन सम्पन्न शिक्षित ग्रामीण अवश्य इससे लाभान्वित हुए। ये योजनाऐं देश में भ्रष्टाचार के रूप में काफी चर्चित रही हैं।

आर्थिक कारणों से चौथी योजना (1969-74) देर से प्रारंभ हुई। इसमें विकास की अवधारणा व कार्यक्रम में बदलाव किया गया। छोटे व सीमान्त किसानों, खेतिहर मजदूरों को ध्यान में रखकर नये कार्यक्रम प्रारंभ किये गये। इनमें ''ग्रामीण जनशक्ति कार्यक्रम (1969),' 'सूखा क्षेत्र प्रवण कार्यक्रम (1970)', 'ग्रामीण रोजगार नगदी योजना (1971)' 'जनजाति क्षेत्र विकास कार्यक्रम 1972', ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (1972)' विशेष उल्लेखनीय है। पांचवी पंचवर्षीय योजना ''लघु कृषक विकास एजेन्सी (1974)पूरे देश में कृषि यंत्रों एवं कृषि निवेशों हेतु किये गये प्रयत्नों के रूप में विशेष महत्वपूर्ण रही है। इसी योजनाकाल में बीस सूत्रीय कार्यक्रम (1977) के आठ महत्वपूर्ण विषयों को ग्रामीण विकास में सम्मिलित किया गया। इनमें मानव संसाधन विकास के रूप में शिक्षा स्वास्थ्य, पेयजल, विद्युत, सम्पर्क मार्ग तथा महिलाओं और बच्चों हेतु पौष्टिक आहार व आवास स्थल आदि सम्मिलित है।

छठवीं योजना का नारा गरीबी उन्मूलन तथा मजदूरी परक रोजगार, ग्रामों में उपलब्ध कराने पर केन्द्रित रही है। इसके अन्तर्गत ''राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम लागू किया गया। सातववीं पंचवर्षीय योजना (1985-90) में ग्राम पंचायतों की सहभागिता निश्चित करने के लिये ग्रामीण भूमिहीन

* सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

रोजगार योजना समाप्त कर उसके स्थान पर ''जवाहर रोजगार योजना (1989) द्वारा केन्द्र सरकार से प्राप्त संसाधनों से 80 प्रतिशत सीधे पंचायतों को हस्तान्तरित करने की व्यवस्था की गई। योजना के क्रियान्वयन में जनभागीदारी को लंबे अंतराल बाद महत्व दिया गया।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) द्वारा शिल्पकारों को आय में वृद्धि के लिये ''उन्नत टूल किट्स योजना (1992), चालू की गई। इसके साथ-साथ ''पेयजल योजना'' तथा ''ग्रामीण अनाज बैंक योजना (1996)'' प्रारंभ की गई। नवीं योजना में गरीबी निवारण तथा रोजगार मूलक योजनाओं को समाप्त कर'' स्वर्ण जयंती स्वरोजगार योजना'' के द्वारा प्रतिपादित किया गया कि मात्र ऋण व अनुदान वितरण करना ही पर्याप्त नहीं है। इसका उद्देश्य ऐसा वातावरण बनाना रहा, जिससे स्वरोजगारी स्वयं उद्यमी बन सके। इसके साथ ही ''जवाहर ग्राम समृद्धि योजना'' तथा सुनिश्चित रोजगार योजना'' को मिलाकर नई ''संपूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना 2001'' प्रारंभ की गई। नवीं योजना की ''प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना'', स्वजलधारा कार्यक्रम (2002) तथा समग्र आवास योजना (1999) आदि भी महत्वपूर्ण है।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007) काल में प्रारंभ की गई। ''राजीव गांधी ग्रामीण विद्युतीकरण योजना (2005), ''भारत निर्माण योजना (2005), ''राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन कार्यक्रम (2005), ''वर्षा बीमा योजना (2005), आधारभूत संरचना के विकास तथा स्वास्थ्य एवं वर्षा बाढ़ से हानि से रक्षा हेतु इनका महत्व है। इस योजनाकाल की सर्वाधिक चर्चित योजना ''राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना'' है, जिसके द्वारा ग्रामवासियों को वर्ष में 100 दिन के रोजगार की गारंटी सुनिश्चित की गई है।[3] वर्तमान में 11 वीं योजना चल रही है।

ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। अत: योजनाओं में सर्वाधिक महत्व कृषि क्षेत्र को दिया गया। प्रथम योजना में कुल व्यय 1960 करोड़, इसमें 377 कृषि पर, दूसरी योजना व्यय 4672 करोड़, कृषि पर 20.9 प्रतिशत तीसरी योजना का व्यय 8577 करोड़ कृषि पर 20.5 प्रतिशत, चतुर्थ योजना का कुल व्यय 15579 करोड़ इसमें कृषि पर 23.3 प्रतिशत, पंचम योजना का व्यय 39426 करोड़ कृषि पर 22.1 प्रतिशत, छठी योजना में कुल व्यय 109392 करोड़ कृषि पर 23.7 प्रतिशत, सातवीं योजना में व्यय 218730 करोड़ में कृषि पर 20 प्रतिशत आठवीं योजना में 485457 करोड़ व्यय हुआ जिसमें कृषि का भाग 20.9 प्रतिशत रहा, नवीं और दसवीं योजनाओं में कुल व्यय का कृषि पर 19.9 प्रतिशत खर्च हुआ। इससे स्पष्ट है कि ग्रामीण विकास में सिर्फ कृषि पर पूरी योजना का लगभग 21-22 प्रतिशत धन खर्च हुआ। शेष राशि स्वास्थ्य, शिक्षा, उद्योग, रोजगार तथा समाज कल्याण कार्य पर व्यय हुई।[4]

ग्रामीण भारत की तस्वीर बदलने के लिये आजादी के बाद सरकार द्वारा किये गये योजनाबद्ध प्रयास निसंदेह प्रशंसनीय रहे हैं। इसका सबसे बड़ा और महत्वपूर्ण प्रमाण है, हमारी हरित क्रांति जिससे हम खाद्यान्न उत्पादन में न सिर्फ आत्मनिर्भर हुए वरन भारत को खाद्यान्न निर्यात का भी अवसर मिला है। कृषि उत्पादन में वृद्धि के समान्तर औद्योगिक विकास, परिवहन तथा सामुदायिक विकास में भी भारत ने विकास के अपूर्व उदाहरण प्रस्तुत किये हैं।

यथार्थ में विकास परिवर्तन की प्रक्रिया हैं। यह प्रक्रिया आर्थिक प्रगति के साथ सामाजिक न्याय से भी जुड़ी होती है। सत्ता के सारे प्रयास प्राय: मुख्य रूप में (विकास के प्रयास) भौतिक उपलब्धियों को लेकर ही होने के कारण सामाजिक न्याय का लक्ष्य पिछड़ जाता है। आर्थिक उपलब्धियों का लाभ भी प्राय: दबंग उठा लेते है। इसलिये आंकडों द्वारा विकास की उपलब्धियों पर गर्व सिर्फ संतोष का विषय अवश्य हो सकता है। विकास की प्रकृति बहुआयामी है, जो बहुत कुछ देश की आर्थिक सामाजिक एवं राजनैतिक स्थितियों के अनुरूप सत्ता की नीति व रीति के अनुरूप परिवर्तित होती है। इसीलिये विगत 60-65 वर्षो में जो प्रयास किये गये वे औपचारिक होने से ग्रामीण समाज की दशा व दिशा को बदलने में सफल नहीं रहे हैं। यह स्थिति इसलिये बनी कि योजनाओं व कार्यक्रमों का निर्माण व क्रियान्वयन ग्रामीण समाज की अपनी सांस्कृतिक विरासत व ऐतिहासिक अनुभवों को ध्यान में रखते हुए राजनैतिक दृष्टि से दिल्ली में वातानुकूलित कक्षों में बैठे आई.ए.एस. अफसरों द्वारा किया गया। साथ ही नियोजन की संपूर्ण प्रक्रिया, भूगोलविदों तथा मनोवैज्ञानिकों की प्रतिक्रिया को नकारते हुए अर्थशास्त्रियों की पैतृक सम्पत्ति के रूप में स्वीकृत की गई है। निचले स्तर से नियोजन, विकेन्द्रिकरण एवं बहुस्तरीय नियोजन की प्रक्रिया को सैद्धान्तिक स्तर पर अपनाकर भी उसे कागज पर बनाये रखा गया।

ग्रामीण विकास की महत्ता को, संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी स्वीकार करते हुए, विकासोन्मुख राष्ट्रों के लिये अपने सन् 1970 के प्रस्ताव द्वारा ग्रामीण विकास संकल्पना का प्रतिपादन किया है। (प्रस्ताव संख्या 2681) इस प्रस्ताव के संदर्भ में मार्च 1976 में भारत के तत्कालीन वित्त मंत्री एस.सुब्रह्मण्यम ने समन्वित ग्रामीण विकास की प्रकृति और क्षेत्र का विश्लेषण इन शब्दों में किया है ''समन्वित ग्रामीण विकास का तात्पर्य आवश्यक संस्थागत एवं व्यवहारिक परिवर्तन लाकर प्रसार विधियों द्वारा न केवल आर्थिक विकास हेतु, अपितु सामाजिक विकास हेतु भी आवश्यक अवस्थापनात्मक सेवायें प्रदान करके, लोगों एवं क्षेत्र का संपूर्ण विकास किया जाना है। जिसका अंतिम लक्ष्य ग्रामीण विकास के गुणात्मक सुधार है।''

विकास और विनाश की दशा व दिशा समय और परिस्थिति तथा अन्य कारणों से भी प्रभावित होती है। परिवर्तन प्रकृति का नियम है, परन्तु मानव संस्कारवश परम्परावादी होता है। वह सहज ही पुरातन का त्याग कर नवीन को स्वीकार करने की जोखिम लेना स्वीकार नहीं करता है। इसके बाद भी जब बदलाव की आंधी आती है तो सब कुछ बदल ही देती है। इलेक्ट्रानिक संचार क्रांति ने कैसे दिन-रात में दुनिया को हाथ में सीमित ग्राम बना दिया है। ऐसे में अब ग्रामीण और नगरीय विकास की बात ही बेमानी हो गई है।

भारत में प्रधानमंत्री सड़क योजना ने प्राय: ग्रामों को उपनगर बना दिया है। आर्थिक समृद्धि की होड़ में उद्योगपति से आज का ग्रामीण कृषक पीछे नहीं है। प्याज की एक फसल में, महाराष्ट्र के गांव के एक किसान ने सवा करोड़ का उत्पादन विक्रय किया। मालवा के एक ग्रामीण ने अपने गांव में ही अंगूर की बेटी शराब का उत्पादन प्रारंभ कर निर्यात के क्षेत्र में प्रवेश किया है। नीमच जिले के 2000 की आबादी वाले गांव में 22 ट्रेक्टर है, और घर-घर में मोटर साइकिल (परिवार के प्रति सदस्य के मान से उपलब्ध है। लगभग सभी घरों को बिजली की सुविधा प्राप्त है। जहां कल ग्रामीण आदिवासी के हाथ ट्रांजिस्टर के तराने गुंजते थे, वहां आज महंगे मोबाईल से मिलने का समय तय हो रहा है। कभी खाद बीज के प्रयोग से परहेज करने वाला किसान, आज ब्लेक में, मनमाने रेट पर इनका क्रेता है। यही किसान एक दिन पन बिजली योजना के बड़े बांधों के पानी को सिंचाई के अनुपयुक्त मानता था कि इस पानी से बिजली निकालने के कारण पानी शक्ति रहित हो गया है, वहीं आज इस पानी का उपयोग अपने लिए वरदान मान रहा है।

सामाजिक क्षेत्र में भी अस्पृश्यता का आज नामो निशान नहीं है। छूआ-छूत भी मिट गई है। हरिजन आदिवासी ग्राम प्रधान है। ग्राम पंचायतों को 73

वें संविधान संशोधन द्वारा संवैधानिक अधिकार मिलने से सत्ता का विकेन्द्रीकरण हुआ है तथा विकास की गंगा प्रवाहित हुई है। उससे आज के गांव गांधीजी के स्वप्नों के अनुरूप लगभग स्वावलम्बी होते जा रहे। परिवहन व संचार के साधनों से व्यक्ति व परिवार की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति हो रही है। राजनीतिक अधिकारों में वृद्धि हुई है। भारत की प्रथम लोकसभा में जहाँ कुल 97 सांसद कृषक थे, वहां क्रमश: वृद्धि होते हुए तेरहवीं लोकसभा में 230 कृषक पहुँचे है। प्रतिनिधित्व का प्रतिशत 22.4 प्रतिशत से निरन्तर बढ़ते हुए 42.6 प्रतिशत पर पहुँच गया है। देश की राजनीति में कृषकों का प्रभावी नेतृत्व हित समूह और दबाव समूह के रूप में अपनी महत्ता बना चुका हैं। ग्रामीणों के लिये सत्ता में अवसर बढ़े है। अवसर की समानता सभी वर्गो को समान रूप में प्राप्त है। शिक्षा, चिकित्सा, आवास व रोजगार आदि सुविधाओं का विस्तार लगातार जारी है। शिक्षक और चिकित्सक तथा अधिकारियों की उपलब्धता पर जरूर प्रश्न चिन्ह लगता है।[5]

चिंता का विषय सिर्फ यह है कि ग्रामीण परिवेश में, नगरीकरण की बुराईयों का भी प्रवेश तेजी से हो रहा है। मद्यपान, राजनीतिक दल बंदी, स्वार्थपरता, शोषण तथा अंधविश्वास आदि प्रवृत्तियों से ग्रामीण जीवन की आदर्श नैतिक भातृत्व भाव व सहिष्णुता पर आधारित सामाजिक व्यवस्था विकृत हो रही है। बाजारवाद की भौतिकता की चकाचौंध का आकर्षण अपराधों में वृद्धि का कारण बन रहा है। देश में फैल रहा भ्रष्टाचार गांवों में भी न्यायपूर्ण मानवीय अधिकारों के संरक्षण में सबसे बड़ी बाधा है।

बैल और बैलगाड़ी का युग समाप्त हो गया है। सन् 1947 का गांव व भारत आज कहीं नहीं है, ग्रामीण विकास का विषय अब इतिहास बन गया है। अत: यह शोधार्थी के अध्ययन और किताबी निष्कर्ष के विषय के रूप में महत्वपूर्ण है। मैदानी स्थितियाँ आज राष्ट्रीय नहीं, अन्तर्राष्ट्रीय दृश्य और निर्णयों से प्रभावित होती है, क्योंकि वैश्वीकरण ने दुनियां की तस्वीर हथेली पर रख दी है।

संदर्भ ग्रंथ :-

1. भारद्वाज डॉ. संजय कांत, गुप्ता सारिका : ग्रामीण विकास - एक मूल्याकंन : ए जरनल ऑफ एशिया फार डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेन्ट मुरैना (2008), पृष्ठ-17
2. पुनिया बी.एस. : भारत में ग्रामीण विकास - एक सिंहावलोकन : कुरूक्षेत्र (अगस्त 2004) पृष्ठ 15-19
3. अग्रवाल उमेशचन्द्र : ग्रामीण विकास में पंचवर्षीय योजनाओं की भूमिका : कुरूक्षेत्र (अक्टूबर 2007) पृष्ठ33-42
4. आर्थिक सर्वेक्षण : योजना मंत्रालय : भारत सरकार सन् 2008
5. जैन डॉ. अनिलकुमार : भारत में ग्रामीण विकास का सच : सम्पादकडॉ.एस.अखिलेश : सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज रीवा (2010) पृष्ठ 59-65

****

सशक्तिकरण पर महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन (ग्राम तिल्लौर खुर्द के विशेष संदर्भ में)

डॉ. हेमलता चौहान *

सारांश– वर्तमान बदलते परिवेश में महिला सशक्तिकरण की बात की जा रही है। किसी भी समाज का पूर्ण विकास स्त्री पुरूष के सामंजस्य पूर्ण सहयोग पर निर्भर करता है। सशक्तिकरण होने से महिलाएँ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि सभी क्षेत्रों में महत्व भूमिका का निर्वहन कर सकती है। अत: महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए राजनीतिक और प्रशासकीय स्तर पर तो प्रयास किये जा रहे हैं उसमें सबसे अधिक आवश्यकता है कि स्वयं महिलाओं की भागीदारी बढ़े। वर्तमान में आरक्षण के चलते महिलाएँ राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, व्यवसायिक और अंतर्राष्ट्रीय स्तर के पदों पर सहभागिता कर रही है। पर क्या वे वास्तव में सक्रिय हैं ? क्या राजनीतिक सक्रियता से ही महिलाओं का सशक्तिकरण हो जाएगा ? अत: इस समस्या के अध्ययन के लिए ग्राम तिल्लौर खुर्द के विशेष संदर्भ में शोध कार्य किया गया। जिसमें महत्वपूर्ण कारण उभरकर सामने आए । शोधकार्य में महिलाओं के सशक्तिकरण तथा उनकी राजनीतिक सक्रियता को बढ़ावा देने के लिए कई महत्वपूर्ण उपाय भी सुझाए गए हैं।

की वर्ड–सशक्तिकरण , राजनीतिक सक्रियता ।

प्रस्तावना –एक आदर्श समाज स्त्री और पुरूषों के सामंजस्यपूर्ण योगदान का नाम है। यह सामंजस्यपूर्ण योगदान तभी संभव है, जब सभी वर्गों के साथ समानता का व्यवहार हो और दोनों के स्तरों में बहुत अधिक अंतर न हो। महिलाएँ प्रारंभ से ही शोषित वर्गों की श्रेणी में रही है। जिससे महिलाओं को समानता का दर्जा नहीं मिल पाया।

हजारों वर्ष तक शोषित होने के कारण महिलाएँ समाज का मुख्य अंग न होकर उपभोग की वस्तु बन गयी। वर्तमान के इस प्रगतिशील युग में महिलाओं के योगदान की आवश्यकता महसूस की जाने लगी है। यही कारण है कि महिलाओं की महत्ता को स्वीकार किया जाने लगा है और उनके सशक्तिकरण की बात भी की जाने लगी है। 'सशक्तिकरण' वास्तव में महिलाओं की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक तथा अन्य क्षेत्रों में निर्णयात्मक मजबूती का नाम है।

सशक्तिकरण से वह समाज के विकास में अपना योगदान दे सकती है जिससे समाज में उसकी अपनी पृथक पहचान भी होगी। महिलाओं के इस प्रकार के सशक्तिकरण के लिए राजनीतिक तथा प्रशासकीय स्तर पर विभिन्न प्रयास किये जाते रहे हैं। किन्तु सर्वाधिक आवश्यकता है, स्वयं महिलाओं की सक्रियता की। यहाँ 'सक्रियता' से तात्पर्य है महिलाएँ स्वयं विकास के विभिन्न पहलुओं से जुड़कर अपने सशक्तिकरण के लिए प्रयास करे। प्रश्न यह उठता है कि क्या केवल राजनीतिक सक्रियता से ही महिलाओं का सशक्तिकरण हो जाएगा ? अत: शोधकर्ता द्वारा 'सशक्तिकरण' पर महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है।

उद्देश्य कथन – प्रस्तुत शोध में 'सशक्तिकरण' पर महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता के प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन ग्राम तिल्लौर खुर्द के विशेष संदर्भ में किया गया है।

अध्ययन का महत्व –

(1) महिलाओं के सशक्तिकरण के वर्तमान स्तर का पता चल सकेगा।

(2) महिलाओं की विभिन्न क्षेत्रों में सक्रियता का पता चल सकेगा ।

(3) विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं की भागीदारी नहीं होने के कारणों का पता चल सकेगा ।

(4) अध्ययन से महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु तथा उनकी सक्रियता में वृद्धि हेतु महत्वपूर्ण उपाय सुझाये जा सकेंगे ।

शोध क्षेत्र की सीमाएँ :–

(1) महिलाओं के सशक्तिकरण पर उनकी राजनीतिक सक्रियता के अध्ययन हेतु इन्दौर जंक्शन के ग्राम तिल्लौर खुर्द का चयन किया गया है ।

(2) अध्ययन के लिए ग्राम की 40 महिलाओं का चयन शोध प्रविधि के आधार पर किया गया है ।

(3) अध्ययन के लिए 20 प्रश्नों की प्रश्नावली को आधार बनाया गया जो Nominal होंगे । प्रश्नों के उत्तार ''हाँ'' , ''नहीं'' के विकल्प में दिए गए हैं।

पूर्व साहित्य की समीक्षा –

सुधीर सक्सेना (2011) ने 'महिला सशक्तिकरण के यथार्थ और चुनौतियाँ' विषय पर चर्चा करते हुए लिखा कि सशक्तिकरण के लिए वर्तमान सरकारी प्रयास ही पर्याप्त नहीं है। अपितु इसमें और भी अधिक प्रयासों की आवश्यकता है। शीला वर्मा (2011) ने भी विकास कार्यक्रमों में जनजातीय महिलाओं पर योजनाओं के प्रभावों का अध्ययन करते हुए महिला सशक्तिकरण हेतु स्वयं उनकी जागरूकता की चर्चा की है।

विषय वस्तु –

महिलाओं का सशक्तिकरण विभिन्न कारणों से प्रभावित होकर स्वयं उनकी सक्रियता की मांग करता है। ये सक्रियता मात्र राजनीतिक न होकर समाज के सभी क्षेत्रों में होनी चाहिए क्योंकि, राजनीतिक रूप से सक्रिय महिलाएँ भी सशक्तिकरण से दूर हो सकती है। कभी–कभी राजनीतिक रूप से सक्रिय न रहने वाली महिलाओं का भी सशक्तिकरण हुआ है। महिलाओं के सशक्तिकरण को उनकी राजनीतिक सक्रियता कितना प्रभावित करती है इस बात का अध्ययन करने के लिए इन्दौर जंक्शन के ग्राम तिल्लौर खुर्द गाँव का चयन किया गया। ग्राम तिल्लौर खुर्द इन्दौर से 15.1 कि.मी. तथा अपने मण्डल से 14.1 कि.मी. की दूरी पर स्थित है। इस ग्राम की आबादी 5821 (2001 की जनगणना के अनुसार) है। जिसमें सामान्य वर्ग की 288 महिलाएँ और 315 पुरूष , पिछड़ा वर्ग की 876 महिलाएँ और 1003 पुरूष , अनुसूचित जाति वर्ग की 697 महिलाएँ और 702 पुरूष, अनुसूचित जनजाति वर्ग की 915 महिलाएँ और 1027 पुरूष हैं। ग्राम में 1066 परिवार निवास करते हैं जिनमें 69% हिन्दू , 17% मुस्लिम और शेष 14% अन्य समुदायों के लोगों का निवास है। औद्योगिक क्षेत्र इन्दौर के नजदीक होने के कारण गाँव का काफी विकास हुआ है। यहाँ सड़कों का सीमेन्टीकरण लगभग पूरे गाँव में हो चुका है। यह कहना गलत नहीं होगा कि इस गॉव का विकास सार्वभौमिक रूप में हुआ है। किन्तु अत्यधिक भौतिक विकास के

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान), शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.) भारत

बावजूद महिलाओं का सशक्तिकरण पूर्ण रूप से नहीं हो पाया है। ग्राम की जिन महिलाओं का राजनीतिक पदों पर चयन हुआ है वे आरक्षण व्यवस्था के कारण पद धारण किए हुए है। अधिकांश महिलाएँ अभी भी शिक्षित नहीं है जबकि राजनीति में सक्रिय है। उन्हें अपने अधिकारों और सुविधाओं का ज्ञान नहीं है। महिलाएँ स्वयं आगे बढ़कर किसी प्रकार की सक्रियता दिखाने में झिझकती है। अत: 'सशक्तिकरण पर महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता के प्रभाव' का अध्ययन किया गया।

अध्ययन के उद्देश्य –

(1) महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता का अध्ययन करना ।
(2) महिलाओं को गैर सक्रिय क्षेत्रों में भागीदारी के कारणों का अध्ययन करना।
(3) महिलाओं के सशक्तिकरण के वर्तमान स्तर का पता लगाना ।
(4) महिलाओं के पूर्ण सशक्तिकरण हेतु उपाय सुझाना ।
(5) महिलाओं की विभिन्न क्षेत्रों में सक्रियता बढ़ाने हेतु उपाय सुझाना ।

शोध अध्ययन की परिकल्पनाएँ –

शोध अध्ययन की परिकल्पानाएँ इस प्रकार है :-

Ho :- (1) महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता और सशक्तिकरण परस्पर निर्भर है।

Ha :- (1) महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता और उनके सशक्तिकरण में परस्पर संबंध नहीं है।

Ho :- (2) महिलाओं का सशक्तिकरण उनकी राजनीतिक निष्क्रियता से प्रभावित होता है।

Ha :- (2) महिलाओं के सशक्तिकरण का उनकी राजनीतिक निष्क्रियता से कोई संबंध नहीं है।

Ho :- (3) राजनीतिक सक्रियता से महिलाओं की सशक्तिकरण में वृद्धि होने और नहीं होने में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

Ho :- (4) राजनीतिक रूप से गैर सक्रिय महिलाओं के सशक्तिकरण होने और नहीं होने में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

अध्ययन विधि – महिलाओं के सशक्तिकरण पर उनकी राजनीतिक सक्रियता के प्रभाव का अध्ययन करने के लिए चयनित ग्राम तिल्लौर खुर्द से 40 महिलाओं का चयन उद्देश्यीकृत निर्दशन विधि से किया गया। 26 ऐसी महिलाओं का चयन किया गया जो राजनीतिक रूप से सक्रिय हैं और 14 ऐसी महिलाओं का चयन किया गया जो राजनीतिक रूप से सक्रिय नहीं है। महिलाओं का चयन करते समय उनके वर्ग का भी ध्यान रखा गया जिनके अनुसार अ.ज.जा. वर्ग से 08 महिलाएँ, अ.जा. वर्ग से 16 महिलाएँ, अ.पि.व. से 10 महिलाएँ और सामान्य वर्ग से 06 महिलाओं का चयन किया गया।

तालिका क्र. – 01
चयनित न्यादर्शी का विवरण

चयनित का क्षेत्र	वर्गवार चयनित न्यादर्शी की संख्या				कुल	प्रतिशत
	अजजा	अजा	अपिव	सामा.		
राजनीतिक रूप से सक्रिय	06 75%	10 62.5%	06 60%	04 66.67%	26 100%	65%
राजनीतिक रूप से सक्रिय नहीं	02 25%	06 37.5%	04 40%	02 33.33%	14 (100%)	35%
कुल	08 20%	16 40%	10 25%	06 15%	40 (100%)	100%

अध्ययन हेतु उपकरण – प्रस्तुत विश्लेषणात्मक अध्ययन हेतु शोधकर्ता द्वारा 'महिलाओं के सशक्तिकरण पर राजनीतिक सक्रियता से प्रभाव' का मापन करने के लिए **Nominal Scalled Method** का प्रयोग किया गया है। जिनमें प्रश्नावली तथा अनुसूचि हेतु 20 प्रश्नों का समावेश किया गया ।

सांख्यिकी विधियाँ –

प्रस्तुत अध्ययन में χ^2 **(Chi) test** का प्रयोग किया गया है।

आँकड़ो का विश्लेषण –

तालिका क्र. – 02
राजनीतिक रूप से सक्रिय और सक्रिय नहीं रहने वाली महिलाओं का संख्यात्मक विवरण

चयनित का आधार चयनित का क्षेत्र	सशक्तिकरण हुआ	सशक्तिकरण नहीं हुआ	कुल	प्रतिशत
राजनीतिक रूप से सक्रिय	08 31%	18 69%	26 (100%)	65%
राजनीतिक रूप से सक्रिय नहीं	10 71%	04 29%	14 (100%)	35%
कुल	18 45%	22 55%	40 (100%)	100%

उपरोक्त तालिका में χ^2 का आकस्मिक मूल्य सारणी मूल्य से अधिक है अत: स्पष्ट होता है कि राजनीतिक सक्रियता से ही सशक्तिकरण संभव नहीं है। राजनीतिक रूप से सक्रिय / निष्क्रिय महिलाओं के सशक्तिकरण का प्रतिशत 45% है जबकि राजनीतिक रूप से सक्रिय / निष्क्रिय महिलाओं के सशक्तिकरण न होने का प्रतिशत 55% है जो कि मात्र राजनीतिक सक्रियता और सशक्तिकरण के परस्पर संबंधित न होने की पुष्टि करते हुए महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता बताता है।

तालिका क्र. – 03
राजनीतिक रूप से सक्रिय और निष्क्रिय रहने वाली महिलाओं के सशक्त होने का विवरण

Frequency	fo	fe	$fo-fe$	$(fo-fe)^2$	$\frac{(fo-fe)^2}{fe}$	χ^2 का अंक मान
राजनीतिक रूप से सक्रिय	08	11.7	−3.7	13.69	1.17	$\chi^2 = 3.34$
राजनीतिक रूप से सक्रिय नहीं	10	6.3	+3.7	13.69	2.17	
कुल	18	18	0	27.38	3.34	

उपरोक्त तालिका में राजनीतिक रूप से सक्रिय रहने वाली महिलाओं के सशक्तिकरण और सक्रिय न रहने वाली महिलाओं के सशक्तिकरण का χ^2 का आकस्मिक मूल्य सारणी मूल्य से अधिक है जो .05 डिग्री स्तर पर देखा गया है। अत: राजनीतिक रूप से सक्रियता से ही महिलाओं का सशक्तिकरण संभव नहीं है क्योंकि आरक्षण व्यवस्था के कारण महिलाएँ राजनीतिक पदों को तो प्राप्त कर लेती है, किन्तु पदों से जुड़ी स्वतंत्रताओं और सुविधाओं के उपयोग में स्वयं सक्षम नहीं बन पायी है। साथ ही राजनीतिक सक्रियता किसी भी प्रकार से उनके सामाजिक, शैक्षणिक आदि सशक्तिकरण की कोई ग्यारंटी नहीं देती। न ही उन्हें अन्य क्षेत्रों में सशक्तिकरण के योग्य ही बनाती है।

अत: यह परिकल्पना की राजनीतिक सक्रियता और सशक्तिकरण परस्पर निर्भर है अस्वीकार की जाती है। महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता उनके सशक्तिकरण का एक पहलु मात्र है।

तालिका क्र. – 04
राजनीतिक रूप से सक्रिय रहने वाली और सक्रिय न रहने वाली महिलाओं के सशक्तिकरण न होने का विवरण

Frequency	fo	fe	$fo - fe$	$(fo - fe)^2$	$\frac{(fo - fe)^2}{fe}$	χ^2 का अंक मान
राजनीतिक रूप से सक्रिय	04	7.7	−3.7	13.69	1.77	$\chi^2 = 2.72$
राजनीतिक रूप से सक्रिय नहीं	18	14.3	+3.7	13.69	0.95	
कुल	22	22	0	27.38	2.72	

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि राजनीतिक रूप से सक्रिय रहने वाली और सक्रिय न रहने वाली महिलाओं के सशक्तिकरण न होने का χ^2 का आकस्मिक मूल्य सारणी मूल्य से अधिक है जो 05 डिग्री स्तर पर देखा गया। जो महिलाएँ राजनीतिक रूप से सक्रिय नहीं है उनके सशक्तिकरण न होने का यह कारण नहीं है। राजनीतिक रूप से गैर सक्रिय महिलाएँ जीवन के अन्य क्षेत्रों में सशक्त है ।

सामाजिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में निर्णयात्मक स्थिति में है। अपनी समझ, बुद्धि और कार्यक्षमता के आधार पर स्वयं का सामाजिक सशक्तिकरण कर सकी है। अत: यह परिकल्पना की महिलाओं का सशक्तिकरण उनकी राजनीतिक निष्क्रियता से प्रभावित होता है, अस्वीकार की जाती है।

तालिका क्र. – 05
राजनीतिक रूप से सक्रिय महिलाओं के सशक्तिकरण होने और न होने का विवरण

विवरण	संख्या	प्रतिशत
सशक्तिकरण हुआ	08	31%
सशक्तिकरण नहीं हुआ	18	69%
कुल	26 (65%)	100%

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि राजनीतिक रूप से सक्रिय महिलाओं के सशक्तिकरण होने का प्रतिशत 31% है जबकि सशक्तिकरण नहीं होने का प्रतिशत 69% है। राजनीतिक में सक्रिय महिला के सशक्तिकरण के पीछे उसकी सक्रियता न होकर संबंधित क्षेत्र में भी बराबर सक्रियता रही है। अत: यह परिकल्पना कि राजनीतिक रूप से सक्रिय महिलाओं के सशक्तिकरण होने और न होने में कोई सार्थक अंतर नहीं है। उपरोक्त प्रतिशत के अंतर के आधार पर अस्वीकार की जाती है।

तालिका क्र. – 06
राजनीतिक रूप से सक्रिय न रहने वाली महिलाओं के सशक्त होने और न होने का विवरण

विवरण	संख्या	प्रतिशत
सशक्तिकरण हुआ	10	71%
सशक्तिकरण नहीं हुआ	04	29%
कुल	14 (35%)	100%

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि राजनीतिक रूप से सक्रिय न रहने वाली महिलाओं के सशक्तिकरण होने का प्रतिशत 71% है जो कि राजनीतिक रूप से सक्रिय न रहने वाली महिलाओं के प्रतिशत 29% से कहीं ज्यादा है। ऐसी महिलाएँ जो राजनीतिक रूप से सक्रिय नहीं है और जिनका सशक्तिकरण नहीं हो पाया है वे किन्हीं विशेष कारणों से पिछड़ी होंगी।

मात्र राजनीतिक निष्क्रियता से नहीं । ऐसी महिलाएँ जीवन के किन्हीं भी क्षेत्रों में सक्रिय नहीं रहती होगी क्योंकि वे राजनीतिक रूप से सक्षम नहीं होगी। ऐसा माना जा सकता है किन्तु जीवन के सभी क्षेत्रों में मात्र इस कारण से सशक्तिकरण के पीछे नहीं रह सकती । अत: यह परिकल्पना कि राजनीतिक रूप से गैर सक्रिय महिलाओं के सशक्तिकरण होने और नहीं होने में कोई सार्थक अंतर नहीं है, अस्वीकार की जाती है।

निष्कर्ष और सुझाव – कृषि कार्य में संलग्न होने से लोगों की आर्थिक स्थिति अच्छी है। सामाजिक रूढ़ीवादिता के चलते अति उच्च शिक्षा को महिलाओं के लिए आवश्यक न मानते हुए भी बदलते परिवेश में महिलाओं की सामाजिक परिस्थिति में कुछ परिवर्तन आया है। जहाँ तक महिलाओं की राजनीतिक सक्रियता का सवाल है। गाँव के लोग महिलाओं को सक्रिय राजनीति के योग्य नहीं मानते । साथ ही उनकी सफलता को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। किन्तु आरक्षण व्यवस्था के चलते मजबूरीवश महिलाओं को चुनाव तो लड़वाया जाता है मगर राजनीति में उनकी सक्रिय भागीदारी पर आपत्ति लगायी जाती है।

अत: जो महिलाएँ राजनीति में सक्रिय है वे वास्तव में सक्रिय न होकर पुरूषों के कहने पर पद बचाने के लिए राजनीति में आयी है । इससे उनके सशक्तिकरण से इसका कोई मेल नहीं बैठता है। साथ ही वे महिलाएँ जो राजनीति से नहीं जुड़ी है किन्तु शिक्षा समझ तथा बदलते परिवेश के अनुरूप स्वयं को ढालते जाने के कारण सशक्त हो पायी है।

अत: राजनीतिक सक्रियता का महिलाओं के सशक्तिकरण से पूर्णतया निर्भरता वाला संबंध न होकर सम्पूर्ण और पहलू का संबंध है। महिलाओं की सम्पूर्ण क्षेत्रों मे सक्रियता और सशक्तिकरण आवश्यक है। इसके उपाय के रूप में महिलाओं को स्वयं भी अपने पिछड़ेपन की मनोवृत्ति से बाहर आना होगा और पुरूष प्रधान समाज को भी उन्हें समाज का मुख्य अंग मानकर बराबरी का दर्जा देना होगा तभी उनका सशक्तिकरण संभव है।

संदर्भ स्त्रोत –

- Indira & Rao B. Sambasiva (2005) 'Empowerment of women and Rural development' , Serial Publication , Delhi.

1. George, P.A. , 'Enlightenment of women & social changes, Northern Book Centre, New Delhi.
2. Anmon (1979) , 'Women and Society , Equality and Empowerment' , Kanisha Publications, New Delhi.
3. Kalbagh, C. (1999) Women and Development', Discovery Publishing house Vol. III.
4. Reddy, K.S. (1997) , 'Inequality Problems in men and women , Prajashakti Book house, Hyderabad.
5. रिसर्च बुलेटिन (अप्रैल 2011) , म.प्र. सामाजिक विज्ञान शोध समग्र, वर्ष–प्रथम, अंक – प्रथम, लोक विकास एवं अनुसंधान ट्रस्ट इन्दौर ।
6. विधायिनी, अप्रैल – जून 2011, म.प्र. विधान सभा सचिवालय, त्रैमासिक पत्रिका, वर्ष – 19, अंक 02 ।
7. चेतना, दैनिक समाचार पत्र, 'सफलता के हर पायदान पर है नारी' लेख, डॉ. हेमलता चौहान, 7 मार्च 2010, रतलाम, पृ.क्र. – प्लस

****

गाँधी के सपनों का भारत

डॉ. अनिल कुमार जैन *

गांधीजी युग पुरूष थे। वे भारत में ऐसी नवीन समाज व्यवस्था करना चाहते थे जो सत्य और अहिंसा पर आधारित हो, जिसमें किसी भी रूप में मनुष्य का शोषण न हो। जिसमें आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक सभी क्षेत्रों में विषमता के स्थान पर समता, प्रतिस्पर्धा के स्थान पर सहयोग और संघर्ष के स्थान पर सद्भावना और प्रेम का साम्राज्य हो।

गांधीजी के सपनों का भारत मूलत: रामराज्य के आदर्श का प्रतिरूप रहा है। महाकवि गोस्वामी तुलसीदास ने इस कल्पना को इन शब्दों में साकार किया है –

दैहिक दैविक भौतिक तापा, राम राज्य नहीं कहुहि व्यापा।
सबनर करहि परस्पर प्रीति, चलहि स्वधर्म निरत श्रुतिनीति ।।

गांधीजी स्वतंत्रता पश्चात् इन्हीं प्रतिमानों पर भारतीय समाज की नवरचना के आकांक्षी थे। गांधीजी का स्पष्ट और दृढ़ मत था कि भारत की आत्मा ग्रामों में बसती है। वास्तव में इस देश की आत्मा ही नहीं शरीर भी प्राय: ग्राम ही है। अतीतकाल से ही यहां राष्ट्रीयता के केन्द्र में ग्रामवासी और उनकी सभ्यता तथा संस्कृति रही है। अत: भारत के उत्कर्ष, अपकर्ष, प्रगति–अधोगति, समृद्धि–दारिद्रय का सम्यक अवलोकन तथा मूल्याकंन का आधार ग्राम ही हो सकते है। अत: स्पष्ट है स्वतंत्र भारत की शक्ति गौरव, राष्ट्रीय सम्मान और कीर्ति भारतीय ग्रामों की दशा और उनके विकास की दिशा पर ही निर्भर करेगी।[1]

लोकतंत्र की सार्थकता और सफलता राष्ट्र के आमजन के हित चिंतन पर निर्भर है। जन की शक्ति और सामर्थ्य पर ही सच्चा गणराज्य स्थापित किया जा सकता है। अत: गांधीजी प्रजातंत्र में सत्ता का केन्द्र नीचे से आरंभ करने के पक्षपाती थे। इसलिये गांधीजी संपूर्ण आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक चिन्तन, ग्राम विकास की अवधारणा पर निर्भर है। वे भारत के सभी साढ़े सात लाख ग्रामों को सर्व सत्ता सम्पन्न, गणराज्य रूप में विकसित देखना चाहते थे। उनकी दृष्टि स्पष्ट थी कि देश का प्रत्येक गांव एक स्वयं सम्पन्न गणराज्य हो, जो अपनी सभी प्रकार की आवश्यकताओं के लिये आत्मनिर्भर हो। उसमें अपना संपूर्ण प्रबंध करने की सामर्थ्य होना चाहिये। गांधीजी चाहते थे कि भारत का प्रत्येक गांव स्वावलम्बी बन जाय तो यही हमारा सच्चा स्वराज्य होगा। इस हेतु ग्राम पंचायतों को ही प्रशासन व व्यवस्था की सभी आधारभूत सत्ता देनी होगी और पंचायतों के माध्यम से ही सर्वोदय के लक्ष्य को प्राप्त किया जाना चाहिए। इसमें प्रत्येक ग्रामवासी की भूमिका सहकारिता के रूप में अनिवार्य होगी।

सत्ता के अधिकार मुट्ठीभर जनप्रतिनिधियों के हाथ में न होकर दलीय प्रजातंत्र के स्थान पर प्रत्यक्ष प्रजातंत्र प्रणाली के रूप में पंचायतों के हाथ में रहेगें। पंचायत क्षेत्र आत्मनिर्भर होकर अपनी आवश्यकताओं की व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप में पूर्ति के लिए उत्तरदायी रहेगा। सर्वोदयी समाज में जहां व्यक्ति को अपने जीवन साधन व विकास की पूर्ण स्वतंत्रता रहेगी। वह समाज में भातृत्व से उत्पन्न सहानुभूति व प्रेम से समता के अधिकार का भी अहिंसा रूप में उपभोग कर सकेगा। इस तरह गांधीजी के रामराज्य में, सपनों के भारत में – 1) ग्रामीण समुदायों को राजनीतिक और आर्थिक केन्द्र का रूप प्राप्त होगा। 2) सब व्यक्तियों का इस पर स्वामित्व रहेगा। 3) समाज में धर्म निरपेक्षता 4) आर्थिक व राजनीतिक विकेन्द्रीकरण 5) नैतिकता 6) लोकनीति व आदर्शो का पालन होगा।[2] गांधीजी का सर्वोदय आर्थिक रूप में सर्वजन हिताय, ग्रामोद्योग के विकास पर आधारित है। स्वाभाविक ही इसके लिये वे बड़े पैमाने पर औद्योगिकीकरण के पक्ष में नहीं थे। बड़े उद्योगों से, मशीनीकरण के कारण बेरोजगारी बढ़ती है तथा शहरीकरण को बल मिलता है। कृषि पर निर्भर देश की करोड़ों जनता की भूख और गरीबी मिटाने के लिये वे श्रम प्रधान अर्थनीति के समर्थक थे। उनके मतानुसार श्रम ही सुख और संतोष का स्त्रोत है। आत्मानुभूति और आत्मोत्कर्ष में श्रम से मदद मिलती है। यहां तक कि गांधीजी श्रम की विनिमय के माध्यम के रूप में भी उपयोग की कल्पना करते थे। उनका कहना था कि जीवित रहने के लिए मनुष्य को श्रम कार्य अवश्य करने होगें। वे सभी प्रकार के श्रम को समान मानते थे। उनका कहना था ''जो व्यक्ति बिना यज्ञ (श्रम) किए हुए भोजन करता है, वह चुराया हुआ अन्न खाता हैं।[3]

गांधीजी की सर्वोदय आधारित सपनों का भारत की कल्पना में शक्ति के विकेन्द्रीकरण के सिद्धान्त को राजनीति व अर्थनीति दोनों में समान रूप से लागू किया गया है। राजदर्शन में उनके अनुसार राज्य अनावश्यक है। व्यक्ति की आत्मा होती है, किन्तु राज्य आत्माहीन यंत्र है। हिंसा पर राज्य का पूरा अस्तित्व निर्भर है, उससे उसे कभी मुक्त नहीं किया जा सकता हैं। इसलिये समाज में व्यक्ति द्वारा अंगीकृत सत्य, अहिंसा, विवेक और न्याय आधारित, मानव मूल्यों की स्वीकृति और आध्यात्मिक विकास के द्वारा, राज्य के अस्तित्व को भी नकारा जा सकता है। यहां गांधीजी मार्क्स के समाजवादी चिंतन के निकट खड़े दिखाई देते है। कार्ल मार्क्स भी सर्वहारा क्रांति के पश्चात् वर्गहीन, राज्यहीन समाज की स्थापना चाहते थे। गांधी भी अन्ततोगत्वा राज्य का उन्मूलन चाहते है। अन्तर सिर्फ उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अपनाये जाने वाले साधनों की पवित्रता को लेकर ही है।[4]

गांधीजी के अनुसार आदर्श समाज की रचना के लिये पंचायतीराज के माध्यम से सत्ता का विकेन्द्रीकरण ही एकमात्र कारगर उपाय है। इसके माध्यम से लोकतंत्र की सर्वाधिक महत्वपूर्ण इकाई व्यक्ति की महत्ता स्थापित होती है। पंचायत की साधारण सभा में अंतिम प्रथम के समान होता है अर्थात् इस व्यवस्था में न कोई प्रथम है और न कोई अंतिम, समता मूलक समाज का यही आदर्श है। इसी तरह गांधीजी का आर्थिक प्रतिमान उत्पादन, उपभोग व वितरण के स्थानीकरण पर आधारित है। वे राज्य के हाथों शक्ति के स्थान पर सहकारिता व न्यास धारित बोध का विस्तार पसंद करते थे।

गांधीजी जीवन के भौतिकवादी दृष्टिकोण से सहमत नहीं हैं। अत: वे व्यक्ति में अस्तेय, अपरिग्रह, अस्वाद आदि प्रवृत्तियों के विकास द्वारा भौतिकवादी स्वार्थपरक जीवन पद्धति से व्यक्ति को मुक्त करके सादा जीवन उच्च विचार के आदर्श के प्रति प्रेरित करते है। समाज में असमानता की अनुभूति के कारण तनाव उत्पन्न होता है। इसका मुख्य कारण भौतिकतावाद, बाजारवाद तथा वर्तमान उपभोक्ता मूलक संस्कृति है। इसके मूल में पूंजीवाद हैं। गांधीजी पूंजीवाद का सामना भी हिंसा से करने के प्रबल विरोधी रहे हैं।

* सहायक प्राध्यापक राजनीति विज्ञान, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

वे यद्यपि पूंजीवाद की बुराईयों के प्रति सचेत थे और उनका उन्मूलन करना चाहते थे, किन्तु वे इससे संघर्ष के लिये, वर्ग द्वेष तथा हिंसा को उचित व प्रभावशाली साधन नहीं मानते थे।[5]

इससे स्पष्ट है, गांधीजी की आकांक्षा रही कि समाज के सभी व्यक्तियों का कल्याण हो, वह चाहे श्रमिक हो या किसान अथवा पूंजीपति। पूरे समाज के विकास से ही राष्ट्र का सम्यक विकास संभव है। अन्य दर्शन एकान्तवादी है, साम्यवाद केवल सर्वहारा वर्ग के कल्याण की बात करता है, पूंजीवाद केवल सम्पन्न वर्ग के हित चिंतन का दर्शन है, परन्तु गांधीवाद सर्वजन के हित का साधन है। गांधीजी मानते है कि निर्धन व्यक्ति जहां आर्थिक रूप से दरिद्र है, वहां धनवान व्यक्ति भी नैतिक रूप से दरिद्र है। दोनों की दरिद्रता का निवारण होने से ही समाज व राष्ट्र का विकास संभव है। इसलिए भारतीय संस्कृति के परम्परागत आदर्शो के अनुरूप उनके सपनों का भारत वह होगा जहां

''सर्वे भन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु या कश्चिद् दुःख भागमवेत्॥

एक वर्गहीन, आर्थिक समानता पर आधारित समाज के लिये गांधी अहिंसा व वर्ग सहयोग के मार्ग को उचित मानते थे। इसके लिये उनका तर्क था यदि श्रमिक पूंजीपति वर्ग के शोषणकारी उद्देश्यों में सहयोग नहीं करें तो पूंजीपति द्वारा श्रमिक का शोषण संभव नहीं है। इसी प्रकार यदि श्रमिक अपने महत्व को पहचाने तो पूंजीपति द्वारा उसके हितों की उपेक्षा असंभव है। श्रम और पूंजी में नैसर्गिक विरोध नहीं है। अतः दोनों में सहयोग और समन्वय से वर्ग संघर्ष की स्थिति को महज समाप्त किया जा सकता है। श्रम शक्ति की प्रभावशीलता में वृद्धि से, पूंजी निस्तेज होगी और पूंजीपति आगे मजदूरों के हितों के संरक्षक बन सकेगें। गांधीजी का ट्रस्टीशिप का सिद्धान्त उनके आर्थिक विचारों में सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, जो विशुद्ध रूप में हृदय परिवर्तन के न्यायपूर्ण, नैतिक आदर्शो पर आधारित है। सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह के गांधीजी के शस्त्र समाज में असमानता और वर्गभेद मिटाने में आज कितने सहायक है, यह अलग विषय है।[6]

निष्कर्ष यह कि गांधीजी के सपनों का भारत वस्तुतः मानवता का वह पालना है, जिसमें व्यक्ति के सर्वांगीण विकास के लिये सभी साधन व सुविधाऐं उपलब्ध है। इसे उन्होंने ''सर्वोदय'' की संज्ञा दी है। इस सर्वोदय की विराट कल्पना में भारत की धार्मिक भावनाऐं, नैतिक संस्कार, संस्कृति तथा विविध दार्शनिकों, चिंतकों व समाज सुधारकों की विचारधारा का समावेश स्पष्ट है। अतः सर्वोदय की मान्यता है कि मनुष्य का भौतिक जीवन उसकी अकेली निजी वसीयत न होकर, वह उस पर समाज का अनुग्रह उपहार है।अतः समाज के इस ऋण से मुक्त होने के लिये नागरिकों द्वारा परस्पर सुख-दुख बांटने के प्रयास का ही नाम सर्वोदय है।

मानव मूल्य और आध्यात्मिक विकास को दृष्टि में रखते हुए गांधीजी की स्पष्ट मान्यता थी कि मूलतः व्यक्ति साध्य है और अन्य सभी साधनों, यथा- धर्म, संस्कृति, राज्य, समाज तथा सम्पत्ति सभी की उत्पत्ति उसके हित के लिए हुई है। यद्यपि व्यक्ति का नैतिक विकास उसकी आंतरिक इच्छाओं पर निर्भर है, तदापि गांधीजी की कल्पना है कि व्यक्ति जैसे-जैसे अहिंसक और नैतिक होता जावेगा सभी संस्थाओं का स्वरूप भी स्वतः रूपान्तरित होता जावेगा। तब अन्ततः एक राज्यविहीन समाज अथवा जागृत अराजकता की स्थिति को प्राप्त किया जा सकेगा। गांधीजी की यही राष्ट्र के प्रति शुभकामना रही है।

एक महात्मा के रूप में, गांधीजी का सपनों का भारत, नैतिकता, आध्यात्मिकता से समन्वित, देशवासियों के सुख, शांति और समृद्धि की एक ऐसी कल्पना है, जिसे विज्ञान और वैश्वीकरण ने मूर्त होने से पूर्व ही सपना बना दिया है। गांधीजी गांव को राष्ट्र बनाना चाहते थे, विज्ञान और तकनीक ने विश्व के राष्ट्रों को ही गांव बना दिया है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि गांधीजी का राजदर्शन भावात्मक होकर, उनके अहिंसा के आदर्श पर आधारित है। यह हृदय परिवर्तन द्वारा त्याग, सेवा और सहयोग की भावना को प्रोत्साहित करता है। इसके द्वारा समाज में नैतिकता व आध्यात्मिक मूल्यों की स्थापना होती है।

यह त्याग, सेवा व बलिदान की आदर्शवादी ऐसी शिक्षा है, जिसके क्रियान्वयन से आदर्श समाज की स्थापना संभव है और विश्वभर में स्वतंत्रता, समानता व बंधुत्व की भावना का विकास संभव है, परन्तु इसे हम सिर्फ ''प्रकृति की ओर लौट चलो'' का महज काल्पनिक आकर्षक चिंतन ही मान सकते है। विश्व आज जिस स्थान पर खड़ा है, वहाँ से लौटना क्या संभव हैं ? अतीत सदैव सुखद जीवन की संभावनाओं और कल्पनाओं का आकर्षक चित्र रहा है। अतः विगत की ओर लौटना, भूत को वर्तमान बनाने की कल्पना मात्र है। वस्तुतः गांधीजी का सपनों का भारत रामराज्य की आधुनिक युग में संभावनाओं की अपेक्षा मात्र है।

संदर्भ ग्रंथ -

1. आहूजा राम : भारतीय समाज : रजत पब्लिकेशन्स जयपुर (2004) पृष्ठ 43-44
2. सोनी सुधा-त्रिपाठी राशि : गांधी की ग्रामीण विकास की अवधारणा : भारत में ग्रामीण विकास संपादक एस.अखिलेश : सेन्टर फॉर रिसर्च स्टडीज रीवा (2010), पृष्ठ 244
3. जैन अनिल कुमार : महात्मा गांधी का सर्वोदय दर्शन : महात्मा गांधी विचार व समकालीन समाज, सम्पादक - डॉ. डी.आर.पाटील : अथर्व पब्लिकेशन्स : धुले (2012) पृष्ठ 179-182
4. गांधी मोहनदास करमचंद : सत्य के मेरे प्रयोग : नवजीवन प्रकाशन मंदिर, अहमदाबाद (2011) पृष्ठ 62
5. शर्मा रामरतन गांधी के अर्थशास्त्र की प्रासंगिकता : रचना द्विमासिक सित.-अक्टू. 2010, पृष्ठ 7-8
6. शर्मा रामरतन गांधी के अर्थशास्त्र की प्रासंगिकता : रचना द्विमासिक सित.-अक्टू. 2010, पृष्ठ 7-8

****

भारत-चीन सम्बन्ध : एक नजर

डॉ. अनिल दीक्षित *

भारत और चीन न केवल पड़ौसी राज्य हैं अपितु उनमें प्राचीन काल से ही सांस्कृतिक सम्बंध चले आ रहे थे जिसका इतिहास साक्षी है । जब दोनों विदेशी आधिपत्य में चले गए तो इनके ये सम्बन्ध टूट गए । 1947 में भारत स्वतंत्र हुआ और चीन में 1949 में कोमिन्तांग सरकार के पतन के बाद साम्यवादी सरकार की स्थापना हुई । ऐतिहासिक रूप से प्राचीनकाल में भारत व चीन दो प्रमुख सभ्यताएं रही है जो आपसी सह-अस्तित्व के आधार पर स्थापित थीं। बाद में साम्राज्यवादी ताकतों के प्रभाव से दोनों के बीच सहयोगात्मक सम्पर्क नहीं रहे, लेकिन भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का नेतृत्व चीन के महत्व से अनभिज्ञ नहीं था । इसलिए कांग्रेस ने चीन के प्रति अंग्रेजी नीतियों की खुलकर आलोचनाएँ की । 1931 में जब जापान ने मंचूरिया पर आक्रमण किया तब भारत ने उसकी निन्दा करते हुए चीन के प्रति सहानुभूति व्यक्त की तथा प्रतीकात्मक स्वरूप 'चीन दिवस' मनाया । 1937 के चीन जापान युद्ध में भारत ने चीन का साथ दिया । 1949 को चीन को मान्यता प्रदान करने वाला, वर्मा के बाद भारत दूसरा गैर साम्यवादी देश था। 1949 से 1959 की पृष्ठभूमि में दोनो के बीच मधुर संबंधों की स्थापना की सम्भावनाओं से इन्कार नहीं किया जा सकता । दोनों के मधुर सम्बन्ध बने भी तथा भिन्नता की पराकाष्ठा स्वरूप चीनी-हिन्दी भाई-भाई, के स्वर्णिम युग की स्थापना में बदले । भारत-चीन सम्बन्धों का प्रथम दशक मैत्रीपूर्ण एवं सहयोग का रहा, इस युग को प्रमोद युग या स्वर्णिम युग की श्रेणी प्रदान की जा सकती है।

इन सम्बन्धों में प्रारम्भ के लिए निम्न तत्व उत्तरदायी थे -

- भारत एक प्रजातांत्रिक देश होते हुए भी साम्यवादी क्रांति का स्वागत किया ।
- फरवरी 1951 में संयुक्त राष्ट्र द्वारा कोरिया के युद्ध के संदर्भ में चीन को आक्रान्ता घोषित करने के प्रस्ताव का भारत ने विरोध करके चीन की नीतियों के प्रति अपना समर्थन व्यक्त किया ।
- 29 अप्रैल 1954 को जब भारत व चीन के बीच तिब्बत के संदर्भ में व्यापार व आपसी आदान-प्रदान के एक 8 वर्षीय समझौते पर हस्ताक्षर किए गए । इस समझौते में दोनों देशों के मध्य शांति पूर्ण सह-अस्तित्व के पंचशील' नियमों का उल्लेख था ।
- दोनों देशों का अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर समान दृष्टिकोण का होना ।
- दोनों देशों द्वारा की गई सद्भावना यात्राओं को विशेष स्थान देना।

हालांकि इस युग में दोनों देशों के बीच कोई मतभेद विद्यमान नहीं थे । सहयोग के इन प्रबल तथ्यों के होते हुए भी कुछ विषयों पर दोनों के बीच विभेद थे । जो निम्न कारणों को लेकर थे -

- तिब्बत की समस्या ।
- सीमाओं का नक्शों में उल्लेख को लेकर ।
- बाण्डुंग में हुए अफ्रीका व एशिया के देशों के सम्मेलन के अन्तर्गत दोनों के परस्पर विरोधी दृष्टिकोणों को जन्म होना ।

1959 से 1962 का काल दोनों देशों के बीच संघर्ष का काल माना जाता है । 1959 में तिब्बत के विद्रोह व उसके परिणाम स्वरूप दलाई लामा द्वारा भारत में शरण लेने के बाद दोनों देशों में टकराव की स्थिति निर्मित होने लगी । चीन ने सीमा के विषय को लेकर भी भारत पर तरह-तरह के आरोप लगाने शुरू कर दिए । इन्हीं वर्षो में चीन ने भारतीय सीमाओं में घुसपैठ का कार्य प्रारम्भ कर दिया । भारत के आकसांई चिन क्षेत्र में चीन एक राजमार्ग का निर्माण कर लिया इसके बाद 1958 में चीन ने भारत के लद्दाख क्षेत्र में घुसपैठ करके भारत के कुछ क्षेत्रों पर कब्जा कर लिया । अक्टूबर 1962 में चीन ने बड़े पैमाने पर भारत पर आक्रमण कर दिया । पश्चिमी सीमा पर लद्दाख में गलवान नदी की घाटी की भारतीय सेना चौकियों को चीन ने घेर लिया । पूर्व में 8 सितम्बर को उसके मैकमोहन सीमा रेखा को पार करके भारतीय क्षेत्र में प्रवेश कर लिया । अन्ततः 20 अक्टूबर 1962 को दोनों ओर के मोर्चो पर घमासान युद्ध प्रारम्भ कर दिया तथा दोनों क्षेत्रों पर कब्जा करके युद्ध विराम की घोषण कर दी । युद्ध से उत्पन्न स्थिति तथा परिणामों का अध्ययन करने से पूर्व यह जानना अति आवश्यक है कि चीन ने अचानक यह युद्ध क्यों किया ? फिर एक तरफा युद्ध बंदी क्यों की गई ? तथा भारत की इस युद्ध में हार के क्या कारण थे ? जहाँ तक चीन द्वारा भारत पर आक्रमण का प्रश्न है वी.पी. दत्ता के अनुसार दो प्रमुख उद्देश्य रहे होंगे -

(1) अपनी शक्ति का प्रदर्शन करना ।
(2) भारत की निर्बलता को प्रदर्शित करके उसे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपमानित करना ।

ए. अप्पादोराय एवं एम.एस. राजन के अनुसार इस संदर्भ में विभिन्न कारण प्रमुख थे -

(1) अपना नेतृत्व स्थापित करके भारत को अपमानित करना ।
(2) चीन की आंतरिक समस्याओं से ध्यान हटाकर दूसरी ओर आकृष्ट करना ।
(3) विश्व को चीन की आर्थिक व राजनैतिक प्रणाली की सर्वोच्चता प्रदर्शित करना ।
(4) सोवियत संघ को दिखाना कि भारतीय गुटनिरपेक्षता की नीति मात्र दिखावा है तथा वह पाश्चात्य गुट के अति निकट है ।

इस युद्ध से जुड़ा एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पहलू है कि इस युद्ध की शुरूआत किसने की ? भारतीय तथा कई विदेशी अध्ययनों से तो अति स्पष्ट है कि चीन ने अपनी विस्तारवादी नीतियों के अधीन युद्ध प्रारम्भ किया । नेहरू के संसद में दिए गए भाषणों से स्पष्ट है कि भारत न तो युद्ध के लिए तैयार था तथा न ही भारत यह युद्ध चाहता था बल्कि वह चिन्तित अवश्य था । लेकिन नेवाईल मेक्सबेल का मत इसके बिल्कुल विपरीत है - उसका मानना है कि ''भारत ने चीन को युद्ध के लिए मजबूर किया'' । भारत-चीन युद्ध के दोनों ही निकटवर्ती तथा दूरगामी परिणाम निकले जो निम्न प्रकार थे -

- भारत चीन सम्बन्ध बिल्कुल समाप्त हो गए तथा भारत का एक बड़ा हिस्सा चीन के कब्जे में रह गया ।
- इस द्वन्द का लाभ उठाकर चीन व पाकिस्तान के समीकरण और मजबूत हो गए ।
- भारत की अन्तर्राष्ट्रीय गरिमा तथा गुटनिरपेक्ष आन्दोलन की छवि

* सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

को गहरा आघात लगा ।

- नेहरू की विश्वशांति की योजनाएं समाप्त हो गई ।
- भारतीय विदेश नीति में यथार्थवाद को अधिक बल दिया जाने लगा ।
- भारत के अमेरिका के साथ सम्बन्धों में सुधार हुआ ।
- सोवियत संघ ने भी भारत का पक्ष लेना स्वीकारा ।

1962 से 1976 के मध्य उत्पन्न दोनों देशों के सम्बन्धों को रहितता का काल की संज्ञा दी गई । एक लम्बे अन्तराल के बाद सीमाओं का विवाद ज्यों का त्यों बना रहा । भारत द्वारा इस विवाद को अन्तर्राष्ट्रीय न्यायालय में भी ले जाने की सहमति का चीन ने सकारात्मक उत्तर नहीं दिया । अत: मामला वहीं का वहीं बना रहा । चीन पाकिस्तान के बढ़ते सम्बन्धों के कारण भी दोनों देशों का संकट और गहरा हो गया । चीन ने भारत पाक संबंधों की कटुता का लाभ उठाते हुए 1963 में पाकिस्तान के साथ एक समझौता करके ''पाक अधिकृत कश्मीर'' का 5180 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र अपने अधिकार में ले लिया । भारत ने इस बात पर रोष प्रकट किया परन्तु चीन के रवैये में कोई परिवर्तन नहीं आया । बल्कि इसके विपरीत चीन ने पाकिस्तान के साथ 26 मार्च 1965 को सीमा पर खम्बे गाड़ने का समझौता भी पूर्ण कर लिया ।

1964 में चीन परमाणु शक्तियों के क्लब का सदस्य बन गया जिससे उसके रवैये में और कठोरता आना स्वाभाविक थी । 1970 के दशक में यह स्थिति और गम्भीर हो गई । एक तरफ पाकिस्तान-चीन-अमेरिका की धुरी स्थापित हो गई । जिसका मुख्य उद्देश्य पूर्व सोवियत संघ के साथ-साथ भारत का परिरोधन करना था । दूसरी तरफ चीन संयुक्तराष्ट्र का स्थाई सदस्य बन गया । पूर्वी व पश्चिमी पाकिस्तान के गृहयुद्ध के कारण दक्षिण एशिया में तनाव को देखते हुए भारत व पूर्व सोवियत संघ के बीच 1971 में मैत्री और सहयोग की संधि पर हस्ताक्षर किए गए । इस प्रकार भारत-पाकिस्तान की 1971 की लड़ाई दोनों देशों के बीच युद्ध न होकर शीत युद्ध की राजनीति को भी अपने अन्दर समेटे हुए थी ।

अत: इस युद्ध में पाक को अमेरिका व चीन का समर्थन भी मिला । परन्तु चीन ने धमकियों के बावजूद भारत की सीमाओं पर युद्ध प्रारम्भ नहीं किया । एक कारण शायद पूर्व सोवियत संघ के युद्ध में शामिल होने का डर रहा हो । शायद इसलिए नवम्बर 1971 में अफ्रो- एशियाई देशों के टेबल-टेनिस प्रतियोगिता में भाग लेने हेतु चीन ने भारत को अमंत्रित किया । अन्तत: दोनों देशों के बीच रहितता युग की समाप्ति हो गई तथा फिर से राजनयिक सम्बन्धों का सूत्रपात हो गया।

1976 से 1988 का काल भारत चीन के मध्य वार्तालाप का काल था । दोनों देशों के बीच नीतियों में बदलाव आया । 1976 में माओ-से-तुंग की मृत्यु से इस युग की समाप्ति हो गई जो रूढ़िवादिता एवं विचारधारा का प्रतीक था । नया नेतृत्व डेंग हसाओ पिंग द्वारा संभाला गया जिसके तहत चीन में एक उदारीकृत विश्व व्यवस्था के प्रति आस्था व्यक्त की । इस उदार प्रक्रिया के साथ-साथ चीन ने चारों क्षेत्रों - (रक्षा, कृषि, उद्योग एवं विज्ञान व तकनीकी) में आधुनिकीकरण की ओर बल दिया । इस काल में दो प्रमुख विषय भारत व चीन के बीच गहन मतभेदों वाले रहे -

- बांगडोंग में समडोरांग चू घाटी में चीन द्वारा घुसपैठ का मामला
- 20 फरवरी 1987 को भारत सरकार ने अरूणचल प्रदेश को भारतीय संघ का 24 वां राज्य घोषित कर दिया ।

1988 से 1999 का काल दोनो देशों के बीच सहयोगात्मक संबंधों का युग कहा जाता है - जैसे

- पूर्वकालीन सम्बन्धों की स्थिलता को त्यागकर गतिशील सम्बन्धों की ओर कदम बढ़ाना ।
- दोनों देशों ने सम्बन्धों का सर्वांगीण विकास करने का फैसला लिया ।
- दोनों देशों के मध्य यथार्थवाद पर सहमति ।

दोनों देशों के सम्बन्धों में सुधार विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय घटनाक्रम, आन्तरिक परिस्थितियां तथा दोनों के परस्पर दृष्टिकोण में आए परिवर्तन के कारण हुआ इसके मुख्य कारण इस प्रकार है -

- अमेरिका की विदेश नीति में आये परिवर्तन में महत्वपूर्ण उद्देश्यों में मानवाधिकार को एक अभिन्न हिस्सा मान लेना ।
- 1991 में सोवियत संघ के विघटन से चीन के मुख्य प्रतिद्वन्दी की समाप्ति ।
- नई विश्व व्यवस्था के विघटनकारी तत्वों के प्रभाव को कम करके एक न्यायोचित विश्व व्यवस्था बनाने में दोनों देशों के विचारों में समानता।
- रक्षा पर होने वाले व्यय तथा आर्थिक व्यवस्था के कारण दोनों में मित्रता ।
- आर्थिक सम्बन्धों का विकास प्रारम्भ ।

वर्तमान समय में चीन की दुल-मुल नीति के कारण भारत पशोपेश में है । चीन भारत को चौतरफा घेरने की फिराक में है । इसमें पाकिस्तान उसकी मदद कर रहा है उसने ग्वादर पोर्ट (बंदरगाह) का निर्माण एवं विकास कार्य का जिम्मा चीन को सौंपा इससे भारत की पश्चिमी सीमा में भी चीन का दखल हो गया है । पूर्वी सीमा पर चीन बंगाल की खाड़ी और दक्षिण में हिन्द महासागर में पहले ही अपनी मौजूदगी दर्ज करा चुका है । उत्तर में पाक अधिकृत कश्मीर में भी वह निर्माण कार्यों में जुटा है ।

रक्षा विशेषज्ञों अनुसार - चीन की मंशा इस बंदरगाह का प्रयोग रक्षा सम्बन्धी मामलों के लिए भी कर सकता है । इससे मध्य पूर्व में स्थित अमरीकी सेन्य बेस पर भी निगरानी रख पायेगा । बलूचिस्तान में अशांति का माहौल है इसके बावजूद वहां पर विकास कार्य में हाथ डालना, चीन की राजनीतिक मंशा को दर्शाता है । इस बंदरगाह से चीन शिनयांग प्रांत के लिए तेल व गैस ले जा सकता है । इसमें काफी समय लगेगा ।

भारत की चिन्ता के पाँच बड़े चीनी अड्डे-

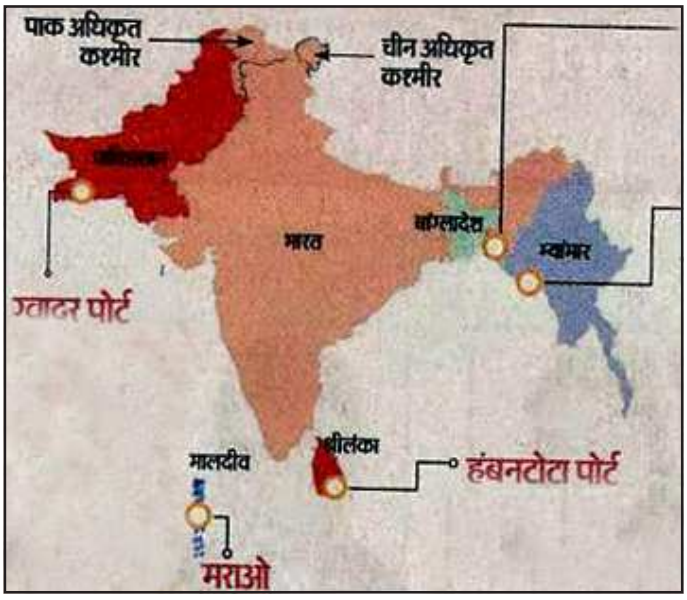

(1) **ग्वादरपोर्ट** - पाकिस्तान ने इसके विकास के लिए चीन को करीब 1,331 करोड़ रूपये के सौदे का 75 फीसदी हिस्सा दे दिया है ।

ग्वादर पोर्ट का कमीशन जनरल परवेज मुशर्रफ ने 2007 में किया था । यह हॉरमुज की खाड़ी के मुहाने पर स्थिर है ।

(2) **मराओ –** 1999 में मालदीव ने चीन मराओ द्वीप लीज पर दे दिया था । वह इसका उपयोग निगरानी के रूप में करता है।

(3) **हंबन टोटा पोर्ट –** दक्षिणी श्रीलंका के हंबन टोटा बंदरगाह पर चीन ने डीप वाटर पोर्ट बना रखा है । यहां से भारत के वाणिज्य और नौसेना के पोत निकलते हैं ।

(4) **चटगाँव बंदरगाह –** इस पोर्ट के विस्तार के लिए 8.7 बिलियन डॉलर की मदद कर रहा है । इस बंदरगाह से बंगलादेश का 90 फीसदी व्यापार हो रहा है । यहाँ पर अक्सर चीनी नौसेना के युद्धपोत देखे जाते हैं ।

(5) **सितवे –** इस बंदरगाह का निर्माण भारतीय कम्पनी ने 643.8 करोड रूपये में किया था । मगर इससे ज्यादा फायदा चीन को है । चीन यहां पर तेल और गैस पाइप लाइन बना रहा है जो सितवे गैस फील्ड से चीन तक तेल और गैस की सप्लाई करेगा ।

चीनी सेना ने लद्दाख में घुसपैठ कर फिर से बॉर्डर विवाद को जन्म दे दिया है । तो पूर्वी लद्दाख में चीनी सैन्य द्वारा भारतीय सीमा क्षेत्र में 19 कि.मी., दौलत बेग ओल्डी सेक्टर एक घुसपैठ पर भारत को जल्दबाजी में कोई कार्यवाही के बजाय सावधानी से विचार कर मसला हल करना चाहिए । फिलहाल चीनी सैन्य दलों ने यहाँ तम्बू लगा रखे हैं और स्थाई पोस्ट स्थापित करने का कोई इरादा नहीं दिखता है । अगर कुछ ऐसा करने का प्रयास करता है तो निश्चित तौर पर यह हमारे लिए चिंता का सबब होगा ।

भारत को तिब्बत पर अपनी ऐतिहासिक भूल को सुधारना चाहिए अगर हम भूल नहीं सुधारेंगे, तो साम्राज्यवादी इरादों वाला चीन हमें चैन से नहीं रहने देगा । आखिर भारत इतना लाचार क्यों नजर आ रहा है ? दरअसल तिब्बत पर पं. नेहरू की कूटनीतिक, अपरिपक्वता आज भारत के गले की फाँस बन चुकी है । विदेश नीति पर सर्वज्ञता के घमंड में चूर नेहरू तत्कालीन अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में लाल चीन को उसका 'जायज हक' दिलाने की सनक में इतने व्यस्त हो गए कि चीन की काली करतूतों की तरफ उनका ध्यान ही नहीं गया। 1950 में, जब चीन ने तिब्बत पर जबरन घुसकर उसकी कथित 'मुक्ति की घोषणा की' तो हर भारतीय के मन में एक ही प्रश्न था; किसकी मुक्ति ? गृहमंत्री सरदार पटेल ने उस समय पं. नेहरू को चेताया था कि इस आक्रमण ने चीन को भारत के दरवाजे पर लाकर खड़ा कर दिया है । जिसके परिणाम गम्भीर होंगे। राममनोहर लोहिया ने तभी कह दिया था कि यह तिब्बत पर नहीं भारत पर हमला है और 1962 में पंचशील का अव्यावहारिक सिद्धान्त भी हिमालय की बर्फीली चोटियों में दफन हो गया ।

भारत–चीन सीमा विवाद जल्द से जल्द सुलझाना चाहिए । इसी में दोनों देशों की भलाई है । जब चीन के प्रधानमंत्री भारत आए तो सीमा विवाद का मुद्दा गरम था हालांकि दोनों देशों के नेताओं के बीच बातचीत हुई तो टॉप ऐजेण्डे में नहीं था। चीनी प्रधानमंत्री ली ने विश्वास बढ़ाने के नए तंत्र की जरूरत पर जोर दिया और सीमा विवाद को कम करने की इच्छा जताई । 20 अक्टूबर 2013 को भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह रूस और चीन की यात्रा पर गए । चीन में जाकर डॉ. सिंह ने भारत और चीन सीमा रक्षा से जुड़ा एक बेहद महत्वपूर्ण समझौता किया है । इस समझौते को 'बॉर्डर डिफेंस कोऑपरेशन एग्रीमेंट' (बीडीसीए) के नाम से जाना जायेगा । इससे वास्तविक नियंत्रण रेखा पर दोनों देशों की सेनाओं के बीच तनाव की स्थितियों को कमतर करने में मदद मिलेगी ।

अक्टूबर 2013 को बीजिंग के ग्रेट हाल में आयोजित संयुक्त कांफ्रेस के दौरान चीन के प्रधानमंत्री ली कछ्याँग ने सम्बोधन किया । जिसके दस मंत्र भारत–चीन मुठभेड़ को रोक सकेंगे –

- द्विपक्षीय समझौतो के आधार पर सीमा रक्षा समझौते का पालन करेंगे ।
- सूचनाओं को आदान प्रदान, सैन्य अभ्यासों, विमानों के इस्तेमाल, विध्वंसक अभियानों और गैर लक्षित तरीकों से बिछाई गई बारूदी सुरंगों के बारे में जानकारी देना शामिल है ।
- भारत–चीन वास्तविक नियंत्रण रेखा पर नागरिकों, पशुधन, यातायात के साधनों का विमानों अथवा हेलीकॉप्टरों को एक दूसरे की सीमा में जाने से रोकने में मदद करना ।
- समय–समय पर चीन के सैन्य क्षेत्र और भारतीय सैन्य कमांड के अधिकारियों और सैन्य अभियानों के जिम्मेदार विभागों के बीच बातचीत ।
- दोनों पक्ष हर सेक्टर में सीमा बलों की बैठक के लिए जगह तय करेंगे ।
- दोनों देश सामाजिक–सांस्कृतिक अवसरों पर समारोहों में शामिल होने के लिए बुलाएं ।
- दोनों पक्ष एल.ओ.सी. पर गश्ति दलों का पीछा नहीं करेंगे ।
- संदेहास्पद गतिविधि नजर आने पर सामने वाला पक्ष दूसरे से स्पष्टीकरण मांग सकता है ।
- विवादित सीमा इलाकों पर कोई भड़काऊ कार्रवाई नहीं की जाना चाहिए ।
- दोनों पक्ष बिना किसी पूर्वाग्रह के इन समझोते को लागू करेंगे ।
- हस्ताक्षर की तारीख से ही यह समझौता प्रभावी हो जायेगा ।

भारत को सीमाओं पर ठोस कदम उठाने होंगे तभी हम चीन की बार–बार की धमकियों से बचाव कर पायेंगे। चीन के साथ जो ताजा समझौते हुए हैं, उन्हें कतई मील का पत्थर नहीं कहा जा सकता । समझौते की भाषा यह संकेत कर रही है कि घुसपैठ की घटना दोनों तरफ से हो रही है और भारत को भी सीमा पर यथासंभव संयम बरतना होगा ।

संदर्भ सूची

1. के. एम. पाणिकर, इंडिया एण्ड चाइना : ए स्टडी ऑफ कल्चरल रिलेशन्स, बम्बई 1957
2. भीम सन्धु, अनरिजोल्ड कनफ्लिक्ट : चाइना एण्ड इंडिया, नई दिल्ली 1988 पृष्ठ 82
3. भारत सरकार, नोट्स मेमोरेण्डम एण्ड लेटरज एक्सचेन्जड एण्ड एग्रीमेंट साईन्ड बिटविन द गर्वमेंट ऑफ इंडिया एण्ड चाइना, 1954–59, नई दिल्ली
4. वी.पी.दत्ता इंडियन फारेन पॉलिसी, नई दिल्ली, 1987, पृ. 280–81
5. अभ्याढोराय व राजन, पाद टिप्पणी संख्या 3, पृ. 141
6. नेवाईल मैक्सवेल, इण्डियाज चाईना वार, बम्बई 1971 पृ. 273
7. अप्पढोराय व राजन, पाद टिप्पणी संख्या 3, पृ. 118
8. दैनिक भास्कर, रविवार 3 फरवरी 2013
9. पत्रिका, मंगलवार, 30 अप्रैल 2013
10. पत्रिका, 24 अक्टूबर 2013
11. नई दुनिया, 24 अक्टूबर 2013

****

कार्यरत महिलाओं में घरेलू कार्य का दबाव कारण व उपाय

डॉ. रंजू गुप्ता *

(1) प्रस्तावना :- परिवार एक ऐसी महत्वपूर्ण संस्था है जिस पर व्यक्ति समाज व राष्ट्र कल्याण का विशेष दायित्व होता है। परिवार समाज की सबसे छोटी व सबसे महत्वपूर्ण इकाई है। परिवार में गृहिणी घर की धूरी होती है। गृहस्थी की सुख शांति, आनंद और उत्थान इसके प्रबल कंधो पर निर्भर है। गृहिणी को परिवार की अनेक मांगो को पूरा करना है जैसे परिवार के सदस्यों के आराम सुविधा, अच्छा स्वास्थ्य व प्रसन्नता का ध्यान रखना आदि, भारत में यह कार्य शताब्दियों से गृहिणी द्वारा सम्पन्न किये जाते है।

गृहिणी घर की आर्थिक व्यवस्था में भी योगदान देती है घरेलू कार्यो का सम्पादन भी पूर्णकालिक कार्य हैं एक गृहिणी को घरेलू कार्यो के संपादन में करीब 12 से 16 घंटे लग जाते है साथ ही उसे विभिन्न प्रकार की भूमिका भी निभानी पडती हैं। वर्तमान समय में महिलाओं पर कार्य का दबाव बढ़ गया है घरेलू कार्य से संबंधित दबाव के कारणों को जानने का प्रयास किया है।

(1) घरेलू कार्यो से संबंधित दबाव के कारण -

प्रविधि :- कार्यरत महिलाओं पर कार्य का दबाव देखने के लिए एक अध्ययन किया गया। उज्जैन शहर की 200 कार्यरत महिलाओं को उदेश्यानुसार प्रतिदर्श (**Purposive Rendom Sample**) द्वारा चुना गया।

गृहकार्य परिवारिक जीवन का आवश्यक अंग है। घरेलू कार्यो का दायित्व प्राचीनकाल से ही गृहिणियों पर रहा है। वर्तमान समय में महिलाएं बाहरी क्षेत्र में भी कार्य करती है इस दोहरी भूमिका के कारण उनका उत्तरदायित्व बढ़ गया है। जो कार्य हमें अच्छें नही लगते है वे हम प्राय: नही करते या टालते हैं परंतु घरेलू कार्यो में चुनाव की संभावना कम रहती है। अत: अध्ययन में घरेलू कार्यो से संबंधित दबाव के कारणो को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है।

तालिका क्रमांक-1

घरेलू कार्यो से संबंधित दबाव के कारण-

कार्यरत गृहिणियॉ

क्र.	कारण	हाँ	प्रतिशत	नही	प्रतिशत
1	क्रिया में दोहराव के नीरसता	129	64.5	71	35.5
2	अरूचिकर घरेलू कार्य	133	66.5	67	33.5
3	कार्य सरलीकरण का ज्ञान न होना	89	44.5	111	55.5
4	सुविधाजनक व उपयुक्त उपकरणों का न होना	137	68.5	63	31.5
5	स्वास्थ्य ठीक न होना	141	70.5	54	29.5
6	दैनिक दिनचर्या में अचानक परिवर्तन होना	178	89	22	11
7	घरेलू नौकरों का पूर्ण सहयोग न मिल पाना	157	78.5	43	21.5

दैनिक दिनचर्या में यदि अचानक परिर्वतन आता है जैसे मेहमान आने या बिमार होने पर घरेलू कार्य प्रभावित होते हैं परिर्वतन से संबंधित कार्यो का सम्पन्न कराने में अतिरिक्त शक्ति व समय व्यय करना होती है। 89 प्रतिशत गृहिणियों ने माना है कि अचानक परिर्वतन घरेलू कार्यो को करने में दबाव का कारण बनता है। वर्तमान समय में कार्यरत गृहिणियों के लिए एक अच्छे नौकर या आया का होना अत्यंत आवश्यक है। नौकर का बिना बताये छूट्टी लेना ठीक ढंग से कार्य न करना अनेक प्रमुख समस्याएं है जो घरेलू कार्यो को करने में बाधक हैं। 78.5 प्रतिशत गृहिणियों का मत है। कि घरेलू नौकरो का पूर्ण सहयोग न मिल पाना घरेलू कार्यो में दबाव का कारण है।

कार्यरत गृहिणियों पर कार्य का दोहरा दायित्व होता है। जो उनके स्वास्थ्य को हानि पहुंचाता है। स्वास्थ्य ठीक नही होने पर घरेलू कार्य बोझिल हो जाते है। 70.5 प्रतिशित गृहिणियों ने अस्वस्थ्यता को दबाव का कारण बताया हैं **Bratton** (1997) ने बताया कि उपकरणो का अभाव कार्यो को अरूचिकर बना देता है व स्वास्थ्य भी रूचि, अरूचि को प्रभावित करता है।

गृह कार्य का सम्पादन एक उच्च तकनीकी व्यवसाय होता हैं जिसमें कला कुशलता उपकरणों के लिए प्रशिक्षण व पर्याप्त जानकारी की आवश्यकता होती है 68.5 प्रतिशत कार्यरत गृहिणियों के सुविधाजनक व उपयुक्त उपकरणो का ना होना घरेलू कार्यो को करने में बाधक बताया है। **Steial and Bratton** (1967) ने बताया कि उपकरणों का अभाव गृह कर्यो को अरूचिकर बना देता है। एक गृहिणी को 66 घंटे/सप्ताह काम करना होता है जिसमें 22 घंटे बच्चो की देखभाल 15 घंटे घर की व्यवस्था 11 घंटे खाना बनाना व 10 घंटे घर की साफ सफाई में लगाते है। कार्य करने का सरल तरीका ज्ञात न होता तो घरेलू कार्य थकान उत्पन्न करते है। 44.5 प्रतिशित गृहिणियों को कार्य के सरलीकरण का ज्ञान नही था।

दबाव को कम करने के उपाय :- **Hans Sdye** ने लिखा है कि यह महत्वपूर्ण नही है कि क्या घटित हुआ, किन्तु आपने उसे किस प्रकार लिया है, यह महत्वपूर्ण है (**It is not what Happans to you that matters but how you take it**)

दबाव के उपयोग को निम्नलिखित शीर्षो में वर्गीकृत किया हैं।

(1) घरेलू कार्य में उत्पन्न दबाव को नियंत्रित करने के उपाय।

तालिका क्रमांक-2

कार्यरत गहिणियाँ

क्र.	**कारण**	**हाँ**	**प्रतिशत**	**नही**	**प्रतिशत**
1	अधिकभार के समय कुछ कार्यो को स्थगित करना	92	46	108	54
2	समय व शक्ति बचत उप करणों का उपयोग करके	17-5	87.5	25	12.5
3	कार्यो की योजना बनाकर	143	71.5	57	28.5
4	तैयार खाद्य पदार्थो का उपयोग करके	113	56.5	87	43.5
5	कार्यो के बीच विश्राम काल का आयोजन करके	93	46.5	107	53.5
6	नौकरों द्वारा किये गये कम गुणवत्ता वाले कार्यो को स्वीकार करके	112	56	88	44
7	सामंजस्य स्थापित करे	172	86	28	24

* सहायक प्राध्यापक, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर-मालवा (म.प्र.) भारत

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि 46 प्रतिशित कार्यरत गृहिणियां कार्य को स्थगित करती है क्यो कि यदि वे कार्य को स्थगित करती है तो वही कार्य दूसरे दिन अतिरिक्त कार्य के रूप में करने होते हैं जो दबाव को उत्पन्न करते है। कार्य से उत्पन्न दबाव को कम करने के लिए समय व शक्ति बचत उपकरणों का अधिक से अधिक उपयोग करना चाहिए 87.5 प्रतिशत कार्यरत गृहिणयॉ काम से उत्पन्न दबाव को कम करने के लिए समय व शक्ति बचत उपकरणों का उपयोग करती हैं कार्य की योजना बनाना अत्यंत आवश्यक है क्यो कि यह कार्य के दौरान आने वाली समस्यों पर पूर्व में विचार करने का अवसर देती हैं। 71.5 प्रतिशत कार्यरत गृहिणियॉ अपने कार्यो से उत्पन्न दबाव को कम करने के लियें योजना बनाती है। बाजार में उपलब्ध साफ पोष्टिक तैयार खाद्य पदार्थो का उपयोग किया जाए तो समय व शक्ति की बचत होती है। 56.5 प्रतिशत कार्यरत गृहिणियॉ तैयार पदार्थो का उपयोग करती है। कार्यो के मध्य विश्राम करना थकान को दूर करने और कार्य क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता हैं 46.5 प्रतिशित कार्यरत गृहिणियॉ घरेलू कार्यो के बीच विश्राम काल का आयोजन कर उत्पन्न दबाव को कम करती हैं। 59 प्रतिशत कार्यरत गृहिणियो का मत है कि नौकरो द्वारा किये जाने वाले कार्य कम गुणवत्ता वाले होने पर भी उनको स्वीकार करती हैं इस तरह के घरेलू कार्यो से उत्पन्न दबाव को कम करती हैं। 86 प्रतिशत कार्यरत गृहिणियॉ सांमजस्य स्थापित करके दबाव को कम करती है। पारिवारिक संरचना में महिलाओं की भूमिका का केन्द्रीय स्थान होता हैं इस परिर्वतन के फलस्वरूप कार्यरत महिलाऐं यह महसूस करती है कि विविध भूमिका के कारण उनकी सामाजिक व पारिवारिक स्थिति में असंतुलन उत्पन्न हुआ है। फिर भी इन दोहरी भूमिका के द्वंद्व की चुनौतियों का दृढता पूर्वक सामना करती है।

संदर्भ ग्रंथो की सूचि :-

(1) Couke, D.J. and hole D.J. (1983) "An Eliological importance ofStressful life evels.

(2) Haseen Taj and Shaik mastan (July1998) "Television" A Spurt to modern Persectives of education" Psycho Lingua July 1998 Vo 128 No.2 P-167-169

(3) Dr. Christopher A.J.(Aug2001) "Rolsatisfachim and role conflicts ammg manrried working women" Soeial Welfane, Vo 148 No-5 Aug 2001 Page 15-24

(4) Sely Hans 1974 Stress Without disitress new yourk Sighel

(5) रश्मि अग्निहोत्री.एमजी.थीसिस (1995)पेज-113

(6) दैनिक भास्कर 18 मार्च 2006 पेज-1

****

भारत में पारदर्शी प्रशासन के लिये, लोकपाल की अपरिहार्यता

डॉ. अनिल कुमार जैन *

लोक कल्याणकारी राज्य में स्वच्छ, पारदर्शी एवं भ्रष्टाचार मुक्त प्रशासन के लिये, एक ऐसी नियामक संवैधानिक संस्था आवश्यक है, जो विधायिका तथा कार्यपालिका के असंवैधानिक निर्णयों, नीतियों और कार्यों पर प्रभावी नियंत्रण रख सके। पाश्चात्य देशों में सुशासन लाने अर्थात् कुशासन से नागरिकों की रक्षा के लिए ''ओम्बुड्समेन' नाम की संस्था का प्रावधान हैं। सबसे पहले स्वीडन ने सन् 1809 में इसे अपनाया। इसके बाद फिनलैण्ड ने 1919 में, डेनमार्क ने 1955 में, नार्वे ने 1962 में तथा न्यूजीलैण्ड ने भी 1952 में इस पद्धति को अंगीकार किया है।

ब्रिटेनिका विश्व कोष में, ओम्बुड्समैन को नौकरशाही की शक्तियों के दुरूपयोग के संबंध में, नागरिकों द्वारा की गई शिकायतों की खोज हेतु व्यवस्थापिका का आयुक्त कहा गया है। इस प्रकार इन देशों का यह प्राधिकारी व्यवस्थापिका का एक अधिकृत अभिकर्ता मात्र है। यह सरकार एवं प्रशासनिक अधिकारियों के अर्द्धन्यायिक एवं अन्य प्रशासनिक कृत्यों पर निरन्तर चौकसी करता है। प्रशासनिक अधिकारियों के विरूद्ध कुप्रशासन, प्रशासनिक स्वविवेक का दुरूपयोग, भ्रष्ट आचरण, पक्षपात, भाई-भतीजावाद तथा राजनीतिक प्रभाव आदि के संबंध में नागरिकों द्वारा की गई शिकायतों की खोजबीन करना तथा पीड़ित पक्ष को समुचित राहत दिलाना ही ओम्बुड्समैन का मुख्य कार्य है।[1]

भारत में इस संदर्भ में जुड़ी लोकपाल की नियुक्ति का प्रश्न एक ऐसी नियामक संस्था की खोज कें रूप में है, जो लोकतंत्र में लोक के अधिकारों की रक्षा में भ्रष्टाचार मुक्त, पारदर्शी शासन के लिये, राजनीतिक सत्ता तथा कार्यपालिका पर प्रभावी नियंत्रण के लिये संवैधानिक अधिकारों को प्रयुक्त कर सके। यह सच है कि विश्व के जिन-जिन राष्ट्रों ने लोकपाल को एक शक्तिशाली संस्था के रूप में अपनाया है, उन राष्ट्रों में ट्रांसपेरेन्सी इंटरनेशनल रिपोर्ट के अनुसार भ्रष्टाचार न्यून रूप में ही पाया गया है। जबकि जो राष्ट्र लोकपाल संस्था को नहीं अपना पाये हैं, वहाँ भ्रष्टाचार चरम स्तर पर पहुँच गया है। भारत भी इन राष्ट्रों में से एक है।[2]

भारतीय लोकतंत्र की यशस्वी कीर्ति गाथा को धनबल की शक्ति ने सर्वाधिक कलंकित किया है। धन बल का शस्त्र बाहुबल भी है। धन बल ने तथा बाहुबल ने लोकतंत्र के लिये सम्पन्न चुनावों से जहाँ आम आदमी की भागीदारी को सिर्फ वोट देने के अधिकार तक सीमित कर दिया है, वहीं प्रशासन में भी भ्रष्टाचार के माध्यम से देश की आर्थिक समृद्धि तथा राष्ट्रीय संसाधनों पर भी लगभग पूरा अधिकार करके जनता को महंगाई तथा गरीबी के गर्त में झोंक दिया है। देश का दुर्भाग्य रहा कि हमारे आदर्शवादी संविधान निर्माताओं का लोकतंत्री शासन के अनिवार्य दोष भ्रष्टाचार तथा भाई भतीजावाद की प्रवृत्ति की ओर ध्यान नहीं गया।

अत: इस बीमारी के उपचार व नियंत्रण के साधन, सूचना का अधिकार, सी.बी.आई. की स्वायत्ता तथा लोकपाल संगठन है। इनके लिये आवश्यक संवैधानिक निर्देशों तथा प्रावधानों का संविधान में अभाव है। अत: जन लोकपाल बिल की आवश्यकता अनुभव की गई।

राष्ट्र के भ्रष्टाचार नियंत्रण की मौजूद संस्थाओं के कम प्रभावी होने के कारण जन लोकपाल जैसी संस्था का निर्माण वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था में अनिवार्य प्रतीत हो रहा है।

भारत में भ्रष्टाचार ने एक बड़े उद्योग का रूप ले लिया। आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि 77 प्रतिशत से अधिक मामलों में रिश्वत की मांग हानि न पहुँचाने अथवा कार्य समय पर करने जैसे साधारण कार्यों के लिए मांगी जाती है। ये छोटे से कार्य होते है - बिजली, टेलीफोन का कनेक्शन चालू करना, रेल्वे में आरक्षण, स्कूल में भर्ती, पुलिस स्टेशन पर एफ.आय.आर. दर्ज करना आदि। रिश्वत मांगने वालों में 33 प्रतिशत कर्मी सरकारी अधिकारी - कर्मचारी तथा 10 प्रतिशत स्थानीय नगर निकायों के होते है। शेष करारोपण, जलापूर्ति, लाइसेंस, राजस्व तथा अन्य विविध शुल्कों से संबंधित विभागों से जुडे है। सच्चाई यह है कि भ्रष्टाचार संपूर्ण सामाजिक ताने बाने में 100 प्रतिशत प्रवेश कर गया है। योजना आयोग ने भी चिंता व्यक्त करते हुए कहा है कि इसके कारण बड़े पैमाने पर राष्ट्रीय संसाधनों का दुरूपयोग हो रहा है।[3]

भारत सरकार के केन्द्रीय मंत्री, राज्यों के मुख्यमंत्री, मंत्री, संसद सदस्य, विधायक बैंकों व सार्वजनिक उपकरणों के अधिकारी, भारतीय प्रशासनिक सेवा, पुलिस सेवा, राजस्व सेवा, सेना के अधिकारी तथा अन्य शासकीय कर्मचारी, सभी वर्गों में भ्रष्टाचार में संलग्न लोगों की संख्या में चिंतनीय वृद्धि के प्रमाण उपलब्ध है।

भारत के बड़े लोगों के कुछ राजकीय घोटालों का उल्लेख यहां अप्रासंगिक नहीं होगा। जिनके कारण हमारा लोकतंत्र विश्व में कलंकित हुआ है। इसका एक मुख्य कारण यह है कि भारत में भ्रष्टाचार पर अंकुश के लिये किसी सक्षम, पारदर्शी नियामक संस्था का विकास नहीं हो पाया है। अत: वर्तमान परिदृश्य में लोकपाल बिल की अपरिहार्यता स्वयं सिद्ध है।

भारत के राजकीय घोटालों की तो एक लंबी सूची है। इनमें कतिपय बहुत बड़े व महत्वपूर्ण घोटाले हैं - टू.जी.स्पेक्ट्रम (1.76 लाख करोड़) कामन वेल्थ गेम (70 हजार करोड़), तेलगी स्टाम्प (20 हजार करोड़), सत्यम् (14 हजार करोड़) शेयर घोटाला (4000 करोड़), हसनअली केस (30 हजार करोड़) तथा कोयला आवंटन आदि। इनमें अधिकांश वर्तमान संसद (2009-2013) की अवधि के ही है। देश में चरम सीमा पर फैले इस भ्रष्टाचार ने लोकतंत्र के आदर्श को ही खतरे में डाल दिया।[4]

यह स्वीकार करना होगा कि हमारे राजनेता भी सिद्धान्त रूप में लोकपाल विधेयक की आवश्यकता अनुभव करते रहे है। यही कारण है सन् 1968 से सन् 2013 तक लोकपाल बिल के लिये सरकारी प्रयास क्रमश: 09 बार किये गये है। इतनी अवधि से लंबित बिल यह संकेत देता है कि हमारे विधि निर्माता बार-बार अपना ही मुँह दर्पण में देखकर इसके प्रति गंभीर नहीं रहे हैं।[5] यही कारण हैं हाल ही देश की जनता ने लोकपाल बिल की उपेक्षा के प्रति अन्ना हजारे के नेतृत्व में राष्ट्रव्यापी अहिंसक आंदोलन के माध्यम से सत्ता को गंभीर परिणाम की चेतावनी दे दी है। इस आंदोलन ने देश में भ्रष्टाचार समाप्त करने के लिये प्रस्तावित जन लोकपाल बिल का एक प्रारूप भी प्रस्तुत किया है, जिसके मुख्य प्रावधान निम्न है :-

- लोकपाल संस्थान में अध्यक्ष सहित नौ सदस्य होगें।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

- इनका चयन 15 सदस्यों की समिति करेगी, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय के दो जज, उच्च न्यायालय के दो जज, दो वरिष्ठ वकील, तीन मैग्ना-से पुरूस्कार विजेता शेष जनप्रतिनिधि होगें।
- लोकपाल तथा संस्थान के सदस्य किसी राजनीतिक संस्था से जुड़े नहीं होगें।
- प्रधानमंत्री, मंत्री, संसद सदस्य, राजनेता तथा नौकरशाह इसके अधिकार क्षेत्र में होगें। किसी भी समय इनसे पूछताछ हो सकेगी।
- लोकपाल को अपने कार्य के लिये किसी से आज्ञा नहीं लेना पड़ेगी।
- सी.बी.आई. अन्य जांच एजेन्सियाँ तथा पुलिस लोकपाल के अधिकार में होगें।
- लोकपाल को निर्बाध रूप में जांच व कार्यवाही का अधिकार होगा।
- दोषी पाये जाने पर अपराधी को दण्डित करने का अधिकार भी लोकपाल को होगा।
- लोकपाल को प्रकरण की जांच के लिये एक वर्ष तथा मुकदमा पूरा करने के लिये एक वर्ष का ही समय मिलेगा।
- लोकपाल को नौकरी से हटाने, संसद की सदस्यता समाप्त करने का भी अधिकार रहेगा।
- लोकपाल सरकार को हुए नुकसान की पूर्ति अभियुक्त से करा सकेगा।
- सरकार के हितों की रक्षा के लिये यह दोषी की सम्पत्ति भी जप्त कर सकेगा।
- लोकपाल के निर्णय के विरूद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील की जा सकेगी। इसका निर्णय भी 6 माह में होना चाहिए।[6]

इस जन लोकपाल बिल तथा शासकीय लोकपाल बिल में कई बातों में मतभेद होने से संसदीय इतिहास में पहली बार सर्वसम्मत बिल तैयार करने के लिये पांच सरकारी सदस्य और पांच जन समाज सदस्यों की संयुक्त समिति बनाई गई थी। सहमति नहीं बन पाने से, सरकार ने अपना संशोधित बिल लोकसभा से स्वीकृत करवा लिया। संसद का यह निर्णय राष्ट्रव्यापी आंदोलन के दबाव के कारण हुआ। यथार्थ में संसद में राजनेता जन लोकपाल के पक्ष में लगभग नहीं थे। भारत में प्रजातांत्रिक राजनीति का संचालन धनबल से होने के कारण राजनेता व दल भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबे हुए है। अपवाद से इंकार नहीं है। इसी कारण लोकपाल बिल को एक बार फिर राज्यसभा में येन-केन भटका दिया गया। जनता की जीत का स्वप्न एक बार फिर टूट गया।[7]

भारतीय संस्कृति में सदैव नैतिक मूल्यों को महत्व दिया गया है। धन पर धर्म सदैव भारी रहा है, लेकिन आजादी के बाद जैसे-जैसे विकास कार्य शुरू किये गये, लोकतांत्रिक विकेन्द्रिकरण को अपनाया गया। अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिये उदारीकरण, भूमण्डलीकरण और निजीकरण की नीति लागू हुई देश में क्रमश: भ्रष्टाचार बढ़ता गया।

बहती गंगा में हाथ धो लेने की प्रवृत्ति को समाज ने स्वाभाजिक प्रक्रिया मान स्वीकार भी कर लिया। अत: निर्भय होकर नेता, नौकरशाह और उद्योगपतियों की तिकड़ी ने राष्ट्र के संसाधनों का खुलेआम दोहन शुरू कर दिया। पक्ष विपक्ष का राजनैतिक नेतृत्व भी चोर-चोर मौसेरे भाई की तर्ज पर इस लूट में भागीदार बन गया। इसके नियंत्रण के लिये विद्यमान छोटी-मोटी एजेन्सियाँ कमजोर सिद्ध हुई। इनको यथोचित अधिकार व शक्ति भी प्राय: नहीं थी। अत: देश भ्रष्टाचार के गर्त में गिरता चला गया। सिर पर से पानी निकल गया। अब लगता है यह राज रोग है, लाईलाज बीमारी है।

अत: भ्रष्टाचार के नियंत्रण के लिए सशक्त लोकपाल संस्थान की देश को बड़ी आवश्यकता है। प्राय: सांसदों और राजनेताओं की इसके लिये हार्दिक सहमति नहीं है। इनका तर्क है कि भारत की संसद व सरकार सम्प्रभु है। लोकतंत्र में संवैधानिक रूप में चुनी गई संसद तथा निर्वाचित सरकार जनलोकपाल के सामने बौनी हो जावेगी। जन लोकपाल संस्थान सुपर गवर्नमेन्ट का रूप ले लेगी। लोकपाल को जिस तरह प्रधानमंत्री, मंत्री, सांसद, राजनेता तथा जनता के विरूद्ध जाँच तथा कार्यवाही के अधिकार प्रस्तावित है, इससे वह लोकतंत्र की जनता द्वारा चुनी सरकार से अधिक प्रभावी और शक्तिशाली हो जावेगा। इस स्थिति में कार्यपालिका व विधायिका के विशेष संवैधानिक अधिकारों तथा स्वायत्ता के हनन की स्थिति निर्मित होने की संभावना से इंकार नहीं किया जा सकता है।[8]

वोट की राजनीति में राजनेताओं द्वारा भ्रष्टाचार के विरूद्ध खड़े होने के नैतिक साहस के अभाव में, सिर्फ जन लोकपाल बिल से ही आशा की किरण दिखाई देती है। जनतांत्रिक मूल्यों की अभिरक्षा के लिये इसे संतुलित तथा संवैधानिक रूप में, राष्ट्रपति की अध्यक्षता में गठित नियंत्रक मण्डल के निर्देशों के अंतर्गत ही उच्च पदों पर आसीन निर्वाचित जन प्रतिनिधियों यथा प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री, केन्द्रिय मंत्री आदि के प्रकरणों में लोकपाल के लिये निर्णय लेने के अधिकार को सीमित किया जा सकता है। नियंत्रक मण्डल में सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश, लोकसभा अध्यक्ष, नियंत्रक महालेखापरीक्षक तथा मुख्य निर्वाचन आयुक्त जैसे संवैधानिक पदों पर आसीन पदाधिकारी सदस्य बनाये जा सकते हैं। इस तरह शक्ति संतुलन बनाया जा सकता है।

सन् 2007 में गठित द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग ने कहा था कि लोकपाल का नाम राष्ट्रीय लोकायुक्त करके उसे संवैधानिक दर्जा दिया जावें। सरकार ने इस पर विचार तक नहीं किया। सच्चाई तो यह है कि अब लोकपाल पर राष्ट्रीय सहमति बन गई है, और जिस तरह अपराधीकरण पर अंकुश की दिशा में सरकार को विवश होकर न्यायपालिका के निर्देशों पर कार्यवाही करना पड़ी है तथा पूर्व केन्द्रिय मंत्री को भी जेल की सजा होने पर उसकी संसद की सदस्यता समाप्त करना पड़ी है।

उसी तरह जनलोकपाल के भय से आक्रान्त होने पर भी राजनेताओं को आगामी लोकसभा में, देश को जन लोकपाल की सौगात देना पड़ेगी। अन्ना हजारे भी जन लोकपाल के लिए 10 दिसम्बर 2013 से फिर अनशन पर बैठने की घोषणा कर चुके है। जन लोकपाल के लिए उनका चौथा अनशन होगा, जो रालेगण सिद्धि में होगा। अन्ना ने घोषणा की है कि जन लोकपाल पास होने पर ही वे अनशन समाप्त करेगें।[9]

संदर्भ :-

1. पटेल राम निवास - लोक जीवन में भ्रष्टाचार और लोकपाल की अपरिहार्यता : ए. जरनल ऑफ एशिया फॉर डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेन्ट मुरैना जुलाई सितम्बर 2011, पृष्ठ 98.
2. पटेल राम निवास - लोक जीवन में भ्रष्टाचार और लोकपाल की अपरिहार्यता : ए जरनल ऑफ एशिया फॉर डेमोक्रेसी एण्ड डेवलपमेन्ट मुरैना जुलाई सितम्बर 2011, पृष्ठ 99.
3. संपादकीय दैनिक जागरण 28 मार्च 2011
4. दैनिक भास्कर 11 फरवरी 2011, पृष्ठ 03.
5. तहलका 20 अप्रेल 2011, अंक 4, पृष्ठ-33
6. पत्रिका शुक्रवारविशेष 6-15 अप्रेल 2011
7. आउटलुक - पत्रिका 6 मई 2011, पृष्ठ 25
8. इण्डिया टूडे 20 अप्रेल 2011, पृष्ठ 20
9. ''अन्ना का 10 से फिर अनशन'' दैनिक भास्कर 29 नवम्बर 2013, पृष्ठ 01

****

दक्षिण कोसल की वर्ण व्यवस्था में ब्राह्मणों की स्थिति

डॉ. अनूप परसाई*

मेकाइबर के अनुसार समाज कार्यप्रणालियों एवं रीतियों की अधिकार सत्ता एवं पारस्परिक सहायता की अनेक समूहों एवं श्रेणियों की तथा मानव व्यवहार के नियंत्रणों एवं स्वतंत्रताओं की एक व्यवस्था है।(1) प्राचीन भारतीय समाज चार वर्णों में विभक्त था। कालान्तर में जाति प्रथा की कट्टरता के साथ पालन होने के कारण यह व्यवस्था वंशानुगत हो गयी। ऋग्वेद में उल्लेख आया है कि विराट पुरूष ब्रह्मा के मुख से ब्राह्मण भुजाओं से क्षत्रिय, उदर से वैश्य एवं पैरों से शुद्र की उत्पत्ति हुई।(2) समुदाय में पाये जाने वाली अत्यंत अनंत पृथकताओं को स्वीकार करना ही वर्ण व्यवस्था है।(3) वैदिक युग की कुटुम्ब व्यवस्था ने समाज को जन्म दिया(4) प्राचीन भारत में विभिन्न संस्थओं का उदय, संगठन और उत्थान सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ-साथ हुआ। इनका संबंध व्यक्ति तथा समाज दोनों से रहा।

ऋग्वेद में ब्राह्मणों का उल्लेख अनेक मंत्रों में हुआ है, जिनसे ज्ञात होता है कि वे सोमपान व प्रार्थना करते थे और समाज में उनका विशिष्ट स्थान था। ऋग्वेद में ब्रह्म, क्षत्र और विष का अलग-अलग समुदायों के रूप में उल्लेख है। ऋग्वेद में ब्रह्मा देवानम और विप्राणां जैसे उल्लेख प्राप्त होते हैं। धुर्वे ने ऋग्वेद में आये विवरणों के आधार पर यह मत व्यक्त किया है कि पूर्व वैदिककाल में ब्राह्मण जाति के रूप में संगठित हो चुके थे किन्तु काणे ने इस मंत्र का अर्थ स्पष्ट करते हुये इसे अस्वीकार कर दिया है। ऋग्वेद के कुछ मंत्रों में ब्रह्म शब्द का प्रयोग मिलता है इस प्रकार जो प्रार्थना करते थे अथवा प्रार्थना की रचना करते थे वे ब्राह्मण कहलाये। चातुर्वण्य व्यवस्था में ब्राह्मणों को विशेष मान दिया जाता था। ब्राह्मणों को पंच महायज्ञादि धार्मिक कृत्य करने के लिये राजा की ओर से मंगल कार्य के प्रसंग में भूमिदान दिया जाता था। तत्कालीन भारतीय समाज में ब्राह्मणों को सम्मान व पद प्राप्त था। राजा भी उनका सम्मान करता था।(7) वैदिक काल से ही समाज में ब्राह्मणों का स्थान सर्वोपरि था। वेदों, संहिताओं तथा ब्राह्मणों की महत्ता मुक्त कण्ठ से की गयी है। ब्राह्मणों से सभ्यता एवं भद्रता की आशा की जाती है।(8) प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था के प्रारंभ में आर्यों का एक ही समुदाय था। ऋगवेद के समय समाज का विभाजन केवल दो तरह के लोगों आर्य एवं अनार्यों में हुआ था। फिर उत्तर वैदिक काल में ब्राह्मण कहे जाने वाले एक नये वर्ग के लोगों का अविर्भाव हुआ, जिनका काम ब्राह्मण ग्रंथों का अध्ययन तथा जटिल विधियों के अनुसार यज्ञिक उपासना अथवा कर्मकांड का संपादन करना था इसके कारण वह समाज का नियंता था, अत: उसे नानागुण समन्वित होना चहिये।(9) दक्षिण कोसल में राज्य करने वाले विभिन्न राजवंशों के शासकों ने ब्राह्मणों को अत्याधिक महत्व दिया। ब्राह्मण ही राजा के महापुरोहित रहते थे तथा उन्हें धर्म संबंधी परामर्श देते थे। द्वितीय शताब्दी के किरारी काश्ट स्तंभलेख में पादमूलक नामक अधिकारी को पुरोहित के साथ समीकृत किया है।(10) राजमाता वासटा के लक्ष्मण मंदिर शिलालेख(11) में पादमूल शब्द पुरोहित के अर्थ में हुआ है। पृथ्वीदेव प्रथम के रायपुर ताम्रपत्रलेख(12) प्रमुख विप्र केशव का उल्लेख हैं जाजल्लदेव द्वितीय के अमोदा दानपत्र(13) में दो ब्राह्मणों को दान दिये जाने का उल्लेख है। दक्षिण कोसल में शासन करने वाले विभिन्न राजवंशों के शासकों के लेखों में ब्राह्मणों के गोत्र एवं प्रवर का उल्लेख मिलता है। जिसका विवरण निम्नानुसार है।

गोत्र:- नलवंशीय शासक भवदत्तवर्मन एवं अर्थपति के ऋद्धपुर एवं केसरीबेढ़ा ताम्रपत्रों में पराशर और कौत्स गोत्र का उल्लेख मिलता है शरभपुरीय शासकों के ताम्रपत्रों में धारणी गोत्र (कुरूद ताम्रपत्र) पाराशर गोत्र (ठाकुरादिया ताम्रपत्र) कौण्डिल्य गोत्र (आरंग ताम्रपत्र) कात्यायन गोत्र (आरंग ताम्रपत्र) आडिरस गोत्र (मल्लार ताम्रपत्र) का उल्लेख है(14) राज्शितुल्य कुल के शासक भीमसेन द्वितीय के आरंग ताम्रपत्र में भारद्धाज गोत्र का उल्लेख मिलता है(15) पाण्डुवंशीय शासकों के अभिलेखों में शाण्डिल्य गोत्र (मलगा ताम्रपत्र) कौण्डिन्य गोत्र (अढ़ीयार ताम्रपत्र) भारद्धाज गोत्र (राजिम एवं बोड़ा ताम्रपत्रों) का उल्लेख मिलता है सोमवंशीय शासकों के अभिलेखों में भारद्धाज गोत्र (कटक ताम्रपत्र) कश्यप गोत्र (पटना ताम्रपत्र) कौशिक गोत्र (उड़ीसा संग्रहालय ताम्रपत्र) वत्स गोत्र (गिनतला ताम्रपत्र) कौण्डिन्य गोत्र, (वक्रटेन्टली ताम्रपत्र) पराशर गोत्र (कलीभना ताम्रपत्र) कौच्छत्स गोत्र, (पटना ताम्रपत्र) कृश्णत्रेय गोत्र, (पटना ताम्रपत्र) गौतम गोत्र (नागपुर संग्रहालय ताम्रपत्र) अगस्त गोत्र (पटना ताम्रपत्र) का उल्लेख मिलता है(16) रतनपुर के कलचुरी शासकों के अभिलेखों में वत्स गोत्र (डेकोनी ताम्रपत्र) आलवायन गोत्र (घोटिया ताम्रपत्र), चन्द्रादेय गोत्र (अमोदा ताम्रपत्र) शाणक्रीत गोत्र (बिलईगढ़ ताम्रपत्र) कौशिक गोत्र (रायपुर ताम्रपत्र) आडिरस (अमोदा ताम्रपत्र) पराशर गोत्र (शिवरीनारायण ताम्रपत्र) वत्स गोत्र (सरखों ताम्रपत्र) का उल्लेख मिलता है(17) शरभपुरीय शासकों के ताम्रपत्रों में वाजसनेय शाखा (ठाकुरदिया ताम्रपत्र) माध्यन्दिन शाखा (मलगा ताम्रपत्र) माध्यान्दिन शाखा (अढ़भार ताम्रपत्र) मैत्रायिण एवं छान्दोयज्ञ शाखा, यजुर्वेद एवं सामवेद के (बोड़ा ताम्रपत्र) का उल्लेख मिलता है(18) मेकल के पाण्डुवंशीय शासक भरतबल के बम्हनी ताम्रपत्र में वाजसनेय माध्यान्दिन शाखा का उल्लेख आया है। सोमवंशीय राजवंश के शासकों के ताम्रपत्रों में गौतम शाखा (पटना ताम्रपत्र) कौमुथ चरण छान्दोग्य शाखा (कटक ताम्रपत्र) यजुर्वेद काण्व शाखा (जैष्ठ सिंग डूमरी ताम्रपत्र) मैत्रायिणी शाखा (महाकोशल इतिहास परिशद ताम्रपत्र) ऋगवेद माध्यान्दिन शाखा (नरसिंहपुर ताम्रपत्र) अद्धयी शाखा (कुन्डोपाली ताम्रपत्र) वाजसेनय मध्यान्दिन शाखा (नागपुर संग्रहालय ताम्रपत्र), सामवेदी कौमुथ (पटना ताम्रपत्र), छान्दोग्य शाखा (वक्रटेन्टली ताम्रपत्र) कण्व शाखा (पटना संग्रहालय ताम्रपत्र) का उल्लेख मिलता है कलचुरि शासकों के अभिलेखों के अभिलेखों में कुछ परिवर्तन दिखाई पड़ता है। केवल पृथ्वीदेव प्रथम एवं द्वितीय के अमोदा ताम्रपत्र में बृहवृच (ऋगवेद) और चन्द्रात्रेय शाखा का उल्लेख मिलता है। अन्य अभिलेखों में गोत्र और प्रवर का तो उल्लेख है। किन्तु शाखा के स्थान पर उस ब्राह्मण द्धारा जानने वाले विद्या जैसे वेद, आगम, छन्दशास्त्र स्मृति, पुराण, ज्योतिष एवं शाकम्भरी विद्या (तांत्रिक उपासना) का ज्ञाता आदि शब्दों का उल्लेख मिलता है।

प्रवर :-इस क्षेत्र से प्राप्त अभिलेखों में से केवल सोमवंशीय शासकों और रतनपुर के कलचुरि शासकों के अभिलेखों ब्राह्मणों के गोत्र एवं शाखा के साथ प्रवर का उल्लेख मिलता है। अभिलेखों में प्रवरों की संख्या का उल्लेख अलग-अलग मिलता है। कुछ स्थानों में प्रवरों की संख्या एक, दो तीन तथा पांच का उल्लेख मिलता है। तो कुछ अभिलेखों में प्रवरों के नामों का उल्लेख मिलता है। सोमवंशीय शासकों के ताम्रपत्रों में आत्रेय प्रवर (जेष्ठसींग डुगरी ताम्रपत्र), देवराज-औदल-विश्वामित्र, प्रवर (पटना ताम्रपत्र), एकर्शिविशिष्ट, प्रवर (महाकोशल इतिहास परिशद ताम्रपत्र) मित्रव्य-वरूण, प्रवर (कुन्डोपाली ताम्रपत्र), आडिरस-वृहस्पति-भारद्धाज, प्रवर (कटक ताम्रपत्र), वशिष्ट-शक्ति-पराशर, प्रवर (कलीभना ताम्रपत्र), देवराज-विश्वामित्र, प्रवर पटना संग्रहालय ताम्रपत्र, आडिरस-शम्बरीव, प्रवर (पटना ताम्रपत्र) गौतम-आडिरस-औतथ्य, प्रवर (नागपुर संग्रहालय ताम्रपत्र), आर्चनानस प्रवर (पटना ताम्रपत्र), विश्वामित्र-देवरात-औदल, प्रवर (कटक

* विभागाध्यक्ष एवं प्राध्यापक (भारतीय इतिहास) शासकीय छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

ताम्रपत्र),आडिरस-वृहस्पति- भारद्धाज प्रवर (निबिङ्गा ताम्रपत्र), ईश्वरपाद प्रवर (पटना ताम्रपत्र), और्ध्व-यमदाग्नि प्रवर (गिनतला ताम्रपत्र) का उल्लेख मिलता है। सोमवंशीय शासकों के पश्चात छत्तीसगढ़ क्षेत्र में शासन करने वाले कलचुरि शासकों के अभिलेखों में भी प्रवर का उल्लेख मिलता है। उतिथ्य-गौतम-वशिष्ट, प्रवर (अमोदा ताम्रपत्र), आत्रेय-अर्चमानस-सस्यावास, प्रवर, (मल्लार शिलालेख), वत्स भार्गव-च्यवन्य-आप्तनवन प्रवर (अमोदा ताम्रपत्र), भारद्धाज-आडिरस-वृहस्पति, प्रवर (अमोदा ताम्रपत्र), चन्द्र-अत्रि-स्पावन (पवन), प्रवर (अमोदा ताम्रपत्र), वशिष्ट-शक्ति-पराशर प्रवर (शिवरीनारायण ताम्रपत्र) वत्स-भार्गव-चवन्य-आप्नवन-और्य, प्रवर (सरखों ताम्रपत्र), वशिष्ट-मैत्रागण-कौडिन्य, प्रवर (घोटिया ताम्रपत्र), वशिष्ट-शक्ति-पराशर, प्रवर, (पेन्ड्राबंध ताम्रपत्र)।

उपनाम एवं मूल स्थान- इस क्षेत्र के अभिलेखों में दान ग्रहण करने वाले ब्राह्मणों के नाम के साथ विभिन्न उपनाम तथा उनके मूल स्थान का भी उल्लेख मिलता है। नलवंशीय शासकों के अभिलेखों में नाम के साथ आर्य शब्द मिलता है रविदत्तार्य्यास्य एवं देवार्य्यस्य शरभपुरीय शासकों के अभिलेखों में नाम के साथ अंत में अधिकांशत: स्वामी मिलता है। (विश्णुस्वामी एवं भाश्रुत स्वामी)[19] कभी कभी नाम के पहले भट्ट और अन्त में स्वामी मिलता है (भट्टपुरंदर स्वामी) [20] पाण्डुवंशीय शासकों के अभिलेखों में नाम के आगे भट्ट तथा अंत में दत्त लिखा जाता था (भट्ट गौरीदत्त) कुछ अभिलेखों में नाम के अंत में उपाध्याय भी मिलता है (नारायणोपाध्याय) सोमवंशीय शासकों के अधिकांश ताम्रपत्रों में नाम के आगे भट्टपुत्र लिखा जाता था जैसे (भट्टपुत्र दामोदर) कुछ अभिलेख में नाम के अगो भट्ट (भट्टश्री महोदधी)[21] लिखा जाता था। एक दो अभिलेख में नाम के अंत में शर्मा (नारायणशर्मा) लिखा मिलता है। इसके पश्चात् रतनपुर के कलचुरि शासकों के अभिलेखों में अधिकांश में ब्राह्मण का केवल नाम मिलता है जैसे ब्राह्मण केशव (अमोदा ताम्रपत्र) कुछ अभिलेखों में नाम के साथ शर्मा तथा त्रिपाठी जैसे उपनाम भी मिलते हैं। जैसे गोपाल शर्मा एवं देवदत्त त्रिपाठी कभी कभी नाम के अंत में स्वामी भी मिलता है, जैसे मिहिर स्वामी इसके साथ ही शैवाचार्य और शंकभरीविद्या में परंपरागत ब्राह्मणों के नामों का भी उल्लेख मिलता है। छत्तीसगढ़ क्षेत्र से प्राप्त प्रारंभिक अभिलेखों में ब्राह्मणों के मूल स्थान का उल्लेख नहीं मिलता है। किन्तु बाद के सोमवंशीय एवं कलचुरि शासकों के अभिलेखों में दान ग्रहण करने वाले ब्राह्मणों का मूल स्थान का उल्लेख मिलता है। सोमवंशीय शासकों के अभिलेख में श्रावस्ती मंडल, भट्परोली, मध्य देश, तिरहुत भुक्ति, माध्वील, टाकारी, कोशल देश, पभ्पासरानि, ओड्र देश एवं हस्तिपद आदि [22] स्थानों का उल्लेख मिलता है। कलचुरि शासकों के अभिलेखों में कुलांचा, टकारी, कुम्भटी, मध्यप्रदेश एवं हस्तियामठि का उल्लेख मिलता है।[23] इससे ऐसा प्रतीत होता है कि इस काल तक आते आते ये स्थान कुछ विशिष्ट विद्वान ब्राह्मणों के परिवारों के निवास स्थान थे, जहां से योग्य ब्राह्मणों को बुलाकर दान दिया जाता था।

व्यवसाय : छत्तीसगढ़ क्षेत्र से प्राप्त अभिलेखों में अधिकांश किसी विशेष अवसर (सूर्य एवं चन्द्रग्रहण, मकर संक्राति, एकादशी एवं पूर्णिमा तथा चैत, श्रावण तथा कार्तिक मास कभी कभी अधिक मास आदि) पर ब्राह्मणों को दिये गये दान का विवरण मिलता है। अभिलेखों में मिलने वाले तथ्यों के ऐतिहासिक विश्लेषण से ज्ञात होता है कि ये अग्रहार ग्राम एक ब्राह्मण या कभी-कभी कई ब्राह्मणों को संयुक्त रूप से दिया जाता था। ये सभी ग्राम सभी प्रकार के करों से मुक्त होते थे तथा इन ग्रामों में शासकीय अधिकारियों का प्रवेश निषिद्ध होता था। लगभग सभी दानपत्रों में ''चाट भाट प्रावेश्यस्य व्वकरविसिर्ज्जित'' शब्द का उल्लेख अवश्य मिलता है। ये अग्रहार ग्राम सदाचरण करने पर ब्राह्मणों की कई पीढ़ियों तक इसका उपयोग कर सकते थे। साथ ही राजा का यह भी आदेश होता था कि उनके पश्चात् शासन करने वाले शासक इस दान का अनुपालन करें। यह भी अधिकांश ताम्रपत्रों पर उल्लेखित होता था। इससे ज्ञात होता है कि ब्राह्मणों का मुख्य कार्य अध्ययन, अध्यापन एवं पुरोहित का कार्य था जिसके लिये उन्हें राज्य और समाज से दान और सम्मान मिलता था। यही उनकी आजीविका थी। ब्राह्मणों का समाज में विशिष्ट स्थान था। राजा के मंत्रिमंडल में पुरोहित भी होता था। संकटकालीन परिस्थिति में वे राजा को उचित सलाह देकर सहायता किया करते थे। भाकमिश्र, सोमेश्वर, पुरूषोत्तम, गंगाधर आदि ब्राह्मण मंत्रियों के कार्य कौशल का उल्लेख कलचुरियों के अभिलेखों में बड़े गौरव के साथ हुआ है। इनमें कई मंत्रियों ने तो रणस्थल में भी अपने शौर्य प्रदर्शन करके अपने स्वामियों को महत्वपूर्ण विजय दिलाई थी। अन्यों ने अपने बुद्धि एवं कुशलता से राज्य को राजकीय और आर्थिक संकट से मुक्त किया था। तथा देश में शांति एवं सुव्यवस्था कायम की थी। कई ब्राह्मणों ने राज प्रशस्तियाँ भी लिखी थी। जिसमें उत्तम कवित्व के दर्शन होते हैं यहां से प्राप्त अभिलेखों में शैव, पाशुपत एवं शाक्त तथा बौद्धमत के अनुयायी ब्राह्मणों का भी उल्लेख मिलता है[24]। जो न्याय, दर्शन, वेदांत तथा शैव एवं शाक्त सिद्धांत के ज्ञाता आचार्य थे। मंदिरों के पूजा बली चुरू एवं सत्र तथा यथा समय उसका जीर्णाद्धार का कार्य भी दान ग्रहण करने वाले (अग्रहार ग्राम) ब्राह्मण ही करते थे। इस प्रकार विद्धान वेदाध्ययन तथा अध्यापन एवं यज्ञ तथा पुरोहती कार्य करने वाले ब्राह्मणों का समाज में उच्च स्थान रहा है। समयानुसार इनके कई शाखा एवं उपविभाग हो गये थे। छत्तीसगढ़ क्षेत्र मध्य में स्थित होने के कारण चारों दिशाओं से ब्राह्मण यहां आते रहे उन्हें यथायोग्य आदर एवं सम्मान मिलता था। वर्तमान काल में इस क्षेत्र में ब्राह्मणों के निम्न उपजातियाँ मिलती है जिन्हें उनके मूल स्थान के नाम से जाना जाता है। जैसे - अवस्थी, जिझोतियाँ, कान्यकुब्ज, सरयुपारी, महाराष्ट्रीयन मैथलीय, नागर, नामदेव, सनाढय, सारस्वत, शाक्तद्धीपी, उत्कल, तैलंग, महापात्र, गुर्जर आदि है[25] इन ब्राह्मण समुदाय का कार्य पूजापाठ, कर्मकाण्ड एवं ज्योतिश एवं शाक्त विद्या रहा हैं उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में छत्तीसगढ़ क्षेत्र की संपूर्ण जनसंख्या में ब्राह्मणों का प्रतिशत लगभग तीन था। ब्राह्मणों का छत्तीसगढ़ी सामाजिक संरचना में प्राचीन काल से वर्तमान काल तक विशिष्ट स्थान रहा है।

संदर्भ ग्रंथ :-

1. सचदेव, डी.आर. : समाजशास्त्र के सिद्धांत, 1997, पृ. 68.
2. काणे, पी.व्ही. : धर्मशास्त्र का इतिहास, भाग-एक, पृ. 114.
3. गौरेला, वाचस्पति : वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, 1970, पृ. 327.
4. पांडे, गोविन्दचन्द्र : इतिहास स्वरूप एवं सिद्धांत, 1973, पृ. 204.
5. ऋग्वेद, 6.31.4.
6. धुर्वे, कास्ट इन इंडिया, पृ. 42.
7. जैन, बालचन्द्र : उत्कीर्ण लेख, 1961, पृ. 37.
8. कीलहार्न : जर्नल ऑफ रायल एशियाटिक सोसाइटी, 1905, पृ. 617.
9. शर्मा, रामायणप्रसाद, भारतीय वर्णाश्रम, पृ. 20.
10. जैन, बालचन्द्र : उत्कीर्ण लेख, पृ. 2-3.
11. उपरिवत, लेख क्र. 9, श्लोक 26, पृ. 40.
12. का.इ.इ. जिल्द - 4, लेख क्र. 75, पंक्ति 13, पृ. 400.
13. वही, लेख क्र. 100, पृ. 539.
14. एपिग्राफिया इंडिका, भाग - 19, पृ. 102.
15. वही भाग - 27, पृ. 209.
16. वही भाग - 9, पृ. 342.
17. वही, पृ. 9.
18. एपिग्राफिया इंडिका, भाग - 22, पृ. 15., भाग - 23, पृ. 20.
19. वही भाग - 19, पृ. 100-103.
20. वही भाग - 22, पृ. 15-23.
21. ओरिसा हिस्टारिकल रिसर्च जनरल, भाग - 12, पृ. 20.
22. इंडियन हिस्ट्री क्वाटरली, भाग - एक, पृ. 405.
23. का.इ.इ. भाग-4, पृ. 409.
24. वही, पृ. 375.
25. मिराशी, वी.वी. : कलचुरि नरेश और उनका काल पृ. 59-61.

खोरपा से प्राप्त विष्णु प्रतिमा : एक अध्ययन

डॉ. अनूप परसाई *

रायपुर जिला मुख्यालय के अभनपुर तहसील के अंतर्गत खोरपा नामक ग्राम अवस्थित है। रायपुर जिला से 25 कि.मी. दूर दक्षिण दिशा (21''3'41'' उत्तरी अक्षांस 81''38'48'' पूर्वी देशांतर) में अवस्थित है। खारून नदी की दूरी लगभग 7 कि.मी. है। यहाँ प्राचीन खण्डित प्रतिमाएं है तथा आसपास के गांव में भी पूरा सम्पदा बिखरी हुई है।

चतुर्भूजजी विष्णु की प्रतिमा नीम वृक्ष के चबूतरे पर रखी हुई थी, जिसका कुछ हिस्सा टूट गया था, जिसे ग्रामीणों के सहयोग से कलाकार के माध्यम से उसे जोड़ कर संरक्षित किया गया। ग्रामीण इसे ब्रह्मा देव तथा विष्णु के नाम से पुकारते है। ग्रामीण इसकी पूजा करते हैं तथा उनकी लोक आस्था जुड़ी हुई है तथा विवाह के समय सबसे पहले हल्दी का लेप विष्णु भगवान को चढ़ाया जाता है। यह परम्परा आज भी विद्यमान है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि – भारतीय इतिहास में कलचुरि राजवंश का महत्वपूर्ण स्थान है। लगभग छठवीं शताब्दी ई. में इसका उदय महिष्यती में हुआ। महाभारत[1] से ज्ञात होता है कि शौण्डिक क्षत्रीय थे, वे ब्राह्मणों के कोप से वृषलत्व को प्राप्त हुए। अग्निपुराण[2] में शौण्डिक हैहयों की शाखा का उल्लेख मिलता है। डॉ. रायबहादुर हीरालाल का एक संकलन– जबलपुर ज्योति, का अध्ययन कर डॉ. रामकुमार अहिरवार ने विचार व्यक्त किया है कि– ''पाशुपत पंथी मदिरा का विशेष उपयोग करते थे या उनके संबंधी मदिरा को बनाते भी रहे होंगे। ... हैह्य काल में मदिरा में चुरि–चुराने अर्थात पकाने लगे इसलिए उनका नाम कलचुरी पड़ गया। आगे ये क्षत्रीय धर्म में संलग्न रहे, आने वाले लोग भी कलचुरि कहलाते रहे और मदिरा बनाते रहे इस व्यवसाय से संबंधित लोगों ने ''कल्यपाल'' की पद्धी धारण की होगी। कल्यपाल की आधुनिक अपभ्रंश कलवार या कलार से है। इस प्रकार कालांतर मं हैह्यवंशी, पाशुपत पंथी नरेश या सैनिक कलचुरि और उसके वंशज मदिरा द्वारा जीवन निर्वाह करते थे। आगे चलकर कल्यपालों के दो भाग हो गए और उन्होंने भिन्न–भिन्न जातियों का रूप धारण कर लिया।''[3]

क्लचुरि शासक अपनी वंश परम्परा का प्रारंभ कृतवीर्य के पुत्र हैह्यवंशी सहस्त्रार्जुन से करते है तथा उन्हें 'चन्द्रवंशी' बताया गया है। अभिलेखों में कलचुरि राजवंश का – कटच्चुरि (कटचुरि), कालचुर्य (कलचुर्य), कलचुति (कलचुटि), कलत्सुरी (कलत्सूरी), करचुरि (कलिचुरि) जैसे विविध रूपों में नामाभिधान मिलता है।[4]

कलचुरि वंश के शासकों के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत गुजरात, महाराष्ट्र, मालवा तथा कोसल का क्षेत्र रहा है। कलचुरियों की एक शाखा बाद में जबलपुर के निकट त्रिपुरी में आ गई। लक्ष्मणराज के बाद (प्रथम), कोक्कल त्रिपुरी का राजा हुआ। उसका लक्ष्मण से क्या संबंध था, इस बारे में कोई सूचना नहीं मिलती।

कोकल्ल बहुत ही महत्वाकांक्षी और प्रतापी राजा था।[5] त्रिपुरी के कलचुरियों का एक शाखा ने कालांतर में अपना राज्य छत्तीसगढ़ में स्थापित किया। छत्तीसगढ़ के कलचुरि शासकों द्वारा जारी अभिलेखों से ज्ञात होता है कि त्रिपुरी के शासक कोकल्ल के 18 पुत्र थे। उसने अपने छोटे भाईयों की छोटे–छोटे मण्डलों का अधिपत्य (शासक) बनाया। इन छोटे भाईयों में से एक के वंश में कलिंगराज हुआ, जिसने छत्तीसगढ़ क्षेत्र को जीतकर अपने पूर्वजों द्वारा स्थापित तुम्माण (वर्तमान कोरबा जिला) को अपनी राजधानी बनाया।[6] उपरोक्त विवरण से छत्तीसगढ़ क्षेत्र में कलचुरि राज्य की जानकरी प्राप्त होती है। बिल्हारी अभिलेख[7] से ज्ञात होता है कि कोकल्ल प्रथम के पुत्र शंकरगण द्वितीय मुग्धतुंग ने लगभग 900 ई. में कोसल के राजा को पराजित कर उनसे छत्तीसगढ़ प्रदेश छिन लिया था। इसके पश्चात् 950 ई. के लगभग सोमवंशियों ने पुन: छत्तीसगढ़ पर अधिकार कर लिया।

कल्चुरियों के द्वारा वास्तविक शासन लगभग 1000 ई. में कलिंगराज द्वारा स्थापित किया गया। कलिंगराज के पश्चात् कलचुरि राजवंश का शासक उसका पुत्र कमलराज लगभग 1020 ई. में राजा हुआ। कमलराज का उत्तराधिकारी रत्नदेव प्रथम हुआ। रत्नदेव प्रथम के पश्चात् इसका पुत्र पृथ्वीदेव प्रथम राजा बना इसकी तिथि रायपुर ताम्रपत्र[8] से कलचुरि सम्वत् 821 अर्थात् 1096 ई. होता है। जाजल्लदेव प्रथम अपने पिता पृथ्वीदेव प्रथम के पश्चात् लगभग 1095 ई. में रत्नपुर का शासक हुआ। इसके रतनपुर शिलालेख[9] में इसकी विजय का उल्लेख है।

जाजल्लदेव प्रथम के पश्चात् रत्नदेव द्वितीय कलचुरि संवत् 868 अर्थात् 1127 ई0 में शासक हुआ।[10] रत्नदेव द्वितीय का उत्तराधिकारी इसका पुत्र पृथ्वीदेव द्वितीय हुआ। इसका सर्वप्रथम अभिलेख कलचुरि सम्वत् 890 अर्थात 1138 ई. का है। पृथ्वीदेव द्वितीय के पश्चात् कलचुरि राजवंश का शासक जाजल्लदेव द्वितीय हुआ। इसकी सर्वप्रथम ज्ञात तिथि मल्हार शिलालेख[11] कलचुरि संवत् 919 अर्थात् 1167 ई. से मिलती है। जाजल्लदेव द्वितीय के पश्चात् उसके बड़े भाई जगदेव के शासक रत्नदेव तृतीय हुआ। रत्नदेव तृतीय के पश्चात् उसका उत्तराधिकारी एवं शासक प्रतापमल्ल हुआ। इसके तीन ताम्रपत्र पेंड्राबंध, कोनारी एवं बिलाईगढ़ नामक स्थान से क्रमश: कलचुरि सम्वत् 968 एवं 969 ई. के प्राप्त हुए है।[12]

प्रतापमल्ल के पश्चात रतनपुर के कलचुरि राजवंश के इतिहास के विषय में जानकरी देने वाले स्त्रोतों की कमी है। वाहरेन्द्र नामक एक राजा के दो षिलालेख रतनपुर[13] से विक्रम सम्वत् 1552 और दो शिलालेख कोसगई[14] (वर्तमान कोरबा जिला) से मिले है। जिसमें से एक तिथि विहीन और दूसरा विक्रम सम्वत् 1570 ई. का है। इस राजवंश के शासकों द्वारा विभिन्न दान एवं निर्माण आदि के उपलक्ष्य में जारी किए गए शिलालेख एवं ताम्रपत्र, मुद्राएँ सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ क्षेत्र के अनेक स्थानों से ज्ञात हुए है। इन अभिलेखीय और मौद्रिक साक्ष्यों के ऐतिहासिक अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि उनके साम्राज्य क्षेत्र के अंतर्गत सम्पूर्ण छत्तीसगढ़ का मैदानी भू–भाग रहा है। जिसके अंतर्गत रायपुर जिला भी आता था।

प्राप्ति स्थल– रायपुर जिला मुख्यालय के अभनपुर तहसील के अंतर्गत खोरपा नामक ग्राम अवस्थित है। रायपुर जिला से 25 कि.मी. दूर दक्षिण दिशा में अवस्थित है। खारून नदी की दूरी लगभग 7 कि.मी. है। यहाँ प्राचीन खण्डित प्रतिमाएं है तथा आसपास के गांव में भी पुरासम्पदा बिखरी हुई है।

चतुर्भूजी विष्णु की प्रतिमा नीम वृक्ष के चबूतरे पर रखी हुई थी, जिसका कुछ हिस्सा टूट गया था, जिसे ग्रामीणों के सहयोग से कलाकार के माध्यम से

* विभागाध्यक्ष (प्राचीन भारतीय इतिहास) शासकीय जे.यो. छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.) भारत

उसे जोड़ कर संरक्षित किया गया। ग्रामीण इसे बरहमा देव तथा विष्णु के नाम से पुकारते है। ग्रामीण इसकी पूजा करते है, लोक आस्था जुड़ी हुई है तथा विवाह के समय सबसे पहले हल्दी का लेप विष्णु को चढ़ाया जाता है। यह परम्परा आज भी जीवंत है।

धार्मिक एवं कला पक्ष– शत्पथ ब्राह्मण में विष्णु को सभी देवताओं में श्रेष्ठ कहा गया है।[15] महाकाव्य एवं पौराणिक काल में इनको सृष्टि के रक्षक के रूप में महत्वपूर्ण देव माना गया। आगे भक्ति सम्प्रदाय के विकसित होने पर वैष्णव सम्प्रदाय कहा गया, इसके तीन केन्द्रबिन्दु हुए– ऐतिहासिक देवता वासुदेव–कृष्ण, वैदिक विष्णु और ब्राह्मण ग्रन्थों में नारायण।[16]

डॉ. इन्दुमती मिश्र ने विष्णु प्रतिमा के संदर्भ में लिखा है कि– ''विष्णु के कुछ विशिष्ट रूपों का वर्णन वैष्णव पुराणों में हुआ है। यह रूप सभी देवों से भिन्न है यही इसकी विशेषता है। यह विशेषता विष्णु के आकार–प्रकार, मुखों की संख्या, भुजाओं की संख्या तथा मुख मुद्रा पर आधारित है।[17]

डॉ. बृजभूषण श्रीवास्तव ने विष्णु–प्रतिमा निर्माण के संबंध में अपना विचार व्यक्त किया है कि– ''गुप्तोत्तर काल में भी विष्णु की स्थानक–प्रतिमाओं का निर्माण होता रहा। इस युग की मूर्तियों में उनके सामान्यत: चार हाथ दिखाये गये हैं जिनमें शंख, चक्र, गदा, और पद्म प्रदर्शित किये जाते है।[18] रूपमण्डन[19] में वर्णन मिलता है कि विष्णु कौमोदकी (गदा), पद्म, पांचजन्य नामक शंख और सुदर्शन चक्र तथा मधुसूदन चक्र, शंख, कमल और गदा धारण करते हैं।

चतुर्भुजजी विष्णु प्रतिमा के लक्षण एवं कलाकृतियॉ इस प्रकार हैं–

1. इस प्रतिमा का माप 100.45.25 से.मी. है।
2. यह ग्रेनाईट प्रस्तर पर निर्मित है।
3. चतुर्भुजी विष्णु समपाद स्थानक मुद्रा में स्थानस्थ है।
4. प्रतिमा के सिर के पीछे आभामण्डल सुशोभित है।
5. विष्णु प्रतिमा के बांए हाथ में चक्र एवं दांए हाथ में गदा धारण किए हुए है।
6. पीछे के बांए हाथ में शंख एवं दाए हाथ में सनाल पद्म धारण किए हुए है।
7. वक्ष स्थल पर श्रीवत्स शोभायमान है।
8. सिर में किरीट मुकुट, मुकुट में कौस्तुभमणी, कानों में चक्रकुण्डल, गले में उपग्रीवा, हार, भुजा में भुजबन्द (केयूर), हाथ में कंकण, उदर में उदरबंध, कमर में कटिसूत्र, जंघा में कटकवलय, उरूवाम, मुक्तवाम, वनमाला, और पैर में पादवलय एवं पादजालक आभूषणों से अलंकृत है।
9. विष्णु अधोवस्त्र (धोती) धारण किए हुए है।
10. प्रतिमा में ऊपर की ओर दांए और बांए दोनों ओर मालाधारियों का शिल्पांकन किया गया है।
11. प्रतिमा के सबसे नीचे बांई ओर उपासक हाथ जोड़कर उकडू बैठा है।
12. प्रतिमा पूर्णरूपेण सही स्थिति में परिलक्षित हो रही है।

उपरोक्त प्रतिमा के लक्षणों की बनावट और कलाकृतियों के आधार पर कलचुरिकालीन 11–12वीं सदी सम्मत प्रतीत होता है। नारायणपुर के विष्णु मंदिर से प्राप्त प्रतिमाओं में तथा अन्य स्थानों से प्राप्त कलचुरिकालीन कलाकृतियों में अलकंरण की अधिकता दिखाई देती हैं, जो कि इस विष्णु प्रतिमा में द्रष्टव्य हैं। कलचुरिकालीन प्रतिमाओं में अलंकरण अपेक्षाकृत लंबे नुकीलानुमा होता है। अत: खोरपा से प्राप्त विष्णु प्रतिमा पूर्णरूपेण सही और अच्छी स्थिति में है। शिल्प कला एवं पुरातत्व की दृष्टि से अतिमहत्वपूर्ण है।

सन्दर्भ सूची –

1. महाभारत, अनुशासन पर्व, पृ0 35.
2. अग्निपुराण, 274/10.
3. अहिरवार, डॉ. रामकुमार, त्रिपुरी की मूर्तिकला, पृ. 7.
4. पाण्डेय् डॉ.विमलचन्द्र, प्राचिन भारत का राजनैतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास, भाग–2, पृ. 301, अहिरवार, डॉ. रामकुमार, त्रिपुरी की मूर्तिकला, पृ. 6.
5. जैन, बालचंद, उत्कीर्ण लेख, पृ. 14.
6. कॉर्पस इन्स्क्रीप्शन्स इण्डीकेरम, खण्ड 4, लेख, क्र. 77, (आगे का.इ. के नाम से).
7. वही, लेख क्र. 45.
8. वही, लेख क्र. 75.
9. वही, लेख क्र. 77.
10. वही, लेख क्र. 82.
11. वही, लेख क्र. 97.
12. वही, लेख क्र. 101–102.
13. वही, लेख क्र. 103–104.
14. वही, लेख क्र. 105–106.
15. शत्पथ ब्राह्मण, 14/1/1–5.
16. अहिरवार, डॉ. रामकुमार, त्रिपुरी की मूर्तिकला, प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, 2004, पृ. 69.
17. मिश्र, डॉ. इन्दुमती, प्रतिमा–विज्ञान, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल, 2000, पृ0 231.
18. श्रीवास्तव, डॉ. बृजभूषण, प्राचीन भारतीय प्रतिमा–विज्ञान एवं मूर्तिकला, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2007. पृ. 14.
19. विष्णु: कौमोदकीं पदमं पांचजन्य सुदर्शनम्।
    मधुसूदनस्तु चक्रं शंख सरसिजं गदाम्॥13 –रूपमण्डन, 3/13.

****

मध्यप्रदेश की ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाएँ एवं सामाजिक गतिशीलता के विभिन्न आयाम (म.प्र. के नीमच जिले के विशेष संदर्भ में)

डॉ. संजय जोशी *

भारतीय मध्यम वर्ग पिछले एक दशक में सर्वाधिक चर्चित एंव बहस का मुद्दा बना है । क्रिकेट एवं राजनीति के पश्चात् सार्वजनिक स्थानों से लेकर कार्यालयों तक, टी स्टॉल एवं जलपान गृहों से लेकर बुद्धिजीवियों एवं पत्रकारों के संगोष्ठियों तक भारतीय जनमानस में यदि कोई सर्वाधिक बातचीत का मुद्दा रहा है तो नि:संदेह वह मध्यम वर्ग ही है ।

इस मध्यम वर्ग ने आधुनिक भारत के निर्माण में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है । यह एक हकीकत है कि मध्यम वर्ग भारत में प्रगति का एक इंजिन बन गया है । इसीलिए कहा जाता है कि दूसरे देश जहॉ कोयला और पेट्रोल रखते हैं वही भारत शिक्षित एवं बौद्धिक क्षमता से परिपूर्ण मध्यम वर्ग की शक्ति रखता है ।

(1) भारत में मध्यम वर्ग के नए सिरे से प्रारम्भ होने का श्रेय ब्रिटिश औपनिवेशिक प्रशासन को जाता है ।

(2) वैसे मोटे रूप में मध्यम वर्ग एक नगरीय सामाजिक विशेषता है किन्तु आजादी के बाद ग्रामीण समाज के उन्नयन हेतु किए गए विभिन्न नियोजित प्रयासों, कल्याण कार्यक्रमों, संवैधानिक प्रावधानों, शिक्षा के प्रसार, शिक्षा व नौकरियों में आरक्षण तथा सूचना एवं संचार के माध्यमों ने ग्रामीण समुदायों में व्यवसायात्मक एवं शैक्षणिक गतिशीलता को उत्पन्न करते हुए मध्यम वर्ग के उदय में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

(3) ग्रामीण समाज में उभरे इस नव मध्यम वर्ग की आधुनिक शिक्षा प्राप्त महिलाएँ ग्रामीण समाज के रूपान्तरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है ।

अध्ययन के उद्देश्य :-

1. ग्रामीण समाज में उभरी मध्यमवर्गीय महिलाओं से ग्रामीण जीवन विशेषकर सामान्य ग्रामीण महिलाओं के जीवन में क्या परिवर्तन उत्पन्न हुए है ? इनकी व्याख्या करना ही प्रस्तुत शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य है ।
2. ग्रामीण महिलाओं में व्याप्त अज्ञानता एवं निरक्षरता को दूर करने में मध्यम वर्ग की महिलाओं विशेषकर शिक्षित मध्यमवर्गीय महिलाओं की भूमिका ज्ञात करना ।
3. ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं के उदय से किस प्रकार की सामाजिक गतिशीलता ग्रामीण अंचल में दिखाई देती है, को जानना ।

अध्ययन पध्दति -

प्रस्तुत शोध पत्र हेतु उद्देश्यपूर्ण प्रणाली के आधार पर मध्यप्रदेश के नीमच जिले में स्थित दो गांवों को जो जिले की दो भिन्न-भिन्न तहसीलों में स्थित है, का अध्ययन हेतु चयन किया गया । अध्ययन के लिए चुने गए दोनों गांव सरवानिया महाराज एवं रेवली- देवली जिले की क्रमश: जावद एवं नीमच तहसील में स्थित है । सम्पूर्ण अध्ययन में सूचनादाताओं को आधार मानते हुए सौद्देष्यीय एवं कोटा निदर्शन प्रणाली से दोनों गांवों की 25-25 मध्यमवर्गीय महिलाओं का चयन किया गया । इसमे मुख्य रूप से खाते पीते घरों की जिसे हम मध्यमवर्ग कहते हैं कि महिलाओं, शिक्षा प्राप्त महिलाओं, नौकरी करने वाली महिलाओं, सेवा यूनिट से जुड़ी महिलाओं व व उच्च कृषक वर्ग के परिवारों की महिलाओं को सम्मिलित किया गया है ।

दोनों गांवों के चयन हेतु निम्न मापदण्ड तय किए गए :-

1. दोनों गांवों में यातायात एवं संचार के साधनों की उपलब्धता हो ।
2. इसके पीछे यह मान्यता थी कि जिन गांवों में यातायात एवं संचार के साधनों की अच्छी उपलब्धता होती है वहीं मध्यम वर्ग के उभरने के अवसर भी अधिक होते हैं ।
3. चूंकि मध्यम वर्ग एक नगरीय अवधारणा है और जिन गांवों का नगरों के साथ सातत्य अधिक होता है, वहीं इस वर्ग के परिवारों के विकास की संभावना अधिक होती है । इसी को ध्यान में रखते हुए यह तय किया गया कि दोनों गांव मुख्य सड़क मार्ग से जुड़े हों व नगर शहर के पास में स्थित हों ।
4. विकसित गांव के चयन हेतु मुख्य मापदण्ड उस गांव में हायर सेकेण्डरी स्कूल प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र एक लघु उद्योग केन्द्र तथा पांच हजार की आबादी एवं अविकसित गांव हेतु कम से कम दो हजार की आबादी तथा हाई स्कूल उपलब्ध होना तय किये गये । इन चयनित सूचनादाताओं से सकेन्द्रित साक्षात्कार, साक्षात्कार अनुसूची, औपचारिक बातचीत, वैयक्तिक अध्ययन, व्यक्तिगत साक्षात्कार तथा प्रत्यक्ष निरीक्षण इत्यादि पद्धतियों का उपयोग करके विषय से संबंधित तथ्यों एवं समंकों का संकलन किया गया है ।

सारणी- 1

ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं की शैक्षणिक स्थिति

स. क्र.	शैक्षणिक योग्यता*	आवृत्ति		योग
		गांव (अ)	गांव (ब)	
1	निरक्षर	01 (4.0)	02 (8.0)	03 (6.0)
2	सामान्य शिक्षा	07 (28.0)	08 (32.0)	15 (30.0)
3	माध्यमिक शिक्षा	06 (24.0)	06 24.0)	12 (24.0)
4	उच्च शिक्षा	09 (36.0)	08 (32.0)	17 (34.0)
5	व्यावसायिक शिक्षा	02 (8.0)	01 (4.0)	03 (6.0)
	योग	25 (100.0)	25 (100.0)	50 (100.0)

शिक्षा स्तर*

सामान्य - प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शिक्षा
माध्यमिक - माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक शिक्षा
उच्च - स्नातक, स्नातकोत्तर शिक्षा
व्यावसायिक - तकनीकी, चिकित्सा एवं प्रबन्धकीय शिक्षा ।

उत्तरदाताओं की शैक्षणिक स्थिति का विश्लेषण सारणी-1 में किया गया है, जिससे स्पष्ट होता है कि गांव की मध्यमवर्गीय महिलाओं में अब निरक्षर महिलाओं की संख्या का ग्राफ तेजी से नीचे आ रहा है । समंक स्पष्ट कर रहे हैं कि निरक्षर महिलाओं की संख्या मात्र 6 प्रतिशत है, जो इस बात का

* विभागाध्यक्ष (समाजशास्त्र) स्वामी विवेकानन्द शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

प्रतीक है कि ग्रामीणजन, निरक्षरता को विकास एवं गतिशीलता में एक प्रमुख बाधकतत्व के रूप में स्वीकार करते हैं । विकसित गांव (अ) में उच्च शिक्षित ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं की संख्या 36 प्रतिशत सर्वाधिक है। गांव में व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं की संख्या भी 8 प्रतिशत है जो एक उत्साहवर्धक तथ्य है । कम विकसित गांव (ब) में आश्चर्यजनक रूप से सामान्य शिक्षा एवं उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं की संख्या की संख्या 32 प्रतिशत समान पाई गई । व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त महिलाओं का प्रतिशत 4 पाया गया । समग्र रूप से देखने पर ज्ञात होता है कि सर्वाधिक 34 प्रतिशत महिलाएँ उच्च शिक्षा प्राप्त हैं । इसके पश्चात् 30 प्रतिशत महिलाएँ सामान्य स्तर तक शिक्षित है । नि:रक्षर एवं व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त महिलाएं समान रूप से 6 प्रतिशत पाई गई ।

सारणी–2

धंधेगत आधार पर वर्गीकरण :–

स. क्र.	व्यवसाय	आवृत्ति		योग
		गांव (अ)	गांव (ब)	
1	शिक्षिका	14 (56.0)	12 (48.0)	26 (52.0)
2	बैंक कर्मी	01 (4.0)	01 (4.0)	02 (4.0)
3	हॉस्पिटल नर्स	01 (4.0)	01 (4.0)	02 (4.0)
4	आंगनवाडी कार्यकर्ता	03 (12.0)	02 (8.0)	05 (10.0)
5	कम्प्यूटर प्रशिक्षिका एवं संचालिका	01 (4.0)	00 (0.0)	01 (2.0)
6	ब्यूटी पार्लर संचालिका	02 (8.0)	01 (4.0)	03 (6.0)
7	सेवा यूनिट संचालिका	01 (4.0)	01 (4.0)	02 (4.0)
8	कृषि कार्य एवं गृहिणी	02 (8.0)	07 (28.0)	09 (18.0)
	योग	25 (100.0)	25 (100.0)	50 (100.0)

चयनित ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं की धंधेगत स्थिति को सारणी–2 में प्रदर्शित किया गया है । तालिका के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि दोनों ही गांवों की मध्यमवर्गीय महिलाओं में सर्वाधिक महिलाएं शिक्षण व्यवसाय में संलग्न है । इसके पश्चात् गांव (अ) जो कि विकसित गांव है, में 12 प्रतिशत महिलाएं आंगनवाड़ी में कार्यरत हैं । जबकि कम विकसित गांव (ब) में 28 प्रतिशत महिलाएं कृषि या ग्रहिणी की भूमिका में है । आधुनिक एवं सेवा यूनिट से संबंधित व्यवसायों में दोनों ही गांवों की महिलाएं अभी कम संख्या में संलग्न है परन्तु नवीन व आधुनिक व्यावसायों को अपनाने की प्रवृत्ति उभर अवश्य रही है ।

सारणी–3

जाति स्तर के आधार पर वर्गीकरण :–

स. क्र.	जाति स्तर	आवृत्ति		योग
		गांव (अ)	गांव (ब)	
1	सामान्य जाति (सवर्ण)	11 (44.0)	18 (72.0)	29 (58.0)
2	अन्य पिछड़ा वर्ग	10 (40.0)	04 (16.0)	14 (28.0)
3	अनुसूचित जाति	02 (08.0)	01 (4.0)	03 (6.0)
4	अनुसूचित जनजाति	01 (4.0)	02 (8.0)	03 (6.0)
5	अन्य (मुस्लिम, ईसाई)	01 (4.0)	00 (0.0)	01 (2.0)
	योग	25 (100.0)	25 (100.0)	50 (100.0)

सारणी–3 में उत्तरदाताओं का जाति स्तर के आधार पर वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है । सारणी में प्रदर्शित संमंक इस बात को स्पष्ट कर रहे हैं कि शोध हेतु चयनित उत्तरदाताओं में सर्वाधिक 58 प्रतिशत मध्यमवर्गीय महिलाएँ सामान्य वर्ग की हैं । गांव (अ) में सामान्य वर्ग की महिलाओं की संख्या 44 प्रतिशत है जबकि गांव (ब) में इसी वर्ग की महिलाओं की संख्या 72 प्रतिशत है, इसके पीछे प्रमुख कारक गांव (ब) का ब्राह्मण जाति बहुल गांव होना है । गांव की 80 प्रतिशत आबादी ब्राह्मणों की है ।

इसके पश्चात् 28 प्रतिशत उत्तरदाता अन्य पिछड़ा वर्ग से संबंधित पाए गए । दोनों ही गांवों में अनुसूचित जाति, जनजाति एवं अन्य धर्म के व्यक्तियों की संख्या बहुत कम है । अत: उपर्युक्त तथ्यों से अभी भी मध्यम वर्गों में सवर्ण जातियों का ही प्रभुत्व परिलक्षित हो रहा है ।

सारणी 4

परिवार में संतानों की संख्या

स. क्र.	संतान संख्या	आवृत्ति		योग
		गांव (अ)	गांव (ब)	
1	सामा. जाति (सवर्ण)	11 (44.0)	18 (72.0)	29 (58.0)
1	एक	4 (16.0)	06 (12.0)	07 (14.0)
2	दो	12 (48.0)	11 (44.0)	23 (46.0)
3	तीन	08 (32.0)	07 (28.0)	015 (30.0)
4	चार	01 (4.0)	02 (8.0)	03 (6.0)
5	चार से अधिक	00 (0.0)	01 (4.0)	01 (2.0)
6	कोई संतान नहीं	00 (0.0)	01 (4.0)	01 (2.0)
	योग	25 (100.0)	25 (100.0)	50 (100.0)

सारणी–4 का विश्लेषण करने पर स्पष्ट होता है कि ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं में छोटे परिवारों के महत्व को तेजी से स्वीकार किया जा रहा है । सर्वाधिक 46 प्रतिशत महिलाएं ऐसी पाई गई जिनके बच्चों की संख्या दो है। इसके पश्चात् 30 प्रतिशत महिलाएं ऐसी पाई गई जिनके 3 संतान है । इसके बाद 14 प्रतिशत महिलाएं ऐसी मिली जिनके केवल एक ही संतान है। यदि एक व दो संतान वाली महिलाओं को संयुक्त कर देखा जाए तो स्पष्ट होता है कि 60 प्रतिशत महिलाएं ऐसी है जो सीमित परिवार की हमारी राष्ट्रीय नीति के प्रति न केवल जागरूक है, वरन उसकी अनुपालक भी है ।

निष्कर्ष –

1. ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं में भी शिक्षा के प्रति तीव्र संज्ञानता उत्पन्न हो रही है । 14 प्रतिशत महिलाएं सामान्य शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा व व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त पाई गई । हॉलांकि व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त महिलाएँ अभी केवल 6 प्रतिशत ही है । लेकिन इस और धीरे–धीरे ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं की अभिरूचि व योग्यता बढ़ रही है ।
2. ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं में से केवल 18 प्रतिशत महिलाएँ ही कृषि या गृह कार्य से जुड़ी हुई है जबकि 82 प्रतिशत महिलाएं किसी न किसी नौकरी या सेवा में संलग्न है। इनमे भी सर्वाधिक 52 प्रतिशत महिलाएँ शिक्षकीय कार्य में संलग्न है ।
3. ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं की जाति ज्ञात करने पर ज्ञात हुआ कि अभी भी मध्यम वर्गों में सवर्ण जातियों का ही प्रभुत्व परिलक्षित हो रहा है ।
4. शिक्षित ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं में सीमिति परिवार के प्रति

सर्वाधिक जागरूकता परिलक्षित हुई है विशेषकर उच्च शिक्षित एवं नौकरी करने वाली महिलाओं के परिवारों में यह विशेष रूप से उजागर हुआ । गांव की मध्यमवर्गीय महिलाओं में 60 प्रतिशत महिलाएँ ऐसी पाई गई जिनके संतानों की संख्या एक या दो है । इससे यह परिलक्षित होता है कि ग्रामीण समाज में भी अब सीमित परिवार की हमारी राष्ट्रीय नीति व मूल्यों के प्रति न केवल जागरूकता बढ़ रही है बल्कि उसके अनुपालन में भी तेजी आई है ।

5. शिक्षित ग्रामीण युवतियों में दहेज विरोध के प्रति भी स्वाभिमानता देखने में आई । एक ग्रामीण मध्यमवर्गीय परिवार की उच्च शिक्षित युवती ने अपने वैवाहिक प्रस्ताव में दहेज की मांग आने पर उस परिवार में विवाह करने से मना कर दिया गया ।[4]
6. मध्यमवर्गीय ग्रामीण युवतियों में अब अपने स्वाभिमान एवं सम्मान के प्रति जागरूकता बढ़ी है । वे विवाह से पूर्व अब अपने भावी ससुराल में एल आकृति का आधुनिक स्टेडिंग किचन, बाथरूम एवं लेट्रीन चाहती है । इनके नहीं होने पर वे विवाह प्रस्ताव को अस्वीकार करने की भी हिम्मत दिखाने लगी है ।
7. ग्रामीण मध्यमवर्गीय युवतियों में शारीरिक श्रम से दूरी भी बढ़ती हुई देखी गई है । विशेषकर इन परिवारों में ब्याह कर आई नई पीढ़ी की बहुएँ अब कृषि कार्य में सहायता करने अपने खेत व कुओं पर न के बराबर जाती है जबकि पुरानी पीढ़ी की बहुओं में यह बहुत ही सामान्य प्रक्रिया थी ।[5]
8. ग्रामीण मध्यमवर्ग की महिलाओं के सम्पर्क में आने वाली गांव की अनुसूचित जाति एवं जनजाति की महिलाएँ अब अपने बच्चों के आधुनिक नाम रखने लगी है ।[6]
9. महिला नौकरी के संदर्भ में विकसित गांव में जागरूकता एवं गतिशीलता कम विकसित गांव की तुलना में कही अधिक उजागर हुई है । ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं में व्यावसायिक गतिशीलता को उत्पन्न करने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है । उच्च शिक्षित ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं में अपने बच्चों को अंग्रेजी माध्यम के स्कूलों में पढ़ाने की प्रवृति सर्वाधिक परिलक्षित हुई है ।
10. शिक्षित ग्रामीण मध्यमवर्गीय युवतियों में संचार एवं सूचना के आधुनिक साधनों के प्रति सर्वाधिक जागृति एवं संज्ञानता उत्पन्न हुई है ।

संक्षेप में सार रूप में यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण मध्यमवर्गीय महिलाओं विशेषकर इस वर्ग की शिक्षित एवं उच्च शिक्षित महिलाओं की जीवन शैली, आचरण व्यवहार योग्यता एवं कुशलता ने इन्हें गांव की अन्य महिलाओं के लिए रोल मॉडल की भूमिका में ला खड़ा किया है ।

सामान्य महिलाएँ इनको देखकर प्रेरित होती है व इनका अनुसरण व अनुगमन करने हेतु उन्हें प्रोत्साहित भी करती है । संतति नियमन, शिक्षा एवं जातिगत निर्योग्यताओं तथा सम्मान व स्वाभिमान के प्रति अन्य ग्रामीण महिलाओं में जागृति एवं संज्ञानता उत्पन्न करने में इनके प्रयास बहुत ही महत्व के है, जो भविष्य में ग्रामीण समाज में सामाजिक रूपान्तरण एवं सामाजिक गतिशीलता के संदर्भ में नींव के पत्थर बनेंगे ।

Reeerences

1. Desai, A.R. Rural Sociology in India, Bombay : Popular Prakashan, 1959, P.44,
2. Das, Gurcharan, India Unbound, New Delhi : Penguin Book India Ltd., 2002, P.286.
3. Mishra, B.B. The Indian Middle Class : Their Growth in Modern Times, London : Oxford University Press, 1961, PP. 76-106.
4. Sharma, C.L. Emergence of New Middle Class in and his Final Report entitled The study of Social Mobility Among New Middle Classes and Dalits of Rajasthan : A Sociological Analysis, Nucleus, Vole III, 2003 submitted to New Delhi : Ugc, 2005, PP. 35-50.
5. Sheth, Dherubhai “Naye Madhyam Varg Ka Uday” Ed. Abhay Kumar Dube, Lok Tantra Ke Sath Addhaya, New Delhi : Vani Prakashan, 2002, PP.111-116.
6. Joshi, Sanjay. Emerging Middle Classes and Social Change in Rural Communities of Western Madhya Pradesh, Ph.D. Dissertation, Udaupur : M.L. Sukhadia University, 2009. PP.268-272

****

जनसंख्या वृद्धि और घटता लिंगानुपात

डॉ. रेणुका उपाध्याय *

किसी भी देश के विकास को उस देश की जनांकीय संरचना प्रभावित करती हैं। देश के औद्योगिक कृषि तकनीकी व्यवसायिक विकास के साथ-साथ सामाजिक, सांस्कृतिक विकास होता हैं। विकास की प्रतिस्पर्धा में आगे बढ़ने के लिए मानव ने प्राकृतिक संतुलन को प्रभावित किया हैं। इतिहास इस बात का साक्षी हैं कि जब-जब मानव ने प्राकृतिक संतुलन बिगाड़ने का प्रयास किया हैं, तब-तब प्रकृति ने अपना रूद्र रूप दिखाया हैं।

भारत में प्राचीन समय में महिलाएं और कन्याएँ भले ही पूज्य, सुख व समृद्धि की प्रतीक मानी जाती रही, किन्तु कालान्तर में उनकी स्थिति बद से बदतर होती गई। हमारे देश में इस त्रासदी का आरम्भ बालिका के जन्म से पूर्व ही हो जाता हैं।

लड़के की चाहत में गर्भस्थ भ्रूण के लिंग का पता लगाकर कन्या भ्रूण होने पर उसे मारने की प्रवृत्ति तेजी से सर्वत्र फैल रही हैं। यदाकदा यदि बच्ची ने जन्म ले भी लिया तो कभी अफीम चटाकर, गला घोटकर, पानी में डुबोकर मार दी जाती हैं। यदि न भी मारी जाय तो उसे प्यार व सम्मान तथा भाई की तरह व्यवहार नहीं मिलता।

भारत में जनसंख्या वृद्धि तथा लिंगानुपात

जनसंख्या में लिंग संरचना अर्थात लिंग अनुपात का भी महत्वपूर्ण स्थान हैं। किसी देश की जनसंख्या में लिंग संरचना को देखकर ही उस देश की सामाजिक, सांस्कृतिक स्थिति का एक निश्चित सीमा तक अनुमान लगाया जा सकता हैं, तथा यदि किसी देश में पुरूषों की संख्या स्त्रियों से कम हैं तो, स्त्रियों की अधिकता के कारण जन्मदर और जनसंख्या वृद्धि अधिक होने की सम्भावना रहती हैं। पर यदि स्त्रियों की तुलना में पुरूषों की संख्या अधिक हैं तो ऐसी स्थिति में अनेक सामाजिक बुराईयों को बढ़ावा मिलता हैं।

जैसे - वैश्यावृति, व यौन अनैतिकता आदि। स्त्री पुरूष अनुपात की भिन्नता के कारण देश के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न वैवाहिक व पारिवारिक प्रथाएं देखने को मिलती हैं।

भारत में जिन राज्यों या क्षेत्रों में स्त्री बाहुल्य हैं वहां बहुपत्नी विवाह एवं बहुपत्नी परिवार पाये जाते हैं। इसके विपरीत जहाँ स्त्रियों की तुलना में पुरूषों की संख्या अधिक हैं, वहाँ बहुपति विवाह एवं बहुपति परिवार पाये जाते हैं। इसी तरह कहीं-कहीं पर स्त्री पुरूष की संख्या के आधार पर ही मातृ एवं पितृसत्तात्मक परिवार पाये जाते हैं।

यदि किसी देश में स्त्रियों से उत्पादन कार्य में सहयोग लिया जाता हैं तो वहां आर्थिक विकास और प्रतिव्यक्ति आय पर इसका अच्छा प्रभाव पड़ता हैं। इसके विपरित यदि स्त्रियों को घर से बाहर आकर पुरूष के समकक्ष उत्पादन कार्यो में सहयोग देने का अवसर नहीं मिलता हैं तो देश की अर्थव्यवस्था व उसके विकास पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता हैं। भारत इसका ज्वलन्त प्रमाण हैं।

इस प्रकार जनसंख्या में लिंग अनुपात का देश की सामाजिक, सांस्कृतिक परिस्थितियों से घनिष्ठ सम्बंध हैं। क्योंकि विवाह की आयु जन्म व अन्य बातों पर इन परिस्थितियों का गहरा प्रभाव होता हैं।

भारत जनसंख्या 2011 में	
कुल जनसंख्या	1,210,193,422
पुरूष	623,724,248
महिलाएँ	586,469,174
लिंगानुपात	प्रति 1000 पुरूषों पर 940 महिलाऐं हैं।

तालिका-1

भारत में स्त्री पुरूष अनुपात 1901 से 2011 तक

वर्ष	स्त्री पुरूष अनुपात (प्रति हजार पुरूषों पर महिलाओं की स्थिति)
1901	972
1911	964
1921	955
1931	950
1941	945
1951	946
1961	941
1971	930
1981	934
1991	927
2001	933
2011	940

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि भारत में स्त्रियों की तुलना में पुरूषों की संख्या अधिक हैं। 1911 से 1941 तक लगातार स्त्रियों का अनुपात घटता जा रहा हैं। केवल 1951 में कुछ वृद्धि हुई हैं। पर इसके बाद पुन: तीव्र गिरावट प्रारम्भ हो गई थी। बीते कुछ वर्षों में भ्रूण हत्या रोकने हेतु कानूनो का सख्ती से पालन किये जाने के कारण वर्ष 2011 में लिंगानुपात 7 अंक बढ़कर 940 हुआ है परंतु यह स्थिती अभी भी असंतोषजनक है।

भारत में स्त्रियों का अनुपात कम होने के कारण

1. भारत में स्त्रियों की तुलना में पुरूषों को अधिक महत्व दिया जाता हैं। सामाजिक, सांस्कृतिक मान्यताओं के कारण देश में ''पुत्र रत्न'' प्राप्ति का सर्वाधिक महत्व हैं।
2. भारत में स्त्रियों में पुत्रों को जन्म देने की प्राय: अधिक क्षमता पाई जाती हैं।
3. भारत में स्त्रियों की मृत्युदर ऊँची हैं, उसका मुख्य कारण आज भी गर्भावस्था व प्रसव के समय भारी संख्या में स्त्रियों की मृत्यु हो जाती हैं

* सहायक प्राध्यापक, समाज शास्त्र , माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

4. भारत में स्त्रियों के प्रति उपेक्षित दृष्टिकोण होने के कारण उन्हें पुरूषों के समकक्ष पालन पोषण, भोजन व जीवन की अन्य सुख सुविधाएँ नहीं मिल पाती हैं, जिससे वे कमजोर रहती हैं और अल्पायु में ही मृत्यु हो जाती हैं।
5. **बाल विवाह –** भारत में आज भी सामाजिक सांस्कृतिक रूप में बाल विवाह को प्राथमिकता दी जाती हैं जिससे एक तो उनका विकास अवरूद्ध हो जाता हैं, दूसरा कम उम्र में मातृत्व धारण करने व जल्दी–जल्दी बच्चा पैदा करने के कारण उनका स्वास्थ्य क्षीण हो जाता हैं। फलत: स्त्रियों में मृत्युदर पुरूषों से अधिक हैं।
6. भारत में स्त्रियों की औसतन प्रत्याक्षित आयु पुरूषों से कम हैं दूसरे देशों की तुलना में भारतीय स्त्रियां कम समय तक जीवित रहती हैं।
7. भारतीय महिलाओं में साक्षरता आज भी बहुत कम हैं। अशिक्षा अज्ञानता रूढिवादिता व अन्धविश्वासों के कारण न तो भारतीय स्त्री को पुरूष के समकक्ष सामाजिक व सांकृतिक अवसर विकास के लिए प्राप्त कर पाती हैं, और न ही स्वास्थ्य चिकित्सा सम्बन्धी सेवाओं का खुले रूप में उपयोग ही कर पाती हैं। फलत: भारतीय स्त्रियों का स्वास्थ्य स्तर बहुत गिरा हुआ हैं। जिससे उनकी मृत्युदर भी अधिक हैं और जनसंख्या में अनुपात में भी कम हैं।
8. **शिशुकन्या की हत्या –** भारत में अत्यन्त ही प्राचीन काल से शिशु कन्या की हत्या का प्रचलन रहा हैं। इस प्रचलन के कारण कन्याओं की जन्म के साथ हत्या कर दी जाती थी। इस कारण भी भारत में पुरूषों की तुलना में स्त्रियों की संख्या कम हैं।
9. **कन्या भ्रूण हत्या –** आज जब हम 21वीं सदी प्रवेश कर चुके हैं तब हमारे समाज में लोगों की मानसिकता में अधिक बदलाव नहीं आया हैं। आज भी बेटे और बेटी में फर्क महसूस किया जाता रहा हैं। बहुत से लोग ऐसे हैं अल्ट्रासाउण्ड द्वारा जांच करवा कर मादा शिशु की हत्या करवा देते हैं अर्थात पहले बेटी जन्म के बाद मारी जाती थी अब जन्म से पहले मार दी जाती हैं।
10. **पुरूष शिशु का अधिक जन्म:–** भारतीय जनगणना के ताजे आँकड़ों से स्पष्ट हैं कि भारत में स्त्रियों की तुलना में शिशु पुरूष का जन्म अधिक होता हैं। इस अधिकता के कारण लिंग अनुपात में विषमता पाई जाती हैं।
11. **पर्दाप्रथा:–** भारतीय समाज की एक बुराई में पर्दाप्रथा भी हैं। इस बुराई की कीमत स्त्रियों को ही चुकानी पड़ती हैं। पर्दाप्रथा के कारण औरतों के स्वास्थ्य में निरन्तर गिरावट होती रहती हैं। सामाजिक मर्यादाओं के कारण वह अपनी बीमारी को नहीं बतलाती हैं। इस कारण भी अनेक स्त्रियों को मृत्यु का शिकार होना पड़ता है।
12. **प्रसव की सुविधाओं का अभाव :–** भारत में प्रसव सम्बन्धी सुविधाओं का नितान्त अभाव हैं।विशेषकर ग्रामीण इलाकों में इसकी और भी कमी होती हैं। चिकित्सा सुविधाओं के अभाव के कारण स्त्रियों की असामायिक तथा दु:खद मृत्यु हो जाती हैं। यही कारण हैं कि भारत में 15 वर्ष 30 वर्ष तक की आयु के बीच स्त्रियों की अधिक मृत्यु होती हैं।

भारत में घटते लिंगानुपात के उपरोक्त कारण प्रमुख है ।

निष्कर्ष :–

आज भी भारतीय समाज में पुत्र प्राप्ति की इच्छा चारों ओर विद्यमान हैं। फलत: भारतीय संरचना पुरूषवादी हैं और भारतीय परिवार पितृसत्तात्मक हैं। ऐसे समाज एवं पारिवारिक परिवेश में स्त्री को जो स्थान प्राप्त होना चाहिये वह आज भी प्राप्त नहीं हैं। पुत्र जन्म पर खुशियाँ मनाई जाती हैं और कन्या के जन्म के बाद मायूसी के साथ परिजन उदास हो जाते हैं। जनांकिकीविदों का अनुमान हैं कि भारत में बहुत बडी संख्या में अल्ट्रासाउण्ड परीक्षण और स्त्री भ्रूण हत्या माध्यम और उच्च वर्गो में तेजी से बढ़ता जा रहा हैं। प्रजनन पूर्व लिंग परीक्षण और स्त्री शिशु के गर्भपात रोकने हेतु कानून भी बने हैं पर यह अल्प प्रभावी रहे हैं पर ये कानून एक सामाजिक वातावरण का निर्माण करने में सहायक रहे हैं।

सरकार को इस अपराध को रोकने के लिये कठोर कदम उठाने होंगे साथ ही निम्न सुझावों द्वारा समस्या पर काबू प्राप्त किया जा सकता हैं–

1. दहेज प्रथा को मिटाना होगा।
2. लोगों को शिक्षित कर उनके विचारों को विस्तृत करना होगा।
3. गैर कानूनी तौर पर काम करने वाले ऐसे गर्भपात केन्द्रों को सख्ती से बन्द किया जाए।
4. उन सभी विज्ञापनों पर प्रतिबन्ध लगाना होगा। जिसमें प्रचार किया हो कि लड़का होने की दवा हमारे यहाँ मिलती हैं।
5. समाज को जागरूक होकर एक समग्र वैचारिकी क्रान्ति लानी होगी तभी इस प्रथा का अन्त हो सकेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. जनसंख्या विस्फोट – देवेन्द्र उपाध्याय
2. जानांकिकी– डॉ.वि. कुमार
3. जानांकिकी– डॉ. डी.एस. बघेल एवं किरण बघेल
4. योजना पत्रिका
5. दैनिक भास्कर– समाचार पत्र दिनांक 1 अप्रेल 2011

****

अनुसूचित जनजातीय महिलाओं की वर्तमान स्वास्थ्य स्थिति का अध्ययन

कु. रेखा रावत *

भारत गांवों का देश है। देश की 72.2 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में निवास करती है। भारतवर्ष में अनेक समस्यायें है। जिन समस्याओं से स्वतन्त्रता के बाद सरकार निरन्तर संघर्षरत् है। इसके बाद भी ये समस्यायें बनी हुई हैं। स्वास्थ्य और पोषण के क्षेत्र में भी हमने प्रगति की है। हमारी औसत आयु में वृद्धि हुई है। बीमारियों की संख्या में कमी आई है। किन्तु फिर भी स्वास्थ्य और पोषण की समस्या हमारे सामने उसी प्रकार बनी हुई है। देश की सामाजिक और आर्थिक प्रगति के लिए आवश्यक है कि देश की जनता का स्वास्थ्य अच्छा हो, जहां तक स्वास्थ्य का संबंध है यह कोई बाहरी वस्तु मात्र नहीं है, इसके अन्दर शारीरिक और मानसिक विशेषताऐं भी सम्मिलित हैं जिनके आधार पर स्वस्थ समाज का निर्माण हो सकता है। पिछले कई वर्षो से देश में स्वास्थ्य के क्षेत्र में हर तरह से सुधार आया है। सामाजिक आर्थिक प्रगति और स्वास्थ्य की स्थिति के संवेदनशील सूचकांक शिशु मृत्यु दर में महत्वपूर्ण गिरावट आयी है।

सन् 1951 में यह146 थी जो वर्ष 2002 में घटकर 64 हो गयी। शिशु मृत्यु दर को जीवित शिशुओं के सापेक्ष देखा जा सकता है जो 1951 में 36.7 थी। वर्ष 2003 में 64.6 हो गयी। अपरिपक्व आयु की मृत्यु दर में भी गिरावट देखी गयी है। जन स्वास्थ्य में सुधार संक्रामक बीमारियों से बचाव के उपाय व नियंत्रण और बीमारियों की पहचान और उपचार में आधुनिक चिकित्सा-प्रणली के समावेश से ही स्थिति में अत्यधिक बदलाव आ सकता है।

सामाजिक आर्थिक स्थिति में सुधार और संभावित जीवन-दर में वृद्धि के फलस्वरूप रोगों की प्रकृति में परिवर्तन जारी है। हृदय-संबंधी रोगों, कैंसर, मोतियाबिंद से अंधापन, मधुमेह आदि असंक्रामक रोगों में वृद्धि हुई।

स्वास्थ्य का न केवल शारीरिक व मानसिक दृष्टि से ही महत्व नहीं होता है बल्कि इसका सांस्कृतिक महत्व भी होता है। किसी देश की सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक उन्नति के लिए उस देश के व्यक्तियों का स्वास्थ्य स्तर अच्छा होना आवश्यक है। अस्वस्थ व्यक्ति न केवल देश की आर्थिक उन्नति में बाधक होता है बल्कि वह देश की सामाजिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के लिए भी अयोग्य होता है। वास्तव में किसी भी राष्ट्र की निधि उसके स्वस्थ, दीर्घ आयु कार्य वाले नागरिक होते हैं। ''स्वास्थ्य की धन है'' (Health is Wealth) की उक्ति व्यक्ति और राष्ट्र दोनों की दृष्टि से शत-प्रतिशत सत्य ही वास्तव में निरोग रहने के बराबर संसार में कोई निधि या सुख नहीं है। निर्धनता एवं असंतुलित आहार स्वास्थ्य के निर्धारण में निर्धनता का बहुत बड़ा हाथ होता है। निर्धनता की स्थिति के लोगों के प्रति व्यक्ति आय बहुत कम होती है जिससे उन्हें भरपेट भोजन भी नसीब नहीं हो पाता। वे जिस भोजन को ग्रहण करते हैं वह न केवल अपर्याप्त होता है बल्कि स्वास्थ्य के लिए हानिकारक व अपौष्टिक भी होता है। निर्धनता के कारण ही व्यक्ति, अशिक्षा, अज्ञानता, कुपोषण तथा गन्दे अस्वास्थ्य का वातावरण में जीवन व्यतीत करने को बाध्य होते हैं जिनसे उनका स्वास्थ्य स्तर गिर जाता है। इसके विपरीत यदि व्यक्ति सम्पन्न है तो उसके लिए सन्तुलित आहार के साथ अन्य साधन व सुविधाऐं प्राप्त करना संभव होता है। जिससे स्वास्थ्य स्तर अच्छा होता है। स्वास्थ्य स्तर के निर्धारण में देश उपलब्ध चिकित्सा, सार्वजनिक साफ-सफाई व स्वास्थ्य सुविधाओं का महत्वपूर्ण स्थान होता है। जहाँ इन सुविधाओं और सेवाओं का अभाव है। वहाँ लोग तरह-तरह की संक्रामक और अनेक प्रकार की बीमारियों का शिकार रहते हैं। फलत: उनका स्वास्थ्य स्तर गिरने के साथ-साथ प्रत्याशित आयु भी कम होती है और मृत्यु दर ऊँची होती हैं। इसके विपरीत जिन देशों में साफ-सफाई, स्वास्थ्य, रक्षा और चिकित्सा का समुचित प्रबन्ध होता है। वहाँ स्वास्थ्य स्तर में सुधार होता है। साथ ही मृत्युदर घटने से जीवन प्रत्याशी बहती है। स्वास्थ्य का स्तर न केवल स्वास्थ्य व चिकित्सा सेवाओं पर निर्भर है बल्कि स्वास्थ्य चिकित्सा विज्ञान व सेवाओं के स्तर पर भी निर्भर होता है। जहाँ चिकित्सा विज्ञान में काफी प्रगति हो चुकी है, वहाँ गम्भीर से गम्भीर संक्रामक बीमारियों की रोकथाम प्रभावशाली ढंग से संभव होती है। फलत: जनमानस का स्वास्थ्य स्तर बढ़ता है। विकसित देश इसके स्पष्ट प्रमाण हैं। इसके विपरीत जहाँ चिकित्सा विज्ञान भी पिछड़ा हुआ है। ऑपरेशन की रीतियाँ पिछड़ी हुई हैं। अनेक खतरनाक महामारियों, बीमारियों का कोई प्रभावशाली इलाज नहीं है। वहाँ जनता का स्वास्थ्य स्तर गिरा हुआ पिछड़े देश इसके प्रमाण हैं।

मानव एक क्रियाशील प्राणी है जो अपनी जीविका के विशेष कार्य से संबंधित होता हैं। वह जिस स्थान पर कार्य करता है वहां परिस्थितियाँ, उपलब्ध साधक और सुविधाएँ उसके स्वास्थ्य स्तर को प्रभावित करती हैं।

इन बीमारियों को दूर करने की दिशा में सरकार ने आवश्यक कदम उठाया है और इस कार्य में सरकार को आवश्यक सफलता भी मिली है। मूलत: स्वास्थ्य कार्यक्रमों का दायित्व सरकारों पर है केन्द्रीय सरकार पंचवर्षीय योजनाओं के अधीन स्वास्थ्य के स्तर पर सुधार करने की बड़ी योजनाऐं आरम्भ करती है तथा उनके लिये सहायता देती है। स्वास्थ्य सेवाओं में वृद्धि करना, लोगों के स्वास्थ्य सेवाओं के उत्तरोत्तर सुधार करना है।

अगर हम शिक्षा आवास, रोजगार कृषि एवं स्वास्थ्य संबंधी कार्य देखें तो पता चलता है कि जिस व्यक्ति के लिये योजना बनाई गई है उसको वांछित लाभ नहीं मिल रहा है। वे लोग रोग का सही ढंग से इलाज नहीं करा पाते हैं। इस प्रकार हम पाते हैं कि जनजातीय समाज का स्वास्थ्य एक गंभीर समस्या बनकर हमारे सामने उपस्थित होता है कि अधिकांश जनजातीय महिलाओं को मजदूर के रूप में उन्हें अपने बच्चों का पालन पोषण करना पड़ता है। साथ ही साथ उन्हें आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी करनी पड़ती है। कठिन मजदूरी करने के बावजूद भी उन्हें समाज के आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं है।

उद्देश्य-

1. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं की वर्तमान स्वास्थ्य स्थिति के प्रभाव का अध्ययन करना।
2. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के समाज में स्वास्थ्य के प्रभाव का अध्ययन करना।
3. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता का का अध्ययन ज्ञात करना।

परिकल्पना-

1. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं की वर्तमान स्वास्थ्य स्थिति के संबंधी अध्ययन किया जायेगा।
2. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के समाज के स्वास्थ्य के प्रभाव का अध्ययन किया जायेगा।

* पीएच.डी शोधार्थी (समाजशास्त्र), माताजीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

3. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता संबंधी अध्ययन किया जायेगा।

शोध प्रविधि– प्रस्तुत शोध हेतु यादृच्छिकी न्यादर्श (Random Sampling) का प्रयोग किया गया। प्रस्तुत शोध कार्य में निदर्शन का चयन आलीराजपुरजिले के अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के 50 प्रतिदर्शन का चयन किया गया है। 5 विकासखण्ड में प्रत्येक विकासखण्ड से 2–2 गांव को चुना गया है। 25 शिक्षित व 25 अशिक्षित व अनुसूचित जनजातीय महिलाओं को समान रूप से सम्मिलित किया गया।

शोध उपकरण का निर्माण–

प्रस्तुत शोध कार्य के लिए स्वनिर्मित अनुसूची का उपयोग किया गया।

सांख्यिकीय विश्लेषण– तथ्यों का विश्लेषण का परिणामों को प्राप्त करने के लिए मिश्र सांख्किीय तकनीक को प्रयोग में लाया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में यह जानने का प्रयास किया है कि जनजातीय समाज की महिलाऐं अपने स्वास्थ्य के प्रति जागरूक नहीं है। स्वास्थ्य से संबंधी योजनाओं का लाभ पूर्णत: नहीं है। शिक्षा का प्रसार कम ही व अन्य ऐसे तथ्यों को जानने के लिए उद्देश्य किया गया है।

तालिका क्र. 1 महिलाओं की वर्तमान स्वास्थ्य संबंधी

विवरण	संख्या	प्रतिशत	स्वतंत्रता के अंश	काई वर्ग	परिकल्पना का सार्थक स्तर
			df	$(u)^2$	
1 मानसिक 2 बौद्धिक 3 संवेगात्मक	10 20 20	20 40 40	3	8.815	सार्थक
	50	100			

सार्थकता स्तर 0.01, 0.05

उपरोक्त तालिका – 1 से स्पष्ट है कि मानसिक स्वास्थ्य की महिलाओं की संख्या 10 व 20% पाया गया। जबकि बौद्धिक स्वास्थ्य संबंधी महिलाओं की संख्या 20 व 40% पाया गया और संवेगात्मक स्थिति से संबंधी महिलाओं की संख्या 20 व 40% पाया गया। इसके काई वर्ग का मान 7.815 प्राप्त हुआ जो 3 स्वतंत्रता के अंश पर .05 सार्थकता स्तर के आवश्यक मान से अधिक है। अत: स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभाव का सार्थक अन्तर पाया गया।

तालिका 2– महिलाओं की स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता संबंधी

विवरण	संख्या	प्रतिशत	स्वतंत्रता के अंश	काई वर्ग	परिकल्पना का सार्थक स्तर
			df	$(u)^2$	
1 आर्थिक 2 शैक्षणिक 3 सामाजिक	15 06 29	30 12 58	3	7.81	सार्थक
	50	100			

उपरोक्त तालिका क्रमांक 02 से स्पष्ट है कि आर्थिक स्वास्थ्य संबंधी महिलाओं की संख्या 15 व 30 प्रतिशत पाया गया। शैक्षणिक स्वास्थ्य संबंधी महिलाओं की संख्या 6 व 12 प्रतिशत पाया गया। सामाजिक विकास संबंधी महिलाओं की संख्या 29 व 58 प्रतिशत पाया गया। इसके काई का मान 7.81 प्राप्त हुआ जो 3 स्वतंत्रता के अंश 0.05 सार्थकता स्तर के आवश्यक मान से अधिक हैं। अत: महिलाओं के प्रति जागरूकता संबंधी प्रभाव का सार्थक अन्तर पाया गया।

सुझाव–

1. इसके परिवारों के अधिक बच्चों की यह अभी भी कई परिवारों में अधिक पायी जाती है। जिसे आर्थिक, सामाजिक रूप से सहयोग मानते हैं।
2. सरकार द्वारा इन्हें प्रेरित करने के लिए अनेक योजना चलाई जा रही है।
3. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के स्वास्थ्य की स्थिति में काफी परिवर्तन हो रहा है क्योंकि आजकल महिलायें अन्य काम करने लगी हैं।
4. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के समाज पर पड़ने वाले प्रभाव का आर्थिक विकास सामाजिक शैक्षणिक स्तर का अधिक प्रचार–प्रसार किया जा रहा है।
5. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के स्वास्थ्य का स्तर में सुधार हुआ है।
6. अनुसूचित जनजातीय महिलाओं के स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता का स्तर अधिक होना चाहिए।
7. महिलाओं के प्रति परिवार नियोजन में जागरूकता अधिक होना चाहिए।
8. शासन को चाहिए कि महिलाओं को अधिक प्रेरित एवं विशेष रूप से प्रोत्साहित करना चाहिए।
9. विकास कार्यक्रमों पर आबंटित धनराशि का पूर्ण सदुपयोग करना सीखना होगा, उस पर नियंत्रणशील तरीके से कार्य सम्पन्न कराना होगा किसी अव्यवस्था के होने पर दोषी पाये जाने वाले व्यक्ति के साथ कठोर दण्ड की व्यवस्था करनी होगी।
10. ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल परिवहन तथा संचार साधनों की कमी, चिकित्सा एवं स्वास्थ्य कार्मिकों का ग्रामीण क्षेत्रों में कम ठहराव एवं वित्तीय संसाधनों की अपर्याप्त सुविधाऐं है। अत: इन क्षेत्रों में समुचित सेवाऐं प्रदान की जानी चाहिए क्योंकि इनका सीधा संबंध ग्रामीण स्वास्थ्य से है।
11. महिलाओं के स्वास्थ्य स्तर को सुधारने के लिए एक क्रांतिकारी अभियान की आवश्यकता है। इसमें सरकारी स्वास्थ्य विभागों के साथ–साथ स्वैच्छिक संगठनों की सहायता भी ली जाये।
12. ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य में सुधार के लिए ग्रामीण महिला पंचायत प्रतिनिधियों की सहायता ली जाये ।
13. सब मूल समस्याओं का मुख्य आधारआर्थिक तंगी है। इसके लिए सरकार को चाहिए कि वे महिलाओं को आर्थिक सहायता दें ताकि वे आत्मनिर्भर बनकर अपने स्वास्थ्य की सुरक्षा की जिम्मेदारी उठा सके।
14. सरकारी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों व उपकेन्द्रों की व्यवस्था को चुस्त दुरूस्त किया जाये साथ ही चिकित्सकों में चली आ रही गांव व शहरों की मानसिकता को बदलने पर जोर दिया जाए एवं उनसे कठोरता से नियमों का पालन करवाया जाये।

निष्कर्ष–महिलाओं की मानसिक स्वास्थ्य संबंधी प्रतिशत 10 व 20 प्रतिशत पाया गया। जबकि बौद्धिक स्वास्थ्य संबंधी महिलाओं का प्रतिशत 20 व 40% पाया गया और संवेगात्मक स्थिति से संबंधित संख्या 20 व 40% पाया गया। आर्थिक स्वास्थ्य महिलाओं की संख्या 13 व 30 प्रतिशत शैक्षणिक सामाजिक विकास संबंधी महिलाओं का प्रतिशत 29 व 38 है।

संदर्भ ग्रंथ सूची–

1. बघेल डॉ. डी.एस., बघेल डॉ. (श्रीमती किरण) भारत में ग्रामीण समाज प्रकाशक, कैलाश पुस्तक सदन, हमीदिया मार्ग, भोपाल, 462001
2. कपिल एच.के. अनुसंधान विधियां, हर प्रसाद भार्गव, आगरा।
3. श्रीवास्तव डी.एम., अनुसंधान विधियां, साहित्य प्रकाशक, आगरा।
4. अनुसूचित जनजातियों से संबंधित सांख्यिकी संकलन कार्यालय, आयुक्त आदिवासी विकास, मध्यप्रदेश भोपाल, 1993
5. माथुर, हरिमोहन, जनजातीय क्षेत्र में विकास प्रशासन, जयपुर, ह.मा. राज्य लोक प्रशासन संस्थान, वर्ष 1978
6. त्रिपाठी शैलेन्द्र, वर्ष 1978, ग्रामीण स्वास्थ्य एंव परिवार कल्याण समन्वित ग्रामीण विकास केन्द्र, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी, 1986
7. गोयल, एल.एल. हेल्थ केयर सिस्टम एण्ड मैनेजमेंट दीप एण्ड दीप पब्लि. नई दिल्ली 2001
8. भास्कर राव, टी टैक्स्ट बुक ऑफ कम्यूनिटी मेडिसिन पारस मेडिकल पब्लि., हैदराबाद, 2004

बालिका उत्थान में लाड़ली लक्ष्मी योजना की भूमिका

डॉ. मंजू राजोरिया *

प्रकृति में संतुलन प्रत्येक जीव के लिए आवश्यक है । जैसे ही इसमें असंतुलन उत्पन्न होता है उसके भीषण दुष्परिणाम सर्वत्र दृष्टिगोचर होते हैं । सभ्य और संतुलित समाज के लिए स्त्री-पुरुष में समान अनुपात आवश्यक है । इसके अभाव में सामाजिक संतुलन बिगड़ने से उसके भयावह दुष्परिणाम हो सकते हैं । बेटियों की घटती संख्या समाज के लिए गंभीर चुनौती बनकर उभर रही है । परिवार जीवन की बुनियाद है, सामाजिक संतुलन परिवार का आवश्यक अंग है । यदि यह व्यवस्था खण्डित होती है तो हमारा सामाजिक ढाँचा चरमरा सकता है । समाज में अनैतिकता एवं अन्य अनेक अपराध बढ़ सकते हैं, अत: यह चिन्तनीय विषय है ।

विगत कई वर्षों से जनसंख्या संबंधी आंकड़ें एक ऐसे असंतुलन की ओर संकेत दे रहे हैं, जिन्हें समाज के लिए खतरा कहा जा सकता है । समाज में स्त्री-पुरुष दोनों ही सम्मिलित हैं । स्त्री जन्मदात्री है, जीवंतता प्रदान करती है वह इस अर्थ में विशेष है, लेकिन विज्ञान की नवीनतम खोजों, लिंग परीक्षण तकनीक और गर्भपात सुविधा ने स्त्री जन्म को ही संकट में डाल दिया है, इन सब के पीछे पुत्र प्राप्ति की चाह महत्वपूर्ण है ।

वर्ष 2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार छह वर्ष के आयु-वर्ग में प्रति हजार लड़कों में लड़कियों का अनुपात 914 पर आ गया है, जो इसके पूर्व वर्ष 2001 में 927 था और 1961 में 976 था । यह आंकड़े इस शताब्दी की ऐसी महत्वपूर्ण घटना है जिसने समाज के समक्ष एक गंभीर चुनौती उत्पन्न कर दी है । विडम्बना यह है कि इस समस्या का कोई नैसर्गिक कारण नहीं है, अपितु यह मानव निर्मित समस्या है । परिवार एवं समाज में कन्याओं की संख्या कम होने से उनका वर्तमान और भविष्य दोनों ही खतरे में पड़ सकते हैं ।

समाज में बेटियों का महत्व, उनके घटने से भयावह दुष्परिणाम, इस अनुपात के कम होने के उत्तरदायी घटक, शासन एवं समाज द्वारा किये जा रहे प्रयास और सुझाव इन सब पर गहराई से चिन्तन आवश्यक है तभी हम बेटियों की घटती संख्या की चुनौती से निपटने की दिशाएं तय कर सकते हैं ।

सरकार द्वारा बेटियों को बचाने के लिए प्रोत्साहन राशि, छात्रवृत्तियां, भावी सुरक्षा हेतु पालकों को प्रोत्साहन राशि, कन्या भ्रूण हत्या पर कड़े कानून आदि प्रभावी उपाय किये जा रहे हैं । इसी संदर्भ में बेटियों को बचाने हेतु मध्यप्रदेश सरकार द्वारा लाड़ली लक्ष्मी योजना का प्रारंभ किया गया है जो लड़कियों की शिक्षा एवं स्वास्थ्य में सहायक होगी, लिंगानुपात में सकारात्मक परिवर्तन करेगी, बाल विवाह में कमी लाएगी तथा परिवार नियोजन को प्रोत्साहन प्रदान करेगी ।

वर्तमान समय में चिकित्सा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में अल्ट्रासोनोग्राफी, एम्नियोसेंटेसिस तथा अन्य तकनीकों के माध्यम से गर्भस्थ शिशु के लिंग का पता लगाना आसान हो गया है, किन्तु इसका दुरूपयोग कन्या भ्रूण हत्या के रूप में हमें देखने को मिल रहा है, परिणामस्वरूप आज स्त्री-पुरूष अनुपात असंतुलित होता जा रहा है । भारतीय पुरूष प्रधान समाज में लड़कियों की अपेक्षा लड़के को अधिक महत्व दिया जाता रहा है । वंश वृद्धि, पितृ ऋण, दाह संस्कार एवं पितृ तर्पण पुरूषों के द्वारा ही संभव है । सामान्यत: परिवार में यह भी मान्यता रहती है कि पुत्री तो पराया धन है, इसकी पढ़ाई-लिखाई एवं विवाह पर जो खर्च किया जाएगा उसका लाभ माता-पिता को नहीं मिल पाएगा, जबकि पुत्र की पढ़ाई-लिखाई एवं अन्य कार्यों पर किये गये खर्च का लाभ आगे जाकर माता-पिता को ही प्राप्त होगा । इस प्रकार के कई ऐसे उदाहरण हैं जिनके कारण समाज में पुत्री की अपेक्षा पुत्र की लालसा बनी रहती है । समाज में बेटियों की घटती संख्या समाज के लिए गंभीर चुनौती बनकर उभर रही है । परिवार जीवन की बुनियाद है, सामाजिक संतुलन परिवार का आवश्यक अंग है । यदि यह व्यवस्था खण्डित होती है तो हमारा सामाजिक ढाँचा चरमरा सकता है ।

मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री द्वारा 30 जुलाई 2006 को आयोजित ''महिला पंचायत'' के अवसर पर यह घोषणा की गई थी कि, ''लाड़ली लक्ष्मी योजना'' के तहत कन्याओं के जन्म के समय उनके नाम से राशि जमा करने की योजना तैयार की जायेगी, जिसके तहत कन्या की आयु 21 वर्ष होने पर उसे संपूर्ण राशि प्राप्त होगी । इस योजना से लिंगानुपात में सुधार, लड़कियों के जन्म के प्रति जनता में सकारात्मक सोच, लड़कियों के शैक्षणिक तथा स्वास्थ्य की स्थिति में सुधार होगा । लड़कियों के अच्छे भविष्य की आधारशिला रखने के उद्देश्य से मध्यप्रदेश में लाड़ली लक्ष्मी योजना प्रारंभ की गई है । यह योजना संपूर्ण मध्यप्रदेश में 1 अप्रैल 2007 से लागू कर दी गई है । बालिका के नाम से, पंजीकरण के समय, रू. 6000/- तथा उसके पश्चात् लगातार 4 वर्षों तक रू. 6000/- के राष्ट्रीय बचत पत्र क्रय किये जायेंगे । इस प्रकार कुल राशि रूपये 30000/- के राष्ट्रीय बचत पात्र बालिका के नाम पर क्रय किये जायेंगे । महिला पंचायत के दौरान ही माननीय मुख्यमंत्री ने प्रदेश की बेटियों को लखपति बनाने की घोषणा की थी ।

इस योजना के अन्तर्गत बालिका के नाम पर पाँच राष्ट्रीय बचत पत्र बनाए जाने के साथ ही बालिका को कक्षा 6 ठी में प्रवेश लेने पर रूपये 2000/- कक्षा 9 वी में प्रवेश लेने पर रूपये 4000/- तथा कक्षा 11 वीं में प्रवेश लेने पर 7500/- रू. एवं इसके पश्चात् आगामी 2 वर्ष के लिए रूपये 200/- प्रतिमाह का भुगतान बालिका को किया जाता है, साथ ही बालिका के 18 वर्ष के पूर्ण होने पर तथा कक्षा 12वीं में प्रवेश लेने पर शेष एकमुश्त राशि का भुगतान किया जाता है, परन्तु शर्त यह रहती है कि बालिका का विवाह, विवाह के लिए निर्धारित न्यूनतम आयु के पश्चात् हुआ हो । ऐसी भुगतान की गई कुल राशि जन्म के 1 वर्ष के अन्दर पंजीकृत होने वाली बालिका के लिए रू. एक लाख से अधिक होगी ।

मध्यप्रदेश की लाड़ली लक्ष्मी योजना बालिका एवं महिला सशक्तिकरण की दिशा में मील का पत्थर सिद्ध हो रही है । यह योजना संपूर्ण मध्यप्रदेश में चर्चित एवं प्रसिद्ध हो चुकी है । इतना ही नहीं इस योजना की सफलता से प्रभावित होकर अन्य प्रदेशों में भी इसके समान ही योजनाओं को संचालित किया जा रहा है । वर्ष 2008 में इस योजना की जानकारी लेने उत्तरप्रदेश के कुछ वरिष्ठ अधिकारी मध्यप्रदेश के दौरे पर आए थे । उन्होंने इस दौरान मध्यप्रदेश की लाड़ली लक्ष्मी योजना का अध्ययन किया और उसे उत्तरप्रदेश में लागू किये जाने की मंशा जाहिर की । इन अधिकारियों की यात्रा का सुखद

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) महारानी पुष्पमाला राजे पंवार शासकीय कन्या महाविद्यालय,देवास (म.प्र.) भारत

पहलू यह रहा कि उत्तरप्रदेश सरकार ने कुछ दिनों बाद ही ''महामाया गरीब बालिका आशीर्वाद योजना'' का प्रारंभ किया । मध्यप्रदेश की लाड़ली लक्ष्मी योजना में प्रदेश के मुख्यमंत्री स्वयं व्यक्तिगत रूचि ले रहे हैं, यही कारण है कि इस योजना को व्यापक रूप से सफलता प्राप्त हो रही है ।

इन्दौर जिले में लाड़ली लक्ष्मी योजना के अन्तर्गत निरन्तर प्रगति दर्ज की गई है । वर्ष 2007-08 में कुल 2203 बालिकाओं का पंजीयन किया गया था । वर्ष 2008-09 में कुल 6879 बालिकाओं का पंजीयन किया गया था । वर्ष 2009-10 में कुल 7266 बालिकाओं का पंजीयन किया गया था । वर्ष 2010-11 में कुल 13059 बालिकाओं का पंजीयन किया गया था । इसी प्रकार वर्ष 2011-12 में कुल 14749 बालिकाओं का पंजीयन किया गया था । इसी प्रकार वर्ष 2012-13 में कुल 5546 बालिकाओं का पंजीयन किया गया था ।

इन्दौर जिले में वित्तीय वर्ष 2013 तक 49702 बालिकाएँ लाभान्वित हुई हैं । इन सभी बालिकाओं को पंजीयन के समय प्राप्त होने वाली एनएससी प्रदान की जा चुकी है । इस प्रकार द्वितीय एनएससी कुल 27580 बालिकाओं को प्रदान की जा चुकी है । तृतीय एनएससी 15756 बालिकाओं को प्राप्त हो चुकी है । चतुर्थ एनएससी कुल 7226 बालिकाओं को प्राप्त हो चुकी है इसी प्रकार पंचम एनएससी कुल 2793 बालिकाओं को प्राप्त हो चुकी है ।

इस प्रकार मध्यप्रदेश सरकार द्वारा प्रारंभ की गई लाड़ली लक्ष्मी योजना बालिकाओं के उत्थान एवं प्रगति में सहायक सिद्ध हो रही है । प्रदेश सरकार की इस भावी योजना के परिणामस्वरूप समाज में बालिकाओं के प्रति मानसिकता में सकारात्मक परिवर्तन आने लगा है । बालिकाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य एवं 21 वर्ष पूर्ण होने पर एकमुश्त प्राप्त होने वाले भुगतान ने माता-पिता को बालिकाओं के प्रति होने वाली आर्थिक चिन्ताओं से मुक्त कर दिया है । वहीं दूसरी ओर इस योजना के दूरगामी सकारात्मक परिणामों में कन्या भ्रूण हत्या में कमी, सकारात्मक लिंगानुपात में वृद्धि, परिवार नियोजन एवं जनसंख्या नियंत्रण जैसी समस्याओं को दूर करने में सहायता मिल रही है ।

संदर्भ -

1. सिंह, रतन 'भारतीय सामाजिक व्यवस्था' ओमेगा पब्लिकेशन नई दिल्ली 2009
2. रावत, ओ. पी. 'मध्यप्रदेश में महिलाओं की स्थिति एक सांख्यिकी चित्रण' महिला एवं बाल विकास विभाग
3. सेन, कल्याणी मेनन, शिव कुमार एस.के. 'भारत में औरतें कितनी आजाद ? कितनी बराबर ?' यूनाईटेट नेशन रेसीडेन्ट कॉडीनेटर नई दिल्ली 2002
4. भारतीय जनगणना रिपोर्ट, 2011
5. महिला एवं बाल विकास से प्राप्त जानकारी

****

बदलते मूल्य एवं भारतीय समाज

डॉ. राजश्री शाह*

मूल्य समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इच्छाऐं एंव लक्ष्य है, जिनका अन्तरीकरण सीखने या समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से होता हैं। सामाजिक विज्ञानों में मूल्यों को क्रियाशील के रूप में व्यक्त किया हैं। सामाजिक मूल्य वे लक्ष्य या आदर्श है, जिनके आधार पर विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों तथा विषयों का मूल्याकंन जाता हैं। सामाजिक जीवन में व्यक्ति इन मूल्यों को पारस्परिक अन्त: क्रियाओं से सीखता हैं और यह सामाजिक जीवन उसकी परिस्थिति मनो-सामाजिक नैतिक स्थिति द्वारा निर्धारित होता हैं। मूल्य अनेक प्रकार के होते है डॉ. राधाकमल मुकर्जी ने मूल्यों के सौपान बतलाये है जो इस प्रकार से है-

1) जैविक 2) सामाजिक 3) आध्यात्मिक

1) जैविक मूल्य- इन मूल्यों का संबंध जीवन निर्वाह और कुशलता से हैं।

2) सामाजिक मूल्य- इनका संबंध सम्पत्ति, प्रस्थिति, प्रेम और न्याय से हैं।

3) आध्यात्मिक मूल्य- सत्य, सौंदर्य, सुसंगति और पवित्रता से संबंधित हैं।

इस प्रकार सभी मूल्य एक ही स्तर के नहीं होते है, अपितु उनमें एक संस्तरण होता है, इस संस्तरणों का संबंध मूल्यों के आयामों से होता हैं।

जीवन के प्रथम स्तर पर आध्यात्मिक मूल्य, द्वितीय स्तर पर सामाजिक और तृतीय स्तर पर जैविक मूल्य होते हैं। गाँधी ने नैतिकता को मनुष्य जीवन को परम आधार मानते है, मानव समाज की प्रगति का आधार नैतिकता और गाँधी जी ने नैतिकता को अतिजैविक मूल्यों के रूप में स्वीकार किया हैं, नैतिकता विनाशकारी प्रवृत्तियों का दमन कर सुख शांति और समता में वृद्धि करती हैं। गांधी जी ने मूल्यों को व्याख्या धर्म से ही नहीं बल्कि अर्थ एवं राजनीति से भी की हैं। जैन धर्म अनुसार:- अहिंसा, न्याय, सत्य सहिष्णुता ही समाज के मूल्य है, सम्यक दर्शन, सम्यक ज्ञान, सम्यक चरित्र व्यक्ति के विकास की आधारशिला है, जिसमें जीवन में निखार आता है वही उसका मूल्य है, क्या उचित है, क्या अनुचित यह सब बहुत ही विवेकपूर्ण तरीके में सोच समझकर बनाये गये निर्णय हैं।

डॉ. राधाकमल मुकर्जी ने मूल्यों के साथ-साथ गैर सामजिक मूल्यों की अवधारणा दी है। मूल्यों के साथ-साथ प्रत्येक समाज में गैर सामाजिक मूल्यों की भी उत्पत्ति होती हैं। गैर मूल्य उस अवस्था में पनपते है, जब व्यक्ति प्रचण्ड मानसिक तनाव और संघर्षो का शिकार बन जाता है या शारीरिक, मानसिक आवश्यकताओं की पूर्ति में गंभीर बांधा या निराशा पैदा होती है, सांस्कृतिक मूल्यों में विचलन होता है।

वर्तमान समय में औद्योगीकरण, नगरीकरण, पाश्चात्य शिक्षा, भाग दौड़ आदि अनेक कारणो गैर सामाजिक मूल्यों को जन्म दे रहे है। प्रतिस्पर्धा, मान सम्मान, अहंम ने व्यक्ति के जीवन की शांति को भंग किया है।

चारों तरफ आज व्यक्तिगत विघटन, पारिवारिक विघटन दिखाई देता है। अपराधों की दर में वृद्धि चिंताऐं, असमान्जस्यता डिप्रेशन आदि छिपे है। आज व्यक्ति की सोच बदली, मूल्य बदले है, इसलिए समाज में विघटन की स्थिति बढ़ती जा रही हैं। मूल्य आदेशात्मक और हर समाज के लिए अनिवार्य है यह व्यक्ति के व्यवहार को नियंत्रित, निर्देशित करते है। सामाजिक समस्याओं का निराकरण, मूल्य निर्णय से ही है। सामाजिक, सांस्कृतिक व्यवस्थाओं में बदलाव, लोकजीवन में भ्रष्टाचार, महिला बच्चों की असुरक्षा, वृद्धों गुरूजनों के प्रति उपेक्षा आदि समस्याऐं मूल्यों के पतन होने से जन्मी है।

1) जब परिवार जीवन और जरात की विभिन्न समस्याओं का निराकरण किस प्रकार हो, क्या उचित, क्या अनुचित, हमारा परिवार समाज, राष्ट्र के प्रति कैसा आचरण हो इन सभी प्रश्नों को समाधान हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक मूल्यों के गर्त में ही है। यदि समय रहते हुए इनका हल हमनें नहीं किया तो समाज और अधिक विघटन की स्थिति में पहुँच सकता है। निश्चित ही हमें हमारी पीढ़ी, युवाओं, बच्चों को सामाजिक, सांस्कृतिक धार्मिक मूल्यों का पाठ पढ़ाना होगा, प्रारम्भिक स्तर से ही बच्चों में धार्मिक संस्कार पैदा करने होंगे, ताकि उनका और हमारा जीवन स्वस्थ बन सके।

2) डॉ मुकर्जी ने लिखा है कि साध्य मूल्य वे लक्ष्य तथा संतोष है, जिन्हें मनुष्य सामाजिक जीवन में स्वीकार कर लेते है, जो व्यक्ति के आचरण में अन्तर्निष्ट होते है और स्वयं साहसी होते हैं।
'सत्यं शिवं सुन्दरम्' से संबंधित मूल्य मनुष्य के आन्तरिक जीवन से संबंधित है और स्वत: ही पूर्ण है, इसके विपरित साधन मूल्य वे मूल्य है, जिन्हें मनुष्य और समाज प्रथम प्रकार के मूल्यों की सेवा हेतु एवं स्वास्थ्य उन्हें उन्नत करने के साधन के रूप में मानते हैं। स्वास्थ्य, सम्पत्ति सुरक्षा, सत्ता पेशा व्यक्ति की स्थिति आदि से संबंधित मूल्य साधन है, क्योंकि इनका उपयोग लक्ष्य व संतोष की प्राप्ति के साधन के रूप में किया जाता हैं। ताकी समाज और राष्ट्र उन्नति हो सके।

3) परिवार की परिधि में पुरुष का महिलाओं के प्रति दुर्व्यवहार, गैर सामाजिक मूल्य है, आज की परिस्थिति में व्यक्ति गैर मूल्यों से प्रभावित होकर सर्वमान्य सामाजिक मूल्यों का उल्लघंन करता है उन्हें अस्वीकार करता है जैसे सत्य की सर्वदा विजय होती है, किन्तु प्रेम और राजनीति में कुछ भी अनुचित नहीं होता। साम-दाम-दण्ड-भेद सभी नीतियों का उपयोग कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति कर लेता है। जिसकी लाठी उसकी भैंस एक गैर मूल्य की अभिव्यक्ति है उसी तरह परिश्रम का फल मीठा होता है, जीओं और जीने दो, आदि सामाजिक मूल्यों की उपेक्षा होने लगी हैं। जैसे ''भ्रष्टाचार ही शिष्टाचार है'', खून का बदला खून आदि गैर मूल्यों की अभिव्यक्ति दिखाई देती है।

मुकर्जी के अनुसार गैर मूल्यों की उत्पत्ति जैविक आवश्यकताओं को नकारना, या उनसें वर्चित करना, मनौवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पूर्ति न होने या फिर संघर्षात्मक परिस्थितियों से अनुकूलन नहीं होना। गैर मूल्यों का अधिक विस्तार होने पर समाज में सामाजिक व व्यक्तिगत दोनों ही प्रकार के विघटन की स्थिति के निर्मित होने का खतरा रहता है इसलिए सामाजिक व्यवस्था सुरक्षा, शांति, प्रगति के लिए आवश्यक है कि गैर मूल्यों को पनपने से रोका जाऐ और पनपे हुऐ गैर मूल्यों का सुधार किया जाऐ।

संदर्भ ग्रंथ

- नवीन धर्म दर्शन की भूमिका - जय प्रकाश शाक्य
- सामाजिक समस्याऐं - मुकर्जी एवं अग्रवाल
- नीतिशास्त्र के प्रमुख सिद्धान्त - डॉ. हृदयनारायण मिश्र
- सा. विचारधारा - रविन्द्रनाथ मुकर्जी
- भारत समाज - गुप्ता एवं शर्मा

* प्राध्यापक समाजशास्त्र, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

रामायण का ऐतिहासिक, सामाजिक एवं साहित्यिक अनुशीलन

डॉ. आरती व्यास *

इतिहास के पन्नों पर कई विषय उलझे पड़े होते हैं ।साहित्य भी इससे अलग नहीं है। क्यों कि इतिहास में साहित्य और साहित्य में इतिहास की खोज होती है । कवि साहित्य की महत्ता को समझाते हुए कहते हैं–

''अंधकार है वहाँ, जहाँ आदित्य नहीं है।
मुर्दा है वह देश जहाँ साहित्य नहीं है।''

साहित्यकार अपने साहित्य से हमें भाव विह्वल कर देता है।जहाँ भावनाऐ हैं, वहाँ साहित्य भी है । इसी तरह वाल्मिकी की रामायण में भी भावनाऐं, आदर्श, कर्तव्य निष्ठता है।वाल्मिकी ऐसे कवि हैं जिनकी रचना के भीतर से एक समग्र देश, समग्र युग अपने हृदय की अभिज्ञता को व्यक्त कर के उसे मानव की चिरंतन सामग्री बना देताहै, समग्र देश की, समग्र जाति की सरस्वती इन्हें अपना आश्रय बना पाती है ये जो रचना करतेहैं वह किसी व्यक्ति विशेष की रचना नहीं जान पड़ती, ऐसा लगता है कि जैसे वह विशाल वनस्पति के समान देश की धरती से पैदा होकर उसी देश को आश्रय और छाया दे रही हो।

रामायण और महाभारत सरल अनुष्टुप छंद मेंभारत वर्ष का हृदय–पिंड सहस्त्रों वर्षो से स्पंदित होता आ रहा है, सच्चे अर्थो में रामायण भारतवर्ष की और भारत वर्ष रामायण के लिए ही है ।वाल्मिकी की रामचरित्र कथा को काव्य के रूप में न देखें वह भारत की रामायण है, यह काव्य देवता की अवतार लीला को लेकर ही रचा गया हो, ऐसी बात भीनहीं है।कवि वाल्मिकी के निकटराम, अवतार न थे, वे मनुष्य ही थे।राम का चरित्र मनुष्य का चरित्र होने के नाते ही महिमा मंडित है।

राम की कहानी केवल राम की कहानी नहींहै।उसमें भारतीय समाज के कई सच छिपे हुए हैं। इस महा गाथामें युग–परिवर्तन की पीड़ाऐं जाग रही हैं। इसलिए यह काव्य पुराने मूल्यों का काव्य होते हुए भी नये मूल्यों की रचना की जरूरत का संदेश देता है। यह कथा तब और भी अद्भूत हो जाती है, जब सीता को और पीछे–पीछे छोटे भाई लक्ष्मण को भी अपनी इच्छा से राम के साथ वनवासी होते देखते हैं।

आदि कांड के प्रथम वर्ग में वाल्मिकी ने जबअपने काव्य के उपर्युक्त नायक की खोज करते हुए बहुत गुणों का उल्लेख कर के नारद से पूछा–

समग्रा रूपिणी लक्ष्मी: कमेकसंश्रिता–नरम्

अर्थात् किसी एक नरका आश्रय लेकर समग्रा लक्ष्मी ने रूप ग्रहण किया है, तो नारद ने कहा–

देवेश्व पिपष्या मिकरिच देभिर्गुणैयतं
श्रुयतांतु, गुणैरे भिर्नौयुक्तोनरचंद्रमा:।

ऐसा गुण युक्त पुरूष देवताओं में तोमुझे दिखाई नहीं पड़ता इसलिए जिन नर–चंद्रमा में ये सबगुण है उनकी कथा सुनो, रामायण उसी नर–चन्द्र की कथा हैं, रामायण में मनुष्य ही अपने गुणों से देवता हो उठा है।मनुष्य के ही चरम आदर्श की स्थापना के लिए भारत के कवि ने महाकाव्य की रचना की है, और उस दिन से लेकर आज तक मनुष्य के इस आदर्श चरित्र का वर्णनभारत का पाठक–समाज बड़े आग्रह के साथ पढ़ता आ रहा है ।रामायण की प्रधान विशेषता यह है कि उसने घर की बात को ही बड़ा करके दिखाया है पिता–पुत्र में, भाई–भाई में, पति–पत्नि में जो धर्म का बंधन है, जो प्रीति और भक्ति का संबंध है, रामायण ने उसे इतना महान् कर दिया है कि वह अत्यन्त सहज रूप में महाकाव्य में उपयुक्त हो गयाहै। शत्रु, विनाश, दो प्रबल विरोधी पक्षो में प्रचन्ड आघात–प्रतिघात से बातें ही अधिकांश महाकाव्य में आंदोलन और उद्दीपन का संचार करती है।लेकिन रामायण की महिमा राम–रावण युद्ध को लेकर नहीं है, वह युद्ध घटना भी राम–सीता के दाम्पत्य प्रेम को ही उज्जवल करके दिखलाने का निमित्त मात्र है।पिता के लिए पुत्र का आज्ञा पालन, भाई के लिए भाई का त्याग, पति एवं पत्नि में एक दूसरे के लिए निष्ठा, प्रजा के लिए राजा के क्या कर्तव्य होने चाहिए।रामायण का साहित्य इसी तथ्य को दिखलाता है। इससे भारत वर्ष का परिचय मिलता है। इस महाकाव्य से समझ आता है कि भारत वर्ष में गृह और गृहस्थ धर्म का कितना महत्व है।

इसी काव्य से हमें ज्ञात होता है कि गृहस्थाश्रम हमारे सुख–सुविधा के लिए नहीं है, बल्कि पूरे समाज को समेटकर रखता है। मनुष्य को सच्चे अर्थो मे मनुष्य बनाता है।

इस रामायण कथा से भारतवर्ष के सब लोग चाहे वे छोटे हों या बड़े अथवा वृद्ध सभी शिक्षा प्राप्त करते हैं।अत: रामायण को केवल महाकाव्य ही नहीं कहा जा सकता, यह इतिहास है, घटनावली का इतिहास नहीं, क्योंकि वैसा इतिहास समय विशेष का सहारा लेता है। रामायण भारत वर्ष का चिरंतन इतिहास है।अन्य इतिहास युग–युग में कितने परिवर्तन हुए लेकिन इस इतिहास मे परिवर्तन नहीं हुआ है । वस्तुत: रामकथा की ऐतिहासिक प्रामाणिकता का दावा परंपरागत लोक विश्वास है, जिस का उल्लेख ईसा पूर्व के समानांतर स्त्रोतों में विद्यमान है ।

सन्दर्भग्रन्थ

1. रवीन्द्रनाथ के निबंध
2. मानस के मोती–श्री स्वामी सुबोधा नंदजी चिन्मय मिशन
3. तुलसीकृतरामायण
4. अहाजिन्दगी–दैनिकभास्करसमूह, अप्रैल 2013

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) शासकीय माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

उज्जैन की बातिक कला
(निर्माण सामग्री एवं प्रविधि एक प्रयोगपरक शोध अध्ययन)

डॉ. नीता तोमर *

महाकाल की उज्जयिनी कालजयी नगरी है। पौराणिक प्रवाह के अनुसार उज्जयिनी सृष्टि की रचना का केन्द्र है। उज्जयिनी पृथ्वी का भी केन्द्र है जो अपने 'प्रतिकल्पा' नाम को सार्थक करती हुई प्रत्येक कल्प में अभिनव स्वरूप ग्रहण कर लेती है।[1] महाकाल, शिप्रा और सिंहस्थ के साथ उज्जैन का फलक बहुत विराट है, जिसका समग्रता में साक्षात्कार कर पाना अत्यंत कठिन है।[2]

प्रसिद्ध इतिहासकार डॉ. भगवतशरण उपाध्याय ने लिखा है – ''थीब्ज और मेम्फिस की ऐतिहासिक समवर्तिनी उज्जयिनी के भाल पर सहस्त्राब्दियों का गौरव-तिलक अंकित है। थीब्ज और मेम्फिस तो काल के गाल में समा गए पर उज्जयिनी शिप्रा के तीर आज भी खड़ी है।''[3]

स्कंदपुराण के अवंती खण्ड में उज्जैन की महिमा का विस्तृत वर्णन किया गया है। पुराणों के अनुसार अत्यन्त प्राचीनकाल में यहाँ महाकाल नाम का विशाल वन था। भगवान शंकर को यह स्थान अत्यन्त आकर्षक लगा। जब शंकर जी ने यहाँ निवास किया, तब सब देवताओं ने स्वयं स्वर्ग से आकर उज्जैन नगर बसाया था।[4]

भैरवगढ़ उज्जैन का एक भाग होते हुए भी अलग है। यह उज्जैन से सात किलोमीटर दूर शिप्रा नदी के किनारे बसा एक गांव है।[5] भैरवगढ़ किस ने और कब बसाया इसका कोई ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध नहीं है फिर भी कई विद्वानों का मानना है कि यह दो हजार वर्ष पूर्व बसाया गया था।[6]

भैरवगढ़ में छपाई कला का कार्य छीपा जाति के लोग करते है। छीपा जाति के करीब तीन सौ परिवार यहां बसते है। किन्तु लगभग 100 परिवार ही वस्त्र छपाई का कार्य करते हैं।

छीपा जाति का इतिहास भाट के पास आज भी मौजूद है। यह भाट मूलत: राजस्थान के जयपुर शहर में रहते है। वर्तमान में छीपा जाति का इतिहास चार पोथियों में विभाजित है।[7]

उज्जैन के भैरवगढ़ की कपड़ा छपाई की प्रसिद्धि सर्वज्ञात है। भैरूगढ़ छपाई चटख रंग की विभिन्न डिजाइनों में होती हे। इस भैरूगढ़ छपाई के वस्त्रों की माँग न केवल मालवा या मध्यप्रदेश अपितु देश के सुदूर क्षेत्रों में भी है। छीपे, रंगारे इत्यादि परम्परागत कपड़ा-छपाई का काम करते रहे। कपड़ा छापने वाले छीपा हुए और रंगकार रंगारा आजकल यह काम अन्य भी करने लगे है। उज्जैन का भैरवगढ़ अब वस्त्र छपाई के अद्धितीय केंद्र के रूप में प्रसिद्ध हो गया है।[8]

पौराणिक एवं धार्मिक महत्व के साथ-साथ इस नगरी का ऐतिहासिक एंव कलात्मक महत्व भी है। उज्जैन के पुरातन वैभव और समृद्ध ललित कलाओं का दर्शन उज्जैन एवं उसके आसपास के क्षेत्रों में सहजता से किया जा सकता है, उज्जैन के भैरवगढ़ की बतिक कला विश्वस्तरीय है।

जहाँ तक भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई का प्रश्न है तो वह तुगलक के शासन काल में काफी विकसित हो चुकी थी। इसका प्रमाण भी भाट की पोथी से सहज मिल जाता है। जैसा पोथी में उल्लेखित है कि तुलगक के शासनकाल में तत्कालीन बादशाह को कपड़े पर महल का दृश्य बनाकर भेट किया था।[9]

भैरवगढ़ में बातिक छपाई नित्य उपयोगी वस्त्रों पर, घर में काम आने वाले वस्त्रों जैसे बेड़शीट्स, कुशन कवर, परदे, पूजा के वस्त्र एवं पुरूषो के साफे, अंगोछे, लुंगी, महिलाओं के वस्त्र जैसे स्कर्ट, फ्राक, दुपट्टे, घाघरे, कुर्ती-सलवार, लुगड़ी, ओढ़नी, आदि विभिन्न परिधानों में होती है।[10]

बातिक प्रिन्ट (रेजिस्ट प्रिन्ट)

तकनीकीगत बातिक की प्रक्रिया निम्न प्रकार से होती है –

बातिक कला की सुन्दरता या विशेषता क्रेक्स (मोम टूटने से जो दरारे पड़ती हैं उनमें रंगने से जो बारीक रेखाएँ होती है) में है।

बातिक कला की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

अभी तक यह सिद्ध नहीं हो पाया है कि बातिक कला की शुरूआत कब और कहाँ से हुई है, कुछ विद्धानों का मत है कि यह कला इन्डोनेशिया से भारत में आई है। जहां तक उज्जैन (भैरवगढ़) का प्रश्न है करीब 700 वर्षो से यह कला यहाँ प्रयोग में लाई जा रही है। यह काफी पुरानी कला है और भारत में कई स्थानों पर थोड़े बहुत अन्तर के साथ प्रयोग में लाई जाती रही है।

आज भैरवगढ़ के करीब 40 से 50 परिवार बातिक कला से जुड़े हुए है। बातिक प्रिन्ट में अधिकतर रात दिन काम में आने वाली वस्तुओं को छापा जाता है। वर्तमान में बातिक और प्राचीन बातिक में थोड़ा अन्तर है। वर्तमान में मोम ब्रश अथवा बातिक पेन द्धारा डिजाइन बनाकर रंगा जाता है जबकि पूर्व विधि में ब्लाक द्धारा छपी हुई डिजाइन को विशेष प्रकार से तैयार की गई मिट्टी से ढ़ककर कपड़े को रंगा जाता था।[11]

यदि कई रंगों में रंगना हो तो पहले हल्के रंग में रंग कर कपड़े को सुखा लिया जाता है। दूसरी बार ब्रश द्धारा फिर वेक्सिंग किया जाता है अर्थात् उस भाग पर मोम लगाया जाता है, जब हमें रंगा हुआ रंग अन्य रंग से सुरक्षित रखना है। फिर उससे गहरे रंग में रंगा जाता है, इस तरह दो बार या तीन बार रंगा जाता है।

यदि कई रंगों में नहीं रंगना हो तो मांड निकालकर कपड़ो को सुखा लिया जाता है और जहाँ नहीं रंगना है वह ब्रश द्धारा वैक्स लगा लिया जाता है। जब रंगने की प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है तब कपड़े से मोम छुडाया जाता है।[12]

मोम छुड़ाने की विधि

एक बर्तन में पानी को अच्छी तरह से गरम किया जाता है। उसमें साबुन एवं कपड़े धाने का सोड़ा डाला जाता है फिर रंगें कपड़े को उसमें डाला जाता है, इससे मोम गरम होकर पानी में रह जाता है जब मोम पूर्ण तरह से निकल जाता है तो फिर कपड़े को साफ पानी में धोकर सूखा लिया जाता है।[13]

बातिक प्रिन्ट में कपड़े को रंगने की विभिन्न विधिया

नेफतोल रंग : वास्तव में देखा जाय तो यह रंग नहीं है। अपितु रसायन (केमिकल) है जो एक दूसरे में मिलकर रंग (शेड्स) उत्पन्न करते है। इनको बनाने एवं रंगने की विधि विशेष है – यह प्रक्रिया दो भागों में विभाजित की जा सकती है 1. नेफतोल 2. बेस अथवा साल्ट। दोनों को अलग-अलग बनाया जाकर अलग-अलग बर्तन में रखा जाता है।

मोम किये हुए (डिजाइन बने) कपड़े को 2 से 3 मिनिट तक नेफतोल में

* अतिथि विद्वान (चित्रकला विभाग) शासकीय माधव कला वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

रंगा जाता है। नेफतोल में से कपड़े को निकालकर थोड़ी देर हवा में रखा जाता है जिससे इसमें से पानी टपकना बन्द हो जाता है जब पानी टपकना बन्द हो जाता है तो फिर बेस मे डाला जाता है अलग-अलग प्रकार के नेफतोल एवं बेसेस होते है जिस प्रकार का बेस एवं नेफतोल होता है उसी प्रकार के शेड उत्पन्न होता है।

नेफतोल बनाने की विधि :-

1. नेफतोल पाउडर - 10 ग्राम
2. कास्टिक सोड़ा - 10 ग्राम
3. टर्की रेडआइल - 10 ग्राम
4. पानी - 10 लीटर

10 ग्राम नेफतोल को टर्की रेड आइल में पेस्ट बनाया जाता है। जब पेस्ट बन जाता है तो 1 लीटर से 2 लीटर ठण्डा पानी मिला दिया जाता है। फिर इसको अच्छा गरम किया जाता है जब उबाल आ जाये तो चूल्हे से उतार कर 10 ग्राम कास्टिक सोडा मिला दिया जाता है। फिर अलग बड़े बर्तन में 10 लिटर ठण्डा पानी लेकर उसमें बना हुआ नेफतोल डालकर अलग रख दिया जाता है।

बेस बनाने की विधि

बेस पाउडर 10 ग्राम लेकर नमक के तेजाब मे पेस्ट बनाया जाता है, फिटकरी 10 ग्राम एवं सोडियम नाइट-राइट 10 ग्राम को 1 लीटर ठण्डे पानी में घोल कर उस पेस्ट में मिला दिया जाता है। इसी प्रकार बेस को 10 लीटर ठण्डे पानी में मिलाकर अलग रख दिया जाता है, यह मात्रा 2 मीटर कपड़े के लिए है। यदि बेस के स्थान पर साल्ट लिया जाता है तो 30 ग्राम साल्ट पाउडर 2 लीटर ठण्डे पानी में घोल कर 20-30 ग्राम खाने का नमक मिला दिया जाता है। रंगने की विधि पूर्व में उल्लेखित है।

नेफतोल एवं बेस के विभिन्न प्रकार के शेड्स

नेफतोल	बेस	शेड्स
1. नेफतोल ए.एस.जी.	यलो जी.सी.बेस	लेमन पीला
2. नेफतोल ए.एस.जी.	रेड के.बी. बेस	मस्टर्ड पीला
3. नेफतोल ए.एस.जी.	बोर डेवस जी.पी. बेस	गोल्डन पीला
4. नेफतोल ए.एस.जी.	औरेंज जी.सी. बेस	औरेंज
5. नेफतोल ए.एस.टी.आर.	रेड टी.आर बेस	पोस्ट आफिस रेड
6. नेफतोल ए.एस.	वायलेट बेस	जामुनी
7. नेफतोल ए.एस.बी.एस.	बार्डेक्स जी.पी.	मेहरून
8. नेफतोल ए.एस.बी.ओ.	ब्लू बेस	रायल ब्लू
9. नेफतोल ए.एस.बी.एस.	ब्लू बेस	नेवी ब्लू
10. नेफतोल ए.एस.एस.डब्ल्यू.	ब्लू बेस	स्काय ब्लू
11. नेफतोल ए.एस.जी.आर.	ब्लू बी.बी.बेस	लीफ ग्रीन
12. नेफतोल ए.एस.जी.आर.	ब्लू बी.बी.बेस	आलिव ग्रीन

नोट : आलिव ग्रीन में ब्लू बी.बी. की मात्रा 10 ग्राम के बजाय 1 ग्राम होना चाहिए।[14]

बातिक प्रिन्ट की विधि

सूती सिल्क अथवा रेशमी कपड़े पर बातिक प्रिन्ट होता है कारण यह है कि जो रंग प्रयोग में लाये जाते है वे सूती कपड़े रेशमी एवं सिल्क कपड़े पर ही पक्के होते है अन्य सिन्थेटिक कपड़ो पर यह टिक नहीं पाते।

कपड़े को थोड़ा टर्की रेड आइल पानी में डालकर करीब 12 घण्टे भिगोया जाता है। इसके पश्चात अच्छा कूटकर धो लिया जाता है इससे जहां कपड़े की मांड निकल जाता है वही दूसरी ओर कपड़े में रंग पकडने की क्षमता बढ़ जाती है जिससे रंगों में पक्कापन एवं चमक आती है। अब कपड़े पर ब्रश अथवा बातिक पेन की सहायता से मोम से डिजाइन बनाई जाती है।

बातिक पेन - वास्तव में लोहे का मोटा तार लेकर उसमें बाल रखकर ऊन या सूती धागे से बांध दिया जाता है।

मोम - (पेराफिन वैक्स) को एक बर्तन मे गरम किया जाता है। डिजाइन बनाते समय यह ध्यान रखा जाता है कि मोम अधिक गरम या ठण्डा नहीं होना चाहिए। कुछ कलाकार पेराफिन वैक्स में 'बिरोजा' की कुछ मात्रा मिलाते है। कुछ कलाकार मधुमक्खी एवं पेराफिन वैक्स दोनों मिलाकर काम करते है। अब ब्रश अथवा बातिक पेन या लकड़ी के ठप्पे से मोम का प्रयोग किया जाता है। जहाँ पर मोम लगा होगा वहाँ पर रंगते समय रंग नहीं चढ़ेगा साथ ही रंगते समय मोम के टूटने से जो बारीक दरारे पड़ती है, उनमें रंग प्रवेश करता है जो अपने आप में एक तरह की डिजाइन होती है।

अब इसको रंगा जाता है रंगने से पहले यह तय करना होता है कि एक बार ही रंगना है। (सिंगल कलर) या कई रंगों (मल्टी कलर) में रंगना है।[15]

नेफतोल के अतिरिक्त कलाकार दूसरे रंगों का भी प्रयोग करते है इसमें मुख्य रूप से 1. वेट कलर 2. प्रोशियन कलर 3. इन्टीगो सोल।

वेट कलर :- यह रंग बनाने एवं रंगने में आसान होता है किन्तु बहुत मंहगा होता है फिर भी शेड्स के हिसाब से बातिक के कलाकार अधिकतर करते है। इसमें मुख्य रूप से दो रंग का प्रयोग अधिक होता है। 1. ग्रीन 2. वायलेट, इसके अतिरिक्त पीला, ब्लू, ब्राउन, मेजेन्टा, औरेंज का भी प्रयोग किया जाता है चूंकि यह शेड्स नेफतोल में नहीं बन पाते इसलिए इनका प्रयोग अधिक किया जाता है।

वेट कलर बनाने की विधि

वेट कलर 5 ग्राम को टर्की रेड आयल में पेस्ट बनाकर 1 लीटर ठण्डा पानी मिलाते है फिर इसको अच्छा गरम करते है इसके पश्चात 15 ग्राम कास्टिक सोड़ा मिलाते है फिर इसमें हाइड्रोसल्फाइड 5 से 7 ग्राम मिलाते है।

रंगने की विधि

पहले 10 लीटर पानी को गरम करते है इतना गरम होता है कि रंगने में मोम पिघल न जाय इसमें बना हुआ रंग डालकर कपड़े को इसमें डाल दिया जाता है। विशेष ध्यान इस बात का रखा जाता है कि कपड़ा रंग में बाहर न आने पाये।

3 से 5 मिनिट बाद कपड़े को बाहर निकाल लिया जाता है। इसके पश्चात हवा में फैला दिया जाता है, जिससे इसका अपना शेड़ आ जाता है करीब 1 घण्टे पश्चात साफ पानी मे धो लिया जाता है।

प्रोशियन रंग

कुछ कलाकार इसका भी प्रयोग करते है, यह रंग बनाने एवं रंगने में सरल है, काफी सस्ता होता है किन्तु इतना पक्का नहीं होता है जितना की नेफतोल वेट एवं इन्डीगोसोल होते है।

1/2 गरम पानी में प्रोशीयन एम. पावडर को अच्छी तरह मिलाया जाता है। इसमें खाने का नमक 3 गुना एवं सोड़ा खाने का दोगुना मिला दिया जाता है। फिर ठण्डे पानी में मिलाया जाता है पानी की मात्रा शेड के अनुसार होती है अर्थात गहरा रंग रंगने के लिए रंगते समय पानी की मात्रा कम होगी तो हल्का रंग रंगने हेतु पानी मात्रा अधिक होगी।

कपड़ा रंगने की विधि

कपड़े को उपरोक्त रंग में 30 मिनिट तक रंगने के पश्चात रंग में से निकालकर 24 घण्टे हवा में रखा जाता है फिर अच्छी तरह से धो लिया जाता है ताकि इसका अधिक रंग निकल जाय।

इन्डीगोसोल विधि

यह रंग रंगने की अपेक्षा ब्रश से प्रयोग किया जाता है। रंग बनाने की

विधि में बबूल का गोन्द पानी में रात भर भिगोकर कपड़े में छान लिया जाता है। गवार गम का भी प्रयोग किया जाता है इसकों ठण्डे पानी में घोल लिया जाता है। घण्टे बाद इसका प्रयोग कर सकते है। दोनो प्रकार के पेस्ट में पानी की मात्रा इतनी होती है कि पेस्ट बन जाये।

इन्डीगोसोल पाउडर 10 ग्राम पानी में घोलकर 5 ग्राम सोडियम नाइटराइड मिलाकर गोन्द का पेस्ट अथवा 'गवारगम' के पेस्ट में मिलाकर जहाँ जैसा रंग चाहिए ब्रश की सहायता से लगाया जाता है।

24 घण्टे पश्चात बाल्टी में ठण्डा पानी लेकर उसमें गंधक का तेजाब बहुत कम मात्रा में मिलाकर उस कपड़े को इसमें 4–5 मिनिट रखकर निकाल कर साफ पानी में धो लिया जाता है। बाकि सभी प्रक्रिया वही रहती है जो नेफतोल अथवा वेट की होती है।[16]

बातिक प्रिन्ट की प्रक्रिया अथवा सुनने में जितनी सरल प्रतीत होती है प्रयोगात्मक रूप से यह उतनी ही जटिल व श्रमसाध्य है, जिसमें अत्यधिक धैर्य व श्रम की आवश्यकता होती है बिना कुशलता और एकाग्रता के यह कार्य असम्भव है। कलाकार के रचनात्मक दृष्टिकोण और आत्मनिष्ठ साधना द्वारा कल्पना शक्ति का प्रयोग बातिक कला के साथ अभिन्न रूप से जुड़ा हुआ है, जिसका प्रत्यक्ष और प्रेरक अनुभव शोधार्थी डॉ. नीता तोमर को प्रस्तुत प्रयोगात्मक शोध अध्ययन के दौरान हुआ।

संदर्भ सूची

1. निर्मला जैन–निदेशक : अन्विति प्रकाशन, मुम्बई।
2. निदेशक : निर्मला जैन: अन्विति प्रकाशन, मुम्बई।
3. डॉ. रमेश निर्मल : प्रतिकल्पा उज्जयिनी : पृ.क्र.3: अन्विति प्रकाशन सी.एम.जी. इन्फोनेट मुम्बई।
4. डॉ. रमेश निर्मल : प्रतिकल्पा उज्जयिनी : पृ.क्र.3: अन्विति प्रकाशन सी.एम.जी. इनफोनेट मुम्बई।
5. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.2 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
6. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.2 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
7. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.2 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
8. डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित : मालवी संस्कृति और साहित्य : पृ.क्र. 372 : प्रकाशक : आदिवासी लोक कला अकादमी : म.प्र. संस्कृति परिषद भोपाल म.प्र.
9. श्री रहीम गुट्टी: भैरगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.4 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
10. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.5 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
11. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.32 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
12. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.33 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
13. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.33 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
14. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.34 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
15. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र.36 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।
16. श्री रहीम गुट्टी: भैरवगढ़ की वस्त्र छपाई कला परंपरागत से आधुनिकता तक भाग एक : पृ.क्र38 : आयोजक म.प्र. हस्तशिल्प विकास निगम हमीदिया रोड़ भोपाल।

****

मेरी कला-एक अंर्तदृष्टि

डॉ. यतीन्द्र महोबे *

''कला जीवन है और जीवन गति का नाम है।'' कला विचारों तथा मानवीय भावों की अभिव्यक्ति है। कला के माध्यम से रचनाकार अपने अंदर उठने वाली समस्त संवेदनाओं को मूर्तरूप दे सकता है। कला के माध्यम से कलाकार दर्शक के अंर्तमन में रसानुभूति जगाता है। कला के अनुभव को मैने अपने विचारों के माध्यम से प्रस्तुत करने की कोशिश की है।

मैं चित्रकला के क्षेत्र में लम्बे समय से जुड़ा हुआ हूँ, इस कला क्षेत्र से जुड़े रहते हुए शुरूआत में मैने बहुत सी आकृतिमूलक चित्र बनाए हैं, और उसी के माध्यम से आगे बढ़ते हुए अपने अंदर जागृत होने वाले विचारों तथा भावों को प्रत्यक्ष रूप देने की कोशिश की है। मैने अपनी कलाकृति में शुरूआती दौर से जिस अवधारणा को लेकर कार्य किया है उसे भविष्य में भी निरंतर रखना चाहता हूँ, और समयानुसार उनमें रंग, अंतराल और आकारों के माध्यम से नये-नये प्रयोग करना चाहता हूँ।

एक कला कृति में ''रंग'' मेरे लिए महत्वपूर्ण स्थान रखता है। रंगों ने मेरे अंर्तमन को स्पर्श किया है, इस समयावधि में मैने अनेक किताबों का अध्ययन कर कला संबंधी जानकारी प्राप्त की है। संयोजन क्या है? अंतराल किसे कहते हैं? और कितने अंतराल में रंगों का संयोजन चित्र में आवश्यक है तथा मेरी अवधारणा से ये तत्व कहाँ तक जुड़े हैं इन सब का अनुभव मुझे हुआ है। ''मेरी कला-एक अंर्तदृष्टि'' विषय संबंधी यह शोधपत्र के माध्यम से अपने कला अनुभव को प्रस्तुत करने का यह छोटा सा प्रयास है।

मेरा यह मानना है कि जो सौन्दर्यमूलक है वही कला है जिसे देखकर दृष्टा के अंर्तमन से ''आह'' या ''वाह'' जैसे शब्द का उच्चारण हो, वही एक अच्छी कलाकृति है।

मेरी रचना और उसका बदलता स्वरूप- मेरी रचना स्वयं के तथा आसपास के वातावरण से मिश्रित होती है। मेरे चित्रों का प्रत्येक आकार एवं रंग यथार्थ के किसी अंश से निसृत होता है। मैं अपनी कलाकृतियों के द्वारा अपने विचारों को रंग एवं आकार के माध्यम से सामने लाने की कोशिश करता हूँ। मेरे विचार केनवाश पर स्वत: परिवर्तित हो जाते हैं।

यदि हम कहें तो एक कवि अपनी कविताओं को लेकर बहुत गहराईयों से सोचता है, उस कविता के विषय में डूब जाता है तथा अपनी गहरी सोच तथा कल्पना के माध्यम से एक कविता तैयार करता है। लेकिन मेरे विचार में ऐसा करना एक चित्रकार के लिए आवश्यक नहीं है। मैं हाथ में तुलिका पकड़कर ही अपनी मानसिक स्थिति अनुसार उसी समय उत्पन्न विचारों की सहायता से चित्र की योजना तैयार करता हूँ। मैं अपनी कलाकृति में प्रकृति के रंगों का भी इस्तेमाल भी करता हूँ, क्योंकि मेरा ''आत्म'' प्रकृति से जुड़ा हुआ है, और मेरी ये कृतियॉ मेरा आत्मचित्रण है।

अब मैं काम करने की शैली पर आता हूँ। यदि कोई मुझसे यह कहे कि आप एक शैली को लेकर काम किया करो, तो यह मेरे लिये सोचनीय बात होगी। क्योंकि हर व्यक्ति कि सोच परिवर्तनशील है, और वह पल-पल बदलती रहती है। मेरे विचार में मनुष्य को परिवर्तनशील होना बहुत जरूरी है। जब तक मनुष्य परिवर्तनशील नहीं होगा, उसे नया अनुभव प्राप्त नहीं हो सकता, और नये विचार मन में नहीं आ सकते, तो स्वाभाविक है कि इसका प्रभाव हमारी कलाकृति पर भी पड़ेगा। यदि हम अपनी कुछ कलाकृतियों में अपनी दूसरी अवधारणा को लेकर कार्य कर चुके हैं, और कुछ समय पश्चात् अलग आकार या अवधारणा को लेकर कार्य कर लें, तो यह नहीं कहा जा सकता कि हमारी शैली में परिवर्तन हो गया है। हमारी पहले कि कृति और अब की कृति में ऐसा कुछ जरूर साम्य होता है, जो दोनों समय की कृतियों को आपस में जोड़ता है, क्योंकि हर एक कलाकार के पास ऐसा कुछ होता है जो उसका अपना होता है। दूसरे शब्दों में उसे हम ''पालतु'' नाम से सम्बोधित कर सकते हैं। उदाहरण स्वरूप- हम बाजार गये और वहाँ ऐसी कोई चीज या वस्तु पसंद आ जाती है, जिसे हम तुरंत खरीद लेते हैं और वह हमेशा के लिए हमारे पास आ जाती है। वह हमारे लिये पालतु जैसे बन जाती है। उसे हम खोना नहीं चाहते। ठीक उसी प्रकार एक कलाकार के लिए कुछ चीजें ऐसी होती हैं जो उसके लिये स्वत: ही पालतु जैसे बन जाती है, और वह पसंदीदा चीज उसकी हर कलाकृति में देखने मिलती है। चाहे वह कलाकार के लिये ''रंग'' हो या फिर कोई ''आकार''। मैं अपनी कलाकृति में रंगों को अधिक महत्व देता हूँ क्योंकि रंग मेरे अंर्तमन को स्पर्श करते हैं, और मेरे अंर्तमन के विचार रंगों के माध्यम से ही बाहर आते हैं। मेरी कलाकृति में रंग अपना एक अलग स्थान रखते हैं।

रंग। ''प्रकाश का होना रंगों को बतलाता है।'' यदि हमारे जीवन में प्रकाश को शून्य कर दिया जाय तो हमारा जीवन रंग-विहीन हो जाएगा। इस प्रकाशमय प्रकृति से हमें रंगों का ज्ञान होता है। प्रकृति के इस रंग को हम अपने अंदर आत्मसात् कर लेते हैं, और यह रंग हमारे अंदर अंर्तमन में विचरण करने लगता है। फलस्वरूप हमें बाहर की वस्तुयें रंगमय प्रतीत होती है। मैं अपनी कलाकृति में सूक्ष्म अभिव्यक्ति पर अधिक बल देता हूँ इस सूक्ष्म अभिव्यक्ति में रंग, आकार, भाव और मेरी आंतरिक तरंग होती है।

मैं अपनी कलाकृति में रंगों के माध्यम से गति दिखाने की कोशिश करता हूँ, क्योंकि गति चित्र का प्रमुख गुण हैं, और गति की दिशा को प्रदर्शित करने में रंगों का योगदान सर्वाधिक होता है। मैं अपने चित्र में अपनी आंतरिक अभिव्यक्ति के अनुसार रंगों को अलग-अलग दिशा में अंकित करता हुँ ताकि उन रंगों का संतुलन बना रहे। मेरे चित्रों में शीतल व गर्म दोनों रंगों का समावेश होता है। चित्र में विरोधी रंगों का प्रयोग प्रभाविता, प्रमाण, लय आदि गुणों के लिए होता है। मैं अपनी कलाकृति में कैनवास के विस्तृत क्षेत्रों में सांजस्य की मधुरता को दिखाने की कोशिश करता हूँ, और छोटे क्षेत्रों में विरोधी रंगों के द्वंद को दिखाता हूँ जिससे आकर्षण और विविधता से चित्र का सौंदर्य बढ़ता है।

मेरी अवधारणा में रंग परिवर्तन- जब हम किसी अवधारणा पर विचार करते हैं तो विशेष प्रकार की इंद्रिय कार्य करने लगती है। इस दशा में हम वस्तु के अंत:करण में झांकते हैं तत्पश्चात् आरंभ में एक धुंधली आकृति का जन्म होता है और हम उसे इसी रूप में सर्वप्रथम देखते हैं। जैसे-जैसे हमारी अधिक शक्तिशाली इंद्रियाँ अपना प्रभाव डालती है। हमको वस्तु अधिक स्वच्छ और स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होती है। इस दशा में हमारी कल्पना उस वस्तु के संबंध में एक विशेष प्रकार की आकृति, माप और रंग का अनुभव करती है। यही वस्तु की तीन विशेषतायें होती हैं। जो सदैव हमारे संपर्क में

* सहायक प्राध्यापक (चित्रकला) शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

आती है। आकृति और माप सर्वप्रथम हमारे मन में स्थान ग्रहण करते हैं। परन्तु शक्ति और उत्साह के मात्रा के द्वारा ही रंग के प्रभाव का ज्ञान होता है, और हम सूक्ष्म निरीक्षण के द्वारा उस मुद्रा का अनुभव करते हैं, तथा गुणों एवं रंगों पर तूलिका के द्वारा प्रकाश डालते हैं।

प्राय: मैं दो प्रकार के रंगों से प्रभावित होता हूँ- 1 हल्का और 2 गहरा। कभी मैं गहरे रंग को रूचिकर समझता हूँ तो कभी हल्के रंग को। लेकिन मैं इसे जानबूझकर कैनवास पर नहीं लगाता हूँ यह रंग मेरी उस समय की मानसिक स्थिति के अनुसार स्वत: ही परिवर्तित हो जाते हैं, और उस समय की मानसिक स्थिति को देखते हुये हल्के और गहरे रंग का चुनाव करता हूँ। इस तरह मेरी आत्मा का साकार रूप चित्रित होता है।

कला और मेरे विचार- यथार्थ जीवन से प्रेरित किंतु कर्त्ता द्वारा संबंधित भावों, विचारों अथवा अनुभूतियों की अभिव्यक्ति ही कला है, अर्थात कला को हम मानवीय भावों की अभिव्यक्ति या प्रकाशन कह सकते हैं। विभिन्न विचारकें तथा दार्शनिकों ने कला कि विभिन्न परिभाषा दिये हैं लेकिन कला को परिभाषित नहीं किया जा सकता, क्योंकि कला का अपने आप में एक विस्तृत रूप हैं। जहाँ तक मेरा सोचना है कि कला ऐसे विचारों की अभिव्यक्ति जिसे कलाकार मूर्तरूप देने की कोशिश करता है। मैं एक चित्रकार हूँ और मैं अपने विचारों को कलाकृति के मध्य रखते ही व्यक्त कर रहा हूँ।

कलाकार प्रकृति के वशीभूत होकर ही अपने अंदर की अनुभूति को ऐसे साँचे में ढालता है। जो किसी सिद्धांत का पालन नहीं करती बल्कि ऐसे स्वरूप के सृजन में विश्वास करती है जो उसकी भावनाओं को व्यक्त कर सके। कला के लोकाचारी तत्व का आधार मानसिक गतिविधि है। कलाकार जिस वस्तु को चित्रित करना चाहता है कुछ समय के लिये उसी में ध्यान-मग्न हो जाता है। अगर कलाकार को घोड़े की आकृति बनानी है तो वह तभी उसे बना पायेगा, जब तक उसके प्रति एकाग्रचित् न हो जाय। अपनी अवधारणा के फलस्वरूप एक अच्छी कलाकृति तैयार करने के लिये कलाकार को उसके प्रति एकाग्रचित् होना अतिआवश्यक हो जाता है।

मेरी ऐसी मान्यता है कि जहाँ सृजन शक्ति मनुष्य के माध्यम से अभिव्यक्ति प्राप्त करती हैं, वहाँ कला मानव को ही संबोधित करती है। कला ऐसे समानांतर संसार का सृजन है, जिससे मनुष्य अहं भाव को भूलकर अपने आप को कई रूपों में देख सकता है। कला किसी एक व्यक्ति या समूह से संबंधित न होकर संपूर्ण मानव जाति की मानसिक क्रिया है। कला प्राय: सामाजिक जीवन के सभी पक्षों से संबंधित होती है, और कला इन सभी की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है। कला के क्षेत्र में ऐसी कोई कृति का उदाहरण नहीं दिया जा सकता जो किसी धार्मिक, सामाजिक भाव व मानवीय मनोवेगों को उद्धेलित करने हेतु प्रयुक्त न हुई हो। एक कलाकार के लिये हमारी कला का सामान्य जनमानस या दृष्टा पर क्या प्रभाव पड़ता है, या फिर उसे परखने वाला व्यक्ति उसे कितना आत्मसात् करेगा इसका विशेष ध्यान रखना होता है, क्योंकि परखने वाला व्यक्ति वास्तविक आनंद पाता है। यदि हमारी कला को परखने वाला व्यक्ति एक अच्छा जानकार है तो वह व्यक्ति हमारी कृति को देखकर उसे अनुभवकर नई प्रेरणा पाता है, और अपने अनुभव को रख नया अनुभव भी प्राप्त कर सकता है, एक सामान्य जन मानस भी उस कृति को देखकर उसे अपने स्तर में रख आनंद की अनुभूति और प्रेरणा प्राप्त कर सकता है।

कलाकार और दर्शक- अगर हम एक अच्छे कलाकार हैं तो इसमें दर्शक की प्रमुख भूमिका होती हे। हमें एक सफल कलाकार बनाने में दर्शक का विशेष योगदान होता है। बात ये आती है कि हम जब एक कलाकृति का निर्माण करते हैं, तो उसमें ऐसा क्या होता है, जो दर्शक को भाव-विभोर करता है। मेरे विचार में दर्शक और कलाकार में ऐसा कुछ जरूर होता है जो दोनों के अंर्तमन को जोड़ता है। मैं जब कोरे कागज या कैनवास पर चित्र को पूर्णावस्था तक पहुँचाने की क्रिया में होता हूँ तब मेरी मानसिक स्थिति आतुरता और बेचैनी से धीरे-धीरे विश्राम की ओर बढ़ रही होती है मैं उसी बीच दर्शक के लिये ऐसी कुछ विशेषता छोड़ देता हूँ जो दर्शक को थोड़ी देर के लिये वहाँ स्थिर कर दे। यही मेरी कोशिश होती है। ऐसी स्थिति में दर्शक का भी यह फर्ज होता है कि वह मेरी कलाकृति को अपने स्तर में रख अनुभव करे और उसकी रसानुभूति करे। जिस प्रकार ठंड के दिनों में सुबह की धूप, गर्मियों में पानी की एक बूंद, शाम के वक्त खुला आसमान, एकांत में पक्षियों का कलरव आदि इन सब का अनुभव करने पर एक पल के लिये हमारा संबंध हमारे दैनिक जीवन की दौड़ भाग से टूट जाता है, और हमें जो शीतलता और रसानुभूति प्राप्त होती है यही रसानुभूति एक अच्छी कलाकृति को देखकर भी होती है। बस दर्शक को उस कलाकृति के अंदर प्रवेश करना होता है, और दर्शक उस कलाकृति से अपना तादात्म्य स्थापित कर रसास्वादन करता है। दर्शक तथा चित्रकार का स्तर जब एक दूसरे को स्पर्श करता है। तब कुछ समय के लिये ही सही दर्शक चित्र में खो जाता है। चित्र के प्रति आकर्षण में दर्शक को कोई भौतिक स्वार्थ नहीं मिलता लेकिन अपने तटस्थ भाव से शुद्ध आनंद की अनुभूति कर सकता है। इस प्रकार दर्शक के लिये चित्र की परख अथवा रसास्वादन एक क्रियाशील प्रक्रिया होती है। निष्कर्षत: दर्शक द्वारा चित्र को देखने-परखने की प्रक्रिया में उसका परिपक्व होना आवश्यक है।

कला और सौंदर्य- सौंदर्य का अर्थ बहुत व्यापक है। सौंदर्य को परिभाषित नहीं किया जा सकता। मानव का मन सदैव सौंदर्य के प्रति आकृष्ट होता रहा है, तथा सुंदर केा देख कर अभिभूत होता रहा है। सौंदर्य और सुंदर दो अलग-अलग रूप हैं। ''सौंदर्य'' वह है जो हमारे अंर्तमन को अच्छा लगे और ''सुंदर'' वह है जो नेत्रों को सुख पहुँचाय। नेत्रों के माध्यम से सुख की अनुभूति देने वाला पदार्थ ही सुंदर कहलाता है। जब हम कोई कलाकृति हमारे आँखों से उतरकर हमारे अंर्तमन या सहृदय को छूती है तो उसे हम सौंदर्य कह सकते हैं। क्रोचे के अनुसार- ''सौंदर्य सृजन का संबंध आत्मा की विचारात्मक क्रिया के रूप से है। इस विचारात्मक क्रिया से ज्ञान के दो रूप निष्पादन होते हैं-सहजज्ञान और तर्क ज्ञान। इन दोनों में सहज ज्ञान से ही सौंदर्य सृजन अथवा कला का निर्माण होता है। कला के साथ सौंदर्य का घनिष्ठ संबंध है। जिस प्रकार शरीर के बिना उसकी आत्मा को कोई कार्य नहीं है। उसी प्रकार सौंदर्य के बिना कला विहीन है। कला एक ऐसी भाषा है जिसको कलाकार बिना पढ़े अपनी बात दर्शक तक पहुँचाता है, लेकिन दर्शक उस कला भाषा को तब आत्मसात् कर सकेगा जब उसमें सौंदर्य गुण होगा।

एक भावपूर्ण कलाकृति ऐसी होती है जो हमारे मन में आते ही थोड़ी देर के लिये हमारी सत्ता पर ऐसा अधिकार जमा लेती है कि हम सब कुछ भूलकर उस कलाकृति की भावना में परिणत हो जाते हैं। हमारी अंत:सत्ता की यही तदाकार परिणति सौंदर्य की अनुभूति है।

कलाकृति के रूपों का जन्म कलाकार की कल्पना अथवा अनुभव से होता है। बहुत विस्तृत अनुभवों के बीच में कलाकार सौंदर्यसार को अपनी कलाकृति में शामिल करता है। सौंदर्य के लिये अनुभवों को चुनने और व्यवस्था देने में कलाकार तथा दर्शक का दृष्टिकोण एक नहीं हो सकता। सामान्य दर्शक कलाकृति में अपने अनुभव सादृश्यमूलक रूपों की खोज करने में जुट जाता है। जिससे उस रूप की सौंदर्यानुभूति का प्रभाव दब जाता है। इसीलिये कलाकार विषयवस्तु से जुड़कर भी दृश्यजगत की चिंता नहीं करता और अपनी कलाकृति के आकारों, रंगों, अनुपातों और संयोजन में डूब जाता है।

अपनी रचना को संयोजन बना देता है। जहाँ अर्थ नहीं होता बल्कि अनुभूतिजन्य ''सौंदर्य'' होता है।

इस शोध-पत्र में मैंने कला और अपनी कलाकृति को अपने विचारों के माध्यम से प्रस्तुत करने की कोशिश की है। इसका अध्ययन करने पर मैने पाया कि कला और कलाकृति को सौंदर्यमूलक होना बहुत जरूरी है। चाहे वह सौंदर्यता रंग में, आकृति में या फिर आकार में क्यों न हो। उसको एक सामान्य जन समूह भी अपने स्तर में रख कर रसानुभूति कर सकता है। वर्तमान में यदि हम देखें तो कला की कोई परिभाषा नहीं रह गई है और उसे व्याकरणबद्ध भी नहीं किया जा सकता। उसे कलाकार जैसे चाहे प्रस्तुत कर सकता है।

यदि हम कला के साथ 'आधुनिकता' की बात सोचें तो उसके मतलब भिन्न होते हैं। सबसे पहले तो यह कि कला वस्तु मात्र नहीं है। न वस्तु की तरह उसकी व्याख्या की जा सकती है। कला सबसे पहले एक रचानात्मक चेष्टा है और सौंदर्य प्रमुख दृष्टि। 'आधुनिकता' वह शब्द है जो हमारे जीवन में वह बदलाव है जो विज्ञान और औद्योगिकरण की वजह से आया है।

कलाओं में आधुनिकता का अर्थ यह होगा कि मनुष्य अपनी बनायी चीजों और अपने बारे में उपलब्ध नई पुरानी जानकारियों को किस तरह सुंदर बनाता है। जिस प्रकार सभी कार्यों में समय का प्रभाव देखा जा सकता है। उसी प्रकार कला पर भी समय के साथ-साथ चलने का प्रभाव देखा जा सकता है। वर्तमान में विज्ञान और औद्योगिकरण ने ऐसे चमत्कार दिखाये हैं कि ''कला'' भी इससे अछुती न रह सकी है।

इस आधुनिक कला को हम दूसरे शब्दों में समकालीन कला भी कह सकते हैं। जो समय के साथ परिवर्तनशील होती है। इस आधुनिकता में ढ़लकर मनुष्य अपनी अवधारणा को दूसरे ढंग़ से प्रस्तुत करता है। अतएव उसकी प्रस्तुतीकरण का तरीका बदल गया है।

लेकिन हमें अपनी कला रचना करते समय 'समाज' का ध्यान अवश्य रखना होगा। समाज की आवश्यकता का ध्यान कलाकार को स्वयं रखना होगा साथ ही सामाजिक विघटन को भी चित्रित करने का प्रयास करना होगा। कलाकार के जीवन की उपलब्धि समाज को ध्यान में रखकर बनाई कृतियों से होती है। कला का योगदान जगत में सदैव अग्रणी रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. कला विचार- डॉ. शुकदेव क्षोत्रिय
2. कला, समय और समाज- प्रयाग शुक्ल, ललित कला अकादमी, रविन्द्रभवन, नई दिल्ली, वर्ष 1979
3. कला एक मिमांसा
4. सौंदर्य- डॉ. राजेन्द्र बाजपेयी, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, वर्ष 2004

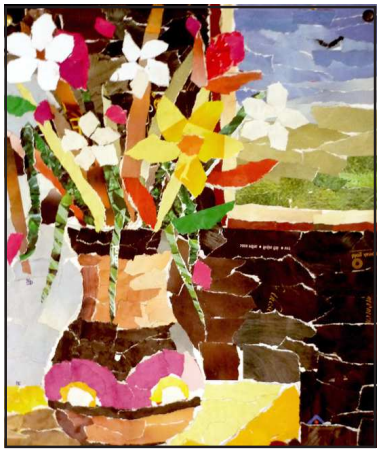

****

मेघदूत में उज्जयिनी की चित्रात्मकता

डॉ. नीता तोमर *

प्राचीन उज्जैन की महान विभूतियों में महाकवि कालिदास अमर है। संस्कृत परम्परा में उनको कवि कुल गुरू कहा गया है, याने वे सब कवियों के गुरू के समान है। महाकवि कालिदास का उज्जैन में विशेष आत्मीय सम्बन्ध था। उन्होंने अपने विश्व प्रसिद्ध काव्य 'मेघदूत' में उज्जैन का बहुत ही सुन्दर चित्रण किया है। मेघदूत में विरही यक्ष मेघ या बादल को अपना दूत बनाकर संदेश भेजता है। यक्ष, मेघ को रास्ते में देर नहीं करने के लिए कहता है। देर हो जाने पर भी कालिदास अपने मेघ को उज्जैन होकर जाने का निर्देश देते हैं।[1]

उत्तर की ओर जाने में यद्यपि उज्जयिनी वाला मार्ग कुछ टेड़ा पडेग़ा, फिर भी तुम उस नगर के राजभवनों को देखना न भूलना। तुम्हारी बिजली की चमक से डरकर वहाँ की स्त्रियाँ जो चंचल चितवन चलावेगी उन पर यदि तुम न रीझे, तो समझ लो कि तुम्हारा जन्म अकारथ ही हुआ।[2]

उज्जयिनी की ओर जाते हुए तुम उतरकर उस निर्विन्ध्या नदी का भी रस ले लेना जिसकी उछलती हुई लहरों पर पक्षियों की चहचहाती हुई पाते ही करधनी सी दिखाई देगी और जो इस सुन्दर ढंग से रूक-रूककर बह रही होगी कि उसमें पड़ी हुई भँवर तुम्हें उसकी नाभि जैसी दिखाई देगी, क्योंकि स्त्रियाँ चटक मटक दिखाकर ही अपने प्रेमियों को अपने प्रेम की बात कह देती है।[3] देखो! निर्विन्ध्या नदी की धारा तुम्हारे बिछोह में चोटी के समान पतली हो गयी होगी और तीर के वृक्षों के पीले पत्ते झड़-झड़कर गिरने से उसका रंग भी पीला पड़ गया होगा।

इस प्रकार, हे बड़भागी मेघ! अपनी यह वियोग की दशा दिखाकर वह यही बता रही होगी कि तुम्हारे वियोग में सूखी जा रही हूँ। देखो ! तुम ऐसा उपाय करना कि उस बेचारी का दुबलापन दूर हो जाए अर्थात् जल बरसाकर उसे भर देना।[4] अवन्ति देश में पहुँचकर तुम धन-धान्य से भरी हुई उस विशाला नगरी की ओर चले जाना जिसकी चर्चा मैं पहले ही कर चुका हूँ और जहाँ गाँव के बडे-बूढे लोग महाराजा उदयन की कथा भली प्रकार जानते बूझते है। वह नगरी ऐसी लगती है मानो स्वर्ग में अपने पुण्यों का फल भोगने वाले पुण्यात्मा लोग, पुण्य समाप्त होने से पहले ही, अपने बचे हुए पुण्य के बदले, स्वर्ग का एक चमकीला भाग लेकर उसे अपने साथ धरती पर उतार लाए हो।[5] उस नगरी में मतवाले सारसों की मीठी बोली को दूर-दूर तक फैलाता हुआ ; तड़के खिले हुए कमलों की गन्ध में बसा हुआ और शरीर को सुहाने वाला क्षिप्रा का वायु स्त्रियों की संभोग की थकावट को उसी प्रकार दूर कर रहा होगा जैसे चतुर प्रेमी, मीठी मीठी बाते बनाकर फुलेल सुँधाकर और पंखा झलकर संभोग से थकी हुई अपनी प्यारी की थकावट दूर कर देता है।[6]

उज्जयिनी की हाटो में तुम्हें कहीं तो करोड़ों मोतियों की ऐसी मालाएँ सजी हुई दिखाई देगी जिनके बीच -बीच में बडे-बडे रत्न गुँथे हुए होगें, कहीं करोड़ों शंख और सीपियाँ रखी हुई मिलेगी और कहीं पर नई घास के समान नीले और चमकीले नीलम बिछे दिखाई देगें। उन्हें देखकर यही जान पड़ेगा कि रत्न तो सब यहाँ निकलकर ला रखे गए है और समुद्र में केवल पानी ही पानी बचा छोड़ दिया गया है।[7] वहाँ के जानकार लोग, यह कथा सुना-सुनाकर बाहर से आए हुए अपने सम्बन्धियों का मन बहला रहे होगें कि यहाँ पर वत्स देश के राजा उदयन ने उज्जयिनी के महाराज प्रद्योत की प्यारी कन्या वासवदत्ता को हरा था, यही उनका बनाया हुआ ताड़ के पेड़ों का सुनहरा उपवन था और यही पर मद से भरा हुआ नीलगिरी नाम का हाथी, खूँटा उखाड़ कर इधर-उधर पागल होकर घूमता फिरता था।[8] वहाँ की स्त्रियों के बालों को सुगंधित करके, अगर की धूप का जो धुआँ झरोखों से निकलता होगा उससे तुम्हारा शरीर बढेग़ा और तुम्हें अपना सगा समझकर, वहाँ के पालतू मोर भी नाच-नाचकर तुम्हारा सत्कार करेगें। तब तुम फूलों के गन्ध से महकते हुए वहाँ के उन भवनों की सजावट देखकर अपनी थकावट दूर कर लेना जिसमें सुन्दरियों के चरणों में लगी हुई महावर से लाल पैरों की छाप बनी हुई होगी।[9] वहाँ से तुम तीनों लोकों के स्वामी और चंडी के पति महाकाल के पवित्र मंदिर की ओर चले जाना। वहाँ शिवजी के गण, तुम्हें अपने स्वामी शिवजी के कंठ के समान ही नीला देखकर, तुम्हें बड़े आदर से निहारेगें। वहाँ जल-विहार करने वाली युवतियों के स्नान करने से महकता हुआ और कमल के गंध में बसी हुई गंधवती नदी की ओर से आने वाला पवन, इस मंदिर के उपवन को बार-बार झूला रहा होगा।[10]

हे मेघ! यदि तुम महाकाल के मंदिर में साँझ होने से पहले पहुँच जाओ तो वहाँ तब तक ठहर जाना जब तक सूर्य भली प्रकार आँखो से ओझल न हो जाए और जब महादेवजी की साँझ की सुहावनी आरती होने लगे तब तुम भी अपने गर्जन का नगाड़ा बजाने लगना। तुम्हें अपने मंद गंभीर गर्जन का पूरा-पूरा फल मिल जायेगा[11] संध्या को नाच में पैरों पर थिरकती हुई जिन वैश्याओं की करधनी के घुँघरू बडे मीठे-मीठे बज रहे होगें और जिनके हाथ, कंगन के नगों की चमक से दमकते हुए डंड वाले चंवर डुलाते थक गए होगें, उन वेश्याओं के नख-क्षतों पर जब तुम्हारी ठंडी-ठंडी बूँदे पडेग़ी तब वे बडे प्रेम से अपनी बड़ी-बड़ी भौरों की पांतो के समान चितवन तुम पर डालेगी।[12] साँझ की पूजा हो चुकने पर जब महाकाल ताण्डव नृत्य करने लगे, उस समय तुम साँझ की ललाई लेकर उन वृक्षों पर छा जाना तो उनके ऊँचे उठे हुए बाँह के समान खडे होंगे। ऐसा करने से शिवजी के मन में जो हाथी की खाल ओढ़ने की इच्छा होगी वह भी पूरी जो जाएगी। यह देखकर पहले तो पार्वतीजी डर जायेंगी कि यह हाथी की खाल आ कहाँ से गई पर फिर तुम्हें पहचानकर उनका डर दूर हो जाएगा और वे एकटक होकर शिवजी में तुम्हारी इतनी भक्ति देखती रह जायेगी[13] वहाँ पर जो स्त्रियाँ अपने प्यारों से मिलने के लिए ऐसी घनी अंधेरी रात में निकली होंगी, उन्हें जब सड़कों पर अंधेरे के मारे कुछ भी न सूझता होगा, तब तुम कसौटी में सोने के समान दमकने वाली अपनी बिजली चमकाकर उन्हें ठीक-ठीक मार्ग दिखा देना। पर देखो! तुम गरजना बरसना मत ! नहीं तो वे घबरा उठेंगी।[14]

बहुत देर तक चमकते-चमकते थकी हुई अपनी प्यारी बिजली को लेकर तुम किसी ऐसे मकान के छज्जे पर रात बिता देना जिसमें कबूतर सोए हुए हो, और फिर दिन निकलते ही वहाँ से चल देना, क्योंकि जो अपने मित्रों का काम करने का बीड़ा उठाता है, वह अलसेट नहीं किया करता।[15] पर देखो ! उस समय प्रेमी लोग अपनी प्यारियों के आँसू पोंछ रहे होंगे जिन्हें रात को अकेली छोड़कर वे कहीं दूसरी ठौर पर रमें होगें। इसलिए उस समय सूर्य को भी मत ढकना क्योंकि वे भी उस समय अपनी प्यारी कमलिनी के मुख-कमल पर पड़ी हुई ओस की बूंद पोंछने के लिए आ गए होगे। तुम उनके हाथ न रोक बैठना, नहीं तो वे बुरा मान जाएँगे।[16] हे मेघ! तुम्हारे सहज सलोने शरीर की परछाई,

* अतिथि विद्वान (चित्रकला विभाग) शासकीय माधव कला वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

गंभीरा नदी के उस जल में अवश्य दिखाई देगी, जो चित्र जैसा निर्मल हैं। उसमें किलोले करती हुई कुमुद के समान उजली मछलियों को देखकर तुम यही समझना कि वह नदी तुम्हारी ओर अपनी प्रेम भरी चंचल चितवन चला रही है। कहीं तुम अपनी रूखाई से उसके प्रेम का निरादर न कर बैठना[17]

जब तुम गंभीरा नदी का जल पी लोगे तो उसका जल कम हो जाएगा और उसके दोनों तट नीचे तक दिखाई देने लगेंगे। उस समय जल में झुकी हुई बेंत की लताओं को देखने से ऐसा जान पडेग़ा मानो गंभीरा नदी, अपने तट के नितम्बों पर से अपने जल के वस्त्र खिसक जाने पर, लज्जा से अपनी बेंत की लताओं के हाथों से अपना जल का वस्त्र थामे हुए है। यह सब देखकर भैया मेघ! उस पर झुके हुए तुम, वहाँ से जा न पाओगे, क्योंकि जवानी का रस ले चुकने वाला ऐसा कौन रंगीला होगा जो कामिनी की खुली हुई जाँघों को देखकर उसका रस लिये बिना ही वहाँ से चल दे।[18]

अत: मेघदूत में मेघ को उज्जयिनी का पथ बतलाते हुए महाकवि कालिदास ने उज्जैन का असाधारण चित्रात्मक उदाहरण प्रस्तुत किया है। उज्जयिनी की चित्रात्मकता का संक्षेप में जैसा मनोहर वर्णन 'मेघदूत' में किया गया वैसा इसके अनुसरण पर रचे गये बडे-बडे क़ाव्यों में भी नहीं हो पाया है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. रमेश निर्मल : प्रतिकल्पा उज्जयिनी : पृष्ठ क्र. 186 प्रकाशक : अन्विति प्रकाशन, सी.एम. जी इन्फोटेक, 86, 88 खाडिलकर रोड़, मुम्बई
2. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/29 पृ. क्र. 348 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
3. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/30 पृ. क्र. 348 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
4. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/31 पृ. क्र. 348 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
5. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/32 पृ. क्र. 349 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
6. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/33 पृ. क्र. 349 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
7. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/33 पृ. क्र. 349 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
8. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/35 पृ. क्र. 349 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
9. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/36 पृ. क्र. 349 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
10. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/37 पृ. क्र. 350 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
11. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/38 पृ. क्र. 350 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
12. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/39 पृ. क्र. 350 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
13. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/40 पृ. क्र. 350 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
14. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/41 पृ. क्र. 350 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
15. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/42 पृ. क्र. 350 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
16. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/43 पृ. क्र. 351 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
17. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/44 पृ. क्र. 351 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी
18. महाकवि कालिदास : मेघदूतम् : पूर्वमेघ/45 पृ. क्र. 351 कालिदास ग्रंथावली : सम्पादक : पंडित सीताराम चतुर्वेदी

****

कुमारसम्भवम् में चित्रकला के सन्दर्भ

डॉ. नीता तोमर *

महाकवि कालिदास कालजयी कवि और नाटककार है। वे भारत के राष्ट्रकवि के रूप में प्रतिष्ठित है तथा उनकी रचनाओं को सम्पूर्ण विश्व में सम्मान प्राप्त हुआ है। महाकवि कालिदास द्वारा विरचित चार काव्य और तीन नाटक विश्व साहित्य की अनमोल धरोहर है। महाकवि कालिदास की इन विश्वविश्रुत सात अनुपम कृतियों में ललित कलाओं के महत्वपूर्ण संकेत प्राप्त होते है जिनके आधार पर विद्वानों का यह अनुमान है कि कालिदास न केवल विभिन्न शास्त्रों के अपितु कलाओं के भी विशेषज्ञ रहे होंगे।

कालिदास साहित्य में संगीत, नृत्य, चित्रकला आदि कलाओं के सन्दर्भ अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विशेषत: उनकी रचनाओं के चित्रकला सम्बन्धी सन्दर्भ विद्वानों के अध्ययन-मनन के विषय बने हैं। 'कुमारसम्भवम्' महाकवि कालिदास का प्रसिद्ध महाकाव्य है, इस महाकाव्य का परिचय डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित द्वारा निम्नानुसार दिया गया है

''हिमालय के भव्य वर्णन के साथ इस महाकाव्य का आरम्भ होता है भारत के उत्तर में स्थित हिमालय भूमि का मानदण्ड है। वह सभी औषधियों और खनिजों का जलाशय है। बाद में हिमालय के घर पार्वती के जन्म, शैशव और यौवन का वर्णन है। नारद ने बताया कि उसका विवाह शिव से होगा। उधर तारकासुर से आंतकित देवगण ब्रह्मा की सेवा में पहुंचते है। ब्रह्मा कहते हैं कि शिव-पार्वती का पुत्र ही तारकासुर का वध कर सकेगा। इन्द्र कामदेव को यह काम सौंपते है कि पार्वती के प्रति किसी तरह शिव आकृष्ट हो जाए।

शिव की तपस्या स्थली में कामदेव द्वारा उद्दाम बसन्त के वातावरण की रचना और फिर उसमें पार्वती की पुष्पित लता सी लहराती कमनीय सुन्दरता। पार्वती को देखते ही शिव का चित्त विचलित हो जाता है। अपनी इस मन: स्थिति का कारण कामदेव को पाते है क्योंकि वह उनकी और अपना बाण छोड़ने की मुद्रा में दिखाई देता है। शिव क्रुद्ध हो तृतीय नेत्र की अग्नि से कामदेव को जलाकर भस्म कर देते हैं। कामदेव की पत्नी रति विलाप करती है।''[1] मदन दहन और रति विलाप के पश्चात महाकवि कालिदास ने 'कुमारसम्भवम्' में पार्वती की कठिन तपस्या का वर्णन किया है। पार्वती की तपस्या से ही प्रसन्न हो कर शिव उनका वरण करते हैं।

''पार्वती शिव को पाने के लिए तपस्या करने जाती है। वह कठोर तप करती है। एक ब्रह्मचारी आकर पार्वती के सम्मुख शिव की निन्दा करता है। पार्वती निन्दा सहन नहीं कर पाती और तर्कपूर्ण उत्तर देती है। शिव-निन्दा से रूष्ट होकर जाती पार्वती को निन्दक ब्रह्मचारी शिव के रूप में परिवर्तित हो रोक लेते हैं। वे सप्तर्षियों को हिमालय के पास पार्वती का हाथ मांगने के लिए भेजते हैं। हिमालय की स्वीकृति के बाद ब्रह्मा, विष्णु सहित सभी देवताओं और गणों की बारात ले दूल्हा बनकर शिव पार्वती को ब्याह लेते हैं। उनकी बारात देखने हिमालय की राजधानी उमड़ पड़ती है। विवाह के पश्चात शिव पार्वती के उन्मुक्त विहार की प्रस्तुति काव्य की रमणीयता से भरपूर है।''[2]

महाकवि कालिदास द्वारा रचित 'कुमारसम्भवम' में चित्र और चित्रकला के विभिन्न सन्दर्भ उपलब्ध होते हैं। महाकवि की कमनीय कल्पना से 'कुमारसम्भवम' में स्थान-स्थान पर चित्रात्मक परिकल्पना के प्रसंग उपस्थित हुए हैं। प्रथम सर्ग के आरम्भ में ही नगाधिराज हिमालय के वर्णन में महाकवि की विलक्षण चित्रात्मक परिकल्पना दर्शनीय है, जहाँ महाकवि ने कहा है कि हिमालय के शिखरों पर गेरू आदि धातुओं की ऐसी विविध रंगी चट्टाने हैं, जिनके पास पहुंचने पर बादलों पर जो प्रतिबिम्ब पड़ते हैं, उन्हें देखकर अप्सराओं को संध्या हो जाने का भ्रम हो जाता है और वे हड़बड़ी में सांध्यकालीन नृत्य-संगीत के लिए श्रृंगार करना आरम्भ कर देती हैं-

यश्चाप्सरोविभ्रममण्डानानां संपादयित्री शिखरैर्बिभर्ति।
बलाहकच्छेदविभक्त रागामकलासंध्याभिव धातुमत्ताम्।।[3]

महाकवि कालिदास ने 'कुमारसम्भवम' के प्रथम सर्ग में नवयौवना के रूप में पार्वती के सौन्दर्य का वर्णन करते हुए अपनी प्रथम उपमा में ही चित्रकला का सन्दर्भ प्रस्तुत किया है और कहा है कि जैसे तूलिका द्वारा ठीक-ठीक रंग भरने पर चित्र खिल उठता है, तथा सूर्य की किरणों का स्पर्श पाकर कमल का फूल विहँस उठता है, वैसे ही पार्वती की देह भी नवयौवन पाकर खिल उठी है -

उन्मीलितं तूलिकयेव चित्रं सूर्यांशुभिर्भिन्नमिवारविन्दम्।
बभूब तस्याचतुरस्रशोभि वपुर्विभक्तं नवयौवनेन।।[4]

अगले ही श्लोक में पार्वती के चरणों की शोभा का वर्णन करते हुए महाकवि कालिदास ने पुन: मनोहारी चित्रात्मक परिकल्पना प्रस्तुत की है-

अभ्युत्रताङ्गुष्ठनखप्रभाभिर्निक्षेपणाद्रागमिवोद्गिरन्तौ।
आजहतुरस्तच्चरणों पृथिव्यां स्थलाविन्दश्रियमव्यवस्थाम्।।[5]

अर्थात्, पार्वती के स्वाभाविक रूप से लाल और कोमल चरणों के अंगुठों के नखों से निकलने वाली चमक ऐसी लगती है, जैसे वे चरण, लालिमा उगल रहे हों और जब वे चलती हैं तो ऐसा लगता है, जैसे स्थल-कमल के पुष्प उगाती चल रही हों। पार्वती के सौंदर्य चित्रण में महाकवि कालिदास ने रंगों की चित्रात्मक परिकल्पना की अद्भुत छटा प्रस्तुत की है और कहा है कि उनके लाल-लाल होठों पर फैली हुई मुस्कान का उजलापन ऐसा सुन्दर लगता है, जैसे लाल कोंपल में उजला फूल रखा हो अथवा स्वच्छ मूंगे के बीच में मोती जड़ा हो-

पुष्पं प्रवालोपहितं यदि स्यान्मुक्ताफलं वा स्फुटविद्रिमस्थम्।
ततोऽनुकुर्याद्धिशदस्य तस्यास्तोम्रौष्ठपर्यस्तरुचः स्मितस्य।।[6]

महाकवि कालिदास ने पार्वती की सुन्दर देह की शोभा का वर्णन करते हुए स्वयं ही कहा है कि वह किसी चित्र जैसा आभास देती है। विशेषत: पार्वती की मनोहर भौंहें ऐसी ही जान पड़ती हैं -

तस्या: शलाकाञ्जननिर्मितेव कान्तिर्भ्रुवोरायतलेखयोर्या।
तां वीक्ष्य लीलाचतुरामङ्ग स्वचापसैन्दर्यमंद मुमोच।।[7]

अर्थात्, पार्वती की लम्बी और मनोहर भौंहें ऐसी प्रतीत होती हैं, जैसे किसी (चित्रकार) ने तूलिका से बनाई हो। वे भौंहें, इतनी सुन्दर हैं कि कामदेव का भी अपने धनुष की सुन्दरता का अभिमान, उनके समक्ष चूर-चूर हो गया। पार्वती के सौन्दर्य की शोभा को ही नहीं अपितु तारकासुर से आक्रान्त देवताओं के निस्तेज स्वरूप को भी महाकवि कालिदास ने इस रूप में प्रस्तुत किया है, जैसे वह किसी चित्र में स्थिर हों। महाकवि कालिदास ने कहा है कि बारह आदित्य (सूर्य) अपना तेज खोकर ठंडे पड़े हुए, ऐसे चित्र में चित्रित और मंद क्यों दिखाई दे रहे हैं कि कोई भी जब तक चाहे, उन्हें आँख गड़ाकर देखता ही रहे-

अमी च कथमादित्या: प्रतापक्षतिशीलता:।
चित्रन्यस्ता इव गता: प्रकामालोकनीयताम्।।[8]

* अतिथि विद्वान (चित्रकला विभाग) शासकीय माधव कला वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शिव की समाधि भंग करने के लिए कामदेव जब वसंत के साथ अपनी माया से समस्त प्रकृति को संचरित करता है तब शिव के नन्दी के संकेत पर अचानक समस्त प्रकृति ऐसी अचल हो उठती है कि ऐसा लगता है मानो वह यथार्थ में नहीं अपितु चित्र में चित्रित हो –

निष्कम्पवृक्षं निभृतद्विरेकं मूकाण्डजं शान्तमृगप्रचारम् ।
तच्छासनात्काननमेव सर्व चित्रार्पितारम्भमिवावतस्थे ।। [9]

अर्थात्, नन्दी की आज्ञा पाते ही वृक्षों ने हिलना बन्द कर दिया, भौंरों ने अपना गुंजन बन्द कर दिया, सब जीव–जन्तु मौन हो गए और पशु भी अपने स्थान पर स्थिर हो गए। इस प्रकार नन्दी के एक संकेत से ही पूरा वन ऐसा लगने लगा मानो चित्र में खिंचा हुआ हो। 'कुमारसम्भवम्' में जब शिव की समाधि भंग करने के लिए कामदेव, वसंत के साथ पहुंचते हैं तो महाकवि कालिदास ने प्राकृतिक वातावरण के वर्णन में चित्रात्मकता का मनोरम दृश्य प्रस्तुत करते हुए कहा है–

लग्नद्विरेकफाञ्जनभक्ति चित्रं मुखे मधुश्रीस्तिलकं प्रकाश्य ।
रागेण बालारूणकोमलेन चूतप्रवालोष्ठमलंचकार ।। [10]

अर्थात् भँवरे, तिलक के खिले हुए फूल जैसे तथा प्रभात के सूर्य की लाली से चमकने वाली कोंपलें ऐसी लगती हैं जैसे वसंत की शोभारूपी स्त्री ने भँवरे रूपी आँजन से अपना मुख चित्रित कर मस्तक पर तिलक के फूल का टीका लगा लिया हो तथा प्रात:कालीन सूर्य की मृदुल लाली से चमकने वाले आम की कोंपलों से अपने ओंठ रंग लिए हों। कालिदासकालीन स्त्रियाँ अपने मुख की सज्जा चित्रकारी द्वारा किया करती थीं, इसका संकेत भी 'कुमारसम्भवम्' में मिलता है, जहाँ कालिदास ने कहा है कि शीतकाल के बाद ग्रीष्म के आ जाने पर कोमल ओठों और सुन्दर गोरे मुखों वाली किन्नरियों के चेहरों पर चित्रित की हुई चित्रकारी पर भी पसीना आने लगा –

हिमव्यपायाद्धिशदाराणामापाण्डुरीभूतमुखच्छवीनाम् ।
स्वेदोद्धम: किम्पुरूषाङ्गनानां चक्रे पदं पत्रविशेषकेषु ।। [11]

महाकवि कालिदास कहते हैं कि पसीने के कारण चेहरों पर चित्रित चित्रकारी के लिप जाने पर किन्नरियों के मुख और भी आर्कषक लगने लगे–

गीतान्तरेषु श्रमवारिलेशै: किं चित्समुच्छंवांसितपत्रलेखम् ।
पुष्पासवाधूर्णितनेत्रशोभि प्रियामुखं किम्पुरूषश्चुचुम्ब ।। [12]

अर्थात्, किन्नर अपने गीतों के बीच में ही अपनी प्रियाओं के उन मुखों को चूमने लगे, जिन पर थकावट से पसीना आ जाने के कारण, चीती हुई चित्रकारी लिप गई थी और उनके नयन फूलों की मदिरा से मतवाले होने के कारण अत्यन्त लुभावने लग रहे थे। 'कुमारसम्भवम्' के पंचंम् सर्ग में शिव के प्रति पार्वती के समर्पण भाव का वर्णन करते हुए महाकवि कालिदास ने कहा है कि पार्वती नींद से उठकर स्वयं के द्वारा निर्मित शिव के चित्र को वास्तविक शिव समझकर बातें करने लगती है –

यदा बुधै: सर्वगतस्त्वमुच्यसे न वेत्सि भावस्थमिमं कथं जनम् ।
इति स्वहस्तोल्लिखितश्चमुग्धया रहस्युपालभ्यत चन्द्रशेखर: ।। [13]

अर्थात्, इस प्रकार नींद में उठकर ये (पार्वती) अपने हाथ से बनाये हुए शंकर जी के चित्र को ही, शंकर जी समझकर उन्हें यह कहकर उलाहना देने लगती थीं कि आपके लिए पंडित (विद्वान) लोग तो कहते हैं कि आप घट–घट की बातें जानते हैं, फिर आप मेरे जी की जलन क्यों नहीं जान पाते, जो मैं आपको सच्चे मन से प्यार करती हूं – महाकवि कालिदास ने सप्तऋषियों की जटाओं को चित्र में चित्रित आग की निश्चल लपटों के समान बताया है–

ते सद्दानि गिरेर्वेगादुन्दुन्मुखद्धा: स्थवीक्षिता: ।
अवतेरूर्जटाभारैर्लिखितानमलनिश्चलै: ।। [14]

अर्थात्, जब वे (सप्त ऋषि) बड़ी तेजी से हिमालय के भवन पर उतरे तब चित्र में निर्मित अग्नि की निश्चल ज्वालाओं के समान उनकी जटाओं को द्वार–रक्षक, मुँह उठाकर बड़े आश्चर्य के साथ देखने लगे। विभिन्न रंगों के बादलों के लिए महाकवि कालिदास ने तूलिका द्वारा चित्रित होने की कल्पना की है–

रक्त पीतकपिशा: पयोमुचां कोटय: कुटिलकेशि भान्त्यमू: ।
द्रक्ष्यसि त्वमिति संध्ययानया वर्तिकाभिरिव साधुमण्डिता: ।। [15]

अर्थात्, हे घुंघराले बालों वाली! यह सामने लाल, पीले और भूरे बादल के टुकड़े ऐसे लग रहे हैं, मानों संध्या ने उन्हें यह समझकर तूलिका से रंग दिया हो कि तुम (पार्वती) उन्हें देखोगी। महाकवि कालिदास की उपमाएँ तो बड़ी अनूठी हैं, जिनमें चित्रकारी के प्रयोग बड़े रम्य रूप में हुए है। अपनी एक ऐसी ही उपमा में उन्होंने चाँदनी से प्रतिबिम्बित पर्वत की उपमा चित्रित गजराज से दी है –

उन्नतावनभाववत्तया चन्द्रिका सतिमिरा गिरेरियम् ।
भक्ति भिर्बहुविधाभिरर्पिता भाति भूतिरिव मत्तहस्तिन: ।।[16]

उक्त श्लोक का अर्थ करते हुए पंडित सीताराम चतुर्वेदी ने कहा है कि पहाड़ के ऊँचे–नीचे होने से कहीं तो चाँदनी पड़ रही है और कहीं अंधेरा है। इसलिये यह ऐसा दिखाई पड़ रहा है मानो किसी मतवाले हाथी पर अनेक प्रकार की चित्रकारी कर दी गई हो।

अपनी एक और उपमा में महाकवि कालिदास ने पार्वती के कपोलों पर शिव द्वारा की गई चित्रकारी की उपमा कामदेव द्वारा लिखे गए मंत्रों से दी है–

कपोलपाल्यां मृगनाभिचित्रपत्रावलीमिन्दुमुख: सुमुख्या: ।
स्मरस्य सिद्धस्य जगद्धिमोहमन्त्राश्रेणिमिवोल्लिलेख ।। [17]

अर्थात्, चन्द्रमा जैसे मुख वाले शिव ने पार्वती के सुन्दर मुख पर, सुन्दर गालों को कस्तूरी के लेप से चित दिया तो ऐसा जान पड़ा जैसे वह चित्रकारी भी सिद्ध कामदेव के हाथों से लिखे हुए उन मंत्रों जैसी है, जिनसे वह संसार को वशीभूत कर लेता है। रंगों और चित्रात्मकता के प्रति महाकवि कालिदास का आकर्षण ऐसा प्रबल है कि न केवल मनोहारी और श्रृंगारी प्रसंगों मे अपितु युद्ध आदि के वीभत्स वर्णनों में भी वे प्रभावी दृश्य–चित्र प्रस्तुत कर देते हैं और ऐसे में जिन रंगों का उल्लेख करते हैं, वे भी असामान्य प्रतीत होते हैं, उदाहरणार्थ कुमार कार्तिकेय और असुर तारक के घनघोर संग्राम का चित्रण करते हुए महाकवि ने जो दृश्य प्रस्तुत किये हैं, उनमें धधकते अंगारों के, लहू जैसे लाल रंग के साथ दशों दिशाओं से उठ रहे धुँए के रंग को गधे के गले के रंग जैसा भूरा बताया है–

ज्वलद्विरङ्गरचयैर्नभस्तलं ववर्ष गाढं सह शोणितास्थिभि: ।
धूमं ज्वलन्तो व्यसृजन्मुखै रजो दधुर्दिशो रासभकण्ठधूसरम् ।।[18]

महाकवि कालिदास विरचित 'कुमारसम्भवम्' का अध्ययन करते हुए निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि जगत्–जननी उमा और जगत–पिता शिव के मधुर मिलन, कुमार कार्तिकेय के जन्म और तारकासुर के संहार की इस अनूठी कथा में काव्य के विलक्षण सौंदर्य के साथ चित्रात्मकता के सुन्दर चित्र भी विद्यमान हैं। महाकवि कालिदास अन्य कृतियों के समान ही कुमारसम्भवम् में भी चित्रात्मक दृष्टि के अनेक मनोहारी उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

संदर्भ सूची

* 1 व 2 डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित : कालिदास : पृष्ठ क्र. 22–23 प्रकाशक : कालिदास संस्कृत अकादमी उज्जैन (म.प्र.)।
* 3 से 18 तक महाकवि कालिदास : कुमारसम्भवम (1/4: पृष्ठ क्र. 231), (1/32: पृष्ठ क्र. 235), (1/33: पृष्ठ क्र. 235) (1/44: पृष्ठ क्र. 237), (1/47:पृष्ठ क्र. 237), (2/24: पृष्ठ क्र. 244), (3/42: पृष्ठ क्र. 255), (3/30: पृष्ठ क्र. 254), (3/33: पृष्ठ क्र. 254), (3/38: पृष्ठ क्र. 255), (5/58: पृष्ठ क्र. 276), (6/48: पृष्ठ क्र. 287), (8/45: पृष्ठ क्र. 313), (8/69: पृष्ठ क्र. 316), (9/22: पृष्ठ क्र. 322), (15/21: पृष्ठ क्र. 367) कालिदास ग्रन्थावली : सम्पादक पंडित सीताराम चतुर्वेदी ।

****

Upbringing Decides Future A Study of Mahesh Dattani's Select Plays

Niranjan Gangwal *

Mahesh Dattani [1958] is the greatest and most dynamic Indian English Dramatist of modern India. He has proved through his plays that upbringing of an individual decides his future life. If one is well nurtured and bestowed right moral education by the behaviour and example of the elders, he will become a good citizen and bring a good name and fame to his family otherwise he will be a threat not only to his parents but for the peace of the society as well. So the first and foremost factor in molding the future of an individual is his moral and spiritual teaching.

Mahesh Dattani highlighted through his plays- Where There's a Will, Tara, Final Solutions and Do the Needful that surrounding atmosphere and upbringing of an individual plays an important role in deciding his future life. It is a well known fact that as soon as the immoral act comes to light, all the name and fame comes to the ground. Then there is no way but to face the drastic consequences of one's 'karma'.

In the play Where There's a Will, Hasmukh Mehta, the great industrialist, leads an immoral life by keeping a mistress, Kiran Jhaveri. He tries to control his family members by writing his will and making his secretary, Kiran, the caretaker of his property. He was either busy in earning money or enjoying with his secretary and didn't pay any attention to bring his son, Ajit, up and didn't teach him any moral lesson. His son becomes disobedient. Hasmukh Mehta regrets after appointing his son the JMD of the company. He is so perturbed to see the behaviour of his son that he wishes for the death of his son. Hasmukh is displeased at his son's behavior.

Ajit: After all, I am the Joint Managing Director.

Hasmukh: Believe me, appointing him as the JMd was a big mistake.

Ajit: And, after all, I am his son . . .

Hasmukh: That was an even bigger mistake. What makes it worse is knowing that I actually prayed to get him. Oh God! I regret it all. Please let him just drop dead. [CP: 455]

Lack of moral teaching turns Ajit against his father. His father is unhappy on getting such a son and in the same way his son thinks that his father is spoiling his life.

Hasmukh: I was very sure about that. Why do you think I made the will?

Ajit: You must be happy now, wherever you are. [Steps back.] Ever since I was a little boy, you have been running my life. Do this, do that or don't do that, do this. Was I scared of you! Then, when I grew up, I learnt to answer you back. [CP: 487]

Kiran has been living an immoral life because she has been brought up in immoral atmosphere. Her father and brother used to drink wine and beat their wives. Her husband was also the same. She developed illicit relationship with Hasmukh Mehta and became her mistress.

Kiran: Wrong. I learnt my lessons from being so close to life. I learnt my lessons from watching my mother tolerating my father when he came home every day with bottles of rum wrapped up in newspapers. As I watched him beating her up and calling her names! I learnt what life was when my mother pretended she was happy in front of me and my brothers, so that we wouldn't hate my father. And I learnt when I kept my mother away from my father, so that in return he would remain silent for those three hours when he came home, before he fell asleep on the dining table, too drunk to harm us anymore. I served him those drinks, waiting for that moment when he would become unconscious and I would say a prayer . . . Thank God he was too drunk to impose himself on us! Yes, Mrs Mehta. My father, your husband-they were weak men with false strength.

Hasmukh: What do you mean? How dare you compare me to your drunkard father?

Kiran: Hasmukh was intoxicated with his power. He thought he was invincible. That he could rule from his grave by making this will. [CP: 508]

In the play Tara, it is clear from the information given by Roopa, Tara's friend, that surrounding atmosphere plays an important role in pushing one on the path of immorality. She reveals that Patels used to kill their girl child by drowning her into the milk. Tara's mother Bharati might be influenced by the traditional hatred towards a girl child, that's why she spoiled

*** Asst. Prof. English, Govt. P.G. College, Mandsaur [M.P.] INDIA**

the entire life of Tara.

Roopa: Since you insist, I will tell you. It may not be true. But this is what I have heard. The Patels in the old days were unhappy with getting girl babies-you know dowry and things like that-so they used to drown them in milk.

Pause.

Tara: In milk?

Roopa: So when people asked about how the baby died, they could say that she choked while drinking her milk. [CP: 349]

Tara becomes the victim of discrimination at the hands of her own mother, Bharati. She is not given any moral teaching at her home by her father. That's why she plans with her MLA father to manipulate the operation of Tara by giving bribes to the doctor, Thakkar.

Patel: A scan showed that a major part of the blood supply to the third leg was provided by the girl. Your mother asked for a reconfirmation. The result was the same. The chances were slightly better that the leg would survive . . . on the girl. Your grandfather and your mother had a private meeting with Dr Thakkar. I wasn't asked to come. That same evening, your mother told me of her decision. Everything will be done as planned. Except-I couldn't believe what she told me-that they would risk giving both legs to the boy . . . Maybe if I had protested more strongly! I tried to reason with her that it wasn't right and that even the doctor would realize it was unethical! The doctor had agreed, I was told. It was only later I came to know of his intention of starting a large nursing home-the largest in Bangalore. He had acquired three acres of prime land-in the heart of the city-from the state. Your grandfather's political influence had been used. A few days later, the surgery was done. As planned by them, Chandan had two legs-for two days. It didn't take them very long to realize what a grave mistake they had made. The leg was amputated. A piece of dead flesh which could have-might have-been Tara's. Because of the unusual nature of the operation, it was easy to pass it off as a natural rejection. I-I was meaning to tell you both when you were older, but . . . [CP: 377-378]

The play Final Solutions clearly indicates that it is our surrounding atmosphere that makes a person an enemy to society. The age old enmity between Hindu and Muslim is based on narrow-mindedness. It is the result of our inner narrow feelings against the opposite community. The director of Mahesh Dattani's Tara and Final Solutions categorically declares, "The demons of communal hatred are not out on the street . . . they are lurking inside ourselves." [CP: 161] Morally strong persons like Ramnik, his daughter Smita and her friend Tasneem are needed to uproot the bitterness between the opposite communities. They are so because they are brought up under the broad-minded people like Ramnik Mehta. They are the true believers of humanitarian outlook. Smita asks her father to save her Muslim friend, Tasneem, from the riot torn area.

Smita: It's true. She and the other girls are trapped inside. The matron called the police but nobody's come! [Goes to the phone and dials while talking.] No, nobody's hurt, thank God! It was one of those home-made soda bottle bombs. I have to call Tasneem's parents in Jeevnagar and tell them to come and fetch her. The poor thing's so panicky as it is . . . [CP: 169]

Surrounding atmosphere and fanatic people like Hardika and Javed make their religions disgusting. Hardika is harbouring evil thoughts about Muslim community. In the same way Javed has turned against Hindu religion because of an incident in his childhood. Such people must understand that religion never teaches to hate people. Javed's friend Bobby describes how Javed went against Hindu after a small incident in his childhood.

Bobby: . .. A minor incident changed all that. . . . We were playing cricket on our street with the younger boys. The postman delivered our neighbour's mail. He dropped one of the letters. He was in a hurry and asked Javed to hand the letter over to the owner. Javed took the letter . . . and opened the gate. Immediately a voice boomed, 'What do you want?' I can still remember Javed holding out the letter and mumbling something, his usual firmness vanishing in a second. 'Leave it on the wall,' the voice ordered. Javed backed away, really frightened. We all watched as the man came out with a cloth in his hand. He wiped the letter before picking it up, he then wiped the spot on the wall the letter was lying on and he wiped the gate! [CP: 200]

Javed's childhood hatred against Hindu is used by some politically motivated people. Such people hire the misguided youths like him and they use them to throw the first stone to start communal riots. Nobody wants to indulge in immoral activity but some people like Javed are misused by fanatic

and anti-social elements.

Javed: Yes. Anyone. Except someone as blind as me. . . . 'The time has come,' somebody would say. 'This is jehad-the holy war! It is written!' [CP: 205]

The play Do the Needful highlights the misguided and immoral youths. The children of Chandrakant Patel-Alpesh and of Devraj Gowda-Lata lead an immoral life because they were devoid of moral teachings in their childhood. Alpesh is a homo having illicit relation with his friend, Trilok. Lata is a notorious young lady having illegitimate relation with a married man, Salim. They cross all limits of immorality by deciding to maintain their unfair relationships even after their marriage. Modern nuclear family may be the cause of such immorality in children where they didn't get the guidance and moral teachings from their grand-parents and spoil their entire life in sensual pleasures and face the drastic consequences of their immoral relationships. Devraj Gowda and his wife Prema Gowda realize their mistake but it is too late to mend her daughter's way of living.

Devraj Gowda: Maybe if we were living with my parents, they would have kept an eye on her.

Prema Gowda: Go on. Say it. I am the wicked woman. I am the woman who stood up for my rights and told my mother-in-law what I thought of her. I am the one who talked my husband into leaving his father's home and setting up his own. It is all my fault now. Right?

Devraj Gowda: Okay. Okay. We are both to blame. [CP:121]

Immoral persons like Chandrakant Patel don't pay any attention to giving moral teachings to their children and when they spoil their life, they go to God and pray for the better future for their children. But they can't avoid the drastic penalty of their immoral acts.

Chandrakant Patel [barely audible in spite of shouting]: Poojariji! Over here! . . . Put fifty-one, no, hundred and one rupees for a special prayer for my son . . . [Louder.] A special prayer! For my son! Alpesh Patel! Alp-esh! One hundred and one! I will come back later for the Prasad! [claps to regain his attention.] Receipt! I want a receipt now! [CP: 124]

The modern big people like Patels and Gowdas give too much freedom to their children without giving them any moral education. Such children not only spoil their career but spread immoral atmosphere in the society as well. Even the commonest person like Coconut Vendor knows the drastic consequences of excessive freedom to the children.

Coconut Vendor: You are all modern big people.

Chandrakant Patel: Kannad language seems to be very difficult.

Coconut Vendor: You should find a nice Gowda boy for our Lattamma.

Devraj Gowda: This is not your grandfather's time, you fool.

Coconut Vendor: Yes, yes. You are all doctors. Modern big people. Giving so much freedom to your children. [CP: 140]

Work Cited-

1. Mahesh Dattani, Collected Plays [New Delhi: Penguin India, 2000] [All references are from this edition.]

****

Revengeful and Rebellious woman Monsoon in Currimbhoys play

Dr. Priti Bhatt *

Asif Currimbhoys a well know name in the field of Indo-Anglian drama has written 29 plays out of which twenty two have been published as well as performed on the stage. Asif Currimbhoy belongs to a family of industrialists and was an executive in burmah shell company. Due to his job, he toured all over India, visited many places and met many different people. This provided him sufficient material to compose his plays. He was greatly influenced by Shakespear and o' Neill.

In all the plays of currimbhoy his women characters dominate the theme. Even in agony and suffering the woman characters expose their strenth and power and the best example of it is the play monsoon. It was produced at Dallas theatre textas.The very name Monsoon has an ironical tinge about it because it is the season of the rain as well as the name of the herein But the life of Monsoon has no such sign of happiness as it is, at the arrival of Monsoon. She is the Victim of undesirable fate and has no suffer a lot, due to the adverse circumstrances in the life. The British have left the malasian island but there are survivals like the educationist Andrew. Dr. Juan is the native and the principle link between self isolated Andrew and the outside world. Andrew forcibly adopts a blind beggar woman's grand child and names her Monsoon. What he intends is "I want to alley myself in this experiment that no church dare perform, for divnity is not sacred only to God but also to man"

He builds a big wall to cut of the house from the outside world. Andrew and Monsoon are now free from external influence and interference to find a new world with in them. Before grandma departs from the Monsoon she gives few percepts to her for her future,

" fear not the great well, fear not the detachment. Fear not the isolation. Surround yourself with the spirits of your ancestors. Build up your resistnce to the learnings of the white Tuan who who is to be revenged".

Both the girl and grandma are of the opinion that all the black magic came from Andrew's books. The girl was adament over grandma's teaching "And grandma's always right"

A rumor in the interior part of the island is spead that the Grandma has cast a spell on tuan Andrew which can be broken when Monsoon conceive from Andrew. Monsoon is quit docile to the orders and wishes of Andrew and accepts her isolation to be her fate merely because she had to take revenge at the best opportunity. She has the keys of the house but she never desires to go to outsite world. As Andrew says

" Its become a habit with her ……to take the keys……" Although Dr. Juan also expresses his concern for monsoon and suggests to bring her out rather then keeping her but Andrew intends to keep others out more than to keep her in. andrew's fortune has been disclosed by an old fortune teller who says, "you will be eviodent to the mother who will thwart you from it at great sacrifice to herself…….she will have understood your obsession not through all her learning from you but from with in her……."

The timid and docile monsoon turn to be a changed women. All the time she is silent but watchful in the house. Now she has no fear of Andrew's masgic book. Her silent watch is so penetrating that it hurts Andrew. He says "Don't stand there watching me like a cat, from behind the screen……."

In her appearance and ways there is a strange and unpredictable quientness as though her growth lies mysteriously with in. Andrew is wall aware of monsoon's taking revenge from him, but if she conceives from him, he will get rid of the cursed spell of grandma. When monsoon dernies to it, he twists her hand mercilessly and makes her agree to it. Dr. juan is made to be the only witness to the marriage explaining him that monsoon is comitted to take revenge but if she conceives, the spell will be broken and revenge will no longer be a compulsion for her.

Monsoon undergoes all the pain and suffering inflicted upon her. She does not bown before the waywardness of the might fate.she is fully aware of the havoc then destiny inflicts upon her. She considered failures, griefs, fears caused by fate d was to opress her and patiently waited for her chance in life. For her fate was a mystery as strange and unknowable as future only grandma knew it so she had warned her. Fearlessness was the only weapon by which she faced the ranvanges of fate.

Monsoon is expecting a child and andrew is suffering from high fever Dr.juan is called for. In utterly bad condition also she was not allowed to step out of the house . in a fit of feverr and agitation also Andrew objects to her leaving the house for some outside help. But monsoon replies

" I did not go out tuan andrew. I wrote the message on piece of paper and left it outside early in the morning with

*** Asst. Prof. of English, Govt. Nirbhay Singh Patel College, Indore (M.P.) INDIA**

usual intractions for food………….. the delievery boy pickes it up very day". She was not allowed to see or talk to any body. Even when she has labuor pains she curls up her self in the corner and emits the child. She says to Andrew"

" I………..know……………why ………….you want……………child so………….badly. I…………know…………….and……………I………………. shall do all……………I can……………..every thing……………..in My…………….power to…………….stop you……………from……………..you designs……………."

Monsoon is very watchful and protective towards the child. She assures her child that she will always be watching. I'll never go outsidethe wall. Nothing will ever me go outside the wall. It is inside the wall that you need protection…………………that is why the wall was built. Not to protect from outside but to protect to inside. I know…………and because I know………… I will do every thing in my power to stop……………..all evil forces………………because my beliefs are strong. When you're not afraid and pain does not hurt you any more and you can close your eyes and see through the dark so that a blind old women doesn't need her cane any more………………"

Monsoon senses that andrew means to seduce their child as well, smothers her to save her from a fate worse than death. The child is killed by monsoon and in a fury andrew strangles monsoon,and he is now mad indeed.

So the story revolves around monsoon who ends the life her own child so that the child may not suffer the way she had suffered. As a child she fears the black book of andrew but she has knowledge of it,her fear is gone. She does not fear the great wall also. She is so strong inwardly that knowing everything she faced all ups and downs quietly and patiently. Isolation and detouchment do not affect her at all. She is determined to take revenge, so ready tp under go any amount pain and suffering. She has the keys of the house but never things living the house and run away. She belived in the superstitious saying th at any spell could be cured through contact with a pure child. So andrew meant to seduce their child and get ride ogf grandma's spell so monsoon is very watchful and protective towards the child.

"I knew what would happen, if you alone with the child; that is why I kept watching because I had also promised the child that I would protect her from to heaven where there are no walls…………….

There is no doubt lots of abnormality and violence shown in the play. Isolation could be worse than alienation. As an explorer of revenge monsoon must rank as one of the finest plays of Asif Currimbhoy. As he said.

"there is enough pain and agony graphically presented in the play Monsoon".

The play wright also considered monsoon to be most lively character. The way she suffered throughout her life as a child and a women living in complete isolation and undergoing all pain and suffering alone without anyone in the entire world to sympathize her. He firm belief in Grandma's percept subdued the fury of andrew and the hard fate. For her silence was the only option or remedy in adverse situations. She suffered a lot without a single word of protest. At the time of her labour pains she disclose her feelings to Andrew. Her sufferings gave her strength to head a lonely. isolated life, locked up in the house. The character of monsoon emerges out of to be invaluable, oppressed by sufferings, disaserts and death but her inflinching coviction that howsoever powerful fate may be it can not take away the hope from human life and the world abounds in things which amply make amends for the losses caused by fate. When she realizes that andrew means to seduce the child she is endowed with courage and strength ton save the child. Now she is not ready to time or crush herself, she takes revenge from andrew alongwith her sufferings. Though she is a part of the tragedy but she is able to recue her daughter from a fate worse than death. Andrew intends to throw monsoon out of the house the way he did to her Grandma. As he says

" I am going to throw you out monsoon. It would be much better………………..

Than what I did to your grand mother……….then I would be alone here with child, in a world of my own, beyond creation itself, furthest……….furthest…………from all of you …..and the wall will separat you from the child…………….from every damed infernal interference of ypurs………"

Thus the play ends with the madness of Andrew and though monsoon loses her life but before that she takes her revenge.

1. Currimbhoy Asif monsoon wulers workshop. Page no. 32
2. Currimbhoy Asif monsoon wulers workshop. Page no. 33
3. Currimbhoy Asif monsoon wulers workshop. Page no. 21
4. Anniah Gawda 'The lileray hlf yearly' 1974Page no. 96
5. Peter nazareth, "Asif Currimbhoy : Dramatist of the public Event, Page no. 31
6. "The Journal of Indian Writing in English Volt4 no.2(july1976)
7. Quoted by kamath in the Illustrated weekly of India, Page no.6 10 August 1980,
8. Bishnu Dey, History's tragic exultation (New Delhi : People's Page no.56-57 Publishing House, 1973)

****

Mobile: A New Paradigm of Learning English Language

Dr. Ajay Bhargava * Vijay Kumar Soniya**

Mobile Phone Technology plays a very crucial role in educational development in India. Mobile is a potential device to improve the level of English language proficiency. When existing teaching methods are not providing satisfactory outcome in order to achieve adequate results, non active teaching practices, chalk and talk old fashioned, complex lecture based teaching should be replaced by Mobile learning. It is only the proficiency of English language which assists to make education from research oriented to job oriented with the advent of Globalization , this Information Technology (IT) era requires people with sound knowledge of English language for Business process out sourcing (BPO) industry. Mobile phone has become common and ordinary device of communication because of its affordability and convenient use. Mobile phone has acquired status of the most popular device in the domain of electronic devices of communication. In India today, Mobile phones are distributed as match boxes. Past few years have witnessed a remarkable explosion in the number of Mobile phone and smart phone users. Mobile companies are launching upgraded / technologically advanced handsets with several learning and recreational apps. Gone are the days when Mobile phone was only communication devices now it is most widely used as a learning device. It contains all features of tablets, laptops, i-pads and very convenient to access e-library, e-books along with many social networking sites like facebook, twitter, e-books, webinars etc.

The impact of Mobile Technology is that in India people, who are illiterate, less educated use more English words in their conversation than they did earlier .Present young generation makes the perfect use of technology for learning English language. It is greatly attractive to learners who are enthusiastic to learn English with new skills and technology. It is hard to get a good teacher sometimes or to be seated in classroom for a long time; students can download lectures, speeches, and webinars from prominent university sites within a very short span of time. They find it more comfortable to learn and understand. Enhancing English learning through mobile will also benefit learners who study hard for modern English language tests like International English Language Testing System and Test of English as a foreign Language (IELTS and TOEFL). Correct Pronunciation is one of the most difficult tasks of learning a foreign language but now this amazing instrument assists a lot and contributes in acquisition of pronunciation beyond of time and location. They can record their voice for pronunciation; make videos to check expressions though Mobile learning provides plenty of opportunities to improve English language. It helps learners explore accurate, comprehensive and current information.

Social networking sites where the learner can make connection with friends or an organization that can help building network to get support in learning of English language. It Supports learners to post their questions, essays, ideas and also get online assistance on their mobile phones. Without any specific technical training, mobile phone users download many learning and recreational applications. There are so many English learning mobile apps which develop all the competency of language listening, speaking, reading and writing (LSRW).English language learning apps are intelligently designed in such a way that learner can use it nicely.

Today, the use of technology is rapidly increasing in every domain of our life. Mobile phones, Tabs and Smartphone are very common instruments even children are using them perfectly as academic tool. According to several surveys that 81% children become familiar with Internet in very young age. Children who are less than two years old learn all English alphabets at least two associate words and understand their phonic sounds. They easily recognize them because they use mobile phone, Tab and smart phones.

We live in highly technological era, where apps culture has flourished and dominated every aspects of human life. The impact of apps culture is treated a privilege to have gadgets enabled with such features that facilitate the process of learning language and in case in the present time a person is devoid of these apps or gadgets he is looked down upon and considered outdated. Mobile learning has revolutionsed the entire process of learning the English language; gadgets like podcasts, tabs, etc are handy in imparting effective learning. Such gadgets being quiz, fun and game oriented help the comprehension of English language in a play way method. We need m learning for the empowerment of our student especially in rural areas which lack good teachers as well as broadband services. Anti ragging apps have also been designed in the manner that they connect and inform local liable /action taking authority. Telecom service providers, education experts, content designers and investors have come

***Professor, Govt. College,Barnagar ** Research Scholar, Vikram University Ujjain [M.P.] INDIA**

together for creating mobile learning apps and models for all age groups. Rich audio visual content is created by education experts /English experts /BBC.

Mobile learning has brought tremendous change in learning English language and its several skills. Every language learner is endowed with the capacity acquiring theoretical and practical knowledge of English language with audio video clips. In this IT era, teachers need to explore how an enthusiastic learner whether in rural or urban area may easily learn English language through mobile phones. M-learning has profited a lot to learn English language and helped learner to become a part of Global community. It has widened their knowledge and wisdom in every aspect of life and filled with confidence. Government has also taken several initiatives to promote on-line learning like mobile alerts and WI-FI equipped college campuses and hostels.

Learn English Apps

Today, we have access to myriad of apps that facilitate the interactive cum retention of English language. There are certain apps preinstalled or installable that helps us to learn English as foreign language. Some such apps are as follows:

1- BBC. Learn English Grammar -

With the help of this mobile app of BBC, it has become easy relatively to learn and improve grammatical skills. Some apps have helped in expansion of learning prospects in the world.

2- Learn English Audio and Video

Listening and watching skills are provided by the most popular English learning podcasts and by learn English Audio & Video app. The app is produced by BBC with lots of cool features like landscape video mode, an audio script and glossary. It enables user to improve listening and learn new vocabulary on mobile device, anytime, anywhere. It is a portable media player with high quality sound which allows sharing text, images, audio and video files to learners.

3- My Word Book 2

My Word Book 2 is a interactive vocabulary notebook for language learners. It plays a very vital role in building vocabulary. It also enables to find, select suitable word for given task in mobile phones.

4- Learn Eglish Elementary Podcasts

This is an app provided by the British Council the world is leading and trusted authority in English language learning. It provides a series of English learning podcasts for users to download on their Android enabled phones.

5- Learn English Sports World

This is a word game app. The learner acquires hundreds of words from sports world in its hidden object. The learner can be familiar with each game and all technical words without any monotony.

6- Sounds Right

"Sounds Right" is the British Council's first pronunciation chart for learners and teachers worldwide present in mobile phone.

7- Listen & Speak

This is an awesome Android app that helps language learners improve their foreign language aptitude using a set of predefined templates of how words should be pronounced and understood. This application is downloadable in mobile phones.

8- Busuu

Busuu is a leading community of language learners online. It provides extensive vocabulary practice and comprehensive audio visual learning material with photos and recordings by native speakers on mobile phones.

9- Cartoon- Free English

This one here helps learners learn new words through the use of a method called word cards. They use pictures to illustrate meaning.

10- Speak English Pictures

This is an ideal app for beginners. It provides pictures to define words.

11- English Podcast for Learners

This is an Android app that helps learners learn English speaking and listening via podcasts.This application has a feature to change playback speed slower or faster.

12- Fluent English

This is another great Android app for English language learners. It helps them improve both their speaking and listening skills. It is like an audio book and has audio translations of any word you do not understand. It also provides pronunciation in different voices.

13- Language Verb Trainer

This app as its name suggests helps learners improve their use and conjugation of verbs. It is optimized for Tablet and mobile phones.

14- English Irregular Verbs

This is basically an irregular verb dictionary for English learners that contain over 489 irregular verbs.

15- PvP- Phrasla Verbs

This is a complete and useful phrasal verb dictionary that has over 400 verbs. It also lets users search any phrasal verb by word or meaning. Every phrasal verb is illustrated by examples showing how and when it can be used.

16- Guide to English Idioms

This is a great Android app for anyone interested in learning English idioms. It features over 150 English idioms together with notes and exercises.

17- Question Tags

This Android app provides practice and helps for students

learning about question tags. It requires Android 2.2 or higher and Android Air version.

18- Lang Learner English Idioms

This one helps learners learn the meaning of over 8000 expressions, common sayings, literary terms using a comprehensive glossary and a dictionary of English language idioms.

19- 50 Languages

50Languages has over 100 lessons that provide a learner with a basic vocabulary. It also helps users to learn fluently speak short sentences in real- world situations.

20- English Level Checker

As its name suggests, this Android app helps learners to check their English level whether one be a beginner, Elementary, Pre- Intermediate, Upper-intermediate, advanced and Near Native.

21- Johnny Grammar's Quizmaster

Johnny is a top rated English language quiz highly recommended for all ESL students. A learner has to answer all three levels of grammar questions or compete in a quiz on the 1000 most commonly misspelled words in English.

22- 60-Second Word Challenge

60-Second is a vocabulary quiz challenge with 10 common topics such as Film & TV, Travel, Small Talk, etc. It has 600 questions with feedback provided on wrong answers to enhance learning. It is a fun vocabulary quiz to help improve and widen English vocabulary.

23- Big City Small World

Big City Small World is another British Council audio soap for learners of English. In this audio soap set in London, a group of young people from around the world share their lives over a cup of coffee. The application consists of 48 episodes to listen to, with a tapescript to read while you listen.

24- Premier Skills

This interactive vocabulary app combines the fun of football with English learning.

25- Dictionary.com

The top rated dictionary app provides with trusted reference content from dictionary.com .The dictionary contains over two million definitions, synonyms and antonyms and allows offline access - no internet connection needed for most content. This utility enhances vocabulary of the learner and improves his pronunciations.

26- English Grammar in Use

Raymond Murphy's grammar is effective in imparting grammatical skills among the learners of English if not to a great extent yet to some notch it has proved a feat. The descriptive pictures provide a comprehension to the learner . He is able to pick up a heavy collection of ideas through images or pictures.

27- Hangman

Hangman is a well-known animated word puzzle game containing Standard English words as well as International English Language Testing System and Test of English as a foreign Language (IELTS, TOEFL) vocabulary. This application supports two-player mode, allowing opponents to choose a word for each other. It's a right-on boredom killer.

28- Star Star fall ABC

Star Star fall ABC is very simple alphabet app . In this app, learner finds small and capital letters with their phonic sound. In the same way, Agnitus app provides 20 academic skills for children. It is very attractive and develops interest towards learning English language. There is no iota of doubt that learner are learning English language faster by taking recourse to technology than any other traditional method.

29- Learn English Grammar

The application features content at four main levels: Beginner, Elementary, Intermediate, and Advanced. The questions use unique activity types such as multiple choices or labeling; they are delivered in text, image or audio format. It is a very nice app with plenty of language practice and downloadable content.

30- Mobile Air Mouse

A useful app for techy and creative lecturers. It instantly transforms a mobile device into a wireless remote for the classroom computer. Students get a complete understanding of any given concept, idea or issue. Even teachers can deliver their lecture by dint of Power point presentation (PPP).This has made learning process easy.

32- Anki Flashcards

Anki is a program which makes remembering things easy. It is a flashcard genre where the card with a phrase or word is presented, while there's a translation, picture or sound file on the reverse. It is best used for learning new words or phrases. Besides helping we improve our linguistic skills and prepare us for a variety of qualification tests; Anki also helps memorizing lines with a tinge of freshness every time.

33- WeChat

Wechat is a mobile app that allows users to connect with friends across platforms. This app download is totally free from iPhone App Store, Google Play, Windows 8 Store, Symbian, and BlackBerry. It has 300 million people in terms of the users number. WeChat provides academic platform for English language learner to develop competency of language skills and also integrates the biggest social network. It is very innovative and practical way to learn English

because most of the students use android phones and devote major part of time in messaging .Its several features allow user to learn more comfortably and express themselves freely on several issues which improves reading and writing skills. WeChat has more features like Video Call. Voice Chat, Web WeChat,Group Chat,Shake,Look Around, Drift Bottle and Social Connect that allow users to share pictures, videos on phones,

34- WhatsApp

WhatsApp is a mobile messaging app which allows user to exchange messages without paying for SMS. There is no cost to pay for message and it allows staying in touch with friends, teachers and peering group. WhatsApp can be used in for iPhone, BlackBerry, Android, Windows Phone and Nokia and these phones can all message each other. Because WhatsApp Messenger uses the same internet data plan that is use for email and web browsing. WhatsApp users can create groups, send each other unlimited images, video and audio media message. WhatsApp can be used to study and learn a new/ foreign language. Non-English students are able to learn English faster; better and more enjoying ways .Student can create their own learning group on WhatsApp with fellow students and teachers. English language learner can share notes, BBC English videos, audio clips, pictures, assignments and many more to acquire language skills. Thus whatsapp has acquired the status of knowledge sharing platform between student and teachers.

35- BBM & BMB

BBM & BMB apps are designed with several attractive features which allow user to connect and share messages, pictures and videos in the best convenient way. These apps have revolutionsed the messaging process. We are able to get into touch with our nears and dears across the seas by the help of these apps. Infused with multimedia features, they can be used in forming groups, sharing the content required for English learning. The interactive nature of there apps contribute in reading, writing comprehension. They exchange skills and make the learner adroit and technically sound. BMB and BBM have the facility to send a file and send voice note. Sharing pictures swiftly and instantly is also one of its features that can be utilized in disseminating the required language capsule.

The globalization has reduced the heterogeneous learning process, by modern high-tech gadgetry, however in India L2 effect is so dominant that it needs collaboration and competency of skilful and experienced people to materialize this process of learning. All said and done these things cannot help the inclusion of slang, which overrides the formal English learner. People who are more or less acquainted with these apps have, to a large extent, improved in vocabulary and pronunciation process besides getting hold of operating process, implying computer cognizance simultaneously.

Refrences:

- < http://learnenglish.britishcouncil.org/en/apps>
- <http://learnenglish.britishcouncil.org/en/apps/learnenglish-audio-and-video>
- <http://learnenglish.britishcouncil.org/en/apps/mywordbook-2>
- <http://learnenglish.britishcouncil.org/en/apps/elementary-podcasts>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=com.ninespikes.android.lsteacher>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=com.busuu.android.enc&feature=related_apps>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=com.pitzunda.cartonix.enfree&feature=also_installed>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=com.tidahouse.englishpod&feature=related_apps>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=com.fluentizer.faf&feature=related_apps>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=hk.hkbc.epodcast&feature=related_apps>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=org.muth.android.trainer_demo_en&feature=also_installed>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=com.dictionary>
- <http://www.wechat.com/en/download.html>
- <http://www.whatsapp.com/>
- <https://play.google.com/store/apps/details?id=com.alvaro.phrasal&feature=also_installed>

****

The Concept of Nada in 'A Clean Well Lighted Place' By Ernest Hemingway

Dr. Rajshree Sheth *

The purpose of this research paper is to have an in-depth understanding of various aspects related with nada of the short story "A Clean Well Lighted Place" by Ernest Hemingway .To say that it is a story about the meaning of life and the feeling of nothingness would be to simplify it and rob it off the many layers of meaning that lie underneath. In order to understand and analyze the story it is necessary to analyze the characterization. The story is based on three main characters. The protagonist of this story is the older waiter, who represents all those do not understand the purpose of life. A young waiter represents a naive person who thinks he understands what life is all about. And the old man who is the crux of what life is. We are here to look at the viewpoint of the young waiter and the older waiter, who are observing the old drunken man. There is a sense of despair and nothingness that Hemingway shares. He introduces his readers to this through the characters and the imagery.

Imagery begins with the title itself "As its title suggests, the story is concerned with the search for refuge and for transcendent meaning (A Clean, Well-Lighted Place: Overview)." It carries the qualities of light and cleanliness and also quietness. The old man and waiter both need light to light up their night thus light is not only the antithesis of darkness but an effective barrier against it. The shadow mentioned in the story too is a positive symbol as it refers to the protection that one gets against the harsh glare of artificial light which is hurting. The night is clean, quiet and positive as contrasted to day which is full of running about, noise and dirt. The story takes place at dawn inside a clean well lit café where the loneliest, most despairing of men can find comfort and peace to their roaming minds and can drink calmly. It is quarter to two as "two waiters watch an old man who sits outside a cafe in the shadows that the leaves make against the electric light. He's a very old man-an image for pondering the ultimate significance of life in the face of impending death" Although he is deaf, the old man can feel the quietness of the late hour. (A Clean, Well-Lighted Place: Overview)" The old man functions as a part of setting . he is merely a catalyst .The two waiters have an age difference of years and life experiences between them. Out of the two waiters the unhurried waiter or the old waiter is more significant as he has that moral and aesthetic sensibility which makes him empathise with the old man. They both view the old man through their own perspective. They both have different views about him as well. The younger waiter is impatient about the old man leaving he is waiting impatiently to get home where his wife is waiting but the older waiter is more understanding. He has learnt that there is nothing to wait for and that is why may be the old man had attempted suicide.

As many youngster, the young waiter is only able to think about how the old man staying late at the café is affecting his life and is keeping him away from his home, his social life and his young wife at home. On the other hand the older waiter tries to understand and explain to the younger waiter that why does the old man need to stay at the café till three o'clock every night. The café is the most comforting place to the old man; it represents a place where he can come and relax his mind and escape his troubles and despair in his life with a drink. On the other hand the young waiter gets impatient and fails to understand and care about the old man's need. The older waiter explains why the old man likes to stay till three o'clock in the morning. The older waiter understands the despair of the old man as he himself feels similar feeling of nothingness in life. On the other hand the young waiter does not understand the feeling of despair as he is young, has a job, a wife waiting at home and has a life to live and is inexperienced to the lessons and paths of life that are yet to come. The older waiter explains that the old man has no wife to go home to, no job, no social life but to stay at this café, which is clean and well lit. The older waiter understand that the old man wants to stay late at the café as the cafe's well lighted environment gives him comfort of drinking; the comfort that the old man cannot get by staying home to drink.

We can say that the younger waiter thinks life has a purpose to live and life does have purpose to the young but, as we get older life loses its purpose, and then there is left nothing like Yeats in his "Sailing to Byzantium" writes -- "That is no country for old men" and further calls an aged man as a paltry thing:

An aged man is but a paltry thing,
A tattered coat upon a stick, unless
Soul clap its hands and sing, and louder sing
For every tatter in its mortal dress,

The old man 's soul in "A Clean, Well-Lighted Place" seems

***Assistant Professor, Govt. Madhav Arts, Commerce and Law College, Ujjain (M.P.) INDIA**

not to know how to clap its hands and sing and that might be the reason behind nada.

As they both have a conversation about the old man, the young waiter asks the older waiter what was the old man in despair for, the older waiter says "nothing". The nothingness means that he has no real reason to be in despair, he is rich, has money. For the young waiter if you have money, you have everything. He is "unable to see that the old man's wealth is a woefully inadequate bulwark against the Void, he is, in his ignorance"(Nada and the Clean Well-Lighted Place); as the young waiter does not understand is that money is not everything in life. Life's core purpose is not to have money, but to have a life worth looking forward for. Having a reason to live every day, reason to look forward for tomorrow.

Therefore the old man has all the reason in the world for his despair since he only is left with money in his life. The old man lives a life of emptiness, a life without any hope for tomorrow and that is his loneliness. He is living a routine and it ends with his night at the café with numerous saucers of brandy one after another. This feeling of nothingness is similar to the older waiter. As both waiter continue to talk and have a mild argument, the old man asks for another saucer of brandy from the young waiter, the young waiter told the old man "No. Finished". As the waiter wipes the edge of the table, the old man "stood up, slowly counted the saucers, took a leather coins purse from his pocket and paid for the drinks… the waiter watched him go down the street, a very old man walking unsteadily but with dignity". The older waiter stated to the younger waiter why didn't you let him stay another hour. "What is an hour to you?" The younger waiter does not understand why the old man would like to stay up late at night rather than going home and rest. The older waiter explains to him that the old man likes to stay up late. He has "nothing" else to do.

Thematically the older waiter stands against Nothingness. He empathizes with the old man and would keep the café open as long as anyone wants it. He keeps the lights on so that the nada doesn't dominate. He keeps awake till daylight. for him keeping awake is synonymous with being aware of nada Turning off the light in the cafe and going home to bed is a daily act of courage done silently, without complaint. His sensitivity to places which make dignity possible gives us the verbal clue that his life is one of survival with dignity.

The difference between a café from a bar or bodega is that bars are dark, noisy and can make a lonely person feel more despair and apart from the crowd; whereas café's are small clean and well lighted. When I think of a bar, I think of darkness and loneliness but when I think of café it makes me feel welcomed. It is bright and when I see people it makes me feel part of a community. At the end of the night when both waiters are done closing up the café, the older waiter goes to a bar and orders himself a small drink. As he is ordering he heeds to the bar and lets the barman know the bar is unpolished. The older waiter does not enjoy being there because he starts to miss his café where he works. He misses a clean well lit place where he can go and relax his mind with dignity. Thematically, then, the older waiter actively demonstrates that life against nada is achieved by awareness, sensitivity, human solidarity, ritual (verbal and physical), humor, and courage. Together these qualities make dignity

In their dealings with the various faces of nada, then, the old waiter figures represent the highest form of heroism in the Hemingway short story canon, a heroism matched in the novels perhaps only by the fisherman Santiago. Those who manage to adjust to life on the edge of the abyss do so because they see clearly the darkness that surrounds them yet create a personal sense of order, an identity with which to maintain balance on this precarious perch. The failure either to see the significance of the encounter with nada or, if seen, to constitute an inner cleanness vitiates the lives not only of the young waiter and old man of "A Clean, Well-Lighted Place" but also of a host of similarly flawed figures throughout the canon. The stylistic features of the story is its minimalism. The sentences are simple and so is the diction. Hemingway has written stripped -down prose and narrative. there is no ornate ness and complexity. Hemingway's "A Clean, Well-Lighted Place" is a preeminent, representative example of modernist minimalist narrative. In utilizing only the bare minimum for narrative, in terms of language, character, scene, and action Apart from it well-documented stylistic achievement what stands out in the story is Hemingway's detailed consideration of the concept of nada .All the three characters confront nothingness in the course of the story This is no minor absence in their lives. Especially "for the old waiter," Carlos Baker notes, "the word nothing (or nada) contains huge actuality. The great skill in the story is the development, through the most carefully controlled understatement, of the young waiter's mere nothing into the old waiter's Something--a Something called Nothing which is so huge, terrible, overbearing, inevitable and omnipresent that once experienced, it can never be forgotten."

References

1. Jackson J. Benson, 1990. New Critical Approaches to the Short Stories of Ernest Hemingway Duke University Press.
2. http://www.researchomatic.com/essay/a-Clean-WellLighted-Position-By-Hemingway-41580.aspx .
3. W.B. Yeats,1928. The Tower, Macmillan and Co., ltd. London.

The Concept Of Resonance In The Strangers And Brothers Sequence By C.P. Snow

Dr. Rajshree Sheth *

C.P Snow's concept of resonance is very much related with his technique of narration. In fact it provides a rhythm to the **Strangers and Brothers** sequence and gives it an architectonic unity. Though each novel is meant to be read as an independent unit, each has its place in the general theme, and all are connected through the one narrator, Lewis Eliot. They are also linked by the appearance and reappearance of certain character most intimately bound with the life of Lewis himself, but these are seen from different angles and have varying degrees of importance in the different books. Nevertheless, as C.P. Snow has himself said in his book "**The Conscience of the rich,**" … the inner design has always lain elsewhere…it consists of a resonance between what Lewis Eliot sees and what he feels. "(vii)

Only a small percentage of C.P., Snow's readers has apprehended this central design,and only a fraction of this small percentage finds it significant. Now when C.P.Snow hascompleted this series I am more convinced that the complete structure of the **Strangers and Brothers** sequence is internally designed and interwoven around his concept of resonance. Any attempt to ignore or bypass it will mean incomplete assessment of C.P. Snow as a novelist. It will be gross injustice to C.P. Snow, for it is this which gives completeness to this sequence, containing everything necessary to create a sense of organic wholeness, and containing nothing that distracts from the total effect. I have therefore, elaborated his theory of resonance and its applicability to the great sequence.

Dictionary meaning of the word 'resonance is resounding sonority sympathetic vibration, the sound heard in auscultation. (Gaddie 939) in the scientific terminology resonance is the "……property of cancellation of reactance when inductive and capacitive reactance are in series, or cancellation of susceptance when parallel "(Ryder 55) it recognizes two types of resonance: scribes-circuit and parallel-circuit resonance. The latter is sometimes referred to as antiresonance. It is the theory of maximum transfer of energy from the source when two different elements are in tune or in resonance with each other on particular frequency. In **Strangers and Brothers** sequence, C.P. Snow's concept of resonance is more based on this scientific concept rather than on any other interpretation.(Mullan2899 A)

If we translate the above scientific concept in human terminology, we would notice that inductive forces are the forces of percipience and balanced wisdom, represented by Lewis Eliot in **Strangers and Brothers** sequence. Capacitive forces are immune to any development and are more subject to, and dependent upon the external pressure or internal weakness, known as 'Leakage'. Wisdom accompanied by percipience becomes power, then it permeates, transforms, control and moulds the personality. It is nothing but the radiation of inherent qualities of man in the form of different waves, having different wave lengths known as frequencies. At the same time when other wave lengths match with it, this adds, multiplies, and amplifies and thereby bringing two souls very near to each other. That is to say it is nothing but the spinoffs are so powerful they work like LASER beams whose presence can not be seen but only felt by the party which comes within its field. " it is the phenomenon of something that vibrates being able to stir and magnify a similar vibration in something that has been previously attuned, which gives **Strangers and Brothers** its power, through evocation and revelation and one's imagination."(Cooper33)

This resonance helps to structure **Strangers and Brothers** sequence as a whole. The central story of the sequence, The story of Lewis Eliot, is strong and simple, through it are interwoven the stories of his friends.. The social relationship of the different characters to one another is intricate" but it is the intricate relationship of their experience with Lewis' experience that enables Snow to build-up a novel sequence of remarkable psychological as well as social solidity. Yet this intricacy in thematic relationship is not aimed merely at producing solidity in the architectural sense, its function is to provide means for the kind of revealing and evoking which is at the heart of snow's technique as an artist.

In **Strangers and Brothers** sequence C.P. Snow has used two categories of resonance; thematic resonance is given in a note written by show himself in **The Conscience of the Rich:** The theme of possessive love is introduced through Mr. March's relation to his son; this theme reappears in **The New Men** in Lewis's own Experience, through his relation to his brother, and again , still more directly in **Homecomings**. In the same way through Charles March, Lewis in the **The Conscience of the Rich** observes both the love of power

***Assistant Professor, Govt. Madhav Arts, Commerce and Law College, Ujjain (M.P.) INDIA**

and renunciation of power. He observes these again at various levels, in **The Masters, The Light and the Dark** and **The New Men,** In Time of Hope, **Homecomings** and a later book **Last Things** he goes through these experiences himself .

This might be the reason that Snow's novels have not appeared in narrative order. Snow neglects progress through time: for inevitability depends less on time and more on commonsense, receptivity and experience. By adopting the method of simultaneous Progression rather than a successive one, C.P. Snow marks his point thematically rather than chronologically. Those who criticize Lewis Eliot as having no psychological growth really fail to perceive the separate strands of experience simultaneously co- existing in his consciousness and sensibility. To some extent Snow's concept of thematic resonance seems to be rationalization of this fact that in certain novels action concerns mainly Lewis Eliot, while other books show him merely as a by-stander and a commentator. According to William Cooper there are three cycles, each covering a stage of Lewis Eliot's life-youth, early maturity and middle-age. Within the time span of each cycle, Lewis Eliot is once the protagonist of novels and two three times observer and narrator. Snow's use of cyclical fashion is something original which no other writer has employed, not even Proust in **A La Recherche du Temps Perdu.**[33]

There is nothing unusual about a writer's using bits of life in his novels, and Snow

has made no secret of the fact that this is a technique he often employs. These incidents and background scenes , in addition to the obvious similarities between the lives of author and hero, do much to demonstrate the fact of personal resonance. If there had been no personal resonance between the author and Lewis Eliot, it would have been very difficult for C.P.Snow to attempt at a greater resonance in the inner design of **Strangers and Brothers** Those who simply dismiss the sequence by pointing out that Snow's novels are "deeply autobiographical and historical" (Gerhardi-438) and that Lewis Eliot is "the author's alter- ego "(Kazin 37) do not apprehend the seriousness of Snow's purpose.

Snow's views on individuall and social condition find its proper extension through Lewis's

personal resonance with characters like George Passant, Roy Calvert, Charles March and

Martin Eliot. In **Strangers and Brothers** the individual condition of all the major characters

is lonely and tragic. This is suggested by the title word" Strangers" But as Snow himself

says, on seizing the possibilities of hope' and ' in the tiny extension of the personality' they become brothers to Lewis Eliot -which is the beginning of the social condition. How the strangers become brothers to Lewis and how a brother, in turn, becomes a stranger is depicted through the method of evocation and revelation i.e.with the technique of resonance. If we study the **Strangers and Brothers** from this perspective we will certainly comprehend C.P. Snow's inner design which consists as he has said , in the resonance between what Lewis Eliot sees and what he feels.

What are men, solitarily, in themselves? And how in common experiences are they brothers? These are the two main questions which Snow sets out to investigate experimentally with techniques like those of a scientist. And these are the two main questions whose answers Snow conveys to the reader by means of the technique of resonance, adopting a tone of evocation and relocation, so that reader grasps them-he becomes aware that he is a stranger and a brother himself. To do this Snow had to portray the society in which his characters were embedded, and to study the moral and political health of that society. In **Strangers and Brothers** this is implicit through the behaviors of characters as seen by Lewis Eliot. Nevertheless, **Strangers and Brothers** is a novel about individuals grappling with their fate. The crisis in each book of the sequence in tragic but their fibers are alive with hope-this concept is resonates throughout the series. Lewis Eliot's association, response and involvement with their lives is narrated through the technique of resonance which is the greatest and a novel contribution of C.P. Snow to the art of novel.

In the words of William Cooper :-

Strangers and Brothers the title, states at one the deepest theme of the sequence as a whole that all men, locked away I the isolation of their own selves, are lonely, strangers to each other, while in the similarity and resonance between them in their joys, their aspirations and their sufferings they are all brothers. And every man exists in his own dynamic equilibrium between the two, sometimes more stranger than brother, sometimes more brother than stranger (30)

References :

* Cooper, William. "The World of C.P. Snow" Nation 184 Feb. 1957
* Gaddi, William. "Chambers Twentieth Century Dictionary" London: W.&R. Chambers Ltd. 1962.
* Gardner, Helen. "The World of C.P. Snow" New Statesman. 55:1958
* Gerhardi , William. "Charles Snow, Dr. F.R. Leaves and the two cultures" Spectator, sept.
* Kazin, Alfred. "A Gifted boy from the Midlands" Reporter , 5: Feb. 1959
* Mullan, james Francis. "Resonance in the Strangers and Brothers novel
* Sequence by C.P.Snow "Dissertation Abstract International put-up.Thesis. 1976
* Ryder, John. Net works lines and Field New York Prentice Hall. 1961
* Snow C.P. The Conscious of the Rich London : Macmillan, 1958
* Snow C.P. Homecomings. London : Macmillan, 1956
* Snow C.P. The New Man. London : Macmillan, 1954
* Snow C.P. Strangers and Brothers. London : Faber and Faber, 1940

The neurological, cognitive, affective and linguistic differences between adults and children learning English as second language.

Dr. Rajshree Sheth *

Most adult learners do not have many years to study language, so in order to learn English as a second language, new and even revolutionary teaching methods are called for.The process of language learning is incredibly complex and even more so when learning a second language. To understand learning English as second language it is necessary to be aware of the differences in the learning process in adults and children.

This article will examine the neurological, cognitive, affective and linguistic differences between adults and children learning English as second language

Neurological Considerations

The Critical Period Hypothesis, as suggested by numerous researchers, is a window period in early development, when language learning seems to be achieved without particular effort. Lenneberg (1967) stated that after the "critical period" the two brain hemispheres become specialized in function, in a process called cerebral lateralization. This results in a decrease of brain plasticity.Our ability to hear and understand a second language becomes more and more difficult with age, but the adult brain can be retrained to pick up foreign sounds more easily again. This finding, reported by Dr Paul Iverson of the UCL Centre for Human Communication, at the "Plasticity in Speech Perception 2005" workshop - builds on an important new theory that the difficulties we have with learning languages in later life are not biological and that, given the right stimulus, the brain can be retrained. Dr Iverson said: "Adult learning does not appear to become difficult because of a change in neural plasticity.

The New research, published in the journal of Psychological Science, finds that Chinese people who are fluent in English translate English words into Chinese automatically and quickly, without thinking about it. Even though these students are fluent in English, their brains still automatically translate what they see into Chinese. In light of this evidence it is clear that the extended knowledge adults have of their first language can and often does, impede the process of learning a second language.

Cognitive Considerations

Children acquire their mother tongue through interaction with their parents and their environment. Their need to communicate paves the way for language acquisition to take place. It is generally accepted that younger learners fare better in phonemic coding, but older learners fare better in analysing language, the ability to work out the "rules" of a language through metacognitive processes. Adult learners are quicker to use code-switching, that is, formulating or comprehending ideas from a variety of input sources, to form a complete picture. Ellen Rosansky, in Brown (2000:p. 61) offers an explanation noting that initial language acquisition takes place when the child is highly "centred" or one dimensional. A child is not only egocentric at this time, but when faced with a problem, can focus (and then only fleetingly) on one dimension at a time.

Children learn by listening first. Long before they can speak, they can understand what others are saying. For adults reading is usually the first and easiest skill to acquire, while listening is the most difficult. Even students who know most of the words of a conversation (when they see them written) still can't pick up a conversation in full flow.

Influenced by Krashen and Terrell's Natural Approach (1983), the emphasis on communicative methodology in language teaching have brought about a shift away from the use of drill and practice in the classroom. Swain's 1985 study showed that while rote or mechanical learning does have a place in the classroom, in order to be effective, it must be linked to subject matter of use and interest to the learner. A further interesting phenomenon that has yet to be explored is the role that students' output in drills may also function as input and how this input contributes to acquisition.

Affective Considerations

The factors most relevant to second language acquisition (SLA) are: motivation, opportunity, environment, and individual personality.

Motivation

Research on the relationship between motivation and second language acquisition is on-going. Current research looks at instructional practices that teachers use to generate and maintain learner motivation and strategies through which learners themselves take control of factors that have an impact on their motivation and learning, such as lack of self-confidence, change of goals, or distractions (Dornyei, 2003; Noels, Clement, and Pelletier, 2003). Vivian Cook, a researcher in second language acquisition, differentiates

***Assistant Professor, Govt. Madhav Arts, Commerce and Law College, Ujjain (M.P.) INDIA**

between "integrative" and "instrumental" motivation. "Integrative" motivation refers to the motivation to learn a language in order to take part in the culture affiliated with the language, and tends to correlate more with younger learners. "Instrumental" motivation refers to the motivation to learn a language for more abstract goals such as career advancement, self-improvement, or self-empowerment, and applies more to older learners. (Cook, Vivian. Second Language Learning and Language Teaching, 2008).

examining how to improve learner motivation suggests that social factors (e.g., group dynamics, learning environment, and a partner's motivation) affect a learner's attitude, effort, classroom behaviour, and achievement (Dornyei, 2002b). From the above descriptions it can be derived that motivation is proportionate to the desire to reach certain goals. This clearly demonstrates the importance of goal setting.

In the famous words of Henry Ford - "Obstacles are those frightful things you see when you take your eyes off your goal."

Opportunity

Opportunity and motivation work together to affect language acquisition. Motivated students are more likely to seek out opportunities, often outside of class, that utilize language skills. It would make sense that the number of opportunities the brain has to store and reinforce patterns, accents, concepts, and meanings of a language, the better this information would be stored and processed.

Personality

The acquisition of a new language requires acquiring a new language ego, not only for young adolescents but also for an adult who has grown comfortable and secure in his or her own language identity and possesses inhibitions that serve as a wall of defence around the first language comfort-zone. Another affectively related variable is the role of attitudes in language learning. From the growing body of literature on attitudes, it seems clear that negative attitudes can affect success in learning language. Very young children, however, who are not developed enough cognitively to possess "attitudes" toward races, cultures, ethnic groups, classes of people, and languages are unaffected.

Environment

Teachers should create an environment conducive to learning by encouraging group cohesion in the classroom. Pair and group work activities provide learners with opportunities to share information and build a sense of community (Florez & Burt, 2001). The classroom must be a "safe place" to learn and practice second language

Linguistic Considerations

For the most part, research confirms that the linguistic and cognitive process of second language learning in children is similar to that of first language learning.

Adults, more cognitively secure, operate from the solid foundation of their first language and thus experience more first language interference. In this case we do well to remember that the first language can be a facilitating factor, and not just an interfering factor.

In conclusion

Age is not everything in second language learning. Julia Van Sickle and Sarah Ferris (as quoted in Singleton, 2005) states the following, "One of the dangers of the emphasis on critical periods is that it prompts us to pay too much attention to when learning occurs and too little attention to how learning might best occur" (p. 105).

The need for teaching English as a second language to adults has recently exploded due to the globalization of business and English being adopted as the preferred business language.

Language teaching to adults should be seen as an opportunity to develop new methodology, reach new goals and achieve different but equally rewarding outcomes.

References

* Lenneberg. 1967. John Wiley and Sons, Inc., New York.
* Brown, R. 1973. A First Language: The Early Stages. Allen and Unwin, London.
* Cook, Vivian. Second Language Learning and Language Teaching. Hodder Education, Oxford University Press, Canada.
* Dornyei, 2002b; Dornyei and Kormos, 2000. Cambridge, MA: Newbury House Publishers, New York .
* Dornyei, Noels, Clement, and Pelletier,2003. Jossey-Bass Publishers, Hoboken, New Jersey.
* Florez and Burt, 2001. Lawrence Erlbaum Associates, Mahwah, New Jersey.
* Swain, M., and Lapkin, S. 1989. Aspects of the sociolinguistic performance of early and late French immersion students. In Scarcella, R., Anderson E., and S. Krashen (Eds.), On the development of communicative competence in a second language (pp. 41-54). MA: Published by Newbury House, New York.
* Krashen, S.D. and Terrell, T.D. 1983. The natural approach: Language acquisition in the classroom. Prentice Hall, Europe. (p. 376).
* Singleton, JR, 2005. Oxford University Press.

****

भूमंडलीकरण के दौर में हिन्दी का स्थान एवं संचार माध्यमों की भूमिका

डॉ. उषा श्रीवास्तव *

वर्तमान संदर्भ में भूमंडलीकरण का अर्थ व्यापक तौर पर बाजारीकरण है। भूमंडलीकरण का मुख्य उद्देश्य दुनिया के सभी देशों के मध्य आर्थिक विकास को बढ़ाना है! यह सभी देशो के मध्य तकनीकि, आर्थिक, राजनितिक और सांस्कृतिक अदला-बदली जो कि मुख्य रूप से जनसंचार के माध्यम से होती है !

वैश्वीकरणका शाब्दिक अर्थ- स्थानीय या क्षेत्रीय वस्तुओं या घटनाओं के विश्व स्तर पर रूपांतरण की प्रक्रिया है. जिसके द्वारा पूरे विश्व के लोग मिलकर एक समाज बनाते हैं तथा एक साथ कार्य करते हैं! विश्वके अनेक देशों की एकता और पारस्परिक निर्भरता को भी भूमंडलीकरण कहा जा सकता है ! किसी भी सूचना को शेयर करना भूमंडलीकरण का जरुरी हिस्सा है, जिसके लिये भाषा का महत्वपूर्ण स्थान है !

भाषा ही सभ्यता, संस्कृति को जोड़ने का अत्यावश्यक साधन है ! न केवल देशके नागरिक बल्कि हमारी भाषा भी विदेश में नौकरी करने वालों के जरिये पहुंचकर अपना स्थान बनाती है !

स्वतंत्रता प्राप्ति के समय तक हिंदी दुनिया में तीसरी सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा थी परंतु आज स्थिति यह है कि वह दूसरी सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा बन गई है तथा यदि हिंदी जानने-समझने वाले हिंदीतर भाषी देशी-विदेशी हिंदी भाषा प्रयोक्ताओं को भी इसके साथ जोड़ लिया जाए तो हो सकता है कि हिंदी दुनिया की प्रथम सर्वाधिक व्यवहृत भाषा सिद्ध हो। हिंदी के इस वैश्विक विस्तार का बड़ा श्रेय भूमंडलीकरण और संचार माध्यमों के विस्तार को जाता है।

दुनियाभर के उत्पाद निर्माताओं के लिए भारत एक बड़ा खरीददार और उपभोक्ता बाज़ार है। इस क्रय-विक्रय के अंतर्राष्ट्रीय बाजार में संचार माध्यमों का बड़ा महत्व है क्योंकि वे ही किसी भी उत्पाद को खरीदने के लिए उपभोक्ता के मन में ललक पैदा करते हैं। यही कारण है कि आज भूमंडलीकरण की भाषा का प्रसार हो रहा है। यह भूमंडलीकरण की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है क्योंकि यह सारी दुनिया को एक डोर में बांधती है !

इंटरनेट, वेबदुनिया ने भी हिन्दी को अंतर्राष्ट्रीय स्थान प्रदान किया है ! हिन्दी के परिदृश्य में ये बात कहना अनुचित ना होगा कि वेब मीडिया ने हिन्दी रुपी मोती को भारत रुपी सीपी से बाहर निकाल कर समस्त विश्व के गले का हार बनाया है.! केन्द्रीय हिन्दी संस्थान में पिछले कुछ वर्षो में भारतीय छात्रों की अपेक्षा कई विदेशी छात्रों ने प्रवेश लिया है और तो और हिंदी की लोकप्रिय किताबों को कई विदेशी भाषाओं में अनुवादित भी किया जा रहा है !

ये वेब मीडिया का ही प्रभाव है कि जहाँ पहले हिंदी माध्यम के युवा नौकरियों को तरसा करते थे वहीँ आज हिन्दी काल सेंटरों में ,प्रकाशन घरों में अनुवादकों की, तथा विदेशों में हिंदी शिक्षकों कि बड़ी भारी मांग हैं उन्हें अच्छे वेतन के साथ-साथ तमाम तरह की सुविधाएं भी प्रदान की जाती हैं !

हिन्दीरूपी कपोत को वेब मीडिया ने जो पंख प्रदान किये हैं वो उसके विश्व गगन में उड़ान भरने के लिए अत्यंत आवश्यक है...! पूर्व लेखकों को अपनी रचनायें श्रोताओं या पाठकों तक पहुंचाने के लिए मंच और जान पहचान का सहारा लेना पड़ता था लेकिन आज ब्लॉग ,फेसबुक ,और ट्वीटर के माध्यम से लेखक अपनी रचनाओं को घर बेठे पाठकों तक पहुंचा रहे हैं,और यू-ट्यूब के माध्यम से अपनी प्रस्तुति जन -जन को दिखा रहे हैं ! यह भूमण्डीकरण का ही असर है !

टी.वी.जनता का सबसे लोकप्रिय माध्यम विज्ञापनों से लेकर अतिशय लोकप्रिय कार्यक्रमों तक में हिंदी और प्रादेशिक भाषाओँ में बोलता भर है, लिखता अंग्रेज़ी में ही है। इसके बावजूद यह सच है कि इसी माध्यम के सहारे हिंदी अखिल भारतीय ही नहीं बल्कि वैश्विक विस्तार के नए आयाम छू रही है। इसे हिंदी के संदर्भ में संचार माध्यम की बड़ी देन कहा जा सकता है।

संचार प्रणाली किसी भी व्यवस्था के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। इसे हर युग में सभी शासको ने पहचाना है,आज भी भूमंडलीकरण की व्यवस्था की जान इसी में बसती है। समाज के दर्पण के रूप में साहित्य भी तो संचार माध्यम ही है जो सूचनाओं का व्यापक संप्रेषण करता है। साहित्य की तुलना में संचार माध्यमों का असर अधिक व्यापक है क्योंकि वे तुरंत और दूरगामी असर करते हैं। भूमंडलीकरण ने उन्हें अनेक चैनल ही उपलब्ध नहीं कराए हैं, इंटरनेट और वेबसाइट के रूप में अंतर्राष्ट्रीय पहचान भी दिलाई है । परिणामस्वरूप, संचार माध्यमों के अनुरूप भाषा में भी शब्दों, वाक्यों, अभिव्यक्तियों और वाक्य संयोजन की विधियों का समावेश हुआ है। इस सबसेभाषा के सामर्थ्य में वृद्धि हुई है।

भाषा के द्वारा ही संचार माध्यम आज के आदमी को पूरी दुनिया से जोड़ते हैं। अत: संचार माध्यम की भाषा के रूप में प्रयुक्त होने पर हिंदी समस्त ज्ञान-विज्ञान और आधुनिक विषयों से सहज ही जुड़ गई है!वस्तु की प्रकृति के अनुकूल विज्ञापन की रचना करके उपभोक्ता को उसकी अपनी भाषा में बाज़ार से चुनाव की सुविधा उपलब्ध कराती है।आज व्यवहार क्षेत्र की व्यापकता के कारण संचार माध्यमों के सहारे हिंदी भाषा राष्ट्रीय ही नहीं, विविध अंतर्राष्ट्रीय चैनलों में हिंदी आज सब प्रकार के आधुनिक संदर्भों कों व्यक्त करने के अपने सामर्थ्य को विश्व के समक्ष प्रमाणित कर रही है।

हिन्दीभाषा ने जनभाषा का रूप धारण करके व्यापक जन स्वीकृति प्राप्त की है। समाचार विश्लेषण तक में मिश्रित हिंदी का प्रयोग किया जाना प्रमुख उदाहरण है । इसी प्रकार पौराणिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, पारिवारिक, जासूसी, वैज्ञानिक और हास्य प्रधान अनेक प्रकार के धारावाहिकों का प्रदर्शन विभिन्न चैनलों पर जिस हिंदी में किया जा रहा है वह एकरूपी और एकरस नहीं है, बल्कि विषय के अनुरूप उसमें अनेक प्रकार के व्यावहारिक भाषा रूपों का मिश्रण उसे सहज जनस्वीकृत स्वरूप प्रदान कर रहा है।इसी के कारण हिंदी भाषा बड़ी तेज़ी से सरलीकरण की ओर जा रही है। इससे उसे अखिल भारतीय ही नहीं, वैश्विक स्वीकृति प्राप्त हो रही है।

हिन्दी के जिस विविधतापूर्ण सर्वसमर्थ नए रूप का विकास हुआ है, उसने भाषा समृद्ध समाज के साथ-साथ भाषा वंचित समाज के सदस्यों को भी वैश्विक संदर्भों से जोड़ने का काम किया है। यह नई हिंदी कुछ प्रतिशत अभिजात वर्ग के दिमाग़ी शगल की भाषा नहीं बल्कि अनेकानेक बोलियों में व्यक्त होने वाले ग्रामीण भारत की नई संपर्क भाषा है। भारत तक पहुँचने के

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग,आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ़ ग्रेजुएट स्टडीज,बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत

लिए बड़ी से बड़ी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को भी हिंदी और भारतीय भाषाओं का सहारा लेना पड़ रहा है।

हिन्दी के इस रूप विस्तार के मूल में यह तथ्य निहित है कि गतिशीलता हिन्दी का बुनियादी चरित्र है और हिन्दी अपनी लचीली प्रकृति के कारण स्वयं को सामाजिक आवश्यकताओं के लिए आसानी से बदल लेती है। इसी कारण हिन्दी के अनेक ऐसे क्षेत्रीय रूप विकसित हो गए हैं जिन पर उन क्षेत्रों की भाषा का प्रभाव साफ़-साफ़ दिखाई देता है। ऐसे अवसरों पर हिंदी व्याकरण और संरचना के प्रति पूरी उदारता के साथ इस प्रभाव को आत्मसात कर लेती है । यही हिन्दी के निरंतर विकास का आधार है और जब तक यह प्रवृत्ति है तब तक हिन्दी का विकास रुक नहीं सकता ।

बाज़ारीकरण की अन्य कितने भी कारणों से निंदा की जा सकती हो लेकिन यह मानना होगा कि उसने हिंदी के लिए अनुकूल चुनौती प्रस्तुत की। बाज़ारीकरण ने आर्थिक उदारीकरण, सूचना क्रांति तथा जीवनशैली के वैश्वीकरण की जो स्थितियाँ भारत की जनता के सामने रखी, इसमें संदेह नहीं कि इससे हिंदी भाषा के अभिव्यक्ति कौशल का विकास ही हुआ। जिसका अर्थ भाषा का विकास ही है।

यहां यह भी जोड़ा जा सकता है कि बाज़ारीकरण के साथ विकसित होती हुई हिन्दी की अभिव्यक्ति क्षमता भारतीयता के साथ जुड़ी हुई है वे परिवार और सामाजिक संरचना की उपेक्षा नहीं कर सकते। इसका अभिप्राय है कि हिंदी का यह नया रूप बाज़ार सापेक्ष होते हुए भी संस्कृति निरपेक्ष नहीं है। विज्ञापनों से लेकर धारावाहिकों तक के विश्लेषण द्वारा यह सिद्ध किया जा सकता है कि संचार माध्यमों की हिन्दी अंग्रेज़ियत की छाया से मुक्त है औरअपनी जड़ों से जुड़ी हुई है।

समय-समय पर विदेशो मे होने वाले अंतराष्ट्रीय हिन्दी भाषा सम्मेलन और दिनो-दिन विश्व के देशों में विश्वविद्यालयों में हिंदी शिक्षण का प्रसार, वहाँ के विद्धानों में हिंदी साहित्य के प्रति बढ़ती रूची साफ प्रमाण है कि विश्व में हिन्दी के प्रति रुझान बढ़ रहा है, और यह विश्व में एक लोकप्रिय भाषा के रूप में अपना स्थान बना चुकी है !

हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं ने बाज़ारवाद के खिलाफ़ उसी के अनुवाद के सहारे बड़ी फतह हासिल कर ली है। अंग्रेज़ी भले ही विश्व भाषा हो, भारत में वह डेढ़-दो प्रतिशत की ही भाषा है। इसीलिए भारत के बाज़ार की भाषाएँ , भारतीय भाषाएँ ही हो सकती हैं, अंग्रेज़ी नहीं। और उन सबमें हिंदी की सार्वदेशिकता पहले ही सिद्ध हो चुकी है।

पिछले पाँच- सात वर्षों में संचार माध्यमों पर हिंदी के विज्ञापनों के अनुपात में 70% उछाल आया है। इसका कारण भी साफ़ है। भारत रूपी इस बड़े बाज़ार में सबसे बड़ा उपभोक्ता वर्ग मध्य और निम्न मध्य वर्ग का है जिसकी समझ और आस्था अंग्रेज़ी की अपेक्षा अपनी मातृभाषा या राष्ट्रभाषा से अधिक प्रभावित होती है।

प्रकाशन जगत में भी वैश्वीकरण के साथ जुड़ी नई तकनीक के कारण मूलभूत क्रांति संभव हो सकी है। विभिन्न आयु और रुचियों के पाठकों के लिए हिंदी में विविध प्रकार का साहित्य प्रचुर मात्रा में प्रकाशित हो रहा है तथा मनोरंजन, ज्ञान, शिक्षा और परस्पर व्यवहार के विभिन्न क्षेत्रों में उसका विस्तार हो रहा है ।हिंदी भाषा के बहु-सांस्कृतिक और सामासिक स्वरुप के गठन में विभिन्न देशी-विदेशी भाषाओं से किये जाने वाले अनुवादों की भी सुनिश्चित भूमिका है जो स्वागतयोग्य है।

रेडियो तो हिन्दी और भारतीय भाषाओं का प्रयोग करने वाला व्यापक माध्यम रहा ही है! प्रतिदिन होने वाले सर्वेक्षण इस बात का प्रमाण है कि हिंदी के कार्यक्रम चाहे किसी भी विषय से संबंधित हों, देश भर में सर्वाधिक देखे जाते हैं, अर्थात व्यावसायिकता की दृष्टि से हिंदी संचार माध्यमों के लिए बहुत बड़ा क्षेत्र उपलब्ध कराती है। दुनिया के ज्यादातर हिस्सों मे फैले भारतीय के कारण अंग्रेज़ी के तमाम, जानकारीपूर्ण और मनोरंजनात्मक दोनों प्रकार के, कार्यक्रम हिंदी में डब करके प्रसारित करने की बाढ़-सी आ गई है। कहना न होगा कि टेलीविजन ने इस तरह हिंदी के भाषा वैविध्य और संप्रेषण क्षमता को सर्वथा नई दिशाएँ प्रदान की हैं।

फ़िल्मो के माध्यम से भी हिन्दी को वैश्विक स्तर पर सम्मान प्राप्त हो रहा है। आज अनेक फिल्मकार भारत ही नहीं यूरोप, अमेरिका और खाड़ी देशों के अपने दर्शकों को ध्यान में रखकर फिल्में बना रहे हैं और हिंदी सिनेमा ऑस्कर तक पहुँच रहा है। दुनिया की संस्कृतियों को निकट लाने के क्षेत्र में निश्चय ही सिनेमा सर्वाधिक प्रभावशाली माध्यम है। सिनेमा ने ही हिंदी की लोकप्रियता भी बढ़ाई है और व्यावहारिकता भी ।

मोबाइल और कंप्यूटर की चर्चा न की जाए तो बात अधूरी रह जाएगी। ये ऐसे माध्यम हैं जिन्होंने दुनिया को सचमुच मनुष्य की मुट्ठी में कर दिया है। सूचना, समाचार और संवाद प्रेषण के लिए इन्होंने हिंदी को विकल्प के रूप में विकसित करके संचार-तकनीक को तो समृद्ध किया ही है, हिंदी को भी समृद्धतर बनाया है।

इसी प्रकार इंटरनेट और वेबसाइट की सुविधा ने पत्र-पत्रिकाओं के ई-संस्करण तथा पूर्णत: ऑनलाइन पत्र-पत्रिकाएँ उपलब्ध कराकर सर्वथा नई दुनिया के दरवाज़े खोल दिए हैं। आज हिंदी की अनेक पत्रिकाएँ इस रूप में विश्वभर में कहीं भी कभी भी सुलभ हैं तथा अब हर प्रकार की जानकारी इंटरनेट पर हिंदी में प्राप्त होने लगी है। है। पाठक वर्ग तो संपूर्ण देश में ही नहीं, विदेशों मे भी बढ़ता जा रहा है। इस तरह हिंदी भाषा ने 'बाज़ार' और 'कंप्यूटर' दोनों की भाषा के रूप में अपना सामर्थ्य सिद्ध कर दिया है। भविष्य की विश्व भाषा की ये ही तो दो कसौटियाँ बताई जाती रही हैं !

इस प्रकार कहा जा सकता है कि 21वीं शताब्दी में मुद्रित और इलेक्ट्रानिक दोनों ही प्रकार के जनसंचार माध्यम नए विकास के आयामों को छू रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप हिंदी भाषा भी नई-नई चुनौतियों का सामना करने के लिए अधिकाधिक शक्ति का अर्जन कर रही है । निकट भविष्य में हिंदी के विकास, प्रसार और लोकप्रियता को दुनिया की कोई ताकत रोक नही सकती!

बढ़े चलें, बढ़े चलें, उन्नति की मशाल ले,
रूकावटों को परे धकेलते,प्यारी हिन्दी बोलते ,
सारी दुनिया हिन्दी बोले ,बातो में अमृत रस घोले !

संदर्भ-सूची;

1. वैश्विकरण-विकिपिडिया
2. भूमंडलीकरण की चुनौतियाँ : संचार माध्यम और हिंदी का संदर्भ -ऋषभ देव शर्मा
3. अभिनव व्यवहारिकहिंदी - भूमंडलीकरण- डॉ.परमानंद गुप्त
4. वेब मिडिया और हिन्दी का वैश्विकरण - सपना मांगलिक
5. अंतरजाल (इंटरनेट माध्यम)

****

महर्षि अरविंद एवं समन्वित व्यक्तित्व

सोनाली पण्डित * डॉ. अर्चना श्रीवास्तव **

भारतीय दर्शन को आधार बनाकर भारतीय दार्शनिक मानव के 'अस्तित्व' का विश्लेषण करते है तथा यह भी मानते है कि उस अस्तित्तव के साथ शरीर, मन, इन्द्रियों आदि पर पूर्ण नियंत्रण आध्यात्मिक विकास के लिए अनिवार्य है। भारतीय दार्शनिक सदैव से भावों-विचारों को वास्तविक जीवन तथा मानवीय अनुभवों से सम्बन्धित करने का प्रयास किया हैं। व्यक्तित्व के संदर्भ में 'एकवाद', 'मानव का संगठित स्वरूप', 'मनुष्यत्व की गरिमा', 'मानव स्वतंत्रता की वास्तविकता', 'अन्तर्दृष्टि का महत्व' पर सभी की सामान्य सहमति है। इन सभी अनुभवों के साथ-साथ मनुष्य की आकांक्षा की भूमिका को व्यक्तित्तव विकास में महत्वपूर्ण माना है क्योंकि यह 'सतत् ऊपर उठने की चेतना', 'परे जाने की चेतना' मनुष्य को सदा अभिप्रेरित करती है। महर्षि अरविन्द ने इन्हीं व्यक्तित्व विषेशताओं के संदर्भ में चैत्य पुरूष की अवधारणा दी है।

श्री अरविंद के अनुसार मनुष्य एक सत्ता का भाग नहीं है बल्कि वह कई भागों का बना है। यही मनुष्य जीवन की जटिलता एवं अस्त-व्यस्तता का कारण हैं। यदि यह अच्छी तरह संयोजित तथा पूर्णरूप से विकसित किये जाये तो ये भिन्न हिस्से, परस्पर सामंजस्य से मानव जीवन को समृद्ध करने हेतु कार्य करना सीख जाते हैं। यही व्यक्तित्व पूर्णता है। व्यक्तित्व पूर्णता के लिये बाह्य एवं आन्तरिक सत्ता का समन्वय आवश्यक है। बाह्य सत्ता प्रकृति का भाग हैं, इसके तीन हिस्से हैं - शरीर, प्राण, मन, आन्तरिक या अन्तरतम सत्ता सच्ची सत्ता हैं, पुरूष। पुरूष सत्ता में एक अन्तरतम मन, अन्तरतम प्राण, अन्तरतम शरीर है, और उसके केन्द्र में अन्तर आत्मा है एवं चैत्यपुरूष ही अन्तरतम सत्ता है।

श्री अरविंद के अनुसार बाह्य सत्ता के तीनों भागों शरीर, प्राण, मन प्रत्येक भाग की अपनी विशिष्ट चेतना है। अन्तर-विज्ञान में 'मन' का दर्जा खासकर व्यक्तित्व के उस भाग को देते है, जो समझ और बुद्धिवृत्ति के साथ, भावनाओं के साथ, वस्तुओं के प्रति विचार की प्रतिक्रिया के साथ, सच्ची मानसिक क्रियाओं और रचनाओं के साथ, जो उसकी बुद्धि के अंग हैं, में संबंध रखता है। प्रकृति की कामनाएँ, भावनाऐं, उद्वेग व आवेग की बनी है। प्राण ऊर्जा जो शरीर में जीवन संचार करती है, वह भी प्राण का एक पक्ष हैं। शरीर की एक अपनी अलग चेतना है, जो शरीर के विभिन्न अंगों तथा क्रिया-कलापों और स्व:चलित कर्मो में कार्य करती है, देह की चेतना शरीर की भौतिक चेतना का ही हिस्सा है।

बाह्य सत्ता के तीनों भाग आपस में गुंथे हुए हैं, और एक दूसरे पर कार्य करते हैं। विचारवान मन के अलावा एक प्राणिक मन है, जो मन का ही हिस्सा प्राण से मिला हुआ है। प्राणिक मन, तार्किक मन से भिन्न, तर्क से शासित नहीं होता। परंतु प्राण के आवेग एवं कामनाओं पर आधारित कर्म के पक्ष में तर्क देता रहता है। एक अन्य भाग है भौतिक मन, जो मन का वह हिस्सा है जो शरीर से मिला हुआ है तथा शरीर की चेतना की वृत्तियाँ जैसे जड़ता, अंधापन, रूढ़ीवादिता, यांत्रिक गति को पकड़ कर अपने अंदर मानसिक जड़ता, रूढ़ीवाद, शंकाएँ एवं यांत्रिक विचार उत्पन्न करता है। मन का वह हिस्सा जो शरीर से बिल्कुल जुड़ा है, वह यांत्रिक मन है। जिसकी वृत्ति एक यंत्र की तरह लगातार एक ही धुरी में विचारों के घूमते रहने की है। इससे करीब से जुड़ा हुआ प्राणिक-भौतिक भाग है। प्राण शक्ति का वह हिस्सा जो तंत्रियों से जुड़ा है, और तंत्रियों की क्रिया का वाहन है, और उनकी प्रतिक्रियाओं, कामनाओं और शरीर की संवेदनाओं से जुड़ा है।

महर्षि अरविन्द के अनुसार, ''सतही और बाह्यय चेतना के पीछे एक आंतरिक चेतना है। जो शरीर, प्राण, मन, तीनों स्तरों की चेतना पर भीतर से कार्य करती है। अत: एक आंतरिक मन, एक आंतरिक प्राण, और एक आंतरिक शरीर होता है। अंतरमन, वैश्व मन के, अंतरप्राण वैश्व प्राण - ऊर्जाओं के, और अंतर शरीर वैश्व भौतिक शक्तियों के संपर्क में रहता है। जो हमारे चारों और रहती हैं। अत: जबकि बाह्य सत्ता को वस्तुओं का ज्ञान परोक्ष रूप से इन्द्रियों तथा बाहरी मन द्वारा ग्रहण कर बाहरी संपर्क द्वारा होता है। आंतरिक सत्ता हमारे द्वारा कार्य सम्पन्न करने वाली वैश्व शक्तियों के साथ सीधा संपर्क रखती है।''

श्री अरविंद के अनुसार 'चैत्य सत्ता' अंतरतम् सत्ता हैं, जो बाहरी एवं आंतरिक सत्ता को सहारा देता है। अंतरतम् सत्ता अपने सार तत्व में सभी वस्तुओं और जीवों में उपस्थित दिव्यता का एक अंश है। वंश विकास की धारा में यह दिव्य अंश बढ़कर मनुष्यों में व्यक्तित्व बन जाता है। मनुष्य में जो अन्य पुरूष शक्तियां हैं, उसकी सत्ता की सत्ताएं हैं।

उसका सच्चा स्वरूप भी पर्दे के पीछे रहता है। लेकिन वे उन अस्थायी व्यक्तित्वों को प्रक्षिप्त करती है, जिनसे मनुष्य का बाहरी व्यक्तित्व बनता है, और जिनकी मिली-जुली बाहरी क्रिया को और जिनकी स्थिति के रूप में आभास को मनुष्य का स्वरूप कहा जाता हैं। यह अंतरतम् सत्ता भी चैत्य पुरूष का रूप लेती हुई एक चैत्य व्यक्तित्व को सामने लाती हैं। जो एक के बाद एक जीवन में बदलता, विकसित होता है।

मनुष्य के भीतर जो दिव्य संभावनाएं हैं चैत्य सत्ता उसकी और संकेत करता है और तब तक डटा रहता है जब तक कि ये चीजे मनुष्य प्रकृति की प्रधान आवश्यकता न बन जाये।

मनुष्य के भीतर यह चैत्य ही है जो संत मनीषी और द्रष्टा के रूप में खिलता है और जब वह अपनी पूरी सामर्थ्य पा लेता है तो सत्ता को आत्मा और भगवान के ज्ञान की ओर, परम सत्य और परम शुभ की ओर, दिव्य शिखरों और विस्तार की ओर मोड़ता है और मनुष्य को आध्यात्मिक सहानुभूति, सार्वभौमिकता और एकतत्व के स्पर्शो की ओर खोलता है।

जैसे आंतरिक सत्ता बाह्य चेतना के पीछे है वैसे ही अवचेतन मन और सचेतन जीवन के नीचे है। जबकि बाह्य चेतना के मुकाबले आंतरिक सत्ता एक आंतरिक और विशाल चेतना है। अवचेतन एक निम्न व न्यून संकुचित चेतना है। उसमें वह मूक चेतना भी सम्मिलित है जो क्रियाशील तो है पर उसका बोध नहीं होता।

जो स्नायुओं और समस्त शारीरिक पदार्थ में कार्य करती है और उनकी प्राण प्रक्रिया और स्वचालित अनुक्रियाओं का मेल बैठाती है। उसके अंदर इन्द्रिय मन की वे निम्न से निम्न क्रियाएं भी आ जाती हैं जो अधिकतर पशु और वनस्पति जीवन में क्रियाशील हैं। मनुष्य अपने विकास में इस तत्व की किसी बड़ी संगठित क्रिया की आवश्यकता को पार कर आये हैं। लेकिन वह तत्व हमारी सचेतन प्रकृति के नीचे डूबा हुआ और धुंधले रूप से कार्य करता

* सहा. प्राध्यापक, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) ** प्राध्यापक बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.) भारत

है। यह धुंधली क्रियाशील मन के एक छिपे हुए उप स्तर तक जाती हैं जिसमें भूतकाल के संस्कार और वह सब जिसे सतही मन से त्याग अनुपस्थिति में उभर सकता है।

अवचेतन के नीचे अचित है, जो चेतना का निम्नस्तर स्तर है। वास्तव में जहां चेतना का अभाव नहीं है। परंतु वह स्तर जहां चेतना पूरी तरह संकुचित हो गई है, निश्चेतन परम अति चेतना की उल्टी प्रतिकृति हैं। उसमें भी सत्ता की वही निरपेक्षता औ स्वचालित क्रिया है। लेकिन विशाल अंतर्लीन समाधी में, वह सत्ता ही जो अपने आप में खोई हुई है। आत्मसत्ता में ज्योर्तिमय लीनता की जगह उसमें अंधकारपूर्ण निवर्तन है।

श्री अरविन्द ने घोषणा की कि समस्त व्यक्तित्व अज्ञान की सृष्टि और कर्म के आधीन हैं, क्योंकि कर्म का अटल विधान एक परम नैतिक और व्यक्तिगत देव के साथ मेल नहीं खाता है।

''सत्ता के साथ सत्ता का परस्पर आदान-प्रदान, परस्पर संमिश्रमण और परस्पर संलयन-यही प्राण की अपनी प्रक्रिया है, उसका स्वधर्म है।''

प्राण में दो तत्व पाये जाते हैं, एक तो पृथक अहं की अपनी विशिष्टता बनाये रखने और अपने व्यक्तित्व को सुरक्षित रखने की आवश्यकता, और दूसरी है औरों के साथ अपने आपको मिला देने की बाध्यता जिसे प्रकृति उस पर आरोपित करती हैं। भौतिक जगत में प्रकृति उस पर आरोपित करती हैं। भौतिक जगत में प्रकृति पहले तत्व के आवेग पर बहुत बल देती है, क्योंकि उसे स्थायी अलग-अलग रूप बनाने होते हैं।

उसकी पहली और सबसे अधिक कठिन समस्या है। ऊर्जा के सतत् प्रवाह और गतिशीलता के अंदर तथा अनंत के ऐक्य के अन्दर पृथक रूप से बने रहने वाले व्यक्तित्व जैसी किसी चीज का और उसके लिए स्थायी रूप को बना पाना और बनाये रखना, अत: जीवन में व्यक्तिक रूप आधार के रूप में टिका रहता हैं तथा औरों के साथ अपने ऐसे समूहात्मक रूपों का अधिक या कम दीर्घ जीवन पाता हैं, जो प्राणिक्य और मानसिक रूपों का आधार बनेंगे

यदि वे दो शक्तियां, पुरूष और उसका जगत द्रव्य दोनों ही मनुष्य के व्यक्तित्व के लिए जरूरी हैं। अगर अपनी चेतना के समन्वय के साथ पुरूष गायब हो जाए, विलीन हो जाए तो मनुष्य का संगठित व्यक्तित्व भी समाप्त हो जाएगा।

व्यक्तित्व के संगठन में अंत: चेतन और परिचेतन अधिक प्रभावशाली और कहीं अधिक मूल्यवान तत्व हैं, उसमें एक आँतरिक बुद्धि और आंतरिक ऐंद्रिय मन, आंतरिक प्राण, यहाँ तक कि आंतरिक सूक्ष्म भौतिक सत्ता की विशाल क्रिया भी आ जाती है, जो जागृत चेतना को संभाले रखती है, जिसे आगे नहीं लाया जाता।

लेकिन जब यह सुप्त पुरूष मनुष्य प्रवेश कर पाते हैं और उसका अन्वेषण करते हैं, तो उनका जागृत बोध और बुद्धि अपने अधिकांश में उसमें से संकलन है जो वे गुप्त रूप से हैं, या हो सकते हैं।

मनुष्य की मानसिकता और प्राण का वह बड़ा भाग भी, जो बाहरी जगत के प्रति अनुक्रिया नहीं है बल्कि जड़ सत्ता को अपने अधिकार में लाने या उसका उपयोग करने के लिए अपने आपको उस पर प्रक्षिप्त करता है, जो मनुष्य का व्यक्तित्व है। वह उस प्रबल अंतचेतन गुप्तता से आने वाली शक्तियों, प्रभावों, उद्देश्यों का परिणाम और उनका मिश्रित निरूपण हैं।

आध्यात्मिक, मानसिक, प्राणी तथा भौतिक विश्व प्रकृति की शक्तियों के द्वारा परिचालित होते हैं, उसके ऊपरी तल पर एक 'व्यक्तित्व' है, जो चुनाव करता है तथा इच्छा करता है, हार मान लेता है तथा संघर्ष करता है, और प्रकृति में अपने आपको सुरक्षित रखने अथवा प्रकृति की रचना है और यह उसके द्वारा इस प्रकार शासित, परिचालित तथा निर्धारित होता है कि यह स्वतंत्र नहीं कहला सकता। यह उसमें निहित आत्मा की रचना या अभिव्यक्ति है - यह आत्मा की प्राकृतिक तथा प्रक्रियात्मक सत्ता है न कि उसकी आध्यात्मिक तथा शास्वत सत्ता, यह एक अस्थायी निर्मित व्यक्तित्व है, न कि वास्तविक अमर व्यक्ति, साधक को तो वास्तविक अमर व्यक्ति बनना होगा। उसे आन्तरिक तौर पर निश्चल बनने में सफल होना होगा और बाह्य क्रियाशील व्यक्तित्व से अपने आप को निरीक्षक के रूप में पृथक कर लेना होगा। उसे अपने अंदर वैश्व शक्तियों की क्रीड़ा का अध्ययन करना होगा। और इसके लिए इसके पैतरो तथा गतियों में आसक्त रहने की विमूढ़कारी अवस्थाओं से स्थित होना होगा।

इस प्रकार संपर्ण व्यक्तित्व के विकास के लिए मानव को स्वयं के भीतर स्थित वैश्व शक्तियों को जानना होगा तथा उन्हें समयानुसार और आवश्यकतानुसार प्रयोग करके व्यक्तित्व को चरमोत्कर्ष तक पहुंचाया जा सकता है।

'चैत्य पुरूष' को व्यक्तित्व की पूर्णता के रूप में देखा गया है जिसे मानव जीवन का चरम लक्ष्य है एवं इसकी प्राप्ति मानव जीवन का अनिवार्य कर्तव्य माना गया है। व्यक्ति का विद्यानुराग एवं ज्ञान प्रेम ही उसके लिए परमात्मा से एकत्तव का आग्रह एवं आत्मसाक्षात्कार के अवसरों की खोज एवं प्राप्ति में सहायक होता है। परम सत्य को जानने के पश्चात् व्यक्ति सम्पूर्ण व्यक्तित्व की प्राप्ति कर परमात्मा से एकत्तव का अनुभव कराता है एवं 'चैत्य पुरूष' सभी अर्थो में पूर्ण हो जाता है -

पूर्णमंद पूर्णमीदं पूर्णात पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवा वषिष्यते॥

संदर्भ :-

- महर्षि अरविन्द (1859). सिन्थेसिस ऑफ योगा (हिन्दी प्रकाशन), पॉण्डिचेरी : श्री अरविन्द आश्रम प्रकाशन विभाग
- महर्षि अरविन्द (1925). लाईफ डिवाइन (हिन्दी प्रकाशन), पॉण्डिचेरी : श्री अरविन्द आश्रम प्रकाश विभाग
- श्रीमां एवं श्री अरविन्द (2007). चैत्य पुरूष, पाण्डिचेरी : श्री अरविन्द आश्रम प्रकाशन विभाग

****

आवारा मसीहा : फूल मरे पे मरे न बासु

डॉ. संध्या गंगराडे*

काल के सामने साधारण मनुष्य का जीवन और अस्तित्व क्षणभंगुर है पर वही मानव कलाकार सृजनकर्ता और सृजनात्मक विचारों और दार्शनिक अवधारणाओ के बल पर 'अप्रतिहत' रहता है।[1] ऐसे ही अप्रितहत है शरतचन्द्र और शरतचन्द्र के मसीहाई आवारापन के रचनाकार विष्णु प्रभाकर, जीवनी लेखन किसी शोध कार्य से कम नहीं है। जीवनीकार को अपने चरित नायक के जीवन से संबंधित समस्त आयाम देखने होते हैं। इस हेतु उसे सामग्री एकत्रित करनी होती है; रचनाओं से, साक्षात्कार से, लेखों से, संस्मरणो से, लोक प्रचिलित धारणाओं से, और इन सबसे निर्मित करना होता है उस व्यक्ति का व्यक्तित्व जिसमें गुण भी हैं और दोष भी हैं।

गुणों का गायन करते हुए उसे चरित नायक का महिमा मण्डन भी नहीं करना है, उसका बढ़ा चढ़ा कर वर्णन भी नहीं करना है और दोषों को बताते हुए संकोच भी नहीं करना है। जीवनी लेखन अत्यंत कठिन कार्य है, रस्सी पर चलने जैसा दुष्कर। विष्णु प्रभाकर जी 14-15 वर्षों तक इस कार्य में पूरी ईमानदारी और निष्ठा से लगे रहे तब तैयार हुआ शरतचन्द्र के आवारा रूप का मसीहापन।

बंगला भाषा के इस उपन्यासकार के जीवन के वैविध्य और वैशिष्ट्य को निर्मित करने में लेखक ने जिन स्रोतो से सामग्री एकत्रित की उनके संबन्ध में भूमिका में वे लिखते हैं- ''एक तो उन व्यक्तियों से साक्षात्कार जो किसी न किसी रूप में शरद बाबू से संबंधित रहे। दूसरे उनके समकालीन मित्रों के लेख-संस्मरण और तीसरे उनकी अपनी रचनाओं में इधर उधर बिखरे वे स्थल और प्रसंग जिनका उनके जीवन से सीधा संबन्ध रहा। इतने अनुभव के बाद उन्हें ढूँढ़ लेना बहुत कठिन नहीं हुआ।''[2] यह तो बाद ही बात है परन्तु जब लेखक ने नाथूराम प्रेमी के आग्रह पर जीवनी लिखना चाहा तो जीवनी लिखने से पूर्व बंगला मे शरतचन्द्र की जीवनी खोजने का प्रयत्न किया तो वहां से उन्हें ज्ञात हुआ कि बंगला में अब तक उनकी कोई प्रामाणिक जीवनी प्रकाशित नहीं हुई। शरतचन्द्र के विषय में बंगाली समाज में धारणा भी अच्छी नहीं थी। कोई कहता- ''नितांत स्वच्छंद व्यक्ति का जीवन क्या किसी के लिए अनुकरणीय हो सकता है।''[3] तो कोई कहता - ''दो-चार गुण्ड़ों का जीवन देख लो शरतचन्द्र की जीवनी तैयार हो जाएगी।''[4] स्त्रियों को लेकर, अफीम, शराब को लेकर भी उनके बारे मे धारणा यही थी कि- ''वे एक स्त्री के साथ रहते है। उनके पास बहुत कम लोग जाते। मै उनका पड़ोसी था लेकिन कमरे में कभी नहीं गया। वे अफीम खाते थे और शराब पीते थे। वे एक निकृष्ट जीवन बिता रहे थे। मैं उनसे हमेशा बचता था।''[5]

विष्णु प्रभाकर जी को ऐसे व्यक्ति और देवदास, श्रीकांत, चरित्रहीन, पथ के दावेदार, जैसे उपन्यासों के रचनाकार की जीवनी लिखना थी यह जानते हुए कि ''जीवनी लिखना निस्संदेह कठिन काम है। यूँ देखने मे लगता है कि वह कुछ अद्‌भुत-असाधारण और कुछ क्रांतिकारी विचारों का समुच्चय है। किसी के जीवन को समझने के लिए कुछ महत्वपूर्ण घटनाएँ आवश्यक है, पर अनिवार्य नहीं। अनिवार्य है उन घटनाओं और उन विचारों के पीछे रहने वाले प्रेरणा स्रोत। जो दिखाई नहीं देता है वही सत्य नहीं होता। सत्य को पाने के लिए गहरे उतरना होता है और उस उतरने में जहाँ आस्था का प्रश्न है वहाँ वस्तुनिष्ठता का उससे भी अधिक है।''[6] लेखक ने इसे स्वीकारते हुए शरतचन्द्र की जीवनी तीन खण्डों - दिशाहारा, दिशा की खोज, और दिशांत - में तैयार की। इन तीन भागों में विष्णु प्रभाकर जी ने शरतचन्द्र के जीवन के उन कारणों की खोज भी की जिनके परिणाम स्वरूप शरतचन्द्र स्वच्छन्द और विद्रोही भी बने और शराबी और अफीमची भी, परोपकारी भी बने और सेवाभावी भी, गायक भी चित्रकार भी, और स्त्री प्रेमी भी। बचपन उनका अभावों और निर्धनता मे बीता, पिता की अतिशय कल्पनाशीलता और अकर्मण्यता के कारण वे नाना के घर पले बढ़े। भागलपुर, देवानन्दपुर, में उनका बचपन बीता। नानी से साहित्य अध्ययन के संस्कार मिले परन्तु नहीं मिला एक व्यवस्थित जीवन जो उन्हें एक व्यवस्थित इंसान बना पता। इस अव्यवस्थित शरत मे संवेदना थी, प्रेम था, परोपकार था, सेवाभाव था, उंच-नीच का भेदभव नहीं था और थी साहित्य सृजन की अद्‌भुत क्षमता, कल्पना की ऊँची उड़ान। बचपन की भटकन और अव्यवस्थित जिंदगी के कारण उनमें एक हीनता बोध था, छुपाने की प्रवृत्ति थी। शायद इसीलिए उन्होने अपना आरंभिक साहित्य अपने नाम से नहीं छपवाया। रंगून में रहते हुए युवावस्था में उनकी यह प्रवृत्ति बढ़ती गई ''अपने को छिपाने की प्रवृत्ति उसमे भयानक रूप से बढ़ चुकी थी। वह दम्भ नहीं था, थी आत्म-विश्वास की कमी इसलिए पलायन में ही उसे सुख मिलता था''[7] निम्न वर्ग के लोगों के बीच रहने का कारण भी यह हीनता बोध ही था - ''उसके अंतर का हीन भाव उसे सभ्य समाज से दूर इन तथाकथित छोटे लोगो के बीच में ही आनन्द देता था।''[8] कारण ''देश मे वह जाति-बहिष्कृत था। उसके रिश्तेदार उसे अपनाने से हिचकते थे। भद्र लोगो की दृष्टि मे वह चरित्रहीन था।''[9] उसके इस संकोची और अपने आप को छिपाने के स्वभाव के कारण ही अपनी प्रसिद्धि के चरम पर जब सभाओं में उन्हें आमंत्रित किया जाता तो वे किसी न किसी बहाने से स्वीकृति देने के पश्चात भी नहीं पहुँचते।

शरतचन्द्र के दो पर्व बचपन और युवावस्था तो भटकते बीते परन्तु उनके साहित्य में कमी नहीं आई। वे अपनी अन्य बुराइयों के साथ-साथ स्त्रियों के साथ संबंधो को लेकर बहुत चर्चित रहे परन्तु वास्तव में उनके जीवन और साहित्य दोनो में ही नारी को जो सम्मान दिया उसी ने नारी की वहाँ पहचान भी कराई जहाँ अपमानित और उपेक्षित है। उनके नारी चरित्रों में उनके जीवन में आई नारियों से साम्य को लेकर लेखक ने अनेक स्थानो का वर्णन किया है। शरत् के बचपन की मित्र धीरू ही देवदास की 'पारो', बड़ी दीदी 'माधवी', और श्रीकांत की 'राजलक्ष्मी', थी।

वेश्याओं में भी शरतचन्द्र ने नारी संवेदना और उसके उज्जवल रूप के दर्शन किए। रंगून में रहते हुए शरतचन्द्र ने अपने संपर्क मे आने वाली स्त्रियों का उद्धार भी किया और बदनामी भी उठाई। शरतचन्द्र ने अपने मित्र के समक्ष स्वीकारा भी है - ''हेमेन्द्र ऐसा कोई नशा नहीं जो मैंने नहीं किया हो। ऐसी कोई बुरी जगह नहीं जहां मैं न गया हूँ। आज यही सब सोचकर कभी-कभी अवाक हो जाता हूँ कि इतना करने पर भी मैंने अपने से हार नहीं मानी। मेरे मन के भीतर का मनुष्य हमेशा निर्मुक्त रहा।''[10] बंकिम और रवीन्द्र को साहित्य में अपना आदर्श मानने वाले, रवीन्द्र को अपना गुरू मानने वाले,

* प्राध्यापक (हिन्दी), माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.) भारत

बंगला ही नहीं संपूर्ण भारत के साहित्य प्रेमियों के हृदय पर राज करने वाले शरत का जीवन विसंगतियों और विरोधाभासों से भरा रहा। अपने आदर्श और गुरू रवीन्द्रनाथ टैगोर के साहित्य के समकक्ष अपने साहित्य की प्रशंसा की लालसा उन्हें रही और यह प्रशंसा उन्हे मिली भी परन्तु उन्ही रवीन्द्रनाथ के साथ उनका वैचारिक मतभेद भी सामने आया।

विष्णु प्रभाकर जी ने शरतचन्द्र की जीवनी में शरतचन्द्र के साहित्यकार और उनके विवादित को तो विस्तार से रचा ही उनके राजनीतिक विचारों और स्वतन्त्रता आंदोलन मे उनकी भूमिका का वर्णन भी किया है। ''बहुत कम लोग जानते कि अपराजेय कथा शिल्पी शरतचन्द्र ने राजनीति में भी सक्रिय योगदान दिया था।''[11] जीवनी के अंतिम भाग दिशांत में लेखक ने शरतचन्द्र के साहित्य सृजन के चरम के साथ-साथ उनके स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय सहभागिता का भी वर्णन किया है। अब उनमें प्रौढ़ता आ गई थी, वे अपनी ही रचनाओं की कमियों को समझने लगें थे।

देवदास की आत्मघाती भावुकता के कारण अब उन्हें यह उतना प्रिय नहीं रहा। इसके बावजूद उन्होने स्वीकार किया कि - ''देवदास के सृजन मे मेरे हृदय का योग है और श्रीकांत मे मस्तिष्क का।''[12] राजनीति की ओर भी उनका झुकाव इस प्रौढ़ावस्था में ही हुआ। गरम दल और लोकमान्य तिलक के प्रति उनमें गहरी श्रद्धा थी, गाँधी जी के असहयोग आंदोलन में भी उन्होंने हिस्सा लिया। इसी समय उनके चरित्र को लेकर अफवाहें भी सक्रिय हुई परन्तु उन्होंने साहित्यकार के दायित्व को समझते हुए कहा - ''इस आंदोलन मे साहित्यिकों को सबसे आगे बढ़कर योग देना चाहिए। लोकमत जागृत करने का गुरूभार संसार के सभी देशों में साहित्य के ऊपर रहा है। युग-युग में उन्होंने ही तो मनुष्य के मन में मुक्ति की आकांक्षा जगाई है।''[13] ऐसे साहित्यकार का साहित्य और जीवन दोनों ही समाज और देश के लिए प्रेरणा का कार्य करते हैं, चाहे उसका जीवन कितना ही विसंगतियों से भरा हो।

लेखक ने शरत के जीवन के साथ-ही-साथ उनकी बाह्य रूपाकृति को भी स्थान-स्थान पर चित्रित किया है। एक उदाहरण है - ''वह सुन्दर नहीं था। आँखों को छोड़कर उनमें कोई विशेष नहीं थी, लेकिन आँखों की चमक ही सामने वाले को बाँध लेती थी। वर्ण श्यामता की ओर था और देह थी खूब रोगी लेकिन पैर हिरण की तरह दौड़ने को मजबूत थे।''[14] दिशाहारा, दिशा की खोज, और दिशांत की यात्रा करते हुए महान कथा शिल्पी शरतचन्द्र का अवसान 16 जनवरी 1938 को हुआ, परन्तु अपने साहित्य से वह आज भी 'अप्रतिहत' है, इसका प्रमाण है : राजकमल से प्रकाशित उनके उपन्यासों का नया हिन्दी अनुवाद।

'आवारा मसीहा' के लेखक विष्णु प्रभाकर ने शरतचन्द्र की जीवनी लेखन में बहुत परिश्रम किया और जीवनी विधा को पहचान भी दी। यह शरतचन्द्र की जीवनी है जो शरत् के जीवन को खोलती है। इसमें लेखक ने प्रमाणिकता का पूरा ध्यान रखते हुए शरत के जीवन और चरित, उनके व्यक्तित्व को पूरी ईमानदारी और तटस्थता से व्यक्त किया। जहाँ तक जीवनी की कसावट की बात है प्रथम दो भाग दिशाहारा और दिशा की खोज - में लेखक ने जीवनी के कथा रस की रक्षा की परन्तु अंतिम भाग दिशांत तक आते आते यह धीरे-धीरे केवल विवरणों का ब्यौरा मात्र हो गई।

इस जीवनी मे विष्णु प्रभाकर जी ने शरतचन्द्र के विवादित रूप को भेदते हुए एक सच्चे शरतचन्द्र का परिचय दिया है; वह भी ऐसी भाषा शैली में जो सरस, सरल और प्रवाहमयी है। आवश्यकतानुसार बंगला प्रभावित हिन्दी का प्रयोग भी किया।

एक महान साहित्यकार की यह जीवनी शरत् के साथ शरतकालीन भागलपुर, कलकत्ता, रंगून का सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक चित्रण भी बन गयी है। इस रचना ने साहित्यकार के जीवन की भ्रांतियों को तोड़ा ही नहीं यह सिद्ध भी किया है कि साहित्यकार का जीवन साधारण व्यक्ति से भिन्न होता है। उसकी संवेदना और दृष्टि भिन्न होती है। इसी कारण वह दृष्टा होता है, सृष्टा होता है, और अप्रतिहत रहता है।

संदर्भ सूची :-

1. आलोचना - अंक रोहिताश्व- पृष्ठ : 54
2. आवारा मसीहा, विष्णु प्रभाकर, भूमिका - पृष्ठ : 14
3. आवारा मसीहा, विष्णु प्रभाकर, - पृष्ठ : 6
4. वही - पृष्ठ : 6
5. वही - पृष्ठ : 7
6. वही - पृष्ठ : 9
7. वही - पृष्ठ : 85
8. वही - पृष्ठ : 87
9. वही - पृष्ठ : 87
10. वही - पृष्ठ : 138
11. वही - पृष्ठ : 31
12. वही - पृष्ठ : 152
13. वही - पृष्ठ : 174
14. वही भूमिका - पृष्ठ : 12

****

बुन्देली कहावतें : कितने रंग कितने रूप

कु. रचना जैन * डॉ. वन्दना जैन **

बुन्देलखण्ड के ग्रामीण अंचलो में बसने वाले सीधे सादे किसानों के हजारों वर्ष के व्यावहारिक अनुभवों को छोटे से छोटे सूक्ष्म रूप में संजोकर रखने का एक मात्र माध्यम लोक कहावतें (लोकोक्तियाँ) है। ये कहावतें हमारे पूर्वजों के अनुभवों का संचित ऐसा खजाना है, जो हमें विरासत में मिला है। मानव जीवन के अलग-अलग अवस्थाओं पर सच का सार उजागर करने वाली ये कहावतें हमें सीख भी देती है और राह भी दिखाती है। वहीं कुछ कहावतें ऐसी भी है जो मौसम की सटीक भविष्यवाणियॉ करती है, जिनका अत्यंत सूक्ष्म निरीक्षण लोक कवि घाघ-भड्डरी ने किया है।

ऐसी जन कहावतों से सम्पन्न साहित्य जब विद्धानों एवं सामान्य जनता के समक्ष जाता है तब उसका आकर्षण लोगों को प्रभावित किए बिना नहीं रहता। ऐसे लोक साहित्य को पढ़ते हुए संस्कृत के लोकप्रिय कवि कालिदास की रमणीयता सहज स्मरण आ जाती है-

''क्षणे-क्षणे यन्नवतामुपैति तदैव रूपम् रमणीयताया।''

'लोकोक्तियाँ' मानवी ज्ञान के घनीभूत रत्न हैं, जिनसे बुद्धि और अनुभव की किरणों से फूटने वाली ज्योति प्राप्त होती है। भारत के महामनीषी भाषाविद् 'भोलेनाथ तिवारी ' ने ठीक कहा है- '' अनुभव का सागर जब कुछ शब्दों की गागर में समा जाता है तो 'लोकोक्ति' बन जाता है। ''

कुछ वर्षो पूर्व इस नीति शास्त्र को नगरीय सभ्यता के हिमायती 'गंवारू साहित्य' कहकर इसकी आलोचना करते थे, लेकिन चौमासा, मामुलिया, मडई और बसंत जैसी अनेक लोकसाहित्य की नियमित निकलने वाली पत्रिकाओं ने हिन्दी पाठकों के सम्मुख जनसाहित्य के अनेक रूप प्रस्तुत किये है।

लोककवि घाघ शहंशाह अकबर के दरबार के विद्धान पुरूष थे। कहावतकार घाघ अपनी कहावतों के लिए प्रसिद्ध हैं। इन्होंने मानव जीवन के अनुभवों का सूक्ष्म निरीक्षण कर बहुत-सी प्रासंगिक बातें अपनी कहावतों के रूप में कहीं जो आज भी विज्ञान सम्मत और सही प्रतीत होती है।

बादलों के विभिन्न लक्षणों को देखकर लोकविद्धान भड्डरी ने अतिवृष्टि और अनावृष्टि की संभावना व्यक्त की है जो शत-प्रतिशत खरी उतरती है -

''शुक्रवार की बादरी, रही सनीचर छाय।
ते यों भाखै भड्डरी, बिन बरसै ना जाए।।''

अर्थात् शुक्रवार के बादल यदि शनिवार को छाय रह जाएं, तो ज्योतिषी भड्डरी कहते है कि वह बादल जल बरसाये बिना नहीं जाएगे।

कुछ कहावतें वर्षा ऋतु के नजदीक होने का संकेत देती है यथा-

''ढेले उपर चील जो बोलै।
गली गली में पानी डोलै।।''

इसका तात्पर्य है कि अगर चील ढेले पत्थर पर बैठकर बोले तो समझना कि इतना पानी बरसेगा कि गली कूचे पानी से भर जाएंगे।

''मटका में पानी गरम, चिड़ियां नहावें धुर।
चीटी लै अंडा चलै, तो वर्षा नहीं दूरा।।''

अर्थात् मटके का पानी गर्म होने लगे, चिड़िया धूल में लोटने लगें और चीटियां अपने अंडो को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना शुरू कर दें तो समझना कि वर्षा समीप है।

''उल्टे गिरगिट उंचे चढ़े,
बरखा होई भूई जल बढ़े।''

यानि यदि गिरगिट पूंछ ऊपर की ओर करके पेड़ पर चढे तो इतनी वर्षा होगी कि पृथ्वी पानी में डूब जाएगी। ये कहावतें बिल्कुल सटीक संकेत देती हे शायद इसीलिए ब्रेसब्री से बारिश का इंतजार करते किसान इन पर अटूट विश्वास करते है-

''सूदी अषाढ़ की पंचमी गर्ज घमाघम होए।
तो जानो या भड्डरी, मधुरी वर्षा होए।।''

लोककवि भड्डरी कहते है- आषाढ़ मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को बादल खूब गरजे, तो माने कि इस बार अच्छी वर्षा होगी। जिस प्रकार से वर्षा होने की अनेक आगामी संभावनाएँ कहावतों में मनोवैज्ञानिक ढंग से बताई गयी है, ठीक इसी तरह वर्षा न होने पर उसका प्रभाव कैसा रहेगा अर्थात् किस समय दुर्भिक्ष पडेगा बताया गया है-

''रात में बोले कागुला दिन में बोले स्याल।
तो यों भाखे भड्डरी, निश्चय पड़े अकाल।।''

अर्थात् रात में कौवे और दिन में स्यार बौलें तो भड्डरी ज्योतिषी कहते है कि निश्चित अकाल पड़ेगा। प्रकृति, वर्षा के सम्बन्ध में बुंदेलखण्ड अंचल में अहाने (कहावतें) आज भी लोकप्रिय है। बड़े-बुजुर्ग कहते है-

''नवीं अषाढ़ी बादली, जो गरजै घनघोर।
कहै भड्डरी ज्योतिषी, काल पड़ै चहुँओर।।''

अर्थात् आषाढ़ मास की नवमी के दिन बादल गरजे तों ''लोक ज्योतिषी भड्डरी'' कहते है कि चारों ओर अकाल पड़ेगा। सूखे की तरफ संकेत करने वाली घाघ-भड्डरी की एक और कहावत है-

''सावन पहली पंचमी घन गरजै आधी रात।
तुम जाओ पिय मालवें, हम जैहैं गुजरात।।''

श्रावण मास की पहली पंचमी को यदि अर्द्ध रात्रि को बादल गरजें, तो वर्षा नहीं होगी निश्चित अकाल पड़ेगा। यह संकेत पाते ही स्त्री अपने पति से कहती है कि तुम मालवा में रहना और मैं गुजरात जाती हूँ।

आज हम भले ही आधुनिक मशीनों की सहायता से अनेक रोगों द्वारा मानव को नया जीवन दिया जा सकता है लेकिन हमारे देश के कई ग्रामीण निवासी जिनके पास दवा के लिए पर्याप्त धन नहीं होता था। ग्रामीण अनुभवी बुजुर्गो की स्वास्थ्य सम्बन्धी कहावतो के द्वारा निरोगी एवं स्वच्छ शरीर प्राप्त किया जा सकाता है। कुछ स्वास्थ्य सुरक्षा के उपाय इन लोकोक्तियाँ के माध्यम से समझाये है -

''निन्ने पानी जे पीवे भूंज हर्र नित खाय।
दूध ब्यारी जे करै, उन घर वैद न जाय।।''

अर्थात् जो नित्य उषाकाल जल पान करे, हर्र भूंज कर खाते और रात को दूध की ब्यारी करते है, उनके घर कभी चिकित्सक नहीं आते। वे सदा रोग मुक्त अर्थात् निरोगी रहते है।

इसी प्रकार बचपन से यह कहावत कंठस्थ करा दी जाती थी-

* शोधार्थी (हिन्दी अध्ययनशाला) ** निदेशक एवं विभागाध्यक्ष हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

''आंख में अंजन, दांत में मंजन नितकर नितकर।
नाक में अंगुली, कान में तिनका मतकर मतकर।।''

अब किन खाद्य वस्तुओं का नियमित प्रयोग शरीर के लिए हितकारी होता इसकी व्याख्या करती हुई लोक प्रचलित बुन्देली कहावत दृष्टव्य है–

'' जो नित आंवरा खात है प्रात पियत है पानी।
कबहुं न मिलिहैं वैधराज से कबहुं न जाई जवानी।।''

इसी को पुष्ट करती एक ओर जनश्रुति देखिये–

''जो भोरहिं माठा पियत हैं, जीरा नमक मिलाय।
बल बुद्धि तीसे बढत है सबै रोग जरिजायं।।''

साथ ही साथ ऋतु के अनुसार किन खाद्य वस्तुओं का प्रयोग हानिकारक होता है इसकी विवेचना करती हुई लोकोक्ति जो बुन्देली लोक जीवन का अभिन्न अंग बनी हुई है नीचे प्रस्तुत हैं –

''सावन भाजी, भादो मही, कुंवार करेला कातिक दही।
अघने जीरा, पूसे धना, माघे मिसरी फागुन चना।।
चैत गुड बैसाखे तेल, जेठे महुआ असाडे बेल।
इतनी चीजैं खैहो सभी, मर हो न तो पंर हो सही।।''

इन पक्तियों में किस महीने में किस प्रकार की वस्तुऍं खाना वर्जित है उसका उल्लेख किया है– सावन में भाजी, भादो में मठा (दही), वंवार में करेला, कार्तिक में दही, अगहन में जीरा, पूस में धनिया, माघ में मिसरी, फाल्गुन में चना चैत में गुड वैसाख में तेल, जेठ में महुआ आशाढ़ में बैल इतनी चीजें नहीं खाना चाहिए। यदि खायेगा तो निश्चित मरेगा नहीं लेकिन बीमार अवश्य पड़ जायेगा।

इसके अतिरिक्त सैंकडो कहावतें वेदवाक्य के समान जनसामान्य में ऐसी प्रचलित है जिनसे समाज को नैतिक शिक्षा मिलती है जिसे सुनकर मानव समाज अपने दोषों को दूर करके ज्ञान और अनुभव की वृद्धि करता है कुछ उदाहरण प्रस्तुत है –

- *''एक हात सै तारी नई बजत।''*
  (जब तक दोनों पक्ष मेल या लड़ाई नहीं करना चाहते तब तक मेल या झगड़ा नहीं होता)
- *''सुनिये सबकी करिये मन की।''*
  (बात सबकी सुननी चाहिए, परन्तु करना वहीं चाहिये जो उचित जान पड़े।)
- *''उत्तो पांव पसारिये जित्ती चादर होय।''*
  (मनुष्य को अपनी सामर्थ्य के अनुसार ही काम करना चाहिए।)
- *''उकताने काम नसाने, धीरज धरो सयाने।''*
  (जल्दबाजी में काम बिगड़ता हे इसलिए चतुरों को धैर्य से काम लेना चाहिए।)
- *''जैसी करनी वैसी भरनी।''*
  (जो व्यक्ति जैसा काम करता है, उसको वैसा फल मिलता है)

आदि अनेक लोक कहावतें जन जीवन और समाज कल्याण की दृष्टि से मूल्यवान है। इनका प्रयोग मौसम का ज्ञान कराने, कर्तव्य का पालन करने, कृषकों को शिक्षा देने और जीवन के प्रति सचेत करने के लिए प्रकाश का कार्य करती है इस प्रकार अनुभव जन्य कहावतों का अक्षय भण्डार बुन्देलखण्ड में भरा हुआ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. बुन्देली कहावत कोष–श्री कृष्णानन्द गुप्त
2. तुलनात्मक लोकोक्ति साहित्य–डॉ. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी
3. निजी संग्रह– डॉ.वन्दना जैन
4. निजी संग्रह–रचना जैन
5. मधुरिमा पत्रिका 3 अगस्त 2011

****

पत्रकारिता एवं फोटो पत्रकारिता : महत्व एवं प्रयोग विधि

डॉ. पुष्पा शाक्य *

समाज के उन्नयन और उत्कर्ष का सीधा संबंध पत्रकारिता से है। विचार ही व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के उत्कर्ष और विकास का आधार है। अखबार समाज में विचारों का संवहन का सर्वोत्तम और सशक्त माध्यम है। दैनिक पत्र मूलत: समाचारों, खबरों और विचारों के संवाहक होते हैं। समाचारों की समीक्षा भी विचारों का ही संयोग होता है। अपनी बात, अपने विचार, अपनी भावनाओं के प्रसार की इच्छा से अखबार व पत्रिका में लिखा जाने लगा है। विभिन्न घटनाओं या कार्यक्रमों से संबंधित चित्र उन्हें सजीवता प्रदान करते है, जो घटना को स्वयं कहते प्रतीत होते है।

मानव की जिज्ञासा को शामिल करना बौद्धिकता, वैचारिकता को भरना, मनोरंजन करना, ज्ञान-विज्ञान की विशिष्ट उपलब्धियों को सामान्य से सामान्य जन तक पहुंचाना पत्रकारिता का उददेश्य है और इस बहुआयामी विषय के उददेश्य में अनुरूप भावोत्पादक में फोटो का अपना महत्व है।

फोटो पत्रकारिता पत्रकारिता का एक भाग है जिसका अध्ययन और पत्रकारिता की समग्रता तथा प्रभाविता हेतु किया जाता है पत्रकारिता एक बहुआयामी विषय है। अत: इसे विविध स्वरूपों तथा प्रकारों के अनुरूप भावोत्पादक फोटो पत्रकारिता ही प्रभावी हो सकती है। पठन और श्रवण की अपेक्षा दर्शन (दृष्टि) से सत्य अधिक उजागर होता है। अत: यह कहा जा सकता है कि फोटो पत्रकारिता से पत्रकारिता में आकर्षण तथा सत्यता की अधिक वृद्धि होती है। फोटोग्राफी विषय पत्रकारिता का अदम क्षेत्र है। इस विषय पर अनेक पत्रिकाऐं ''एशियन फोटोग्राफी'', ''टाईम्स जनरल ऑफ जनरल फोटोग्राफी'' तथा ''बेटर फोटोग्राफी'' है।

विकास की गति के साथ-साथ पत्रकारिता के नए नए आयामों का जन्म होता है जिससे समाज की प्रगति में सहायक व्यक्ति, विषय व स्थान समाचार के आकर्षण केन्द्र बन जाते है। फोटो पत्रकारिता विभिन्न घटनाओं या कार्यक्रम से संबंधित चित्र उन्हें सजीवता प्रदान करते है जो घटना को स्वयं कहते प्रतीत होते है।

जन-संचार में फोटोग्राफी का महत्वपूर्ण स्थान है। पत्रकारिता में फोटो प्रकाश और रासायनिक तत्वों की क्रिया से स्थायी एवं सुस्पष्ट प्रतिबिंब तैयार करने की यह एक विशिष्ट कला है। प्रकाश और रासायनिक क्रिया से बने प्रतिबिंब को छायाचित्र कहते है।

फोटोग्राफ सदैव सार्वभौमिक भाषा बोलते है, सभी को आकर्षित करते है, भाषा में आने वाली बाधा को इसके प्रयोग से दूर किया जा सकता है फोटोग्राफ का प्रभाव तुरंत पड़ता है क्योंकि इसे यथार्थ, सत्य माना जाता है । इसमें विश्वसनीयता होती है पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता के माध्यम से ही लोगों के दृष्टिकोण और अभिरूचि को बदला जा सकता है, सामाजिक बुराई और अपराधों को सही ढंग से पहचानने में सहायता मिलती है, और उनसे दूर रहने की प्रेरणा मिलती है। पत्रकारिता में फोटो विश्वसनीयता का सर्वोत्तम माध्यम है, कबीर ने भी कहा है - लिखा-लिखी की बात नहीं, देखा-देखी बात।

इसलिये विवादास्पद बातों पर फोटो द्वारा की गई अभिव्यक्ति निर्णायक होती है और सफल फोटोग्राफ वही होता है जो संवेदनशील अनुभूतियों को दर्शक के सामने प्रस्तुत करता है। सत्य का सम्प्रेषण भी उसका प्रेरक होता है और सत्य ही उसकी कथा का प्राण होता है।

फोटो पत्रकारिता का लक्ष्य उत्तरदायित्व की भावना को बढ़ाना, घटनाओं पर टिप्पणी करना तथा दर्शको का मनोरंजन कराना है। एन्सेल एडेम्स ने कहा है - ''आप तस्वीर खीचतें नहीं है बल्कि आप उसका सृजन करते हैं।''

पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता का महत्व सर्वाधिक है। समाचारों, घटनाओं और विचारों की रोचक व्याख्या करने तथा उन्हें दिलचस्प बनाने का शक्तिशाली माध्यम है जिससे सामाजिक परिवर्तन निश्चित रूप से लाया जा सकता है। डॉ. जेम्स एस. मूर्ति ने ''लाईफ की घोषणा को ही फोटो पत्रकारिता को सुस्पष्ट करने वाला बताया है।''

जीवन को देखना, संसार को देखना, महान घटनाओं का साक्षी बनना, विलक्षण वस्तुओं को देखना, आदमी के कार्य उसकी चित्रकारी आविष्कार पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता के द्वारा देखना एवं देखने की प्रक्रिया में आनंद लेना महत्वपूर्ण है।

समसामयिक घटनाओं के सचित्र विवरण की प्रस्तुति फोटो पत्रकारिता है जिसमें पैनी दृष्टि से सम्पन्न और जीवंत दृश्य को पकड़ने की समर्थता होती हैं। पत्रकारिता में फोटो प्रासंगिकता और दूरदृष्टि से संबंधित गुणों के कारण उसमें सत्यता, वास्तविकता, विश्वसनीयता और वस्तुनिष्ठता का समावेश रहता हैं।

हिन्दी, अंग्रेजी, रूसी, चीनी, उर्दू ये सभी भाषाऐं अलग-अलग प्रतीकों द्वारा समझी और लिखी जाती हैं। अनेक देशवासी विविध भाषाओं में अपने विचारों को प्रकट करते है। इस विश्व में मात्र चित्र ही ऐसा है जिसकी एक भाषा हैं जो सर्वजन हेतु बोधगम्य है। भाषा की दीवार को चित्र तोड़ता है, अत: पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता का महत्व स्वयंसिद्ध हैं।

सामान्य जनता के दृष्टिकोण को बदलने और अभिरूचि को प्रभावित करने की दिशा में चित्र अति महत्वपूर्ण हैं। फोटो पत्रकारिता द्वारा सामाजिक कुरीतियों और अपराधों को सही ढंग से पहचानने में सहायता मिलती है फोटो त्याज्य या ग्राहय् कार्य के प्रति भावनाओं को उत्तेजित करने में प्रभावकारी भूमिका निभाते है। पत्रकारिता के क्षेत्र में नित नये उपकरणों के माध्यम से समाचार-पत्र, पत्रिकाओं और इलेक्ट्रानिक माध्यमों को सचित्र बनाने की प्रक्रिया दिन-प्रतिदिन प्रगति करती जा रही है। प्राविधिक सुविधा तथा सरलता के कारण पत्रकारिता में समसामयिक महत्व के चित्रों की मांग अधिक बढ़ गई है।

पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता का क्षेत्र अब बहुत विस्तृत हो गया है। आधुनिक किसी भी अवसर में सर्वाधिक महत्व के फोटो होना मुख्य उददेश्य् होता है। पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता अधिक आकर्षण पैदा करते है। फोटो शब्दों की अपेक्षा अधिक तेजी व स्पष्टता से बोलते हैं इसलिये फोटो पत्रकारिता ने उल्लेखनी प्रगति की हैं।

पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता के अनुप्रयोगों ने पत्रकारिता की प्रभाविता में अधिक सार्थकता ला दी है। अत: पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता के महत्व को समझने के साथ साथ इसकी प्रयोग विधि में कुशलता, सच्चाई, ईमानदारी और दृढ़ निश्चय के सिद्धांतो से सार्थकता होती हैं। पाठक समाचार को फोटो प्रकाशन के साथ सत्य मानते है क्योंकि देखने वालों के मन में वैसी भावना

* सहायक प्राध्यापक हिन्दी, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.) भारत

उत्पन्न होती है।

पत्रकारिता में फोटोग्राफी के समावेश से इसकी सत्य और विश्वास को उजागर करने की अवधारणा और प्रासंगिक हुई है। फोटो पत्रकारिता आज संचार का एक ऐसा सशक्त माध्यम है जो किसी देश की भौगोलिक या राजनीतिक सीमाओ तक सीमित न रहकर अपनी विशिष्टताओं के कारण समाज के सभी वर्गो से किसी न किसी रूप में जुड़ा हुआ हैं इसमें संदेह नहीं की फोटोग्राफी के क्षेत्र में निरन्तर हो रहे आविष्कारो के फलस्वरूप फोटो पत्रकारिता का भविष्य और उज्ज्वल होगा।

फोटो पत्रकारिता एक ऐसा महत्वपूर्ण आयाम है जिसमें फोटो के प्रयोग से उसका स्वरूप ही बदल गया है। समाचार पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित की जाने वाली फोटो में दर्शाए पत्रिका के सिद्धांतो को उसके कलात्मक पहलू से अधिक महत्व दिया जाता है। फोटो पत्रकारिता में लोकरूचि, वृत्तचित्र एवं तत्कालीक समाचारों सहित साधनत्मक प्रकरण एवम् भावनात्मक प्रभाव के कारण छायाचित्रों को महत्व दिया जाता है।

समाचार और लेखों के साथ फोटो प्रकाशित करने का उद्देश्य् साधन देना, मार्गदर्शन, मनोरंजन के अतिरिक्त पत्रिका आकर्षित भी होती हैं। फोटो पत्रकारिता ने पत्रकारिता के क्षेत्र मे ऐसी क्रांति ला दी है जिससे न केवल संपादक, समाचार एवं लेखों को प्रभावी ढंग से और कम शब्दो में प्रस्तुत करने लगे है, बल्कि कम पढे लिखे लोगों की रूचि भी समाचार-पत्रों में बढ़ने लगी है। समाचार पत्र जनमत बनाने का एक प्रभावी माध्यम है जो आसानी से उपलब्ध है और संचार के अन्य माध्यमों से कम खर्चीला भी हैं।

''न्यूयार्क टाईम्स'' के भूतपूर्व प्रबंधक, संपादक टर्नर कारलेट का मानना था कि, फोटो हमारे मस्तिष्क में एक ऐसी अमिट छाप बनाते है जिसमें किसी शीर्षक से न कोई परिवर्तन किया जा सकता है और न ही उसे बदला जा सकता है, चाहे वह फोटो किसी जटिल सामाजिक समस्याओं के एक भाग को ही क्यों न दर्शाती हो और उसे देखने की परिणामस्वरूप पाठक के मस्तिष्क में उस समस्या का अति विकृत रूप ही क्यों न उभरे। हम फोटो की ''आवाज'' को न धीमा कर सकते है और न ही मौन।

फोटो के माध्यम से दर्शाये गये तथ्य झुठलाऐ नहीं जा सकते, समाचार चाहे कितने ही शब्दों में क्यों न लिखा जाए यदि उसे फोटो के साथ प्रकाशित किया जाता है तो उसकी विश्वसनीयता को बढ़ावा मिलता है।

फोटोग्राफ के माध्यम से दर्शाये गये तथ्य झूठलाए नहीं जा सकते, समाचार चाहे कितने ही शब्दों में क्यों न लिखा जाए, यदि उसे फोटोग्राफ के साथ प्रकाशित किया जाता है तो उसकी विश्वसनीयता को बढावा मिलता है।

दैनिक भास्कर के चीफ फोटोग्राफर पत्रिका में फोटो पत्रिका के महत्व में फोटो को किसी प्रमाण का पर्यायवाची मानने के अतिरिक्त उसे ''तीसरा नेत्र'' की संज्ञा भी देते है। इलेक्ट्रानिक मीडिया के चित्र सदैव बदलते रहने से हमारे मस्तिष्क पर उन दृश्यो का उतना प्रभाव नहीं बना पाते जितना की स्थिर चित्र।

फोटो शब्दो के बिना ही किसी भी काल को प्रभावित ढंग से दर्शाने की क्षमता रखते हैं - कहावत है - एक फोटो हजार शब्दों के बराबर होता है। फोटोग्राफ एक साथ बहुत संख्या में लोगों के पास पहुंचाऐ जा सकते हैं और इसके द्धारा सीखने की प्रक्रिया को तेज किया जा सकता हैं। फोटो अपने में समाचार, विचार, रिपोर्ताज, लेख, दस्तावेज और संपादकीय सभी कुछ हैं।

वास्तव में फोटोग्राफी में क्षण को विघटित करने की कला है, कैमरा कभी झूठ नहीं बोलता और उसमें मनुष्य की आँख से अधिक सूक्ष्मता से देखने की क्षमता है, पत्रकारिता में फोटो संवाद को चित्रित करने वाले व सामान्य रूचि वाले जो परिचयात्मक शीर्षक के साथ होते हैं, फोटो को प्रभावशली बनाने के लिए उसमें उपयुक्त शीर्षक कट ऑफ रूल लगाना तथा कॉलम रूल हटाना इत्यादि से होता हैं इसमें परिश्रम तथा विचार से दोषों को समाचार और चित्र के भावों के साथ तालमेल करके दूर किया जा सकता हैं।

फोटो पत्रकारिता ने उल्लेखनीय प्रगति की है, पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता का जो स्वरूप आज हम देख रहे है यह उसका अंतिम रूप नहीं है, फोटोग्राफी की व्यापक क्षमताओं को देखते हुए इसे सहज और बहुआयामी बनाने के लिए आविष्कार जारी हैं। पत्रकार भी फोटोग्राफी के निरन्तर बदलते स्वरूप को अपनाते रहेगें और निश्चय ही पत्रकारिता में फोटो पत्रकारिता का भविष्य उज्ज्वल हैं।

सन्दर्भ सूची

1. सूचना तंत्र और प्रसारण माध्यम- श्री कृष्ण कुमार रत्तू
2. संचार माध्यमो का प्रभाव - श्री ओमप्रकाश सिंह
3. हिन्दी पत्रकारिता का वृहत्त इतिहास- श्री अर्जुन तिवारी
4. उत्तर आधुनिक मीडिया विमर्श- श्री सुधीर पचोटी
5. फोटो पत्रकारिता के मूल तत्व- शशिप्रभा शर्मा
6. पत्रकारिता व प्रेस कानून - मनीषा द्धिवेदी
7. पत्रकारिता एवं जनसंपर्क- श्री एन.सी. पंत, मनीषा द्धिवेदी
6. पत्रकारिता व प्रेस कानून - मनीषा द्धिवेदी
7. पत्रकारिता एवं जनसंपर्क- श्री एन.सी. पंत, मनीषा द्धिवेदी

अन्य पत्रिकाएं, वीणा अप्रेल, 2008 अंक

****

कथा साहित्य में इतिहास की प्रेरणा

डॉ. वन्दना अग्निहोत्री *

कथा और इतिहास की प्रकृति एक दूसरे के इतने सन्निकट है कि दोनों का एक दूसरे में अर्न्तभुक्त हो जाना स्वाभाविक है। 'कथा' मनुष्य के जीवन के अनुभवों का जीता-जागता चित्र है और 'इतिहास' इस पृथ्वी पर मनुष्यता की धारावाहिक कहानी है। अत: दोनों का सम्बन्ध सहज है। इसी कारण प्राचीन साहित्य में ऐतिहासिक काव्य, ऐतिहासिक नाटक और ऐतिहासिक आख्यायिकाएँ प्रचुरता से उपलब्ध होती हैं। ''कथा के नवीन रूप उपन्यास में 'इतिहास' का प्रयोग उसके जन्मकाल से ही होने लगा था।''[1] 'इतिहास' शब्द की व्युत्पति किंचित कौतूहलोत्पादक है। यह शब्द तीन शब्दों इति, ह, आस के संयोग से बना है, जिसका अर्थ है 'यह इस प्रकार हुआ' अत: ''इतिहास शब्द का सामान्य अर्थ हुआ विगत घटनाओ का वृतांत।''[2] प्राचीन संस्कृत साहित्य में इतिहास शब्द का प्रयोग केवल उसके व्युत्पत्तिलभ्य अर्थ में ही नहीं हुआ। महाभारत के आर्दशानुसार धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष से समन्वित पूर्ववृत्त और कथा ही इतिहास है। कौटिल्य ने तो स्पष्ट कहा है कि ''पुराण, इतिवृत्त, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र सब इतिहास है।''[3] अर्थात् जिसमें आर्ष चरित्रो, कथाओ आदि की व्याख्या हो, जो देव और ऋषियों के चरित्र पर आधारित तथा भूत एवं भविष्य के धर्म से युक्त हो वहीं इतिहास है।

इतिहास और साहित्य में आपसी सामंजस्य है डॉ.देवीशंकर अवस्थी ने लिखा है ''आख्यान, पुराण एवं किवदंतियो के शैवाल से मुक्त होकर जब एक बार इतिहास, विज्ञान की ही भाँति विशुद्ध तथ्यों का भंडार बना तो मनुष्य की व्यवस्था परायण बुद्धि ने उसे एक सिस्टम का रूप दिया। सार्थकता की परख के इस दौर में इतिहास की अनेक व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई। जिन्हें हम इतिहास, दर्शन के नाम से जानते हैं।''[4] इतिहास को इन दर्शनो के आलोक में देखा जाने लगा। अतीत का चित्रण भी इसी दृष्टि से किया जाने लगा और यहीं से ऐतिहासिक उपन्यासों के प्रणयन का सूत्रपात हुआ।

बंगला और मराठी में सबसे पहले ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गए। बंकिमचंद्र चटर्जी ने दुर्गेशनंदिनी (1865 ई) मृणालिनी (1869 ई) राजसिंह (1881 ई) तथा हरिनारायण आप्टे ने (उषाकाल 1895 ई) सूर्योदय, सूर्यग्रहण, चन्द्रगुप्त आदि अनेक श्रेष्ठ उपन्यास इतिहास को आधार बनाकर लिखे। तत्पश्चात् इनका अनुवाद भी हिन्दी में हुआ। हिन्दी में इतिहास को आधार बनाकर उपन्यास लिखने वालो में पं.किशोरीलाल गोस्वामी का प्रथम स्थान है। उनका प्रथम उपन्यास हृदयहारिणी सन् 1890 ई.में प्रकाशित हुआ और तब से ऐतिहासिक उपन्यासों की अबाध परम्परा हिन्दी में गतिशील है।

डॉ.जगदीश गुप्त के अनुसार ''ऐतिहासिक उपन्यास इतिहास और कथा की इस पुरातन समीपता की नूतन समन्वयात्मक अभिव्यक्ति है। जिसके पीछे युग-युग के अतीतोन्मुख संस्कार निहित है। कथा की कोई भी कल्पना विगत अथवा ऐतिह्य से उसी प्रकार अपने को मुक्त नहीं कर सकती जिस प्रकार इतिहास अपने को कल्पना से।''[5] इतिहास जब तथ्योन्मुखी बना तो रसात्मक साहित्य से दूर हटा किंतु जब उसने संस्कृतियो, सभ्यताओ और समाज के विकास पर दृष्टि डाली तो उसने भावनाओं के क्षेत्र में व्यापक रूप से प्रवेश किया। ऐतिहासिक उपन्यासकार इसलिए ऐतिहासिक उपन्यास लिखता है कि उसका मस्तिष्क अतीत की भावना से सम्पृक्त रहता है। ठीक वैसे ही जैसे एक संगीतकार का मस्तिष्क धुनो से भरा रहता है वह अतीत के भीतर से अपने लिए एक संसार का सृजन करता है और अपने पाठको को उस संसार के प्रदर्शन के लिए कथा का आश्रय लेता है।

उपन्यासकार अपनी महत्कल्पना के पंखो से अतीत को रूप, सौंदर्य एवं प्राण प्रदान कर वर्तमान में ला खड़ा करता है। इतिहास की स्थूल रेखाओ में कल्पना की रंग तूलिका से ऐतिहासिक उपन्यासकार रूप उरेहता है और दूरी को नगण्य कर पात्र हमारे बीच आ खड़े होते हैं। बोलते हुए, आचरण करते हुए।''[6]

उसके लिये वास्तविक घटनाएँ अथवा तथ्य साध्य नहीं साधन होते हैं। मूल इतिहास की भाव-वृत्ति को चित्रित करने में कल्पना का विशेष योग रहता है। उपन्यासकार किसी विशिष्ट समस्या या किसी निश्चित स्थित को अपने अन्तर में बैठा लेता है तब सर्जन करता है। वास्तव में अतीत के पूर्ण निदर्शन के लिए यह आवश्यक है कि इतिहास को उसकी घटनाओं में भाव-प्रवाह का समावेश करते हुए कथा का रूप दिया जाये।

इस प्रकार ऐतिहासिक उपन्यास इतिहास प्रयोग की एक पद्धति अथवा अतीत को निरूपित करने का एक ढंग मात्र ही नहीं वरन् अतीत के युग और जीवन की विविधता एवं सूक्ष्मता को व्यापक तथा प्रभावशाली ढंग से व्यंजित करने की श्रेष्ठतम पद्धति है। ''अधिकांश ऐतिहासिक उपन्यासकारो ने अपने उपन्यासो में जीवन के शाश्वत सत्यो एवं मानवीय मूल्यों की अभिव्यक्ति की है और अतीत के संदर्भो से उन्हें जोड़कर एक नया अर्थ दिया है।''[7]

ऐतिहासिक संदर्भ में मानव चरित्र के विभिन्न पक्षो के चित्रण तथा प्रेम, वीरता, दया, क्षमा, करूणा, राष्ट्रप्रेम आदि शाश्वत मानवीय भावो और जीवन मूल्यों की खोज का प्रयत्न जिस निष्ठा से उपन्यासकारो ने किया, वह अन्यतम है। इतिहास की तिथियाँ या पात्रो की वंशावलियाँ तथा इतिहास के कोरे तथ्यो की भरमार होने पर भी अतीत का सजीव वर्णन तब तक नहीं हो सकता जब तक उस काल की बहुविध परिस्थितियों का वर्णन न किया जाये। इसलिए ऐतिहासिक उपन्यासकार राजनीतिक क्षेत्र की बड़ी-बड़ी विभूतियो पर ही दृष्टि केन्द्रित करके नहीं रह जाता। सामान्य जनता की धड़कनो को भी सुनता है। लोक चित्रण के लिए लोक उपकरणो, जनश्रुतियो, किवदंतियो, लोक कथाओ, लोक गीतो आदि का आश्रय लेता है। उसे समाज चित्रण के लिए काल्पनिक पात्रो की सृष्टि भी करनी पड़ती है ताकि उपन्यास किसी गौरव विभूति की व्यक्तिगत कहानी ही न बनकर रह जाये वह सामान्य युग मानव की कहानी भी बन सके। इतिहास और साहित्य के अन्तर सम्बन्ध के सारभूत महत्व को रविन्द्रनाथ ठाकुर की इस प्रसिद्ध उक्ति के आलोक में हृदयंगम किया जा सकता है - ''जो व्यक्ति काव्य ही पढ़ेगा और इतिहास को पढ़ने का अवसर नहीं पायेगा, वह हंतभाग्य है, और जो व्यक्ति केवल इतिहास को ही पढ़ेगा और काव्य को पढ़ने का अवसर नहीं पायेगा, संभवत: उसका भाग्य और भी मंद है।''[8]ऐतिहासिक उपन्यासकार के लिए इतिहास एक बहाना मात्र होता है। वह तो उसके माध्यम से अतीत को अनावृत कर जीवन के शाश्वत सत्यो और मानवीय मूल्यों की अभिव्यक्ति का लक्ष्य रखता है और यही करता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासो में इतिहास प्रयोग - डॉ.गोविन्द जी प्र.(छ)*
2. *इतिहास - हिन्दी अनुवाद- 1995 ई, पं.विष्णु शास्त्री चिपलूणकर पृ.3*
3. *अर्थशास्त्र - कौटिल्य - (पृ- 11514)*
4. *आलोचना और आलोचना - डॉ.देवीशंकर अवस्थी - पृ.50*
5. *आलोचना का उपन्यास विशेषांक (अटूबर 54) डॉ.जगदीश गुप्त - पृ.178*
6. *ऐतिहासिक उपन्यास - डॉ.शिवनारायण श्रीवास्तव - साहित्यायन वर्ष - 1 अंक 1 पृ.10*
7. *हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास प्रयोग - डॉ.गोविन्द जी - 326*
8. *ऐतिहासिक उपन्यास - डॉ.सत्यपाल चुघ - पृ.41*

* विभागाध्यक्ष हिन्दी, माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

भारतीय साहित्य में नारी (दशार्क के विशेष संदर्भ में)

डॉ. चन्दा तलेरा जैन*

संसार नर-नारीमय है। चरा-चर सम्पूर्ण सृष्टि इसी द्वैत की परम्परा पर टिकी है और गतिमान भी है। एकांत अद्वैत की स्थिति निरानंद हो सकती थी, इसी से समस्त बह्माण्ड एक परम और परस्पराकर्षण के तत्व से भरपूर है, प्रेम इसी परम तत्व द्वारा अवस्थित एवं संचरित है, वही उस ईश्वर का ऐश्वर्य है, जो घट-घट वासी होकर भी परस्पर है।

''प्रेम आकार लेकर धरती पर अवतीर्ण होता है, नारी के माध्यम से। जननी के रुप में नारी सृष्टि की केन्द्र है वह धरिणी है, वह भरणी है। परिवार के केन्द्र के रुप में वही आधार प्रदान करती है।''

इतिहास के पन्नों पर भारतीय नारी का अंकित रुप विविध फलकों वाला है। युद्ध क्षेत्र में वीरांगना बन शत्रुओं से लोहा लेती नारी, आँसूओं की गंगा में डूबी हुई नारी, पुरुष के हाथ की कठपुतली नारी सुसर-सास के पुर की साम्राज्ञी नारी ये उसके विविध रुप हैं, उसका दर्जा कहीं ऊँचा है तो कहीं नीचा है, उसका रास्ता कहीं समतल, कहीं उबड़-खाबड़, कहीं सीधी है तो कहीं घुमावदार। जहाँ उसकी पूजा होती है, वहाँ पर देवता निवास करते है, परन्तु जहाँ उसको तिरस्कृत किया जाता है, वहाँ कौन निवास करता है ? ईश्वर जाने। इस तरह जीवन के अनेक मोर्चे पर नारी की समस्याएँ पुरुष की समस्याओं से अलग है।

पुरुष के हाथ में सारा तंत्र है, वह नियामक है, कर्ता-धर्ता है। नारी की दयनीय स्थिति के प्रति उसके मन में सहानुभूति तो है, पर कोई ठोस कदम उठाने के लिये वह तैयार नहीं है। समाज में ऐसे अनेक उदाहरण मिलेंगे, जहाँ नारी को प्रताड़ित किया गया है, उसे अपमानित किया गया है, उसे लांछित किया गया है, ऐसी परिस्थितियाँ जब उसके लिये असहनीय हो जाती है तब कई स्त्रियाँ अपने मार्ग से भटक जाती हैं।

इसी प्रकार पति-पत्नि के तनाव के कारण मानसिक रोगों की ज्यादती से जीवन-प्रवाह और सामाजिक नीति-मानों की स्थिरता में घोर अनबन आ जाती है। ऐसी स्थिति का प्रभाव व्यक्तिगत प्रेम संबंध के सूत्रों पर बड़ा बोझ डालता है।आज का वातावरण जो परस्पर दोषारोपण से भरा है, इंसान में संवेदनशीलता कम होती जा रही है। विकास के दावे किये जाते रहे है। लेकिन विकास की दौड़ में बुद्धि इस कदर की बारीकियों में पहुँच गई है कि पहले जिन बातों की ओर ध्यान तक नहीं जाता था, आज उन पर तलाक होने लगे हैं। जैनेन्द के उपन्यास दशार्क से गुजरते हुए कई बार यह लगता है कि जैनेन्द्र उस चिन्तन को विकसित करने के लिये बेचैन हैं जो आज के सभ्य-समाज, सभ्यता से उठता हुआ सृष्टि की संरचना तक पहुँचता है।

विवाह और नारी, वैश्यावृत्ति ओर नारी जैसे मूलभूत सामाजिक प्रश्नों से टकराता हुआ प्रेम और जीवन को परिभाषित करने का प्रयास करता है, यहाँ तक कि अणुयुद्ध की आशंका के विविध सरोकारों को अपने में समेटते हुए चिन्तन का एक गंभीर आग्रह यह भी सामने आता है कि पैसे ने हमें ठग लिया है। हमारा मूलमंत्र प्यार की जगह व्यपार हो गया है। नारी उपभोग की वस्तु हो गयी है और सभ्यता युद्ध के मुकाम पर खड़ी है, अन्ततोगत्वा नारी भी मनुष्य है और उसके मानव मन में किसी अवसर पर दुर्बलता आ सकती है। लेकिन उन कमजोरियों और दुर्बलताओं को वह चित्त में दृढ़ता रखकर, कठोरता से कुचल देती है तब उसकी विजय निश्चित है। ''मानव को यह मानकर चलना चाहिए कि बुराइयों को गले लगाना साँप पालना है। सांप शरीर से कोमल और सुहावना होता है। बुराईयां भी प्रारंभ में अच्छी और सुहावी लगती है। परन्तु जिस प्रकार वह कोमल और सुहावना कीड़ा अपने विषैले दाँत से प्राण हर लेता है, उसी प्रकार बुराईयां भी प्राण हर लेती है।''

दशार्क उपन्यास की रंजना ऐसी पात्र है, जो प्रेम विवाह करने के बाद भी कभी सुखी नहीं रहती है। दोनों के विवाह को सात वर्ष हो जाते हैं। एक बालक हुआ जो देहरादून में है, उनके बीच शायद कोई नवीनता नहीं रह जाती है। इसलिये लेक्चरर पति आते हैं और वह पढ़ती रहती है पति उपेक्षा से चिढ़ जाते हैं यह चिढ़ एक दिन उनके अलगाव का कारण बनती है।

अपने पति के दुर्व्यवहार के कारण, बहुत सोच - विचार के पश्चात् वह स्वतंत्र होकर नगरवधु बन जाती है। आखिर में एक पत्नि का दु:खद अंत हो जाता है और रंजना एक नगरवधु के रुप में समाज में स्थापित हो जाती है। वह सब नगर वधुओं में अपनी अलग पहचान बनाकर, अपना जीवन जीती है। उसका अपना एक भव्य ऑफिस है, सचिव भी है। उसके पास नामी पुरुष अतिथि बनकर आते जाते रहे अब उसके पास धन-दौलत सब कुछ है, और इन सबके बीच वह अपने बेटे के लिये कभी-कभी सोच भी लेती है।

यह बात प्राय: सभी मानतें है कि नारी हृदय अत्यन्त उदार और कोमल होता है। कभी इसी उदार हृदय से ऐसे साहसपूर्ण कार्य हो जाते है कि चकित हो जाना पड़ता है और कभी कोमल हृदया नारी तनिक आघात से शीशे की तरह टूटकर बिखर जाती है। इसके बावजूद कठोर से कठोर नारी में भी दया, ममता की भावना होती है। ''नारी हृदय कोमल और ममता भरा तो होता है, परन्तु यह देन प्रकृति प्रदत्त होती है। प्रकृति की इस देन को स्थिर कैसे रखा जाए इसके लिये प्रयत्नशील रहना अत्यन्त आवश्यक है। इसीलिये हमें हृदय और हृदय की विशालता की मीमांसा करने के लिये विवश होना पड़ता है।''

तमाम प्रतिकूलताओं के बावजूद अगर स्त्री पुरुष के अत्याचारों से तंग आकर गलत राह पर चली जाती है तब वह स्वयं अपने भीतर ऐसा दु:ख उत्पन्न कर लेती है, जो अत्यंत गंभीर चिन्ता का विषय हो सकता है। नारी कभी भी अपने मातृत्व से अलग नहीं हो सकती, क्योंकि उसका स्वभाव भी वही होता है। किसी भी तरह का विधुन स्त्री की जगह पुरुष को माता नहीं बना सकता। इसीलिये वह पूजनीय रही है और रहेगी ।

आधार / संदर्भ ग्रंथ :-

1. दशार्क जैनेन्द्र कुमार (द्वितीय संस्करण - 1990)
2. नार - जैनेन्द्र कुमार
3. हिन्दी साहित्य में नारी - डॉ. गजानन्द शर्मा
4. हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उप. में नारी चित्रण - डॉ. रामविनोद सिंह संस्करण , 1937
5. भारतीय नारी अस्मिता और अधिकार -आशा रानी व्होरा पृ. 55
6. नारी अभिव्यक्ति और विवेक - पुष्पावती खेतान पृ. 96

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

दलित-विमर्श

डॉ. शबनम खान *

'दलित विमर्श- यह संकल्पना आधुनिक काल की उपज है। दलितों के जीवन को केन्द्र में रखकर लेखनकार्य तो स्वतंत्रता पूर्व में भी हुआ है। लेकिन यह संकल्पना बीसवीं सदी के अंतिम दो दशक में विशेष रुप में अस्तित्व में आई। हिन्दी में दलित विमर्श संकल्पना को स्थापित करने का श्रेय 'हंस' के संपादक प्रसिद्ध हिन्दी कथाकार राजेन्द्र यादव को देना होगा। उन्होंने 'हंस' के संपादकियों, कहानियों, लेखों तथा समीक्षाओं आदि के जरिए 'दलित-विमर्श' को 'स्पेस' देकर उसे बहस का मुख्य हिस्सा बना दिया। यह निश्चय ही प्रशंसनीय है। 'हंस' पत्रिका के दलित विशेषांक से 'दलित-विमर्श' की संल्पना को अधिक बल मिला और यह साहित्य के संदर्भ में अंतिम दो दशकों में विचार चिंतन का मुख्य मुद्दा बन गया।

'दलित-विमर्श' के संदर्भ में मुख्यत: दो प्रकार का लेखन उपलब्ध है - (1) सर्जनशील लेखन (2) समीक्षात्मक लेखन। इस विषय के लेखन में भी दो तरह के लेखकों का योगदान है-एक स्वयं दलितों के द्वारा लिखा गया लेखन और दूसरा दलितेतर लेखकों द्वारा लिखा गया लेखन। यह निश्चित ही विवाद का मुद्दा हो सकता है कि दलितों द्वारा लिखित लेखन को दलित लेखन माने या दलितों से संबंधित लिखा गया लेखन दलित लेखन मान ले, फिर चाहे लिखने वाला दलित हो या दलितेतर। परन्तु इस सच को स्वीकार करना होगा कि विगत कुछ वर्षों से दलित विमर्श लेखन, चिंतन एवं चर्चा गोष्ठियों का विषय बन गया है। इस प्रकार सदियों से दमित, पीड़ित और अत्याचारित समाज अर्थात् जाति से पिछड़े हुए लोगों पर किया गया सोच-विचार, चिंतन, विचार-विश्लेषण, गंभीर गहन अध्ययन ही दलित विमर्श है। समकालीन परिवेश को दलित विमर्श का जन्मदाता मानना होगा, जिसने सदियों से पीड़ित तथा ज्ञान से वंचित समाज को शिक्षा सुविधा प्रदान की। दुनिया के शोषितों एवं पीड़ितों का दु:ख बहुत कुछ समान हुआ करता है। जहाँ सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्वतंत्रता को नकारा जाता है, वहाँ वैचारिक एवं क्रियाशील आंदोलन होते है। चाहे ज्यू हो, बुराकुमीत हो, नीग्रो हो या दलित हो। औद्योगिकरण और वैज्ञानिक विकास ने पारंपरिक व्यवसाय के बदले नये माहौल का निर्माण किया। जिसके कारण समाज के बहुत बड़े वंचित, पीड़ित तथा उपेक्षित वर्ग को स्वयं को विकसित करने का सुअवसर प्राप्त हुआ। परिणामस्वरुप आत्मचेतना, आत्माभिमान और अस्तित्वबोध आदि की चेतना ने दलितों में भी एक वैचारिक जागरण की क्षमता का विकास किया। यही कारण है कि दलित समाज अपने अधिकार के प्रति सचेत हो गया। अपने पर सदियों से हो रहे अन्याय का उसे न केवल एहसास होने लगा बल्कि उसके विरोध का साहस भी बढ़ता गया। 'दलित-विमर्श' इसी वजह से चर्चा के केन्द्र में आया।

सामाजिक सुधार की भावना से प्रेरित प्रबुद्ध वर्ग का 'दलित-विमर्श' को केन्द्रीय विषय बनाने में प्राप्त योगदान उल्लेखनीय मानना पड़ेगा। 'दलित-विमर्श' की संकल्पना को लेखन का केन्द्रीय विषय बनाने में दलित तथा दलितेतर लेखकों का योगदान भी महत्वपूर्ण मानना होगा। राजेन्द्र यादव के साथ-साथ रमणिका गुप्ता, महीप सिंह तथा कमलेश्वर जैसे अनेक साहित्यकारों का मौलिक योगदान मानना पड़ेगा जिन्होंने विभिन्न पत्रिकाओं के विभिन्न विशेषांकों को 'दलित-विमर्श' पर केन्द्रित किया। इस प्रकार समकालीन साहित्य में 'दलित-विमर्श' एक मुख्य विमर्श के रुप में सामने आया। दलितों के जीवन को लेकर स्वतंत्रता पूर्व भी लेखन कार्य हुआ है। लेकिन स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद ही इस लेखन को बल मिला। प्रेमचंद ने अपने कथा साहित्य में दलितों के जीवन का चित्रण अपूर्व रुप से किया है, लेकिन उस काल में दलित जीवन चित्रण लेखन का अंग रहा, दलितों का वैचारिक जागरण नहीं। दलितों के वैचारिक जागरण को स्वतंत्रता पश्चात् के समकालीन उपन्यासों में अभिव्यक्ति मिली। समकालीन परिवेश के कारण जहां एक ओर दलितों को आत्मचेतना, आत्माभिमान एवं अस्तित्व बोध की प्रेरणा मिली। वहां दूसरी ओर दलितों के परिवर्तित जीवन व्यवहार तथा चेतना को अंकित करने का दायित्व समकालीन साहित्यकारों ने निभाने का प्रशंसनीय प्रयास किया। समकालीन हिन्दी उपन्यासों में 'दलित-विमर्श' की प्रस्तुति जिन उपन्यासों में प्रमुख रुप से परिलक्षित होती है, उनमें अमृतलाल नागर का 'नाच्यौ बहुत गोपाल', मन्नू भंडारी का 'महाभोज', संजीव का 'धार', बच्चन सिंह का 'सूतो वा सूतपुत्रो वा', जगदीशचंद्र का 'धरती धन न अपना' और 'जमीन अपनी तो थी' गिरिराज किशोर का 'परिशिष्ट', मैत्रेयी पुष्पा का 'अल्मा कबूतरी' और मोहनदास नैमिशराय का 'मुक्तिपर्व' आदि है। इन रचनाओं में दलितों के वैचारिक जागरण का परिचय मिलता है। इनमें आत्मचेतना एवं अस्तित्वबोध के कारण दलितों में विकसित होती जा रही विद्रोही चेतना का भी अंकन है। संविधान में दलितों के उत्थान हेतु किये गये प्रावधान तथा शिक्षा प्राप्ति के अवसर के कारण दलितों के जीवन में अपूर्व परिवर्तन आने लगा। इसका चित्रण समकालीन उपन्यासकारों ने यथार्थता के साथ किया है। राही मासूम रज़ा के 'आधा गांव' उपन्यास में दलितों के उत्थान को लेकर जनमत की प्रतिक्रिया है। संविधान के निर्माण के साथ छुआ-छूत को दी गई तिलांजलि ने दलित जीवन के विकास का मानो अभियान ही शुरु कर दिया। छुआछूत का खत्म होते जाना भी दलित जीवन के उन्नयन का प्रेरक सिद्ध हुआ। श्रीलाल शुक्ल के 'रागदरबारी' में इसी तथ्य का उद्घाटन हुआ है। शिक्षा प्राप्ति के अवसर के कारण दलितों में एक ओर स्वाभिमान बलवान होता गया तो दूसरी ओर अन्याय के विरोध में खड़े होने का साहस। लेकिन वर्तमानकालीन समाज व्यवस्था में एक तथ्य नजरअंदाज नहीं किया जा सकता और वह यह कि यहाँ विकास और आज़ादी के नारे अवश्य लगे किन्तु मेहतर जैसी दलित जाति की आज़ादी की किसी ने नहीं सोची। उसे अपने पारंपरिक व्यवसाय से निजात नहीं मिल पाई। माँ-बाप भी उन बच्चों को मेला-ढ़ोने के काम में लगाते है जो पढ़ने-लिखने में रुचि नहीं रखते। अमृतलाल नागर के 'नाच्यौ बहुत गोपाल' की निगुनियाँ इसी तथ्य को बार-बार रेखांकित करती है कि दलित पढ़ा-लिखा हो चाहे अनपढ़, सच तो यह है कि आज भी उसे अन्याय और सामाजिक कुव्यवस्था तथा विषमता का परिणाम भुगतना ही पड़ता है। दलितों के विकास के लिए सरकार की ओर से अनेक योजनाओं का क्रियान्वयन होता है, लेकिन ये सारी योजनाएँ दलितों तक नहीं पहुंचती। दु:ख कि बात तो यह है कि सवर्णों के द्वारा दलितों का शोषण तो होता ही रहा है, किन्तु दलितों के इस तबके से भी दलितों का शोषण हो रहा है। जो पढ़ा-लिखा और उच्च पदों पर पहुंचा हुआ है। 'जमीन अपनी तो थी' उपन्यास के लेखक जगदीशचंद्र ने इस पहलू को उजागर किया है। इस प्रकार हम निष्कर्ष रुप में यह कह सकते है कि दलितों में अब स्वाभिमान, आत्मचेतना एवं अस्तित्वबोध उत्तरोत्तर बढ़ता जा रहा है। इससे सवर्णों में ईर्ष्याभाव भी उत्पन्न हो रहा है। कुछ दलित युवक परिणाम की चिंता किए बगैर विद्रोह करने का साहस दिखा रहे है। अपने अपमान एवं तिरस्कार को समझने की क्षमता दलितों में विकसित हो रही है। 'संघर्ष के सिवा न्याय संभव नहीं' यह मंत्र भी उसने महसूस किया है। दलित वर्ग में एक ऐसा तबका विकसित हो रहा है, जो अपनी जमीन से मुखर हो रहा है। अपने समाज के शोषण में वह स्वयं भाग ले रहा है। सार यह है कि दलित विचार चिंतन सदियों से अपमानित, पीड़ित एवं प्रताड़ित जिंदगी से दलितों को बाहर लाने के लिए बल प्रदान करने वाला चिंतन है। दलित-विमर्श की यह महत्वपूर्ण उपलब्धि माननी होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची - ✲ राही मासूम रज़ा -आधा गाँव ✲ श्रीलाल शुक्ल - रागदरबारी ✲ अमृतलाल नागर -नाच्यौ बहुत गोपाल ✲ जगदीशचंद्र - जमीन अपनी तो थी ✲ मन्नू भंडारी - महाभोज ✲ बच्चन सिंह - सूतो वा सूतपुत्रो वा ✲ संजीव - धार ✲ मैत्रेयी पुष्पा - अल्मा कबूतरी ✲ मोहनदास नैमिशराय - मुक्तिपर्व ✲ राजेन्द्र यादव - 'हंस' मासिक पत्रिका

* प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

रघुवीर सहाय के काव्य में सामाजिक जागरूकता

डॉ. रशीदा खान*

रघुवीर सहाय दूसरा सप्तक के कवि हैं। उनके काव्य में कुछ विशिष्ट नहीं, सब समान है। उन्हें सामान्य से स्नेह और आत्मीयता है। उनकी कविताओं की मूल भूमि भी, सामान्य व्यक्ति की जिजीविषा ही है। जीवन की बहुत छोटी-छोटी सी सामान्य सी लगने वाली घटनाओं को उन्होंने अपनी कविताओं में पिरोया है। उनकी कविताओं में बनावटीपन नहीं है। वोह कहते हैं –

सन्नाटा छा जाए,
जब मैं कविता पढ़ूँ।

जीवन दर्शन :-

रघुवीर सहाय का जीवन के विषय में दार्शनिक भाव था। मेरे विचार में उनका जीवन दर्शन था कि, अपने लिये तो सभी जीते हैं, औरों के लिये जीना ही जीना है। इस बात को उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से प्रस्तुत किया। वे कहते थे कि ''विचार वस्तु का कविता में खून की तरह दौड़ते रहना, कविता को जीवन और शक्ति देता है और यह तभी संभव है, जब हमारी कविता की जड़ें यथार्थ में हों।''

रघुवीर सहाय जन सम्बद्ध कवि के रूप में प्रमाणित हुवे। वे आम भारतीय की जिजीविषा की सार्थक अभिव्यक्ति को कविता का मूल प्रतिपाद्य मानते थे। शक्ति सम्पन्नों से घिरे हुए कमजोर और डरपोक इंसान उनकी कविताओं में छटपटाते दिखाई देते हैं। उनकी कविताओं में समकालीन ज़िन्दगी के विभिन्न दृश्य पूरी संवेदनशीलता से उभरे हैं।

जीवन की स्वाभाविकता :-

रघुवीर सहाय के काव्य में स्वाभाविकता वाले पक्ष ने ही उनके काव्य को 'हम सबका' दर्जा दिलाया। उनके काव्य में जीवन का अभिनय नहीं जीवन है। सुरेश शर्मा के अनुसार – 'वे जीवन को उसकी स्वाभाविकता में पाना चाहते हैं, यह स्वाभाविकता जीवन को संपूर्णता में जीने का प्रयास करने वाले व्यक्ति के संवेदनशील मन की स्वाभाविकता है।

कवि सहाय की कविताओं में स्वाभाविकता का पुट है। वे अपनी कमियों, भूलों को स्वीकारने में आना-कानी नहीं करते और न ही अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हैं। सच को सच और झूठ और झूठ कहने में भी संकोच नहीं करते थे। रघुवीर सहाय की कविताएँ 'जीने के कर्म' की परिभाषा तो है ही वे मानव को अपनी दुर्बलताएँ दूर कर, पुरूषार्थमय जीवन एवं स्वाभिमानी जीवन जीने की प्रेरणा भी देते हैं।

जीवन की विडम्बनाएँ :-

रघुवीर सहाय उन लोगों के साथ हैं जो जीवन में हारे हुवे हैं। वे उसकी कोशिशों के सफल होने की कामना ही नहीं अपितु उसकी कोशिशों में भागीदार भी बनते हैं।

समकालीन जीवन की विडम्बनाएँ कम नहीं है। कवि चाहता है कि वह जैसा दिखता है वैसा ही दिखे। आज व्यक्ति की सबसे बड़ी आकांक्षा है जीवित रहना। कवि चाहता है कि हम सब मिलकर उसकी जीवित रहने की इच्छा पूरी कर दें –

मरने की इच्छा, समर्थ की इच्छा है
असहाय जीना चाहता है।
आओ सब मिलकर बस उसे जीवित रखें

जीवन में असुरक्षा की भावना इतनी अधिक बढ़ गई है कि हत्यारा, जिसकी हत्या करना चाहता है, उसे पूर्व में ही सूचित कर देता है और जिसकी हत्या होनी है वह भी इस जुल्म को सर झुकाकर स्वीकार कर लेता है। 'रामदास' कविता मानव की इसी विडम्बनापूर्ण स्थिति को अभिव्यक्त करती है –

''चौड़ी सड़क गली पतली थी,
दिन का समय घनी बदली थी,
रामदास उस दिन उदास था
अन्त समय आ गया पास था
उसे खबर थी उसकी हत्या होगी।''

वे कहते हैं जीवन एक खेल है। यह कहना सही है, किन्तु आम आदमी के लिये यह खेल हारा हुआ खेल है।

रघुवीर सहाय के काव्य में आम आदमी :-

रघुवीर सहाय की कविताओं में आम आदमी का रूप हमारे सामने आता है। उनकी कविताओं में समाज में व्याप्त असमानता, अन्याय, शोषण और अमानवीय व्यवहार को सामाजिक यथार्थ की वैज्ञानिक और ऐतिहासिक छान-बीन के पश्चात आम आदमी की भूमिका को समझकर उसके भविष्य का अनुमान लगाया है। उनकी कविताओं में औसत मनुष्य की संवेदना स्पष्ट दिखाई देती है। लक्ष्मीकांत वर्मा के अनुसार –

''आज का आम आदमी धुँए से घिरे हुए मकान में भूखे परिवार की परम्परा लिये हुए जीवित है। उसका जीवन इतना नीरस है कि उसमें कोई रस नहीं रह गया है। इस बोरियत को दोहराते हुए वह तंग आ चुका है।''

कवि सहाय को जनमानस की शक्ति पर पूरा भरोसा है और कम से कम इतना तो अवश्य है। धूमिल के शब्दों में –

चंद कोयले ही अगर जल उठे
तो बाकी गीले कोयले भी आग पकड़ लेते हैं।

संदर्भित ग्रंथ –

1. सप्तपदी-। सं. देवेन्द्र शर्मा
2. शोध दिशा – पं. गिरिराज शरण अग्रवाल
3. किस तरफ कैसी हवा है – डॉ. अख़्तर नज़्मी
4. सोया नहीं कबीर – डॉ. अख़्तर नज़्मी (प्रकाशन को तैयार)

****

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय स्नातकोत्तर कन्या महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

राष्ट्रीय चेतना में साहित्य का योगदान

डॉ. सरोज यादव *

राष्ट्र शब्द अंग्रेजी शब्द ''नेशन'' का प्रर्याय माना जाता है। सत्रवी शताब्दी में ''नेशन'' शब्द का प्रयोग जातीय अथवा समान भाषा भाषी समूह के लिए होता था। कालान्तर में जातीय समूहो में राजनैतिक स्वतंत्रता तथा आत्म शासन की भावना का उदय हुआ। तब से राष्ट्र, जातीयता रहित राजनैतिक इकाई के रूप में गृहण किया जाने लगा।

आधुनिक युग में राष्ट्र आकांक्षित राजनैतिक स्वतंत्रता अथवा प्रभुता के अर्थ में प्रयुक्त होता है। राष्ट्रीयता एक राष्ट्र की आत्म चेतना है। इस प्रकार राष्ट्रीयता जनसमूह की राजनैतिक चेतना तथा राष्ट्र के प्रति अपने प्रेम भव को प्रकट करता है। उस समय इसका स्वरूप सांस्कृतिक होता है। परन्तु जब यह राष्ट्र के निर्माण और विकास का उद्देश्य लेकर चलने लगता है तो इसका रूप राजनैतिक हो जाता है।

प्रेमचन्द्र साहित्य में सांस्कृतिक एव राजनैतिक दोनों प्रकार की राष्ट्रीयता पाई जाती है। आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी के इस कथन में पूर्ण सच्चाई दृष्टिगत होती है कि कला साहित्य की प्रगति में हमारा युग प्रेमचन्द्र से आगे बढ़ आया है, परन्तु उनकी जोड़ का दुसरा व्यक्तित्व आज तक उपन्यास क्षेत्र में नहीं आ सका । इसी बात को आगे बढ़ाते हुए अज्ञेयजी ने कहा हैं कि प्रेमचन्द्र को मानवता से प्रेम था, हम केवल मानवता की प्रगति चाहते है। हमने आख्यान साहित्य का प्रेमचन्द्र से आगे बढ़ाया लेकिन टेक्निक की दिशा में साहित्यकार की सवेंदना को तथा उसकी मानवीय चेतना को हमने अधिक विकसित या प्रसारित नहीं किया है।

राष्ट्रीयता राष्ट्र की आत्म चेतना हैं यह चेतना जन आंदोलनों के द्वारा जन मानस में बिजली की तरह जब तरंगित हुई तक नवयुवकों में उत्साह जागृत हुआ। गांधीजी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन छेड़ा जिससे राष्ट्रव्यापी आंदोलन आरम्भ हुआ । प्रेमाश्रम के रचना काल में गांधीजी ने देश की राजनीति को नया मोड़ दिया। अंग्रेजी सूट बूट धारियों के स्थान पर खादी धारियों की भीड़ होने लगी। कुर्सियों के स्थान पर लोग जमीन पर बैठने लगे। अंग्रेजी भाषा के स्थान पर हिन्दुस्तानी का बोलबाला हो चला। किसानों की गरीबी और जमीनदारों का शोषण था। महात्मागांधी का चम्पारण गांव का किसान आंदोलन का व्यापक प्रभाव पड़ा । जमीनदारों के अत्याचारों ने अंग्रेजों के जुल्म की याद दिला दी। किसानों को उक्त समस्या से मुक्त कराने के लिए प्रेमचन्द ने जमीनदारी प्रथा का उन्मूलन आवश्यक बताया।

इसलिए उन्होनें किसानों को यह नारा दिया – जमीन उसकी जो उसको जोते । प्रेमाश्रम उपन्यास में गांधीजी के आंदोलनों से प्रभावित प्रेमशंकर जमीनदारी अधिकार का त्याग करते है। किसानों को संगठित कर खेती करके उपज बढ़ाने की प्रेरणा देते है। यह प्रेमशंकर की सच्ची शिक्षा और तत्कालीन राजनैतिक चेतना का प्रभाव ही है। वे हृदय परिर्वतन में विश्वास कर हिंसा का, आंदोलन का, रास्ता छोडकर सच्चे रास्ते पर चलने की प्रेरणा देते है। हिन्दु मुस्लिम एकता को बढ़ावा देते है।

परिणाम स्वरूप गांवों में धीरे धीरे लघु उद्योग एवं कुटीर उद्योगों का विकास हुआ। गांव के नवयुवकों को रोजगार के अवसर प्राप्त हुए । इसी प्रकार रंगभूमि में पूंजीपति वर्ग द्वारा गरीब मजदूरों का शोषण रोकने की दिशा में प्रेमचन्द्र ने अपनी लेखनी के प्रभाव से चेतना जागृत की। इसी तरह काव्य साहित्य में भी राष्ट्रीयता की भावना अभिव्यक्त हुई है।

भारतेन्दु नव जागरण के पुरोधा कवि थे। जिस समय भारतेन्दु का प्रादुर्भाव हुआ, उस समय भारत अंगेजी शासन के दमन चक्रों से पीड़ित था। भारतेन्दु युग के अन्य कवियों ने भी राष्ट्र की दुर्दशा का चित्रण करते हुए भारत की जनता को जाग्रत करने का प्रयास किया है। द्विवेदी युग के अनेक कवियों द्वारा राष्ट्रीयता की भावना व्यक्त हुई है। जिनमें मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्विदी, सुभद्रा कुमारी चौहान विशेष उल्लेखनीय है। 'जनजागरण की काव्य धारा को द्रुत गति से प्रवाहित करने वाले कवि रत्नों में मैथिलीशरण गुप्त का नाम प्रसिद्ध है। गुप्तजी ने 'मुद्से से हाली' के ढंग पर 'भारत भारती' का निर्माण करके वर्तमान भारतीय जीवन की अतीत जीवन से तुलना करते हुए जनजीवन में देश प्रेम की भावना को भरने का प्रयास किया है । ' [1] जिसका मार्मिक रूप ''भारत भारती'' में दृष्टिगोचर होता है। 'खुब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी', जैसी ओजपूर्ण कविताओं में सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपने गीतों के माध्यम से नव युवकों को स्वतंत्रता के लिए मर मिटने का आव्हान किया है।

भारतेन्दु ने अपनी नाट्य रचनाओं के माध्यम से ब्रिटिश शासन के अत्याचारों के विरूद्ध भारतीय जन मानस में नव चेतना और स्वतंत्रता की विचार धारा जाग्रत करने का कार्य किया है। इस संदर्भ में भारतेन्दु द्वारा रचित काव्य पंक्तियाँ विशेष उल्लेखनीय है–

''आवहू सब मिलिके रोवहु भारत भाई,
हा । हा । भारत दुर्दशा न देखी जाई ।। [2]

''इन्होंने अपने देश, अपने समाज, अपनी भाषा की उन्नति की कामना में रचनाएं लिखी है। समाज में व्याप्त रूढियों और कुरीतियों के विरूद्ध चेतना जाग्रत की है।

इसी प्रकार देश को आजादी दिलाने हेतु नव युवकों में जोश एवं मर मिटने की भावना जाग्रत करने वाले माखन लाल चतुर्वेदी का नाम भूलाया नहीं जा सकता है। उनकी 'पुष्प की अभिलाषा' कविता देश की स्वतंत्रता के लिए त्याग एवं बलिदान की प्रेरणा देती है। जैसे काव्य की पंक्तियाँ संदर्भित है–

''मुझे तोड़ लेना वन माली, उस पर देना फेंक
मातृभूमि पर शीष चढ़ाने, जिस पर जावें वीर अनेक ।।''[3]

इनके द्वारा देश की राष्ट्रीयता को अक्षुष्ण बनाये रखने में तथा हमारे राष्ट्र की सुरक्षा के लिए समय समय पर उच्च कोटि की साहित्यिक रचनाएं होती रही है। जो हर युग में समय एवं परिस्थितियों के अनुसार अपना अद्भुत योगदान प्रदान करते हुए निरन्तर राष्ट्र एवं समाज को सर्वोच्च विकास स्तर पर कायम रखे हुए है।

संदर्भ

1. हिन्दी के आधुनिक कवि, लेखक डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना पृ.क्रं. 189
2. हिन्दी के आधुनिक कवि, लेखक डॉ. द्वारिकाप्रसाद सक्सेना पृ.क्रं.362
3. साहित्यिक निबंध लेखक डॉ. गणपति चन्द्रगुप्त पृ.क्रं. 687

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.) भारत

भतृहरिकृत श्रृंगारशतकम् में छन्द विश्लेषण

डॉ. वेरसिंह बामनिया *

किसी रचना को जिसके द्वारा नियमबद्ध किया जाता है, उसे छन्द कहते हैं। व्याकरणशास्त्र के अनुसार 'छन्द' शब्द की अनेक प्रकार से निष्पत्ति की जा सकती है। ''छंदयति आल्हादित छंद्येतेऽनेन वा छंद:''[1] इस व्युत्पत्ति के अनुसार शब्द गेय है इसलिए श्रोता को जो आल्हादित करे अथवा मानव मन को रसानुभूति कराता है, छन्द कहलाता है।

यास्काचार्य निरूक्त में 'छंदांसि छादनात्''[2] अर्थात् रस, भाव या वर्ण्य विषय को छादन (आच्छादित) करने के कारण छन्द कहा जाता है।

''यदक्षरपरिमाणं तच्छंद''[3] अर्थात् संख्या विशेष में वर्णो की सत्त छन्द है। प्रत्येक छंद में वर्णो की संख्या निर्धारित रहती है।

''छन्द: पादौ तु वेदस्य'' [4] अर्थात् छन्द को वेद का पैर माना गया है। ''नाऽछन्दसि वागुच्चरतीति''[5] अर्थात् छन्द के बिना कोई वाणी नहीं निकल सकती है। छन्दों का वैज्ञानिक वर्गीकरण एवं विशालता के कारण संस्कृत का छन्दशास्त्र विश्व में सर्वाधिक प्रसिद्ध है।

वैज्ञानिक पद्धति से विस्तार करते हुए लाखों प्रकार के छन्दों का निर्माण किया जा सकता है। छन्दशास्त्र के जन्मदाता आचार्य पिंगलनाग माने जाते हैं, जिन्होंने एक छोटे छन्द से लेकर बड़े-बड़े छन्दों के प्रकारों को विभिन्न समीकरणों से बनाने की यह कम्प्यूटरी पद्धति बताकर संस्कृत में छन्दों की संरचना को वैज्ञानिकता प्रदान की है।

संस्कृत काव्यों में शिखरिणी, शार्दूलविक्रीडित, मन्दाक्रान्ता, स्रग्धरा, वसन्ततिलका, उपजाति, वंशस्थ, पृथ्वी, मालिनी, द्रुतविलम्बित आदि छन्दों का सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। इन सबसे अधिक प्रयुक्त छन्द अनुष्टुप वेदकाल का स्मरण कराने वाला प्राचीन छन्द है, जिसमें पुराण ही नहीं, शास्त्र भी निबद्ध है, किन्तु वह सरल और सपाट है।

संस्कृत में अपने इन वर्णिक छन्दों की लोकप्रियता को अक्षुण्ण रखते हुए प्राकृत की गाथा को आर्या नाम से, अपभ्रंष के दूहा को द्विपथा नाम से दूसरी भाषाओं से मात्रिक छन्दों को भी अपनाया है।

शंकराचार्य का प्रसिद्ध स्तोत्र 'सौन्दर्यलहरी' शिखरिणी छन्द में इतना अधिक लोकप्रिय हुआ कि स्तोत्र काव्यों के लिए शिखरिणी छन्द आवश्यक माना जाने लगा और शिखरिणी में लिखे गए स्तोत्रों को लहरी नाम दिया जाने लगा जैसे गंगालहरी, करूणालहरी आदि। पण्डितराज जगन्नाथ का स्तोत्रकाव्य गंगालहरी शिखरिणी छन्द में और कालिदास का दूतकाव्य मेघदूत मन्दाक्रान्ता छन्द में इतिहास प्रसिद्ध है।

संस्कृत वाङ्मय के क्षेत्र में गीतिकाव्य का अपना महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कवि की अपनी अनुभूति तथा कल्पना से वर्ण्य विषय तथा उसकी विषय वस्तु में भावात्मकता का होना उसका विशिष्ट गण रहा है। गीतिकाव्य परम्परा के संवाहक मुक्तक काव्य के सृजक आदर्श भूपति एवं महान दार्शनिक महाकवि भर्तृहरि की रचना अनेकानेक नैतिक सिद्धान्तों के प्रसिद्ध ग्रंथों में से एक है। गीति संस्कृत भारती का परम रमणीय अंग है।

गीतिकाव्यों में मधुर पदावली एवं संगीतमय छन्दों के साथ विशेष रूप से श्रृंगार, नीति एवं वैराग्य के प्राकृतिक दृश्यों का भी समावेश है, जिनके कोमल भावों की मधुरिमा प्रत्येक रसिक के हृदय को अपनी ओर आकर्षित करने से पीछे नहीं हटती।

श्रृंगार, नीति तथा वैराग्य शतकों के रचयिता श्री भर्तृहरि संस्कृत साहित्य के एक विलक्षण कवि के गौरव से लाभान्वित होते हैं, जबकि उनकी कविता जितनी प्रसिद्ध है व्यक्तित्व के दृष्टिकोण से उनका परिचय उतना ही अन्धकारमय और अज्ञात बना हुआ है।

भर्तृहरि के जीवन चरित्र के सम्बन्ध में अनेकानेक जनश्रुति प्रचलित है, परन्तु इन किवदन्तियों में सत्यता का कितना अंश निहित है, यह कह पाना कठिन है, किन्तु इतना स्पष्ट है कि उनका जन्म अवश्य ही किसी राजवंश में हुआ था।

श्रंगारशतकम् में प्रयुक्त छन्द –

महाकवि भर्तृहरि द्वारा 'श्रंगारशतकम्' में कई छन्दों का प्रयोग हुआ है, जो वार्णिक समवृत्त, वार्णिक अर्धसम तथा मात्रिक वृत्त की कोटि में परिगणनीय है। श्रंगारशतकम् में प्रयुक्त छन्द इसप्रकार हैं –

(1) अनुष्टुप छन्द –

लक्षण – श्लोके शष्ठंगुरू ज्ञेयं सर्वत्र लघु पंचमम्।
द्विचतुश्पादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययो: ।।

– छन्दोमंजरी

अर्थात् अनुष्टुप छन्द के प्रत्येक चरण में पंचम वर्ण लघु एवं षष्ट वर्ण गुरू होता है। द्विंतीय और चतुर्थ चरण का सप्तम वर्ण भी लघु होता है। निम्न उदाहरण में अनुष्टुप छन्द का लक्षण घटित होता है।

नूनमाज्ञाकरस्तस्या: सुभ्रुवो मकरध्वज: ।
यतस्तन्नेत्रसंचारसूचितेशु प्रवर्तते।।

– श्रंगारशतकम्– 11

(2) शार्दूलविक्रीडित छन्द –

लक्षण – ''सूर्याश्वैर्मसजस्तता: सगुरव: शार्दूलविक्रीडितम्।''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''वक्त्रं चन्द्रविकासि पंकजपरीहासक्षमे लोचने
वर्ण स्वर्णमपाकरिश्णुरलिनी श्रिश्णु: कथानां चय: ।
वक्षोजाविभकुम्भविभ्रमहरौ गुर्वी नितम्बस्थली
वाचां हारि च मार्दवं युवतिशु स्वाभाविकं मण्डन ।।''

– श्रंगारशतकम्–5

(3) शिखरिणी –

लक्षण – ''रसै रूद्रैश्छिन्ना यमनसभलाग: शिखरिणी। ''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''स्मितं किंचिन्मुग्धं सरलतरलो दृष्टिविभव:
परिस्पन्दो वाचामभिनवविलासोक्तिसरस:।
गतानामारम्भ: किसलयितलीलापरिकर:
स्पृशन्त्यास्तारूण्यं किमिव न हि रम्यं मृगदृश:।।

– श्रंगारशतकम्–6

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

(4) बसन्ततिलका –

लक्षण – ''उक्ता बसन्ततिलका तभजा जगौ ग:।''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''शम्भुस्वयम्भुहरयो हरिणेक्षणानां
येनाक्रियन्त सततं गृहकुम्भदासा:।
वाचामगोचरचरित्र विचित्रिताय
तस्मै नमो भगवते कुसुमायुधाय।।''

– श्रंगारशतकम्–1

(5) उपजाति –

लक्षण – ''स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ ग:
उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ।''

– वृत्तरत्नाकर

उदाहरण – ''अदर्शने दर्शनमात्रकामा दृष्टवा परिश्वंगसुखैकलोला।
आलिंगितायां पुनरायताक्ष्यामाशास्महे विग्रहयोरभेदम् ।।''

– श्रंगारशतकम्–22

(6) हरिणी –

लक्षण – ''नसमरसलागै: शड्वेदैर्हयैहरिणी मता।''

–छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''प्रणयमधुरा: प्रेमोन्दारा रसाश्रयतां गता:
फणितिमधुरा मुग्धप्राया: प्रकाशित–सम्पदा:।
प्रकृतिसुभगा विस्रम्भार्द्रा: स्मरोदयदायिनी
रहसि किमपि स्वैरालापा हरन्ति मृगीदृशाम्।।''

– श्रंगारशतकम्–20

(7) मालिनी –

लक्षण – ''ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकै:।''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''दिश वनहरिणीभ्यो वंशकाण्डच्छवीनां
कवलमुपलकोटिच्छिन्नमूलं कुशानाम्।
शकयुवतिकपोलापाण्डुताम्बूलवल्ली–
दलमरूणनखग्रै: पाटित वा वधूभ्य:।।''

– श्रंगारशतकम्–34

(8) रथोद्धता –

लक्षण – ''रात् पदैर्नरलगै रथोद्धता।''

– वृत्तरत्नाकर

उदाहरण – ''मालती शिरसि जृम्भणंमुखे, चन्दनं वपुसि कुंकुमाविलम्।
वक्षसि प्रियतमा मदालसा स्वर्ग एश परिशिष्ट: आगम:।।''

–श्रंगारशतकम्–23

(9) स्रग्धरा –

लक्षण – ''म्रभ्नैर्यानां त्रयेण मुन्निनियतियुता स्रग्धरा कीर्तितेयम्।''

– संस्कृत छन्द अलंकार

उदाहरण – ''रागस्यागारमेकं नरकशतमहादु:खसम्प्रासिहेतु–
र्मोहस्योत्पत्तिबीजं जलधरपटलं ज्ञानताराधिपस्य।
कन्दर्पस्यैकमित्रं प्रकटिविविधस्पष्ट–दोश–प्रबन्धं
लोकेऽस्मिन्नह्यनर्थव्रजकुलभवन यौवनादन्यदस्ति।।''

– श्रंगारशतकम्–29

(10) मन्दाक्रान्ता –

लक्षण – ''मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैर्मी भनौ तौ गयुग्मम्।''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''बाले ! लीलामुकुलितमयी मन्थरा दृष्टिपाता:
किं क्षिप्यन्ते विरम–विरम व्यर्थ एश श्रमस्ते।
सम्प्रत्यन्ये वयमुपरतं बाल्यामास्था वनान्ते
क्षीणो मोहस्तृणमिव जगज्जालमालोकयाम:।।''

– श्रंगारशतकम्–62

(11) इन्द्रव्रजा –

लक्षण – ''स्यादिन्द्रव्रजा यदि तौ जगौ ग:।''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''सत्यं जना वच्मि न पक्षपाताल्लोकेशु सप्तस्वपि तथ्यमेतत्।
नान्यन्मनोहारि नितम्बिनीभ्यो दु:खै कहेतुर्न च कष्चिदन्य: ।।''

– श्रंगारशतकम्–40

(12) द्रुतविलम्बित –

लक्षण – ''द्रुतविलम्बितमाह नभौ भरौ।''

–छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''मधुरयं मधुरैरपि कोकिला कलरवैर्मलयस्य च वायुभि:।
विरहिण: प्रहिणस्तिशरीरिणो विपदि हन्त सुधापि विशायते।।''

– श्रंगारशतकम्–82

(13) वंशस्थ –

लक्षण –''वदन्ति वंशस्थविलं जतौ जरौ।''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''स्मितेन भावेन च लज्जाया भिया
पराङ्मुखैरर्धकटाक्षवीक्षणै:।
वचोभिरीर्श्याकलहेन लीलया समस्तभावै: खुल बन्धन स्त्रिय:।।''

– श्रंगारशतकम्–2

(14) शालिनी –

लक्षण – ''शालिन्युक्ता म्तौ तगौ गोऽब्धिलोकै:।''

–संस्कृत छन्द अलंकार

उदाहरण – ''भ्रूचातुर्यात् कुंचिताक्षा: कटाक्षा:
स्निग्धा वाचो लज्जितान्ताष्च हासा: ।
लीलामन्दं प्रस्थितं च स्थितं च
स्त्रीणामेतद् भूषणं चायुधं च ।।

– श्रंगारशतकम्–3

(15) पुष्पिताग्रा –

लक्षण – ''अयुजि नयुग रेकतो यकारो,
युजि च नजौ जरगाश्च पुष्पिताग्रा।''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''इदमनुचितमक्रमश्च पुंसां यदिह जरास्वपि मन्मथा विकारा:।
तदपि न च कृतं नितम्बिनीनां स्तनपतनावधि जीवितं रतं वा।।''

– श्रंगारशतकम्–27

(16) वियोगिनी –

लक्षण – ''विशमे ससजा गुरू: समे
सभरा लोऽथ गुरूर्वियोगिनी।

– छन्दोमंजरी

उदाहरणा – ''तरूणीवेशोद्दीपितकामा विकसज्जातीपुष्पसुगन्धि:।
उन्नतपीनपयोधरभारा प्रावृट तनुते कस्य न हर्शम्।।

– श्रंगारशतकम्–90

(17) मालभारिणी –

लक्षण – ''विशमे ससजा गुरू समे चेत्सभरा ये तु मालभारिणीयम्।''

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''मधु तिश्ठति वाचि योजितां हृपि हालाहलमेव केवलम्।
अतएव निपीयतेऽधरो हृदयं मुश्टिभिरेव ताडयते ।।''

– श्रंगारशतकम्–51

(18) आर्या –

लक्षण – ''यस्या: प्रथमे पादे द्वादशमात्रास्तथा तृतीयेऽपि।
अश्टादश द्वितीये चतुर्थके पंचदश साऽऽर्या।।

– छन्दोमंजरी

उदाहरण – ''आमीलितनयनानां य: सुरतरसोऽनुसंविदं भाति।
मिथुनैर्मिथोऽवधारितमवितथमिदमेव कामनिर्वहणम्।।''

– श्रंगारशतकम्–26

छन्दशास्त्रीय ग्रन्थ छन्दोमंजरी, वृत्त रत्नाकर एवं संस्कृत छन्द अलंकार एवं व्याकरण आदि से छन्दों के लक्षण प्रस्तुत करते हुए श्रंगारशतक के तत्तद छन्दों के प्रयोग को यहाँ तालिका के माध्यम से स्पष्ट किया जा रहा है –

क्रं.	छन्द का नाम	श्लोक क्रमांक	कुल श्लोक संख्या
1	अनुष्टुप	11,13,14,16, 17, 33,38,42,43,44, 50,54, 59,75,76, 101,103	17
2	शार्दूलविक्रीडित	5,7,12,15,24,30, 32,41,46,49,55 58, 64,79,80,83, 84,95,97,100	20
3	शिखरिणी	4,6,19,35,48,57, 63,68, 69,78,88, 89,93,94	14
4	बसन्ततिलका	1,8,10,18,53, 61,73,87	08
5	उपजाति	21,22,36,47	04
6	हरिणी	20,52,67,81	04
7	मालिनी	25,34,39,56,71,91	06
8	रथोद्धता	23,66,70	03
9	स्रग्धरा	28,29,31,37,45, 74,96,98,99	09
10	मन्दाक्रान्ता	62,77	02
11	इन्द्रव्रजा	40	01
12	द्रुतविलम्बित	82	01
13	वंशस्थ	02	01
14	शालिनी	03	01
15	पुष्पिताग्रा	27	01
16	वियोगिनी	90	01
17	मालभारिणी	51	01
18	आर्या	9,26,60,65,72, 85,86,92,102	09
	कुल		**103**

महाकवि भर्तृहरि द्वारा रचित श्रंगारशतकम् के छन्दोविश्लेषण से ज्ञात होता है कि उन्होंने सम्पूर्ण श्रंगारशतक के 20 पद्यों में शार्दूलविक्रीडित, 17 पद्यों में अनुष्टुप, 14 पद्यों में शिखरिणी, 9 पद्यों में आर्या, 9 पद्यों में स्रग्धरा, 8 पद्यों में बसंततिलका, 6 पद्यों में मालिनी, 4 पद्यों में हरिणी, 4 पद्यों में उपजाति, 3 पद्यों में रथोद्धता, 2 पद्यों में मन्दाक्रान्ता तथा 1–1 पद्य में वंशस्थ, पुष्पिताग्रा, इन्द्रव्रजा, मालभारिणी, शालिनी, वियोगिनी व द्रुतविलंबित छन्द का प्रयोग किया गया है। महाकवि भर्तृहरि ने सम्पूर्ण श्रंगारशतक के 103 पद्यों में से सबसे अधिक 20 पद्यों में शार्दूलविक्रीडित छन्द का प्रयोग किया है और सबसे कम वंशस्थ, पुष्पिताग्रा, इन्द्रव्रजा, मालभारिणी, शालिनी, वियोगिनी व द्रुतविलंबित एक–एक पद्य में प्रयोग किया है। महाकवि भर्तृहरि ने श्रंगार शतक को बसंततिलका छन्द से प्रारम्भ किया है और समापन अनुष्टुप छन्द में किया है। इस प्रकार महाकवि ने अपने सम्पूर्ण श्रंगारशतक में 18 छन्दों का प्रयोग किया है।

भर्तृहरि के काव्यों को देखने से एक बात पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है कि नारी के गुणों के प्रति उनकी आस्था मानो स्थिर सी हो गई। उसकी चारित्रिक पवित्रता में उनका विश्वास न के बराबर था। उनके शतकों में कहीं भी नारी के प्रति उनकी सहानुभूति का समावेश नहीं प्राप्त होता है।

सर्वत्र वे उसके आचरण के प्रति शंकालु ही बने रहे। श्रंगारशतक में कुल 103 पद्य, 18 छन्दों में निहित है जो भर्तृहरि के यौवनोल्लास का उद्गार है। इसमें श्रृंगार का उद्यम विलास चित्रित है। उसके प्रसंगों में काव्य की विभिन्न स्थिति युवक–युवतियों की विविध प्रणयक्रीड़ा, स्त्रियों के हाव–भाव, कटाक्ष एवं श्रृंगारिक चेष्टाओं का हृदयस्पर्शी वर्णन है।

संदर्भ ग्रंथ

1. संस्कृत हिन्दी कोष
2. निरूक्त–यास्क 7/19
3. सर्वानुक्रमणी–कात्यायन–1
4. पाणिनीय शिक्षा–41
5. निरूक्त 7.12.2
6. छन्दोमंजरी–गंगादास
7. वृत्तरत्नाकर–केदारभट्ट
8. संस्कृत छन्द–अलंकार एवं व्याकरण – डॉ.एस.के. ओझा
9. भर्तृहरिशतकत्रयम्–डॉ. बलवंतसिंह यादव

****

भवभूतेः धर्माऽधर्मयोर्विषयक विवेचनम्

डॉ. बालकृष्ण प्रजापति*

देवानामिदमामनन्ति मुनयःशान्तं क्रतुं चाक्षुषम् ।
रूद्धेणेदमुमाकृतव्यतिकरे स्वाङ्गेंविभक्तं द्धिधा ।
त्रैगुण्योद्भवमत्र लोकचरितं नानारसं दृश्यते–
नाट्यं भिन्नरूचेर्जनस्य बहुधाऽप्येकं समाराधनम् । ।[1]

संस्कृत नाटककारेषु महाकविकालिदासः सर्वश्रेष्ठ नाटककारः नास्त्यत्र सन्देहः यादृशी ख्यातिः कालिदासेन अर्जिता तादृशी ख्यातिः भवभूतिना अपि प्राप्ता । यदा कोऽपि नाटककारः नाटकस्य रचना करोति तदा सः नाटककारः नाट्यशास्त्रस्य अनुवर्तनं करोति । परन्तु भवभूतिः न केवल नाट्यशास्त्रस्य अनुर्वतनंकरोति अपितु स्वपरिचय समये स्वस्य कृते पदवाक्यप्रमाणज्ञः इति संबोधनं करोति । भवभूते विषये '' श्रीकण्ठपदलांछनो भवभूतिर्नाम पदवाक्यप्रमाणज्ञः'' इत्यस्योल्लेखः सर्वत्र क्रियमाणो वर्तते । भवभूतेः रूपकेषु स्थाने–स्थाने धर्माधर्म विषयक शब्दानां पारिभाषिक शब्दानां प्रयोग बाहुल्यं दृश्यते ।

सूत्रधारः आ आस्त्येतन्निमित्ताम्[2] महोत्सवस्य गानवाद्यस्य सहसा समाप्तौ सूत्रधारस्तस्य कारणं ज्ञातुमिच्छति । तदानटोवदति– श्री वशिष्ठस्याधिष्ठातृत्वे भगवतीं अरून्धतीमग्रे विधाय श्रीरामस्य कौशल्यादयो जामातुराश्रमे सम्भूयमाने यज्ञे गताः । यज्ञे इत्यत्र ''निमित्तात्कर्मयोगे'' सप्तमी । अतः समागतानां महानुभावानां स्वगुरूजनानां अनुपस्थितौ महोत्सवसमारम्भः सवर्था अनुचितः अधर्म इति ।

अत्र खलु यज्ञस्य अनुष्ठानं धर्म विषयकम् तथा च परिजनानां
श्रेष्ठजनानां समाजस्यानुपस्थितौ महोत्सव अधर्म इति ।
अपत्यकृतिकाम्[3]

अपत्यकृतिकाविधानं धर्मशास्त्रीयम् । कृत्रिमपुत्रीरूपेण गृहीता पुत्री'' अथवा एतस्या गर्भात् यः पुत्रो भविष्यति सः मम् पुत्र'' इति शपथ पूर्वकं या कन्या दीयते सैव ''अपत्यकृतिका'' कथ्यते । मनुः वशिष्ठोऽपि–

''अभ्रातृकां प्रदस्यामि तुभ्यं कल्यामलङ्.कृतम ।
अस्यां यो जायते पुत्रः स में पुत्रो भवेदिति । । वशिष्ठः
अपुत्रोऽनेन विधिना सुतां कुर्वन्ति पुत्रिकाम् ।
यदपत्यं भवेदस्यां तन्मम् स्यात् स्वधारकम् । ।
अनेन तु विधानेन पुरा चक्रेऽथ पुत्रिकम् ।
विवृद्ध्यर्थं स्ववंशस्य स्वयं दक्षः प्रजापतिः । । मनुः ।

शान्ताम्[4]

श्रूयते दसरथस्यैकां शान्तानाम्नी कन्याप्यासीत् । परंचात्रकथाऽपि ''राजा रोमपादः निःसन्तानत्वात् राज्ञो दशरथात् तस्य शान्तां गृहीतवान । अनन्तरंच विभाण्डकस्य पुत्रेण ऋष्यश्रृंगेण सह तस्य विवाहं कृतवान् । एतस्मादेव ऋष्यश्रृंगाः दशरथस्य जामातेति ।

प्रारम्भिके जीवने ऋष्यश्रृंगः एकान्तसेवी आसीत् । सांसारिक विषयाणां ज्ञानमपि नाऽसीदिति । अंगदेशस्य राजा रामपादः अनावृष्टिकारणद् वैश्याभिर्व्याजेन राज्यमानीतवान् ऋष्यश्रृंगमिति । तस्याऽऽगमनेनैव वृष्टिरभूत । अतः प्रसन्नोराजा शान्तां प्रदत्तावान् रामायणे तु शान्ता दशरथस्य कन्या नास्ति अपितु रोमपादस्यैव कन्याऽस्ति–

''एवमंड.गधिपेनैव गणिकाभिर्ऋषेः सुतः ।
आनीतोऽवर्षयद्देवः शान्ता चास्मै प्रदीयते ।'' रामायणम् बालकाण्डम् ।
विष्णु पुराणेऽपि एतस्या कथाया उल्लेखोऽस्ति यत् दशरथेन
सन्तानहीनाय रोमपादाय शान्तानाम्नी कन्या प्रदत्तोति ।

आहिताग्निनाम्[5]

आहिताः आधानसंस्कारेण स्थापिताः, अग्नयः, दक्षिणाग्निगार्हपत्याह्वनीयाख्याः यैस्ते आहिताग्नयस्तेषामिति । स्वीकृताग्निहोत्र कर्मणामिति यावत् । अग्निहोत्र व्रतवतामिति । आहिताग्नयस्ते भवन्ति यैः विवाह कालादेव प्रतिदिनं प्रातः सायम् वैवाहिकेऽग्नौ हवनस्य व्रतं स्वीकृतम् । व्रतमिदं जीवनपर्यनतं पालनीयम् भवति । मृत्योरनन्तरं तस्य दाहसंस्कारः अपि तदग्नावेव तदर्थं चिरकालनिमित्ताम् अनिवार्यकारणं विना बहिगमनं निषिद्धम्–

निक्षिप्याग्निं स्वदारेषु परिकल्प्यार्त्विजं यथा ।
प्रवसेत् कार्यवान् विप्रो, वृथैव न चिरं वसेत् । ।

अतएव जनकः अयोध्यायां चिरकालं यावत् स्थातुं नाशक्यत् । यतोह्यनुष्ठानन्तु जनकाय नित्यकर्म इवासीत् ।

अष्टावक्रः[6]

अष्टसु स्थानेषु वक्रत्वात्–अष्टावक्र इत्युच्यते । अष्टावक्रविषये कथैका प्रसिद्धा । तद्यथा ''कहोड'' नामको ऋषिः स्वगुरूछ्दालकस्य कन्यया सुजातया सह विवाहं कृतवानासीत् । एकदा सुजातयाः पूर्णगर्भः महर्षिकहोडं जगाद् यद् भवान् सम्पूर्णां रात्रिम्यावत्पठति परं तन्न सत्यम् । श्रुत्वा कहोडः क्रोधनोक्तवान् यत्तवं वक्रकथनं करोति अतः अष्टावक्रो भव इति । ''यस्मात् कुक्षौ वर्तमानो ब्रवींषि तस्माद वक्रो भवितास्याष्टकृत्वः ।समये सः गर्भः'' अष्टावक्ररूपेणावतीर्णः । अष्टावक्रोऽयं मेधावी असीत् । राज्ञोजनकस्य सभायां शास्त्रार्थे पराजयाद् बन्दीजातं पितरं शास्त्रार्थ द्धारा मोचयामास । ततश्च पितुर्वरदानबलेन संगमानद्यां स्नानेन वक्रत्वान्मुक्तोऽभवतत् ।

प्रजापतिसमः 1/9

अत्रश्लोके भवभूतिना प्रजापति शब्दस्य प्रयोगः विशिष्टार्थ सृष्टि जनयति, न तत्र कुपितो भवति, अपिु पोषणमेव करोति । एवंविधः प्रजापालन तत्परो जनकस्तव पिता अस्ति । जनस्य तुलना अत्र ब्राह्मण कृता वर्तते । जनकस्य विदेहता जीवन्मुक्तता प्रसिद्धा । स जनकः सीताया: पिता । सर्वेषां अन्नन्वस्त्रादिना । भरण पोषण कर्त्री सर्वसहा पृथ्वी मातेति । तथा सर्वप्रकाशः सूर्यः एवं तपः भूतः वशिष्ठः कुल गुरूः एवं विशिष्टा मातृशक्तिः, पितृशक्तिः, गुरूभक्तिः सम्पदा च त्वया लब्धेति सौभाग्य विषयः वशिष्ठस्य कथने सर्वज्ञता व्यक्ता इति ।

दोहदः(1. अष्टावक्र कथने)

सर्ववत्या गर्भकाले या काचिदिच्छा भवेत् 'दोहदः' इत्युच्यते । तस्यावरोधे गर्भे हानिर्भवति । अतोऽवश्यमिच्छापूरणीयते । अथ दोहनम् इच्छा, अकांक्षा, स्मृहा, तृत इत्यमरः अयमिच्छावाचि अपिविशेषेण गर्भिणीच्छायां प्रयुज्यते ।

* सहायक प्राध्यापक (संस्कृत) शासकीय एस.जी.एस.पी.जी. महाविद्यालय, गंजबासौदा (म.प्र.) भारत

गर्भिण्या: इच्छापूर्तेरभावे जातको जिघृक्षुरिव भवति दोहदस्याप्रदानेन गर्भो दोषमाप्नुयादिति विमर्शो भवभूतिना दोहद शब्देन प्रस्तुत: ।

गोदानम् (1/18 सीताया: कथनम्)

गावो लोमानि केशा: दीयन्ते कर्त्यन्ते यस्मिन स: संस्कारविशेषस: 'गोदान' इति पदेन प्रसिद्धा: । संस्कारोऽयम् विवाहात्पूर्वं भवति । यद्यपि अन्यै: कैश्चिद्टीकाकारै: विवाहपूर्वम् गवां वितरणम् गोदानमिति स्वीकृतं । परंचात्र केशकर्तनार्थ रूपं गोदानमेव समीचीनम् ।

पराकसन्तापन प्रभृति: (4/3)

पराकसन्तापन प्रमुखानि व्रतानीति । अत्र द्वयोरपि धर्मशास्त्रीय: संकेत: कविनऽत्र प्रदत्ता: । पराकव्रतं द्वादशदिनै: पूर्णं भवति । अस्मिन् पराकव्रते द्वादशदिनं यावद् उपवास: करणीयो भवति–

''द्वादशाहोपवासेन पराक: परिकीर्तित: ।''7
''यतात्मनोऽप्रमत्तास्य द्वादशाहमभोजनम् ।
पराकोनाम कृच्छ्रोऽयं सर्वपापापोदन: ।''8

एवं सान्तापनस्याऽपि नियम: । सान्तापन्नतन्तु दिनद्वयं पालनीयम् भवति । एतस्मिन व्रते एकस्मिन दिने पंचामृतम्, कुशोदकमेव सेवनीयम् भवति । द्वितीय दिने चोपवासा:–

''गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पि: कुशोदकम् ।
एक रात्रोपवासश्च कृच्छ्रं सन्तापनं स्मृतम् ।।''9

इति मनुना निर्दिष्टम् । याज्ञवल्क्येनापि सान्तपनस्य विषये स्वमतम् स्थापितं । तद्यथा –

''गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पि: कुशोदकम् ।
जग्ध्वापरेऽहयुपवसेत् कृच्छं सान्तपनं चरन् ।
पृथकसान्तपनद्रव्यै: षडह: सोपवासक: ।
सप्ताहेन तु कृच्छ्रोऽयं महासान्तपन: स्मृत: ।।10

याज्ञवल्क्यौ–जगौ– *''एष व: श्लाध्यसंबन्धी जनकानां कुलोदवह: ।*
याज्ञवल्क्यो मुनिर्यसमै ब्रह्मपरायणं जगौ ।।'' (4/9 उ.रा)

याज्ञवल्क्य: शुक्लयजुर्वेदस्य प्रधानो ऋषि: । एतेनैव याज्ञवल्क्यसंहिताया निर्माणं कृतम् । एषो जनकस्य गुरूरपि बृहदारण्यकोपनिषदि द्वयोश्चर्चार्या: प्रसंगा: सन्ति–

''जनकोह वैदेह: कूचादुपावसर्पन्नुवाच नमस्तेऽस्तु याज्ञवल्क्यानु मा शाधीति से होवाच–––आढ्य: सन्नधीतवेद उक्तोपनिषद इतो विमुच्यमान: क्व गमिष्यसीति नाहं तदभगवन्वेद यत्र गमिष्यामि– इत्यर्थ वै तेऽहं तद्धक्षयामि यत्र गमिष्यसि'' ।11 अत्रैव ब्रह्मपरायणमिति पदं प्रयुक्तं । ब्रह्मपरायणं समस्त ब्रह्मविद्याया: रहस्यम् । अत्र पारायणस्यार्थ: । पारस्य अयनमिति पारायणम् ।

उपसंहार–

भारतीय संस्कृत नाट्य परम्परा प्रचीनाऽपि समृद्धाप्यस्तीति विज्ञा विदन्ति । भवभूति: संस्कृत नाट्यसाहित्य संसारस्य जाज्ज्वल्यमानं नक्षत्रं । भवभूतिना पदे–पदे धर्मशास्त्रमर्नाट्यसाहित्ये विद्यमाना:, । भवभूते: रूपकेषु धर्माधर्मशास्त्रीयं विवेचन प्रचुरतया प्राप्यते । ''समांस मधुपर्क'' पराक: सान्तपन इत्यादिशु शब्देशु धर्मशास्त्रस्य रहस्यमुद्धाटितम् । अत्र येतेशब्दा: पारिभाषिकार्थे प्रयुक्ता: ।

संदर्भ संकेत–

1. मालविकाग्निमित्रम्–कालिदास 1–4
2. उत्तररामचरितम् अंक 1 पृष्ठ 18
3. उत्तररामचरितम् 1/4
4. उत्तररामचरितम् 1/4
5. उत्तररामचरितम् 1/4
6. उत्तररामचरितम् अंक 1 पृष्ठ 32
7. याज्ञवल्क्य 3/21
8. मनुस्मृति: 11/215
9. मनुस्मृति: 11/212
10. याज्ञवल्क्य 3/225–226
11. बृहदारण्यक उपनिषद् 4/211

****

संत साहित्याचे गहन चिंतन - वर्तमान काळाची गरज

डॉ. शैलजा साबले *

प्रस्तावना -

आजच्या वर्तमान काळात जी परिस्थिती आहे. त्या परिस्थितीत संतांचे साहित्य, उपदेश, विचार अभंग, दोहे हे फार मौलिक व मर्मस्पर्शी आहेत. ते या काळातीत धावत्या युगात मृगजळाच्या मागे धावणाऱ्या मोठ्या समुहाला विसावा देवू शकतात, आधुनिकीकरण कम्प्यूटरीकरण, वैज्ञानिक युगाची झगझगाट, फैशन, हिंसा, आंतकवाद वैश्वीकरण, स्वार्थ या सगळ्यांवर अनेक गोष्टी मूळे मानवतेला वारंवार धक्का बसतो. नैतिक, सामाजिक, भावनिक व मानवीय मूल्यांचा-हास होतोय. त्यामूळे नैतिक पतन, व्यावसायिकरण, नाते-गोते-सगे सोयरे यांच्या संबंधात कोठे तरी दुरावा जाणवतो. मनात वाईट विकारांचा गलबल उडतो त्यामूळे मानसिक, भौतिक परिस्थिति दूशित होऊन त्याचा परिणाम सामाजिक, आर्थिक भौतिक, व्यवहारिक इत्यादि क्षेत्रात दिसून येतो. अश्या प्रकारच्या सहज मानवी प्रवृत्ती व गुणांचा. कल सत्कर्म व सत्प्रवृत्ती कड़े वळविव्यासाठी संताचे साहित्य त्यांचे अनमोल वचन, अनमोल कृति अत्यन्त महत्वाच्या व आवश्यक आहेत. संतांच्या गोड अनुभवांचा, भक्ती, प्रेम, श्रद्धा, संगठन इ. सदगुणी व्यवहारांचा शिक्का बसवुशकतात इतके सामर्थ्य यांच्या साहित्यात नक्कीच आहे असेवाटते, फक्त ते तपासून त्याची विभागणी करूण नेमके योग्य काय? हे पाहण्यासाठी गहन चिंतन करावे. दोन्ही संतांच्या साहित्य सागरात खोलकर डुबकी मारावी आणि तळगाळातील थोड़ी बहुत रत्ने शोधून त्यांचा प्रकाश, त्यांचे महत्व व उपयोग काय असेल ते पहावे.

भारतीय संस्कृतीचे आणि उदात्ता जीवन मूल्यांचे अधिष्ठान बहुभाषीय भारतीय साहित्याला लाभले आहे. पण भारतातील इतर प्रदेशांपेक्षा महाराष्ट्राची प्रकृति मूलत: भिन्न आहे. वीरत्व आणि वैराग्याच्या परम्परा येथे एकत्र नांदल्या आहेत. रंगेल पणासोबत रग्गेल पणा ही अविस्मरणीय आहे. या सर्वच भावनांचे व विचारांचे प्रवाह मराठी साहित्यात एकत्र आले. मराठीची साहित्य गंगा प्रवृत्ती आणि निवृत्तीच्या काठाकाठाने वाहिली. आणि हया दोन्ही तीरांवरील लोक जीवनाला तिने सम्पन्नता प्राप्त करून दिली. कर्मकांडा विरूद्ध बंड, जन सामान्यां विषयी कळवळा, भाषेचा ज्वलंत अभिमान ''दुरितांचे तिमीर नष्ट करून तेथे ज्ञानाची पव्हे'' उघडण्याचा जाणीवपूर्वक प्रयत्न दिसून येतो. अभंगातील सात्विक वृत्ती पासून ते लावणी तील रसिक वृत्ती पर्यन्त मानवी जीवनाच्या विविध अंगाचे दर्शन येथे घडविले आहे. ज्या भूमीने आणि भाषेने या साहित्याला जन्म दिला, संस्कार दिले, जोपासना केली त्या महाराष्ट्राची व मराठी भाषेची परम्परा अद्धितीय आहे.

या प्रमाणेच इतर भाषांमध्ये ही अशी साहित्य गंगा प्रवाहित आहे. तिच्या प्रवाहाचा आनंद घेण्यासाठी आता परत तिची उजळणी करून तिचे दर्शन घेऊन प्रदक्षिणा करण्याची अत्यंत गरज भासते आहे. कारण हया नवयुगात, आधुनिक जगात ज्या जीवन मूल्यांचा ह्रासहोतोय, सहज जीवन जगायला फार अडचणी व अनेक त्रासांचा सारखा सामना करावा लागतोय, तो सामना करण्यासाठी, परिस्थितिशी झूंज घेण्यासाठी सुदृढ व बलशाली, सहृदय, सहनशील मनाची अत्यंत गरज आहे. ही मानसिक शक्ति केवल उत्कृष्ट साहित्याने, थोर पुरूषांच्या ग्रंथ वाचन व पठनाने, ईश्वर भक्तिने मिळू शकते. म्हणून आपल्या प्राचीन उपयोगी साठवणीची जोपासना करायला हवी.

साहित्यात निर्माणझालेली अरूचि, अनास्था दिसून येण्याचे मुख्य कारण आजचे वैज्ञानिक व टेक्नीकल युग असावे. कारण हे जग कमी वेळेत जास्त धन लाभ कमावून, जास्त सुखोपभोग, भौतिक सुख-ऐश्वर्य, दुसऱ्यांचे पाय खेचून वरचढ जाण्याची इच्छा यामुळे आजच्या काळातला माणूस कोणत्याही प्रकारची, काही ही पर्वा न करता, कोणते ही काम करायला तत्पर असतो. त्यामुळेच एक अविश्रांत, अविरत, धावता प्रवास करीत आहे. फक्त एका क्षणाच्या शांतते साठी, समाधाना साठी तो धडपड करीत असतो.

पण ही धडपड त्याची व्यर्थ आणि खोटी ठरते. कारण हया वैज्ञानिक व कम्प्यूटराइज्ड यांत्रिक जगात मनाला. भावनांना, संबंधानां, काही मोलच उरले नाही. जसा एरवादा रोबोट (यांत्रिक मानव), त्याच्या कडून जे काम घ्यायचे आहे तसे त्याची मांडणी करून, बटने फिरवून त्याचा उपयोग करतो. त्यावेळी तो एक निर्जीव भावनाविहीन प्राणी असतो. त्या प्रमाणेच आजचा मानव भावनाविहीन होत चालला आहे. तो अशाश्वत सुखा साठी धडपडीत यांत्रिक युगात गुरफटून गेला आहे. त्याला आपल्या जीवनातील नैतिक मूल्यांची आठवण म्हणा किंवा त्वाची आता गरज उरली नाही असे वाटू लागले आहे. वर-वर, तात्पूर्ते औपचारिक व्यवहार, औपचारिक जीवन उरले आहे असे जाणवते पण हे जीवन काय! खरे जीवन आहे कां? मग खरे शाश्वत जीवन म्हणजे तरी काय? जीवनाचा शोध घेणे फार कठीन आहे. आपल्याला जे जीवन, जो देह मिळाला आहे, त्यालाच सार्थक करण्यासाठी प्रत्येकाने थोड़ा बहुत जर विचार केला तर नक्कीच! या जगाचा, मानवाचा व जीवनाचा उद्धार होईल.

सध्या जे वैज्ञानिक, यांत्रिक युग सुरू आहे त्यातसर्व मानव जाति भराभर प्रगति करीत आहे. आणि ती योग्य ही आहे. पण त्या सोबतच आपले नैतिक, सामाजिक मूल्यें जपून त्यांना टिकविले, वाढविले तरच त्या विज्ञानाचा व ज्ञानाचा खरा सदुपयोग होईल. या साठी जो आपल्या पूर्वजांचा साठा आहे, साहित्य आहे, वाङ्मय आहे, भावनांची, सुख-दु:खाची जाणीव आहे तिची जोपासना अतिआवश्यक आहे. यांत्रिक, टेक्निक युगात ती आता कमी होत चालली आहे. तिच्या संरक्षणा साठी आता पूर्वीचा इतिहास, पूर्वीचे साहित्य परत बघण्याची, वाचण्याची, अभ्यास करण्याची अत्यंत गरज वाटू लागली आहे.

आपण सर्वच या सुशिक्षित नवयुगात वैज्ञानिक यंत्रणेत, सुखसोयी मध्ये लिप्त झालो आहे. आणि आता हया सर्वसुखोपभोगाची सवय झाल्याने आपल्याला चिमटा बसेल असले कोणते ही कार्य करायला मना पासून तयार नसतो. सुशिक्षित म्हणता म्हणता आपण अशिक्षिता सारखे आपल्या नैतिक व सामाजिक मूल्यांचा न कळत ह्रास करित आहो.

संत साहित्य आणि वर्तमान काळ या दृष्टिकोणातून विचार करताना असे जाणवतेकी आपली भारतीय संस्कृति, कला, साहित्य, मानवता, नैतिक मूल्यें - तत्वें यांचा सर्वांगीण दृष्टिने विचार आणि आचार केल्याने एक प्रबुद्ध समाज, योग्य सुसंस्कृत मानव निर्माण होईल. या वैज्ञानिक जगात नैतिक, तात्विक, सामाजिक मूल्यें एक दुसऱ्यांशी साहचर्याने हातात-हात घेऊन

* अतिथि विद्वान (मराठी साहित्य) शासकीय माधव कला वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

एका सुंदर समाजाची, देशाची उभारणी करू शकतात इतके सामर्थ्य हया संत वाङ्मयात आणि संस्कृतित आहे.

''जगाच्या कल्याणा संतांच्या विभूति। देह कष्टविती उपकारे।
भूताची दया हे भांडवल संता। आपुली ममता नाही देही।
तुका म्हणे पराविया सुखे। अमृत हे मुखे श्रवसते।।''

हा अभंग प्रत्येक ला जीवनदर्शक, आहे. वर्तमान कालात संतांचेविचार, अनुभव, उपदेश समाजाला पोषक व उपयोगी आहेत. हया जगात विविध जाती, धर्म, आश्रम असले तरी हयांचे जीवन अधयात्मनिष्ठ व मानवनिष्ठ आहेत. भारताच्या विविध क्षेत्रात फार प्राचीन काळा पासून अनेक महामानव होऊन गेलेत. त्यांनी समाजाचे आणि देशाचे आध्यात्मिक नेतृत्व केले. त्यांनी विश्व मानव्याचा ध्यास घेतला. अहिंसा आणि करूणा यांची शिकवण लोकांना दिली. दिव्याने दिवा पेटवावा त्या प्रमाणे भारतीय लोक जीवनात प्रत्येक शतकात महामानव निर्माण झालेले आहेत. त्या मुळेच भारतीय संस्कृतीला व भारतीय अस्मितेला वैभवशाली रूप मिळाले. संस्कृती ही वैश्विक पातळी वरच्या मानवसमूहाची जीवन पद्धती असते.

ज्यामुळे व्यक्ती आणि समाज, समाज आणि देश, देश आणि धर्म यांना समृद्ध होता येते, रामायण, महाभारत, भागवत ही ग्रंथे, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, एकनाथ, नामदेव, रामदास, कबीर, तुलसीदास, मीरा, नानक, इत्यादि अनेक संत व त्यांचे साहित्य हे. संस्कृति व अस्मिते चे दर्पण आहेत. या ग्रंथा तील आदर्शवाद, मानवी संघर्ष, मानवी कल्याण, मानवी सुख व आदर्श आज ही मनाला व जीवनाला मोहविणारे आहे. जीवनाची परिपूर्ती संसारात राहुन कशी करता येईल याचा आदर्श संतांनी आपल्या संपूर्ण जीवन दर्शनातून घडविला आहे. आणि समाजाला राष्ट्राला एक मूल्य भाव दिला आहे. हया जगात सर्वभाषिक असे संत महात्मे निर्माण झालेत व त्यांनी आपल्या प्रादेशिक भाषेतून ईश्वर चिंतनाचा मार्ग दाखविला आणि संतांची एक घट्ट अशी साखळी निर्माण झाली व ती गेल्या हजारों वर्षा पासून सतत एकसंथ पणे चालत आहे. अश्या हया महामानवांच्या शिकवणीतून व अनुभवातून समाज मन घडत आहे. म्हणूनच यांचे अनुभव व विचार वर्तमान काळा साठी पोषक ठरू शकतात.

आपल्या समाजाच्या प्रकृतीत विकृती निर्माण झाल्याची अनेक लक्षणे आज दिसत आहेत. काल परवा पर्यत आदर्श वाद जपणा–या या आपल्या समाजाचे असे कां झाले, तेही इतक्या अल्पकाळत का झाले, याची उत्तरे शोध ण्याचा प्रयत्न अनेक समाज धुरिणांनी केला, ठोस उपाय मात्र अजून कोणालाही सापडत नाहीत. परिणामी आदर्शवाद जवळ जवळ संपुष्टात आला आहे. तो उरला आहे केवल पाठयपुस्तकात आणि राजकारण पटूंच्या व बोल घेवडया समाज धुरिणांच्या व्याख्यानांत. उदारमतवादाच्याही चिंध्याझाल्या. परमत सहिष्णुता हा बलहीनांचा सद्गुण असा समज झालेला समाज अधिकाधिक अहिष्णू बनत चालला आहे. असहिष्णुता ही विवेक हीनांची मक्तेदारी असते हे न ओळखण्या इतपत समाजाची विकृती बळावली की बलवान आणि उसनी शक्ती मिळालेले तथाकथित बलवान यांची युती अज्ञ आणि अल्पज्ञ समाज घटकांचा पुरता बुद्धिभेद करून त्यांना विकारवश करून सोडते तसेच आपल्या समाजाचे सध्या झाले असल्याचे ध्यानी येते. समाजाचे विकारवश होणे विवेकाची कास सुटणे, हे या अभद्र सुतीच्या पथ्यावरच पडणारे असते, कारण भावनिक हलकल्लोळ माजवत सर्व समाज घटकांचा बुद्धिभेद करण्याचे कारस्थान रचणे त्याच्या साह्याने सोपे जाते.

एकरंगी, एकसुरी, एकताली हे त्या समाजाच्या प्रकृती अस्वास्थाचे लक्षण आहे. एकाच स्वप्नामागे धावणा–या समाजात दुसरे काही होणे संभवत नाही. आपण सारेच विनाकारण एकास्वप्नामागे धावत आहोत. स्वप्न पुरे झाले तरी धावणे थांबवत नाही याची उमज समाज घटकांना होइल तेव्हाच आपल्या जीवन क्रमाचा पुनर्विचार होईल जुन्या नव्या सामाजिक व्यक्तीगत समस्यांना नवी उत्तरे, शोधणे, यालाच पुनर्विचार करणे म्हणता येईल विचारांची व विवेकाची साथ संगत सोडलेल्यांना पुनर्विचार करणे जमणार नाही. पुनर्विचार झाल्या शिवाय समाजाची मानसिकता बदलणार नाही. मानसिकता बदलली नाही तर सर्द क्षेत्रीय प्रगती होणार नाही. सर्व क्षेत्रीय प्रगती शिवाय उद्धार होणार नाही. हे समाज घटक ध्यानात घेतील तेव्हाच सांस्कृतिक परिवर्तनाचे वारे वाहू लागतीत.

साहित्य म्हणजे काय? तर समान रूपाने सर्वांचे हित ज्यात सामावलेले आहे असे ते साहित्य होय. साहित्य बरोबर रूची प्रमाणे समान असले तर तो पदार्थ उत्ताम बनतो. त्याच प्रमाणे समान हितांची रक्षा करून ज्यात समानतेचे संरक्षण सामावले आहे, असे मानवी मन जोपासून, भाव–भावनांचा, संबंधाचा व नैतीक, सामाजिक, मूल्यें यांचा योग्य, ठराविक उपयोग झाल्यास नक्कीच एक प्रभावी, उत्कृष्ट, संवेदनशील मानव तयार होईल. आणि त्याचे सुदृढ संगोपन करून ही मूल्यं हस्तांतरित होऊन एक बलशाली सजीव, सृदृढ वैज्ञानिक ज्ञानाने परिपूर्ण योग्य, कौतुकास्पद समाजाची उभारणी करता येईल इतके सामर्थ्य या साहित्यात आहे. कुसुमाग्रजांच्या मता प्रमाणे –

''साहित्य म्हणजे जीवनाच्या खंडतर अनुभवां पासून पलायन नव्हे, तर चांगल आणि परिपूर्ण जीवन कसं जगावं, हे सांगणारा एक मार्ग आहे. मानवी मूर्खपणा सहन करण्याची शक्ती जे वाढवतं, मानवी वेदना आणि भोग या बाबत जे संवेदन क्षम आणि हलवं बनवंत, शिवाय आत्म केन्द्रितता आणि संकुचित वृत्ती जे कमी करतं ते साहित्य।''

अश्या साहित्याची उभारणी बाराव्या तेराव्या शतका पासून झाली आहे. या महाराष्ट्रातील मराठी साहित्यात आलेली ही संत परंपरा म्हणजे संत ज्ञानदेव, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम, समर्थ रामदास स्वामी यांच्ये वाङ्मय, साहित्य आणि वारकरी संप्रदायाचे कार्य, सामाजिक, नैतीक, राजकीय अश्या अनेक विषयांवर विचार व्यक्तकरणारे आहे. ते स्वानुभवी, उपदेशात्मक व प्रासंगिक आहेत. जे 20 व्या, 21 व्या शतकात प्रखरतेने मानवी जीवनाची व मौलिक मूल्यांची जोपासना करण्यास समर्थ आहे.

संदर्भ ग्रंथ :–

- साहित्य आणि सामाजिक संदर्भ –रा.ग.जाधव
- संत वाड:मयाची सामाजिक फलश्रुती –डॉ.गं.बा.सरदार
- संत साहित्य चिंतन –डॉ.यु.म.पठाण
- प्राचीन मराठी वाड:मयाचा इतिहास –ल.रा.नसिराबादकर
- मुक्त आनंदधन–देवीदास पोरे
- साक्षात्कारी संत तुकाराम–डॉ.शं.दा.पेंडसे
- भारतीय परंपरा आणि कबीर–सौ.पद्मिनी राजेपटवर्धन

****

संत तुकाराम व संत कबीर यांच्या साहित्याचा, विचार वैभवांचा संशोधनात्मक अभ्यास

डॉ. शैलजा साबले *

महाराष्ट्रातील मराठी साहित्यात आलेली संत परंपरा त्यांचे वाङ:मय साहित्य आणि वारकरी संप्रदायाचे कार्य, जगाच्या कल्याणा साठी होते. ते सामाजिक नैतीक, राजकीय विषयांवर आधारित आहे. तसेच हिंदी साहित्यात ही संत परंपरा कालक्रमाने आली आहे. साहित्य कोणत्याही भाषेचे असो. ते सतत प्रगत पथावर कार्यरत आहे. तिच्या निर्मितीची परंपरा सर्वच वाङ:मयात दिसून येते. आपल्या प्राचीन काळात हया साहित्याला निर्माण करणारे संत, महापुरूष प्रत्येक भाषीकां मध्ये असतात. फक्त त्यांची कामगिरी, त्यांचे समाजोद्धाराचे महद् कार्य पडताळून पाहण्याची गरज आजच्या वर्गाला अत्यन्त आवश्यक आहे. कारण त्यांनी काळाच्या गरजे प्रमाणे, स्वानुभवरचित, प्रसंगानुरूप साहित्याची उभारणी केली असते, आणि ती शिकवण जगाला देत, जगाला सावरीत त्यांचा व स्वत:चा उद्धार करीत शिकवण देत असतात. अश्या हया संदर्भातून आपल्या संतमालिकेतील तुकाराम महाराजांच्या विचारसरणीचे व समान कार्य शैली असलेले हिंदी साहित्यातील गाजलेले संत कबीर दास एक युग पुरूष व महाकवी म्हणून ओळखले जातात. हया दोन्ही संतां मधये दोनशे वर्षाचे अंतर असून ही त्यांच्यात बरीच साम्यता आहे. म्हणुनच कबीर दासांची निवड केली आहे. दोन्ही संतांची सर्वच बाबतीत एकसारखीच परिस्थिती आहे. त्यांच्या समाजोध्दाराचे कार्य, जगाच्या उद्धाराची असलेली तळमळ सामाजिक नैतीक, बौद्धिक पातळीवर असणारे त्यांचे काव्य, अभंग व दोहे यात बरेचसे साम्य आहे. शिवाय भक्ती मार्गाला ही दोघांनी समानच महत्व देऊन परमार्थ व प्रपंच करून भगवत् प्राप्ति करू शकतो आणि हया सोप्या मार्गातून समाजाचा, लोकांचा नैतीक, बौद्धीक व सामाजिक पातळी उंचावून उद्धार करू शकतो. असे खात्रीपूर्वक कळकळी ने सांगितले आहे.

तुकाराम व कबीर हे दोघेही आप आपल्या कालातील गाजलेले कवी आहेत. दोघांच्या ही काळात सुमारे दोनशे वर्षचिअंतर असून, तुकाराम हे महाराष्ट्रातील मराठी संत कवी व कबीर हे उत्तर प्रदेशाकडील हिंदी संत कवी आहेत. दोघांची भाषा वेगळी असली तरी त्यांनी केलेले कार्य एकसारखेच आहेत. त्याच्या काळाची परिस्थिती एकसारखी आहे. दोघे ही व्यापारी होते. शिवाय दोघे ही संत कनिष्ठ जातीचे होते. त्यामुळे त्यांना सामाजिक अवहेलना सहन करावी लागली. वर्णाश्रमाच्या बंधनात अडकल्याने जात तर कनिष्ठ होतीच, परंतु त्यांना शिक्षणात व समाजात योग्य असा बरोबरीचा अधिकार नव्हता, म्हणून दोघांनी ही वर्णाश्रमावर कोरडे ओढले आहेत. आपापल्या काव्य रचने द्वारे समाजाला शिकवण दिली आहे. त्यांच्या काव्यातील विचार एक सारखेच आहेत. कारण दोघांनी ही एकाच परिस्थितीला अनुसरून अनुभवाच्या आधारे काव्य रचिले आहे. परिस्थितीने खचून, त्रासाने थकून दोघानी ही परमेश्वरा कड़े धाव घेतली आहे. आपली सुख-दु:खे देवाला सांगावी, म्हणजे तो योग्य मार्ग दाखवितो. असे आत्म विश्वासाने सांगून त्यानी आपापल्या जातीतील लोकांना विसावा देण्यासाठी परमार्थाला प्रपंचात, सामाजिक जीवनात महत्व दिले. प्रपंच व परमार्थ दोन्ही करून मोक्ष प्राप्ती होते, ही शिकवण दोघांनी जगाला दिली आहे.

दोघांनी आपल्या पूर्व साहित्य परपरेला अनुसरून, त्यात आपल्या अनुभवाची भर घालून अंभग व दोहे निर्मीले आहे. तुकारामांच्या पूर्वी ज्ञानेश्वर, नामदेव, एकनाथ, तुकाराम अशी परंपरा चालत आली आहे. हयांनी गीतेचे तत्वज्ञान मराठीत करून, लोकांना भक्तीचा मार्ग दाखवून त्यांचे कल्याण केले आहे. अश्या प्रकारे हया संतांनी जगासाठी जी काही कार्य केलेली आहे, तिच कार्य तुकाबांनी केली आहे. त्यांगी सांगितलेल्या ज्ञानाला आणखी अगदी सोप्या भाषेत करून् स्वत: च्या अनुभवनातून स्पष्ट करून सांगितले आहे. आणि भक्तीचा सरळ-सोपा मार्ग दाखविला आहे. त्याच प्रमाणे कबीरानीआपल्या पूर्व पंरपरेला अनुसरून म्हणजे रामानुजाचार्य, माध्वाचार्य जयदेव स्वामी, रामानंद स्वामी, वल्लभाचार्य, चैतन्यप्रभु, नामदेवहया सर्व संतानी जगाच्या कल्याणा करिता जी कार्ये केली आहे आणि भक्तीचा मार्ग लोकांना दाखविला आहे. त्याच मार्गाचे अनुकरण करून आणि पारिस्थितीनुरूप निर्गुण भक्तीचा मार्ग दाखवून भक्तीचा प्रसार केलेला आहे. दोन्ही संतानी आपापल्या कालक्रमा प्रमाणे त्यानुसार कालातीत घटनाचा समावेश करून सामान्य जनांना जागे केले आहे. आपल्या जाती, धर्म व समाजाला न विसरता पूर्व साहित्याला सोप्या भाषेत करून पूढे वाढविले आहे. दोघांनी समाजाला योग्य तो मार्ग दाखतून प्रपंच व परमार्थ दोन्ही शिकविला आहे. शिवाय तो सरल, सोप्या, साध्या व गोड भाषेत असून त्यात त्यांच्या अनुभवाची भर असल्याने तो सगळयाना पटला व रूचला आहे. त्यामुळेच त्याची काव्यें श्रेष्ठ संत कवीमध्ये मानाचे स्थान घेऊन उठून दिसत आहेत.

दोघे ही संत आपापल्या पद्धति ने जनसामान्याना योग्य मार्ग दाखवित होते. भक्तीचा प्रचार व प्रसार करून लोकांना उपदेश करीत होते. स्वत: चे अनुभव सांगुन लोकाना जागृत करीत होते. अश्या प्रकारे जन कल्याणाचे व भक्ती प्रसाराचे कार्य करित असता आपला हा मार्ग योग्य आहे की नाहीं, आपण केलेली भक्ती बरोबर असून ती भगवंतापर्यत पोहचविल की नाहीं? अशी शंका मनात वारंवार येई. हया शंकेचे निरसन आणि आपला मार्ग योग्य आहे की नाहीं हे सांगण्या करिता एखादया संत्पुरूष रूपी गुरूची गरज आहे. हे दोघांना ही सारखे वाटू लागले. आणि दोघांना ही लवकरच त्यांच्या भक्तीला फल प्राप्त झाले व गुरूकृपा, भगवत कृपा होऊन त्यांना अनुग्रह मिळाला. तुकारामांना त्याच्या स्वप्नांत बाबाजी नावाचे संत आले आणि त्यांनी राघवचैतन्य केशव चैतन्य ही आपल्या माळेची खूण सांगून ''रामकृष्णहरि'' हा मंत्र दिला. तसेच कबीरांचे ही आहे. कबीर मुसलमान आहे की हिंदु आहे हा वाद असल्याने त्यांना शिष्य बनविण्यास कोणी तयार नव्हते. परंतु गुरू शिवाय मोक्ष नाही म्हणून कबीरांनी स्नानाला जात असणारया रामानंदाच्या पायाजवळ आले. आणि पाय लागल्यामुळे ''राम बोलो'' असे उद्धारनिघाले तेव्हापासून ''राम'' हाच गुरू मंत्र मानून कबीरानी रामानंदाना गुरू केले. या प्रमाणे दोन्ही संत कवीना गुरू मिळाले. आणि दोघांनी गुरूबद्दलची श्रद्धा विश्वास, प्रेम यांचे मनसोक्त पणे आपल्या काव्यातून वर्णन केले आहे. तुकाराम बुवा म्हणतात की माझ्या कडून सद्गुरूची सेवा घडलीच नाही तरी

* अतिथी विद्वान (मराठी साहित्य), शासकीय माधव कला वाणिज्य एवं विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

माझ्यावर गुरूची कृपा आहे. या प्रकारे दोघे ही गुरूंनी आपल्या पदरांत घेऊन आमचे जीवन सार्थकी लावून कृतार्थ केल्याचा आनंद व्यक्त करतात. आणि हाच उपदेश त्यांनी सर्व जगातील लोकांना दिला की या जन्माचे सार्थक होण्यास व भवसागर तरून जाण्यास गुरू शिवाय दुसऱ्या कोणाचाच आधार नाहीं.

अश्या रितीने गुरूचे वर्णनकरून त्यांना मन: पूर्वक वंदन करून भक्ती कशी करावी आणि ती कशी सोपी होईल की ज्यामुळे संपूर्ण जीवन उद्धरून जाईल या बद्दलचे तुकाराम व कबीर यांचे मत व उद्देश्य भवसागर तरून जाण्यास व परमेश्वराशी ऐक्य् साधण्यास भक्ती हा उत्तम व सोपा मार्ग आहे असे दोघांनी नोंदून ठेवले आहे. त्यांनी प्रियकर, सखा, माउली या बद्दलच्या प्रेमात, विरहात, मीलनात, आनंदात परमेश्वराला बसवून उत्कृष्ट रित्या भक्तीचे चित्रण केले आहे. त्याचे भक्ती रसपूर्ण काव्य वाचतांना आपण ही त्यात गुंग होऊन जातों. इतका त्या भक्तीत रसाळपणा व गोडवा आहे. या प्रमाणे भक्तीचे प्रकार सांगून, ती कशी साध्य-करायची हेसांगितल्यावर ''धार्म-वेद'' यांच्या सत्य स्वरूपाचे दर्शन करविले आहे. आणि समाजात धर्म - वेद यांच्या स्थिती चे वर्णन करून, हयांची अवहेलना करणाऱ्यांचे पाखंड खंडन करून बाहयाचारावर ही प्रहार केलेला आहे. तुकोबा हे मूर्ती पूजा मानीत होते. परंतु मूर्तीच्या नावावर स्वार्थी लोकांनी समाजाला दुशित केले होते. तुकोबांनी वर्ण व्यवस्थेच्या बंधनात राहून धर्म व वेदाचे पालन करून स्वार्थी लोकावर, धर्माच्या नावावर गैर फायदा उचलणाऱ्या भेंदू, ढोंगी लोकांवर, टीकास्त्र सोडून पाखंड-खंडन केलेले आहे. त्या वेळी समाजात असलेले सर्व प्रकारचे अज्ञान, दुष्कृत्यें, दुष्कर्मे या सर्वाचे खंडन केलेले आहे. त्याच्या स्वभावात परखड पणा असल्या मुळे लहान-थोर न मानता, कोणाची भीड न बाळगता त्यांनी जन कल्याणाची, जनजागृतीची कामगिरी पार पाडली आहे. असेच कबीरानी आपल्या कालाप्रमाणे त्यावेळी होणारे अनाचार, कुविचार धार्मिक ढोंगी भोंदू शोक, स्वार्थी-आपमतलबी गुरू याची टीका टिप्पणी केली आहे. त्यांच्यावेळी मुसलमानी साम्राज्य आल्यामुळे हिंदु मुस्लीम यांच्यातीत झगडे मिटवून त्यांच्यातील ऐक्य निर्माण करण्याकरिता कबीरानी निर्गुण पंथ निर्मीला होता. मुस्लीम अत्याचारामुळे त्यांनी मूर्तीपूजा व बाहयांचारावर प्रहार केला आहे ते जात-धर्म मानीत नव्हते. त्यांचा ईश्वर निराकार होता. तरी ही त्यांनीलोकाना उपदेश देण्याकरिता आधार म्हणून ''रामाला'' मानले आहे. परंतु राम निराकार निर्गुण अश्या स्वरूपाचा आहे. तात्पर्य दोघांनी त्यावेळी असलेले सर्व प्रकारचे सामाजिक, नैतीक, मानसिक, राजनितीक, बाहयीक अनाचार, कुविचार, कुप्रथा, बाहयांचार, स्वार्थी आपमतलबीपणा याचे खडसून खंडन करून टीकास्त्र सोडले आहे. तुकाराम व कबीर यांनी धर्म-वेद याचीनव्हे तर त्या संबंधीच्या अज्ञानाची थट्टा केली आहे. ती करताना त्याच्या वाणीत कडकपणा आला आहे. - अश्या रितीने पाखडांचे दर्शन करविल्या मुळे तुकोबांना बंडखोर कवी व कबीरांना क्रांतीकारी कवी म्हटले आहे. त्या दोघाच्या ही काव्यात अनुभवाची संपत्ती आहे. त्यांच्या साहित्यात, काव्यात, भाषा शैलीत, अनुभवांत, परिस्थितीत बरेचसे साम्य आढळते. दोघांनी स्फूट काव्ये लिहीली आहे. त्याच्या काव्याचा मुख्य हेतू भक्तीचा प्रचार व प्रसार करणे आहे. म्हणूनच त्यांचे काव्य भक्तीने ओत-प्रोत आहेत. ज्ञानदेवाच्या किंवा तुलसी दासांच्या काव्यात जसे माधुर्य, लालित्य व साहित्य चमेलीचा मंद सुंगध आहे, त्याच प्रमाणे तुकाराम व कबीर यांच्या साहित्यात सुवर्ण चंपका सारखा घमघमाट आहे. दोघे ही बहुश्रुत आहेत. त्यांचे विचार सडेतोड पणाचे असून सामान्य जनांना सहज समजतील अश्या साध्या आणि सोप्या भाषेत आहेत. ज्ञानदेवांनीवेदाचे ज्ञान मराठीत सांगितले परंतु त्याहुन ही सोप्या भाषेत तुकारामानी ते सांगितले म्हणून आज ही तुकारामांची भाषा मराठी लोकांच्या जिभेवर नाचते आहे. तशीच कबीराची भाषा हिंदी लोकाच्या जिभेवर जीवंत आहे. अनुभवाच्या भांडवलावर दोघांनी सत्नामाचा बाजार मांडला आहे. तुकोबाची भाषा शैली, रचना वेगळीच व विशिष्ट आहे. एखाद्या मोठया गोष्टीला गौणत्व, लहान गोष्टीला मोठया सफाईने महत्व देणे, विरोधी तुलनेने श्रेष्ठत्व किंवा वैगुण्य दाखविणे, मृदु, गोड शब्दानी काळजाचा ठाव घेणे, अत्यंत आदराने व मयदिने बोलणे, सलगीची भाषा बोलून भाव दाखविणे विनयाचा आश्रय घेऊन वाद टाळणे यामुळे शैलीला आगळेपण आले आहे. तसेच कबीरांचे काव्य आहे. त्यांचे लेखन स्वयंस्फूर्त असून एखादा धबधबा धो-धो वाहात यावा, त्या धबधाब्यातील जे नाद, माधुर्य गांभीर्य, सौंदर्य तेच कबीर यांच्या काव्यात आहे. त्यात कमालीचा जोश आहे, वेग आहे. तो एक धबधबा नसून पाषाण-हृदयी मेरूपर्वताला पाझर फोडणारी अखंड रसधाारा आहे.

अश्या रितीने तुकाराम व कबीर यांच्या संपूर्ण जीवनाचा, त्यांच्या कार्याचा, भक्तीचा, ईश्वर प्रेमाचा व ईश्वर भेटीचा उल्लेख करित असताना लक्षातयेते की संत कोणत्याही भाषेचे, जातीचे असोत्यांचा उद्देश्य फक्त जगाचे कल्याण व्हावे या साठीते निरंतर सातत्याने अग्रसर असतात्.

संदर्भ ग्रंथ :-

- प्राचीन मराठी वाडमयाचा इतिहास -अ.ना.देशपांडे
- साक्षात्कारी संत तुकाराम-डॉ.शं.दा.पेंडसे
- संत साहित्य चिंतन-डॉ.यु.म.पठाण
- कबीर की विचारधारा-डॉ.गोविन्द त्रिगुणायत
- भारतीय परंपरा आणि कबीर-सौ.पद्मिनी राजे पटवर्धन
- हिन्दी और मराठी के वैष्णव संत साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन - डॉ.नरहरी चिंतामणी जोगलेकर

****

Promoting Wellbeing Through Colleges: A Think Tank

Dr. Ajay Kumar Chaudhary *

Introduction

People use a range of terminology to describe the concept of wellbeing at colleges. But whatever it is called, the key issue for colleges is that emotional wellbeing is critical in developing a healthy, successful college community and this will involve developing pupils' social, emotional and behavioural skills (SEBS). Effective programmes to promote can bring numerous other benefits for colleges, particularly in relation to college improvement.

Emotional wellbeing has been described as 'a holistic, subjective state which is present when a range of feelings, among them energy, confidence, openness, enjoyment, happiness, calm, and caring, are combined and balanced'.(Stewart & Brown)

Other words are used to describe the concept of Wellbeing, for example emotional literacy, emotional intelligence and social and emotional competence. This forms part of the wider concept of mental health, which encompasses both the promotion of positive mental health and also the tackling of mental health difficulties. Whatever you call it, perhaps the key issue is that colleges have a direct influence on the emotional health of their pupils and staff; and that this, in turn, has an impact on academic and other achievement.

The three aims for promoting well being through colleges are::

- Raising pupil achievement
- Promoting social inclusion
- Reducing health inequalities.

Promoting the emotional health and wellbeing of pupils and staff can bring valuable benefits to colleges. It includes:

- Can help pupils and staff feel happier and more motivated, and prevent mental health problems
- Contributes positively to priorities like enhancing teaching and learning, raising standards, promoting social inclusion and improving behaviour and attendance
- Involves pupils more fully in the way their college operates
- Helps to meet legal, ethical and curricular obligations.

To meet the proposed criteria for colleges need to demonstrate that they:

- Provide opportunities for pupils' views to inform policy and practice
- Have a policy and code of practice for tackling bullying, which is owned, understood and implemented by all members of the college community and includes contact with external agencies
- Openly address issues of management by enabling pupils to understand what they are feeling and by building their confidence to learn
- Identify and support the emotional health needs of staff.

The range that contribute towards wellebing include:

- Being an effective and successful learner
- Making and sustaining friendships
- Dealing with and resolving conflict effectively and fairly
- Being able to solve problems with others and alone
- Managing strong feelings such as frustration, anger and anxiety
- Recovering from setbacks and persisting in the face of difficulties
- Working and playing cooperatively
- Competing fairly and losing with dignity and respect for competitors
- Recognising and standing up for your rights
- Understanding and valuing the differences between people and respecting the right of others to have beliefs and values different from your own.

Young people say that the things which have the biggest impact on their emotional wellbeing are:

- Having people to talk to
- Personal achievement
- Being praised
- Generally feeling positive about oneself

The key things that make them feel stressed are:

- Conflict
- Confrontation with authority
- Restriction of autonomy
- Exclusion by their peers

Reasons why colleges should promote Psychological Health

The first benefit of promoting Psychological Health is that it helps to ensure happier and more motivated pupils and staff who get more out of college life. But there are additional benefits. Research shows that effective programmes to promote Psychological Health make a direct contribution to college improvement in three key areas:

* Senior Lectuer, Department of Psychology, Government Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA

1. Teaching and learning

- Pupils who are more engaged in the learning process
- Pupils who can concentrate and learn better
- Improved literacy and numeracy levels
- Improved academic achievement generally, including national test results
- Better teaching
- Parents/carers who are more engaged in college life.

2. Behaviour and attendance

- Pupils who are more involved in college life and have a say in what happens
- Pupils with higher self-esteem and confidence
- Fewer pupils disengaging from learning and college
- Better behaviour in the classroom and improved attendance

3. Staff recruitment and retention

- Improved morale
- Lower absenteeism
- Better staff recruitment levels
- Better staff retention rates.

'The personal development of pupils, spiritually, morally, socially and culturally, plays a significant part in their ability to learn and to achieve. Development in both areas is essential to raising standards of attainment for all pupils'

The aim of any national educational policy includes:

- Provide opportunities for all pupils to learn and achieve
- Promote pupils' spiritual, moral, social and cultural development and prepare all pupils for the opportunities, responsibilities and experiences of life.
- Pupils' attitudes, values and personal development
- The care, guidance and support of pupils
- Partnerships with parents, other colleges and the community.

Best Way to promote well being

Developing an emotionally healthy college in which all pupils have the necessary skills to thrive has implications for every aspect of college life. Research shows that the piecemeal adoption of strategies, important as each of them might be, is less effective in terms of the impact on pupils and staff than a whole college approach, and less sustainable over the longer term.

It takes time to develop whole college practice that truly promotes Psychological Health, and programmes need to be implemented rigorously, continuously and in an emotionally literate way to get results. **The wellebing, with its emphasis on action planning and development of short-term and long-term targets, can underpin this process and provide support through your local healthy colleges programme.** Psychological Health is increasingly becoming a feature of government policy for children and young people. This is most evident in the strategy outlined in Every child matters, the researcher identified five key outcomes that are considered vital for children and young people's wellbeing:

- Being healthy
- Staying safe
- Enjoying and achieving
- Making a positive contribution
- Economic wellbeing.

The strategy specifically identifies the potential of the Wellbeing, along with Personal, Social and Health Education (PSHE) and Citizenship education, to help children develop good relationships, learn about conflict resolution The most effective programmes for promoting Psychological Health adopt a whole college approach, are implemented continuously for more than a year and are aimed at promoting positive mental health rather than reducing conduct problems and anti-social behaviour.

Desirable Experiences In College	This Might Look Like
Physiological or survival needs	
Warmth • Food • Shelter • Seeing, hearing and taking part in what's going on • Safe physical exploration • Getting to know your own body and its strengths and limits	Comfortable classroom with well-positioned equipment • Healthy meals and snacks; access to drinking water when needed • Breakfast club • Indoor and outdoor play areas • Sensory trails • Sport and challenge activities • Ponds and natural or wildareas
Safety needs	
Having boundaries • Having basic needs met hands • Knowing you are in safe	**Secure, risk-assessed sites** • Consistent, caring supervision • Simple, clearly explained rules • Clear policies and procedures for tackling and minimising bullying
Love, affection and belonging	
Feeling cared for • Having others look out for you when you can't do it for yourself • Having responsibilities and opportunities to effect change • Recognising feeling states in yourself and others • Talking, listening, exploring and reflecting on experiences	**Positive relationships and interactions with staff and peers** • Diversity and difference is valued and celebrated • Places, times and people you can go to for help and support • Pupil involvement in setting rules and expectations • Work displayed on the wall • Coat pegs with individual names on • Opportunities for group work • Peer support programmes

Self Esteem	
• Being valued, accepted and celebrated • Being noticed and listened to • Influencing outcomes • Being supported to take responsibility for outcomes • with increasing independence	• 'Star of the day'; events to be the focus of positive attention • Use of praise • Use of appropriate language to correct behaviour • Rewards and recognition systems • Opportunities to have special responsibilities
Self-actualisation	
• Exploring ideas and learning new things • Being creative • Developing talents and stretching yourself • Having an internal structure of values and principles • Recognising and using signs, symbols, image and metaphor • Being reflective • Developing shared meanings and a shared narrative	• Lessons which provide stimulation , challenge and opportunities to use diverse talents • Values and rights education • Taught courses, including thinking and • problem-solving skills • Time for reflection • Use of storytelling, language, literature and metaphor in the curriculum • Drama,art, music & movement that communicates feelings, meanings, experiences • Positive modelling by all college staff

Effective teaching and learning is a key area for colleges and a central feature of both the Primary National Strategy. These strategies outline a number of principles for effective teaching and learning, many of which have an emotional health component:

- Ensure every child succeeds: provide an inclusive education within a culture of high expectations
- Build on what learners already know: structure and pace teaching so that pupils know what is to be learnt, how and why
- Make learning vivid and real: develop understanding through enquiry, creativity, e-learning and group problem solving
- Make learning an enjoyable and challenging experience: stimulate learning through matching teaching techniques and strategies to a range of learning styles
- Enrich the learning experience: build learning skills across the curriculum
- Promote assessment for learning: make children partners in their learning
- Reinforce the basics: establish the centrality of literacy and numeracy across the curriculum.

The role of the emotions in processing information

As well as influencing a pupil's state of readiness to learn, the emotions also play a critical role in the way that information is received, processed and stored by the brain. Research in this area therefore has implications for effective teaching. This is because the brain attaches a value to what has been learned, depending on the emotions that have been experienced while it is being learned.

At its most basic, this means that if a pupil perceives something as being enjoyable to learn they are more likely to be able to retain and use it in the future, whereas if they experience boredom, it is more likely to be rejected by the brain. Perhaps most importantly, pupils have to perceive their learning as important and valuable if they are to act on it and use it. It recommends that pupils should therefore have regular opportunities to learn in their preferred learning style, and that pedagogic approaches should be varied to include direct, inductive and exploratory approaches.

The role of the teacher in modeling behaviours

Teachers and other college staff can help to reinforce positive behaviours – such as tolerance, respect, empathy and selfawareness– by modelling these in their everyday interactions with pupils. In relation to learning, teachers have a key modeling role: demonstrating resilience in the face of difficulties. Learning itself can be a difficult process, in which setbacks, uncertainty and making mistakes are a critical part of becoming more effective learners. If a pupil has seen adults get angry or overwhelmed when they face difficulties, this is likely to shape their response to such situations. You can help to counteract this by modelling the handling of confusion and frustration as part of a 'normal' learning process.

Supporting learning by improving behaviour and attendance

In college settings, and on into adult life, children and young people need to be able to behave in socially acceptable ways. These skills – which involve managing their own feelings, demonstrating empathy, communicating effectively, managing relationships and developing attachments with others – have a significant impact on personal, career and academic success.

A helpful way of looking at a pupil's behaviour in college is to see it as a communication of their underlying emotional needs. Those with challenging or withdrawn behaviour are likely to have experienced some interruption or delay in their emotional learning. If they have not learnt from a young age to regulate and calm themselves, they will not be able to do this during emotionally uncomfortable situations when they are older. The instinctive response to 'fight' or 'flight', with all its sophisticated variations as the young person grows older, will be the default position until they are equipped with the skills to understand and manage that situation more

effectively. In the meantime, this can bring negative consequences in terms of poorer college outcomes and involvement in crime. Many of these pupils may have disengaged from learning to the extent that they are not attending college. Engaging these pupils requires concerted action between those responsible for college attendance.

Supporting staff to promote learning

It also has an impact on their career decisions – and therefore on a college's ability to recruit and retain staff – since research shows that teachers leave the profession because of low morale, pressure and stress and pupil disaffection and lack of discipline.

Activities that are likely to promote staff include:

- Providing opportunities for focusing on and developing those factors which have been identified as contributing most strongly to teachers' job satisfaction, and ensure that each of them provides a positive experience:
  – working with children
  – relationships with colleagues
  – intellectual challenge
  – autonomy and independence
  – opportunities to be creative and innovative.
- Involving all staff in decision-making processes:
  – colleges which are more effective in terms of pupil learning outcomes are also more likely to take an inclusive approach to all college staff, for example by considering teachers' views, representing them fairly and involving them in policy formation.
- Taking preventive measures to address employee stress:
  – successful preventive programmes involve taking a systematic approach to identifying the issues; conducting a thorough problem analysis; implementing solutions aimed at both the environment and the individual; ensuring the support of senior management and involving all staff.

References

1. Stewart-Brown, S. (2000), quoted in Weare, K. & Gray, G. (2003) What works in developing children's emotional and social competence and wellbeing?, DfES (p.19)
2. These skills are described in DfES (2003) Developing children's social, emotional and behavioural skills: guidance
3. Ahmad et al (2003) Listening to children and young people, University of the West of England
4. Gerlach, L. and Bird, J.(2002) Feel the difference: learning in an emotionally competent college, Occasional Paper no. 6, CELSI Christ Church College, Canterbury
5. Maslow, A. (1970) Motivation and personality (2nd ed), New York: Harper and Row
6. Spear, M., Gould, K. and Lee, B. (2000) Who would be a teacher? A review of factors motivating and demotivating prospective and practising teachers, Slough: NFER
7. Rutter, M. et al (1998) cited in Weare, K. and Gray, G. NHSS (2002) Staff health and wellbeing, London: HDA

****

Effect Of Spirituality On Happiness And Mental Health

Dr. Saroj Kothari *

Abstract- Spirituality is considered as something abstract which is concerned with the higher aspects of life, eternal joy and bliss beyond the precinct of sense pleasures. The individual is an agent of his/her own happiness and that spiritual enrichment is far more important than material satisfaction. Fulfillment is critical to the health and happiness of human beings. Each of us can create his/her own happiness, independent of environmental conditions. Happiness can be achieved provided one has the wisdom of discovery, the wisdom of contentment and gratitude, the wisdom of giving, and the wisdom of self cultivation. Spirituality is associated with better health outcomes, including greater longevity, coping skills, and health related quality of life and less anxiety.

The present study was undertaken to find out the effect of spirituality on happiness and mental health. Sample consisted of 120 Males (age range between 40-45 years). Spiritual Orientation Inventory (1986) by Elkins, The Satisfaction with Life Scale (1980) by Diener for measuring happiness and Mithila Mental Health Status Inventory (1985) by Anand Kumar and Thakur was used. The data was statistically analyzed and M, SD and C.R. were obtained for happiness and mental health of high and low spiritual group. Results revealed that high spiritual group has more life satisfaction/happiness and better mental health than low spiritual group.

Inrtoduction

Spirituality is considered as something abstract which is concerned with the higher aspects of life. Spirituality which comes from the Latin, spirit us, meaning "breath of life", 'spiritual' means to be in touch with some larger, deeper, richer whole that puts our present limited situation into a new perspective. It is to have a sense of 'something beyond' or 'something more' that confers added meaning and value on where we are now. The major issue on people's minds today is meaning. Dunah Zohar and Ian Marshal (2000) pointed out that SQ, known as Spiritual Intelligence (SI), which they believe, is the most important of intellectual attributes, "It is our ultimate intelligence" ; IQ and EQ, cleverness and empathy, are not enough. So many clever, empathetic people feel there's an emptiness in the centre of their lives. Khavari (2001) says balancing our material pursuits with our intellectual, emotional and spiritual growth so that we may be happy. Spirituality is associated with better health outcomes, including greater longevity, coping skills, and health related quality of life and less anxiety. Yoga psychology has much to offer to bridge the science-spirituality divide. There has been a great deal of research on the effects of meditation on the states of mind and body. A number of studies consider mediation as a self-regulation strategy that has relevance for managing stress, hypertension and drug addictions (Goleman & Schwartz 1976; Patel 1993).

Happiness is a state of well being and contentment-a pleasurable satisfaction that comes when the individual's needs and wishes are fulfilled. Alston and Dudley (1987) propose that happiness is the ability to enjoy one's experiences, accompanied by a degree of excitement. Arkoff (1993) notes that there is much in our daily rounds that can bring us moments of pleasure. Maslow (1962) prescription for happiness is "be receptive to peak experiences". Peak experiences-the moments of awesome or intense happiness are common and precipitated by many things. Optimism and happiness are associated and so are optimism and health. Siegel (1990) says that the effects of the mind on the body are considerable and anything that offers hope or creates optimism has the potential to heal. Frankl (1984) believes that fulfillment is critical to the health and happiness of human beings. Fulfillment is the deeply felt sense that life is full, whole, and complete. Each of us can create happiness independent of environmental conditions; the wellspring of happiness is within the individual. The individual is an agent of his/her own happiness and that spiritual enrichment is far more important than material satisfaction. Happiness can be achieved provided one has the wisdom of discovery, the wisdom of contentment and gratitude, the wisdom of giving, and the wisdom of self cultivation (Tsou & Liu, 2002). Seligman (1998) defines three categories of happiness. The first is the pleasant life, the second form of happiness is the good life and third and ultimate level is the meaningful life. Happiness is not a static state. Even the happiest of people the cheeriest 10% feel blue at times, and even the bluest have their moments of joy. Twenty-three hundred years ago Aristotle concluded that more than anything else, men and women seek happiness. Health, beauty, money, or power is valued only because we expect that it will make us happy.

*** Professor & Head, Department of Psychology, Maharani Laxmi Bai Govt . PG Girls College, Indore (M.P.) INDIA**

Happiness is not something that happens. It is not the result of the good fortune or random chance. It is not something that money can buy or power command. It does not depend on outside events, but, rather, on how we interpret them. A happy state of mind is called flow (Csikszentmihalyi, 1990) Flow is the way people describe their state of mind when consciousness is harmoniously ordered, and they want to pursue whatever they are doing for its own sake.

The concept of mental health originated early in the present century. The meaning of the term mental health can be expressed in a dictionary of Psychology

"a state of good adjustment with a subjective state of well being, zest for living and the feeling that one is exercising his talents and abilities" (Atkinson, Berne & Woodworth, 1988). In the modern age of science and technology majority of people are seeking wealth, material prosperity, power and status. But in return they suffer from various psychosomatic disorders. They live in insecurity, anxiety, stress and tension which are the by-products of science and technology. In spite of wonderful inventions in the field of health and medical sciences, life expectancy has reduced due to these by-products of science and technology. Many people search for happiness in cinema, television, club, alcohol, financial security and success and other modern amenities, but ever lasting happiness and peace lies within the individual. Ornstein & Sobel (1989) highlight the connections among optimism, control and well being. The optimistic belief that we are in control, capable and competent to make changes and that is critical to health. Spiritual beliefs and activities help to reduce anxiety, stress and depression because spiritual orientation may have psychological effects, which in turn bring about somatic changes.

The present study is an attempt to test the following hypotheses-

1. There will be no significant difference between happiness of high spiritual and low spiritual people.
2. There will be no significant difference between mental health of high spiritual and low spiritual people.

There are few studies in which the effect of spirituality on happiness and mental health has been ascertained in India and foreign countries. Keeping in view the above, an attempt was made to find out the relationship of spirituality with happiness and mental health.

Method

Sample:- The sample consisted of 120 Males from Indore (age range of 40-45 years.)

Test Materials Used:

The following tests were used in this study:

1- Spiritual Orientation Inventory by Elkins (1986)
2- The Satisfaction with Life Scale by Diener (1980) for measuring happiness
3- Mithila Mental Health Status Inventory by Anand Kumar & Thakur (1985)

Above three measures are reliable and valid measures. Scoring procedure and norms are given in the manual of the tests.

Results And Discussion

To find out the effect of spirituality on happiness data were analyzed and results of results of C.R. are presented in Table-1.

Table- 1

Comparison between low and high spiritual group on happiness

Spirituality	N	M	SD	C.R.	Df	Significance Level
High	60	32.6	7.44	15.84 **	118	.01
Low	60	12.8	6.23			

Table-1 reveals that the high spiritual group (M=32.6) had significantly more satisfied with life than low spiritual group. It means that spirituality show its effect on happiness. However, the effect of spirituality on happiness is significant at. 01 level (C.R.=15.84). Thus finding of the study do not support first hypothesis, so first null hypothesis should be rejected. Frankl (1984) believes that fulfillment is critical to the health and happiness of human beings.

Fulfillment is the deeply felt sense that life is full, whole, and complete. Tsou & Liu (2002) found that the individual is an agent of his/her own happiness and that spiritual enrichment is far more important for happiness than material satisfaction. Happiness can be achieved provided one has the wisdom of discovery, the wisdom of contentment, the wisdom of gratitude, the wisdom of giving, and the wisdom of self cultivation.

To find out the effect of spirituality on mental health data were analysed and results of C.R. are presented in Table-2 & 3

Table-2

Comparison between low and high spiritual group on mental health

Spirituality	N	M	SD	C.R.	Df	Significance Level
High	60	115.40	22.4	5.87**	118	.01
Low	60	140.65	24.7			

Table-2

Comparison between low and high spiritual group on Dimensions of mental health

Spirituality	M	N	SD	C.R.	Df	Significance Level
			Egocentrism			
High	20.56	60	7.04	2.77**	118	. 01
Low	25.7	60	7.44			

Alienation						
High	25.7	60	9.48			
				3.04**	118	. 01
Low	35.71	60	15.35			
Expression						
High	17.31	60	9.69			
				2.83**	118	. 01
Low	25.4	60	12.70			
Emotional Instability						
High	26.11	60	9.69			
				2.80**	118	. 01
Low	36.11	60	16.94			
Social Non conformity						
High	17.31	60	9.27			
				3.94**	118	. 01
Low	28.11	60	11.91			

Table-2 **reveals** that the high spiritual group (M=115.40) had significantly better mental health than low spiritual group (M=140.65). Higher score on the test is indicative of poor mental health. It means that spirituality show its effect on mental health. However, the effect of spirituality on mental health is significant at. 01 level (C.R.=5.87). Thus finding of the study do not support second hypothesis, so second null hypothesis should be rejected.

Table-3 reveals that high spiritual group significantly differ from low spiritual group on all five dimensions of mental health viz; Egocentrism (C.R.=2.77), Alienation (C.R.=3.04), Expression (C.R.=2.83), Emotional instability (C.R.=2.80), and Social Non conformity (C.R.=3.94) at .01 level of significance. Results show that high spiritual group scored less than the low spiritual group which indicates that better mental health of high spiritual group.

Modern culture is spiritually dumb, not only in west but also, increasingly, in those Asian counties influenced by the west. By spiritually dumb mean we have lost our sense of fundamental values. Despite our material richness and technological expertise, our lives lack something fundamental. We live in a spiritually dumb culture characterized by materialism, expediency, narrow self-centeredness, lack of meaning and dearth of commitment, much of our suffering consists of 'diseases of meaning'.

Maslow (1962) said that "the human being needs a framework of values, a philosophy of life, a religion or religion surrogate to live by and understand by, in about the same sense he needs sunlight, calcium or love". Frankl (1963) emphasized that spiritual conflict and distress are at the root of many of the clinical pathologies of our day "Living is the process of rebirth" wrote Erich Fromm (1947) "The tragedy is that we die before we are fully born". Ornstein & Sobel (1989) highlight the connections among optimism, control and well being. They write" the optimistic belief that we are in control, capable and competent to make changes and that is critical to health. Siegel (1990) says that we should not rely on modern medicine alone. The effects of the mind on the body are considerable and anything that offers hope or creates optimism has the potential to heal.

Conclusion

It may be concluded that high spiritual group have more life satisfaction and better mental health than low spiritual group.

References

- Alston, J.P. and Dudley, C.J. (1987) Age, Occupation and Life Satisfaction Gerontologist, 13,58-61.
- Anand Kumar and Thakur, C.P. (1985) Mithila Mental Health Status Inventory, Ganga Saran & Grand Sona, Varanasi.
- Arkoff Abe and Turick S. (1993) Psychology and Personal Growth, (4th Ed.), Boston, Allyn & Bacon.
- Atkinson, John, Berne Eric and Woodworth, R.S. (1988) Dictionary of Psychology Goyl Saab, Delhi.
- Csikszentmihalyi, Mihaly (1990) Flow the Psychology of optimal experience, Harper & Row, Publishers, Inc.
- Diener, Ed, Lucas, Richard, E, Oishi, Shigchiro & Sub, Eunkook, M (2002) Looking Up and Down: Weighing Good and Bad Information in life satisfaction Judgments, Psychological Abstracts 89,7.
- Elkins, D.N., Hughes, L.L., Saunders, C, Leaf, J.A. & Hedstrom, L.J. (1986) Toward a humanistic Phenomenological spirituality: Definition, description and assessment. Symposium conducted at the meeting of the California State Psychological Association, San Fransisco.
- Frankl, V. (1984) Man's search for meaning: An introduction to Logo Therapy, 3rd Ed. New York, Simon & Schuster.
- Fromm, E. (1947) Man for himself, New York: Rinehart.
- Goleman, D. and Schwartz, G. (1976) Meditation as an intervention in stress reactivity. Journal of Consulting and Clinical Psychology, 44,456-466.
- Khavari, Khalil, A. (2001) Spiritual Intelligence. Deborah Ranchuk, Travis Willard and White Mountain Publications.
- Maslow, A.H. (1962) Toward a Psychology of being. Princeton, N.J: Von Nostrand.
- Ornstein, R. and Sobel, D. (1989) Healthy Pleasures Readings, M.A. Addison, Wesley.
- Seligman, Martin (1998) Authentic Happiness: Using the New Positive Psychology to realize your potential for lasting fulfillment, APA Presidential address
- Siegel, B.S. (1990) Love, Medicine and Miracles. New York. Perennial Library.
- Tsou, Meng-Wen and Liu, Jin Tan (2002) Happiness and domain satisfaction in Taiwan, Psychological Abstracts, 89,4.
- Zohar, Danah and Ian Marshal (2000) Connecting with our spiritual intelligence. Bloomsbury, New York and London.

****

Impact Of Gender And Level Of Education On Environmental Attitude

कमलेश उपाध्याय *

Abstract- अध्ययन का उद्देश्य कक्षा X तथा XII के छात्रों एवं छात्राओं की पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति का मापन करना था। इस हेतु 2×2 कारक अभिकल्प का उपयोग किया गया। डॉ एन.एन.श्रीवास्तव एवं शशि प्रभा दुबें के द्वारा निर्मित पर्यावरण मापनी का प्रशासन 80 प्रयोज्यों (40 छात्रों एवं 40 छात्राओं) पर यादृच्छिक प्रतिदर्श विधि का उपयोग करते हुए किया गया। अध्ययन के परिणाम दर्शाते है कि 1-कक्षा XII के छात्रों की पर्यावरण अभिवृत्ति कक्षा X के छात्रों की तुलना में अधिक सकारात्मक पायी गई। 2. अध्ययन समूहों में सम्मिलित छात्रों एवं छात्राओं की पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति में सार्थक अंतर नहीं पाया गया। 3. अध्ययन में सम्मिलित चर-शिक्षा का स्तर पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति को सार्थक रूप से, .05 विश्वास के स्तर पर प्रभावित करता है। 4. पर्यावरण के प्रति सर्वाधिक अनुकूल अभिवृत्ति 82.5% तथा प्रतिकुल अभिवृत्ति न्यूनतम 0.00% पायी गयी।

Introduction - जीवित प्राणी के चारों और पाए जाने वाले लोग स्थान, वस्तुऐं एवं प्रकृति को पर्यावरण कहते है। यह प्राकृतिक एवं मानव-निर्मित परिघटनाओं का मिश्रण है। प्राकृतिक पर्यावरण में पृथ्वी पर पाई जाने वाली जीवीय एवं अजीवीय दोनों परिस्थितियां सम्मिलित है, जबकि मानवीय पर्यावरण में मानव की परस्पर क्रियाएं उनकी गतिविधियाँ एवं उनके द्वारा बनाई गई रचनाएँ सम्मिलित है।[1]''

पर्यावरणीय मनोविज्ञान अभी विकासशील अवस्था में है यद्यपि आज यह मनोविज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा के रूप में जाना जाता है। फिशर, ब्रेल और बाम (1984) ने लिखा है कि ''पर्यावरण मनोविज्ञान वह विज्ञान है जिसके अन्तर्गत निर्मित पर्यावरण तथा प्राकृतिक पर्यावरण एवं व्यवहार के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।''[2]' पर्यावरण मनोविज्ञान का क्षेत्र नवीनतम है, परन्तु यह अनेक ज्वलंत विषयों एवं पर्यावरणीय कारकों जैसे-भीड़, ध्वनी, धूआँ, धूल, प्रकाश आदि अन्य प्रदुषणों के संबंध में अध्ययन करता है।[3]' पर्यावरण के अन्तर्गत हमें वन, भूमि, कृषि, पर्यावरण, जल, संक्रामक रोग आदि अनेक सप्रत्यों के प्रति सतर्क, जागरूक व सावधान रहने की आवश्यकता है।[4]' पर्यावरण अध्ययन कोई एक विषय नहीं हैं, यह अनेक विषयों का मेल हैं, जिनमें विज्ञान और सामाजिक अध्ययन दोनों शामिल है। अत: पर्यावरण का अध्ययन क्षेत्र काफी व्यापक है।[5]'

Methodology

Objectives - अध्ययन का उद्देश्य निम्नांकित समस्याओं का अध्ययन करना था-

A पर्यावरण अभिवृत्ति पर लिंग के प्रभाव का अध्ययन।

B पर्यावरण अभिवृत्ति पर शिक्षा के स्तर के प्रभाव का अध्ययन।

C पर्यावरण अभिवृत्ति पर लिंग तथा शिक्षा के स्तर की अन्त: क्रिया के प्रभाव का अध्ययन।

Hypothesis - उपरोक्त समस्याओं के अध्ययन हेतु यह परिकल्पना की जाती है कि निम्नांकित समूहों के पर्यावरण अभिवृत्ति मापनी संबंधी मध्यमान प्राप्तांकों में सांख्यिकीय दृष्टिकोण से कोई सार्थक अंतर नहीं पाया जाएगा -

A लिंग - छात्र एवं छात्राएँ

B शिक्षा का स्तर - कक्षा X तथा XII

C कक्षा X तथा XII की छात्रो एवं छात्राओं की पर्यावरण अभिवृत्ति संबंधी अंतर्क्रियाओं के प्राप्तांकों के मध्य।

Sampling वर्तमान अध्ययन का प्रतिदर्श म.प्र.के नीमच जिले से लिया गया है। शहरी क्षेत्र के विद्यालयों में अध्ययनरत् कक्षा X तथा XII के 40 छात्रों तथा 40 छात्राओं को यादृच्छिक रूप से प्रयोज्यों के रूप में चयन कर प्रदत्तों का संग्रहण किया गया है। सभी प्रयोज्यों की आयु सीमा 13 से 18 वर्ष के मध्य थी।

Tool Used - डॉ.एन.एन.श्रीवास्तव एवं शशि प्रभा दुबें के द्वारा निर्मित पर्यावरण मापनी का उपयोग प्रस्तुत शोध कार्य हेतु किया गया है। परीक्षण का मानकीकरण शहरी और ग्रामीण एवं कस्बाई क्षेत्रों के 12 से 22 वर्ष के 800 लड़कों और 350 लड़कियों पर किया गया है। इसकी परीक्षण-पुर्न परीक्षण विश्वसनीयता .78 तथा अर्द्ध विच्छेद विधि से .75 पायी गयी है। परीक्षण की वैधता .001 विश्वास के स्तर पर सार्थक पायी गयी है। परीक्षण में कुल 40 धनात्मक कथन है। प्रत्येक कथन में सहमत के लिए 2 अंक, अनिश्चितता के लिए 1 अंक तथा असहमत के लिए 0 अंक दिया जाता है। परीक्षण में Raw Score से Z एवं T Score पृथक-पृथक मानकों के रूप में दिए गए है। इसी प्रकार छात्रों एवं छात्राओं की पर्यावरण अभिवृत्ति श्रेणी का वर्गीकरण सीधे Raw Score से भी परीक्षण में दिया गया है।

Design- उपरोक्तानुसार परीकल्पनाओं का परीक्षण करने के लिए 2×2 कारक अभिकल्प का उपयोग किया गया है। अध्ययन के चर लिंग के दो मूल्य - छात्रों तथा छात्राओं एवं चर शिक्षा के दो मूल्य - कक्षा X तथा XII को लिया गया है। कुल 80 विद्यार्थियों पर प्रदत्त संग्रहित किए गए है।

Analysis and Data Interpretation - Table-1 (अध्ययन में सम्मिलित विभिन्न समूहों के t मूल्यों को दर्शाती तालिका)

Gender & Class	N	M's	SD'S	t-cal	df	t-critical	Decision
Only Class X	40	62.05 63.4	7.96 11.09	0.43	38	2.71	N.S.
Only Class X (M & F)	40	67.85 66.05	9.24 5.87	0.71	38	2.71	N.S.
Only Male (X & XII)	40	62.05 67.85	7.96 9.24	2.07	38	2.02	Sig at .05 Level
Only Female (X & XII)	40	63.4 66.05	11.09 5.87	0.92	38	2.71	N.S.

तालिका क्रमांक 01 जो कि अध्ययन में सम्मिलित विभिन्न समूहों के मध्यमानों, मानक विचलनों तथा t-मूल्यों को दर्शाती है। केवल छात्रों की तुलना करने पर कक्षा X तथा XII के छात्रों के मध्यमानों में सार्थक अंतर पाया गया है। t = 2.07, df 38, .05 विश्वास के स्तर पर सार्थक है। तालिका के

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत

अवलोकन से यह भी स्पष्ट है कि कक्षा X की छात्राओं तथा कक्षा XII के छात्रों की पर्यावरण अभिवृत्ति इसी कक्षा के तुल्य समुहों की तुलना में अधिक पायी गयी है। मध्यमानों के आधार पर छात्राओं की तुलना करने पर यह स्पष्ट होता है कि कक्षा X की तुलना में कक्षा XII की छात्राओं की पर्यावरण संबंधी अभिवृत्ति अधिक सकारात्मक पायी गयी है।

Table-2 छात्रों एवं छात्राओं के पर्यावरण अभिवृत्ति मापनी संबंधी मध्यमान प्राप्तांकों में अन्तर की सार्थकता को दर्शाती t मूल्य तालिका

Gender	N	M's	SD'S	t-cal	df	t-critical	Decision
Male	40	64.95	9.10	0.11	78	2.64	N.S.
Female	40	64.72	8.92				

तालिका क्रमांक 02 जो कि अध्ययन में सम्मिलित छात्रों एवं छात्राओं के मध्यमानों, मानक विचलनों तथा t–मूल्य को दर्शाती है। मध्यमानों के आधारों पर तुलना करने पर छात्राओं की तुलना में छात्रों की पर्यावरण अभिवृत्ति अधिक सकारात्मक पायी गयी।

Table-3 कक्षा X तथा XII के छात्रों एवं छात्राओं के पर्यावरण अभिवृत्ति मापनी संबंधी मध्यमान प्राप्ताकों में अन्तर की सार्थकता को दर्शाती t परीक्षण तालिका

Level of Education	N	M's	SD'S	t-cal	df	t-critical	Decision
Class X	40	62.73	9.68	2.13	78	1.99.	Sig at
Class XII	40	66.95	7.74				.05 Level

तालिका क्रमांक 03 जो कि अध्ययन में सम्मिलित कक्षा X तथा XII के विद्यार्थियों के मध्यमानों मानक विचलनों तथा t मूल्य को दर्शाती है। तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि कक्षा X तथा XII के विद्यार्थियों के मध्यमानों में सार्थक अंतर t = 2.13, df =78, P>.05 = 1.99 पाया गया है।

Table-4 अध्ययन में सम्मिलित समूहों के F-Ratio को दर्शाती तालिका

Source of Variance	df	Sum of Square	Mean Square of Variance	F-cal	F-critical	Decision
Between Group	3	407.64	135.88	1.69	4.04	N.S.
Within Group	76	6093.25	80.17			

तालिका क्रमांक 04 जो कि कक्षा X तथा XII के छात्रों एवं छात्राओं के पर्यावरण अभिवृत्ति संबंधी मध्यमान प्राप्ताकों के प्रसरण विश्लेषण को दर्शाती है। गणना करने के उपरान्त F=1.69, df = 3, .76 पाया गया है, जो कि (P>.01 = 4.04, P>.05= 2.71) सार्थकता के लिए न्यूनतम आवश्यक मान से कम है। अत: यह स्पष्ट होता है कि अध्ययन में सम्मिलित समूहों की पर्यावरण अभिवृत्ति में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया है।

Table-5

पर्यावरण अभिवृत्ति मापनी के विभिन्न स्तरों पर अध्ययन समूहों की आवृत्तियों, प्रतिशतों तथा अंशों को अभिव्यक्त करती तालिका

Grades & Gender → Category of Enviromental Attitudes	X		XII		Total Score	% of Diff. Category	Degrees
	M	F	M	F			
Most Favourable	16	15	16	19	66	82.5%	297⁰
Favourable	2	2	3	1	8	10%	36⁰
Intermediary	2	2	1	0	5	6.25%	22.5⁰
Unfavourable	0	1	0	0	1	1.25%	4.5⁰
Most Unfavourable	0	0	0	0	0	0%	00
Total	20	20	20	20	80	100%	360⁰

BAR-DIAGRAM SHOWING THE DIFFERENT LEVELS OF ENVIRONMENTAL ATTITUDE

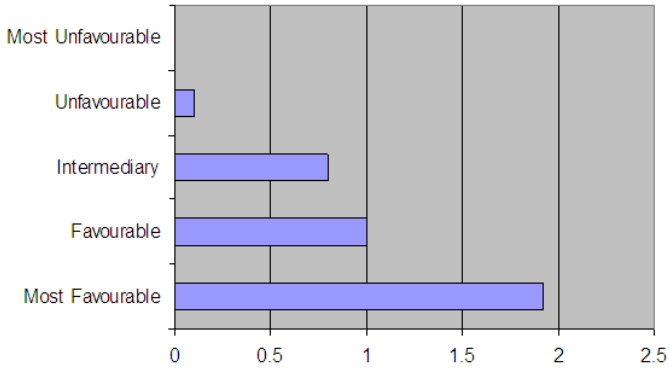

Inference -

1. कक्षा X की छात्राओं की पर्यावरण अभिवृत्ति इसी कक्षा के छात्रों की तुलना में अधिक सकारात्मक पायी गयी।
2. कक्षा XII के छात्रों की पर्यावरण अभिवृत्ति कक्षा X के छात्रों की तुलना में अधिक सकारात्मक पायी गयी।
3. कक्षा XII की छात्राओं की पर्यावरण अभिवृत्ति कक्षा X की छात्राओं की तुलना में अधिक सकारात्मक पायी गयी।
4. छात्रों की पर्यावरण अभिवृत्ति छात्राओं की तुलना में अधिक सकारात्मक पायी गयी।
5. कक्षा XII के विद्यार्थियों की पर्यावरण अभिवृत्ति कक्षा X के विद्यार्थियों से अधिक सकारात्मक पायी गयी।
6. कक्षा XII के छात्रों की पर्यावरण अभिवृत्ति इसी कक्षा की छात्राओं की तुलना में अधिक सकारात्मक पायी गयी।

Recommendations -

1. कक्षा X की छात्राओं की पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति अधिक सकारात्मक पायी गयी है। अत: उन्हें सुझाव दिया जाता है कि वे अपनी साथी छात्रों को भी पर्यावरण के प्रति जागरूक करें।
2. कक्षा XII के छात्रों की पर्यावरण के प्रति अभिवृत्ति अधिक सकारात्मक पायी गयी है। अत: इन्हें सुझाव दिया जाता है कि वे अपनी साथी छात्राओं को साथ लेकर कार्य करें।
3. अत्यधिक अनुकुल अभिवृत्ति वाले समूह से जूड़े विद्यार्थियों को अनुरोध किया जाता है कि वे पर्यावरण जागरूकता से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों, संस्थाओं एवं समारोहों में निरन्तर सम्मिलित होते रहें। ताकि समाज में पर्यावरण के प्रति विशेष चेतना का संचार हो सके।

Reference - 1. श्वेता उप्पल व अन्य, हमारा पर्यावरण, I-Ed.2007, P.N.-2-3
2. डॉ. डी.एन.श्रीवास्वत, आधुनिक समाज मनोविज्ञान, I-Ed.2007, P.N.527-528
3- Manual For E.A.S.
4. कु. स्वाती राघव ''पर्यावरण जागरूकता योग्यता का तुलनात्मक अध्ययन'' स्नातक शोध प्रोजेक्ट सत्र 2012–13, P.N.-4
5. इराक भरूचा, पर्यावरण अध्ययन, I-Ed.2006, P.N.-4

Bagh Block Printing : A Study

Dr. B.L. Patidar * Prof. Sanjay Goyal ** Dr. Sanjay Sohani ***

1. Introduction

Block printing is an ancient art that has been practiced in India for thousands of years.The earliest documented evidence of this craft are from the times of Alexander theGreat in 327 B.C., when he mentions 'beautiful printed cottons' in India.1In fact, historical data suggests that even as far back as the days of the Indus ValleyCivilization block printing was in evidence in India:Archaeological evidence from Mohenjo?Daro establishes that the complex technology ofmordant dyeing had been known in the subcontinent from at least the second

millennium B.C. The use of printing blocks in India may go as far back as 3000 B.C.,andsome historians are of the view that India may have been the original home of textileprinting.

1.1. Bagh: A Geographical Introduction

Bagh is a village in Dhar district of Madhya Pradesh. It is around 150 km from Indore, thecommercial capital of the state. Bagh gets its name from the ancient Bagheshwari Devitemple situated here, and is famous both for the ancient Bagh Caves, which are said tobe more than half a million years old,3 as well as for Bagh printing.This area is hilly terrain with thick forest cover and a considerable tribal population,mostly Bhils and Bhillalas. Other communities residing here are Other Backward Castes[OBCs] like Kurmis and Sirvi, and some Muslims, who are traditionally weavers.

1.2. Bagh Printing

Bagh printing in its current form started in 1962 when a group of Muslim Khatri weaversmigrated from the nearby Manavar to Bagh. They were originally from Sindh [now inPakistan], and had since migrated to Marwad in Rajasthan and then to Manavar. Withthem they brought the block printing technique, which is now the unique Bagh printingstyle.

2. Regions of Bagh Printing in India

Bagh printing is done exclusively in Bagh village in Dhar. However, other areas in India famous for block printing are:

- Rajasthan: Jaipur, Sanganer, Bagroo, Apli and Barmer
- Gujarat: Mandvi, Dhamardhka, Mundra, Anjar, Jamnagar, Surendranagar,Jaitpur, Ahmedabad, Baroda and Deesa
- Andhra Pradesh: Mausilipatnam
- Tamil Nadu: Tanjore
- Delhi
- Uttar Pradesh

3. Producer Communities

Bagh printing is controlled by the five to six Muslim Khatri families of Bagh village whoown the manufacturing units here. The artisans working in these units belong to variouscommunities like Rajput, Bhil, Bhillala and Teli. The Khatri families of the area havetrained these artisans. Some Scheduled Caste and OBCs are also working in thesefactories. Thus, there is no suggestion of any linkage between the trade and the caste ofworkers, apart from the fact that the unit owners are invariably from the Muslim Khatrcommunity.

4. Raw materials

For Bagh printing readymade cloth [of cotton, silk, etc.

4.1. Cotton

Cotton cloth is readily available in the nearby Indore market. The cotton normally used is from Century Mills [for bedcovers, table cloths, etc].

4.2. Silk- by- cotton

piece. Silk cloth procured for the printing of the silk-by-cotton fabric is purchased from Maheshwar and Chanderi [in Madhya Pradesh]. From Maheshwar, readymade plain silkby? cotton saris From Chanderi, silk cloth for suits, etc.

4.3. Silk

Silk cloth like georgette, crepe and chiffon are procured from Indore and Mumbai.Tussar silk is procured from Raigarh [Chattisgarh] and Bhopal at rates varying from Rs.110 to Rs. 300/m [all rates as on 2 September 2004].

4.4. Jute

*** Professor of Geography Govt. College, Khargone (M.P.) INDIA ** Asst. Professor of Physics**
***** Asst. Professor of Geography Govt. B.L.Patidar. P.G. College Mhow (M.P.) INDIA**

Dhaka jute is purchased from Delhi at Rs. 30?40/m [rate as on 2 September 2004].

5. Tools Used

Various tools that are used in Bagh printing are as follows:

5.1. Vegetable Dyes

[Photograph 1: Dhavda plant? used for main dye]

In Bagh printing, only vegetable dyes are used, the main colors being black and red. For

blackcolor, a mixture of haradaand iron ore is used. For red, a mixture of alum anddhavdaflower is used. These dyes are extracted and prepared locally.

5.2. Wooden Blocks

[Photograph 2: Wooden printing blocks]

Wooden blocks are the main tools used in Bagh printing. These blocks are made ofteakwood slabs purchased form the local markets. These wood blocks of varioustraditional and modern designs form the backbone of the craft. They cost around Rs.1500?4000 apiece.

5.3. Printing Tables

[Photograph 3: Printing Tables]

These are raised wooden blocks, around 5 ft in length and 3 ft in breadth. They are raised from the ground using bricks and wooden blocks to a height of about 9 inches.

Covered with plain cloth for protection, these tables are used by the artisans for printing.

6. The Process of Bagh Printing

The process of Bagh printing is as follows.

6.1. Making Wooden Blocks

[Photograph 4: Making wooden blocks]

This process has the following steps:

Preparing designs: The master weaver prepares designs on graph paper. This is normally a geometrical pattern or a natural design with flowers or leaves.

Selecting the wood for blocks: Teakwood pieces without defects likewarping, knots or irregular granules are selected for the preparation ofwooden blocks.

Preparing the block: The teak blocks are smoothened using carpenters' tools.

Following this, a white primer is put on the surface to make it smooth andclear. Then the craftsman draws the design on it from the graph paper.

Engraving designs on the blocks: The craftsman engraves the delicate designs on the block using sharp carpentry tools. After first finishing, hechecks the design by taking a print on a paper. After this, he provides finetuningto the block as required.

Preserving the blocks: Once prepared, these blocks are immersed in oil for afew days so as to provide greater stability to them and to protect themagainst warping and insect attacks. This is also important as during theprinting these blocks are constantly in touch with water?based dyes and arethus vulnerable to warping.

6.2. Preparation of Fabric

Raw material for the process [cotton, silk and combination clothes] is procured fromvarious dealers in different cities [as mentioned earlier]. The Various stages involvedare;The cloth is first washed in running water and left to dry in the sun before the printing.After drying, it is dipped in a solution of castor oil, centura and goat droppings [naturalmanure]. These substances react with each other to generate heat,

which makes thefiber absorbent. The cloth is dipped repeatedly in this solution and is trampled by footto produce froth. It is then left to dry on the ground. The logic behind this is that theheat from the ground helps the cloth dry quickly.Raw material processing is carried out in tubs whose inner part is made of copper. This process also helps to reduce the levels of substances like kerosene and fibine. After thecloth dries, it is kept in a solution of taroharand haradapowder and left to dry in sun. Itis necessary not to dry it in shade because the background color of the cloth becomesgreen rather than the desired yellowish. After completion of this process, the cloth isnow ready for printing.

6.3. Printing

For printing, a paste is made by mixing the dye with dhavdagum. There are two types of pastes: one is red and the other is black. After preparing the paste, it is filtered andpoured into a wooden tray. The dye is applied to the wooden blocks by pressing themon this tray.

Meanwhile, the yellowish cloth obtained from the earlier process is put across the table.

A black margin is provided using plain stamps around the cloth.

[Photograph 5: Putting margins on the cloth]

The cloth now becomes a canvas for the craftsman, who skillfully makes the intricatedesigns by putting the blocks alternately in the tray containing the dye paste and on thecloth.

[Photograph 6: Printing]

The color of the design is light at first, but it darkens immediately afterwards as the cloth soaks it in.

10

The craftsman avoids overlapping in the corners of the cloth by putting an old cloth orpaper where the printing has already been done.Different designs are put on the cloth by completing printing in rectangles, starting from the outer portion of the cloth andclosing in as the cloth gets filed with designs.

6.4. Drying

[Photograph 7: Drying]

Once the printing is finished, the cloth is left on pebbles to dry in the sun. This way it is dried from both sides, outer as well as inner. After this, it is again washed, this time in river water, and left to dry.

6.5. Dyeing

Red: For making red dye, a solution of alum and the powder of tamarindseed is boiled and left to cool in a plastic vessel. This solution is then filteredthrough fine cloth. For deep color dye less viscous solution is used and forfine printing thick solution is used.

Black: Black dye is prepared by mixing alum and iron ore.

Violet: For this indigo is used.

Yellow: For this turmeric and haradaare used.

[Photograph 8: Coloring]

After this comes the process of Dyeing. In order to provide the Bagh print cloth theircharacteristic contrast and finishing, the cloth passes though a process of dyeing onceagain. For this alizarin and dhavadi flowers are boiled together in big copper containersconcealed in a cement structure under which a fire using wood, leaves, etc. is made. Theprinted cloth is put in these vessels and is left to boil there for five to six hours. The redprinted portion, which has alum, takes its color by reacting with alizarin.

6.6. Finishing

After this process, through which the cloth gets clear red, black and white colors, it is left on pebbles to dry. Packing follows the drying process, and the cloth is then ready to be marketed.

7. Use of the Product

Products of Bagh printing are used in a variety of ways, mainly as bedcovers, saris, suit pieces, curtains, scarves, hand ker chiefs, etc.

8.Conclusion:

The main advantages of this printing is that the tribal are now not dependent on the other people, like moneylenders, landholders or other traders to carry out their life cycle. They have a good job and they can sell the cloths at high prices, because of their demand and good quality. They are famous in many other countries such as Canada, Indonesia, Australia etc. Today the cloth used for printing is made of synthetic fibres and dyes used for colouring them are harmful chemicals therefore it harms our environment, but this technique uses natural colour and cloth natural fibres therefore they are eco friendly and all of the great thing is that the whole process doesn't consists of today's major threat causing substance that is plastic.

9. Bibliography

1. http://www.straw.com
2. India_resource@tripod.com
3. http://dhar.nic.in
4. http://www.indianmirror.com
5. A brief note on Bagh printing by Mohd. Yusuf Khatri, master craftsman, Bagh.

Appendix I: Thematic Representation of the Bagh Printing Process

****

मंदसौर जिले की कृषि उपज मण्डियों पर आधुनिकीकरण का प्रभाव

डॉ. आर.के. श्रीवास्तव * डॉ. देवीलाल बामनियाँ **

मालवा के सुदूर दक्षिण-पश्चिम भाग में स्थित मन्दसौर जिले का विस्तार 23°45'54'' से 24°45'54'' उत्तरी अक्षांश तथा 74°52'52'' से 75°55'35'' पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित हैं। यह जिला मध्यप्रदेश के कुल क्षेत्रफल का 1.15 प्रतिशत है, जिसका क्षेत्रफल 5517 वर्ग कि.मी. हैं। जिले की समुद्र तल से औसत ऊँचाई 435 मीटर है।

मन्दसौर जिला पूर्व एवं पश्चिम दोनो तरफ से राजस्थान से घिरा है। इसके पूर्व में कोटा तथा झालावाड़ जिले, पश्चिम में चित्तौडगढ़ जिला उत्तर में प्रदेश का नीमच तथा दक्षिण में रतलाम जिला स्थित है।

मंदसौर जिला कृषि प्रधान जिला हैं, खरीफ एवं रबी की दो मुख्य फसलें यहाँ उत्पन्न होती हैं। जिले मे अफीम की भी नियंत्रित खेती की जाती हैं साथ ही विगत् वर्षो मे यहॉ औषधि फसलों तथा फलोद्यान में भी बढ़ोत्री हुई हैं। किसानों में जागरुकता बढने तथा शासकीय योजनाओं के क्रियान्वयन से कृषि विपणन की दिशा मे उल्लेखनीय सुधार हुआ हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में मंदसौर जिल में कृषि विपणन के प्रकार, मण्डियों की स्थिति, व्यापार तथा समस्याओं को विश्लेषित किया गया हैं।

कृषि विपणन से अर्थ उन सभी क्रियाओं से लगाया जाता है जिनका संबंध कृषि उत्पादन का कृषक के यहाँ से अंतिम उपभोक्ता तक पहुंचाने में किया जाता है, इन सभी क्रियाओं में कृषि उपज को एकत्रित करना, उनका श्रेणीकरण करना एवं प्रमाणीकरण करना, भण्डारण करना, उन्हें बेचने के लिये मण्डियों ,बाजारो तक ले जा कर उनकी बिक्री करना शामिल है। यह क्रय विक्रय हाट बाजारो से प्रारम्भ हुआ, जिस नगर या गाँव में सम्पन्न व अधिक क्रेता होते थे वे नगर धीरे-धीरे विकसित होकर मण्डियों में परिवर्तित हो गये।

कृषि विपणन की व्यवस्था

कृषक अपने उत्पाद के विक्रय से अधिकतम तथा शीघ्र लाभ प्राप्त कर सके, इसके लिये सर्वप्रथम आवश्यक है कि कृषक अधिशेष उत्पादो को जिन्हें वह बेचना चाहता है शीघ्रतिशीघ्र विपणन केन्द्रो तक ले जा सके। वर्तमान समय में जिले मे कृषि विपणन के लिये निम्न व्यवस्था पायी जाती है

(1) गाँवो में बिक्री -

किसान अपनी उपज का बहुत बड़ा भाग गाँवो में ही साहूकारो, महाजनो, बनियों, घुमते फिरते व्यापारियो आदि को बेच देते है। किसानो द्वारा गाँवो में ही बिक्री निम्न कारणों से कर दी जाती है - (अ) गाँव के साहूकारो या बनियों का ऋणी होना (ब) पहले ही विक्रय का सौदा कर लेना (स) धन की तुरंत आवश्यकता होना (द) परिवहन साधनो का अभाव होना (इ) मण्डी के मूल्यो की जानकारी का अभाव। लेकिन आधुनिकीकरण से नियमित मण्डियों में वृद्धि, सरकारी विपणन की जानकारी से कृषि वस्तुओं की गाँवो में ही बिक्री में कुछ कमी आयी है।

(2) हाट बाजार एवं मेलो में बिक्री -

बहुत से कृषक अपनी उपज को साप्ताहिक हाट बाजारो एवं मेलों में बेच देते है, जिससे जागरूकता का अभाव पाया जाता है। प्रतियोगी मूल्य नही मिलने के कारण उन्हे फसल बेचने पर कम फायदा होता है।

(3) कृषि उपज मण्डियों में बिक्री -

कृषि उपज मण्डियों का अर्थ उन स्थानो से है जहां थोक मात्रा में कृषि वस्तुओ का क्रय-विक्रय होता है। यह मण्डियाँ शहरी क्षेत्रो या कस्बो में होती है। मण्डियाँ दो प्रकार की होती है। (1) अनियमित मण्डी (2) नियमित मण्डी। अनियमित मण्डियों में बिक्री के नियम निश्चित नही होते है तथा बिक्री दलाल के माध्यम से होती है। किसान अपनी गाड़ी दुकानदार के यहाँ खड़ी करता है जिसको आढ़तिया कहते है। यह आढ़तिया दलाल के माध्यम से उत्पाद को बेच देता है। जिनकी तुलाई तुलावटी द्वारा की जाती है। यह आढ़तिया बिक्री मूल्य में से अपनी आढ़त व अन्य खर्चे काटकर किसान को शेष राशि का भुगतान कर देता है।

नियमित मंडियों की स्थापना राज्य सरकार के नियमों के अनुसार होती है। यहाँ पर उपज बेचने के निर्धारित नियम होते है। सामान्यतया यहाँ किसान से कुछ भी व्यय वसूल नही किया जाता है, सारे व्यय क्रेता से ही वसूल किये जाते है। किसान यहाँ अपनी उपज लाकर टीन शेडों में रख देता है जहाँ उसकी बिक्री सामान्यतया नीलामी के आधार पर होती है तथा बिक्री मूल्य उपज उठाते ही मिल जाता है।

(4) सरकारी समितियों के माध्यम से -

देश में इस प्रकार की समितियों में वृद्धि हो रही है। यह समितियाँ अपने सदस्यों से कृषि उपज एकत्रित करती है और फिर उसको ले जाकर बड़ी-बड़ी मण्डियों में बेचती है। ऐसा करने से उनके सदस्यों को उनके उत्पाद का अच्छा मूल्य मिल जाता है।

(5) सरकारी खरीद -

पिछले कुछ वर्षो से सरकार द्वारा भी कृषि उत्पत्ति को क्रय किया जा रहा है। इसके लिये सरकार स्थान-स्थान पर कुछ क्रय केन्द्र स्थापित कर देती है। जहाँ किसान अपनी उत्पत्ति लाकर निर्धारित मूल्य पर बेच सकते है। सरकार यह खरीद स्वयं अपने कर्मचारियों के माध्यम से, सहकारी समितियों के माध्यम से व भारतीय प्रांतीय खाद्य निगम के माध्यम से करती है।

(6) फुटकर विक्रेताओं के माध्यम से -

कृषि वस्तुओं के विक्रेता शहरों के भिन्न-भिन्न भागों में फैले रहते है। कभी-कभी इनको भी सीधा विक्रय किसानों द्वारा कर दिया जाता है। जिससे कृषकों को कभी फायदा तो कभी नुकसान होता है। इस प्रकार मन्दसौर जिले में मुख्यत: खरीफ में सोयाबीन एवं रबी में गेहुं का उत्पादन किया जाता है। कृषकों द्वारा अपनी आवश्यकता का अनाज बचाकर शेष पैदावार खुले बाजार में बेच दी जाती है।

वर्ष 2009-10 के अंतर्गत जिले में कुल फसलों का जो उत्पादन हुआ है इस उत्पादन की कुल आवक कृषि मण्डी में कम ही रही है। इस वर्ष में सोयाबीन का कुल उत्पादन 111.55 हजार मी. टन हुआ जिसमें से 85.18 हजार मी. टन मण्डी मे आवक हुई, यह आवक कुल फसल की 26.37 हजार मी. टन कम पायी गयी है। ज्वार का कुल उत्पादन 10.86 हजार मी. टन था जिसमें से 2.68 हजार मी. टन ज्वार की आवक रही बाकी 7.38 हजार मी. टन

* प्राध्यापक, भूगोल शासकीय महाविद्यालय पिपलियामण्डी ** प्र.शा.तक.भूगोल शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी (म.प्र.) भारत

खाद्यान्न के रूप में उपयोग कर ली गयी है। उड़द का उत्पादन 12.17 हजार मी. टन में से 10.50 हजार मी. टन मण्डी में आवक रही जिसमें से 1.67 हजार मी. टन का उपयोग घरेलू दालो के रूप में कर लिया गया। मक्का एवं गेहूं का उत्पादन क्रमश : 23.81 तथा 84.30 हजार मी. टन था जिसका क्रमश : जिसका क्रमश :3.55 तथा 70.84 हजार मी. टन मण्डियों में लाया गया तथा मक्का 20.26 तथा गेहूं 13.86 हजार मी. टन घरेलू खाद्यान्न हेतू उपयोग कर लिया गया। इसी प्रकार चना एवं सरसों का उत्पादन क्रमश : 15.44 तथा 6.22 हजार मी. टन में से 9.76 व 5.17 हजार मी. टन मण्डी में विक्रय किया गया तथा शेष 5.7 व 1.05 हजार मी. टन कुल उत्पादन में से कम आवक रही। कुल उत्पादन का मण्डी में न आना घरेलू खाद्यान्न दलहन एवं तिलहन के उपयोग हेतुं उपयोग में लिया जाना है तथा कुछ अंश घर पर संग्रहित कर बीजो के रूप में उपयोग किया जाता है।

मन्दसौर जिले की कृषि उपज मण्डियों में आने वाली प्रमख फसलो में ज्वार, मक्का, तुवर, उड़द, मूंग, सोयाबीन, मूंगफली, गेंहू, चना, मसूर, मटर, मैथी, धनिया, पोस्ता, लहसुन, प्याज, अलसी, सरसो, सूरजमुखी, चवली, तारामीरा, सुवा, अरण्डी, जीरा, तिल्ली, कुसुम, बाजरा, अजवाईन, असारिया, इसबगोल, कलोंजी, जौ आदि फसलों का विक्रय जिले की मण्डियों में होता है। मण्डियों में आवक उत्पादन के हिसाब से क्रमश: बढ़ती हुई नजर आती है।

मन्दसौर जिले की कृषि उपज मण्डियाँ

जिले में विपणन हेतु मन्दसौर, दलोदा, सीतामऊ, सुवासरा, पिपलियामंडी, शामगढ़, मल्हारगढ़, भैसोदामंडी, भानपुरा, गरोठ आदि मण्डियाँ उपलब्ध है। जिनमें मन्दसौर मण्डी जिले की सबसे बड़ी मण्डी है। इसकी स्थापना 26 अक्टूबर 1953 को हुई। यहाँ किसानों की सुविधा हेतु वृहद् गार्लिक शेड कुल 24000 वर्गफीट क्षेत्र में तथा 8000 वर्गफीट क्षेत्रफल में छायादार शेड उपलब्ध है जिसके अंतर्गत कृषकों की फसल की खुली निलामी के लिये एक साथ लगभग 25000 बोरी का शेड तथा आर. सी. सी. प्लेटफार्म एवं डामरीकृत प्लेटफार्म लगभग 2 लाख वर्गफीट में उपलब्ध है। मण्डी प्रांगण में सही तोल हेतु 80 नग इलेक्ट्रिक तोल कांटों की व्यवस्था है, तोल के तुरंत बाद कृषकों को भुगतान की व्यवस्था की जाती है।

इस प्रकार यह कृषि उपज मण्डी समिति प्रदेश की उत्कृष्ट श्रेणी की मण्डी है, मण्डी समिति द्वारा किसानों के खेती संबंधी व्यावहारिक, प्रयोगात्मक ज्ञान, आधुनिक कृषि तकनीक, उच्च गुणवत्ता एवं संतुलित खाद, बीज, कृषि उपकरण, मूल्य संवर्द्धन की दिशा में आवश्यक जानकारी उपलब्ध कराने हेतु समय-समय पर परिचर्चा, सेमिनार एवं कृषक प्रशिक्षण के माध्यम से विशेषज्ञों के मार्गदर्शन में किसानो को उचित बाजार की जानकारी देने हेतु प्रशिक्षित किया जाता है, इसके साथ नवीन तकनीक की जानकारी के लिये मण्डी समिति द्वारा खरीफ एवं रबी फसल लेने की जानकारी संबंधी दो दिवसीय राज्य स्तरीय मेले का आयोजन किया जाता है।

इसी प्रकार कृषकों की सुविधा के लिये सर्वश्रेष्ठ भोजनशाला उपलब्ध है। समय-समय पर कृषकों की समस्याओं का समाधान कृषि वैज्ञानिकों के माध्यम से प्रश्न मंच के द्वारा किया जाता है।

मण्डी समिति द्वारा आधुनिक तकनीक, पशुपालन, जैविक खाद आदि के प्रशिक्षण हेतु एक बहुउद्देश्यीय कृषक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना की गई है। इन्ही आधुनिक सुविधाओं के कारण ही मण्डी को आई. एस. ओ. प्रमाण पत्र मिल चुका है।

इसी के साथ अंतर्राष्ट्रीय पत्रिका Reinventing the Mandi Market Yards in a Globlised World ने मन्दसौर मण्डी को प्रमुख स्थान दिया है।

मंदसौर जिला : प्रमुख कृषि उपज मण्डियाँ

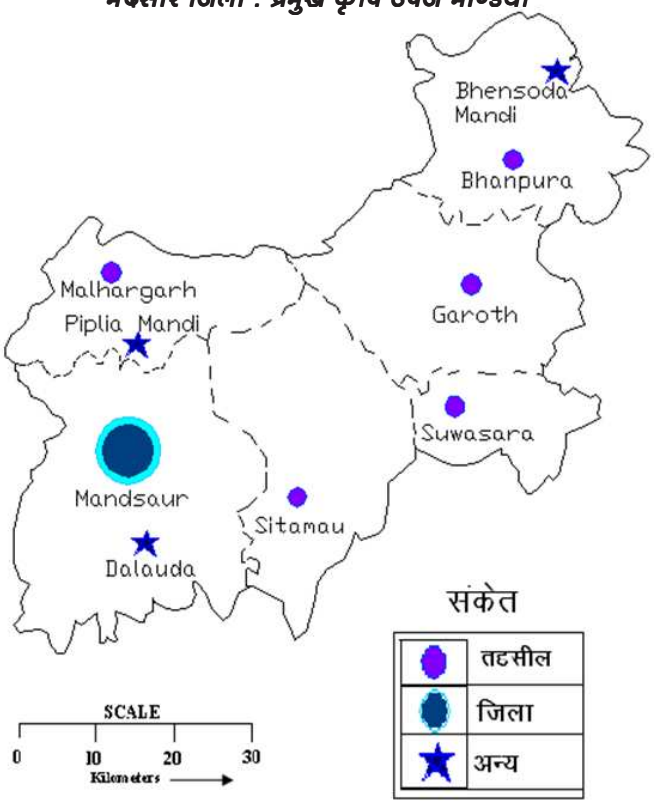

जिले में प्रमुख फसलो का उत्पादन एवं मण्डी आवक निम्नानुसार रही है।

मन्दसौर जिले की कृषि उपज मण्डियों में फसलों की कुल आवक (हजार मी. टन में)

वर्ष	मण्डी में फसलों की कुल आवक	आवक में वार्षिक अंतर
2003-04	722320	-
2004-05	1593629	871309
2005-06	1067554	-526075
2006-07	182250	-885304
2007-08	2154988	1972738
2008-09	2784347	629359
2009-10	2676951	-107396

स्त्रोत:-संचालक, जिला कृषि उपज मंडी, मन्दसौर

मन्दसौर जिले की समस्त कृषि उपज मण्डियों में आधुनीकीकरण को अपनाने के बाद से निरन्तर फसल आवक में वृद्धि होती जा रही है लेकिन कुछ वर्षो से यह जिला वर्षा की कमी के कारण सूखे की मार झेल रहा है, जिस कारण से उत्पादन काफी हद तक प्रभावित हुआ है। वर्ष 2003 से 2010 तक मण्डी में फसलों की आवक पर नजर डाले तो पता चलता है कि वर्षा में कमी के कारण मण्डियों में आवक भी काफी प्रभावित हुई।

यह प्रभाविता 2003-04 में 7,22,320 हजार मी. टन आवक थी जो वर्ष 2004-05 में 15,93,629 हजार मी. टन आवक हुई जो 8,71,409 हजार मी. टन की वृद्धि को दर्शाता है। लेकिन वर्ष 2005-06 में 5,26,075 हजार मी. टन की कमी आयी यह कमी निरंतर 2006-07 में भी रही जो

8,85,304 हजार मी. टन थी, यही वर्ष 2007-08 में 2154988 हजार मी. टन आवक थी जो 2003-04 से 1972738 हजार मी. टन की वृद्धि रही तथा 2008-09 में फसलों की आवक 27,84,347 हजार मी. टन हुई यह आवक वर्ष 2009-10 से 6,29,359 हजार मी. टन अधिक आवक हुई। लेकिन 2010-11 में पुन: कमी रही इस वर्ष में कुल वार्षिक आवक 26,76,951 हजार मी. टन रही यह आवक पिछले वर्ष से 1,07,396 हजार मी. टन कम पायी गयी है।

मंदसौर जिला : कृषि उपज मण्डियों में विगत तीन वर्षो में आवक (क्विंटल में)

क्रं.	फसल	2006-07	2007-08	2008-09
1.	ज्वार	30875	- 920	- 817
2.	मक्का	74493	- 54427	- 42471
3.	तुवर	612	- 381	+ 528
4.	उड़द	15938	- 6195	- 2325
5.	मूंग	66	+ 132	- 55
6.	सोयाबीन	916562	+ 1252114	+ 1542900
7.	मूंगफली	43	- 00	+ 05
8.	गेंहू	131600	+ 431568	- 324668
9.	चना	130017	- 83772	- 59280
10.	मसूर	7145	+ 10319	+ 11830
11.	मैथी	85508	+ 129993	- 62785
12.	धनियाँ	23677	- 13021	+ 16248
13.	पोस्ता	458	- 207	+ 300
14.	लहसुन	452637	+ 594865	- 346104
15.	प्याज	28221	+ 37785	+ 66529
16.	अलसी	6169	+ 13676	- 7736
17.	सरसों	234225	+ 142499	+ 183857
18.	सुरजमूखी	07	- 00	+ 02
19.	चवली	258	- 443	- 36
20.	तारामीरा	3391	+ 5101	- 3038
21.	सूवा	04	- 00	+ 01
22.	जीरा	40	- 32	+ 52
23.	तिल्ली	903	- 650	- 249
24.	कुसुम	37	- 32	- 16
25.	बाजरा	20	- 00	+ 09
26.	अजवाईन	66	- 25	+ 39
27.	असारिया	5927	- 3470	- 2401
28.	इसबगोल	766	+ 144	- 818
29.	कलोंजी	158	+ 767	- 240
30.	जौ	96	+ 400	+ 502

स्त्रोत:- संचालक ,कृषि उपज मण्डी, मन्दसौर

उक्त तालिका से स्पष्ट है कि इन वर्षो में फसलों की आवक में बहुत अधिक उतार चढ़ाव देखने में आता है। फसलों की आवक में निरंतर वृद्धि मात्र कुछ ही फसलों में देखी गयी है जिनमें सोयाबीन, मसूर, प्याज, सरसो, जौ आदि फसलों की आवक में निरंतर वृद्धि देखी गई है। जबकि 2006-07 से 2007-08 व 2008-09 में निरंतर कमी एवं वृद्धि देखने को मिलती है। ज्वार की आवक में इन तीन वर्षो में कमी रही इसके अलावा मक्का, उड़द, चना, चवली, तिल्ली, कुसुम, असारिया, इसबगोल आदि फसलों की आवक निरंतर कम होती रही है। जबकि कुछ फसलों में कमी और फिर वृद्धि देखी गई है। ऐसी फसले है - तुवर, मूंग, मूंगफली, गेंहू, मेथी, पोस्ता, लहसुन, अलसी, सूरजमुखी, तारामीरा, सुवा, जीरा, अजवाईन आदि फसलों में काफी उतार चढ़ाव पाया गया है। यह उतार चढ़ाव प्रमुखत: फसलों के उत्पादन पर निर्भर है, इसमें से निरंतर रबी की फसलों में कमी रही जिसका प्रमुख कारण वर्षा का कम होना है। वर्ष 2007-08 में अच्छी वर्षा होने से 2007-08 में खरीफ एवं रबी की फसलो की आवक में काफी वृद्धि देखी गई है।

मन्दसौर जिले के कृषकों के निरंतर आधुनीकीकरण अपनाने से जहाँ पैदावार में बढ़ोतरी हो रही है इसके साथ ही उत्पादित फसलों के दाम में भी काफी सुधार आया है। फसलों के समर्थन मूल्य के निर्धारण के बाद से किसानों को उनकी उपज का सही दाम प्राप्त होना शुरू हो गया है। सरकारी समितियों द्वारा कृषकों से सीधे फसलों का क्रय कर लिया जाता है। सरकार द्वारा समर्थन मूल्य पर फसलों की खरीद के कारण व्यापारियों द्वारा फसलों के मूल्य में अधिक गिरावट नही की जा सकती। जिले भर में सोया चौपाल जैसी संस्थाओं द्वारा भी माल का आयात निर्यात किया जाता है। लगातार हो रही सड़कों के सुधार एवं परिवहन की व्यवस्था के कारण कृषकों ,द्वारा उत्पादित माल ग्रामीण व्यापारियों को विक्रय करने के बजाय कृषि उपज मण्डियों में ले जाना अधिक सुलभ होता जा रहा है।

मन्दसौर मण्डी जिले की सबसे बड़ी कृषि उपज मण्डी है। यहाँ पर दूसरे जिलों से भी फसलों को विक्रय करने के लिये लाया जाता है। पिछले कुछ वर्षो से मण्डी चुनाव के माध्यम से उसके अध्यक्ष एवं सदस्यों से कृषक अपनी समस्या बताते है एवं उत्पादित माल का उचित मूल्य प्राप्त करने के लिए काफी जागरूक दिखाई दे रहे है। मण्डी के आढ़तियों द्वारा फिजूल आढ़त एवं दाम काटकर देने पर भी काफी हद तक अंकुश लगा है।

अत: किसानों द्वारा निरंतर कृषि मे नये आयामो को अपनाने एवं उनको लागू कर उपज को उत्पादित कर विपणन हेतु कृषि उपज मण्डियों में लाया जाने लगा है। जिससे कृषि मण्डियों के विकास में अग्रणी पहलू बना है और कृषि मण्डियों की आय में भी निरंतर वृद्धि देखी जा रही है।

संदर्भ सूची

(1) डॉ छोटुभाई जे. पटेल (2005) : सामान्य कृषि विज्ञान पृष्ठ - 09 भोपाल

(2) पत्रिका (2006) : वार्षिक नाबार्ड पुस्तिका, पृष्ठ 06 जिला नाबार्ड बैंक, मन्दसौर

(3) डॉ. मामोरिया एवं जैन (1985) :भारतीय कृषि उद्योग एवं नियोजन पृष्ठ-90, आगरा

(4) कृषि हलचल (2008) :(वार्षिक विशेषांक) दैनिक भास्कर समाचार पत्र पृष्ठ - 8 एवं 9

(5) श्रीवास्तव व्ही. के. (2001) :उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, अंक 37, जून-दिसंबर 2001 पृष्ठ -27

(6) चौधरीविजयकुमार (1998) : पारिस्थैतिकीय संश्लिष्ट और विपणन का विकास गढवाल हिमालय क्षैत्र (उत्तर प्रदेश) का प्रतिक अध्ययन, दि.द.उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध प्रबंध

(7) गगराडे सुनिल (2007) : भण्डारण के वैज्ञानिक तरिके, कृषक जगत प्रकाशन, भोपाल

(8) श्रीवास्तव वी.के. एवं दीक्षित: विपणन भूगोल मध्य प्रदेश, हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल (म.प्र.)

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में संगीत का व्यावसायिक स्वरूप

डॉ. बी. वर्षा*

मनुष्य एक विकासशील प्राणी है। अपनी आवश्यकतानुसार नित नये सृजन करना उसका स्वाभाविक गुण है। नित नये आविष्कारों के कारण आज मनुष्य इतना व्यस्त होता जा रहा है कि उसके जीवन में संवेदना लगभग समाप्त होती जा रही है और संवेदनशील होने के लिये उसका कहीं न कहीं कला से जुड़ना आवश्यक है। जब से सृष्टि का प्रारम्भ हुआ और मानव जीवन अस्तित्व में आया, तब से कला मनुष्य की चिरसंगिनी रही है। कला बिना मनुष्य का जीवन पशु समान है।

कला को ईश्वर का साक्षात रूप माना जाता है। एक विचारक के अनुसार, ''कला एक भाषा है, जो मनुष्य, संसार और कलाकार के बारे में बताती है।'' और संगीत इसी कला का एक अभिन्न अंग है। सृष्टि निर्माण से ही संगीत अस्तित्व में आया इसलिये संगीत का स्थान साहित्य और कला से भी पहले माना जाता है, जिसप्रकार प्रत्येक विषय का अपना एक इतिहास होता है, उसी प्रकार संगीत का इतिहास भी बहुत प्राचीन और समृद्धशाली है। वैदिक काल से लेकर आज तक संगीत के इतिहास ने कई गौरवशाली पड़ाव पार किये हैं। वैदिक काल में संगीत को बहुत आदर की दृष्टि से देखा जाता था। समाज में संगीतज्ञों को सम्मान प्राप्त था। उस समय वेदों का, ऋचाओं का संगीत के माध्यम से ही गायन होता था। समाज के प्रत्येक वर्ग व क्षेत्र में संगीत प्रचलित था। राजा की दैनिक दिनचर्या की सूचना तथा मनोरंजन के लिये संगीत का ही उपयोग किया जाता था। कौटिल्य ने भी सामाजिक व्यवस्था के लिये संगीत को महत्वपूर्ण स्थान दिया था।

कहने का तात्पर्य यह है कि उस समय से ही संगीत समाज के लिये आजीविका का साधन बन गया था। राज दरबार की गणिकाओं एवं नटों की सम्पूर्ण जीविका संगीत पर ही आधारित थी। संगीत विधा में पारंगत व्यक्ति को गंधर्व कहा जाता था। चूंकि संगीत में गायन, वादन तथा नृत्य तीनों कलाओं का समावेश है। अत: वैदिक काल में संगीत इन तीनों विधाओं में उन्नति कर रहा था। इस काल में नृत्य का सामुहिक प्रदर्शन उन्मुक्त वातावरण में एकत्रित जनसमूह के सम्मुख होता था, जिसमें पुरूष एवं महिलाऐं दोनों बढ़-चढ़कर भाग लेते थे और बदले में सम्मान और इनाम पाते थे।

संगीत और धर्म दोनों एकाकार होने से संगीत का पवित्र रूप कायम हो चुका था। संगीत का यह पवित्र स्वरूप पौराणिक काल में टिक न सका। पौराणिक काल आते-आते समाज में संगीत का वर्चस्व थोड़ा कम हो गया था। जो आदर व सम्मान वैदिक काल में संगीत को प्राप्त था, वैसा सम्मान इस काल में नहीं था। संगीत को केवल मनोरंजन का साधना माना जाने लगा। किन्तु संगीत का यह दौर ज्यादा दिन नहीं रहा। रामायण और महाभारत काल आते-आते संगीत पुन: उन्नति के पायदान चढ़ने लगा।

रामायण में कई प्रसंग ऐसे मिलते हैं, जिनमें आनंद प्राप्ति के लिये वाद्य यंत्रों का प्रयोग उल्लेखित है। रावण को भी संगीत का प्रकाण्ड विद्धान बताया जाता है। इसी प्रकार महाभारत काल में भी दुंदुभि, वीणा, आदंबर, मृदंग आदि वाद्यों का उल्लेख मिलता है, जिससे यह प्रतीत होता है कि इस काल में संगीत पुन: काफी लोकप्रिय हो रहा था। स्वयं भगवान श्रीकृष्ण एक कुशल बांसुरी वादक और संगीत के महान ज्ञाता थे। उन्होंने जहाँ समाज में ज्ञान का प्रचार-प्रसार किया, वहीं संगीत को भी प्रचारित किया। वे बाँसुरी बजाने में इतने प्रवीण थे कि उनकी बाँसुरी सुनकर गोपिकायें दौड़ी चली आती थी, जिससे यह स्पष्ट होता है कि श्रीकृष्ण का गायन, वादन तथा नृत्य तीनों कलाओं पर समान अधिकार था। संगीत उपयोगी कई महत्वपूर्ण ग्रंथ इस काल में लिखे गए।

संगीत ने जिस तेजी से अपने उत्थान काल को देखा, उतनी ही तेजी से उसे अपने पतन का भी सामना करना पड़ा, किन्तु इस पतनकाल में भी उसका विकासक्रम नहीं टूटा। मुगलकाल में सगीत के क्षेत्र में कई महत्वपूर्ण विकास हुए। कई नये रागों एवं तालों का आविष्कार इस युग की देन है। कव्वाली, गज़ल, ख़्याल, ठुमरी आदि इसी काल में प्रचलित हुए। अमीर खुसरो इस युग की ऐसी शख्सियत थी, जिन्होंने कई अरबी व फारसी ग्रंथों का भारतीय भाषा में अनुवाद किया।

लगभग सभी मुस्लिम शासकों ने संगीत को प्रचारित करने में अपनी सार्थक भूमिका निभाई, जिनके राजदरबार तानसेन, बैजू बावरा, ब्रजचंद, श्रीचंद जैसे संगीतज्ञों से सुशोभित थे। भारतीय संगीत की आधारशिला माना जाने वाला शारंगदेव कृत 'संगीत रत्नाकर' ग्रंथ इसी काल की देन है। इस काल में संगीत के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण विकास यह हुआ कि भक्तिकाव्य तथा संगीत का समन्वय स्थापित हुआ। ब्रिटीश काल के आगमन के बाद संगीत का निरादर होने लगा। फिर भी संगीतज्ञों ने अपनी सृजनशीलता को विराम न देते हुए कई महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना इस काल में की।

इसी काल में भारतीय संगीत को दो महान दैदीप्यमान सितारों का संरक्षण प्राप्त हुआ - पं. विष्णुनारायण भातखण्डे तथा पं. विषणु दिगंबर पलुस्कर, जिन्होंने गीतों को, स्वरलिपि के माध्यम से आने वाली पीढ़ी के लिये सुरक्षित कर दिया। सन् 1800 ई. के बाद का समय आधुनिक काल माना जाता है। इस काल में भी भारतीय संगीत उत्तरोत्तर उन्नति कर रहा था। घरानों की कल्पना इसी काल में अपना रूप ले रही थी। ख़्याल तथा ध्रुपद गायन शैली के अलावा ग़ज़ल, टप्पा, ठुमरी आदि गायन शैलियां भी प्रचलित हो रही थी।

संगीत के इस स्वर्णिम इतिहास की जानकारी देना इसलिये आवश्यक है क्योंकि संगीत के क्रमिक विकास के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि संगीत ने प्राचीनकाल से ही व्यवसायिक स्वरूप को अपनाया था। अंतर केवल यह था कि उस काल में राजदरबारों में राजा के द्वारा संगीतज्ञ तथा कलाकार अपनी कला से जीविकोपार्जन करते थे। विकसित होते-होते आज इसके स्वरूप में कई परिवर्तन हुए हैं।

संगीत एक तपस्या है, जिसे नि:स्वार्थभाव से ही सिद्ध किया जा सकता है, किन्तु वर्तमान समय में संगीत की गहन साधना करना सभी के लिये संभव नहीं है। इसलिये मनुष्य ने संगीत के विभिन्न क्षेत्र खोज लिये हैं। संगीत का जादू ऐसा है, जिससे पशु-पक्षी ही नहीं वरन् पेड़-पौधे भी प्रभावित होते हैं। आज कई अनुसंधान इस क्षेत्र में किये जा रहे हैं तथा लोग इसी दम पर अपनी आजीविका चला रहे हैं। संगीत का चिकित्सा के क्षेत्र में भी प्रभाव देखा गया है। संगीत के सुरों से कई ऐसी धुनों का निर्माण किया गया है जिससे शारीरिक विकार दूर किये जा सकते हैं। मानसिक रोगों के उपचार के लिये भी

* सहायक प्राध्यापक (संगीत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

'म्युझिकोथैरेपी' का इस्तेमाल किया जाता है। इस प्रकार कई क्षेत्र हैं, जिनमें मनुष्य संगीत का ज्ञान प्राप्त कर अपनी योग्यता के अनुरूप जीवनयापन करने में समर्थ हो सकता है।

यथा – यदि कोई व्यक्ति संगीत के सैद्धांतिक एवं व्यवहारिक पक्ष का समुचित ज्ञान प्राप्त करे, उसकी आवाज सुरीली हो, समीक्षात्मक अध्ययन की योग्यता हो तथा विद्यार्थियों को सांस्कृतिक महत्व की समझ दे सके, ऐसा व्यक्ति एक सफल शिक्षक बन कर किसी भी विद्यालय या महाविद्यालय में अपनी सेवाऐं देकर अपना जीवनयापन कर सकता है।

आजकल सरकारी संस्थाऐं भी इस क्षेत्र में आने वाले विद्यार्थियों के लिये कई प्रकार की छात्रवृत्ति तथा पुरस्कार की घोषणा कर इस कला को प्रोत्साहित कर रही है। म.प्र. के संस्कृति विभाग द्वारा भी कलाकारों तथा साहित्यकारों को वित्तीय सहायता उपलब्ध कराने के प्रावधान के तहत अमूमन प्रतिमाह 500 से लेकर 5000 रूपए तक की सहायता दी जाती है। यह सहायता मध्यप्रदेश कलाकार कल्याण सहायता कोश के माध्यम से दी जाती है।

कहने का तात्पर्य यह है कि वर्तमान समय में शासन द्वारा भी कलाकारों को उचित प्रोत्साहन दिया जा रहा है। इसके दूसरे पक्ष पर गौर करें तो आज समाज में संगीत ने अपने पैर मजबूती से जमा लिये हैं। वर्तमान युग कम्प्यूटर और टीवी का है। आज टेलिविजन पर कई तरह के रियलिटी शो प्रसारित हो रहे हैं, फिर चाहे वह गायन के हों, नृत्य के या अन्य किसी टेलेन्ट के। इन सब में युवा वर्ग काफी उत्साह से बढ़–चढ़कर हिस्सा ले रहे हैं और अभिभावक भी प्राय: इसी कोशिश में रहते हैं कि उनकी संतान भी किसी न किसी टेलेन्ट के जरिए अपना एक मुकाम हासिल करे। वे उसे प्रोत्साहित करने में पीछे नहीं रहते। टीवी पर प्रसारित होने वाले इन कार्यक्रमों के लोकप्रिय होने का कारण भी यह है कि जो युवा वर्ग इनसे अपना मुकाम हासिल करते हैं वे देश में ही नहीं, वरन् विदेशों में भी अपने हुनर के जरिए धनार्जन करते हैं।

आज संगीत का क्षेत्र पूरी तरह व्यावसायिक रूप ले चुका है, किन्तु युवा वर्ग अथवा आने वाली पीढ़ी का यह उत्तरदायित्व है कि वह संगीत को केवल व्यवसाय के रूप में जीवनयापन के लिये न अपनायें वरन् उसे समाज व कला की उन्नति के लिये अपनायें तो ज्यादा श्रेयस्कर होगा।

यह आवश्यक नहीं है कि वह टेलेन्ट शो के जरिए ही उसे व्यवसाय के रूप में हासिल करें। इसके अतिरिक्त भी वह संगीत को अनेक क्षेत्रों में व्यवसाय के रूप में अपना सकता है। जैसे – एक संगीत शिक्षक के रूप में, एक मंचीय कलाकार के रूप में, संगीत आलोचक के रूप में, शास्त्रकार अथवा रचनाकार के रूप में, साउंड कम्पोजर के रूप में आज कई क्षेत्र ऐसे हैं, जिसमें संगीत को माध्यम बनाकर व्यवसाय किया जा सकता है।

सारांश के रूप में कहा जा सकता है कि संगीत एक ऐसी कला है, जिसको अपनाने से कोई भी व्यक्ति जीवन में कभी दुखी नहीं हो सकता। संगीत प्राचीन काल से ही आजीविका का साधन रहा है। यदि इसे व्यवसाय के रूप में न भी अपनाया जाए तो भी 'स्वांत–सुखाय' के लिये इससे बेहतर कोई विकल्प हो नहीं सकता।

एक समय संगीत में जरूर ऐसा आया था जब समाज में संगीत को बहुत ही हेय दृष्टि से देखा जाता था, किन्तु यह संगीत की ही शक्ति थी, जिससे वह विषम परिस्थितियों से निकलकर पुन: अपने श्रेष्ठ मुकाम पर विराजमान हुआ और आज संगीत प्रत्येक मनुष्य के जीवन का अभिन्न अंग बन चुका है। संगीत ने समाज को श्रेष्ठ परम्परा दी है, व्यवसाय दिया है, आत्म सुख दिया है और भविष्य में भी वह संगीत ही होगा, जो भारत को विकास के उन्नत मार्ग पर ले जाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देगा।

संदर्भ ग्रंथ –

1. आधुनिक व्यवसायिक हिन्दुस्तानी शास्त्रीय गायन (परम्परा एवं लक्षण) – डॉ. जीतराम शर्मा, संजय प्रकाशन, दिल्ली, 2004
2. संगीत मधुबन – मधुबाला सक्सेना, राकेशबाला सक्सेना, अभिषेक पब्लिकेशन, चंडीगढ़, प्रथम संस्करण, 2001
3. भारतीय संगीत का समाजशास्त्रीय अध्ययन – राजेन्द्रप्रसाद सिंह, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2004
4. भारतीय संगीत का इतिहास – राम अवतार मीर, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2006
5. सांस्कृतिक शिक्षा के उद्विकास में संगीत का योगदान– राजश्री, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2003
6. संगीत चिकित्सा – डॉ. सतीश वर्मा, राधा पब्लिकेशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2004
7. मुख्यमंत्री की चौपाल – अपना मंच, अपने पंच – जनसम्पर्क, मध्यप्रदेश प्रकाशन, 2009

****

दक्षिणात्य संगीत (कर्नाटक संगीत) में समय-सिद्धांत

डॉ. स्नेहा पण्डित *

भारतीय संगीत का इतिहास बहुत पुराना है। अतिप्राचीनकाल में संगीत, भारतीय संगीत के नाम से ही प्रचार में था। मध्यकाल में भारतीय संगीत दो भागों में बँट गया। 1) उत्तर भारतीय संगीत और 2) दक्षिणात्य संगीत। उत्तर भारतीय संगीत हिन्दुस्तानी संगीत के नाम से तथा दक्षिण का संगीत कर्नाटकी संगीत के नाम से जाना जाता है। इन दोनों ही संगीत पद्धतियों में कुछ समानताऐं हैं तथा कुछ असमानताऐं भी हैं। समानताओं में स्वर, रागों के नाम इत्यादि हैं। असमानताओं में ताल पद्धति, स्वरलेखन पद्धति, रागों का समय-सिद्धांत इत्यादि है। इन विभिन्न प्रकार की असमानताओं में यहाँ ''रागों के समय-सिद्धांत'' पर चर्चा की जा रही है।

भारतीय संगीत की दूसरी संगीत पद्धति अर्थात् दक्षिणात्य संगीत में समय-सिद्धांत का पालन नहीं होता, ऐसा कहा जाता है। हिन्दुस्तानी संगीत में रागों को समय पर गाने के लिए जो महत्व दिया गया है, उतना महत्व दक्षिणात्य संगीत पद्धति में नहीं है, परन्तु यह कथन आधुनिक ग्रंथकारों द्वारा ही दिया गया है। मध्यकाल में संगीत पद्धतियों के पृथक होने के पूर्व दक्षिण के विद्वानों द्वारा जो पुस्तकें लिखी गई उन सभी में रागों के वर्णन के साथ रागों को निश्चित समय पर गाने को बताया गया है। मध्यकाल तथा आधुनिक काल में भी कुछ विद्वानों द्वारा रागों को समय पर गाने को महत्व दिया है, परंतु 18वीं शताब्दी से कर्नाटक पद्धति में बदलाव आया तथा कुछ विद्वानों द्वारा समय-सिद्धांत को मान्यता नहीं है, ऐसा कहा गया।

आधुनिककाल के विचारक डॉ. कृष्णा बिष्ट द्वारा बताया गया कि ''प्राचीन और मध्यकालीन ग्रंथों के आधार पर यह कहा कि भारतीय संगीत में समय-सिद्धांत की परम्परा प्राचीन है। वर्तमान समय में समय-सिद्धांत हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में ही प्रचलित है।'' श्री साम्बपूर्ति द्वारा समय-सिद्धांत आदेशात्मक नहीं माना गया। प्रो. पी. बालकृष्ण के अनुसार रागों को समय पर गाना प्रासंगिक एवं तर्कसंगत नहीं है।

18वीं शताब्दी के विद्वानों एवं संगीतज्ञों ने पूर्व से चले आ रहे समय-सिद्धांत को त्याग दिया। उनके अनुसार जब सार्वजनिक संगीत कार्यक्रम रात्रि में ही होते हैं, जिससे अन्य समय में गाये जाने वाले राग गाने से छूट जाते हैं। इसके पश्चात भी अपवादात्मक श्रेणी में रखे गये कुछ रागों को समय पर गाया जाता है।

इस नियम को ध्यान में रखते हुए डॉ. गीता कुमार ने तृतीय राग वर्गीकरण में बताया "Classification based on Gana Kala on the time of singing" राग और समय का सम्बन्ध सिद्ध हो चुका है। इसे आधार मानकर कर्नाटक पद्धति में रागों को समय पर गाने की पाबंदी नहीं है, किन्तु भूपालम् प्रात:काल, राग बिलहारी और केदारम् राग विशेषत: उषाकाल में गाने की परम्परा है। इसके अतिरिक्त कुछ राग सर्वकालिक बताये गए जिसमें चक्रवात, भैरवी, कांभोजी और आरभी हैं। इनके अनुसार -

1. सूर्योदय से पूर्व जिन रागों को गाया जाता है, वे प्रभाती कहलाते हैं। जैसे भूपाला, रेवगुप्ति, बहुली, मलयमारूत, बालाजीदेशाक्षी।
2. प्रात:कालीन राग जिनमें बिलहारी, केदारम्, धन्यासी है।
3. दोपहर के पूर्व राग आसावरी गाया जाता है।
4. मध्याह्न में श्रीराग तथा मध्यावति बताए गए हैं।
5. मुखारी तथा बेगाड़ा ये दोपहर के बाद गाये जाते हैं।
6. वसंत, नाटकुरंजी, पूर्वकल्याणी ये सायंकालीन राग बताए हैं।

इस प्रकार कर्नाटक पद्धति में रागों का विभाजन दिन के विभिन्न समयों में विभिन्न राग गाने की प्रथा बताई। जिनमें समय-सिद्धांत कर्नाटक पद्धति में भी है, ऐसा प्रतीत होता है।

कर्नाटक पद्धति में बंदिशें, तमिल, तेलुगु, संस्कृत, कन्नड़ भाषा में मिलती है। तमिल भाषा में रागों को (Pann) पन के नाम से जाना जाता है या राग का पर्यायवाची शब्द पन (Pann) है तथा टेवरम् (Tevaram) अर्थात् पवित्र स्त्रोत है। इस प्रकार तमिल भाषा में पवित्र स्त्रोत को गाने के लिए रागों का प्रयोग होता है, उसका विभाजन, समय अनुसार निम्नप्रकार से बताया -

1. Pagal Pann :- To be sing during day.
2. Irvau Pann :- To be sing during night.
3. Podup Pann :- Which can be sing at all time.

(Pann) पन अर्थात् रागों को तीन वर्ग में विभाजित किया। पहले प्रकार में उन रागों को बताया गया जो दिन में गाये जाते हैं। दूसरे में उन रागों को बताया गया है, जिसे रात्रि में गाया जाता है तथा तीसरा प्रकार सर्वकालिक रागों का है। रागों को अगर निश्चित समय पर गाया जाए तो उसका प्रभाव अधिक पड़ता है। डॉ. गीता कुमार द्वारा "The rule is however not of a mendatory nature but of an advisory character" अर्थात् कर्नाटक संगीत में रागों को समय पर गाने का नियम आदेशात्मक न होकर सलाह के रूप में बताया गया है। डॉ. कुमार ने इस ओर ध्यान आकर्षित किया है कि जब कार्यक्रमों में विस्तृत आलाप गान होता है तब गान कला में समय की महत्ता बताई गई - जैसे कलाकार या विद्वान यदि सुबह कार्यक्रम देता है तो उसे धन्यासी आलाप करने के पश्चात् उसी राग में पल्लवी गाना चाहिए, परन्तु सर्वकालिक रागों में यह बंधन नहीं है।

संदर्भ

1 - Justification of the time theory in Hindustani Classical Music - Krishna Bisht
2 - The concept and evaluation of Raga in Hindustani and Karnatic Music - Dr. Geeta Kumar
3 - शास्त्रीय संगीत के दस सिद्धांत

* सहायक प्राध्यापक (कण्ठ संगीत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

विकलांगता और शिक्षा

प्रमिला वास्केल *

व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास का आधार एवं समाज का दर्पण शिक्षा है। यह देश की उन्नति और विकास का संवाहक एवं प्रत्येक महत्वाकांक्षी समाज की सर्वोच्च प्राथमिकता है। सी. पी. स्नों के अनुसार – 'शिक्षा का मुख्य उद्देश्य मनुष्य की उस क्षमता को बढ़ना होगा जिससे हर समस्या के हल की ओर, हर चुनौती के साथ चलने की योग्यता हो।'

किसी गतिशील समाज में उच्च शिक्षा की अवधारणा उस समाज की नैतिकताओं, आदर्शवादी अपेक्षाओं, बेहतर जीवन मूल्यों और व्यावहारिक जीवन की मांगों से जोड़कर गढ़ी जाती है।[1] सन् 2001 की जनगणना के अनुसार देश में 2.19 करोड़ विकलांग लोग है, जो कुल जनसंख्या का 2.13 प्रतिशत है। विकलांगों की कुल जनसंख्या में से 1.26 करोड़ पुरूष और 0.93 करोड़ महिलाएं है। इनमें दृष्टि बाधित, सुनने में असमर्थ, और मानसिक रूप से नि:शक्त लोग शामिल है। जनगणना के आंकड़े स्पष्ट करते है कि विकलांग लोगों में से 75 प्रतिशत गांवो में रहते हैं, 49 प्रतिशत साक्षर है और इनमें से 34 प्रतिशत लोगों को रोज़गार हासिल है।

राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संस्थान द्वारा सन् 2002 में किए गए सर्वेक्षण से यह तथ्य सामने आया है कि 1.85 करोड़ लोग विकलांग है और विकलांगता के प्रकार के अनुसार पाए गए आंकड़े सन् 2001 की जनगणना आकड़ों से अलग है। ऐसा इसलिए, क्योकि तब कवरेज में अंतर और डाटा संग्रहण में विकलांगता की परिभाषा अलग थी। अंतिम जनगणना से जो आंकड़े सामने आए है, उनके अनुसार 2008 तक देश में विकलांगों की कुल जनसंख्या लगभग 2.44 करोड़ हो गई थी।

जनगणना 2011 में विकलांगता को और भी विश्वसनीय तरीके से परिगणित करने के लिए मामला भारत के महानिबंधक के पास ले जाया गया था। सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय ने प्रस्तावना दिया कि पीडब्ल्यूडी एक्ट में वर्णित सभी सात किस्मों की विकलांगता को जनगणना 2011 में शामिल किया जाए और सरल परिपूर्ण परिभाषा के साथ जनगणना 2011 में आंकड़ा संग्रहण के दौरान घरेलू अनुसूची भी सुनिश्चित करने की सलाह दी। जनगणना 2011 के अनुसार परिगणना के लिए निम्न प्रकार की विकलांगता शामिल की गई है :1. दृष्टिहीनता, 2. बोलने की विकलांगता 3. सुनने में असमर्थता 4. चलने-फिरने में असमर्थ 5. मानसिक रूप से विकलांगता 6. मानसिक बीमार, 7. बहु विकलांगता, 8. अन्य।[2] जिस समाज की जैसी व्यवस्था होगी, वहां उसी प्रकार की शिक्षा का स्वरूप होगा। लोकतांत्रिक समाज में शिक्षा द्वारा समानता, स्वतंत्रता जैसे लोकतांत्रिक गुणों के विकास प्रयास किया जाएगा। भारत में प्रारंभ से ही विकलांगों के पुनर्वास तथा शिक्षा की जिम्मेदारी परिवार या व्यक्तिगत संस्थाओं की रही है। परंपरा की इस लीक को लांघकर राज्य कल्याण की अवधारणा के तहत विकलांगों के लिए नई योजनाओं और सेवाओं के प्रशिक्षण का कार्य प्रारंभ हुआ है। विकलांगों की शिक्षा और पुनर्वास का कार्य केंद्र तथा राज्य सरकारों का दायित्व हैं। एक समय जब शिक्षा केवल एक विशेष वर्ग तक सीमित थी। शिक्षा का संबंध समाज में संकुचित हो गया था। लेकिन लोकतंत्र के उदय के साथ समानता, स्वतंत्रता, भातृत्व और न्याय के जीवन मूल्यों के साथ व्यक्ति के अधिकार और कर्तव्यों की समझ और जागृति के कारण यह स्पष्ट हो गया कि समाज में व्यक्तियों को शिक्षा से अलग नहीं रखा जा सकता। लोकतंत्र ने समाज और शिक्षा को निकट ला दिया। भारत में विकलांगों के प्रति परंपरागत अंधविश्वास चला आ रहा है।

लोग विकलांग या अपाहिज व्यक्ति को पूर्व जन्म का फल मानकर उनके प्रति उपेक्षा भाव दिखाते है उन्हें समाज का बोझ समझ कर उनके प्रति सहानूति दिखाते है। यह परंपरागत विचार अब दम तोड़ रहा हैं। आज कई विकलांग व्यक्ति समाज में स्वतंत्र और आत्म-निर्भर जीवन जी रहे हैं उन्हें देखकर लोगों के पुराने विचारों में परिवर्तन आ रहा हैं। विकलांग समाज में सम्मान चाहते है, व्यवहार में समानता चाहते है, भीख नहीं। समाज के अन्य लोगों पर यह दायित्व बनता है।[3] शारीरिक समस्याओं के कारण आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओं को भी झेलना पड़ता हैं। यदि व्यक्ति के ऊपर परिवार की जिम्मेदारी है तो अनियमित आमदनी और क्षमतानुसार काम न मिलने से उसे आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ता है। यदि व्यक्ति के ऊपर परिवार की जिम्मेदारी है तो अनियमित आमदानी और क्षमतानुसार काम न मिलने से उसे आर्थिक तंगी का सामना करना पड़ता है। यदि उसमें काबलियत भी है तो हमारा व्यस्त सामाजिक परिवेश उसे मौका देने के लिए तैयार नहीं है। निजी क्षेत्रों में सामान्य व्यक्ति यह विश्वास भी नहीं कर पाते कि एक विकलांग व्यक्ति काम की जिम्मेदारी को निभा पाएगा।[4]

हाल के वर्षो में विकलांग व्यक्तियों से संबंधित अधिनियम और शिक्षा का अधिकार अधिनियम जैसे कानूनों में जिस प्रकार के प्रावधान किए गए है, उनमें स्पष्ट है कि विकलांग बच्चों की शिक्षा पर अब काफी ध्यान दिया जा रहा है। इस बात की आवश्यकता लंबे समय से महसूस की जा रही थी। परंतु लक्ष्यों में विरोधाभास और स्पष्टता के अभाव में अभी भी ऐसे बच्चों की शिक्षा प्रभावित हो रही है। विकलांग बच्चों के शिक्षा के अनुभवों और परिणामों से यह बात भलीभांती साफ हो जाती है।

विकलांग बच्चों की स्कूलों में भर्ती के आंकड़ों को लेकर मतभेद बने हुए है। विभिन्न आंकड़ों के अनुसार 4 प्रतिशत से लेकर 67.5 प्रतिशत बच्चे विद्यालयों में शिक्षा प्राप्त कर रहें है। परंतु औपचारिक शिक्षा अर्थात विद्यालयीन शिक्षा से अभी भी काफी बड़ी संख्या में विकलांग वंचित है और गंभीर चिंता का विषय है राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के आंकडे बताते है कि केवल 45 प्रतिशत के विकलांग बच्चे ही साक्षर है जबकि कुल जनसंख्या में सामान्य बच्चों की साक्षरता का प्रतिशत 65 है।

विकलांग बच्चों की शालाओं में भर्ती और उपस्थिति में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई है। विश्व बैंक (2007) का कहना है कि केवल 4 प्रतिशत विकलांग बच्चे ही 8 वर्ष से अधिक की स्कूली शिक्षा जारी रख पाते है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के बच्चों की तुलना में विकलांग बच्चों की पढ़ाई बीच में छोड़ने की संभावना पांच गुना अधिक होती है। केरल और तमिलनाडु जैसे शिक्षा की दृष्टि से उन्नत राज्यों में भी स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती। इससे यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इस मामले में कहां गलती हुई है। जबकि कुछ समीक्षकों का यह कहना

* पीएच. डी. शोधार्थी, डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर राष्ट्रीय सामाजिक विज्ञान संस्थान, महू (म.प्र.) भारत

है कि देश की विकलांग नीति का ढांचा सर्वाधिक प्रगतिशील है। पिछले कुछ वर्षो में सरकार ने सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय के अंतर्गत विशेष विद्यालयों को अनुदान देकर अच्छी पहल की है।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय के एकीकृत विकलांग बच्चों की शिक्षा कार्यक्रम के तहत विकलांग बच्चों को मुख्यधारा के विद्यालयों से जोड़ने का प्रयास भी सराहनीय है। सर्वशिक्षा अभियान (2007) में भी एक महत्वपूर्ण बदलाव कर विकलांगता के प्रकार श्रेणी और अंश में किसी प्रकार का भेदभाव न करते हुए, सभी विकलांग बच्चों की शालाओं में पढ़ाई का अवसर देने पर जोर दिया गया है। विकलांग बच्चों की शिक्षा के लिए ये जो अनेक वैकल्पिक सुविधाएं उपलब्ध है, वैसे तो काफी उपयोगी है, परंतु सरकार की जो सोच है, उसमें कुछ बदलाव की आवश्यकता प्रतीत है।

विकलांगों की शिक्षा के प्रयासों में मुख्यधारा की शिक्षा में व्याप्त जो चुनौतियां है, उनको स्वीकार करने की अधिक आवश्यकता है। इस प्रकार की शिक्षा प्रणाली में अनेक मूलभुत समस्याएँ बनी हुई है, जिनमें शिक्षक की उपस्थिति (योग्यता नहीं) बुनियादी कौशल (नवाचारों शैक्षिक दृष्टिकोण का विकास नहीं) स्वच्छ शौचालयों का अभाव। निश्चित रूप से विकलांगों की शिक्षा के लिए अपनाएं जाने वाले नजरिये में इस प्रकार की विसंगतियों को अस्वीकार करने की आवश्यकता है।[5]

सर्वविदित है कि भारत दुनिया का चीन के बाद दूसरा बड़ा राष्ट्र है। भारत की जनसंख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है। कुछ समय उपरांत यह दुनिया का सर्वाधिक बड़ा राष्ट्र होगा। यह विकासशील देश है जहाँ अशिक्षा, गरीबी, बीमारियां, प्राकृतिक प्रकोप, दुर्घटनाओं की प्रगढ़ता है। यहां आधारभूत विकासात्मक ढांचे का अभाव है। देश भ्रष्टाचार में जकड़ा हुआ है। मानवीय संवेदनाओं का पतन व यूरोपीय मॉडल भारतीय समाज में आ गया है। इन तथ्यात्मक कारणों से विकलांगता बढ़ी है। जो आने वाले समय में संपूर्ण संघीय ढ़ाचे के लिए चुनौती है। विकलांगता मनुष्य में निश्चित रूप में शारीरिक कमी लाती है तथा मानसिक आघात भी पहुंचाती है, पर मात्र विकलांगता के आधार पर किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह को किसी अधिकार या अवसर से वंचित कर देना अन्यायपूर्ण है। विकलांग व्यक्तियों के लिए शिक्षा सामाजिक एवं आर्थिक विकास का सबसे कारगर माध्यम है।

संविधान के अनुच्छेद 21 क जिसमें शिक्षा के मूलभूत अधिकार की ग्यारण्टी है, और नि:शक्त व्यक्ति अधिनियम, 1995 की धारा 26 को ध्यान में रखते हुए, कम से कम 18 वर्ष की आयु के सभी विकलांग बच्चों को नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराई जानी है।

समय की यही पुकार विकलांगजनों को मुख्यधारा में लाने के लिए ऐसा वातावरण बनाने की आवश्यकता है जिसमें अधिकार एवं सुविधाएं उपलब्ध हो जिससे वे अपना जीवन सुव्यवस्थित रूप से चलाने के अलावा समाज और राष्ट्र के विकास में भी अपना योगदान दे सके। प्रस्तुत पेपर द्वितीय आंकड़ो पर आधारित है जिसमें विकलांगजनो के लिए शिक्षा के अभाव तथा समाज का दृष्टिकोण बताया है।

संदर्भ

1. जैन, ए. के. (2013) 'उच्च शिक्षा में गुणवत्ता : चुनौती एवं संभावनाएँ' जनवरी पेज 20–22 वर्ष –13 अंक –5 जनमत प्रकाशन गिरिजाशंकर, सम्पर्क ई–115/8, शिवाजी नगर भोपाल।
2. भारत में विकलांगों की संख्या कितनी है? अप्रैल 2013 (क्या आप जानते है।) योजना प्रकाशन विभाग, सूचना भवन सी. जी. ओ. कॉप्लेक्स, लोधी रोड़, नयी दिल्ली।
3. यादव, रवि प्रकाश 'विकलांगों के लिए शिक्षा' कुरूकक्षेत्र, दिसम्बर 1999 पेज 3 कुरूकक्षेत्र प्रकाशन सूचना भवन, नई दिल्ली।
4. सिंह, इरा 'कैसे संभव हो विकलांगों के लिए बेहतर जीवन' पेज 6 दिसंबर 1999 कुरूकक्षेत्र प्रकाशन सूचना भवन, नई दिल्ली।
5. सिंगल, निधि विकलांग बच्चों की शिक्षा अप्रैल 2013 पेज 21 योजना प्रकाशन विभाग, सूचना भवन सी. जी. ओ. कॉप्लेक्स, लोधी रोड़, नई दिल्ली।
6. यादव, आलोक कुमार विकलांगों के बारे में मानसिकता बदलनी जरूरी जनवरी 2009 पेज 29 कुरूक्षेत्र प्रकाशन सूचना भवन, नई दिल्ली।

****

लॉफ्टर (हास्य) योग एवं मानवीय स्वास्थ्य - एक विश्लेषण

प्रो. अलका जैन *

लाफ्टर योग- स्वस्थ जीवन का आधार :

हँसती मुस्कराती जीवनचर्या स्वस्थ जीवन का मूलभूत आधार है । शरीर के आंतरिक अंग-अव्यव की संरचना इस प्रकार की है कि वे हास-परिहास के वातावरण में सही रूप से संचालित होती है और मानवीय स्वास्थ्य बना रहता है। यहाँ तक कि गंभीर बीमारी में हास्य योग की प्रभावशीलता प्रमाणित हो चुकी है। यह एक कुशल, कम लागत चिकित्सा उपचार है । हँसी को योग की तरह इस्तेमाल कर हेल्थ बनाना नया नुस्खा है जो वर्तमान में निरन्तर अत्यन्त लोकप्रिय होता जा रहा है।

लॉफ्टर योग क्या है ?

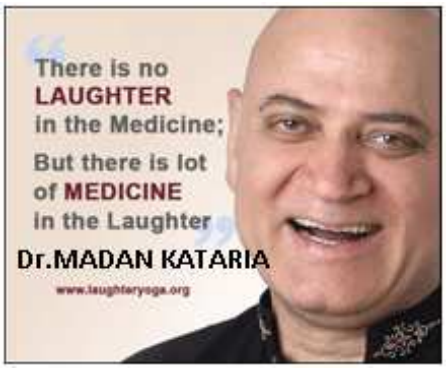

लॉफ्टर योग एक क्रांतिकारी, सरल एवं गहरा विचार है। यह एक नियमित व्यायाम है जिसे भारत के एक फिजिसियन मुंबई के डॉ. मदन कटारिया ने जन्म दिया है। उन्होंने 3 मार्च 1995 को एक पब्लिक पार्क में पहले लॉफ्टर क्लब का शुभारंभ किया। आज यह एक विश्वव्यापी घटना बन गई है। 72 से अधिक देशों में हजारो लॉफ्टर क्लब कार्य कर रहे हैं। लॉफ्टर योग अर्थात योगिक प्राणायाम के साथ बिना शर्त हँसना। इसमें किसी को भी हास्य चुटकुले या कामेडी पर निर्भर किए बिना, बिना किसी कारण के हास्य योग किया जाता है। हँसी एक समूह में आँख के संपर्क से संक्रामक हँसी में बदल जाती है तथा नकली और असली हँसी में अन्तर नहीं रह जाता।

लॉफ्टर योग की अवधारणा वैज्ञानिक तथ्य पर आधारित है। यह शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक रूप से अत्यन्त लाभदायक हैं। लॉफ्टर योग का लक्ष्य हँसी के माध्यम से अच्छा स्वास्थ्य, खुशी और दुनिया में शांति लाना है। प्रतिवर्ष मई का हर पहला रविवार वर्ल्ड-लाफ्टर दिवस के रूप में मनाया जाता है। लॉफ्टर योगा हँसी, प्यार और फ्रेंडशिप में विश्वास रखने वाले लोगों का समूह है, जो विश्वव्यापी समुदाय के रूप में विकसित हो रहा है। जो भाषा, संस्कृति से बाधित नहीं है। लॉफ्टर योग क्लब सभी के लिए नि:शुल्क हैं तथा यह योग शिक्षक तथा योग नेताओं के रूप में प्रशिक्षित स्वयं सेवकों द्वारा भारत सहित दुनिया भर में चलाये जा रहे है। हँसने से चेहरे और फेफड़ों का अच्छा व्यायाम होता है। ब्लड नवर्स खुल जाती है, हृदय को शक्ति मिलती है, मस्तिष्क को अधिक मात्रा में ऑक्सीजन मिलती है, जिससे वह तेजी से काम करने लगता है। मुक्त कंठ से हँसने से अमाशय आनन्द की लहरों से झंकृत हो उठता है तथा पाचन क्रिया स्वत: बढ़ने लगती है। शरीर में पेट और छाती के बीच एक 'डायफ्राम' होता है जो हँसते समय कम्पित होता है, जिससे सारे आन्तरिक अवयवों में गतिशीलता आती है। समूची काया में उष्मा का प्रवाह बढ़ने से व्यक्तित्व में ओजस्विता बढ़ती हैं। नियमित रूप से हँसना सभी अवयवों को ताकतवर और पुष्ठ बनाता है। दिन में एक बार हँसने को दस मिनट नाव का चप्पू चलाने जितना लाभकारी माना गया है। हँसने से सकारात्मक ऊर्जा उत्पन्न होती है जो मन में विश्वास पैदा कर भय को दूर करती है। हास्य योग मन की कमजोरी, चिंता, दु:ख, सदमा, अनिद्रा, अवसाद, इन्सीकियोरिटी काम्प्लेक्स, तनाव आदि को दूर करता है। वर्तमान में हास्य योग विश्व में शारीरिक स्वास्थ की दृष्टि से काफी लोकप्रिय एवं प्रभावकारी सिद्ध हो रहा है। आस्ट्रिया, अमेरिका और भारत सहित कई देशों में वैज्ञानिक शोध तथा योग विधियों पर वैज्ञानिक अनुसंधान ने साबित कर दिया है कि लॉफ्टर योग तनाव, अवसाद, अनिद्रा तथा अन्य शारीरिक, मानसिक बीमारियों को कम करने में सफल रहा है तथा यह गठिया, एलर्जी, अस्थमा, मधुमेह, कैंसर, मोटापा इत्यादि में लाभदायक सिद्ध हुआ है। नकारात्मकता, क्रोध को दूर करने में सहायक तथा भावनात्मक रूप से रिश्ते सुधारने एवं सकारात्मक सोच में उपयोगी साबित हुआ है।

हास्य योग के प्रकार और स्वास्थ्य लाभ - हास्य योग में हँसी के कई प्रकार हैं, जो अलग-अलग तरह से स्वास्थ लाभ पहुँचाते हैं।

* **हा - हा लॉफिंग -** सीधे खड़े होकर शरीर को उपर की ओर उठाते हुए हा - हा की आवाज में जोर से हँसना। इससे रक्त संचार तेज होता है, जिससे धमनियाँ और शिराओं का फैलाव होता है। मस्तिष्क को पूरी गति से रक्त मिलने से तनाव दूर होता है।
* **हो - हो लॉफिंग -** साँस को बाहर की ओर निकालते हुए हो - हो की आवाज में हँसना। इससे नाभि पर प्रभाव पड़ता है जिससे लीवर व कीडनी मजबूत होते है। उनकी कार्यक्षमता बढ़ती है।

* **इंटरमिटेंट लॉफिंग -** साँस अंदर की ओर लेते और बाहर की ओर छोड़ते हुए रूक -रूक कर हँसना। इससे शरीर के फर्टिलिटी पार्ट में तेजी से रक्त संचार होता है, जिससे फर्टिलिटी अंग मजबूत होते है।

* **इंटरमिटेंट लाँग लॉफिंग -** साँस को अंदर लेकर, फिर उसे रोककर, खुलकर झटके के साथ हँसना। इस हास्य योग से पेल्विक एरिया में तेजी से रक्त संचार होने लगता है जो सेक्सुअल एक्टीवनेस के लिए लाभदायक होता है।
* **लाँग लास्टिंग लॉफिंग -** इसे रावण हँसी कहते है। साँस को बाहर निकालते हुए पूरे शरीर को हिलाते हुए खुलकर हँसना। इस योग से नर्वस मस्कुलर्स, तथा डायजेस्ट सिस्टम पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। फेफड़े और हृदय को अधिक मात्रा में ऑक्सीजन मिलने पर वे मजबूत होते है।
* **साइलेंट लॉफिंग -** अत्यन्त सामान्य बिना आवाज किए मुस्कराहट के साथ हँसना। इससे चेहरा दमकने लगता है, चेहरे की त्वचा पर लाली छा जाती हैं।

* **सांइलेंट जोकर लॉफिंग -** इस हास्य प्रकार में एक-दूसरे को चिढ़ाते

* प्राध्यापक, श्री अटल बिहारी वाजपेयी, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

हुए बिना आवाज किए तेज हँसा जाता है। इससे फेफड़ो में तेजी से 'एअर सर्कुलेशन' होता है। शरीर में तेजी से रक्त संचार होता है। हृदय और मस्तिष्क को पर्याप्त मात्रा में रक्त मिलता है। जिससे शरीर को भरपूर ऊर्जा मिलती है। व्यक्ति की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है।

- **हार्टी विगरस लाफिंग –** इस हास्य योग में मुँह खोलकर दिल से, ताली पीटते हुए खुलकर हँसा जाता है। इसे लॉफिंग एरोबिक भी कहा जाता है। यह रक्त संचार को बढ़ाता है, इससे रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है, हृदय व फेफड़े मजबूत होते है, व शरीर में स्फूर्ति रहती है। सामान्यतया अन्य व्यायाम के साथ इसे भी उपयोग में लाया जाता है।

- **वार्म अप लॉफिंग –** इसमें लयबद्ध तरीके से हा – हा , हे – हे के उच्चारण के साथ हँसना, धीरे – धीरे इसकी गति बढ़ाकर ऊँचाई तक ले जाकर फिर मंद हँसा जाता है। यह प्रक्रिया कई बार अपनायी जाती है। इस हास्य योग से पूरे शरीर में रक्त का तेजी से संचार होता है, तनाव दूर होता है तथा हृदय एवं फेफड़े मजबूत होते हैं।
- **फाइव मिनट लॉफिंग –** इस हास्य योग में 5 मिनट तक ठहाके लगाकर खुलकर हँसा जाता है। इससे चेहरे की रौनक बढ़ती है। शरीर में तेजी से रक्त संचार होता है, जिससे शरीर के भीतरी अंगो की कार्यक्षमता बढ़ती हैं।
- **एटीकेट आफिस लॉफिंग –** इसमें होठो को बंद रखकर सौम्यता से हँसते हुए अंदर कबुतर या मक्खी की भाँति आवाज की जाती हैं। यह हास्य योग नर्वस सिस्टम पर प्रभाव डालता है तथा शरीर में ऊर्जा पैदाकर आलस्य को दूर करता है।

इस तरह कई प्रकार के हास्य योग शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य हेतु लाभदायक है। हास्य योग पर किये गए शोध एवं अध्ययन इस बात को प्रमाणित करते है।

हास्य योग पर विभिन्न अध्ययन

हास्य योग का मनुष्य के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य पर प्रभाव के अनगिनत अध्ययन देश एवं विदेशों में हो चुके हैं, जो यह साबित करते हैं कि हास्य योग लाभदायक प्रभाव डालता है। कुछ महत्वपूर्ण अध्ययन भी इसी बात को परिलक्षित करते हैं। डॉ. एम. एस. छाया एवं उनकी टीम ने (विज्ञान एवं तकनीकी मंत्रालय के सहयोग से, योगा रिसर्च आर्गेनाइजेशन बेंगलोर में) 'कार्यस्थल में तनाव पर लॉफ्टर योगा के प्रभाव' शीर्षक पर वैज्ञानिक शोध एवं अध्ययन किया। जिसमें 3 आईटी कम्पनी में से 200 प्रतिभागी लिए गए तथा उन्हे दो ग्रुप में विभाजित किया गया।

लाफ्टर योगा ग्रुप तथा, कन्ट्रोल ग्रुप। लॉफ्टर योगा ग्रुप में हर दो–तीन दिन में 20 मिनट का हास्य योगा होता तथा 18 दिन के बाद परिवर्तन का अध्ययन किया गया। इसमें हृदय दर, ब्लड प्रेशर, कोर्टिसोल (**a stress hormone**), **PANAS** (**Positive affectivity and Negative Affectivity Scale), PSS (Perceived stress scale)** इत्यादि का अध्ययन किया तथा पाया कि लॉफ्टर योग ग्रुप में हृदय दर (2.33%), ब्लड प्रेशर (उपर का में 6.18% तथा नीचे का 3.829%), कोर्टीसोल (28%) , का स्तर नीचे गिरा तथा **PANS Test** में 'पॉजीटीव इमोशन' में (17.25%) वृद्धि तथा नकारात्मक भावनाओं में (27.2%) कमी दिखाई दी। **PSS Test** (1.99%) कम हुआ अर्थात तनाव में कमी हुई। **Tas Test** (8.84%) कम हुआ अर्थात **Alexithymia** में कमी हुई तथा भावनातमक संज्ञान में वृद्धि हुई। इस प्रकार यह अध्ययन यह बताता है कि लॉफ्टर योगा से कार्यस्थल पर तनाव में कमी होती है। अर्थात मनुष्य के स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। जबकि कन्ट्रोल्ड ग्रुप में परिवर्तन अत्यन्त कम या नहीं देखा गया।

लॉफ्टर योगा से शारीरिक और मानसिक विकास हुआ तथा बीमारी कम हुई जिससे कार्य स्थल पर अनुपस्थिति कम हुई तथा अन्तरवैयक्तिक सम्बन्धों में सुधार दिखाई दिया। केवल 20 मिनट के लॉफ्टर योगा का इतने कम समय में इतना सकारात्मक परिणाम निश्चित ही लॉफ्टर योगा की महत्ता को चिन्हित करता है।

- लॉफ्टर योग के क्षेत्र में औसाका, जापान में **Dr. Tetsuya** द्वारा रक्तचाप, बॉडीमास इंडेक्स (बी. एम. आई), लार कार्टिसोल, दिल दर ख **Variability½** तथा हृदय से सम्बन्धित जोखिम कारकों को मापने का वैज्ञानिक शोध किया जा रहा है। औसाका जापान में **Mariguchi Keivinkai** अस्पताल में **Hajime Kimata** ने लॉफ्टर योग पर शोध किया और पाया कि इससे माँ के दूध में सुधार तथा शिशु की त्वचा एलर्जी, 'एक्जिमा' में कमी आई। उन्होंने एक्जिमा ग्रस्त शिशुओं की माँ पर प्रतिदिन 15 मिनट लॉफ्टर योग से माँ के दूध में 'मेलाटोनिन का काफी उच्च स्तर पाया, जिसका प्रभाव यह हुआ कि माताओं और शिशुओं में एलर्जी कम पायी गयी।
- आनुवांशिकीविद काजुओ मुराकामी ने पूरक चिकित्सा 'लॉफ्टर' द्वारा स्वास्थ्य लागत में 23 फिसदी कटौती शीर्षक पर जापान में शोध किया। ओसाका साग्यों युनिवर्सिटी के ज्वांइट वेंचर प्रोग्राम के तहत किये गये शोध में पाया कि लॉफ्टर चिकित्सा से व्यक्ति के अंदर डीएनए की क्षमता में ऊर्जा का संचार होता है जिससे बीमारीयों से बचाव होता है। 92 प्रतिभागियों के रिसर्च से पाया कि लाफ्टर योग से 23 फिसदी चिकित्सा लागत में कमी आई है।
- एक महत्वपूर्ण शोध में भी लाफ्टर योग से अवसाद, अनद्रिा और बुर्जुगों की नींद की गुणवत्ता पर सकारात्मक प्रभाव पाया गया है। जिन को और चांग हो यू 2011 में कोरिया में **Kyungpook** राष्ट्रीय विश्वविद्यालय डेगू में शोध किया। 65 से अधिक आयु वर्ग के 48 हँसी चिकित्सा विशयों तथा नियन्त्रण समूह में 61 विशयों का अध्ययन किया गया, जिसमें वृद्धावस्था, अवसाद स्केल (जीडीएस) मानसिक स्थिति परीक्षा (**MMSE**) दो समूहो के बीच अनिद्रा गंभीरता सूचकांक (आई एस आई) और पीट्सबर्ग नींद गुणवत्ता सूचकांक (**PSQI**) द्वारा तुलनात्मक अध्ययन किया गया और पाया कि हँसी चिकित्सा से बुर्जुगों के अवसाद, एवं अनिद्रा में कमी आती है।
- भारत के सूरत, बडोदा, बेंगलोर इत्यादि के स्कूलों में नियमित रूप से बच्चों की सभा में प्रारम्भ में 10 मिनट एवं छुट्टी के समय 5 मिनट हँसी सत्र से छात्रो की दिनचर्या, मूड, माहौल, अनुशासन, उपस्थिति और परीक्षा परिणाम में सुधार दिखाया है। भारत के बाहर न्यूयार्क तथा संयुक्तराज्य अमेरिका के कई कॉलेजों में भी यह लोकप्रिय हो रहा है तथा सकारात्मक परिणाम दे रहा है।
- भारत, अमेरिका, डेनमार्क तथा अन्य देशों की कम्पनियों और निगमों में हास्य योग लोकप्रियता प्राप्त कर चुका है। इससे कार्यस्थल पर कर्मचारियों के प्रदर्शन में सुधार तनाव में कमी तथा उत्पादकता बढ़ने की पुष्ठि की गई है। कनाड़ा, अमेरिका, इसराईल और यूरोप में कई वृद्ध देखभाल सुविधाओं में वरिष्ठ नागरिकों द्वारा हास्य योग से जीवन प्रत्याशा में

वृद्धि, अवसाद एवं अनिद्रा में कमी एवं स्वास्थ्य लाभ प्राप्त हो रहा हैं।

- कैंसर रोगियों की प्रतिरक्षा प्रणाली पर हास्य योग का गहरा प्रभाव साबित हुआ है। दर्द और आघात से निबटने में तथा कीमोथेरेपी सत्र के दौरान कई कैंसर अस्पतालों में अमेरिका में हास्य योग आयोजित किया जाता है। भारत, यूरोप तथा अमेरिका की कई जेलों में कैदियों पर हास्य योग का सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। गुस्से और हताशा की नकारात्मक भावनाओं को कम करने, कैदी व्यवहार, बेहतर कैदी स्टाफ सम्बन्ध, हिंसा में कमी इत्यादि पर सकारात्मक प्रभाव साबित हुआ है। भारत, कनाड़ा अमेरिका और पुर्तगाल में शारीरिक और मानसिक रूप से विकलांग , ब्लाइंड स्कूलों में हास्य योग के सकारात्मक प्रभाव दिखाई दिये हैं। उनके कौशल, तथा शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य में जबरदस्त सुधार दिखाया है।
- मनोचिकित्सा वैज्ञानिक जोयल गुडमेन का कहना है कि व्यक्ति को जीवन में एकरसता नहीं आने देनी चाहिये। जीवन में चाहे जितना भी संघर्ष करना पड़े हो शारीरिक –मानसिक जटिलताओं का सामना करना पड़े, लेकिन जीवन में शुष्कता का प्रवेश नहीं आने देना चाहिए। हँसी का फव्वारा ही वह स्त्रोत है जो शरीर में रोग मुक्त करने वाली जीवन शक्ति को बढ़ाता है और मन में नया उत्साह पैदा करता है। वास्तव में हँसना स्वास्थ्य के लिए बहुत अच्छा टानिक हैं।
- आक्सफोर्ड, स्वीटजरलैंड, बैंकाक, आस्ट्रलिया, भारत, दिल्ली, इन्दौर, यूएसए, कुवैत आदि देशो में नवीन शोध जारी है। जिसमें यह भी ज्ञात हुआ है कि सर्जरी के पूर्व 'लॉफ्टर योग' से सर्जरी का भय मिट जाता है तथा दर्द कम होता है और सर्जरी आसान हो जाती है।

निष्कर्ष एवं चुनौतियाँ –

सम्पूर्ण विश्लेषण एवं विभिन्न शोध अध्ययन से स्पष्ट है कि लाफ्टर योगा से मनुष्य के शारीरिक एवं मानिसक स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। आज की तनाव भरी भागम–भाग दिनचर्या में जहाँ व्यक्ति तनाव, डिप्रेशन, अनिद्रा, क्रोध, असंतोष से सामान्य रूप से ग्रसित है, लाफ्टर योग निश्चित ही मनुष्य को इनसे मुक्ति दिलाने में कामयाब हो रहा है। साथ ही विभिन्न बीमारियों ब्लड प्रेशर, हाइपरटेंशन, अस्थमा, हार्ट दर, मधुमेह, कैंसर जैसी बीमारियों में भी लाफ्टर योग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है। यह साबित हो चुका है कि लाफ्टर योग आज के युग में मानवीय स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त उपयोगी है। यद्यपि दुनियाँ भर में हजारों लाफ्टर क्लब नि:शुल्क सेवाएं दे रहे हैं तथा लाखों व्यक्ति इससे जुड़े हैं किन्तु इनका प्रतिशत समग्र का बहुत कम हिस्सा है। बहुत से अशिक्षित, ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्र तो इससे अनभिज्ञ हैं ही किन्तु शहरी, शिक्षित एवं विकसित व्यक्ति भी समय की अल्पता, आलस्यता के कारण लाफ्टर क्लब से सामान्य रूप से दूर हैं। अत: चुनौति हैं इन्हे लाफ्टर क्लब से जोड़ने की, इसके लाभों से अवगत कराने की, तथा सक्रिय रूप से लाफ्टर योग में हिस्सा लेने की। साथ ही लाफ्टर योग को विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में 10 मिनट अनिवार्य कर देना चाहिये। आज का युवा जो आईटी, इंजीनियर, डॉक्टर या अन्य चुनौतिपूर्ण पेशे से जुड़ा हुआ है, तनाव, वर्कस्ट्रेस, डिप्रेसन इत्यादि से ग्रसित है। अत: कम्पनियों, अस्पतालों, कार्यालयों इत्यादि में इसे सक्रिय रूप से अमल करने की आवश्यकता है। तभी मानव कल्याण में योग की भूमिका मील का पत्थर साबित होगी और एक स्वस्थ्य, प्रसन्न, शांत समाज का निर्माण हो सकेगा। डेल कारनेगी का कथन है कि ''हमें हँसी या मुस्कराहट पर कुछ नहीं खर्च करना पड़ता है, परन्तु यह बहुत कुछ पैदा कर सकती है। पाने वाला भी तृप्त हो जाता हैं और देने वाला भी गरीब नहीं होता है।''

संदर्भ–

- **Dr. M. S. Chaya, Svyasa, Bangalore, Yaga research organization- 'The Question: What are the Eefects of Laughter Yoga on stress in the work place.'(2007)**
- **Dr. etsuya Ohira**(2009–10), सामाजिक और पर्यावरण चिकित्सा विभाग ओसाका विश्वविद्यालय, जापान – जापान में नई लाफ्टर योग रिसर्च
- **Hae** जिन को चांग हो यू 2011 'बुजुर्गो में अवसाद पर हँसी चिकित्सा का प्रभाव, पारिवारिक चिकित्सा विभाग **Kyungpook** राष्ट्रीय विश्वविद्यालय डेगू, कोरिया।
- **Hajime Kimata Moriguchi Keijinkai Hospital, Osaka, Japan - "**वलाफ्टर माँ के दूध में सुधार, त्वचा एलर्जी में कमी''**(Journal of Psychosomatic research vol 62, p. 699)**
- जैन जयन्ती, उठो जागो, लक्ष्य की प्राप्ति तक रूको नहीं, नवम्बर 19, 2010 – हास्य चिकितसा असाध्य रोगों में भी उपादेय।
- काजुओं मुराकामी, सांग्यो युनिवर्सिटी, ओसाका, जापान – पूरक चिकित्सा लाफ्टर –स्वास्थ्य लागत में 23 फिसदी कटौती
- कटारिया डॉ. मदन **Laugh for no Reason - 2011, Founder laugter club movement – RajRas@ laughteryoga.org**
- **Laughter yoga international global movement for health, joy $& world peace.**
- **Cataract surgery with laughter yoga, 15 March 2013, http// www.laghteryoga.org/Niews/index/1**
- **www.laughteryoga.org**
  - *** http//www.laughteryougaamerica.D$Om©/learn laughteryogalearn? gltr-lang;**
  - *** http/www.theaqe.D$Om©all/articles/2006/01/12/ 1136956307785 html.**

****

मानवेन्द्रनाथ रॉय की धर्म विरोधी संकल्पना

डॉ. पुष्पा कपूर *

सारांश – एम.एन. रॉय धर्म को मानव की प्रगति में बाधक मानते हैं। धर्म के प्रति आस्था के कारण मानव व्यक्तिगत एवं सामाजिक दायित्वों का निर्वहन उचित प्रकार से नहीं कर पाता। रॉय चाहते हैं कि मानव का दृष्टिकोण बदले, जिससे कि वह समाज में व्याप्त बुराईयों का कारण समाज में ही तलाशे और विवेकपूर्ण उसका समाधान खोजे। समकालीन भारतीय मानववादी चिन्तकों में प्रत्येक विचारक का दृष्टिकोण निराला है, ऐसा ही एक अनूठा रूप दिखाई देता है, रॉय की धर्म विरोधी संकल्पना का। रॉय धर्म को मानव जीवन की प्रगति एवं जीवन की स्वतंत्रता में बाधक बताते हुए अपना विरोध दर्ज करते हैं। वे बताते हैं कि ''धर्म का आरम्भ मानवी अज्ञान तथा मानव की भयभीत अवस्था के कारण हुआ।''[1]

इस प्रकार रॉय धर्म का स्रोत मानवीय भय को बताते हैं। यह ज्ञान की आरम्भिक अवस्था थी, जब प्राकृतिक घटनाओं जैसे–अतिवृष्टि, अनावृष्टि, भूकम्प, महामारी आदि से भयभीत मानव ने किसी अदृश्य शक्ति की कल्पना की। फिर इस शक्ति को व्यक्तित्व सम्पन्न मानते हुए ईश्वर, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिशाली, सर्वव्यापी, दयालु आदि गुणों से विभूषित करते हुए उसकी प्रसन्नता हेतु उपासना पद्धतियों को अपनाया। पूजा–पाठ, तप, प्रार्थना आदि के द्वारा ईश्वर की नाराजगी को दूर करने का प्रयास किया, जिससे कि प्राकृतिक प्रकोपों को ईश्वर रोक दे।

रॉय ऐसी धर्म विषयक चर्चाओं एवं विश्वासों को मानवीय ज्ञान की बाल्यावस्था बताते हुए प्रगति में अवरोधक बताते हैं। वे चाहते हैं कि वैज्ञानिक विकास के दौर में मानव कारकता विषयक चिन्तन करे अपितु ''धार्मिक चिन्तन को वे इतना स्वातंत्र्य देने को तैयार हैं कि लोग व्यक्तिगत स्तर अपने जीवन में धर्म को चाहे तो बनाए रखें, अपने घर में व्यक्ति चाहे जिस देवी–देवता की पूजा करे, परन्तु उसके ये विश्वास और रीति–रिवाज सामाजिक जीवन में बाधा नहीं बनने चाहिए, न ही उनके कारण धार्मिक संघर्षों का निर्माण होना चाहिए।''[2] इस प्रकार रॉय धर्म के मामले को व्यक्तिगत जीवन तक बने रहने देने का सुझाव देते हुए धार्मिक मतों के कारण समाज में कोई वैमनस्य नहीं पनपने देना चाहते।

रॉय के अनुसार धार्मिक व्यक्ति केवल अतीत से जुड़े होते हैं, भाग्यवादिता या नियति को स्वीकार करके वे भविष्य की सहज जिज्ञासावृत्ति पर पूर्ण विराम लगा देते हैं। रॉय के अनुसार धर्म मानवीय जिज्ञासावृत्ति पर कुठाराघात करता है, क्योंकि उसका सम्बन्ध विवेक से नहीं, अपितु भावना से होता है। यही कारण है कि जहां वैज्ञानिक प्रगति ने प्रकृति के रहस्यों को क्रमबद्धतापूर्वक उजागर करने की पहल की है, उससे लोगों की धर्मान्धता में कमी आई है, किन्तु रॉय आशंकित हैं व्यक्ति के भावना पक्ष से, तभी वे बताते हैं कि, ''जब कभी अनिश्चय तथा असुरक्षा बढ़ते हैं तब व्यक्ति पुन: धार्मिक बनने लगते हैं।''[3] रॉय का विचार है कि धर्म की शरण में जाकर व्यक्ति यथार्थ की ओर से आंखे बंद कर लेता है, जो मानवीय अवनति का सूचक है। रॉय भविष्य के प्रति आशावान है – ''अज्ञान, अंधविश्वास, असुरक्षा जितनी मात्रा में कम होंगे उतने अनुपात में धर्म कम होता जाएगा।''[4]

यह सकारात्मक दृष्टि तथ्यपरक है कि जितना वैज्ञानिक आविष्कार प्राकृतिक रहस्यों को उजागर करता जाएगा, जीवन की असुरक्षा को कम करता जाएगा, उतना ही लोग विज्ञानवादी बनेंगे एवं अंधविश्वास से छुटकारा पाएंगे। रॉय चाहते हैं कि मानव मिथ्या धारणाओं से मुक्त हो। विवेक पर आधारित सत्य, सार्वभौम एवं अनिवार्य होते हैं तथा सत्यापनीय होते हैं जबकि श्रद्धा–विश्वास पर आधारित बातें काल्पनिक तथा अनुभव से परे होती है। रॉय मानव स्वातंत्र्य के प्रबल पक्षधर हैं। वे बताते हैं कि ''मानव न तो कोई अज्ञात तत्व है, न ही किसी अलौकिक ईश्वर का अंश। जैविक दृष्टि से मनुष्य एक भौतिक सत्ता है।''[5]

रॉय ईश्वर की सत्ता में विश्वास को मानव की मानसिक गुलामी बताते हैं। ईश्वर को 'सब–कुछ' मानने वाला मानव स्वयं को दीन–हीन पराधीन मानकर, हाथ पर हाथ धरे बैठा रहता है। ईश्वर को अस्वीकार करने से भाग्य, पुनर्जन्म, स्वर्ग–नरक, मोक्ष ये सारे भ्रमजाल टूट जाएँगे। तब मानव अपनी स्वतंत्र शक्ति को पहचानेगा एवं स्वयं पर होने वाले अन्याय एवं अत्याचार को वह चुपचाप न सहकर शोषण के विरूद्ध आवाज उठा पाएगा।

रॉय बताते हैं कि धर्म ने मानव को मानसिक अपंगता एवं गुलामी दी है, जिसके परिणामस्वरूप वह अपने अधिकारियों (मालिकों) को क्रूरतापूर्ण व्यवहार करने की छूट देकर स्वयं को उनका दास मानते हुए अपने पर होने वाले हर जुल्म को भाग्य का लिखा फल मानकर जीवन जीता है। रॉय इस दास मनोवृत्ति के खिलाफ हैं, जो कि उनके अनुसार धर्म की देन है। तभी वे, ''ईश्वर के विरूद्ध विद्रोह करने की मन:स्थिति को क्रांति करने की प्रथम सीढ़ी तथा आवश्यक सीढ़ी''[6] बताते हैं।

रॉय धर्म के पलायनवादी पक्ष के विरोधी हैं, जिसके कारण मानव व्यक्तिगत और सामाजिक दायित्वों का ठीक प्रकार से निर्वहन नहीं कर पाता। वे व्यक्ति का जगत के साथ सीधा सम्बन्ध स्थापित करना चाहते हैं अर्थात् ईश्वर की मध्यस्थता को वे मिटाना चाहते हैं। रॉय जीवन की प्रगति के लिये नवीन विकल्पों का रास्ता खुला रखना चाहते हैं, जिससे मानव का दृष्टिकोण बदले और वह समाज में व्याप्त बुराईयों का कारण समाज में ही तलाशे और विवेक से उसका निराकरण खोजे। इसी तरह प्रगति सम्भव होगी। रॉय के अनुसार धर्म का अवलम्बन लेने वाले मानव की दृष्टि वैज्ञानिक सत्य तक नहीं पहुँच पाती। अत: वे चाहते हैं कि मानव स्व–निर्मित अक्षमता का भय भीतर से निकाल दे, स्वयं को आध्यात्म के चंगुल से मुक्त करे।

संदर्भ ग्रंथ–

1. रीजन रोमान्टिसिज्म एण्ड रिवोल्यूशन, प्रथम संस्करण, पृ. 55 साभार – डॉ.डी.डी. बंदिष्टे : नवमानववाद : एम.एन. रॉय, पृ. 73
2. डॉ. डी.डी. बंदिष्टे : नवमानववाद : पृ.79
3. रीजन रोमान्टिसिज्म एण्ड रिवोल्यूशन, प्रथम संस्करण, पृ. 59 साभार – डॉ.डी.डी. बंदिश्टे : नवमानववाद : एम.एन. रॉय, पृ. 73
4. डॉ. डी.डी. बंदिश्टे : नवमानववाद : पृ.81,82
5. डॉ. राजश्री अग्रवाल : दर्शन, मानव और समाज : पृ. 122
6. डॉ. डी.डी. बंदिश्टे : नवमानववाद : पृ.77
7. चन्द्रोदय दीक्षित : मानववादी विचारक – एम.एन. रॉय
8. नवमानववाद एम.एन. रॉय, अनुवाद – नंदकिशोर आचार्य
9. रमेशचंद्र सिन्हा, विजयश्री : समकालीन भारतीय चिन्तक

* प्राध्यापक (दर्शनशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

A Comparative Study of Self Confidence and Social Intelligence In Single Child and Child with Brothers and Sisters

Dr. Manorama Mathur * Bindiya Lakhani ** Preeti Agarwal ***

Abstract - The present study attempts to study the self-confidence and social intelligence in single child and child with sibling(s) of working mothers. Stratified sampling technique was used on 80 students (40 boys and 40 girls) from different schools of Delhi. Descriptive survey method was used to the present study. To study the main effects of independent variables i.e. single child and child with siblings on dependent variable i.e. self confidence and social intelligence, t-values was calculated. Results of the study revealed that there is significant difference between self confidence of single child and child with brothers and sisters and there is significant difference between social intelligence of single child and child with brothers and sisters. The absence of self confidence and social intelligence causes children to development irreversible behavioural and emotional problems. This study may add to knowledge of the parent and children in improving the student's faith, confidence and emotions

Introduction

Education is a purposeful and organised activity, which deliberately endeavours to modify the behaviour of the educand with a specific goal in view. The child, in a family also learns to cooperate with others and sacrifice his interests for the benefits of others. If parents have the attitude of confidence, sacrifice, love, maturity, the same will be developed in the child.

Self Confidence is essentially an attitude, which allows us to have a positive and realistic perception of ourselves and our abilities. It is characterized by personal attributes such as assertiveness, optimism, enthusiasm, affection, pride, independence, trust, the ability to handle criticism and emotional maturity.

When parents provide acceptance, children receive a solid foundation for good feelings about themselves. If parents encourage children's move toward self reliance and accept and love their children when they make mistakes, children will learn to accept themselves and will be on their way to developing self-confidence.

Social intelligence is a person's competence to comprehend his/ her environment optimally and react appropriately for socially successful conduct. In a family of child with siblings even if the mother is working, children are emotionally and socially dependent on each other. Therefore, it is the need of the study, to find the difference between the self-confidence and social intelligence of single child and child with brother and sisters

Riggio (2006) explained that adult, single child, are quite the opposite of the lonely stereotype. They did not differ in social skills from those children with siblings. Downey (2010) resulted that more siblings means lower grade in school.

Variables Involved

In the study, self confidence and social intelligence was taken as dependent variables where as variables such as single child and child with brothers and sisters constituted as independent variable.

Objectives Of The Study

- To study the self confidence of single child and child with brother and sisters.
- To study social intelligence and its dimensions of single child and child with brother and sisters.
- To compare the self confidence of single child and child with sibling(s)
- To compare the social intelligence and its dimensions(patience, cooperativeness, confidence level, sensitivity, tactfulness, sense of humour, memory, recognition of social environment) between single child and child with sibling(s)

Hypothesis Of The Study

- H0:1 There exists no significant difference in self-confidence of single child and child with brothers and sisters.
- H0:2 There exists no significant difference in social intelligence and its dimensions (patience, cooperativeness, confidence level, sensitivity, tactfulness, sense of humour, memory, recognition of social environment) between single child and child with brothers and sisters.

Tools Used

- Agnihotry's Self-Confidence Inventory(ASC) by Dr. Rekha Gupta

*** Principal **Asst. Professor *** Research Scholar, Aravali College of Advanced Studies in Education, Faridabad, INDIA**

- Social Intelligence Scale(SIS) by Dr.N.K.Chhayda & Usha Ganasan

Statistical Techniques Used:

The data was analysed with the help of statistical techniques mean, standard deviation, and t-test.

Design And Methodology

The design of the present study was descriptive survey method.

Sampling Technique

In this study, stratified sampling was used.

Sample

For the purpose of study, data has been collected from 80 adolescents, from different schools taking 40 from each group.

Analysis & Interpretation Of Data

Objective -1 & 2

To study the self confidence, social intelligence of single child and child with brothers and sisters.

Table-1

Showing N, Mean &S.D. scores of self confidence, social intelligence of single child and child with brothers and sisters

	N	Self Confidence		Social Intelligence	
		MEAN	S.D.	MEAN	S.D.
Single Child	40	27.5	8.45	103.5	7.44
Child With Brother And Sister	40	32.5	6.32	110	5.22

Objective -3

To compare the self confidence of single child and child with brothers and sisters

Table-2

	N	MEAN	SD	t-value	Significance
Single child	40	27.5	8.45	2.99	Significant
Child with Brother & sister	40	32.5	6.32		

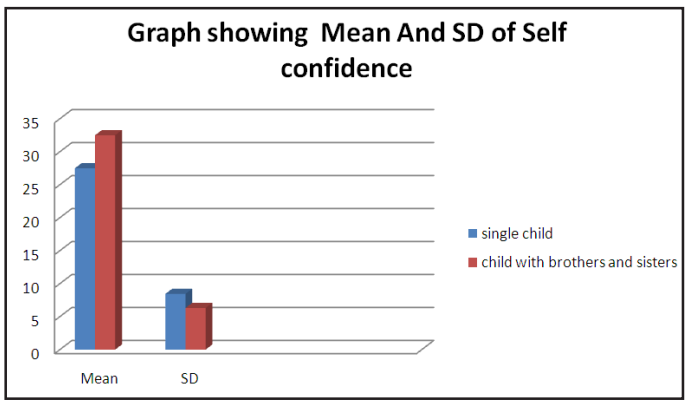

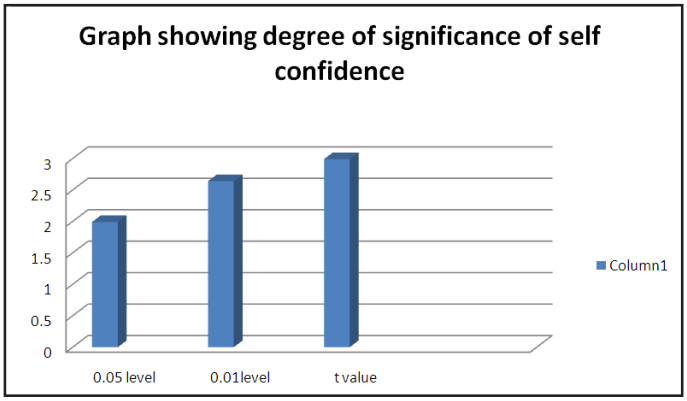

Degree Of freedom=80

Level of significance at 0.05 level=1.99, 0.01 level=2.64

Thus the hypothesis that there is no significant relation between the self confidence of single child and child with brothers and sisters is rejected. There is significant difference is found between the self confidence of single child and child with brothers and sister.

Objective -4

To compare the of single child social intelligence and child with brothers and sisters

Table-3

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	103	7.44	4.51	Significant
Child with Brothers and Sisters	40	110	5.22		difference

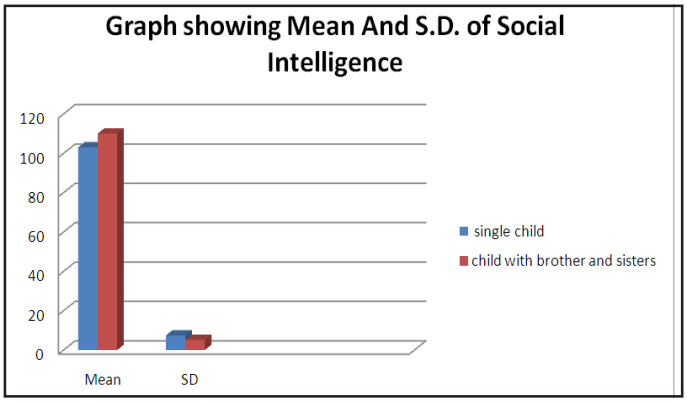

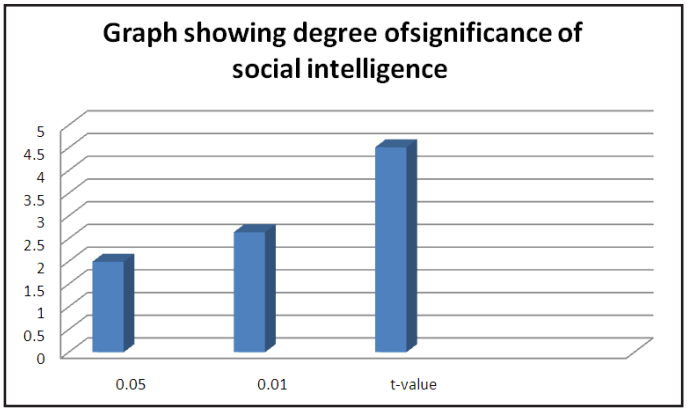

Degree Of freedom=80, Level of significance at 0.05 level=1.99, 0.01 level=2.64

Thus, the hypothesis that there is no significant difference in social intelligence of single child and child with brothers and sisters is rejected and it can be concluded that the significant difference exists between social intelligence of single child and child with brothers and sisters.

Analysis of different dimensions of self confidence of single child and child with brothers and sisters

Dimension	Single child		Child with Brothers And sisters	
	Mean	S.D.	Mean	S.D.
Patience	18.65	2.55	20.4	3.39
Cooperativeness	25.825	4.1	27.575	6.24
Confidence	19.25	3.92	18.65	5.43
Sensitivity	20.05	3.32	22.5	5.65
Recognition of social environment	1.3	0.95	1.675	0.87
Tactfulness	3.825	1.38	4.225	2.17
Sense of humor	4.125	1.83	4.225	5.024
Memory Level	10.475	1.57	10.75	0.94
Overall	103.5	7.44	110	5.22

Graph showing mean scores of dimensions of social intelligence of single child and with brothers and sisters

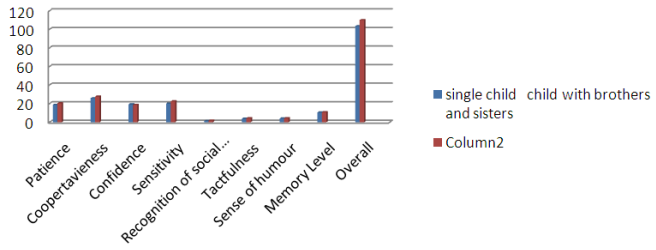

Analysis of various dimensions of social intelligence

Analysis of patience of single child and child with brothers and sisters:

Table-A

Showing N, Mean And S.D. Score and 't'- value of patience of single child and child with brothers and sisters:

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	18.65	2.55	2.612	Significant
Child with Brothers and Sisters	40	20.4	3.39		difference

There is significant difference in patience level of single child and child with brothers and sisters.

Graph showing the degreeof patience level

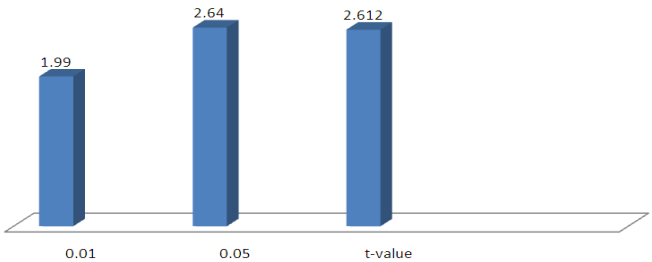

Analysis of cooperativeness of single child and child with brothers and sisters:

Table-B

Showing N, Mean and S.D. Score and't' value of coopera - tiveness of single child and child with brothers and sisters:

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	25.825	4.1	1.483	No Significant
Child with Brothers and Sisters	40	20.575	6.24		difference

Graph showing degree of significance of cooperativeness

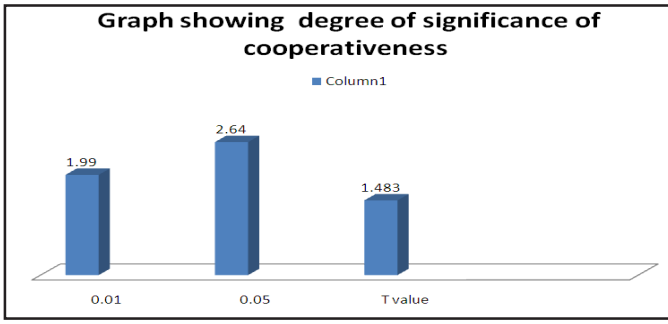

There is no significant difference in cooperativeness level of single child and child with brothers and sisters.

Analysis of confidence of single child and child with brothers and sisters:

Table-C

Showing't'- value of confidence of single child and child with brothers and sisters:

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	19.25	3.92	0.566	No Significant
Child with Brothers and Sisters	40	18.65	5.43		difference

Graph showing degree of significance of confidence

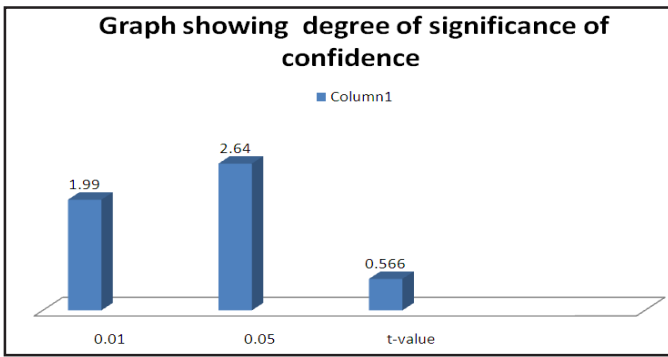

There is no significant difference in confidence level of single child and child with brothers and sisters.

Analysis of sensitivity of single child and child with brothers and sisters:

Table-D

Showing't'- value of sensitivity of single child and child with brothers and sisters:

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	20.05	3.32	2.365	Significant
Child with Brothers and Sisters	40	22.5	5.65		difference

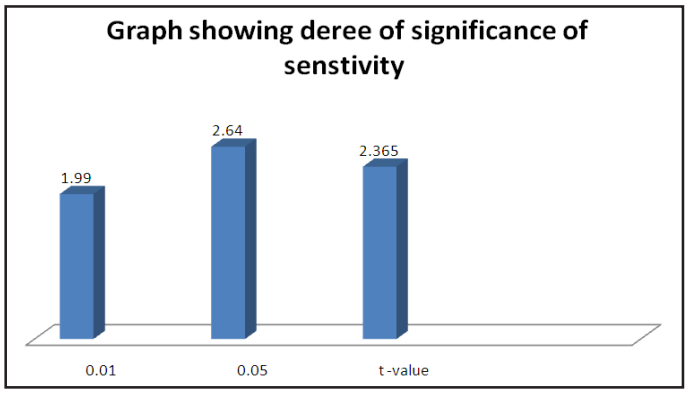

There is significant difference in sensitivity level of single child and child with brothers and sisters.

Analysis of recognition of social environment of single child and child with brothers and sisters:

Table-E

Showing't'- value of recognition of social environment of single child and child with brothers and sisters:

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	1.3	0.95	1.838	No Significant
Child with Brothers and Sisters	40	1.675	0.87		difference

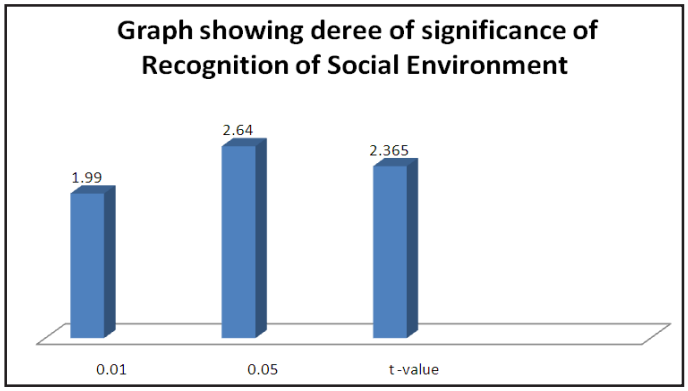

There is no significant difference in recognition of social environment level of single child and child with brothers and sisters.

Analysis of Tactfulness of social environment of single child and child with brothers and sisters:

Table-F

Showing't'- value of Tactfulness of single child and child with brothers and sisters:

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	3.825	1.38	0.983	No Significant
Child with Brothers and Sisters	40	4.225	2.17		difference

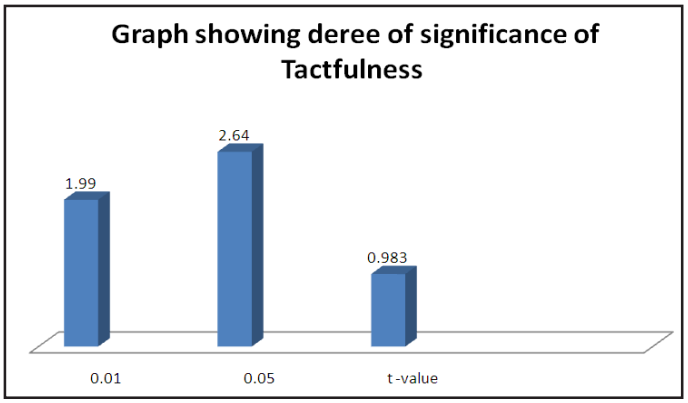

There is no significant difference in Tactfulness level of single child and child with brothers and sisters.

Analysis of sense of humour of single child and child with brothers and sisters:

Table-G

Showing't'- value of Tactfulness of single child and child with brothers and sisters:

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	4.125	1.83	0.118	No Significant
Child with Brothers and Sisters	40	4.225	5.0214		difference

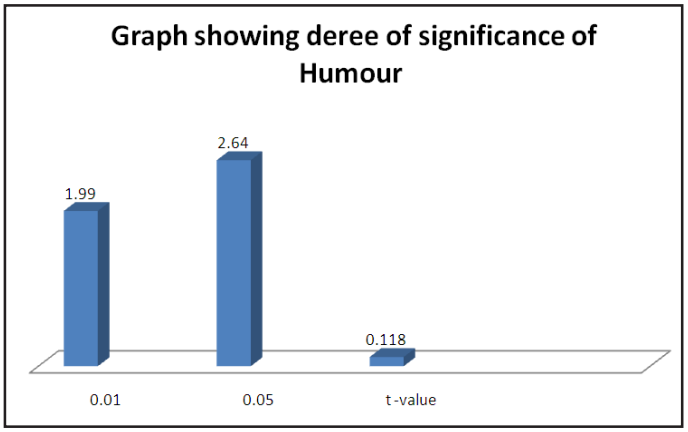

There is no significant difference in humor level of single child and child with brothers and sisters.

Analysis of sense of memory of single child and child with brothers and sisters:

Table-H

Showing't'- value memory of single child and child with brothers and sisters:

	N	Mean	SD	t -value	Significance
Single child	40	10.475	1.57	0.952	No Significant
Child with Brothers and Sisters	40	10.75	0.94		difference

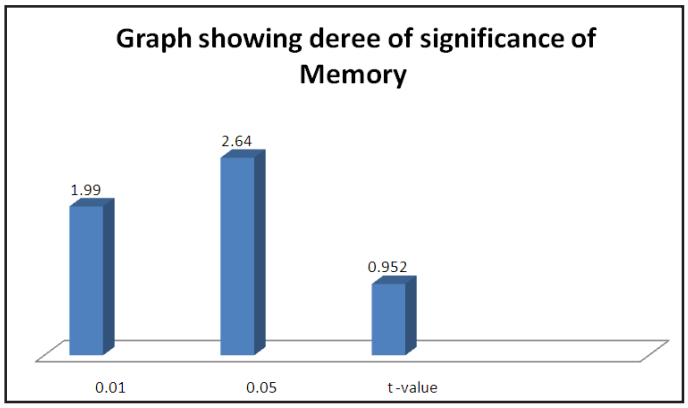

There is no significant difference in memory level of single child and child with brothers and sisters.

Findings Of The Study

- There is significant difference between self confidence of single child and child with brothers and sisters.
- There is significant difference between social intelligence of single child and child with brothers and sisters.

Others Findings

- There is significant difference in patience, memory, sense of Humour level and Tactfulness level of single child and child with brothers and sisters at 0.05 levels.
- There is no significant difference in cooperativeness, confidence and recognition of social environment of single child and child with brothers and sisters.
- There is significant difference in sensitivity level of single child and child with brothers and sisters.

According to the mean values of social intelligence

A. Patience, Cooperativeness, Sensitivity, Recognition of social environment, Tactfulness, Sense of Humour, Memory level of child with Brothers and sisters is more than single child as mean value is higher in case of child with brothers and sisters.

B. Confidence level of child with Brothers and sisters is less than single child as mean value is higher in case of child with brothers and sisters.

Educational Implication Of The Study

- This study help in knowing the effect of the company of brother & sisters on the individuality of other child in the family
- By establishing the a relationship between the self confidence &social intelligence of single child &child with brothers and sisters, the parents as well as the teachers may take care to improve the self confidence & social intelligence of single child and child with brothers and sisters.

Suggestion For Further Studies

- The study could be undertaken for boys and girls separately in high school of rural and urban areas
- A similar study may be done on a large population to get more generalised results & in high schools belongings to different cultural groups with different socio economic status.

Delimitations:

- The investigator has taken only IX and X class students between the age group 13yrs to16yrs for the study from only four schools in the Delhi, National Capital Region.

References

- Douglas, Downey (2010). 'More Siblings means Lower grade in school." Ohio state University, Columbus, American Sociological Review, Nov2010
- Heidi, Riggio (2006) Personality and social skill differences between adults with and without siblings. The Journal of Psychology, California state University, Los Angles.
- Hurlock, Elizabeth B. (1980) "Development Psychology - A Life Span Approach" (5th Edition) New Delhi: Tata McGraw-Hill Publication.

****

Cooperative Learning: An Active Involvement Of Students In Teaching Of Mathematics

Mrs. Durgesh Kunwar * Dr. Anil Kumar Jain **

Abstract- This article describes how cooperative learning strategies promote active involvement of students in mathematical classroom teaching. A mathematics teacher use cooperative learning in classroom teaching with active involvement of students and create a successful learning environment. In this paper researcher explain different cooperative leaning strategies in which can be implementing appropriately in order to promote effective learning in the light of all the aspects of development and also includes necessary steps plan for implementation of CL in classroom teaching. Cooperative learning provides benefits in different aspects of development of students which can be summarized into four major categories- social, psychological, academic and assessment.

(1) Introduction- The **Nation Education Commission (1964-66)** stated "the density of India is being shaped in her class-rooms". In other words it can be said that the progress of each country depends to a large extent on its educational system.In considering how best to prepare students for the challenges of the next century, educators are changing the content of the mathematics curriculum and the ways we teach it. We are moving from a focus on arithmetic and computational skills toward a curriculum that develops students' abilities to think, reason, and communicate mathematically. The goal is to help students construct their conceptual understanding of mathematics, not just memorize facts and rules. The teaching of mathematics is likewise changing in order to meet these new goals. Instead of teaching by telling or by demonstration, a blend of instructional methodologies is recommended that includes individual and group work and direct instruction. The focus is to provide frequent opportunities for students to explore and solve problems, individually and with others; and to develop their mathematical skills in the context of this exploration. The teacher is a facilitator of learning, guiding students' explorations, asking questions that extend their thinking, and encouraging students to communicate their thinking.Cooperative learning is a strategy that employs a variety of learning activities to improve students' understanding of a subject by using a structured approach which involves a series of steps, requiring students to create, analyze and apply concepts (Kagan, 1990).

(2)What Is Cooperative Learning?

Cooperative learning is a strategy that employs a variety of learning activities to improve students' understanding of a subject by using a structured approach which involves a series of steps, requiring students to create, analyze and apply concepts (Kagan, 1990). Cooperative learning is defined as students working together to "attain group goals that cannot be obtained by working alone or competitively" (Johnson, Johnson, & Holubec, 1992). It is a teaching strategy which allows students to work together in small groups with individuals of various talents, abilities and backgrounds to accomplish a common goal. Each individual team member is responsible for learning the material and also for helping the other members of the team learn. Students work until each group member successfully understands and completes the assignment, thus creating an "atmosphere of achievement" (Panitz, 1996).

(3) Why Does Cooperative Learning Deserve A Central Place In Mathematics Instruction?

Cooperation desirable in classroom teaching ***"Whenever problem solving is desired, whenever divergent thinking or creativity is desired, whenever quality of performance is expected, whenever the task is complex, when the learning goals are highly important, and when the social development of learners is one of the major instructional goals...When an instructor wishes to promote interest, positive interaction among learners, ability, a facilitative learning climate, a wide range of cognitive and affective outcomes, and positive relations between themselves and the learners…"*** - ***David W. Johnson, Roger T. Johnson(1991, Learning Together and Alone)***

The study of mathematics is often viewed as an isolated, individualistic, or competitive matter. One works alone and struggles to understand the material or solve the assigned problems. Perhaps it is not surprising that many students and adults are afraid of mathematics and develop math avoidance or math anxiety. A recent volume of the Journal for Research in Mathematics Education was devoted to cooperative learning in mathematics and included reports by

*** Research Scholar Vidyabhawan GSTT College, Udaipur ** Associate Prof., Kota Open University, Kota (Raj.) INDIA**

several investigators (Davidson & Kroll, 1991; Dees, 1991; Yackel, Cobb, & Wood, 1991; Webb, 1991). They often believe that only a few talented individuals can function successfully in the mathematical realm. Small-group cooperative learning addresses these problems in several ways.

- "Small groups provide a forum in which students ask questions, discuss ideas, make mistakes, learn to listen to others' ideas, offer constructive criticism, and summarize their discoveries in writing" (National Council of Teachers of Mathematics [NCTM], 1989, p. 79). Students learn by talking, listening, explaining, and thinking with others.
- Small-group cooperative learning offers opportunities for success for all students in mathematics (and in general). The group interaction is designed to help all members learn the concepts and problem-solving strategies.
- Mathematics problems are ideally suited for cooperative group discussion because they have solutions that can be objectively demonstrated. Students can persuade one another by the logic of their arguments.
- The field of mathematics is filled with exciting and challenging ideas that invite discussion. Mathematics offers many opportunities for creative thinking, for exploring open-ended situations, for making conjectures and testing them with data, for posing intriguing problems, and for solving non-routine problems. Students in groups can often handle challenging situations that are well beyond the capabilities of individuals at that developmental stage.

Ted Panitz (1996) lists over 50 benefits provided by cooperative learning. These benefits can be summarized into four major categories- social, psychological, academic and assessment.

Categories	*Explanation of categories in which benefits provided by cooperative learning*
Social perspective	Students are able to develop and practice skills that will be needed to function in society and the workplace. These skills include: leadership, decision-making, trust building, communication and conflict-management. (Kessler and McCleod, 1985).
Psychological perspective	CL experiences promote more positive attitudes toward learning and instruction than other teaching methodologies. (Johnson and Johnson ,1989) Because students play an active role in the learning process in cooperative learning, student satisfaction with the learning experience is enhanced.
Academic perspective	Students who were taught by cooperative methods learned and retained significantly more information than students being taught by other methods .Individuals tend to give up when they get stuck, whereas a group of students is more likely to find a way to keep going (Johnson & Johnson, 1990). As a result of higher self-efficacy, student grades tend to increase.
Assessment perspective	CL provides instant feedback to the students and instructor because the effectiveness of each class can be observed. With cooperative learning, instructors can use more authentic assessments such as observation, peer assessment and writing reflections

(4) Implementing Cooperative Learning Strategy - Due to the vast array of research, there exist numerous cooperative learning strategies to structure classroom upon. Some following strategies are mostly uses in classroom teaching-

(1) **Student Team Learning (STL)** was developed and researched at Johns Hopkins University in the United States. In Student Team Learning the important thing is not to **do** something together but to **learn** something as a team. Three concepts are central to all Student Team Learning methods: **team rewards, individual accountability,** and **equal opportunities for success.**

(2) **Jigsaw** was originally designed by Elliot Aronson and his colleagues (1978). Jigsaw is another useful structure for cooperative problem solving. The following are guidelines for group problem solving using Jigsaw.

1. *Task division: A task or passage of text material or a problem set is divided into several component parts (or topics).*
2. *Home groups: Each group member is given a topic on which to become an expert.*
3. *Expert groups: Students who have the same topics meet in expert groups to discuss the topics, master them, and plan how to teach them.*
4. *Home groups: Students return to their original groups and teach what they have learned to their group members.*

(3) **Student Teams-Achievement Divisions (STAD)** (Slavin, 1994), In STAD students are assigned to four-member learning teams. The teacher presents a lesson, and the students work within their teams .Finally, all students take individual quizzes. Students' quiz scores

are compared to their own past averages, and points are awarded. These points are then summed to form team scores, and teams that meet certain criteria earn certificates or other rewards.

(4) **Group Investigation** (Sharan & Shachar, 1988), First the teacher presents an introduction to the unit, the students discuss what they have learned and outline possible topics for further examination and student-generated topics, each learning group chooses one and determines subtopics for each group member or team. Each student or group of students is responsible for researching his or her individual piece and preparing a brief report to bring back to the group. The group then designs a presentation (discourage a strict lecture format) and shares its findings with the entire class.

(5) **Numbered Heads Together** (Andrini, 1991) Each student in the group is given a number from one to four. The teacher poses a question, issue, or problem. Students talk this over within the group and prepare to respond. The teacher then calls upon students by number to represent the group.

(6) **Think-Pair-Share** (Andrini, 1991)This strategy allows the teacher to pose questions to the students sitting in pairs. Students silently think of a response individually for a given period of time, then pair with their partners to discuss the question and reach consensus.
The teacher then asks students to share their agreed-upon answers with the rest of the class.

(7) **Learning Together** developed by David Johnson and Roger Johnson(1999) at the University of Minnesota. These involve students working on assignment sheets in four- or five-member heterogeneous groups. The groups hand in a single sheet and receive praise and rewards based on the group product.

(8) **Group Investigation**, developed by Shlomo Sharan and Yael Sharan (1992) at the University of Tel-Aviv,. In this method, students form their own two- to six-member groups. After choosing sub-topics from a unit being studied by the entire class, the groups further break their sub-topics into a presentation or display to communicate its findings to the entire class.

(9) **Teams-Games-Tournament (TGT)** uses the same teacher presentations and teamwork as in STAD, but replaces the quizzes with weekly tournaments (Slavin, 1994).

(10) **Team Assisted Individualization (TAI; Slavin et al. 1986)** In TAI, Teammates check each others' work against answer sheets and help one another with any problems. Final unit tests are taken without teammate help and are scored by student monitors. Each week, teachers total the number of units completed by all team members and give certificates or other team rewards to teams that exceed a criterion score based on the number of final tests passed, with extra points for perfect papers and completed homework.

(5) Necessary Steps Plan For Implementation Of Cooperative Learning

The following necessary steps plan for implementation of CL in classroom:

5.1 Pre-Implementation:-

According to ***Johnson, Johnson, and Smith (1991)***, there are several tasks that an instructor must accomplish before implementing cooperative learning in the classroom.

(1) Specify Instructional Objectives (academic and social) of CL- The instructor must explain why she/he is using CL, describe its benefits, and the results typically found from using CL.

(2) Determine Group Size and Assign Students to Groups- Group size can range from two to four students, depending on the CL task. These groups can be homogeneous or heterogeneous.

(3) Arrange room- Instructors should optimize the space in their classroom so that students/groups can interact and move about the room easily.

(4) Plan instructional materials to promote interdependence- The instructional methods and materials that an instructor chooses must allow each individual to contribute to the group's success in a unique and meaningful way.

(5) Assign group roles- Teacher should make sure there is a distinct role for each student. Teacher's role as facilitator, timekeeper, recorder, checker (for understanding), summarizer, elaborator (on prior knowledge or discussion points), research-runner (gets materials), and wild card (does anything else that needs to be done).

(6) Assign task- The cooperative learning group's task should be interesting, challenging, and motivating

(7) Explain Criteria for Success- The instructor should communicate the group-work skills that will be evaluated.

(8) Structure positive interdependence and accountability- Group size should be kept small so that each member participates and contributes uniquely to the group.

(9) Specify desired behaviors- An essential part of cooperative learning's success is teaching students how to work in a group. To accomplish this, the teacher can conduct mini-lessons on ways to respect others (i.e. praise, taking turns, and shared decision making).

5.2 Implementation:-

During the implementation phase of cooperative learning, the students play the most important role. Some of their tasks at this stage include:

(1) Working together (2) Listening to one another

(3) Questioning one another

(4) Keeping records of their work and progress

(5) Producing the assessment task (product)

(6) Assuming personal responsibility/ being involved in the group

Johnson, Johnson, and Smith (1991) list several roles that an instructor has during the implementation of cooperative learning.

(1) Monitor behavior- During the implementation of CL, the instructor should circulate throughout the classroom, visiting each group.

(2) Intervene if needed- While circulating, if the instructor notices any group conflict or off-task behavior, she should intervene.

(3) Assist with needs- While monitoring the groups' work, the instructor should assist groups with their needs..

(4) Praise- The instructor should let individual students and groups know when they do something right or well.

5.3 Post Implementation:-

Johnson, Johnson, and Smith (1991) give three jobs for the instructor to complete after the students have worked together to complete and submit the task.

(1) Provide closure through summarization- The instructor or each group can summarize the important points of the lesson/unit that they think were important. This helps the instructor to know exactly in which knowledge level the groups are working.

(2) Evaluate students' learning- The teacher should evaluate each group's assessment task and provide feedback to the students about their product and their group performance.

(3) Reflect on what happened- Instructors should keep a record of what worked and why it worked each time they undertake a CL lesson or unit. This information can and should be shared with their cooperative learning support group.

(6) Conclusion- Cooperative learning is a viable and effective instructional methodology for teaching and learning mathematics and helps make mathematics exciting and enjoyable for both students and teachers. Cooperative strategies can be integrated at any grade level and for any mathematical topic. ***Davidson (1990a)*** reported that many positive effects are noted by teachers and students. Students "learn to cooperate with others and to communicate in the language of mathematics. The classroom atmosphere tends to be relaxed and informal, help is readily available, questions are freely asked and answered, and even the shy student finds it easy to be involved. Students tend to become friends with their group members, and the teacher- student relationship tends to be more relaxed." In addition, "Many students maintain a high level of interest in the mathematical activities" and "have an opportunity to pursue the more challenging and creative aspects of mathematics while they achieve at least as much information and skill as in more traditional approaches."

References

1. Davidson, N. (Ed.) (1990a). Cooperative learning in mathematics: A handbook for
2. Davidson, N., & Kroll, D. L. (1991). An overview of research on cooperative
3. Dees, R. L. (1991). The role of cooperative learning in increasing problem-solving ability in a college remedial course. Journal for Research in Mathematics Education 22, 409-421.
4. Janke, R. (1980). Computational errors of mentally-retarded students. Psychology in the Schools, 17, 30 - 32.
5. Johnson, D. W., & Johnson, R. T. (1989). Leading the cooperative school. Edina, MN: Interaction.
6. Johnson, D. W., & Johnson, R. T. (1990). Social skills for successful group work. Educational Leadership, 47(4), 29 - 33.
7. Johnson, D. W., Johnson, R. T., & Holubec, E. J. (1986). Circles of learning: Cooperation in the classroom. Edina, MN: Interaction Book Company.
8. Johnson, D.W. & Johnson, R.T. (1991). Learning together and alone. Englewood Cliffs, N.J.: Prentice Hall.
9. Johnson, D.W., Johnson, R., & Smith, K. (1991). Active learning: Cooperation in the College Classroom. Edina, Minnesota: Interaction Bock Company.
10. Kagan, S. Educational Leadership (Jan. 1990). Retrieved September 2, 2003, from:
11. Kessler, R., & McCleod, J. (1985). Social support and mental health in community samples. In Cohen and Syme (Eds.), Social Support and Health. New York: Academic Press. Retrieved September 2, 2003.learning related to mathematics. Journal for Research Mathematics Education, 22, 362-365.
12. Panitz, T. (1996). A definition of collaborative vs. cooperative learning. Retrieved June 28, 2012,
13. Sharan, S. and C. Shachar (1988), Language and Learning in the Co-operative Classroom, New York: Springer-VerlaSlavin, R. E. (1999). Comprehensive approaches to cooperative learning. Theory in Practice, 38 (2), 74-79.
14. Sharan, Y. andS. Sharan (1992), Expanding Co-operative Learning through Group Investigation, New York: Teachers College Press.
15. Slavin, R.E. (1994), Using Student Team Learning, 3rd Ed. Baltimore, MD: Success for All Foundation. Elementary and Middle Schools, Johns Hopkins University.
16. Slavin, R.E., M.B. Leaveyand N.A. Madden (1986), Team Accelerated Instruction Mathematics,Watertown, Mass: Mastery Education Corporation.teachers. Menlo Park, CA: Addison-Wesley.
17. Yackel, E., Cobb, P., & Wood, T. (1991). Small group interactions as a source of learning opportunities in second grade mathematics. Journalfor Research in Mathematics Education, 22, 390-408

The Right To Housing & The Right To Be Human

Dr. Archana Ranka *

1. Introduction :

Our long experience is that the right to housing ties up intimately with the need to feel human and live a life of dignity. The above conditions can be seen as meeting the following set of requirements which when fulfilled, a person feels like a human being.

There has to be freedom from fear, uncertainty and anxiety. Housing should promote mental and physical well being. It must contribute towards a feeling of dignity and protect the self-respect of every man, woman and child. And most important of all, it should allow the marginalized to think and plan for the future. This is the most important factor that distinguishes human beings from the rest. In this light, there has been debate around the effectiveness of using the term 'housing' to describe all that comprises its import.

Jai Sen[1] says, that the place where we live is not merely 'housing'. Rather, *…it refers not merely to the four walls and roof (and floor) within which we may dwell, but to the deeper existential relations of dwelling and to its wider social and cosmological sense: it refers to the act of 'settling and residing' somewhere, of in-habiting it, and of making it one's home: and ultimately, to struggling for and building 'one's place in the world's Indeed, it is a fundamental part of the act of building our world itself, and through this, of gaining some control over our lives. Where we live, after all, is or becomes, if we can live there for long enough the centre of our cosmos and universe, at that point in our lives, and indeed, it contributes strongly to our cultural and social identity, and in a very real sense, all our social, economic, and other relations are constructed around and from this 'place' . It gives us meaning. Our home is also the place from which we claim two of our most basic political rights and freedoms: Our right to vote (and thereby to participate in institutional governance), and in many senses even more fundamentally, our freedom to build community and so to exercise governance over our individual and collective lives.*

However, internationally and for the purposes of the understanding of the human right to housing, the term used is 'housing' which also in itself, contains more than an understanding of four walls and a roof. There is another Kind of debate around the term 'housing'. It has been argued that housing is actually a verb and not a noun. In other words,

The former embodies the holistic view of housing as a place of social production and reproduction while the latter represents commodification or mere access to physical structure of four walls and roof.[2]

As has been documented by Pimple and Laysa, the structural adjustment program in India has directly affected access to housing through a number of processes. There has been a systematic dilution and subsequent amendment of policies, which were initially geared towards equalizing ownership of land and protecting housing from market speculation. It has also encouraged the opening up of government held enterprises and land for commercial purposes, the result of which has been massive displacement violent evictions and subsequent homelessness of communities.

The NCHR[3] identified certain endangering trends in urban housing which included providing housing with 'industry status' and amending social controls on profiteering, increased speculation in urban and fringe-urban land through the involvement of foreign investors, development of high cost housing projects, and the opening up of township development to the private sector. In the rural and tribal contexts, people's survival has been threatened by their deprivation from customary access to natural resources. On the other hand, building materials and essentials are being diverted to meet the demands of elite housing and luxury tourism. Pushed into a corner with these developments, when those who are poor, displaced and vulnerable take recourse to finding their own solutions to inadequate housing, they are labeled as encroachers, squatters and 'illegal' residents. These measures on the part of the vulnerable are met by eviction, violence, and further displacement. To make matters worse, attempts by people and people's organizations to assert their basic rights of housing, livelihood and self-determination are also been met by suppression and repression.

2. The forces of globalization liberalization affect life of poor masses.

The forces of globalization and liberalization have also affected the lives of the poor through the changing economy and polity of the country. The flexibility in labour markets, segmentation that already exists, the enormity of the informal sector and paucity of labour laws which can protect the

*** Head, School of Law Devi Ahilya University, INDORE (M.P.) INDIA**

interests of the working classes have added to the problems. The prices of the items in the food basket have also increased. Cuts in social sector spending have resulted in health and education services also becoming more expensive. Other infrastructure services such as electricity have been privatized resulting in huge rises in costs to users. All these trends have resulted in a steady decline of the basic standard of living of the poorer and more vulnerable groups within the economy.

The forces of globalization and liberalization have converted everything into not just commodities but also into capital. Earlier, economists spoke of different factors of production. Hence one most have land, labour capital and enterprise but with globalization, there is "only capital". This one has, as factors of production, different kinds of capital-physical, financial, entrepreneurial and human.

Human beings have also been converted into capital for whom investments in health, education and housing have to be made so as to enhance their productivity. The acute danger of such a perception lies in the marginalization of all those segments of society that are not productive by the mandate of globalization. Hence the old, ill and inefficient are weeded out. That is the reason for the 'new homeless' new hungry and 'new' ill' categories of HIV infected persons. To add to the woes the 'old categories of vulnerable sections such as women, the aged, children etc are even more at risk in the era of globalization and liberalization.

Traditionally, women, children, marginalized castes and tribes stood to be worst affected by discrimination in resource and service distribution. These groups have always been pointed out by Pimple and Laysa,[4] that there are new groups of vulnerable people who are victims of current forces of development and growth. These include single women, street children, migrant workers, physically and mentally challenged, people affected by HIV/AIDS and the aged whose vulnerability is much higher than the average poor. These are the vulnerable from among the vulnerable.

Their compounded discrimination impacts in acute ways and they are the first to be disowned, rejected and evicted. Sources of livelihoods, legitimacy both political as in citizenship and social are denied to them. This causes a spiral wherein their means of livelihoods being slim, access to credit, other assets, etc becomes even slimmer.

Hence, one can see that the need for intervention comes because access to housing is not easy. In spite of the existence of the right, housing is not available and/or accessible to everyone. In fact, it is closely tied to several factors. These are listed below:

(i) Tied to place (geography) Socio- Cultural

Housing depends upon topography. Rural housing is closely linked to the geography it is situated in.

Housing is influenced by urbanization. Planning forms an important component of location. Planning is guided by economic and political considerations.

Housing is determined by the extent of privatization in the systems.

Housing is determined by the extent of privatization in the system. Common property resources make available a different matrix of available facilities.

(ii) Tied to space (socio-cultural)

The spaces that individuals, families and communities inhabit reflect upon the housing that they can access and avail of. Gender, caste, class, race, ethnicity, citizenship status, etc have an important bearing upon where housing is available accessed.

(iii) Tied to finance (economic)

Other spaces can be overridden if finances are available to access housing. Privatization necessitates financial resources to access housing.

(iv) Tied to vested interest (political)

Humanitarian considerations with respect to housing are often bypassed by vested interests.

Power dynamics determine housing available to people.

3. Conclusion :

The change in the usage of words has affect this right diversely in respect to housing. It is not only shelter it is essentially housing as human right of each individually in the country who is given birth (by the parents / God) as descendants on the land also. They must indeed to be treated humanly. So this right now in 21st century in India has become the right to be human also. It does required new legislation (central) as well as common states legislations in turn it instantly needs drastic amendment in that constitution to make it constitutional right under proposed Art. 300 B but before it had the nature to be fundamental right like 19(1) (a) or Art 21, or 21A irrespective of capacity of the Government right exist or not.

Refernces-

1. See. Jai Sen, The reclaiming of eminent domain the sovereignty of the people, the legitimacy of the state. The relevance of the Narmada hearings, published in Frontline, May 12, 2000, pp. 104-109. Also http://www.narmada.org/articles/JAi_SEN/reclaim.html
2. See,www.unescap.org/pdd/calendar/HR2004/presentations/7India-Pimple/FinalReport%252025jun04-Pimple.pdf+The+sum+of+all+actions+YUVa+Minar+Pimple&hl = en&lr = lang_en&ie=UTF-8(HTML format)
3. NCHR-National Campaign for Housing Rights was initiated in 1986.
4. Pimple and Laysa

सामूहिक सौदेबाजी बनाम न्याय निर्णय (आलेख) Collective Bargaining Vs. Adjudication

डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन *

भारत में इस बात पर बहुत मतभेद पाया जाता है कि क्या देश में अनिवार्य न्याय निर्णय का स्थान सामूहिक सौदेबाजी द्वारा ले लिया जाना चाहिये। एक ओर यह विश्वास किया जाता है कि अनिवार्य न्याय निर्णय एवं उससे संबंधित न्यायिक विधि (**Judicial procedure**) ने आपसी वार्ताओं (**Negotions**) और सामूहिक सौदेबाजी को सिर्फ एक औपचारिकता के रूप में सीमित कर दिया है, जो किसी अच्छे नतीजे को प्राप्त करने के योग्य नहीं है। यह कहा जाता है, कि न्याय निर्णय औद्योगिक संबंधों में कोई सुधार नहीं करता। कोई भी पक्ष भूलने एवं क्षमा करने के लिए तैयार नहीं होता और एक पक्ष में दबी दुश्मनी का दृष्टिकोण तथा दूसरे में प्राप्त होने वाला असंतोष अच्छे एवं मधुर औद्योगिक संबंधों को असंभव बना देता है।

यह भी कहा जाता है कि न्याय निर्णय इस देश में श्रमिक संघ आंदोलन के स्वस्थ विकास में एक बड़ी रूकावट रहा है। अत: सामूहिक सौदेबाजी का पक्ष लेने वालों का कहना है कि भारत में औद्योगिक संबंधों की मौजूदा पद्धति ने यद्यपि यह सामूहिक सौदेबाजी में ऊपरी तौर से रूचि लेनी है, केवल न्याय निर्णय को जारी रखा है।

न्यायालय निर्णय जिसे उस समय तक जबकि श्रमिक मंजे हुए नहीं होते और बराबरी से सेवायोजकों के साथ सौदा करने लायक नहीं होते एक अस्थाई साधन के रूप में अपनाया जाना था, आशाओं को पूरा करने में असफल रहा है तथा इसने अपने कार्य संचालन या क्रिया विधि द्वारा श्रमिक संघो के विकास को रोका है और उन्हें मुकदमेबाज बना दिया है। यह कहा गया है कि सिर्फ एक रास्ता यह है कि विवादों के निपटारे के लिए तीसरे पक्ष पर निर्भरता को पूरी तरह छोड़ दिया जाये और सभी अर्थों सहित हड़ताल या तालाबंदी के अधिकार को शामिल करते हुए सामूहिक सौदेबाजी को स्वीकार किया जाये।

ऐसा सुझाव देते समय यह माना जाता है कि शुरू की अवस्थाओं में सामूहिक सौदेबाजी से औद्योगिक विवाद उठ सकता है और कामबंदियॉ मौजूदा स्थिति में कुछ ज्यादा हो सकती है, किन्तु ऐसा यकीन किया जाता है कि सिर्फ एक अस्थाई अवस्था रहेगी और कुछ समय की अनिश्चितता के बाद परिस्थिति स्थाई हो जायेगी। न्याय निर्णय को जारी रखने के पक्ष में ठोस कारण देते हुए कहा जाता है कि कुछ सीमाओं के बावजूद यह देश में कुछ हद तक औद्योगिक शांति कायम रखने में काफी सफल हुआ।

न्याय निर्णय के समर्थकों का यह ख्याल है कि यदि विवादग्रस्त मामलों को सामूहिक सौदेबाजी द्वारा निपटाने के लिए छोड़ दिया गया तो औद्योगिक संबंध और अधिक खराब होते कामबंदियाँ और अधिक लम्बी होती और कार्यदशाएँ मौजूदा स्थिति की तुलना में कम अच्छी होती।

अत: समर्थक कहते हैं कि मौजूदा परिस्थतियों में सबसे अच्छा रास्ता उस समय चल रहे ढंगों को जारी रखना तथा उपयुक्त सुधारों अथवा संशाधनों द्वारा इसे ज्यादा माने जाने योग्य बनाने के लिए, इसकी कमियों को दूर करने का प्रयास करना है।

इस संबंध में 4 मुख्य बात कही जाती है :-

1. वे परिस्थितियां, जिनमें अनिवार्य न्याय निर्णय की व्यवस्था जरूरी हो गई जबकि औद्योगिक विवाद अधिनियम 1947 बनाया गया, आज भी मौजूद है।
2. संबंधित पक्ष, खासतौर से श्रमिक संघ अब भी अपनी संगठनात्मक और दूसरी कमजोरियों के कारण सामूहिक सौदेबाजी की पूरी जिम्मेदारियों को उठाने में न तो तैयार है और न ही वे इसके लिए समर्थ है।
3. न्याय निर्णय द्वारा सरकारी हस्तक्षेप को तुरन्त हटा लेने से औद्योगिक क्षेत्र में गडबड़ी पैदा हो जायेगी जिसे बर्दाश्त करना देश के लिए कठिन होगा।
4. विवाद से संबंधित तीसरा पक्षकार अर्थात् समाज हमेशा होता है और राज्य को समाज का प्रतिनिधित्व करने के कारण उसमें हस्तक्षेप करने और किसी निर्णायक के फैसले को मानने के लिए पक्षों को मजबूत करने का अधिकार जरूर होना चाहिये। राष्ट्रीय श्रम आयोग का कथन इस संबंध में महत्वपूर्ण है, जिस ढंग से भारत में न्याय निर्णय को अपनाया गया है उससे विवादों की अवधि लम्बी हुई है, उपयुक्त सरकार द्वारा विवेक प्रयोग, यद्यपि यह उचित प्रकार से किया जाता है तो भी, प्रभावित होने वाले श्रमिक या सेवायोजक उसे अनुचित ढंग पर प्रयुक्त किया गया समझ सकते हैं।

भारत में अनिवार्य न्याय निर्णय को सामूहिक सौदेबाजी द्वारा बदलने का समर्थन किया किन्तु न्याय निर्णय को सामूहिक सौदेबाजी की किसी पद्धति के द्वारा यकायक या तुरन्त बदलना न तो ठीक है और न व्यावहारिक होगा। परिवर्तन की क्रिया धीरे-धीरे होनी चाहिये। किसी सौदेबाजी को सामूहिक सौदेबाजी की दिशा में यह घोषित करते हुए ले जाना चाहिये कि उसे औद्योगिक विवादों के निपटारे के ढंग में प्राथमिकता मिलेगी। प्रस्तावित परिवर्तन की सफलता के लिए आवश्यक दशायें पैदा करनी होगी। इस तरह के परिवर्तन की एक महत्वपूर्ण पूर्व शर्त संघों को मान्यता प्रदान है जिसके लिए न सिर्फ कानूनी तौर से संतोषजनक व्यवस्थायें करनी होगी अपितु ऐसी दशायें भी पैदा करनी होंगी। जिनमें इस तरह की व्यवस्थाओं की सफलता की गुजांइश है। अत: यह ठीक है कि किसी समय एवं कुछ परिस्थितियों में न्याय निर्णय आवश्यक और उपयोगी हो सकता है, किन्तु देश में अच्छे औद्योगिक संबंध सिर्फ सामूहिक सौदेबाजी और श्रमिकों एवं सेवायोजकों के बीच आपसी समझ-बुझ एवं सद्भावना द्वारा ही बनाये और कायम किये जा सकते हैं। अन्त : भारत में सामूहिक सौदेबाजी कुछ ही संस्थाओं तक सीमित है। इसके विकास की आवश्यकता है।

इसके विकास के लिए सुझाव इस प्रकार दिये जा सकते हैं :- सुदृढ़ श्रमसंघ को मान्यता, प्रजातांत्रिक कार्य विधि को स्वीकार करना, पक्षकारों के दृष्टिकोण में परिवर्तन, श्रमिकों को शिक्षण-प्रशिक्षण, सेवायोजकों के सुदृढ़ संगठन, सरकारी नीतियों का समावेश, संदेश का आदान-प्रदान, विस्तृत सामूहिक अनुबंध होना आदि।

* प्राचार्य, श्री जवाहरलाल नेहरू विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत

High Altitude And Athletic Training

Ramneek Jain * Dr. Um Singh Rathore**

Abstract - The underlying problem with high altitude (>2000 m) is that there is less oxygen and while this may not be that threatening to individuals at rest it does pose a challenge to athletes. Of course for the pure anaerobic events no adaptation is required so this discussion is necessarily focused on endurance training and competition. In general the higher the altitude the longer it takes to adapt. Understanding the adaptation process and the things that you can do to aid it will make for a less taxing transition. A number of physiologic changes occur to allow for acclimatization at high altitude. These can be divided into immediate, which take place over several days, and long term which requires weeks to a few months.

Introduction The first thing that happens if anyone is at high altitude is that his/her respiratory rate and heart rates speed up. This occurs both at rest and during sub-max. exercise. This helps offset the lower partial pressure of oxygen. One will not be able to reach your max VO2 so don't get frustrated. The faster breathing rate changes your acid-base balance and this takes a little longer to correct.

The longer term changes are

1. a decrease in maximum cardiac output a decreased maximum heart rate
2. an increased number of red blood cells
3. excretion of base via the kidneys to restore acid-base balance. (Unfortunately, the net result is that you have less tolerance for lactic acid.)
4. a chemical change within red blood cells that makes them more efficient at unloading oxygen to the tissues.
5. an increase in the number of mitochondria and oxidative enzymes.

Practical Implications For Athletes

1. **Diet -** A high carbohydrate, low salt diet allows for better adaptation and less risk of "mountain sickness". Some people experience significant decline in appetite and the resulting loss of muscle mass may hinder performance. Iron is used to make hemoglobin and the demand for making more red blood cells may require iron supplementation -- especially in women and vegetarians. Megadoses of vitamins are not helpful and are potentially dangerous.
2. **Fluids -** Because mountain air is cool and dry one can lose a lot of water so be sure to maintain adequate hydration.
3. **Alcohol -** It is best to avoid alcohol consumption during the acclimatization period since it appears to increase the risk of "mountain sickness".

Workout Intensity - This will necessarily be lower until adaptation can occur. Pushing your workouts too hard may increase your risk of overtraining or injury. Additionally some people just do not adapt as well as others. There is not one workout program that is appropriate for everyone -- just like at sea level. It is best to keep a log in which you rate fatigue during workout and at rest, morning resting heart rate, weight, and mood. Correlate this with the intensity of your workouts and this will help mold a flexible routine that is right for you.

Performance - The body's adaptation to high altitude helps significantly but doesn't fully compensate for the lack of oxygen. There is a drop in VO2 max of 2% for every 300 m elevation above 1500 m even after allowing for full acclimatization. I know that this is a difficult concept to believe because so many programs have touted the benefits of high altitude training. To fully appreciate this realize that there aren't any world record times at high altitudes. Think about this a moment. The air density is much lower, thus wind resistance is much lower. Wind resistance is the cyclists biggest barrier to speed. If all other factors were equal, then there must be faster times at higher altitudes. Because there aren't, means that something else must have decreased. That something is the engine -- the human engine.

Furthermore, while adaptation to high altitude makes you better at high altitude it hasn't proved useful for making you faster at sea level. There is a lot of mysticism that surrounds the belief of enhanced sea-level performance after altitude training, but the current scientific evidence is lacking. The reason is that some of the adaptive responses at high altitude are actually a hindrance at lower altitude. As more research is done then perhaps a training regimen that shows definitive improvement will emerge. The best advice as of 1994 is that high-altitude training is like "magic shoes" -- If it works for you then wear them.

There is some more recent evidence to suggest that a "train-low, sleep high" approach may confer some advantages. In this scenario, training is carried out at low altitude -- to push anaerobic threshold, and VO2 max --but sleeping is done at high altitude so that the hypoxic stress increases red cell mass. Certainly a creative approach and one which might yield excellent results, because it may give the athlete the "best of both worlds". In a practical sense it may be difficult to construct, but if you are lucky enough to live in a situation that allows this type of training, it is worthy of consideration.

Mountain Sickness- Mountain sickness is the name given to a cluster of symptoms that occurs in some individuals after rapid ascent to high altitude. Mild forms of the illness may affect up to 50% of people traveling to altitudes above

*** Research Scholar, M.L.Sukhadia Uni., Udaipur ** Asst. Prof. B.N. College of Physical Education, Udaipur (Raj.) INDIA**

14,000 ft. Severe forms of the illness may be life threatening because of pulmonary or cerebral edema.

Symptoms of headache, malaise, and decreased appetite are fairly common amongst individuals traveling to altitudes greater than 8,000 ft -- although this can occur at lower altitudes. The mild forms of mountain sickness can usually be treated with rest, hydration, analgesics (eg. ibuprofen), and alcohol avoidance. If you are already experiencing these symptoms do not go to higher altitudes. There is a medication that can help prevent this illness. Individuals who have already experienced an episode of mountain sickness are at risk for future trips and should seek medical advice.

Severe forms are characterized by severe shortness of breath, cough, severe headache, confusion, or hallucinations. This may progress to coma and death. This is a medical emergency. Immediate descent to lower altitude, administration of oxygen, and medical attention are required.

Pike's Peak Marathon takes place every August and is one of the most grueling races in the world. The race starts at 6, 280 feet and climbs a staggering 7,830 vertical feet to reach a summit of 14,100 feet before a bone-battering descent. This race makes ordinary hill work look like anthill work. You also have to guess that the vast majority of the competitors are ill-prepared for the extra demands of vertical mileage, let alone the impact of altitude. The average ascent takes runners four to four and a half hours, for a total average marathon of six and a half to seven hours.

Running at high altitudes decreases the amount of oxygen getting to the muscles. A low atmospheric pressure in the thin air makes the blood less oxygen-rich as it travels to the muscles. As the marathon proceeds and runners climb higher, the problem gets worse and worse as the runners' oxygen demands increase. Regardless of whether a runner lives and trains at a high altitude or not, high altitude slows performance. Of course the problem is a mountain-sized one for the sea level dweller running at high altitude since his/her body has not had time to make adjustments. Even for well-trained athletes, acute altitude sickness can result in pulmonary or cerebral edema, in which abnormal amounts of fluid collect in the lungs and around the brain. Other symptoms include severe headache, nausea and vomiting, coughing, and swelling in the hands and feet. To complicate matters more, dehydration can be a serious problem at high altitude.

Research studies have explored the idea of taking advantage of the body's physiological changes at high altitude as a "natural blood doping" effect. As the blood increases its red cell volume in response to a lower availability of oxygen, VO2 max also increases. Sea level performance has been shown to improve as a result

Exploring Activities- On the other hand, while adaptation to altitude will improve a runner's oxygen transport function, it does not necessarily mean faster running times at sea level. Claims to the contrary argue that since high altitude performance decreases, athletes cannot train at faster paces and therefore race times can actually suffer from high altitude training. The idea of "live high-train low" has developed out of the argument and expensive sleep chambers to induce high altitude conditions have become available.

For most of us, these are questions of remote interest. The vast majority of runners live and train at sea level, and makes the best of it. For any of you running the Pike's Peak Marathon, accolades are in order just for the attempt. Randy Eichner, M.D., suggests the following tips for handling high altitude:

- Take it easy on day one.
- Take a walk or nap. Give your body time to adjust before taking on a full workout.
- Altitude is very dehydrating. Drink lots of water and juices, beginning during travel to high altitude.
- Avoid alcohol. It's a diuretic and depresses the normal breathing response to altitude.
- Limit caffeine. It's also a diuretic.
- Eat pasta. The carbs are good for athletes in general and at altitude there's another benefit-the extra CO2 they produce spurs the breathing response.
- Avoid sleeping pills but do get a good night's sleep.

References

- Baillie, Kenneth; Simpson, Alistair. "Altitude Tutorials - Altitude Sickness". Apex (Altitude Physiology Expeditions). Archivedfrom the original on 9 January 2010. Retrieved 26 January 2010.
- Douglas, Danielle; Robert Schoene (2010). "End-tidal partial pressure of carbon dioxide and acute mountain sickness in the first 24 hours upon ascent to cusco, peru (3326 meters)".Wilderness and Environment Medicine 21 (2): 109-113.doi:10.1016/j.wem.2010.01.003.
- Eichner, Randy Journal of Applied Physiology, 2007, Vol. 83, No. 1, pp. 102-112.
- Grissom CK, Roach RC, Sarnquist FH, Hackett PH (March 1992). "Acetazolamide in the treatment of acute mountain sickness: clinical efficacy and effect on gas exchange". Annals of Internal Medicine 116 (6): 461-5. PMID 1739236.
- Hackett P, Shlim D (2009). "Chapter 2 The Pre-Travel Consultation - Self-Treatable Diseases - Altitude Illness". In Turell D, Brunette G, Kozarsky P, Lefor A. CDC Health Information for International Travel 2010 "The Yellow Book". St. Louis: Mosby. ISBN 0-7020-3481-9. Retrieved 21 November 2009.
- K. Baillie and A. Simpson. "Acute mountain sickness". Apex (Altitude Physiology Expeditions). Retrieved 8 August 2007. - High altitude information for laypeople
- Roach, Robert; Stepanek, Jan; and Hackett, Peter. (2002)."24". Acute Mountain Sickness and High-Altitude Cerebral Edema. In: Medical Aspects of Harsh Environments 2. Washington, DC: Borden Institute. Archived from the original on 11 January 2009. Retrieved 5 January 2009.
- West JB (February 1995). "Oxygen enrichment of room air to relieve the hypoxia of high altitude". Respir Physiol 99 (2): 225-232. doi:10.1016/0034-5687(94)00094-G. PMID 7777705.
- World Health Organization (1 January 2007). "CHAPTER 3 Environmental health risks" (PDF). International travel and health. p. 31. Retrieved 21 November 2009.

Parental motives for inspiring their girl child to opt for Physical Education as a subject at Senior Secondary level.

Dr. Akshay Kumar Shukla * Gajender Singh Saroha**

Abstract - The purpose of the study was to examine the parental motives for inspiring their girl child to opt for Physical Education as a subject at Sr. Sec. level. Self made questionnaire served as a tool to collect the necessary data. The moto of study along with how to fill the questionnaire was properly explained. The data so obtained were analyzed by using percentage analysis.

Key Words: Physical Education, parental motives, inspiration

Education is the only field where a child spends crucial years of their life. It plays an important role in their overall development especially social development.

Choice of subject which the child will opt at the Senior Secondary level plays a very important role in making her an adaptive creature in the society in her future life. For proper survival in society a girl not only needs to be mentally and emotionally tough but also needs to be physically tough enough to cope up with any type of adverse situation coming in her way.

Despite giving physical toughness Physical Education also helps in making a girl physically fit, more energetic, independent, reduces risk of diseases, practicing physical education can help her win laurels & medals which can make her feel proud. She can opt it for her career too.

Motives are psychological abstractions, direct thoughts, feelings and actions of an individual towards the achievement of certain goal immediate or remote. Greater is the degree of motive, higher will be its social significance.

The purpose of the study was to examine the parental motives for inspiring girl child to opt for the subject.

Methodology :

150 parents of girls in the age group (16-18) year in Udaipur district of Rajasthan served as subject. Questionnaire method was employed to collect the relevant data regarding the parental motives of inspiration to opt for Physical Education as a subject.

A self made questionnaire on the topic was prepared and employed to collect the data. 20 questions covering various aspects like physical fitness, career option, self confidence, personal development, fun & enjoyment etc were employed to collect the data.

Researcher on the basis of available data's observation located different aspects which are related to parental motives for inspiring them to opt for the subject. Research scholar visited various schools to know the details of the girls in the opted age group & subject. After gathering the required information, he visited them & interviewed the parents. He explained, clearly about the motives of study along with how the questionnaire has to be filled up. After ensuring that the subject has clearly understood the motive & procedure, they were asked to fill their responses.

The data was collected from & different schools of Udaipur. Respondents belongs to all sections of the society.

Results and Discussion

Table : Percentage evaluation of parental motives

S. No.	Question	I agree	I don't agree
1	My daughter can achieve complete fitness by taking physical Education.	88.8 %	11.2 %
2	Physical Education can make my daughter feel dependent.	90.0 %	10.0 %
3	Practicing games & sports in Physical Education can make my daughter active.	86.4 %	13.6 %
4	Physical Education teacher my daughter to get along with others.	87.6 %	12.4 %
5	Physical Education teaches self control to my daughter.	79.3 %	20.7 %
6	I let my daughter opt Physical Education as the teacher is quite motivating	84.0 %	16.0%
7	My daughter can secure good percentage as the subject is scoring.	96.0 %	4.0 %
8	Physical Education helps in reducing risk of diseases.	80.3 %	19.7 %
9	Physical Education helps in looking good/smart.	73.0 %	27.0 %
10	Physical Education helps in learning sports & games for excitement.	7.0 %	93.0 %
11	Physical Education helps in learning sports & games which makes a child to stand out among other girls.	93.5 %	6.5 %
12	Involvement in Physical Education can help developing a sports personality out of my daughter.	59.0%	41.0 %

*** HOD, Physical Education Pacific University ** Govt. Meera Girls College, Udaipur (Raj.) INDIA**

13	Involvement in games & sports via Physical Education is a better option for recreation.	50.0 %	50.0 %
14	Do you think that you would be more happy if your daughter would have chosen some other optional subject ?	20.0 %	70.0 %
15	Are you giving moral support to your daughter to get success in sports related achievements ?	83 %	17 %
16	Your family & customs allow your daughter to participate in activities of Physical Education.	80.0 %	20 %
17	I would support my daughter in case she want to make career in physical Education.	51.0 %	49.0 %
18	Physical Education subject is meant for few girls who have extra quality of fitness.	34.6 %	65.4 %
19	I feel Physical Education helps my daughter in achieving "sound mind in sound body".	62.6 %	37.4 %
20	I would like to see my child emerging out as a great sports personality by practicing Physical Education.	90.6 %	9.4 %

Conclusion :

1 88.8 % Parents find chat Physical Education can make their daughter physically fit.

2 90% parents agree to the concept of generating independency via. Physical Education

3 86.4% agree that energy level of the child is brought up by Physical Education which make their daughter active.

4 87.6 % parents agreed that Physical Education helps one to get along with others in a better manner as compared to others.

5 79.3 % parents agreed that Physical Education teach them to behave in a balanced and self controlled manner in adverse circumstances.

6 84 % parents agreed that they let their daughter opt for Physical Education as the concerned teacher was capable enough to explain them the importance of subject.

7 96 % parents agreed that they let their daughter to opt for the subject because being practical in nature, it is quite scoring.

8 Activities of Physical Education subject helps in proper exercise by body which reduces risk of diseases was a motivating cause for 80.3 % of parents.

9 73% parents disagreed to the concept of looking good/ smart behind taking a subject.

10 Mostly all the parents denied that activities of Physical Education provide excitement.

11 93.5 % parents agreed to the fact that Physical Education teaches their daughter to get along with others.

12. 59% parents are of the opinion that they would like to see their daughter emerging out as sport personality.

13 Only 50% parents sees Physical Education activities as a better option for recreation.

14 Only 20% parents agreed that it would have been better if their daughter would have opted for some other subject.

15 83% parents were supportive regarding the effort of their daughter to participate in various Physical Education related activities.

16 80% parents agreed that they allow their daughter to go for Physical Education related activates as their customer & traditions permit them to do so.

17 About half of the parents disagreed to the idea of making Physical Education as a career.

18 34.6% parents are of the opinion that extra quality of physical fitness is required to pursue Physical Education as subject.

19 62.6 % parents said that the concept sound mind in a sound body prompt them to make their daughter take the subject.

20 90.6 % parents said they would love to see their daughters emerging out as sports personality.

References:

- Anna S. Espen Schade, "Performance of School Children and Age Height and Weight", Research Quarterly, May 2000 Vol. 34, P. 144.
- Alston L. Joseph, "The Attitude of Teachers towards Physical Education in selected schools in viginia" Completed Research in Health, Physical Education and Recreation 9 (1967) P. 6.
- Gensemet Robert E. Physical Education: Perspective Inquiry, Applications (WMC Brown publishers, 1991)
- Kamlesh, M.L. Psychology of Physical Education and sport, New Delhi : Metropolitan book company (1994).
- Sharma V.D. "Introduction to Physical and Health Education" Avinchal Publishing Company (new Delhi, 2000)

****

Naveen Shodh Sansar
(An International Multidisciplinary Refereed Journal)
RNI No.-MPHIN28519/12/1/2012-TC
ISSN 2320 - 8767

MEMBERSHIP CUM AUTHOR'S BIO-DATA FORM

(Photocopy of this form may be used) (1 Jan 2014 - 31 Dec 2014)

NAME (Author / Member) : Mr/Mrs/Ms/Prof/Dr : .....

NAME of of Co-Author(s) : .....

DESIGNATION : ..... SUBJECT: .....

NAME OF College/University/Institution : .....

HOME / Official Address : .....

.....

STATE : .....PIN : ..... COUNTRY : .....

Tel. No. (Res. /Office) : .....MOB : .....

E-mail Address : .....

Sign......

1. MEMBERSHIP will be valid for individual, University/College Institute Library-One Year SUBSCRIPTION RATES For printing/publication of one research paper.
   * Institutions Rs. 1,200/- per annum (without publication of paper)
   * Membership for Author Rs. 700/- for 1 Year.
   * Membership for Co-Author Rs. 700/- for 1 Year.
   * Publication of paper each after membership Rs. 800/- (2000 Words)
2. For Remittances can pay printing amount through DD/Cheque in favor of **'NAVEEN SHODH SANSAR'** payable at Neemuch (M.P) and send it by Registered Post. Fill information regarding Demand Draft.

   D.D. No. : .....Amount ..... Name of Bank .....Date : .....

   OR

   You can cash deposit / Online fund transfer on **NAVEEN SHODH SANSAR** Current A/c.

Bank Detail :-
NAVEEN SHODH SANSAR
Current A/c. no.:- 32768184328
Bank Name :- State Bank Of India
Branch :- Neemuch (M.P)
IFSC code:- SBIN0030055

Editor - Ashish Sharma
Add:- "Shri Shyam Bhawan"
795, Vikas Nagar Extension 14/2, Neemuch
(M.P) - 458441 Mob:- 09617239102
Email ID :- nssresearchjournal@gmail.com
Website :- www.nssresearchjournal.com

{All disputes are subject to exclusive jurisdiction of NEEMUCH Court Only (M.P.)}
Note- Copyright form & Author's Guide line are availble on our web-site

DYNAMIC PERSONALITY

Dr. J.P.N. PANDEYA

Principal
Govt. Autonomous Girls P.G. College
Of Excellence, Sagar (M.P.)

"What a piece of work is man" says Shakespeare and this very saying is best suitable for the personality who has given his entire life in educating the general mass of the services society not only in academic field but also in social work and very especially for the upliftment of women and empowering them.

Born on 14 Nov. 1949 in Ballia (U.P.) Son of Late Shri Vijay Shankar Pandeya, a teacher by profession. He was graduated in Science from Gorakhpur University, Gorakhpur and did his M.Sc. with merit and Ph.D. (Botany) from Dr. H.S. Gour University, Sagar (M.P.) India. He was awarded Ph.D. on "Studies in Soil Microbiology with Special reference to litter decomposition" under the able guidance of Late Prof. S.B. Saksena, F.N.A. A number of research papers have been published by Dr. Pandeya in reputed International and National Journals viz. Mycologia, Research Hunt, Prof. Nat. Acad. Sci. India (INSA), Journal of Basic and Applied Mycology etc. He got selected from Madhya Pradesh Public Service Commission (M.P.P.S.C.) in the Year 1973 and joined as Asstt. Prof. Botany at P.G. College Guna (M.P.) Dr. Pandeya is well known teacher in the field of Plant Pathology, Microbiology any Cytogenetics. Dr. Pandeya is a life member of Journal of Basic and Applied Mycology and Research Hunt an International Journal. Dr. Pandeya was promoted as Professor in 1992, Degree Principal in 2005 and P.G. Principal in 2010. At present Prof. Pandeya is Principal, Govt. Girls Autonomous P.G. College of Excellence Sagar (M.P.) Dr. Pandeya is supervisor for Ph.D. Guidance of Dr. H.S. Gour V.V. (Central University) and research scholars are working under him. In addition to subject Botany Dr. Pandeya has also obtained L.L.B. Degree from Dr. H.S. Gour University Sagar. He has attended several U.G.C. and State Government Administrative Seminars and Workshops. As Institutional head, he always encourages performances like teaching, research, Seminars, Symposia and Workshops in addition to his routine administrative work.

To his achievement, he had added an accolade of awards for the Environmental Protection through NSS Unit of the College. Besides he has been awarded on Teacher's Day, For the development of the Institution where he was posted as Principal he has tremendously worked hard for the development of Infrastructure, Health and hygiene in the campus and creating CLEAN AND GREEN surrounding.

Dynamic Personality

Dr. I. V. Trivedi

Vice-Chancellor

Mohan Lal Sukhadia University,
Udaipur (Rajasthan)

Prior to became a Vice Chancellor of Mohan Lal Sukhadia University, he has hold various capacities like Head, Department of Banking and Business Economics, UCCMS, Dean, College of Commerce and Management Studies, Chairman, Faculty of Commerce, Member, Board of Management, MLSU, Director, Diploma in International Business, MLSU; Director, Master of International Business, MLSU; and Dean, P. G. Studies, MLSU. He possesses more than 25 years of rich academic experience.

He has been appointed by His Excellency Governor of Gujarat as Chairman, Vice Chancellor's Search Committee, North Gujarat University, Patan, Gujarat and Appointed as a Member, Vice-Chancellor's Search Committee, J.R. Nagar University, Udaipur. He was also appointed by His Excellency the Governor & Chancellor, University of Kota in the Academic Council of University of Kota, Kota.

He has authored more than 10 books , **Economics Environment of India, Banking Law and Practice in India, Foreign Trade & Exchange, Indian banking, Monetary Theory & Practice** are very famous and edited more than 12 books to his credit - **Whither Indian Economy, Indian Banking System, Retailing The Indian Perspective, Emerging Dimensions of Economic Scenario, Emerging Economic Scenario, Commerce Education in the New Millennium, Impact of Environment, Management of Funds in India** are most relevant book in Education System. His more than 35 research papers got published at journals at international and national levels.

He has done two major projects entitled “A Critical Study of working of Institutional and Non-Institutional financing agencies for the upliftment of the Tribal Region (with special reference to Southern Rajasthan)” and “Rural Indebtedness in Tribal Region A Case Study of TSP Area” sponsored by UGC. He has done three minor projects financed by Tribal Research Institute, Udaipur. More than 25 candidates have done Ph.D. program under his guidance.

He is an expert in Selection Committee for selection of Professor, Associate Professor, Assistant Professors in more than 50 Universities of India. He has been serving as a member and expert of several research and selection boards of various renowned universities of India.

This quotes suites him on well **"Simplicity is the Ultimate Sophistication"**